।। जय गौर।।

श्री श्रीगौरांगलीलामृत

(प्रथम भाग)

प्रणेता–

स्वामी श्रीप्रेमानन्दजी

प्रकाशक

व्रज रासलीला संस्थान

गोविन्द विहार ● 535/2 रमणरेती ● वृन्दावन

⋆ जय श्रीनिताई गौर ⋆

लेखक का वक्तव्य

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः।
यत्र संकीर्तनेनैव सर्वः स्वार्थोऽभिलभ्यते।।

(श्रीमद्भा० 11.5.36)

(कलियुग में केवल संकीर्तन से ही सारे स्वार्थ और परमार्थ बन जाते हैं। इसलिए इस युग का गुण जानने वाले सारग्राही श्रेष्ठ पुरुष कलियुग की बड़ी प्रशंसा और उससे प्रेम करते हैं।)

सकल दोषागार सर्वविनिन्दित कलियुग को नाम-संकीर्तन द्वारा सर्ववन्दित बनाने वाले अवतार हैं श्री श्रीगौराङ्ग महाप्रभु। इसी कारण इनका कलिपावनावतार नाम से बहुधा स्मरण किया जाता है।

आपका आविर्भाव बंगाल, नवद्वीप धाम में फाल्गुन पूर्णिमा सन् 1486 में हुआ था तथा तिरोभाव आषाढ़ शुक्ला सप्तमी सन् 1534 में पुरी धाम में हुआ था, जिस दिन आप श्रीजगन्नाथ प्रभु के श्रीविग्रह में लीन हो गये थे।

इस प्रकार श्रीमन्महाप्रभु इस धराधाम पर केवल 48 वर्ष ही प्रकट रहे। प्रथम 24 वर्ष में गृहस्थ का एवं द्वितीय 24 वर्ष में संन्यासी राज का अभिनय किया। प्रथम भाव को आदि लीला, द्वितीय भाग के 6 वर्ष के भारत भ्रमण तक को मध्य लीला तथा शेष 18 वर्ष तक अखण्ड नीलाचल वास को अन्त्य लीला कहा जाता है।

इन तीन लीलाओं में हमें श्रीमन्महाप्रभु के सात रूपों में दर्शन होते हैं- बाल निमाई, विद्यार्थी निमाई, अध्यापक पं० निमाई, महाभागवत निमाई, संकीर्तन बिहारी लोकोद्धारी निमाई, परिव्राजक संन्यासी राज एवं राधामहाभावाविष्ट दिव्योन्मादी श्रीकृष्ण चैतन्यदेव।

इन सात रूपों में से हम केवल छः रूपों की ही स्थूल झाँकी इस गौरांग लीलामृत नाटक में 63 कणामृतों के द्वारा प्रस्तुत कर सके हैं। सातवाँ रूप हमारी पहुँच से बहुत दूर रह गया। इस प्रथम भाग में 27 कणामृत हैं। शेष अन्य तीन भागों में आयेंगे।

भारत प्रसिद्ध सन्त बाँध वाले श्रीहरि बाबाजी महाराज श्रीगौर प्रेम की मूर्त्ति एवं संकीर्तन-निष्ठ महापुरुष थे। उनकी ही प्रेरणा से उनके ही आस्वादन

के लिये लेखक ने प्राय: पचास वर्ष पूर्व गौर लीला लिखना आरम्भ किया था।

यह गौर लीला श्रीमहाराज जी अपने वार्षिक उत्सवों में श्रीवृन्दावन, बाँध तथा होशियारपुर आश्रम में एक–एक मास तक कराते थे तथा अपने भारत–भ्रमण काल में रास–मंडली को साथ रखते थे और उनसे गौर लीला करवाते रहते थे। पाक्षिक एवं मासिक लीला अभिनय का ताँता सा लगा रहता था। इससे लीला बढ़ती, सुधरती और निखरती गईं। उनके स्नेह–आंचल में पलती हुई लीला शिशु से किशोरी हो गयी। पाँच सात से बढ़कर पचास–साठ हो गयी।

परन्तु तभी श्रीहरिबाबाजी महाराज अप्रकट हो गये और लीला आश्रयहीन, असहाय अनाथ हो गयी। गति रुक गयी। आगे बढ़ना तो दूर, टिके रहना भी दूभर हो गया। संगठन में बिखराव आ गया।

अब वर्तमान में यह स्थिति है कि एक ओर तो लीला दिनोंदिन महँगी होती जा रही है और दूसरी ओर यथोचित श्रद्धा का अभाव हो गया है। जहाँ श्रद्धा है भी, वहाँ 5–7 दिनों से अधिक आयोजन करने कराने की सामर्थ्य नहीं है और जहाँ सामर्थ्य है वहाँ वर्ष भर में एकाध बार 10–15 दिनों तक भी लीला हो जाय तो अहोभाग्य! घनी कृपा!

एक उदाहरण–पाँच वर्ष पूर्व श्रीमन्महाप्रभु की पंचशती भारतवर्ष में बड़ी धूमधाम से मनायी गई। नवाह भागवत, नवाह रामायण, नवाह कीर्तन, प्रवचनादि के विराट आयोजन हुये। परन्तु गौर लीला के बृहद् तो क्या सामान्य आयोजन का कोई समाचार सुनने में तो नहीं आया!

हाँ, स्वामी हरिगोविन्द को एक कार्यक्रम अवश्य मिला था–शायद भारत सरकार की ओर से। दो घण्टे में ही महाप्रभु का जीवन वृत्त दिखा देने का निर्देश था। स्वामीजी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। और जो साधारण रंगमंच पर पचास दिनों में भी दिखा पाना कठिन है उसे सरकारी रंगमंच पर स्वामी जी ने केवल दो घण्टे में ही दिखा दिया! अद्भुत चमत्कार!! सरकार ने संस्कृति की रक्षा कर ली। जनता का मनोरंजन हो गया! स्वामी जी को दाम–नाम मिल गये। और लीला बेचारी कटी–छटी, लूली–लंगड़ी, सिसकती रह गयी!

अब सोचिये! इस मनोवृत्ति से लीला की प्रगति होगी या दुर्गति? क्या कोई नयी लीला सीखने का कष्ट उठाएगा? थोक गाहक रहे नहीं। खुदरा गाहकों की यह रुचि है तो उन के लिये तो दस–बारह लीलाएँ ही पर्याप्त हैं।

और जिनके पास 25-30 लीलाएँ हैं वे भरपेट अघा करके कृतार्थ बने बैठे हैं। उन्हें न अब कोई नयी लीला से, न लेखक से ही प्रयोजन है।

ऐसी दु:स्थिति में कोई आगे लिखे तो क्यों लिखे? किसके लिये लिखे? लेखक को न तो साहित्य-सृजन की धुन है, न स्वान्त: सुख की भूख है और न लोकोपकार का स्वप्न। उसने तो एक महापुरुष के चित्त-सन्तोष के लिये ही लेखनी उठायी थी। अब जब वे ही नहीं रहे और लीला करने-कराने वालों के भाव-चाव भी बदल गये, तो लेखनी ने भी विराम ले लिया।

जहाँ तक लिखी गईं हैं, वे ही क्या कम हैं। यदि यथालिखित को यथोचित ढंग से प्रस्तुत किया जाय तो दो मास के लिए पर्याप्त सामग्री है। और यदि अधिक की इच्छा श्रीमन्-महाप्रभु जी की होगी तो वे किसी को भी पकड़ करके उसे पूरी कर लेंगे। अपने से तो जितना कुछ कराना था वह करा लिया। अब तो दीपक में तेल समाप्त होने जा रहा है।

ग्रन्थ-प्रकाशन में किंचित भी उत्साह न होने पर भी स्वामी हरिगोविन्द के अत्यन्त आग्रह पर अधूरे मन से अनुमति दे दी गई। लेकिन इस शर्त पर कि केवल लागत मूल्य पर ही ग्रन्थ का वितरण किया जायगा तथा न्यौछावर की आय को ग्रन्थ के प्रकाशन में भी लगाया जायगा। उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर ली है। यह भाव-शुद्धि एवं बुद्धि-शुद्धि यदि स्थायी स्थिर बनी रही तो यह उनके जीवन की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि होगी एवं महाप्रभु का सर्वोत्तम आशीर्वाद होगा।

इतने पर भी केवल अर्थ-बल पर ही प्रकाशन सुगम नहीं होता यदि सुहृदय गौर-भक्त मुद्रक महोदय श्रीगिरिराज जी का हार्दिक सहयोग न होता। उन्होंने प्रूफ-संशोधन आदि सब कार्यों का भार स्वयं स्वीकार करके लेखक को निश्चिन्त कर दिया। लेखक ने तो एक बार भी न कुछ देखा, न पढ़ा, न कुछ किया। सारा कार्य आदि से अन्त तक गिरिराज जी ने ही किया। इसके लिये मैं क्या कहूँ। गौर-भक्ति तो उनकी पैतृक-सम्पत्ति है। कंगाल लेखक उसमें क्या अभिवृद्धि कर सकता है।

इस प्रकाशन से किसी को स्वार्थ-परमार्थ लाभ न हो, एक लाभ तो अवश्यम्भावी है कि हिन्दी गौर साहित्य की सूची में एक नाम और जुड़ जायगा और पाठकों की ताक के किसी कोने में इसे विश्राम मिल जायगा। हरि ॐ तत्सदिति।

-लेखक

प्रकाशकीय

कलियुग पावनावतार महाप्रभु श्री श्रीकृष्णचैतन्यदेव-नित्यानन्द प्रभु के लीलाग्रन्थ 'श्रीगौरांगलीलामृत' का प्रथम भाग सुधी पाठकों के कर कमलों में प्रस्तुत है।

प्रस्तुत ग्रन्थ को 4 भागों में प्रकाशित करने की हमारी योजना है। शेष 3 खण्ड शीघ्र ही प्रकाशित किये जा रहे हैं।

श्रीगौरांग महाप्रभु संक्षिप्त जीवन-परिचय एवं पदावली के कुछ संस्करण पहले से ही पाठकों हेतु उपलब्ध हैं, किन्तु प्रस्तुत संस्करण का अपना एक विशेष स्थान एवं महत्व है।

इस अद्भुत रसवर्षणकारी ग्रन्थ की रचना परमादरणीय पूज्य सन्त श्रीस्वामी प्रेमानन्द जी द्वारा की गयी है, जो कि महाप्रभु-लीलाभिनय के आधुनिक जनक हैं। आज जितनी भी गौरांग-लीला विभिन्न मण्डलियों द्वारा प्रस्तुत की जाती हैं, उनके पार्श्व में स्वामी जी का कुशल निर्देशन एवं प्रस्तुतीकरण ही उनमें रसाभिवृद्धि करता है। उन्होंने बड़ी कृपा करके इसके प्रकाशन की स्वीकृति प्रदान की है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की एक अनुपम विशेषता यह है कि इसकी रचना प्राय: नाटक-शैली में की गयी है जिससे पाठकों को अध्ययन के साथ-साथ जहाँ उस वास्तविक दृश्य के दर्शन होंगे, वहीं अभिनयकारी मण्डलियों को अभिनय हेतु एक सुदृढ़ आधार मिलेगा। अभिनय हेतु पर्याप्त संकेत, दृश्यों का विवरण, समाज द्वारा पद-गायन का संकलन इस ग्रन्थ की अपूर्वता का बोधक है। ग्रन्थ के अन्त में लीला के सम्मिलित पद-गान का संकलन भी किया गया है।

जनसाधारण को सहज में यह ग्रन्थ उपलब्ध हो सके; इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए ग्रन्थ की न्यौछावर लागत मात्र रखी है। इससे प्राप्त धनराशि अन्य प्रकाशकों में ही व्यय की जाऐगी। अत: पाठकों से अनुरोध है कि ग्रन्थ से अधिक से अधिक लाभ उठावें।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में श्रीरामगोपाल जी गाड़ोदिया, गोहाटी; श्री श्रीराम जी साबू बंगलौर; श्रीराधेश्याम जी भारुका, खड़गपुर एवं अन्य सहयोगी महानुभावों के प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। त्रुटि-विच्युति की क्षमा प्रार्थना के साथ-

-स्वामी हरिगोविन्द

विषय-सूची

।। श्रीश्रीनिताइगौराङ्गौ जयतः।।

श्रीगौरांगलीलामृत कणा

मंगलाचरणम्

अद्वैतप्रकटीकृतो नरहरिप्रेष्ठः स्वरूपप्रियो,
नित्यानन्दसखः सनातनगतिः श्रीरूपहृत्केतनः
लक्ष्मीप्राणपति र्गदाधररसोल्लासी जगन्नाथभूः
सांगोपांग सपार्षदः स दयतां देवः शचीनन्दनः।।1।।
अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ,
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम्।
हरिः पुरटसुन्दरद्युति - कदम्बसन्दीपितः,
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः।।2।।
पंगुं लंघयते शैलं मूकमावर्तयेच्छ्रुतिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे कृष्णचैतन्यमीश्वरम्।।4।।
स प्रसीदतु चैतन्य देवो यस्य प्रसादतः।
तल्लीला वर्णने योग्यः सद्य स्यादधमोऽयम्।।5।।

दोहावली

हा हा! श्रीनिताइ प्रभो! हा हा श्रीहरि गौर!
हा हा श्रीअद्वैत प्रभो! तुम प्रगटाये गौर।।
हा हा पंडित श्रीवास! हा, गदाधर गौर प्रान।
हा हा! पग वन्दन करूँ, करौ सुदृष्टि दान।।
हा हा! पुनि पुनि पायँ परि, चहौं कृपा की कोर।
तुम्हरी लीला तुम करौ, 'प्रेम' शरण हरि गौर।।

सूत्रधार-नट-सम्वाद

(प्रवेश वैष्णव वेषधारी सूत्रधार गाते हुए)

सूत्रधार कीर्तन धुन

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे गोविन्द।।
(प्रवेश वैष्णव वेषधारी शिष्य नट)
प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो कीर्तन सुनता है

सूत्रधार-(कुछ समय पश्चात् नट की ओर देखते हुए) ओ हो! तुम आय गये! अच्छौ ही भयौ।

नट-देव! एक निवेदन है। यह कीर्तन-नामावली तो मेरे लिए नवीन ही है। 'श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द'-ये नाम कौन के हैं और ताहु में सर्वप्रथम क्यों? तत्पश्चात् 'हरे कृष्ण हरे राम' तथा अन्त में 'श्रीराधे गोविन्द'। या प्रकार सों नामन के क्रम-प्रयोग में कोई तात्पर्य विशेष है कहा?

सूत्रधार-हाँ है, सो सुनौ। कलियुग कौ धर्म जो हरिनाम संकीर्तन है वाके जन्मदाता संकीर्तन-पितृ-युगल के ही नाम हैं, श्रीकृष्ण चैतन्य तथा प्रभु नित्यानन्द। या कारण प्रथम उनकौ स्मरण है। पश्चात् उनके द्वारा प्रचारित 'हरे कृष्ण हरे राम'-महामन्त्र कौ स्मरण है। तथा या महामन्त्र के कीर्तन द्वारा साध्य वस्तु हैं श्रीराधाकृष्ण। उनकौ अन्त में स्मरण है।

(प्रवेश नट-बालकों का गाते हुए)

कोरस गायन

हरि नाम की जो भेरी, गूँजे कलि में भाई।
पहले बजाई जिनने, जय जय श्रीगौर निताई।।1।।
पूरब में पहले बाजी, धुनि देश देश गाजी।
सब ही हुए हैं राजी, नाचे हैं साज साजी।।
हरे कृष्ण राम गाई, जय जय श्रीगौर०।।2।।
बंगाली औ पंजाबी, ब्रजवासी सिन्धुवासी।
गुजराती औ मराठी, काश्मीर तैलंग वासी।।
कीर्तन के सब सिपाही, जय जय श्रीगौर०।।3।।

कहीं नारायण नारायण श्रीरंग, कहीं बिठ्ठल पांडुरंग।
कहीं राम राम सीताराम, कहीं राधे राधे श्यामा श्याम
कीर्तन धुनि है छाई, जय जय श्रीगौर०।।4।।
कलियुग के धर्मदाता (जय हो)
कलियुग के जीवनत्राता (जय हो)।
कलियुग के यश विधाता (जय हो)
संकीर्तन जन्मदाता (जय हो)।।
ये ही दो 'प्रेम' भाई, जय जय श्रीगौर०।।5।।

नट-तो ये महानुभाव कहा कोई वैष्णव संकीर्तनाचार्य भये हैं कहा?

सूत्र-नहीं वत्स! ये आचार्य के रूप में नहीं, अवतार के रूप में ही बंगाल में सुप्रसिद्ध हैं।

नट-तो ये कौन के अवतार हैं देव?

सूत्र०-स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार तौ श्रीकृष्ण चैतन्य हैं जिनकूँ गौरांग महाप्रभु हू कहैं हैं तथा श्रीबलराम जी के अवतार श्रीनित्यानन्द प्रभु हैं, जिनकूँ निताइ हू कहैं हैं। ये द्वै ही निताइ-गौर के नाम सों विख्यात हैं।

नट-तो ये कब और कहाँ प्रगट भये देव?

सूत्र०-ये दोनों बंगाल में पाँच सौ वर्ष पूर्व प्रगट भये हैं। सम्वत् 1542 की फाल्गुनी पूर्णिमा कूँ गौरांग महाप्रभु प्रगट भये हैं और उनते प्रायः बारह वर्ष पूर्व माघ शुक्ला चतुर्दशी कूँ नित्यानन्द प्रभु अवतरित भये हैं।

नट-गुरुदेव! भगवान् तो अवतार लै कै असुरन को संहार करैं हैं। इन गौर-निताइ प्रभु ने कौन-से असुरन को संहार कर्‍यौ?

सूत्र०-पाप-असुरन कौ, दुष्टन की दुष्टता कौ! उनके प्राणन कौ संहार करकै उनकूँ नहीं तार्‍यौ, अपितु प्रेमभक्ति दैके उनकूँ उद्धार्‍यौ।

नट-भगवान् तो अवतार लैकै साधुन की रक्षा करैं हैं।

सूत्र०-इनने तो साधु-असाधु, सबन की रक्षा करी, हरिनामामृत एवं हरिप्रेमामृत पान कराय कै सबन कूँ अभय प्रदान कर्‍यौ।

नट-भगवान तो अवतार द्वारा धर्म की स्थापना करैं हैं।

सूत्र०-इनने प्रेम-धर्म की स्थापना करी।

नट-कैसौ प्रेम-धर्म, देव?

सूत्र०-त्रिभुवन-पावन गोपी-प्रेम कौ पंथ! स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन और उद्धव सौं हू यह प्रेम-धर्म गुप्त ही राख्यौ हो।

दोहा

अर्जुन कूँ गीता कही भागवत उद्धव ताँई।
पै गोपिन को प्रेम पंथ, राख्यौ हृदय दुराई।।
कर्म, ज्ञान, उपासना वेद बजायो ढोल।
वंशी धुनि सुनि गोपिका, लह्यौ प्रेम अनमोल।।

याही कारण वेद की श्रुतियाँ हू वा मार्ग कूँ जाननो चाहें हैं कि जापै चल कै गोपीजन गोपीजनवल्लभ श्रीनन्दनन्दन कूँ प्राप्त भई-'श्रुतिभिर्विमृग्यमीति'।

नट-ऐसौ वह कौन-सौ पंथ है?

सूत्र-वह है अत्युत्कट अनुराग कौ पंथ।

नट-उत्कटता कौ स्वरूप कहा है भगवन्?

सूत्र०-प्रेम-पंथ में वेद कौ धर्म और लोक की मर्यादा-ये द्वै ही महान् बाधक हैं परन्तु व्रजगोपिन की प्रेम-महानदी के उत्कट प्रवाह में ये दोनों ही तृणवत् बह गये-

दोहा

वंशी बाजी श्याम की, उमग्यौ उत्कट प्रेम।
जाय श्याम सागर मिलीं, बह गये तृन ज्यूँ नेम।।

यह है उत्कट प्रेम को स्वरूप। याही कौ दूसरौ नाम है 'समर्था रति'। वह व्रजदेविन के अतिरिक्त त्रिभुवन में कुत्रापि नहीं है। या प्रेम के लिए शिव, ब्रह्मा, लक्ष्मी, नारद, उद्धवादि महाभागवत शिरोमणि हू ललचावै हैं। ऐसौ जो असाधारण गोपी-प्रेम है, वाहि कूँ सर्वसाधारण के प्रति समर्पण करवे के निमित्त ही स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ही श्रीकृष्ण चैतन्य-चन्द्र के रूप में अवतरित भये।

नट-तौ गोपी-प्रेम-प्राप्ति को साधन कहा है?

सूत्र-'कृष्ण-नाम-संकीर्तन'-परन्तु गोपीभाव के अनुगत है कै तथा नामापराध ते बच कै कीर्तन करै, तब ही गोपी-प्रेम-प्राप्ति सम्भव है अन्यथा नहीं।

श्लोक

आराध्यो भगवान् व्रजेशतनयस्तद्धाम वृन्दावनं।
रम्या काचिदुपासना व्रजवधूवर्गेण या कल्पिता।।
श्रीमद्‌भागवत प्रमाणममलं प्रेमा पुमर्थो महान्।
श्रीचैतन्यमहाप्रभोर्मतमिदं तत्रादरो नः परः।।

नट-(साश्चर्य) अहो! एक कृष्ण-नाम-संकीर्तन सों ही प्रेम प्राप्त है जाय है! मैं तौ समझतौ हो कि कीर्तन सों आधि-व्याधि-उपाधिन कौ ही नाश होय है, अथवा कोई मनोरथ सिद्ध है जाय है, अधिक ते अधिक, भव-बन्धन सों मुक्ति मिल जाय है। परन्तु आप तो मुक्ति तेहू श्रेष्ठ 'प्रेम' कूँ बतावैं हैं और वह प्रेम हू केवल नाम-कीर्तन सों प्राप्त है जाय है। यह तौ बड़ौ सहज उपाय है।

सूत्र०-वत्स! यही तो या गौरांग-अवतार की असाधारण विशेषता है, 'अनर्पितचरी' दान है। वस्तु सर्वश्रेष्ठ और मूल्य सर्वसुलभ नाम!

नट-और या प्रेम-पुरुषार्थ के अधिकारी पात्र कौन हैं?

सूत्र-प्रेम के लोभी मात्र सबही पात्र हैं-स्त्री हो, शूद्र हो, यवन हो, म्लेच्छ हो, पापी हो, पतित हो, सब कोई कृष्ण-कीर्तन कर सकैं हैं और प्रेम-पात्र बन सकैं हैं। यही निताइ-गौर प्रभु कौ आदेश है, उपदेश है, आचार है, प्रचार है।

नट-(विस्मय पूर्वक) ओहो! कितनी करुणा! कितनी उदारता!

सूत्र-यही तौ या गौरांग-अवतार की अनन्य विशेषता है।

नट-कारण कहा है प्रभो?

सूत्र०-एक तो कलियुग में ज्ञान, योग, तप आदि बड़े-बड़े साधन सब सारहीन थोथे है गये हैं। दूसरे, कलि के सब जीव सत्त्वहीन निर्बल है गये हैं। और तीसरौ कारण बड़ौ निगूढ़ है।

नट-परन्तु स्निग्ध शिष्य के प्रति तो गुरुजन गुप्त बात हू कह डारैं हैं, भगवन्!

सूत्र०-तौ सुनौ! अन्य समस्त भगवदवतारन में तो शक्ति और शक्तिमान पृथक्-पृथक् प्रगट होय हैं परन्तु या गौरांग-अवतार में तो-

दोहा

रमा रमापति अलग नहीं, अलग न सीताराम।
राधाकृष्ण अलग नहीं हैं, दोऊ इक ठाम।।

एक नाम में तीन हैं श्री, कृष्ण, चैतन्य।
श्रीसहित जो कृष्ण हैं, वे ही हैं चैतन्य।।

श्रिया युक्तः यः कृष्णः स एव चैतन्यः। श्रीराधा सहित जो कृष्ण हैं, वे ही श्रीकृष्ण चैतन्य हैं। एक नाम के, गर्भ में तीन नाम हैं। याहि कारण वे केवल प्रभु नहीं, महाप्रभु हैं-स्वरूप सों और गुण सों हू। उनके स्वरूप में जो कृपालुता एवं उदारता है ये श्रीराधा जू के ही गुण विशेष हैं। याहि कारण सों श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु में हूँ-

दोहा

केवल प्यार ही प्यार है नहीं मार को काम।
एक दया ही दया है, नहीं दण्ड को नाम।।

नट-तो भगवन! जब श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु ऐसे दयालु-शिरोमणि, परमोदार हैं, तौ फिर सब लोगन की श्रद्धा इनमें क्यों नांय होय है और सबही लोग इनके द्वारा प्रचारित प्रेम-भक्ति के मार्ग पर क्यों नांय चलैं हैं?

सूत्र०-(स्मित पूर्वक) अच्छौ यह तौ बताऔ कि सब लोग एक राम कूँ ही, एक कृष्ण कूँ ही, एक शिव या देवी कूँ ही क्यूँ नहीं भजैं हैं? और इन भगवत्स्वरूपन कूँ हू छोड़ करके भूत, प्रेत, पिशाच आदिकन कूँ ही क्यूँ भजैं हैं?

नट-(सिर खुजलाते, अटकते-२) हूँ.. रुचि ... रुचि-भेद के कारण अथवा तौ क्षुद्र कामना वासना की ताड़ना-प्रतारणा के कारण।

सूत्र०-बस यह वासना ही श्रद्धा में भेद कौ कारण है। भगवान् ने गीता में 'सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत' श्लोक में यही बात तो कही है कि जैसौ जा कौ अन्तःकरण होय है वैसी ही वाकी श्रद्धा होय है और जैसी श्रद्धा होय है वैसौ ही वाकौ देवता और वैसौ ही वाकी उपासना हू होय है। और अन्त में प्राप्ति हू वाही देवता की होय है। 'यान्ति देवव्रताः देवान् पितृन यान्ति पितृव्रताः।' देवतान को भजन करवे वारे देवतान कूँ प्राप्त होय हैं, पितरन के पूजक पितरन कूँ ही प्राप्त होय हैं। भूत-प्रेतन के साधक भूत-प्रेतन कूँ ही पावैं हैं और 'यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्' और मेरे भक्त मोसूँ ही आय मिलैं हैं। अतएव भगवान् यही सिद्धान्त करैं हैं कि 'श्रद्धामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्ध स एव सः'। यह पुरुष श्रद्धामय है। श्रद्धा ही याकौ स्वरूप है। यासों अब तुम समझ जाओ कि क्यों सबके सब लोग एक श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के ही अनुगामी नहीं बनैं हैं, उनही कूँ क्यों नहीं भजैं हैं।

नट-समझ गयौ देव! आपकी कृपा सों परन्तु....

सूत्र-परन्तु कहा? कह डारौ अपनी शंका।

नट-भगवन्! जीव तौ अज्ञ है। पर भगवान् तौ सर्वज्ञ हैं, सर्वसमर्थ हैं और सर्वसुहृद पर हितैषी हैं। वे मिट्टी खायवे वारे कूँ मिट्टी खायवे ही क्यूँ देयँ हैं। मिट्टी फिंकवाय कै मिश्री खायवे कूँ क्यूँ नहीं देय हैं? निकृष्ट वस्तु में सों श्रद्धा हटाय कै परमोत्कृष्ट वस्तु में श्रद्धा क्यों नहीं जमाय देय हैं?

सूत्र०-यामें कारण यह है कि क्रम-विकास उन्नति कौ सनातन नियम है। जैसे देह कौ क्रम-विकास है वैसे ही जीवात्मा कौ हू क्रम-विकास है। हठात् कै बलात् कछु नहीं होय है। अतएव वहीं गीता में स्वयं भगवान् याकी व्याख्या कर देयँ हैं-

श्लोक

यो यो यां यां तनुः भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्।।

(7.21)

जो-जो भक्त जा-जा देवता के स्वरूप कूँ श्रद्धा सहित भजनौ चाहै है मैं वाकी वाही देवता में श्रद्धा स्थिर कर दऊँ हूँ। अर्थात् भगवान् काहू को काहू में सों श्रद्धा उखाडैं नहीं है, उल्टौ जमाय देय हैं। मिट्टी खाय कै वाके सुख-दुःख कूँ जीव जब भोग लेंगौ तब जाय कै कालान्तर में वह भुक्त भोगी जीव स्वानुभव के बल पर मिट्टी कूँ स्वयं फैंक करकै मिश्री के लिए दौड़ परैगौ।

नट-तो भगवन्! गोपी-प्रेम में श्रद्धा उत्पन्न करवे के लिए कहा कोई साधन ही नहीं है? कहा मिट्टी खाय खाय कै, भोगी-रोगी बन बन कै, कहीं कबहूँ जन्म-जन्मान्तर, युग-युगान्तर में प्रेम-योगी बनवे की मंगल-बेला उदय होयगी? कहा तब तक जीव के हाथ में कोई उपाय, कोई साधन ही नहीं है?

सूत्र०-है क्यों नहीं! 'भागवत-श्रवण' उपाय है। 'प्रथम सुनै भागवत भक्त-मुख भगवद् बानी'। भागवत्-श्रवण सों भागवत्-धर्म में श्रद्धा उत्पन्न होय है। और गोपी-प्रेम तौ या भागवत्-धर्म कौ ही हृदय है, सार नवनीत है।

नट-यह भागवत्-धर्म कहा वस्तु है देव?

सूत्र०-यह 'प्रोज्झितकैतव धर्म' है। स्वर्ग-वासना तो कहा मोक्ष-वासना तक को नाम 'कैतव' अर्थात् कपट है। या कपट सों रहित अर्थात् स्वमुख-वाञ्छाशून्य भगवत्-सेवा कौ ही नाम भागवत्-धर्म है। और या भागवत्-धर्म की दिव्य अट्टालिका की शिखर पैर प्रेमाद्याचार्य व्रजगोपिन की विजय-वैजयन्ती फहराय रही है-'गोपी प्रेम की धुजा'। इन व्रज-देविन द्वारा आचरित परमोज्ज्वल परम मनोहर उपासना कौ नाम ही प्रेमभक्ति को मार्ग है-

'रम्या काचिदुपासना व्रजवधू वर्गेण या कल्पिता' ऐसौ जो मोक्ष-कामी के लिए अगम्य प्रेमभक्ति कौ पंथ है वाकूँ सर्व-साधारण के लिए खोल दैवे हेतु और वौ हू केवल हरिनाम संकीर्तन रूपी कुंजी के द्वारा, स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ही श्रीकृष्ण चैतन्यचन्द्र के रूप में अवतीर्ण भये और उनके या अपूर्व दान के कारण ही 'सर्वसाधन बाधक' 'सर्वसत्त्वहर' पाप-मूर्ति कलियुग हू धन्य-धन्य है गयौ।

नट-(सचकित) यह कैसै देव? कलियुग की तौ शास्त्र में सर्वत्र निन्दा ही निन्दा की गई है!

सूत्र०-केवल निन्दा ही नहीं। स्तुति हू की गई है। भागवत् एकादश स्कन्ध में 'कृतादिषु प्रजा राजन् कलाविच्छन्ति सम्भवम्' एवं 'कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः' इत्यादि श्लोकन में स्पष्ट कह्यौ गयौ है कि सतयुग के जीवहू कलियुग में जन्म लैवे की इच्छा करैं हैं कारण कि कलियुग के भक्त एक हरिनाम संकीर्तन के द्वारा ही उन समस्त सिद्धिन कूँ प्राप्तकर लेय हैं जो सतयुग में हजारन वर्ष की समाधि सों प्राप्त होय है।

ऐसौ जो यह हरिनाम संकीर्तन युग-धर्म है कि जाके कारण यह सर्वधर्म द्रोही कलियुग हू धन्य है गयौ है वा संकीर्तन के जन्मदाता जनक हैं 'श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द'। याहि कारण सों मेरौ यह मंगल कीर्तन है-

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे गोविन्द।।
(कुछ समय तक कीर्तन)

नट-तब तौ देव! इनके जीवन चरित कौ कछु अभिनय अवश्य प्रस्तुत करनों चाहिए।

सूत्र०-तौ करौ आयोजन! परन्तु सामान्य नहीं, दीर्घ आयोजन! मासाधिक-काल व्यापी आयोजन!!

नट-(सविस्मय) इतनौ विराट लीला-महोत्सव!

सूत्र०-तथापि अपर्याप्त! श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु 48 वर्ष पर्यन्त या धराधाम पै विराजमान रहे-24 वर्ष गृहस्थाश्रम में एवं 24 ही वर्ष संन्यासाश्रम में। या अवधि में आपके जो अद्भुत लीलाचरित्र हैं वे तौ अनन्त सागर की अनन्त लहरिन के समान हैं। हम तौ यदि 48 वर्षन के लिए 48 दिनन में 48 कनन की झाँकी मात्र हू कछु प्रस्तुत कर सकें तौ हमारी जीवन-कला सार्थक है जायगी।

नट-(सहर्ष) अत्युत्तम विचार! मंगल योजना! आनन्द महोत्सव!

सूत्र०-तो आऔ वत्स! झोली पसारें! कृपा-भिक्षा माँगें श्रीनिताइ गौर हरि सों।

सम्मिलित गायन आसावरी 3 ताल

झोली गहे की लाज सम्हारौ,
हे गौर निताई उदार सिरताज।।टेक।।1।।
हम मतिमन्द कछु नहिं जानैं,
अँखियाँ धुन्ध नहिं पहिचानैं।
पतित पंगु उड़न मन ठानैं, लीला नभ में आज,
सम्हारौ झोली।।2।।
उड़ाऔगे तबहि उड़ि पावैं,
हर्ष मगन तुम्हरे गुन गावैं।
नातर कूप बीच पचि जावैं, विद्या-बल बेकाज,
सम्हारौ झोली।।3।।
भले बुरे हम जैसे-तैसे,
अपने द्वार लाये जब ऐसे।
नहिं सुनिहौ अब 'प्रेम' की कैसे, नाम लिये की लाज,
सम्हारौ झोली।।4।।

(पटाक्षेप)

इति सूत्रधार-नट-सम्वाद।

आविर्भाव लहरी

प्रथम कणामृत **श्रीअद्वैताचार्य प्रागट्य**

मंगलाचरण

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
अद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौर भक्तवृन्द।

श्लोक

यद् हुँकारैः प्रेमसिन्धो विकारै
राकृष्टः सन् गौर गोलोक नाथः।
आविर्भूतः श्रीनवद्वीप मध्ये
श्रीलाद्वैताचार्यमेतं प्रपद्यें।।
श्रीअद्वैतं गुरुं वन्दे हरिणाद्वैतमेव च।
प्रकाशितं परंब्रह्म योऽवतीर्ण क्षितौ हरिः।।
अद्वैतं हरिणाद्वैतादाचार्यं भक्ति शंसनात्।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्यमाश्रये।।

दोहावली

कलि प्रगटायो कृष्ण जिन, सीतापति हरि ईश।
जयति जयति अद्वैत प्रभु, देवहु पद रज शीश।।
हरिहर मिलि दोउ एक ह्वै, धर्‌यौ जो अद्वैत रूप।
प्रगट किये परब्रह्म जे, गौरचन्द्र अनूप।।
'कमलाक्ष' 'सीतानाथ' जू, 'प्रभु आचारज' नाम।
सदाशिव महाविष्णु के, मिलित दयामय धाम।।
ग्रन्थ 'अद्वैत प्रकाश' में, कह्यौ अद्वैत-प्रकाश।
ताकौ मरम अनुसरि कछु, गाऊँ 'प्रेम' कन आश।।

लीलारम्भ

एक समय कैलाश में, बैठे गिरिजा राय।
करत विचार मन महँ कछु, बूझत गौरा माय।।

(दृश्य-कैलाश पर्वत। शिव गम्भीर मुद्रा में विराजमान। समीप ही पार्वती)।

दोहा

पार्वती-अहो प्रभो मंगलमय, मंगल कौन विचार।
हृदय अजिर मधि रावरे, मंगल करत विहार।
सहज शान्त सुस्मित वदन, केहि कारन गम्भीर।
जान पाऊँ जो कृपा करि, होय तबहि जिय धीर।।

शिव- शिवे! मंगलमयी!
कलि समुद्र छिन छिन बढ़ै, डूबि जात संसार।
कीजै कौन उपाय प्रिये, होवै जग उद्धार।।
तुम तौ जननी जगत की, सहज वत्सला माय।
महाविद्या परमेश्वरी, तुम कछु सोचौ उपाय।।

पार्वैती-हे जगद्गुरो! उपाय तो वेदशास्त्रन ने निर्धारित कर ही राखे हैं-कर्म, उपासना और ज्ञान। ये ही तीन सनातन पंथ है। इनसों ही जगत् कौ कल्याण होंतौ आयौ है।

शिव-सत्य है प्रिये! परन्तु पथ है वे सों ही तौ कल्याण नहीं है जायगौ। वापै चलवे वारौ पथिक हू तो होनौ चाहिये।

दोहा

पंथ भयौ तौ कहा भयौ, तिनपै चलै न कोय।
चलै तो घर पहुँचे तबै, बिन चलै बैठे राय।।

और पथ पै चलवे के लिए-

दोहा

पाँवन में बल चाहिये, हृदय में विश्वास।
नेत्रन में झलकै सदा, प्रेम विवेक-प्रकाश।।

परन्तु कलियुग के जीव तौ बिचारे-

श्लोक

'मन्दाः सुमन्दमतयो मन्दभाग्या ह्यु पद्रुताः'

छंद

वीर्य सों वे हीन हैं फिर योग साधन कहा करैं।
आयु सों वे हीन हैं, फिर कर्म भारन कहा करैं।
बुद्धि सों जु मलीन है फिर ज्ञान-शोधन कहा करैं।
श्रद्धा सों अति हीन हैं, फिर हरि आराधन कहा करैं।

और समस्त दुर्भाग्यन के ऊपर बड़ौ दुर्भाग्य है–विधर्मी राजा। अतएव–

पद मालकौंस

पंथ तौ है पर पथिक नहीं है, भूलि दिशा को भटक रहे हैं।
पथिकहू हैं तौ पाँव नहीं हैं, पगु होय के अटक रहे हैं।।
पाँवहू हैं तौ आँख नहीं है, अन्ध होये के ठिठक रहे हैं।
आँखहू हैं तौ प्रेम नहीं है, राह–खरच बिन लटक रहे हैं।।

अतएव कर्म, उपासना और ज्ञान–ये तीनों मार्ग पथिक बिना सूने पड़े हैं–

श्लोक

गृहे गृहे पुस्तक भार भारं, पुरे पुरे पण्डित यूथ यूथम्।
मठे मठे तापस वृन्द वृन्दं, न ब्रह्मवेत्ता न च कर्मकर्ता।।

घर घर में पुस्तकन के भार के भार पड़े हैं, नगर–नगर में पंडितन के दल के दल भरे हैं और मठ मठ में तपस्वी साधुन के झुण्ड के झुण्ड बसैं हैं, परन्तु न तौ कहीं कोई ब्रह्मज्ञानी ही है, और न कोई कर्मयोगी ही है!

पार्वती–कारण कहा है सर्वज्ञ प्रभो?

वही कलि–दावानल और कहा? याने समस्त वस्तुन कौ सार जराय दियौ है। वस्तु सबही हैं–ज्ञान है, योग है, भक्तिहू है, तीर्थ–तप है, परन्तु सब सारहीन केवल छूँछ रह गई हैं–

श्लोक

न योगी नैव सिद्धो वा न ज्ञानी सत्क्रियो नरः।
कलिदावानलेनाद्य साधनं भस्मतां गतम्।।

पार्वती–तौ हे कल्याणमय प्रभो! अब कौन–सौ मंगलमय उपाय करवे कौ विचार है?

शिव–उपाय तो भगवान् विष्णु ही करेंगे। धर्म की रक्षा कौ भार तौ उन्हीं के ऊपर है। मैं तो उनकौ एक सहायक अंग मात्र हूँ। अतएव उनके समीप जाय कै निवेदन करूँगो।

पार्वती–धन्य है देव! आपकी भूतभावनता कूँ धन्य है आप सदा ही प्राणीमात्र के लिए तत्पर रहे हैं–

सवैया

जब जब भीर परी वसुधा पै, अज अमरागन तुम पै आये।
तिनहीं लै त्रेता में तुम तौ, क्षीर पयोनिधि हरि ढिंग धाये।
द्वापर में ब्रह्मा संग लै, तुम शेष के शायी हरिहिं जगाये।
कल्पत कलि-कल्यान-काज अब, प्रेम नाम 'शिव' धन्य कराये।

अतएव नाथ! शीघ्र ही क्षीरसागर कूँ प्रस्थान करैं।

शिव-नहीं शिवे! अबकें क्षीरशायी विष्णु भगवान् के समीप नहीं, अबकें कारणार्णवशायी महाविष्णु के समीप जाय रह्यौ हूँ (उठते हुए) कुछ काल के लिए विदाई देऔ प्रिये!

पार्वती-मंगल विजय करैं नाथ (प्रणाम करती हैं)।

(महादेव का निर्गमन। पटाक्षेप)

समाज (बंगला पयार)

तबे बहु विचारिला योगमाया सह।
हरि बिनु निस्तारिते आर नहिं केह।।

(अद्वैतप्रकाश)

एतो कोहि सदाशिव सदानन्द चित्त।
कारण समुद्र तीरे हैला उपनीत।।

दोहा

करि विचार महामाया संग, कियो यही निरधार।
हरि बिन और न करि सकै, जीव दुक्ख निस्तार।।

सोरठा

सदाशिव असधारि, सदानन्द मंगल हिय।
आये कारणवारि, महाविष्णु के धाम महँ।।

(दृश्य-समुद्र-तट। सदाशिव ध्यानस्थ बैठे हैं)

दोहा

कारण वारि तीर पै, आसन दियौ जमाय।
करत ध्यान योगेश्वर, सौ सौ सात बिताय।।

चौपाई

प्रथम पुरुष अवतार जो होई। महाविष्णु धरैं नाम जु सोई।।
प्रगटावैं ब्रह्मांड अनन्ता। प्रतिपालैं धरि मूरति अनन्ता।।
प्रकृति प्रधान माया के ईशा। वैभव सृष्टि के सर्वेशा।।
ध्यान धरत तिनकौ शिवराया। वर्ष सात सौ सहज बिताया।।
महाविष्णु तब हरि हरषाये। प्रगट भये हरि हरि बम् गाये।।

चतुर्भुज महाविष्णु–(प्रकट होकर) हर हर बम् बम्। हर हर शंकर।

कीर्तन धुनि–(भूपाली)

शिव शंकर डमरूवाला।
कैलासपति बम् भोला।।
कैलासपति बम् भोला। हर आशुतोष शिव भोला।।

हे महायोगेश्वर! हे सदाशिव! आपने मेरे ध्यान में सात सौ वर्ष सात पहर के समान बिताय दिये। अब आप ध्यान तजि, नेत्रन कूँ उघारि, मेरी ओर कृपादृष्टि करें।

समाज दोहा

अन्तर्यामी हरि लियो, अन्तर रूप दुराय।
नयन उघारि शंकर लखै, बाहर हरि मुसकाय।।
(शिव का गात्रोत्थान। परस्पर अभिवादन एवं स्तुति)

शंकरा–केहरवा

महाविष्णु–बम बम् हर हर।
सदाशिव–जय जय हरि हरि।।
(महाविष्णु) हरि विश्वनाथ। (सदा०) हरि जगन्नाथ।
(महा०) हर भूतनाथ। (सदा०) हरि भूतनाथ।
(महा०) हर उमानाथ। (सदा०) हरि रमानाथ।।
(महा०) बम् बम् हर हर। (सदा०) जय जय हरि हरि।।1
(महा०) हर महादेव। (सदा०) हरि परमदेव
(महा०) हर मदनदहन। (सदा०) हरि मदनमोहन
(महा०) हर त्रिपुरहर। (सदा०) हरि त्रिगुण हर।।
बम बम हर हर। जय जय हरि हरि।।2
(बम् बम् बम्, ब्म बम हर हर। जयति जयति जय, जय जय हरि हरि।।)

(महा०) हर शूलपाणि। (सदा०) हरि चक्रपाणि।
(महा०) हर डमरूधारी। (सदा०) हरि शंखधारी।
(महा०) हर वृषभध्वज। (सदा०) हरि गरुड़ध्वज।
बम् बम् हर हर। जय जय हरि हरि।।3
(महा०) हर जटाधारी। (सदा०) हरि मुकुटधारी।
(महा०) हर बाघाम्बर। (सदा०) हरि पीताम्बर।
(महा०) हर भस्म अंग। (सदा०) हरि चन्दन अंग।
बम् बम् हर हर। जय जय हरि हरि।।
बम् बम् बम्, बम् बम् हर हर। जयति जयति जय, जय जय हरि हरि।।4
(महा०) हर गिरिजा प्रिय। (सदा०) हरि जलजा प्रिय।
(महा०) हर विल्व प्रिय। (सदा०) हरि तुलसी प्रिय।
(महा०) हर तांडव प्रिय। (सदा०) हरि लास्य प्रिय।
बम् बम् हर हर। जय जय हरि हरि।।5
(महा०) हर लिंगनाम। (सदा०) हरि सालिग्राम।
(महा०) हर योगीश्वर। (सदा०) हरि योगेश्वर।
(महा०) हर रामेश्वर। (सदा०) हरि रामेश्वर।
बम् बम् हर हर। जय जय हरि हरि।।6
(बम् बम् बम् ....। जयति जयति जय ....)

महाविष्णु-हे सदाशिव! हे विश्वनाथ! आपकी जय हो जय हो।

दोहा

हमरे तुम्हरे नाम गुन, तत्त्व एक समान।
रूप रंग में भेद बस, जानै सोइ सुजान।।

चौपाई

हौं जानौं जा हित तुम आये। हमरे ध्यान अखंड रमाये।।
जो उर शोच तिहारे भारी। मिटिहै बेगि सुनौ त्रिपुरारी।।
नन्दनन्दन गोलोक बिहारी। अवतरिहै भूलोक मझारी।।
श्याम रूप ढकि गौर वे बनिहैं। भक्त भेस में लीला करिहैं।।
उन संग लीला परिकर जैहैं। हम तुमहू मिलि तहँ प्रगटैहैं।।

समाज-दोहा

अस कहि महाविष्णु हरि, लियौ हरहि उर लाय।
दोउ मिलि प्रगटे रूप इक, अचरज कह्यौ न जाय।।

नहीं हरि नहीं हर तहँ, नहीं श्याम नहीं गौर।
शुद्ध स्वर्ण उज्ज्वल वरण, मूरति प्रगटी और।।

(सम्मिलित रूपधारी श्रीअद्वैताचार्य का आविर्भाव। किशोर वयस। दोनों भुजायें ऊपर उठीं)।

अद्वैत-(ऊर्ध्वबाहु) कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण (प्रवेश देवगण जय-गान करते हुए)।

देववृन्द

जय हरिहर रूप अद्वैत। जय हरिण सह अद्वैत।
जय कमलाक्ष अद्वैत। जय सीतानाथ अद्वैत।।1।।
जय लाभासुत अद्वैत। जय कुबेर-कुँवर अद्वैत।
जय अच्युतलाल अद्वैत। जय सीतानाथ अद्वैत।।2।।
जय भक्ति भण्डारी अद्वैत। जय भक्ति आचारी अद्वैत।
जय सिंह हुँकारी अद्वैत। जय सीतानाथ अद्वैत।।3।।
जय कृष्णाकर्षक अद्वैत। जय गौरावतारक अद्वैत।
जय गौराराधक अद्वैत। जय सीतानाथ अद्वैत।।4।।
जय गौर-परीक्षक अद्वैत। जय गौर प्रचारक अद्वैत।
जय गौर-विसर्जक अद्वैत। जय सीतानाथ अद्वैत।।5।।
हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।।

(संकीर्तन करते हुए परिक्रमा दे अन्तर्द्धान)

अद्वैत-(हुँकार पूर्वक) कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण!

समाज-(बंगला पयार)

कृष्ण कृष्ण बोलि छाँडये हुँकार।
देववाणी तखन होइलो चमत्कार।।

दोहा

कृष्ण कृष्ण कहि गर्जहिं, हुँकरहीं देव नवीन।
गगन गिरा अचरज भई, चित्त दै सुनो प्रवीन।।

आकाशवाणी-(बंगला) अद्वैतप्रकाश

सुनो महाविष्णु तुमि एइ मूर्ति ते।
अवतीर्ण होओ आगे लाभार गर्भेते।।
पाछे मुइ अवतीर्ण होइमु नदियाय।
शची जगन्नाथ घरे देखिवा आमाय।।

बलराम आदि कोटि जतो भक्तगण।
जीव उद्धारिते सबे लभिबा जनम।।

हे महाविष्णु देव! तुम या नवीन छद्म रूप सों भारतवर्ष के पूर्व बंगदेश में जो श्रीहट्ट नाम ग्राम है, वहाँ धनपति कुबेर के अवतार पण्डित कुबेराचार्य की धर्मपत्नी लाभादेवी के गर्भ सों प्रगट होओ। पश्चात् मैं हू नवद्वीप में श्रीशची जगन्नाथ के घर में अवतार लऊँगो।

श्लोक

गोलोकञ्च परित्यक्त्वा लोकानां त्राणकारणात्।
कलौ गौराङ्गरूपेण लोकलावण्य विग्रहः।।
अवतीर्ण भविष्यामि कलौ निज गणैः सह।
शची गर्भे नवद्वीपे स्वर्धुनी परिवारिते।।

मैं हू लोकोद्धार के निमित्त, निज परिकर सहित गोलोक सों अवतीर्ण होऊँगो। कलियुग में मेरौ परम मनोहर उज्जवल स्वर्ण वर्ण होयगौ। यह मेरो अवतार भागीरथी गंगा द्वारा परिवेष्टित जो नवद्वीप धाम है वहाँ पण्डित जगन्नाथ मिश्र की भार्या श्रीशचीदेवी के गर्भ सों प्रगट होयगो।

श्लोक

कृष्णावतार काले याः स्त्रियो ये पुरुषाः प्रियाः।
कलौ तेऽवतरिष्यन्ति श्रीदाम सुबलादयः।।
धर्मसंस्थापनार्थाय विहरिष्यामि तैरहम्।
कलौ नष्टं भक्तिपथं स्थापयिष्याम्यहं पुनः।।

कृष्णावतार काल के मेरे सखा-सखी-प्रियागण हू सब अवतार लेंगे। उनके संग मैं धर्म-संस्थापना करवे के लिए नाना प्रकार की लीला करूँगो एवं काल के प्रभाव सों नष्ट प्रेमभक्ति पथ की पुनः स्थापना करूँगो।

श्लोक

कलौ नष्टदृशामेष मत्पद्यार्क उदेष्यति।
मच्चक्षुषः सूर्यवन्मन्मुखात् प्रादुर्भविष्यति।।

तथा कलियुग के मोहमदान्ध मतिमन्द साधनहीन दीन जीवन के कल्याण के लिए मेरे स्वरूप सों अभिन्न यह सोलह-नाम-बत्तीस-अक्षर वारौ महामन्त्र रूपी सूर्य मेरे मुख सों उदय होयगो-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

श्लोक

अप्रकाश्यमिदं गुह्यं न प्रकाश्यं वहिर्मुखे।
भक्तावतारं भक्ताख्यं भक्तं भक्तिप्रदम्।।

यह मेरौ अवतार साक्षात् नहीं, भक्तावतार है-भक्त के रूप में है, भक्त के ही नाम में है और भक्ति प्रदान करवे वारौ है। यह अति गुप्त रहस्य है। याकूँ बहिर्मुखन के सम्मुख प्रकाशित नहीं करनौ।

अद्वैत-(हुँकार सहित) कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण!

(पटाक्षेप)

समाज-दोहा

पूर्व बंग श्रीहट्ट में, लाउड़ नाम प्रदेश।
नवग्राम इक ग्राम तहँ, जहँ प्रगटै सीतेश।।

(दृश्य-कुबेराचार्य और लाभादेवी शयन कर रहे हैं लाभादेवी के हृदय से 'हरिहर' रूप का प्रकट होकर नृत्य-कीर्तन करना।)

समाज चौपाई

इक निशि लाभा सपनौ पायौ।
हृदय हरिहर रूप लखायौ।।

कवित्त

देखत सपनौ माय, हृदय कमल आय
हरिहर देह इक, मनोहर धारी है।
अंग कान्ति उज्ज्वल, चहुँ दिशि जलमल
मधुर कीर्तन करैं, झरैं नैन वारी है।।

हरिहर कीर्तन-भैरव

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।
भुजा उठाय नाचैं, प्रेम-रस-रंग राचैं,
धरैं पग डगमग, करैं हुँकारी है।
हरे कृष्ण धुनि घोर सुनि यमराज दौर,
आय पर्‌यौ चरनन, शरण पुकारी है।।

(प्रवेश दौड़ते हुए धर्मराज का। साष्टांग प्रणाम करते हैं)

धर्मराज-जय हो प्रभो! जय करौ! रक्षा करौ नाथ! रक्षा करौ!

स्तुति इमन 3

जय हरि जय हर, जय जय हरिहर।
नाम रूप लीला जु अमित धर।।टेक।।
हास्यमायावर, दृष्टिसृष्टिकर,
मर्त्त्य स्वर्ग पाताल चराचर।
करि प्रवेश अन्तर, चालन कर,
पालन कर अवतार विविध धर।।1।।
स्वर्ग शीश पाताल चरण कर,
रवि शशि लोचन अनल वदन कर।
पवन प्राण महाकाल चाल कर,
व्यापक रूप विराट विश्वधर।।2।।
जलधर श्याम सुगौर कर्पूर वर,
अम्बरपीत दिगम्बर 'प्रेम' धर।
व्यालहार वनमाल हार धर,
रमाकान्त हरि उमाकान्त हर।।3।।

समाज दोहा

अस्तुति बहुविधि कर, विनय करत धर्मराज।
क्षमहु नाथ वाचालता, यह तौ कलियुग राज।।

चौपाई

कलियुग महँ तुव यह अवतारा। लखि विस्मय संशय हू अपारा
(कारण कि)
तुव दरशन जग पाप नसैं हैं। पापी सकल मुक्त ह्वै जैहैं।।

हरिहर-पापी मुक्त है जायँगे तो आपकूँ कहा आपत्ति है?

धर्मराज-आपत्ति नहीं नाथ, एक निवेदन है कि-

चौपाई

तुम सौंप्यो मोकूँ अधिकारा। करौ धर्माधर्म विचारा।
धर्म करै ऊँचौ पद पावै। पापी नीच योनि मधि जावै।।
सो अनुसरि हौं करौं विचारा। सो अब मिटि जैहैं अधिकारा।।
यासों रूप यह अपनो दुराऔ। संकट मेरो नाथ मिटाऔ।।

समाज

धर्म वचन सुनि प्रभु मुसिक्याने।
करौ मति थिर कित धर्म भुलाने।।

हरिहर

सोई धर्म है सोइ ज्ञाना। जासों होय दुक्ख निर्वाणा।।
सोई सन्त, देव, भगवाना। जासों पाय जीव परित्राना।।
महाभागवत तुम धर्मराज। दया धर्म कित भूलै आज।।
दया धरम को मूल कहावै। दया बिन ईश न शोभा पावै।।

धर्मराज-परन्तु नाथ-

निज कृत कर्म सों जीव दुखारे। कर्म फल भोग सकै को टारे।।
जो जस करिहै सो तस भरिहै। दया धर्म हमरो कहा करिहै।।
कर्म बँधावै कर्म छुड़ावै। दुःख सुख सकल कर्म भुगतावै।।
कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करहिं सो तस फल चाखा।।

हरिहर-सत्य है धर्मराज। कर्मवाद तौ प्रधान है ही, परन्तु यदि कोई बालक अपने कर्म-दोष सों बीमार पड़ जाय और वाके माता-पिता वातें कहैं कि 'भोग अपने कर्मन को फल। हम कहा कर्मफल बदल सकैं हैं।' ऐसो कहकैं वा बेचारे बालक कौ कोई इलाज न करावैं, वाकूँ मरवे-जीवे के ताँईं भाग्य पर छोड़ देंय, तौ ऐसे माता-पिता कूँ आप कहा कहेंगे?

धर्मराज-निष्ठुर! दयाशून्य! कर्त्तव्यशून्य।

हरिहर-बस, ठीक जेई बात ईश्वर और जीव के सम्बन्ध में हू समझनी चाहिऐं। यदि भगवान् जीव कूँ अपने कर्मफल भोगवे के ताँईं ही छोड़ देवैं, तौ वे करुणासिन्धु कैसे? जगत् के माता-पिता कैसे? दया-करुणा के बिना तौ उनके नाम और गुण ही लोप है जामिंगे।

दोहा

बालक अपने कर्मफल, भोगै व्याधि उपाध।
औषधि करैं माता पिता, यही दया कौ काज।।
जीव सुभाव है भूलनौ, सुध लैनौ हरि-कर्म।
भूल सुधार सम्हारनौ, यही दया हरि-धर्म।।
दया हरि कौ रूप है, दया हरी कौ काम।
दया के अवतार सब, दया सों हरि नाम।।

अतएव कलियुग के जीवन की दुर्दशा अब मोसों नहीं देखी जाय है। मैंने यह प्रतिज्ञा कर लीनी है कि उनके दु:ख कूँ अवश्य ही दूर करूँगो।

पद विहाग

अब मैं लीन्हौं यह प्रण धार।
जीव जरत दुक्खदव महँ, बरसाऊँ सुख धार।
(यह हरिनाम) काम जरावै, कर्म मिटावै, प्रेम बहावै धार
सो महामंत्र मंगलमंत्र, करिहौं नाम प्रचार।।2।।
दूजौ एक पन करौं तुम आगे, कराऊँ कृष्ण अवतार।
धन्य कराऊँ कलियुग नाऊँ, दऊँ कीर्तन आधार।।3।।

धर्मराज-परन्तु मेरौ अधिकार-मेरौ यह पद बन्यौ रहैगौ कै समाप्त ह्वै जायगौ नाथ?

हरिहर-बन्यौ ही रहैगौ।

धर्मराज-भलौ कैसे प्रभो? जब नाम-महामन्त्र गायवे वारेन की तो कहा, सुनवे वारेन तक के समस्त पाप राशि भस्म है जायगी तौ पापी सब शुद्ध है जायँगे। फिर मेरी यमपुरी कूँ कौन जायगो? सो धर्मराज कौ पद तो आप ही समाप्त है जायगौ।

हरिहर-नहीं धर्मराज जी नहीं। नाम-निन्दकहू तो कलि में बहुत बढ़ जायँगे। इतने हरि-नाम गायवे-सुनवे वारे नहीं होंगे जितने कि हँसी उड़ायवे वारे होंगे। उनके नाम-निन्दा रूपी महापराध कूँ हरिनाम हू शुद्ध नहीं कर सकैगो उनकूँ तो आपको धर्म-दण्ड ही नरक में शुद्ध करैगो। अतएव आप कोई चिन्ता न करैं। आनन्द सों अपनी संयमनपुरी में राज्य करैं। विजयताम्।

धर्मराज-जो आज्ञा भगवन्। आपकी जय हो, जय हो।

(प्रणाम कर प्रस्थान)

समाज दोहा

करि बिदा धर्मराज कूँ, हरिहर रूप नवीन।
जननी हृदय कमल महँ, भये जु तत्छिन लीन।।

सोरठा

निद्रा भई सो दूर, जगीं मात विस्मय भरी।
अद्भुत आनन्द पूर, रोम रोम प्रति छाय रह्यौ।।

चौपाई

सोवत मिश्रहिं टेरि जगाये।
स्वप्न-वृत्तान्त सकल सुनाये।।
सुनत सुअचरज आनन्द भारी। वचन ज्योतिषी सत निरधारी

कुबेराचार्य

जय जय जय प्रभु परम कृपाला। मंगल मंगल करौ सब काला
तीन पुत्र तुम दीये लीये। वृद्ध वयस पुनि बेलि फलीये।।
परन्तु हे मंगलमय!
चाहे देऔ चाहे लेऔ। मंगलमय मंगल नित करिओ।।
दु:ख सुख सबहि प्रसाद तिहारे। यह प्रतीति उर अटल हमारे।।
जय जय जय प्रभु मंगलकारी। सहज कृपालु जन हितकारी।।
सहज कृपालु कृष्णमुरारी। शरन शरन हम शरन तिहारी।।
हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (पटाक्षेप)
इति अद्वैत-प्राकट्य-लीला।

❖

आविर्भाव लहरी **द्वितीय कणामृत**

गौरांगावतार-प्रयोजन

अन्तरंग प्रयोजन--त्रिवाञ्छापूर्तिकरण
बहिरंग प्रयोजन-नाम-संकीर्तन-प्रचारण

श्लोक

वन्दे तं कृष्ण चैतन्यं, गौरं कृष्णमपि स्वयम्।
यो राधाभाव संलुब्धः स्वं भावं नितरां जहै।।
वैराग्य विद्या निज भक्तियोगः शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्णचैतन्य शरीरधारी, कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये।।

समाज दोहावली परिचय

कहौं शास्त्र आधार पुनि, महाजन मत अनुसार।
जा विधि सों जा काज कूँ, भयो गौर अवतार।।1।।

जब जब स्वयं भगवान् श्री-कृष्ण लेत अवतार।
ता द्वापर कौ जो कलि, तामें गौर अवतार।।2।।
सब द्वापर में कृष्ण नहीं, सब कलि में नहीं गौर।
अबही को यह धन्य कलि, जामें प्रगटे गौर।।3।।
मूल ग्रन्थ सों बचि रहै, परिशिष्ट में होय।
व्रजलीला में शेष जो, नदिया लीला सोय।।4।।
तासों कृष्ण अवतार कौ, पूरक हैं हरि गौर।
कह्यौ शास्त्र पुरान महँ, गुप्त प्रगट बहु ठौर।।5।।
(दृश्य-गोलोक धाम में श्रीकृष्ण एवं मधुमंगल आसीन)

समाज चौपाई

मंगलमय गोलोक बिहारी। नन्दनन्दन श्रीकृष्ण मुरारी।।
बिहरत संग सखा मधुमंगल। कहत कथा कछु मधुर सुमंगल।।
उर कछु भाव विराजत मंगल। लीला 'प्रेम' रचत अति मंगल

(नेपथ्य में हुँकार ध्वनिपूर्वक पुकार-हे जनार्दन! मधुसूदन! मुरारे! हे गोविन्द-गोपाल! दीनदयाल-भक्त प्रतिपाल! आऔ नाथ! पधारौ अपनी प्रतिज्ञा निभाऔ! जीव-जगत् को दुख नसाऔ)।

मधुमंगल-(चौंककर खड़ा हो ऊपर को देखता हुआ) सखे कृष्ण! यह ध्वनि कैसी मानौ तौ कोई सिंह की गर्जन हो?

श्रीकृष्ण-सखे! मधुमंगल! यह भूलोक पर एक भक्तराज की हुँकार-ध्वनि है।

मधु०-भूलोक की ध्वनि गोलोक तक? आश्चर्य!

श्रीकृष्ण-कोई आश्चर्य नांय गोलोक तौ बाहर ब्रह्माण्ड में और भीतर पिण्ड में सर्वत्र व्याप्त है। या कारण मेरौ भक्त चाहे जोर सों पुकारे या मन ही मन रोवै, वाकी पुकार तत्क्षण मेरे पास पहुँच जाय है।

मधु०-तौ ऐसौ यह भक्तराज है कौन, कन्हैया?

श्रीकृष्ण-सखे! आदि संकर्षण के अंश जो सदाशिव और महाविष्णु हैं, उनके ही सम्मिलित अवतार हैं ये भक्तराज। ये भारतवर्ष के गौड़ प्रान्त के श्रीहट्ट नामक ग्राम में प्रगट भये हैं तथा सीतानाथ अद्वैताचार्य के नाम सों विख्यात हैं।

मधु०-तौ वे या प्रकार सों हुँकार और गर्जन क्यूँ करैं हैं? कहा उनपै कोई आपत्ति-विपत्ति आय परी है?

श्रीकृष्ण-ये अपने दु:ख सों नहीं, संसार के प्राणिन के दु:ख सों दुखित हैं कै मोकूँ पुकार रहे हैं। मेरी ही आज्ञा सों ये प्रगट भये हैं तथा मैंने इनकूँ यह वचन हू दियो है कि तुम आगै चलौ, मैं पीछे आय रह्यौ हूँ। याहि कारण अब वे मोकूँ प्रगट करवे के ताँईं अनुष्ठान कर रहे हैं और भावावेश में आय कै सिंह की भाँति दहाड़ रहे हैं।

मधु०-तौ कन्हैया! ये ऐसी कौनसी पूजा-अनुष्ठान कर रहे हैं।

श्रीकृष्ण-सखे! मेरी पूजा में लगै ही कहा है। वस्तु नाँय भाव चाहिये। प्रेमपंथ में अनुष्ठान गौण है, भाव ही मुख्य है-

श्लोक

अण्वप्युपहृतं भक्तै: प्रेम्णा भूर्येव मे भवेत्।
भूर्यप्यभक्तोपहृतं, न मे तोषाय कल्पते।। (भाग०)

रसिया

भाव सों हानि लाभ जगत में, मेरी भाव सों पूजा होय।
भाव सों पूजा होय देव की, भाव सों सृष्टि होय।।
भाव-कनाहू सुमेरु घना है, लेत है मोकू रिझाय।
भाव बिना तौ सुमेरु चना है, देखूँ न आँख उठाय।।
भाव के आँसुन गंगा न्हाऊँ, रोम रोम सरसाय।
भाव बिना सूखौ रह जाऊँ, सात समुन्दर न्हाय।।
भाव चाव की माला पहनूँ, कबहूँ नहिं कुम्हिलाय।
भाव अभाव में हीरा मोती, चुभें वदन में आय।।
भाव-भोग अलौनी पाती, विश्वम्भर हू अघाय।।
भाव ही रूप मंत्र है मेरौ, कहूँ 'प्रेम' कहा गाय।।
याही कारण ये भक्तराज हू-

दोहा

दल जल तुलसी गंग सों, पूजत सालिग्राम।
गरजत हूँ हुँकार करि, आऔ श्रीभगवान।।

अतएव सखे! अब तौ मोकूँ जानौ ही परैगौ। एक तो भक्त की प्रतिज्ञा, दूसरी मेरी अपनी प्रतिज्ञा और तीसरी ....

मधु०-तीसरी कहा? रुक कैसे गयौ? सखा हू सों छिपाव? ऐसो रहस्य कहा है?

श्रीकृष्ण-कह तो दऊँ पर तू हाँसी करैगौ।

मधु०-मैं तेरी हाँसी नहीं करूँ हूँ, तोकूँ खुश करूँ हूँ, खुश!

श्रीकृष्ण-अच्छौ तो साँची साँची बतैयो, मेरो रंग कैसौ है।

मधु०-कारौ!

श्रीकृष्ण-मेरौ रूप कैसौ है?

मधु०-सबन सों निरालो!

श्रीकृष्ण-और मैं लगूँ कैसौ हूँ?

मधु०-प्यारौ! बड़ो ही प्यारौ! सबन ते प्यारौ।

(श्रीकृष्ण के गले में बाँह डालकर)

श्लोक

मधुरं मधुरं वपुरस्य विभो, मधुरं मधुरं वदनं मधुरम्।
मधु गन्धि मृदु स्मितमेतदहो, मधुरं मधुरं मधुरं मधुरम्।।

कन्हैया भैया! यह तेरौ साँवरो शरीर नख से शिख तांई सर्वांग मधुर मधुर है। यामें हू तेरौ यह मुखकमल तौ मधुर मधुर मधुर है। और या मुखकमल पै जो यह मीठी महक भरी मन्द हँसन है, यह तो मधुर, मधुर, मधुर, मधुर है। (कहते कहते गले से लिपट कर गाना)

सवैया

अवलोकत में नख ते शिख लौं तेरी देह मधुर ते मधुरं है।
ताहू पै यह वदन कमल तो, मधुर मधुर अति मधुरं है।
तहाँ मन्द सुगन्ध लिये मुसकान तो, हद बेहद ही मधुरं है।
यह मधुरं है, यह मधुरं है, यह मधुरं है, यह मधुरं है।।

(प्रेम-विह्वल होकर लिपट जाना)

श्रीकृष्ण-प्राणसखे! शान्त होऔ! तुम ऐसे विह्वल है जाऔगे तौ मेरी तीसरी रहस्य कथा कौन सुनैगौ?

मधु०-(स्थिर होकर) अहा! कन्हैया! सो तौ मैं भूल ही गयौ हो, बात ही भुलायवे की कर देय है। अच्छौ बताय वह कौन-सी रहस्य कथा है?

श्रीकृष्ण-तौ सुन! पर हँसियौ मत। मैं अपने या कारे रूप पै आप ही मोहित हूँ, पागल हूँ।

मधु०-(ठहाका मार कर हँसते हुए) हा हा हा हा! वाहरे व्रज के रसिया वाह! दुनिया ते निरालौ ही रसिया! परन्तु ठीक हू है। जो दूसरेन के रूप पै मोहित हो वह तौ झूँठौं रसिया और जो अपने ही रूप पै मोहित हो वह साँचौ रसिया पक्कौ रसिया। वाह-3

श्रीकृष्ण-(मुँह फुलाकर) जा सारे! अब मैं तोते कछु नाँय कहूँगौ। मैंने पहलें ही कह्यौ हो कि तूम हँसैगौ, और मेरी हाँसी उड़ावैगौ। (मुँह फेर बैठ जाना)

मधु०-(श्रीकृष्ण के गले में हाथ डाल, ठोड़ी पकड़ मनाता है) रूठै मत कन्हैया भैया! मैं तेरे हाथ जोरूँ-पाँव छीऊँ हूँ। मुख मत छिपावै। मेरी ओर हँस कै देख! कन्हैया! तेरौ मुख मलिन होंत ही मोकूँ तो यह दिन हू रात जैसी अँधेरी लगै है यासों बोल भैया! हँस दै! मैं तेरी हा हा खाऊँ! मान जा।

श्रीकृष्ण-(हँसते हुए सीधे बैठ) अरे ढीठ लबार! मैं तो अपने हृदय सम्पुट के रहस्यातिरहस्य, मधुराति मधुर, दिव्याति दिव्य भावरत्नन कूँ दिखामनो चाहूँ हूँ और तू मेरी खिल्ली उड़ावै है। ग्वारिया गँवार जो ठहर्‌यौ।

मधु०-परन्तु तेरो ही सखा मनसुखा-तेरे मनकूँ हँसाय-खिलाय कै सुख दैवे वारौ। तू बुरौ मत मान लियौ कर! अच्छौ अब मैं नहीं हँसूगौ। शान्त हैकै सुनूँगौ। बताय दे।

श्रीकृष्ण-तौ ध्यानपूर्वक सुन। मैं अपने या श्याम रूप पै आपही मोहित हूँ। व्रज में लीला करते समय काहू समय मेरे मन में तीन वासना उदय भई हीं (1) प्रथम स्वमाधुर्यास्वादन की वासना (2) द्वितीय राधा सुखास्वादन की वासना और (3) तृतीय राधा प्रेमास्वादन की वासना।

श्लोक-समाज

श्रीराधायाः प्रणय महिमा कीदृशो वानयै वा-
स्वाद्यो येनाद्‌भुत मधुरिमा कीदृशो वा मदीयः।
सौख्यं चास्य मदनुभवतः कीदृशं वेति लोभात्
तद्‌भावाढ्यौ समजनि शचीगर्भसिन्धौ हरीन्दुः।।

श्रीकृष्ण-दोहा

जानन राधा प्रेम चहौं, भोगन चहौं निज रूप।
चाखन राधा सुख चहौं, इच्छा लीन अनूप।।

मधु०-प्रथम वासना स्वमाधुर्यास्वादन कौ तात्पर्य कहा है

श्रीकृष्ण-सुन! यह मेरौ श्याम रूप ऐसौ है कि-

(बंगला पयार)

अद्‌भुत अनन्त पूर्ण मोर मधुरिमा।
त्रिजगते इहार केह नहिं पाय सीमा।। (चै०च०)

चौपाई

अद्‌भुत माधुरी पूर्ण अनन्ता। त्रिभुवन कोई न पावै अन्ता।।
जो कोई पीवै तृप्त न होवै। पीवत पीवत प्यासौ रोवै।।
विधना कूँ कोसै अकुलाई। अँखियाँ कोटिक क्यों न बनाईं।।

दोहा

ऐसौ अचरज रूप जब, देखूँ दरपन मांझ।
राधा बनि भोगूँ इहै बार बार जिय साध।।

सोरठा

महामाधुरी सार, मेरे श्यामल रूप में।
मैं हूँ लूटूँ यार, राधा जाकूँ लूट रहीं।।

अतएव प्राणप्रियतमा श्रीराधा की भाँति मैं अपने श्याम रूपरसामृत कूँ पान करनौ चाहूँ हूँ-यही है मेरी स्वमाधुर्या-स्वादन की वासना।

मधु०-परन्तु कन्हैया! तेरे या श्यामरूपरसामृत कौ पान कहा हम तेरे सखा नहीं करैं हैं, अथवा तेरे नन्दबाबा, यशोदा माता, आदि गोपी-गोप नहीं करैं हैं फिर तू श्रीराधिका की भाँति ही क्यूँ आस्वादन करनौ चाहै है-कारण कहा है?

श्रीकृष्ण-कारण कि अन्य समस्त गोपी-गोपन के प्रेम ते श्रीराधा के प्रेम में कोई एक अनन्य विशेषता है। तुम सखान कौ प्रेम तौ 'अनुराग' दशा तक विकसित है। गोपिन कौ प्रेम 'महाभाव' दशा तक विकसित है परन्तु श्री राधा कौ प्रेम तौ महाभाव की चरम दशा 'मादनाख्य महाभाव' तक पूर्ण विकसित है। अतएव-

(बंगला)

एइ प्रेम द्वारे नित्य राधा एकलि।
आमार माधुर्यामृत आस्वादे सकलि।।

(चै०च०)

केवल एकमात्र श्रीराधा ही या मदनाख्य महाभाव के द्वारा मेरे अद्‌भुत अनन्त माधुर्यामृत कौ पूर्ण आस्वादन नित्य कर रहीं हैं। याही कारण मैं हू श्रीराधा की भाँति ही पूर्ण आस्वादन करनौ चाहूँ हूँ, अल्पास्वादन नहीं और या माधुर्यास्वादन कौ फल स्वरूप है मेरी दूसरी वासना-राधासुखा-स्वादन की।

मधु०-राधासुखास्वादन कौ तात्पर्य हू समझाय दै कन्हैया

श्रीकृष्ण (बंगला)

विषय जातीय सुख आमार आस्वाद।
आमा हैते कोटि सुख आश्रयेर आह्लाद।।

सखे! मैं तौ विषय-जाति कौ सुख ही आस्वादन करूँ हूँ परन्तु मेरे या सुख ते कोटिगुना अधिक आश्रय जाति श्रीराधा कौ सुख है-ताकूँ मैं आस्वादन करनौ चाहूँ हूँ।

पद-मालकोष

राधा सों जो सुख मैं पाऊँ, सो तौ जानूँ भाई।
राधा मोसों जो सुख पावै, सो नहीं जान्यौ जाई।।
राधा नाम रटि राधा नाम सुनि, जो सुख मोकूँ होवै।
श्याम नाम रटि, श्याम नाम सुनि, सौगुन राधा मोहै।।
राधा रूप लखि, राधा शब्द सुनि, मेरौ हिय उमगावै।
श्याम रूप लखि, श्याम शब्द सुनि, सौगुन राधा लुभावै।।
(मेरी) पंच इन्द्रियाँ राधा संग सों, जो रस माधुरी लूटैं।
श्याम संग सों राधा तन मन, सौगुन आनन्द लूटैं।।
प्रेममयी राधा कौ सो सुख, राधा बिन को जानै।
सो सुख आश्रय रस चाखन हित, मेरौ जिय ललचावै।।

मधु०-(स्वगत) वाह रे रसिया! रस-लम्पटता की भूख होय तो ऐसी होय। (प्रकाश्य) और अब तीसरी वासना राधा-प्रेमास्वादन कौ तात्पर्य हू समझाय दै। सचमुच कन्हैया! ऐसी मीठी कथा तौ मैंने आज ही सुनी।

श्रीकृष्ण-सुन सावधानी सों।

मधु०-हाँ हाँ! हजार कानन सों सुन रह्यौ हूँ। तू कह दै झटपट।

श्रीकृष्ण पद-भैरवी

मेरी माया जीव भुलाया, सकल जगत विरमाया है।
मो माया हू हार रही, जय राधा जू की माया है।।1

विश्व सकल मो द्वार भिखारी, मोते आनन्द पाया है।
सो आनन्द अखंड अनन्त मैं, राधा चरन लुटाया है।।2
मो रस सों सब विश्व सरस और गन्ध सों जग महकाया है
मैं राधावसनांचल-खेलन वायु ने सरसाया है।।3
मेरी मुरली तीन लोक में, सब का धर्म छुड़ाया है।
राधा नाम शब्द ने मेरौ, ईश्वर धर्म भुलाया है।।4
(अतएव) राधा-प्रेम गुरु है मेरौ, गुरु का पार न पाया है।
गुरु के गुरुबल आगे मेरौ, ईश्वर बल भी लजाया है।।5

(बंगला)

राधिकार प्रेम गुरु, आमि शिष्य नट।
सदा आमाय नाचाय, नृत्य उद्भट।।

(चै०च०)

मनिहारी बनूँ, लिलिहारी बनूँ, ब्रह्मचारी स्वांग सजाया है
ज्यों ज्यों राधा प्रेम नचावै, त्यों त्यों नाच दिखाया है।।7
कोटि स्वांग धरि धरि नित नांचूँ, तऊ पार नहीं पाया है।
'प्रेम' सिन्धु हैं राधारानी, अपार प्रेम की माया है।।8

सारांश यह है कि मेरी रूप-माधुरी कैसी है, राधा प्रेम की महिमा कैसी है और मेरी रूप-माधुरी कूँ पान करकै श्रीराधा कूँ कैसो सुख मिलै है-ये तीन विषय मैं जाननौ चाहूँ हूँ। ये ही मेरी तीन वासना हैं जिनकी पूर्ति व्रजलीला में है ही नहीं सकै है।

मधु०-क्यूँ नहीं है सकै है भलो?

श्रीकृष्ण-कारण कि मेरौ भाव विजातीय है अर्थात् विषय-जाति कौ भाव है, आश्रय जाति कौ नहीं। अर्थात् मो में सेव्य कौ भाव है, सेवक कौ नहीं, भगवान् कौ भाव है भक्त कौ नहीं। अतएव मैं कृष्ण के रूप में अपनी माधुरी कौ आप ही आस्वादन कैसे कर सकूँ हूँ? मेरी माधुरी कौ सुख तौ दूसरे ही भोग सकैं है।

मधु०-तो फिर कहा करैगौ रसिया, स्वरूपरसलम्पट!

(श्रीकृष्ण के गले में हाथ डाल मनाते हुए) भूल गयौ भैया मैं भूल गयौ। स्वभाव ही ऐसौ, मेरौ नाम ही ऐसौ-मनसुखा। हँसे-हँसाये बिना रह्यौ नहीं जाय है। सो हँस दे भैया! और बताय अब कैसे स्वमाधुर्य कौ सुख लूटैगौ? कहा राधा बनैगौ? तो मोकूँ सखी बनाय लीजो।

श्रीकृष्ण-अरे वाचाल! बावरे! कहा कोई राधा हू बन सकै है? वह तौ मैं ही एक बार राधा बन गयौ सो बन गयौ। जैसे मैं कृष्ण एक, वैसे ही राधा हू एक ही एक। और हम राधाकृष्ण नित्य द्वै है करकै हू एक के एक ही।

मधु०-तौ फिर कहा करैगौ? कहा बनैगौ? मेरी तो छाती धुकर-पुकर कर रही है। जल्दी बताय दै।

श्रीकृष्ण-सुन! श्रीराधा के हृदय कौ भाव और अंग की कान्ति लैकै मैं श्याम ते गौर बनूँगो, भगवान् ते भक्त बनूँगो और तब अपनौ माधुर्य आस्वादन करूँगो! अन्य कोई उपाय नहीं है।

(बंगला)

राधिकार भाव कान्ति अंगीकार बिने।
सेइ तीन सुख कभु नही आस्वादने।।

(चै०च०)

दोहा

राधा उर को भाव लऊँ, राधा तन की कान्ति।
बनूँ श्याम ते गौर मैं, लखि होवै जग भ्रान्ति।।
प्रिया भाव में रंगि हृदय, हरे कृष्ण करूँ जाप।
प्रिया रंग सों ढाँपि तन, भूलूँ भुलाऊँ आप।।

सवैया

भक्त जनन में भक्तहि बनके,
भक्त भाव सों निज कूँ भजि हौं।
आपुन नाम कूँ आपहि गाय के,
आपुन रूप कूँ आपहि भजिहौं।
आपुन प्रेम में आप विरही सजि,
आपुन खोज कूँ घर तजि भजिहौं।
आपुन रूप औ भाव दुराय के,
राधा भाव औ रूप कूँ भजिहौं।।

या प्रकार सों इन तीन वासवान की पूर्ति करनौ ही मेरौ गौरांगवतार कौ निगूढ़ अन्तरंग प्रयोजन है।

मधु०-तौ प्रकट बहिरंग प्रयोजन कहा है?

श्रीकृष्ण-हरिनाम संकीर्तन प्रचार! यह तौ तुम जानौ ही हौ कि प्रत्येक युग कौ अपनौ एक विशेष धर्म होय है।

मधु०-हाँ हाँ, जानूँ क्यूँ नहीं। एक तौ मैं चतुर्वेदी ब्राह्मण और ताहू पै सनातन ब्रह्म कौ सनातन सखा!

श्लोक

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं, त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरि कीर्तनात्।।

दोहा

सतयुग कौ धर्म ध्यान है, त्रेता कौ बलि यज्ञ।
द्वापर सेवा पूजा है, कलियुग कीर्तन यज्ञ।।

श्रीकृष्ण-तौ बस, कलियुग के या धर्म नाम-संकीर्तन कौ प्रचार करनौ ही या मेरे गौरांगवतार कौ प्रकट बहिरंग प्रयोजन है।

मधु०-परन्तु कन्हैया! यह तौ युगावतार कौ कार्य है। यह स्वयं भगवान् कौ कार्य तौ नहीं है।

श्रीकृष्ण-सत्य है। युगधर्म तौ मेरे अंशावतार द्वारा हू प्रचार है सकै है और होवै हू है परन्तु मेरे बिना अन्य कोई अवतार ब्रज की प्रेम-भक्ति नहीं दै सकै है। वह प्रेम-भक्ति चिरकाल सों अनर्पित ही, वाकूँ अब मैं सर्वसाधारण के ताँईं सुलभ कर दऊँगो-'चारि भावभक्ति दिया नाचाइमु भुवन' (चै.च)

मधु०-परन्तु कलियुग के युगावतार कौ वर्ण तौ कृष्ण बतायौ जाय है, तू तौ गौर बनैगो। यह कैसौ गौर युगावतार होयगौ-समझ में नांय आयो।

श्रीकृष्ण-सुन ध्यानपूर्वक-

दोहा

युग युग प्रति नहिं होत है, लीला कृष्णावतार।
(परन्तु) प्रतियुग धर्म सिखावत, होत युगावतार।।

मेरे युगावतार तौ प्रत्येक सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलि में होते रहे हैं परन्तु मेरौ कृष्णावतार तौ एक कल्प में केवल एक ही बार होय है।

मधु०-एक कल्प तौ ब्रह्मा के एक दिन कूँ कहैं हैं कि जामें एक हजार सतयुग, एक हजार त्रेता, एक हजार द्वापर और एक हजार कलियुग होय हैं। और ये चार हजार युग मिल मानव के चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष के बराबर होय हैं।

श्रीकृष्ण-तौ इन चार हजार युगन में मेरे चार हजार युगावतार होय हैं युग-धर्म-स्थापना के हेतु। परन्तु मेरौ कृष्णावतार तौ एक ही बार होय है।

मधु०-वह कब होय है?

श्रीकृष्ण-एक हजार द्वापरन में सों काहू एक द्वापर में।

मधु०-अब कैं कब भयौ हो?

श्रीकृष्ण-अबके मेरौ कृष्णावतार भयौ हो वर्तमान श्वेत वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के 71 इकहत्तर चतुर्युगन में ते अट्ठाइसवें चतुर्युग के द्वापर के शेष भाग में। और याके ठीक पश्चात् कौ जो यह कलियुग है वामें मेरौ यह गौरांगवतार हैवे वारो है। या प्रकार ब्रह्मा के एककल्प अर्थात् एक दिन में मेरौ कृष्णावतार एक ही बार काहू एक द्वापर के अन्त में होय है और वाके पश्चात् के कलियुग में मेरौ गौरांगवतार हू एक ही बार होय है। और अब विशेष ध्यान-पूर्वक सुन। जब जब मेरौ गौरांगवतार होय है तब तब कलि-युग कौ धर्म जो नाम-संकीर्तन है वाकौ प्रचार मैं ही स्वयं करूँ हूँ। वाके लिए एक पृथक् युगावतार नहीं होय है। याही कारण अन्य अन्य युगावतार तौ सब कृष्ण वर्ण के होय हैं परन्तु जा कलियुग में स्वयं मैं ही संकीर्तन-प्रचार करूँ हूँ वहाँ मेरौ गौर वर्ण होय है। अन्य युगावतार तौ केवल संकीर्तन को ही प्रचार करैं हैं परन्तु मैं गौर रूप में नाम के संग प्रेमभक्ति हू प्रदान करूँ हूँ-'नाम प्रेम माला गाँथि पराइलो संसारे' (चै०च०)

मधु०-(स्मरण पूर्वक) ओहो हो! याद आय गई! याद आय गई!

श्रीकृष्ण-कहा याद आय गई?

मधु०-तेरे कृष्णावतार की बात तेरे नामकरण के समय गर्गाचार्य ने नन्दबाबा ते कही हती-

श्लोक

आसन् वर्णास्त्रयोह्यम्य गृह्लतोनुयुगं तनुः।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत, इदानीं कृष्णतां गतः।।

अर्थात् तुम्हारौ यह पुत्र भिन्न-भिन्न युगन में भिन्न-भिन्न रूप धारण करै है। याके शुक्ल, रक्त तथा पीतवर्ण वारे रूप तौ पहले है चुके हैं और अब द्वापर में याकौ कृष्ण वर्ण भयौ है।

श्रीकृष्ण-शाबास मेरे पण्डित! मैं तौ तोकूँ कोरौ भोजन भट्ट लडुआ दास ही समझतौ परन्तु तू तो भागवत तक की खबर राखै है। अच्छो तौ अब यह बता कि ये मेरे तीन वर्ण के रूप पहले कब कौन से युगन में भये।

मधु०-तौ सुन लै। भागवत एकादश स्कन्ध में करभाजन नामक योगेश्वर निमि महाराज के प्रति कहैं हैं कि वर्तमान सतयुग के अवतार कौ तौ शुक्लवर्ण हो, त्रेता के युगावतार कौ रक्त वर्ण हो और अब द्वापर में तेरौ कृष्ण वर्ण है ही अब रह्यौ पीत अर्थात् गौर वर्ण ....

श्रीकृष्ण-हाँ, यह बता यह मेरौ गौर वर्ण पहले कब है चुक्यौ है कि जाके प्रति गर्गाचार्य ने इंगित कियौ है।

मधु०-यह गौरवर्ण भयो हौ पूर्वकल्प में अर्थात् ब्रह्मा के आज ते पहले के दिन में जब द्वापर में तुम्हारौ कृष्णवतार भयौ हो तब ठीक वाके पश्चात् के कलियुग में तुम्हारे पीतवर्ण कौ गौरावतार हू है चुक्यौ है।

श्रीकृष्ण-और वाही न्याय सों अब या कलियुग में फिर हैवे जाय रह्यौ है। वाही के लिए यह सब आयोजना है रही है। एक तौ सीतानाथ अद्वैताचार्य पुकार रहे हैं। दूसरे, अपनी तीन वासना हू पूरी करनी है। तीसरे, युग धर्म संकीर्तन कौ हू प्रचार करनौ है और चौथे निज प्रेमभक्ति हू प्रदान करनी है जो एक दीर्घकाल सों अनर्पित है।

मधु०-परन्तु कन्हैया! मोकूँ तौ अब एक नयी शंका ने आय दबायौ है।

श्रीकृष्ण-यह कहा है, सुनूँ तो सही।

मधु०-वह शंका यह है कि कलियुग में तौ एक कल्कि अवतार कौ ही उल्लेख शास्त्रन में मिलै है। गौरांगावतार कौ उल्लेख तौ स्पष्ट रूप सों कहूँ नहीं दिखायी परै है।

श्रीकृष्ण-सखे! कल्कि, राम, कृष्ण, ये सब लीलावतार हैं। ये अवतार तौ साधु-रक्षा, दुष्ट-नाश तथा धर्म-स्थापन हेतु होय हैं परन्तु ये मेरौ गौरांगावतार न ठीक लीलावतार ही है और न युगावतार ही।

यह मेरौ प्रच्छन्न-अवतार है-भक्त के भेष में स्वयं भगवद्-अवतार है। श्रीमद्भागवत में भक्त प्रह्लाद नृसिंहजी के प्रति कहैं कि 'च्छन्न: कलौ यद्भव: त्रियुगोऽथ स त्वम्'-'हे भगवन्! आपकौ एक नाम त्रियुगी है अर्थात् तीन युगन में आपकौ अवतार प्रगट है परन्तु कलियुग में 'च्छन्न!' अर्थात् छिप्यौ भयौ, ढक्यौ भयो है। यही मेरौ गौरांगावतार है। याही कारण शास्त्रन में याकौ उल्लेख प्रच्छन्न रूप सों ही है, प्रकाश्य रूप सों नहीं।

मधु०-अरे कन्हैया! मेरे ऊपर तौ एक नयी चिन्ता और चढ़ बैठी है!

श्रीकृष्ण-तौ उतार डार वाकूँ हू!

मधु०-(श्रीकृष्ण का हाथ पकड़ सस्नेह मुखावलोकन पूर्वक कातर भाव से) क्यों भैया कन्हैया! कहा तू हमकूँ गोलोक कूँ, व्रज कूँ, सबन कूँ त्याग कै चल्यौ जायगो?

श्रीकृष्ण-(सस्मित उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए) वृथा चिन्ता सखे! मैं गोलोक अथवा व्रज कूँ छोड़ूँगो ही क्यूँ? मैं यहाँ हू रहूँगो और वहाँ हू रहूँगो।

मधु०-अर्थात् छः महीना यहाँ और छः महीना वहाँ? अथवा तौ दिन कूँ यहाँ, रात कूँ वहाँ? अथवा रात कूँ यहाँ, दिन कूँ वहाँ?

श्रीकृष्ण-अरे नहीं मेरे गोबर-गणेश! बारहों मास, आठों पहर, दिन-रात, यहाँ वहाँ दोनों जगह रहूँगो। मैं एक ही समय में अनेक रूपन सों अनेक भगवद्-धामन में, अनेक प्रकार की लीला कर रह्यौ हूँ। मेरे सब धाम, मेरे सब रूप और मेरी सब लीला नित्य हैं, सत्य है, अनादि हैं और अनन्त हैं। तू मेरौ नित्य सखा चतुर्वेदी पंडित है कै हू मेरी महिमा कूँ भूल कैसे जाय है?

मधु०-सखा हूँ याही कारण भूल जाऊँ हूँ। दास भक्त होतौ तौ नांय भूल सकतौ। परन्तु हाँ। यह तौ बता, मैं कहाँ रहूँगो, यहाँ कै वहाँ?

श्रीकृष्ण-यहाँ वहाँ दोनों ही जगह रहैगौ, जैसे मैं रहूँगो।

मधु०-(साश्चर्य) द्वै-द्वै मधुमंगल और द्वै-द्वै कृष्ण! वाह रे मेरे मदारी!

श्रीकृष्ण-(हास्यपूर्वक) तू पंडित नांय पूरौ लट्ठ गँवार है। मेरौ इतनी देर को परिश्रम तैंने सब गुड़-गोबर कर दियौ। अरे मेरे मूर्ख पंडित! मैं वहाँ कृष्ण नांय, गौर बनूँगौ, गौर! समझ गयौ न? और तू वहाँ पंडित मधुमंगलजी महाराज नांय बनैगौ, तू वहाँ बनैगौ कुंजड़ा कुंजड़ा!

मधु०-(उछल कर सकोप) कहा कही कुंजड़ा?

श्रीकृष्ण-हाँ हाँ कुंजड़ा, साग-पात बेचवे वारौ श्रीधर कुंजड़ा।

मधु०-(प्रणयकोप पूर्वक) वाहरे छलिया मदारी नट! आप तौ अहीर गोप ते बनेगौ ब्राह्मण और हमारे ब्रह्म-वपु कूँ बनावैगौ कुंजड़ा? जा सारे। हम नांय चलेंगे तेरे संग!

श्रीकृष्ण-(मनाते हुए) दादा मनसुखा! बुरौ मत माने। यह तुम्हारौ ब्रह्म-विग्रह तौ ब्रह्म-कुल में ही अवतार लेगौ केवल एक धन्धौ ही बदल जायगौ। और ग्वारिया ते तौ कुंजड़ा के काम में आराम हू रहैगौ। बैठे रहे,

कोई ग्राहक आयौ तौ साग तौल दियौ और फिर आनन्द में हरि-गुण गायौ करियो-कीर्तन कर्‌यौ करियौ।

मधु०-(झुंझलाकर) कीर्तन-फीर्तन मोते कछु नांय होयगौ। और साग बेचवे वारौ बनिया-बामन तो मैं कभू नांय बनूँगो।

श्रीकृष्ण-अरे सुन तौ लै मेरी पूरी बात। तू मेरौ श्रीधर बनैगौ, मोकूँ बढ़िया-बढ़िया साग-सब्जी पवायौ करैगो। तेरे साग के बिना तौ मोकूँ भोजन ही नांय रुचैगौ। बता, चलैगौ कै नहीं!

मधु०-(श्रीकृष्ण के गले में हाथ डाल प्रसन्नता पूर्वक) चलूँगो कन्हैया! चलूँगो! आगै-आगै चलूँगो। अपने सुख के लिए मोकूँ जो चाहे सो बनाय लै। कुंजड़ा कहा चूहड़ा बनाय लै। लै, मैं या जनेऊँ कूँ अबही खूँटी पै लटकाय दऊँ हूँ (जनेऊ उतारने लगता है)।

श्रीकृष्ण-(हाथ पकड़ रोकते हुए) उतारै काहे कूँ है दादा! तू ब्राह्मण ही तो बन्यौ रहैगौ। यासों मेरी प्रसन्नता के ताँईं जनेऊ पहन रहौ।

मधु०-अच्छौ तौ लै, रहन दऊँ हूँ! तू खुश रह-

गजल दादरा

न जातिही है प्यारी, न है जनेऊ प्यारा।
इक तू बना रहै बस, प्राणों से प्यारा प्यारा।।1
(तेरे) नखचन्द्र की छटा पर, हम धर्म सब चढ़ाए।
तेरी शरण ही श्याम, सब धर्म है हमारा।।2
तेरे संग खेल खेलें, हारें चाहे तो जीतें।
तेरी खुशी में खुश हैं, जीवन है तू हमारा।।3
तुझ से न तार टूटे, तुझ सा ना यार छूटे।
फिर 'प्रेम' जो बनाले, हाजिर हूँ लाख बारा।।4

श्रीकृष्ण-अब तौ कोई शंका-शंकु नांय रह गयी?

मधु०-(स्मरण पूर्वक) अरे हाँ! हल-मूसर वारे दाऊ दादा की बात तौ रह ही गयी। वे हू चलेंगे न? उनके बिना तौ रंग ही नांय जमैगौ!

श्रीकृष्ण-सखे! मैं कह ही चुक्यौ कि मैं इकलौ जायकै वहाँ कहा करूँगौ? कौन के संग लीला करूँगौ? यासों मैं तौ सब परिकरन के सहित ही वहाँ जाऊँगो! और दाऊ दादा तौ हलमूसरन नै छोड़ कै वहाँ नित्यानन्द के नाम सों प्रगट हू है गये हैं।

(पार्श्व दृश्य-कुमार नित्यानन्द की झाँकी ऊर्ध्वबाहु, 'हरिबोल' उच्चारते हुए)

अरे अबकें वे भंग को रंग नहीं हरिनाम को रंग जमायँगे। प्रेम-प्याला पीवैंगे और पिवायँगे पापी-पतित जीवन कूँ टेरि टेरि कै, घेरि घेरि कै हरिनाम सुनावैंगे और प्रेम लुटावैंगे। जीवोद्धार तौ वे ही करेंगे। मैं तौ केवल हरे कृष्ण गाऊँगो और रोऊँगो।

मधु०-तौ फिर दुष्टन कौ नाश कैसे होयगौ? और दुष्टन के नाश के बिना धर्म की स्थापना हू कैसे है सकैगी? और रोमनो हू क्यूँ? खूब तो वंशी बजामनो और नाचनो-गामनो।

श्रीकृष्ण-सखे! दुष्टन कौ संहार तौ लीलावतारन कौ कार्य है। यह तौ मैं कल्कि अवतार में करूँगो। अबकै तौ दुष्टन की दुष्टता कूँ संहार करनौ है और हरिनाम की बंशी बजामनी है।

पद-आसावरी

नहीं मारूँगो नहीं मारूँगो, मैं।
मारि मारि बहु पार किये अब, गरे लगाय के तारूँगो, मैं।।1
मारनहू जो कोई आवै, मैं न सुदर्शन धारूँगो।
शीश झुकाय औ भुजा उठाय कै, हरि हरि बोल उचारुँगो, मैं।।2

श्लोक

आरुह्य दिव्य करुणाभिध रम्य यानं
सद्भक्तसैनिकगणैः सह भूमि रङ्गे।
स्वाख्यान-कीर्त्तन-शरोत्कर वर्षणन
जेष्यामि सर्वजीवपीडकं पापशत्रुम्।।

चढ़ि रथ मनोहर करुणादिव्य कौ, सेना भक्त की साजूँगो।
कीर्तनधनु नामबान बरसाय के, सेना पाप संहारुँगो, मैं।।3
एक बार जो हरि हरि बोलिहै, कोकि पाप पजारुँगो।
नाच गाय हरि सहज 'प्रेम' सों, कलिजीवन भव तारुँगो, मैं।।4

मधु०-भैया कन्हैया! 'हरि हरि' तौ मोते लाख बार बुलवाय लै। तेरौ ही प्यारौ नाम तौ है। राधा और कृष्ण एक 'हरि' नाम में ही। फिर क्यों नांय बोलूँगो और नाचहू लऊँगो परन्तु रोमनो-धोमनो तो मोते सात जन्म में हू नांय होयगौ।

श्रीकृष्ण-अब के जन्म में है जायगौ। ऐसौ रोयगौ, ऐसौ रोयगौ कि रात भर सोवैगौ हू नहीं! हा कृष्ण! हरे कृष्ण! किल्लाय किल्लाय कै रात काट दैगौ।

मधु०-परन्तु खायवे कूँ लडुआ मिल जायँगे न? अहा हा

देखत लडुआ फूले नकुआ, खात ही फूले गाल।
गयौ पेट में देह हू फूले, लडुआ ही गोपाल।
मेरो लडुआ ही गोपाल।।

(आनन्द में नाचने लगता है)

श्रीकृष्ण-(हँसते हुए) पूरौ ग्वारिया है! लडुआ के नाम पै ही नाचवे लग्यौ। अरे चिन्ता मत करे भोजन भट्ट। वहाँ तेरे लडुआन ते हू अधिक रसीले, चुचीले, मुलायम माल मिलेंगे पर दार-भात और साग के बिना तौ पेट ही नहीं भरैगौ। सुकतनी, भाजा, चड़चड़ी घेंट, लफरा, आलुरदोम्-पचासन प्रकार के साग। साग ही बेचैगौ, साग ही खावैगौ और मोकूँ हू खवायगौ! क्यों, राजी है न?

(नेपथ्य में से पुकार एवं हुँकार-'हा कृष्ण! हे हरे! हे जनार्दन? गोविन्द आओ नाथ! पधारो! दर्शन देओ! पूरी करौ अपनी प्रतिज्ञा! दास की प्रतिज्ञा! हूँ .... हरे!')

श्रीकृष्ण-(चौंककर खड़े होते हुए) सुनो! सुनो! वह हुँकार! वह पुकार? फिर आयी-

गाना रूपक

भक्त बोले और मैं बोलूँ नहीं,
भक्त रोवै और मैं रोऊँ नहीं।
भक्त टेरे और मैं दौडूँ नहीं,
नहीं नहीं, हुआ नहीं, होगा नहीं।

(गाते गाते सवेग निर्गमन)

(पटाक्षेप)

समाज-दोहा

गौर श्याम वन्दन करि, कहौं विवर्त्त-विलास।
जेहि विधि कपिल तंत्र में, गायौ गौर प्रकाश।।
एक समय वृन्दाविपिन, विहरत युगल किशोर।
सखी समाज सुख पावहिं, नव नव प्रेम हिलोर।।

(प्रवेश राधा-कृष्ण। उभय पार्श्व में सखियाँ चँवर ढुराती हुईं)

श्रीकृष्ण-पद

जाऊँ जाऊँ मैं भूतल पर राधे,
मेरौ जन बोलै, मेरा हिया डोलै।।

श्रीराधा

काज कहा धरनी तल पै सुनि
दुःख होवै मेरौ जिया रोवै।।1।।

श्रीकृष्ण

पाप कलि भूतल पै उदय भयो है बलि,
विवेक विराग भक्ति गये हैं पलाय।
सुनो सुनो आर्त्तनाद, टेरत हैं भक्तराज,
वज्र सम बींधे आय, मेरो जन०।।2।।

श्रीराधा

कलिहू तो पराधीन, कालचक्र के आधीन,
काल गति विधि तुम ही निरधारी हौ।
बाँधि मर्यादा आप, मेटन चाहत अब,
विपरीत सुनि बात मम होवै, मेरौ जिय०।।3।।

प्राणनाथ! सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलि-ये चारों युग तो सब काल चक्र के आधीन हैं। वाके अनुसार एक-एक करकै चारों युगन कूँ आमनौ ही परै है। यह मर्यादा तो आपने ही विधान करी है। यामें कलियुग को कहा दोष है?

श्रीकृष्ण

सत्य सत्य सत्य सब, वचन नारायणी तव,
काल मेरौ मुख्य अंग, मूल सर्वाधार है।
काल कौ खिलौना जग, काल मेरी इच्छा वश,
सोइ मैं भक्तिवश सदाय, मेरौ जन०।।4

अतएव कल्याणि! दीनवत्सले! दीन निज जनन की पुकार तो सुननी ही परैगी। उनकी इच्छा ही सर्वोपरि है। काल और कालचक्र मेरे आधीन है अवश्य परन्तु मैं स्वयं भक्ताधीन हूँ। अतएव-

जाऊँगो गाऊँगो अब हरिनाम महामंत्र,
हरि बोल अस्त्र सों पाप सँहारूँगो।

हरिनाम महोत्सव, रचाऊँ भूतल 'प्रेम',
नाम धन सत्य लुटाऊँ जाय, मेरौ जन०।।5
अतएव सन्तान वत्सले! जगदम्बे! मेरी सहायता करौ।

श्रीराधा-कैसे करूँ नाथ? आज्ञा करौ।

श्रीकृष्ण-प्रिये! आप मोकूँ अपनौ अनुपम त्याग प्रदान करौ।

श्रीराधा-प्रयोजन कहा, प्राणवल्लभ?

श्रीकृष्ण-मैं भूतल पै त्यागी-वैरागी बनकै गाऊँगौ, रोऊँगौ।

श्रीराधा-(चौंककर कातर भाव से) हा हा प्राणेश! आज आपके श्रीमुख सों ये कैसे वचन सुन रही हूँ। मोकूँ तो आशंका-भय होय है।

श्रीकृष्ण-(श्रीराधा का हाथ पकड़) लीलेश्वरी! मेरी लीला में सहायता करौ। मेरी इच्छा पूर्ण करौ।

श्रीराधा-लीलामय! जैसी आपकी इच्छा! आपकी इच्छा ही मेरौ जीवन है।

श्रीकृष्ण-तौ हे करुणामयी! अपनी पराकरुणा हू प्रदान करौ।

श्रीराधा-प्रयोजन कहा, प्रियतम?

श्रीकृष्ण-मैं आपकी अपूर्व सहज करुणा कौ स्वरूप जगत् कूँ प्रत्यक्ष अनुभव कराऊँगो। मैं अबे आपही की भाँति स्नेहमयी, क्षमामयी माता बनकै दुष्टन कूँ गरे लगाऊँगो, न्यायकारी पिता बनकै दण्ड नहीं दऊँगो।

श्रीराधा-धन्य आपके सुहृदय कूँ। हे पूतना-उद्धारी! करुणामयी मैं नहीं, करुणामय तो आप ही हौ।

श्रीकृष्ण-और हे परमोदार-चूड़ामणि! अपनी परमोदारता हू प्रदान करौ।

श्रीराधा-हे हतारि गतिदातारि! परमोदार चूड़ामणि तो आप ही हौ, मैं नहीं।

श्रीकृष्ण-नहीं नहीं! मैं अबकै तुम्हारी 'अविमर्यादित' पदमोदारता कूँ पद पद पै प्रकाशित करूँगो, अज-भव-दुर्लभ प्रेमभक्ति कूँ सर्वसुलभ कर दऊँगो, तथा कलिहत साधनशून्य जीवन के प्रति प्रेमप्रदायक नाम-महामन्त्र प्रदान करूँगो।

श्रीराधा-प्राणनाथ! आपकौ संकल्प सत्य है, शिव है अमोघ है। वह अवश्यमेव सिद्ध होयगौ।

श्रीकृष्ण-तौ हे महाभावमयि! अपनौ परमाद्भुत भावहू मोकूँ प्रदान कर मेरी चिरकाल की आकांक्षा कूँ पूर्ण करौ।

श्रीराधा-(चौंककर) चिरकाल की आकांक्षा कैसी?

श्रीकृष्ण-यही कि मैं आपके अपूर्व भाव सों अपनौ माधुर्यास्वादन करकै आपकौ सुखानुभव चाहूँ हूँ। आज तक तौ भक्तन ने ही मेरे माधुर्य कौ आस्वादन करके वाकौ प्रचार कर्‌यौ है परन्तु अब मैं ही स्वयं स्वमाधुर्यास्वादन करके बाकौ प्रचार करनौ चाहूँ हूँ। मेरे नाम, रूप, गुण, लीला, ये सब कितने मधुर हैं-यह विलक्षण संवाद मैं निजमुख सों जगत् कूँ दैनौ चाहूँ हूँ। अतएव आपके महाभाव की अनिवार्य प्रयोजनीयता है।

श्रीराधा-अपूर्व, अभूतपूर्व आकांक्षा! परन्तु हे रसराज! हे आनन्दघन! हे सर्वसमर्थ! आप मेरे महाभाव के बेग कूँ कदाचित् सम्हार नांय सकेंगे।

श्रीकृष्ण-न सकूँ न सही! परन्तु विश्व में आपके महाभाव की गुरुता तौ उद्घोषित है ही जायगी! राधाभाव कौ सर्वोत्कर्ष तौ निर्धारित है ही जायगौ। आपकी विजय-घोष ही मेरौ परम पुरुषार्थ है।

श्रीराधा-और आपकौ सुख ही राधा कौ सुख है। स्वतंत्र सुख वाकौ कछु है ही नहीं। अतएव यह लेऔ! मेरे हृदय की भावनिधि कूँ धारण करौ (अपनी पुष्पमाला उतार कर पहना देती हैं)।

समाज दोहा

महाभाव स्वरूपिणी, दई माला उतार।
लाल पिया रसराज कौ, कियो भाव सिंगार।।

श्रीकृष्ण-हे मम वाञ्छाकल्पलतिके श्रीराधिके! मेरी एक अन्य आकांक्षौहू पूर्ण करौ। अपनी गौर अंग-कांतिहू प्रदान करौ।

श्रीराधा-(परम विस्मित हो) यह कैसी अनूठी आकांक्षा? मेरी गौर अंग-कान्ति कूँ लैकै कहा आप मेरो रूप धारण करौगे? यह परिहास तौ नहीं है?

श्रीकृष्ण-नहीं प्रिये! यह सत्य सत्य ही जानौ। मैं श्याम ते गौर बननो चाहूँ हूँ।

श्रीराधा-भलौ यह विचित्र विनोद क्यूँ? मेरे नयनामृतांजन श्याम रूप कूँ आच्छादन करवे की अनोखी भावना भलौ क्यूँ?

श्रीकृष्ण-याहि लिए कि एक तौ-

दोहा

भूलन चाहूँ आपकूँ, और भुलाऊँ जगत।
मैं समझूँ मैं भक्त हूँ, जगहू समझे भक्त।।

और दूसरौ उद्देश्य यह है कि–

प्रीतम सों प्रिया बनूँ, बनूँ श्याम सों गौर।
विवर्त्त विलास विलसिकै, लहौं सुक्ख कछु और।।

श्रीराधा–बलिहारी जाऊँ या कौतुक पै। आपकूँ नित्य नवीन कौतुक सूझतौ रहै है। लेऔ लीला कौतुकी। यह मेरी अंगकान्ति धारण करौ (पीली ओढ़नी उतार ओढ़ा देती हैं)।

समाज दोहा

पीत पट श्रीअंग सों, दियौ लाल ओढाय।
श्यामहिं गौर सजाय कै, दियौ विवर्त बनाय।।

श्रीराधा–(नवीन छवि को निहारती हुई) अहा भले बन गये श्याम ते गौर, कान्तिमान् ते कान्तिमति! बलिहारी विनोद बिहारी! बलिहारी! (बलैयाँ लेती हैं)

श्रीकृष्ण–जय हो राधिके! ममसुखसाधिके! तुम समान तुम ही हौ, सर्व विधि असमोर्द्ध हौ! तुम्हारी कृपा सों अब जगत कूँ तुम्हारी अनुपम प्रेम, करुणा तथा उदारता की यत्किंचित् छटा के दर्शन होंगे और कलि के धन्य जीव प्रेममयी प्रेम-प्रदायिनी श्रीराधा स्वामिनी के चरण शरण होंगे। करुणामयि! आज मेरे ऊपर आपकौ अनादि ऋण है गयौ (घुटना टेक देते हैं)।

श्रीराधा–(हाथ पकड़ उठाती हुई) हा हा प्राणवल्लभ! ऐसे वचन न सुनावैं! मेरो ऋण आप पै? दासी कौ ऋण स्वामी पै (चरण पकड़ना)।

श्रीकृष्ण–(उठाते हुए) दासी कौ नहीं, स्वामिनी कौ ऋण! प्रिये! स्मरण करौ द्वापर की लीला कूँ। तुम वृषभानु-भवन में प्रगट भईं हीं और मैं नन्द-भवन में। और ग्यारह वर्ष व्रज में लीला करकै मैं तुम सबन कूँ छोड़ चल्यौ गयौ हो। तब तुमने हे परम प्रेममयी देवी! मो निष्ठुर निर्मम के विरह में सौ-सौ वर्ष रोय-रोय कै बिताये हे। तब मैंने हू अपने मन ही मन यह प्रण कियौ हो कि काहु दिना मैं तुम्हारे प्रेम की विजय-दुन्दुभि जगत् में बजवाय कै तुम्हारे प्रेम कौ अपार ऋण यत्किंचित चुकायवे की अवश्य चेष्टा करूँगो। बस वही समय अब आय उपस्थित भयो है।

दोहा

धरौं एक नव रूप में, एक नयौ अवतार।
बाहर सों जो गौर हैं, भीतर कृष्ण आधार।।
(श्री) कृष्णचैतन्य नाम सों, धरि संन्यासी रूप।
तुम्हारौ ऋण कछु शोधिहौं, 'प्रेम' अनन्त अनूप।।

श्रीराधा-(व्याकुल होकर हाथ पकड़ लेती हैं) ऐसे मत कहौ, मेरे शीश मुकुटमणि! आप ऋणी नहीं, राधा ही इन श्रीचरणन की चिर ऋणी है (चरण पकड़ लेना-श्रीकृष्ण का उठाना) मत जाऔ मेरे प्राणेश! मत जाऔ भूतल पै! माया-तीत हैकै मायामय राज्य में मत जाऔ। वहाँ सुख नहीं, शांति नहीं। है केवल प्रपंच और प्रवंचना। मैं वहाँ जायकै बहुत रोयी हूँ! आपकूँ वहाँ रोयवे के लिए नहीं जान दऊँगी (गले से लिपट) कैसौ ऋण और कैसौ शोधन? छोड़ौ यह सब बात और रहौ साथ प्राणनाथ!

(नेपथ्य वाणी-त्राहि नाथ! त्राहि मुरारे! मुकुन्द! मधुकैटभारे! हरे! हुँ ....)

श्रीकृष्ण-वह सुनौ जगद्धात्रि! तुम्हारी सन्तान कलि-अधर्म की त्रास सों त्राहि-त्राहि पुकार रही है। यदि माता ही अपने बालकन की रक्षा नहीं करैगी, उनकौ हित-साधन नहीं करैगी तौ फिर और कौन करैगौ? अतएव सन्तान-वत्सले! करुणामयि! या संकीर्तन महायज्ञोत्सव में मेरी सहायता करौ। अनुमति प्रदान करौ।

श्रीराधा-(शान्त भाव से) हे लीलामय स्वतन्त्र सर्वतन्त्र सर्वेश! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। मैं सर्व प्रकार सों प्रस्तुत हूँ।

सखियाँ भीम पलाशी

जय जय राधाभाव विलास।
जय जय कृष्णविवर्त विलास।।

श्रीराधा

रस स्वरूपी रस आह्लादी, नित नव नव रस रंग विलासी।

श्रीकृष्ण

तिहारी आस, राधे तिहारी आस अहो सुखराशि।।2

श्रीराधा

अहा कहा यह नव तरंग, चाहत भाव अरु गौर रंग।
गौर श्याम राधे, गौर श्याम मिलि एक प्रकाश।।3

श्रीकृष्ण

तिहारौ भाव अरु प्रेम जनाऊँ, भूले जीवन आन मिलाऊँ।
तिहारे पास, राधे, तिहारे पास प्रेमानन्द आस।।4
चलौ प्रिये! अब विलम्ब क्यूँ?

(दोनों का परस्पर गाढ़ालिंगन। एवं नवीन गौर रूप का आविर्भाव। झाँकी)

समाज-श्लोक

राधाकृष्ण प्रणय विकृति ह्र्लादिनी शक्ति-
रस्मादेकात्मनावपि पुरा देहभेदं गतौ तौ।
चैतन्याख्यं प्रकटमधुना तद्द्वयं चैक्यमाप्तं
राधाभाव द्युति सुवलितं नौमि कृष्णस्वरूपम्।।

भीम प०-दोहा

मूरति कृष्णप्रेम की, ह्लादिनी शक्ति स्वरूप।
ताकौ नाम श्रीराधिका, एकात्मा द्वै रूप।।

भीम प०-छंद

एकात्मा द्वै रूप सों, त्रिकाल जो लीला करैं।
सोई राधाकृष्ण मिलि अब, कृष्णचैतन्य वपु धरैं।।
राधाभाव आ कान्तियुक्त, यह कृष्ण को स्वरूप है।
'प्रेम' प्रभु वन्दन करौं श्री-गौर रूप अनूप है।।

(प्रवेश सखावृन्द गाते हुए)

गजल इमन

अनोखे गौर बनकर अब, श्रीराधाकृष्ण आये हैं।
ये दो से एक ही बनकर श्रीराधाकृष्ण आये हैं।।1।।
राधा ही कृष्ण को जानें, राधा को कृष्ण ही जानें।
परस्पर को प्रगट करने, श्रीराधाकृष्ण०।।2।।
यह श्याम रूप में जादू, भरा क्या राधा ही जानें।
राधा बन रूप रस पीने, श्रीराधाकृष्ण०।।3।।

दो अक्षर 'कृष्ण' में अद्भुत, भरा क्या राधा ही जानें।
राधा बन नाम रस पीने, श्रीराधाकृष्ण०।।4।।
राधा बस देना ही जानें, श्रीकृष्ण लेना ही जानें।
वही बस 'प्रेम' लुटवाने, श्रीराधाकृष्ण०।।5।।
हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल

(पटाक्षेप)

इति गौरांग प्रयोजन लीला।

आविर्भाव लहरी **तृतीय कणामृत**

अद्वैत-पुकार

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे गोविन्द।।

श्लोक

अद्वैताय नमस्तेऽस्तु महेशाय महात्मने।
यस्य प्रसादाच्चैतन्यचरणे जायते रतिः।।

लीला का सारांश

1- समाज की भगवद् विमुखता एवं राज-अत्याचार एवं भक्तों का दु:ख।

2- भक्तों द्वारा अद्वैताचार्य के प्रति दु:ख निवेदन।

3- अद्वैताचार्य द्वारा आश्वासन एवं प्रतिज्ञा।

समाज चौपाईयाँ

सुरसरि तट नवद्वीप विराजे। बंग देश की काशी गाजे।।
शत शत विद्यालय सुहावैं। सहस सहस जन विद्या पावैं।।
हाट बाट गृह सुरसरि तीरा। जित तित पंडित छात्रन भीरा।।
लौकिक छन्द प्रबन्ध विलासा। पै नहिं भक्ति प्रेम परकासा।।
न्याय व्याकरण सूत्रन चरचैं। भक्ति भाव सों नेक न परचैं।।
खंडन मंडन परम प्रर्वाना। विद्याफल हरिभक्ति न चीना।।
भागवत पढ़ैं पै अर्थ न जानैं। भक्ति-भक्त-विरोधहि ठानैं।।

(बंगला)

कृष्ण नामभक्ति शून्य सकल संसार।
प्रथम कलि ते हैला भविष्य आचार।।

(चै० भा०)

दोहा

भक्त सकल दु:ख पाय जिय, सहैं हास उपहास।
तिनमें एक प्रधान वर, पंडित भक्त श्रीवास।।

(दृश्य-नवद्वीप में श्रीवास निज गृह में विषण्ण मुद्रा में बैठे)

श्रीवास पद-जोगिया

कोई कृष्ण का नाम सुनादे हमें,
कोई कृष्ण का गीत सुनादे हमें।
कोई कृष्ण का मीत मिलादे हमें,
खिल जायँ दिल की कली कली।।1

अहो! हमारी यह नवद्वीपपुरी साक्षात् विद्यापुरी है। घर-घर में सरस्वती कौ विलास है। किन्तु विद्या बुद्धि कौ जितनौ कोलाहल है, उतनौ ज्ञान कौ प्रकाश नहीं है। अतएव अज्ञानान्धकार उलटौ बढ़तौ ही जाय रह्यौ है।

पूर्व पद

काली घिर घटाएँ घिर आती,
कड़के बिजली दहले छाती।
बुझ बुझ जाती हाथ की बाती,
आँधी जोर की चली चली।।2

'सा विद्या तन्मतिर्यया'-विद्या वही कि जासों विद्यापति भगवान् में रति होवै। 'तत्कर्म हरितोषं यत्' कर्म वही कि जासों भगवान् प्रसन्न होवैं। किन्तु हाय! आज विद्या के द्वारा विद्या-पति की आराधना नहीं, 'अहं' देव की ही आराधना है रही है। अतएव भगवान् कूँ भूलकर-

पूर्व पद

दादुर झिंगुर शोर करैं हैं,
शुक पिक तो अब मौन धरैं हैं।
नदी नाले सब जोर करैं हैं,
मारग रोक्यौ कलि कलि।।3

जैसे वर्षाकाल में मेंढ़क ही जहाँ तहाँ टर्रायौ करै हैं कोयल तौ मौन ही लै लेय हैं, ऐसे ही या कलिकाल में सत्पुरुष, सत्पथ और सत् शास्त्र लोप हैते जाय रहे हैं।

पूर्व पद

चाँद सितारे लोप भये हैं,
जुंगनू ही अब चमक रहे हैं।
'प्रेम' पथिक सब अटक रहे हैं,
छाया अँधेरा गली गली।।4

समाज चौपाई

इहि विधि दु:ख श्रीवासहिं भारी।
साधु स्वभाव लोक हितकारी।।
भक्त नगर के तिन ढिंग आवें।
करि हरि चर्चा हियौ सिरावें।।
आये तिहि समय भक्त मुरारी।
संग मुकुन्द गायक सुखकारी।।
(मुकुन्द और मुरारि–दो भक्तों का प्रवेश)

मुकुन्द-मुरारि!–(श्रीवास को प्रणाम करते हैं)

श्रीवास–श्रीकृष्णे रतिर्मतिरस्तु। आऔ आऔ! मुकुन्द–मुरारि। भले आये भले आये। भैय्याऔ! तुम दो चार ही जने ऐसे हौ कि जिनके दर्शन सों–

सवैया

यह छाती ठंडी होवै कछु, सहारौ हु बड़ो लग जाय है।
बहतौ भयौ बूड़त जीव मनौ, काहु द्वीप के तट लग जाय है।।
विश्वास–बिरादर विछुटे हू, पुनि आय गरे लग जाय है।
हरि भक्ति के दर्शन होत जबै, भगवान सों प्रेम हू लग जाय है।।

भैय्याऔ! भगवान् श्रीकृष्ण उद्धव के प्रति कहैं है कि मेरे अन्तर्धान होंत ही 'लोकोऽयं नष्टमंगल भविष्यति'–या पृथ्वी के समस्त मंगल नष्ट है जायँगे कलियुग को राज है जायगौ और मनुष्यन की रुचि पाप में बढ़ जायगी। ऐसौ यह पापमूर्त्ति कलियुग है याकूँ पकरि कै राजा परीक्षित ने मार्‌यौ तौ नहीं, उल्टौ छोड़ दियौ। और छोड़्यौ ही नहीं याकी स्थापना हू कर दीनी 'विष्णुरात स्थापितवान् कलिजानां सुखाय च'–कलियुग में जन्म

लैवे वारे जीवन के कल्याण के लिए। कारण कि कलियुग के समस्त अवगुनन के मस्तक पै चरण दैकै एक महान् गुण विराजै है। वह महान् गुण है 'नाम संकीर्तनं हरेः'। ज्ञान, योग, तप, तीर्थ, नेमव्रत आदि समस्त साधन जो कछु फल देयँ हैं, वह सब एक हरि-नाम-संकीर्तन सों मिल जाय है और वाके ऊपर एक और दुर्लभ वस्तु सुलभ है जाय है कि जाकूँ दैवे की सामर्थ्य इन सब साधनन में नहीं है-वह सुदुर्लभ वस्तु है श्रीकृष्ण-प्रेम! परन्तु हाय! ऐसौ जो सर्वोत्तम साधन हरिनाम संकीर्तन है, वाकी हाँसी हमारे ज्ञान कर्माभिमानी पंडितजन करैं हैं और वाकूँ मूर्खन और भावुकन कौ ही काम बतावैं हैं।

भैय्याऔ! हमारे नवद्वीप में घर-घर में सरस्वती-पुत्र हैं और गली-गली में लक्ष्मी-सन्तान हैं परन्तु प्रभु के प्यारे भक्त तो मुट्ठी भरहू नहीं हैं। हाय! कब हमारौ गोत्र बढ़ैगौ, हमारो भक्त-समाज बढ़ैगौ और हम सब मिलकै भगवान् को गुणानुवाद गायौ करैंगे, आनन्दोत्सव मनावैंगे!

मुकुन्द-वही समाचार तो हम आपकूँ सुनायवे आये हैं। भक्तराज हरिदासजी शन्तिपुर में अद्वैताचार्यजी के निकट पधारे हैं।

मुरारि-वही हरिदास जो नित्य सवा तीन लाख नाम कीर्तन कर्यौ करैं हैं और जिनने वा पतित वारांगना को उद्धार कियौ है जो उनकूँ भ्रष्ट करवे के लिए उनके समीप आई ही। वाकूँ वैष्णवी भक्त बनाय और अपनी कुटिया वाहिकूँ सौंप कै अब वे बेनापोल गाँव कूँ छोड़ शान्तिपुर आय गये हैं और अद्वैताचार्यजी ने उनकूँ साग्रह अपने समीप राख लियौ है।

श्रीवास-अहा बन्धुऔ! तुम लोगन ने यह मंगल समाचार सुनाय कै मेरी आत्मा शीतल कर दीनी, मेरौ मनोरथ हू सिद्ध कर दियौ। मैं कछू देर पहलें यही गाय-रोय रह्यौ हो कि 'कोई कृष्ण का मीत मिला दे हमें'। अतएव चलौ, शन्तिपुर चलैं। आचार्यचरण में अपनौ दुःख रोयँगे और भक्तराज के दर्शन हू कर आयँगे।

मुकुन्द-अत्युत्तम विचार! शुभस्य शीघ्रम्।

हरि बोल! (तीनों का प्रस्थान)

समाज दोहा

नवद्वीप के निकट ही, शान्तिपुर इक ग्राम।
तहाँ बसहिं आचार्य श्री-अद्वैत जिनको नाम।।

सोरठा

पाप रति पाखंड मति, भक्ति विमुख लखि जीव कूँ।
दुखी श्रीअद्वैत अति, साधें हित कलि जीव को।।

(दृश्य-गंगा तट। अद्वैताचार्य शालिग्राम पूजन-रत, समीप ही तुलसी-वेदी है। एक कोने में हरिदासजी बैठे 'कृष्ण-कृष्ण' कीर्तन कर रहे हैं)

अद्वैत-(पूजान्ते हाथ जोड़) प्रणाम करते हैं।

श्लोक

ॐ नमो ब्रह्मण्य देवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः।।
कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः।।
कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतक्लेश नाशाय गोविन्दाय नमो नमः।।

पद आसावरी 3

वर्ष पचास भये भूतल पर, आये ना हरि आये ना।
आस ही आस में बीतत साँस है, आये ना हरि०।।1
एक तौ कलि राहू कौ ग्रास है, दूजे म्लेच्छ यवन कौ त्रास है।
दिन दिन होवत धर्म कौ नाश है, आये ना हरि०।।2
कृष्णभक्ति बिन दीन जगत है, विषय भोग रसलीन मत्त है।
तुम बिन कौन जगाये हरि, आये ना हरि०।।3
पंथ निहारूँ नित्य पुकारूँ, तुलसी दल गंगा जल वारूँ।
तेरी प्रतिज्ञा पै प्राण मैं धारूँ, आये ना हरि०।।4
भूतल पै तुमकूँ प्रगटाऊँ, तबही नाम अद्वैत धराऊँ।
हार जीत सब तुम्हरे ठाऊँ, आये ना हरि०।।5
आऔ श्यामघन अब तो आऔ, 'प्रेम' पीयूष रस बरसाओ।
घोर घाम कलि ताप नसाओ, आये ना हरि०।।6

कीर्तन धुनि-जय हरे कृष्ण हरे राम हरे।

हे सत्यव्रत! सत्यस्वरूप हरे! आपही कौ कथन है कि-

शेर

है धर्म मुझको प्यारा, मैं धर्म हूँ सनातन।
फिर क्यूँ भुलाये बैठे, कब आओगे मुरारे।। हरे०

और हे भक्त-भक्तिमान भगवन्! यह हू आपही कौ वचन है कि-

शेर

हैं भक्त मुझको प्यारे, वे आत्मा हैं मेरी।
फिर क्यों भुलाये बैठे, कब आओगे मुरारे।। हरे०

अरे और भावग्राही जनार्दन! यह हू तो आपही कौ कथन है कि-

शेर

इक तुलसी दल औ जल पै, बिक जाता मैं तुम कहते।
नित हम चढ़ाये बैठे, कब आओगे मुरारे।। हरे०

अरे हे भक्त प्रणरक्षक! मेरी हू यही प्रतिज्ञा है कि-

शेर

हुँकार 'प्रेम' करके, लाऊँगा खींच तुमको।
बाजी लगाये बैठे, (हम आसन जमाये बैठे)।।
कब आओगे, मुरारे।। हरे०

(प्रवेश श्रीवास, मुरारि और मुकुन्द)

समाज-चौपाई

आये अद्वैत दरश श्रीवासा। संग मुरारि मुकुन्द जु दासा।।
सबन अद्वैत चरन सिर नाये। दै असीस निज ढिंग बैठाये।।

अद्वैत-भले आये श्रीवास जी! तुम सब भले आये। यह हू प्रभु की विशेष कृपा ही है कारण कि-

चौपाई

बिन हरि कृपा न हरिजन आवें।
हरि की कृपा हरिजन लावैं।।

(या समय)

हृदय मोर विकल अति भारी। भक्त आज मन मंगलकारी।।

(अतएव)

होत विश्वास भरोसौ भारी। सुनिहैं प्रभु पुकार हमारी।।

श्रीवास-आचार्य देव! हम तौ आपके दर्शन में ही अपनौ परम मंगल मानैं हैं। आप सर्व प्रकार सों वृद्ध हैं, पूज्य हैं, मंगलमूर्त्ति हैं। भगवन्! हमने सुन्यौ है कि परमपावन महा-भागवत श्रीहरिदास जी यहाँ पधारे हैं।

हरिदास-(वहीं दूर से भूमि पर दण्डवत् पड़ जाते हैं)

अद्वैत-श्रीवास जी! वे महाभागवत ही आपकूँ प्रणाम कर रहे हैं।

हरिदास-(वैसे ही पड़े-पड़े हाथ जोड़) आप महानुभावन के श्रीचरणन पै या दीन हीन पतित हरिदास कौ साष्टांग प्रणाम स्वीकार होवै।

श्रीवास-(लपक कर बलपूर्वक उठाकर हृदय से लगा लेते हैं)।

अन्य सब-हरि बोल! हरि बोल!

समाज-चौपाई

उठत नहीं, बरबस ही उठाये। हिय सों लाय महासुख पाये।।

हरिदास-(अत्यन्त दैन्यार्त्तिपूर्वक) हा हा! मैं महापापी यवन नराधम हूँ! मोकूँ तो अपने चरण-रज पै ही पड़े रहन देवैं (चरण पकड़ना)।

श्रीवास-(उठाते हुए)।

चौपाई

हा हा ऐसे वचन न भाखों, तुव पद रज उद्धरहिं लाखों।।
हम तो आज पुण्य बहु मानें। दुर्लभ दरस सहजहि पाने।।

अद्वैत-श्रीवास जी! जब सों ये पधारे हैं, तब सों ये अपने मंगलमय हरिनाम कीर्तन की दिव्य लहरिन सों हममें कछु विशेष शक्ति-संचार कर रहे हैं तथा जीवन की आपदा-विपदान कौ दिव्योपचार कर रहे हैं।

श्रीवास-आचार्य देव! आपकौ कथन सर्वथा सत्य ही है। श्रीहरिनाम कीर्तन की महिमा है तौ कछू ऐसी ही तथापि हमारी श्रद्धा की नौका बीच-बीच में डगमगायवे लगै है। जब हम चारों ओर अधर्म कौ सागर गरजतौ भयौ देखैं हैं तौ कबहू कबहू हृदय शंकाशील हैकै पुकार उठे है-

शेर

क्या वायदे भगवान के अब झूँठे हो गये हैं।
या गुण ही क्या भगवान् के सब झूँठे हो गये हैं।।
या भक्त ही भगवान के सब झूँठे हो गये हैं।
या भक्त के भगवान ही अब झूँठ हो गये हैं।।

कौन-से वायदे? कौन-सी प्रतिज्ञा? वही जो भगवान् नृसिंह के अवतार सों पूर्व हिरण्यकशिपु के अत्याचार सों संत्रस्त शरणागत देवतान के प्रति आकाशवाणी द्वारा उद्घोषित भई ही।

श्लोक

यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु।
धर्मे मयि च विद्वेषः स वै आशु विनश्यति।। (भाग)

दोहा

देव, वेद, गौ, विप्र अरु साधु, धर्म, भगवान।
सात ठौर के वैर सों, उजड़े बेगिहिं जान।।

परन्तु आज तौ एक-द्वै के प्रति ही नहीं, सातों के प्रति द्वेष, घृणा, अत्याचार दिन प्रतिदिन बढ़ते ही जायँ हैं फिर भगवान् की प्रतिज्ञा पै विश्वास टिकै तो कैसे टिकै? कौन-से आधार पै टिके?

मुकुन्द-(दुःखपूर्वक) हे सत्यव्रत! सत्यस्वरूप! धर्म सेतुनाथ! आप हमारी पुकार, धर्म की पुकार न सुननी चाहैं तो न सुनैं, न पधारैं! आपकी मौज! किन्तु हमकूँ तो या धरातल पै सों उठाय ही लैवैं। आप तो निर्विकार हैं समदर्शी महाशय हैं अतएव आनन्द सों सब कछु देख सकैं, सह सकैं हैं। परन्तु हमारी तौ भेदमयी विषय दृष्टि है। हम सों तो विधर्मी यवन राजा कौ अत्याचार सहन नहीं है रह्यौ है।

गजल-सोहनी

अधर्म हद से अब तो, बेहद ही हो रहा है।
भक्तों के दिल का बस खून हो रहा है।।
विग्रह कहीं हमारे अब तोड़े जा रहे हैं।
घण्टे घड़ियाल शंख कहीं फोड़े जा रहे हैं।।

मुरारि

कोई तिलक हमारे, मस्तक से चाट जाता।
कोई ले आग गीता, भागवत को फूँक जाता।
पूजा की वस्तु कोई, पाँवों से रौंद जाता।
हा! तुलसी पर ही कोई, मलमूत्र त्याग जाता।।

अद्वैत-(कानों में अंगुली दे मर्माहत होकर) श्रीविष्णो श्रीविष्णो! बस करौ मुरारि! बस करौ! ओफ्! सुन्यौ नहीं जाय है। छाती फाटै है।

मुररि-तबही जायकैं कहूँ भक्त हृदयविहारी कूँ ताप पहुँचेगौ और तबही वे सुनैंगे, देखैंगे और दौड़े आयँगे कारण कि-

दोहा

भक्त हृदय भगवान कौ, और न हृदय कोई।
भक्त-दुक्ख भगवान कौ, और दुक्ख नहिं कोई।।
भक्त-चिन्ता भगवान की, और न चिन्ता कोई।
भक्त-इच्छा भगवान की, और न इच्छा कोई।।

मुकुन्द-और आचार्य देव! यह तौ बाहर वारेन की तरवार की कहानी कछु भई। अब अपने घरवारेन की कुठार-कथा हू सुन लैवें।

अद्वैत-बस मुकुन्द बस! बहुत सुन लियौ, जान लियौ। सब कछु सुन करकै, देख करकै ही तौ मैं यह व्रत अनुष्ठान लैकै बैठ्यौ हूँ। अब और जाननौ-सुननौ कहा? अब तौ रोमनौ और पुकारनौ ही बाकी है और जो इतने पै हू प्रभू न आये तौ (आवेश पूर्वक दोनों भुजाओं को ऊपर उठाते हुए) मैं ही चार भुजान कूँ प्रकट कर दुष्टन कौ संहार करूँगौ (भाव-संवरण पूर्वक) परन्तु नहीं यह कार्य मेरौ नहीं है। अतएव आऔ, उन्हीं अशरणशरण, करुणा-वरुणालय, निर्बल के बल हरि कूँ पुकारैं।

सम्मिलित गायन भैरवी

डगमग डगमग डोलै नैया, हे कृष्ण कन्हैया!
अवतार लो, अवतार लो।।
तुमही धर्म की नाव बनाई,
तुमही जग में वाकूँ चलाई।
बार बार तुम पार लगाई,
अब क्यों देर लगैया, हे कृष्ण०।।
शूकर कच्छ मच्छ बनि आये,
नरसिंह वामन रूप धराये।
राम राम तुम राम कहाये,
आदि अनादि खिवैया, हे कृष्ण०।।
धर्म का नाश न भक्तका नाश है,
लाख त्रास चाहे गले फाँस है।
हिय में 'प्रेम' अटल विश्वास है,
भक्त की लाज रखैया, हे कृष्ण०।।

(पटाक्षेप)

इति अद्वैत पुकार लीला।।

गर्भ-प्रकाशलीला

लीला सारांश

1- माता शची के हृदय में ज्योति: प्रवेश।

2- अद्वैताचार्य द्वारा गंगा में विसर्जित देव-निर्माल्य का विचित्र आत्म समर्पण।

समाज-श्लोक

अवतीर्णौ स्वकारुण्यो परिच्छिन्नौ सदीश्वरौ।
श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्दौ द्वौ भ्रातरौ भजौ।।
जय श्रीनित्यानन्द जय गौर चन्द्र।
जय जयाद्वैत जय गौर भक्त वृन्द।।

चौपाई

जिहि विधि गौर गर्भ महँ आये।
पुनि निज बाल रूप प्रगटाये।।
सो लीला बरनौं कछु गाई।
मति लघु चरित अगम जु महाई।।

दोहा

गौड़ देश गंगा निकट, नवद्वीप इक धाम।
विप्र वंश जगन्नाथ तहाँ, शची सुभार्या नाम।।
कन्या सात गँवाय कै, पायौ सुत विश्व रूप।
पाछे विश्वम्भर हरी, नवम गर्भ अनूप।।

समाज-पद (यथाराग)

जनम करम सब दिव्य हरि कौ।
गर्भवास न होय कबहु, हृदय निवास हरि कौ।।1
ज्यूँ वसुदेव हृदय में आयौ, प्रथम तेज हरि कौ।
निकसि देवकी हिय समायौ, सोइ रूप हरि कौ।।2
लोक रीति अनुसारि कहावै, सोइ गर्भ हरि कौ।
'प्रेम' प्रभु नर-नारि-अंश सों, होय न जन्म हरि कौ।।3

(दृश्य-शयन गृह। जगन्नाथ-शची शयन कर रहे हैं)।

चौपाई

मंगलमयी रजनी इक आई। जगन्नाथ शची सोवति भाई।।
नभ सों ज्योति उतर इक आई। जगन्नाथ उर पैठी जाई।।
निकसि गई शची हृदय माहीं। रही समाय पुनि निकसी नाहीं।
दोउन देह दिपति द्युति भारी। मनो देवता नहिं नर नारी।।
ब्रह्म रुद्रदेव यह जानै। आये गर्भ प्रभु मुद मानै।।
करत स्तुति जय जय गावैं। सुमन सहित सुमन बरसावैं।।

देवतागण-गर्भ-स्तुति इमन 3

तिताला (टेक)

जय जय जय जय नमो नमः, जय हरि जननी नमो नमः।
चन्द्रप्रभा की अनल प्रभा की, प्रभा धारिणी नमो नमः।।1।।

अन्तरा

तुम धृति तुम क्षमा तुम सिद्धि, तुम अदिति जननी नमो नमः।
तुम देवकी रोहिणी यशोदा, तुम शची जननी नमो नमः।।2।।

दादरा

अश्वमेध, राजसूय, कोटि यज्ञ भूय भूय।
नहीं पावें समता, लेश सोइ कीर्तन यज्ञेश।
जय गर्भधारिणी नमो नमः।।3।।

केहरवा

जो रस श्रीहरिनाम संकीर्तन, पाव पलक सुनि हम पावें।
सो नहिं पावें कोटि यज्ञ में, यद्यपि नित्य भाग बलिखावें।
सो संकीर्तन 'प्रेम' विधायक, गौर धारिणो नमो नमः।।4।।
(देवताओं का नीचे उतर कर संकीर्तन नृत्य)

इमन (टेक)

जय गौर हरि जय गौर हरि, जय गौर हरि जय गौर हरि।
हरिबोल हरि, हरिबोल हरि, हरिबोल हरि, हरिबोल हरि।।

अन्तरा

नदिया धन्य है, भारत धन्य है, वसुधा धन्य है, हम सब धन्य हैं।
देखेंगे रूप अरूप हरि का, बोल सुनेंगे गौर हरि।।
जय गौर हरि जय गौर हरि०।।

(दुगुन लय)

सुमन कली सज्जन की कलि, और पाप कलियुग नींव हिली।
'प्रेम' कीर्तन-दुन्दुभि बाजेगी, जब नाच गायँगे गौर हरि।।
जय गौर हरि जय गौर हरि०।।

(शची-जगनाथ को परिक्रमा देते हुए प्रस्थान)

समाज-चौपाई

देव सकल निज लोक सिधाये।
मात शची जगीं अचरज पाये।।
लखत चहुँ दिशि कछु न लखाये।
जगवति पतिहिं जिय डरपाये।।

शची-(घबड़ाती हुई) नाथ! उठौ उठौ! सुनौ तौ सही!

जगन्नाथ-(उठते हुए) बात कहा है देवी? कैसे घबड़ाय रही हौ।

शची-नाथ! मैंने अबही एक बड़ौ ही अद्‌भुत सपनौ देख्यौ है।

कवित्त

महातेज पुंज कछु, उतरि के गगन सों
रावरे हृदय बीच, आयके समायौ है।
तहाँ ते निकसि पुनि, मेरे उर माझ आयौ
यहाँ सों तौ निकसत, मैं न लखि पायौ है।।
छाय गयो देखत ही, घर देवी देवन सों
जै जै धुनि गान करैं, मोद दरसायौ है।
आय आय आँगन मैं, नाचैं-गावैं 'प्रेम' महा
भय भ्रम होत मेरे, गर्भ कौन आयौ है।।

जगन्नाथ-तुमहू सचमुच देवी जैसी दीख रही हौ। तुम्हारी देह के अंग-प्रत्यंग में एक अपूर्व कान्ति झलमलाय रही है!

शची-परन्तु मोकूँ तो आनन्द के संग-संग भय हू है रह्यौ है। पिताजी बड़े भारी ज्योतिषी हैं। आप उनसों अवश्य पूछें! यह कहा अचरज लीला है!

जगन्नाथ-अच्छी बात! परन्तु कोई चिन्ता-भय की बात नहीं है। स्वप्न बड़ौ ही मंगल है और मंगल ही लक्षण तुम्हारे अंग में प्रगट है रहे हैं। मंगलमय हरि अवश्य ही कोई विशेष मंगल ही करेंगे। गोविन्द हरे! नारायण! मधुसूदन!

(पटाक्षेप)

समाज चौपाई

शान्तिपुर अद्वैत आराधैं। हरि प्रगटाऊँ दृढ़ व्रत साधैं।।

(दृश्य-अद्वैताचार्य सालिग्राम-पूजन-रत। समीप ही तुलसी वेदी। हरिदास एक कौने में कीर्तन-रत)

चौपाई

पूजत सालिग्राम नारायण। भावभक्ति दृढ़ नाम परायण।।
तुलसीदल जल गंग चढ़ावैं। गरजि गरजि गोविन्द बुलावैं।।

अद्वैत गाना-मालकोष-तिताला

जागो जागो जागो जागो हरे मुरारे।
मधुकैटभारे नारायण, नरसिंह मधुसूदन कंसारे।।1।।
झर झर झरैं दीन जन नयन, कमलनयन हे सहस नयन।
तुम बिन कौन जो पाछै सम्हारे, हे मधुसूदन कंसारे।।2।।
अन्याय घोर दु:ख अत्याचार, निर्बलजन कहा सकैं सहार।
तुम ही आश्रय 'प्रेम' हमारे, हे मधुसूदन कंसारे।।3।।

समाज दोहा

कृष्णाकर्षण मन्त्र महा, यह अद्वैत हुँकार।
मन हरि कौ चंचल भयौ, सुनि दृढ़ प्रेम पुकार।।

चौपाई

एक दिवस प्रभु परिचय दीन्हे। आशा बेलि प्रफुल्लित कीन्हे।।
सेवा समापन किये गुसांई। हरिदास सों कहै सुनाई।।

अद्वैत-हरिदासजी! चलो पूजा-निर्माली गंगाजी में विसर्जन करि आवैं।

हरिदास-(हाथ जोड़) हाँ भगवन्! चलिए।

अद्वैत-हरि०-(कीर्तन करते हुए चलते हैं)

श्रीकृष्णगोविन्द हरे मुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव।

समाज

किये गमन गंगा तट आये। पुष्पमाल दल गंग बहाये।
अचरज महा भयो तेहि बारा। पत्र पुष्प बहैं उलटी धारा।

अद्वैत-देखौ-देखौ हरिदासजी! यह पत्र पुष्प धार सों उलटी ओर कैसे बहे जा रहे हैं। बड़ी ही अनहोनी बात है।

हरिदास-हाँ भगवन्! बड़ी ही विचित्र बात है। नित्य प्रति ही तो हम निर्माली बहावैं हैं पर ऐसौ तौ कबहू नहीं भयौ। धार तौ नीचे की ओर और फूल-पत्ती बहैं ऊपर की ओर। यह कहा दैवी लीला है?

अद्वैत-अवश्य ही यह कोई दैव इंगित है। कोई विशेष घटना की ओर प्रभु कौ संकेत है। याकौ रहस्य भेदन करनौ ही होयगौ। चलौ, हमहू ऊपर कूँ चलैं। देखैं तो सही, ये फूल-पत्ती कहाँ जाय रहे हैं। वहीं कछु विशेष बात है।

दोनों-हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (कीर्तन करते चलते हैं)।

समाज चौपाई

हरि हरि बोलत दोउ लगि धाये।
तीन कोस नदिया चलि आये।।

हरिदास-आचार्य देव! अब तौ चलते-चलते शान्तिपुर ते नवद्वीप, तीन कोस आय गये हैं परन्तु ये फूल अबहू ऊपर की ओर बहे ही जाय रहे हैं।

अद्वैत-तीन कोस कहा, तीस कोसहू चलनौ परै तौहू चलैंगे परन्तु पतौ पार करके ही हटैंगे। देखैं तौ, यह मेरी पुष्पांजली कहाँ कौन के पास जाय रही है (दोनों का निर्गमन)।

(दृश्य-गंगा घाट। स्नानकारी नर-नारी। एक ओर शची माता गंगा में स्नान कर रही हैं)।

समाज चौपाई

गंगा न्हावहिं बहु नरनारी। तिन महँ एक भाग्यवती नारी।।
द्विजवर जगन्नाथ गृहदेवी। नाम शची हरि-हरि जन सेवी।।
गर्भवती तिन तन सों आईं। रही पुष्पांजलि पद लिपटाई।।

हरिदास-(चकित होकर) देखिये आचार्य देव! वह देखिए! आपकी पुष्पांजलि एक माता के चरणन सों जाय लिपटी है! हरि बोल।

अद्वैत-(भुजा उठा गरजते हुए) हरि बोल! हरि बोल!

(उधर गंगाजल में खड़ी शचीदेवी बार-बार फूलों को हटाती हैं)।

समाज चौपाई

ठेलति बार बार लिपटावैं। घिरि घिरि युग चरनन पै आवैं।।

शची

पुनि पुनि को ये फूल पठावै। तेरे तन सों लगि लगि आवै।।
दीसत कोई न कैसे आवै। होत भय अति कौन बचावै।।

समाज

हरबराय जल बाहर आईं। काँपत तन भय सोच दबाई।।
समुझि भेद अद्वैत मतवारा। हरि हरि गरजत दै हुँकारा।।
धाय मात परिक्रमा दीन्हीं। गर्भ हेतु भू दंडवत कीन्ही।।

शची-(घबड़ाकर पीछे हटती और हाथ जोड़ती हुई) आचार्य देव! प्रणाम! हाय हाय! आपने यह कहा कर डार्‌यौ? एक अबला दासी कूँ प्रणाम? मेरौ तौ सर्वनाश ....

अद्वैत-(बात काटते हुए) वृथा भय माँ! तुम अबला दासी नहीं तुम जगज्जननी हो! जगन्नाथ-जननी हो। निश्चय ही तुम्हारे गर्भ में विश्वम्भर विश्वपति कौ निवास है। अद्वैत की पुष्पांजलि कौ अन्यत्र आत्म-समर्पण असम्भव है। अतः माँ जगदम्बे! तुमकूँ कोटि-कोटि प्रणाम है।

शची-(गललग्नीकृत वस्त्र, नत-जानु) प्रणाम तौ मेरौ स्वीकार करैं। मोकूँ प्रणाम न करैं। आठ-आठ सन्तान खोय चुकी हूँ। अब या वंश-बेलि की रक्षा करैं। मंगल आशीर्वाद देवैं।

अद्वैत-माँ! पायवे के लिए ही खोनौ हो। अबकै एकअपूर्व पुत्र-रत्न तुम्हारे हृदय-सम्पुट में आयौ है। अद्वैत के वचन असत्य नहीं। वाकौ आचरण अनुचित नहीं। आप निर्भय रहैं-

(बंगला)

आर भय नाइ मागो ए सत्य वचन।
एइ गर्भे कृष्ण सम होयबे नन्दन।।

(चै० भा०)

शची-देव! अब तो चलकै घर पवित्र करैं। तबही मेरौ भय दूर होयगौ।

अद्वैत-अवश्य आयँगे! तुम चलौ माँ! हम स्नान करकै आय रहे हैं।

(शाची का प्रस्थान)

हरिदास जी! आनन्द! परमानन्द-गाना।

गजल

वही आ रहे क्या वही आ रहे हैं।
गरीबों के घर क्या वही आ रहे हैं।।1।।
रो-रो के जिनके लिए आँखें सूखीं।
ले भरने उन्हीं को क्या वे आ रहे हैं।।2।।
पुकार पपीहा की 'पिउपिउ' भी सूखी।
बरसने को घनश्याम क्या वे आ रहे हैं।।3।।
गई उनकी कानों में क्या आह सूखी।
जो पर्दे से बाहर वे आम आ रहे हैं।।
(लिये 'प्रेम' प्याला क्या वे आ रहे हैं)

इति गर्भ प्रकाश लीला

❧❖❧

आविर्भाव लहरी **पंचम कणामृत**

श्रीगौर जन्म लीला

समाज चौपाई

जब सों गौर गरभ महँ आये। सुख सम्पद गेह नितहि बढ़ाये।।
ज्यूँ ज्यूँ होत गरभ प्रकाशा। त्यूँ त्यूँ बाढ़त हृदय हुलासा।।
दसम मास लाग्यौ जब आई। उत्कंठा बाढ़ी अधिकाई।।
ग्यारह बारह हू बीते मासा। होत न बालक उपज्यो त्रासा।।

(दृश्य-शची जगन्नाथ बैठे हैं)

शची-(दु:ख पूर्वक) दस, ग्यारह, बारह, तेरह मास है, गये या गर्भ कूँ। जन्म के कोई लक्षण ही नहीं दिखायी परैं हैं। पिताजी कूँ बुलवाऔ न। वे गणना करके कछु बताबैं कब बालक को मुख देखवे कूँ मिलैगौ। मोकूँ तो शंका भय खाये जाय है।

जगन्नाथ-देवी! इतनी धीर मत बनौ। भगवान् कूँ स्मरण करौ। और अमंगल की तौ आशंका ही हृदय सों निकार देऔ। नित्य देवी-देवतान के

कैसे–कैसे मंगलमय स्वप्न हमकूँ दिखाई देह हें। और यह देह तुम्हारी कैसी दिव्य कान्तिमर्ता है गई है मानो तुमने गर्भ में कोई ज्योति ही धारण कर राखी होय। एक शुभ सगुन और हू सुनौ। आजकल सब लोग मेरौ अत्यन्त आदर सम्मान करवे लगे हैं।

गाना–पद

इक अचरज नित प्रति यह देखौं
अति आदर सब देत बड़ाई।
बिन याचे अनधन बहु वस्तु
घर आवत दिन दिन अधिकाई।।
तुम्हरे हू अंग अंगन लक्षण
परम विचक्षण परत लखाई।
(अतएव) होत प्रतीत यहै जिय मेरे
महापुरुष कोई प्रगटिहै आई।।

शची–सो तौ मोकूँ हू कछु प्रतीति होय है कारण कि मेरे हृदय में सब जीवन के प्रति प्रेम और दया भाव अपने आप उमग्यौ करै है। ऐसौ लगै है मानौ तौ सब प्राणी मेरी अपनी ही सन्तान होंय परन्तु तौहू विधाता के करतूत सों बड़ौ भयहू लगै है–

पूर्व पद

विधना भाल न सुक्ख लिख्यौ है
आठ आठ सन्तान नसाई।
विश्व रूप इक तनय 'प्रेम' अब
करियो मंगल देव सहाई।।
(पटाक्षेप)

समाज दोहा

फागुन की पूनम तिथि, चन्द्रग्रहण को योग।
गंगा न्हावहिं नारि नर, नदिया के बहु लोग।।

(दृश्य–गंगा। संन्ध्या काल। स्नानकारियों की भीड़। स्नान, ध्यान, कीर्तन, जपादि कर रही है)।

कवित्त

ठौर ठौर खोल करताल बहु बाज रहे,
हरि बोल हरि बोल घोष चहुँ छायौ है।
गंगाजल ठाड़े जन गायत्री जाप करैं,
चौंकि चकित चितै कहैं, गर्भदेव आयौ है।।

1 ब्राह्मण-(गंगा जल में खड़ा जप कर रहा है। अचानक चौंक-चमक कर आँखें खोल) ओह! यह कैसी दिव्य मनोहर ज्योति मेरे ध्यान में चमक करकै लीन है गई। यह कहा गायत्री देवी हीं, कै सूर्यदेव हे। अहा! मेरौ गायत्री-जप आज ही सफल भयौ हरि बोल! हरि बोल!

समाज

योगासन मार कोई, धरत ध्यान परम,
लखै हृदय मध्य कोई, ज्योति पुरुष आयौ है।

2 ब्राह्मण-(आसन में ध्यानस्थ बैठा है। सहसा चौंककर आँखें खोल) ओह! यह कैसौ अद्‌भुत प्रकाश मेरे हृदय कमल में उद्‌भासित है करकै लोप है गयौ यह कहा अन्तर्यामी परमात्मा चिन्मयी ज्योति ही! अहा! मेरौ ध्यान आज ही सफल भयौ। हरि बोल!

समाज

कोई लखैं देवी कोई राम कोई कृष्ण लखैं।
जाको जोइ इष्ट सोइ, हिय 'प्रेम' आयौ है।।

3 देवीभक्त-(बैठा जप करते-करते) जय जगदम्बे! जय दुर्गे भवानी! हरि बोल! हरि बोल!

4 रामभक्त-(बैठा जप करते-करते) जय राम रघुनन्दन! हरि बोल! हरि बोल!

5 कृष्णभक्त-(बैठा जप करते-करते) जय कृष्ण नन्द-नन्दन! हरि बोल!

(प्रवेश भक्तमण्डली-अद्वैत, श्रीवास, मुकुन्द, हरिदास आदि खोल करताल सहित कीर्तन करते हुए)।

संकीर्तन धुन

जय माधव मदन मुरारी, हरिबोल, हरिबोल।
यह केशव कलिमल हारी, हरिबोल, हरिबोल।।

(कुछ देर संकीर्तन-नृत्य)

हरिदास-आचार्यदेव! आज तौ हमारे या नवद्वीप में जहाँ-तहाँ सर्वत्र ही सबन के मुखसों जहाँ-तहाँ हरि बोल हरि बोल ध्वनि ही निकस रही है।

गाना-कव्वाली

हरि बोल हरि बोल सभी गा रहे हैं।
सभी के ही मुख पर हरि आ रहे हैं।।1
हजारों ही खोल करताल बजावें।
हजारों ही नाचें हरि बोल गावें।
हजारों ही लोटें और लोचन बहावें। हरि बोल हरि०।।2

मुकुन्द-(चारों तरफ दृष्टिपात करते हुए) ओहो हो! इतनी जनता गंगा-तट पै! इतने नर-नारी कहाँ सों आय जुटे हैं। एक नदिया तौ कहा दस नदिया में हू इतने मनुष्य नहीं होंगे। कहा स्वर्ग ते सुरगण बरस परे हैं या पाताल ते असुर-गण फूट परे हैं। और यह कैसौ आश्चर्य है कि-

पूर्व कव्वाली

जो भक्तों की छाया से बच करके जाते।
हरिनाम भूले भी मुख में न लाते।
जो नास्तिक विमुख हरि निन्दक कहाते।
हरि बोल हरि बोल वे भी गा रहे हैं।।2

मुरारि-और भगवन्! ग्रहणकाल तौ बड़ौ भयंकर लगै है। चारों ओर श्वान और सियार रोवैं-किल्लावैं हैं परन्तु-

पूर्व पद

आज यह अँधेरी भी लगती है प्यारी।
कहीं डर नहीं बस आनन्द भारी।
न रोते हैं गीदड़ न श्वान पुकारी।
हरि बोल हरि बोल सभी गा रहे हैं।।3

और श्रीवास जी! आकाश माहुँ तौ देखौ। यह चाँद कैसो कारौ पड़ गयो है-

पूर्व पद

एक बाहर गगन में पड़ा चाँद काला।
तो भीतर गगन में उगा चाँद काला।

तभी तो दिशाओं में यह बोल बाला।
हरि बोल हरि बोल सभी।।4

श्रीवास-और भैयाओ! या गंगा महारानी में हू कैसी अपूर्व छटा छाय रही है-

पूर्व पद

यह भागीरथी कैसी इठला रही है।
यह लहरों की साड़ी में लहरा रही है।
यह कन कन से मन की गवाह दे रही है।
हरि बोल हरि बोल सभी०।।5

आचार्य देव! आज तौ जल में, थल में, गगन-पवन में, मनुष्य में, पशु में, धर्मात्मा-पापात्मा में, प्रकृति के कण-कण में, प्राणिन के मन मन में सर्वत्र एक अपूर्व आनन्दोल्लास की लहरी लहराय रही है। यासों यही निश्चय प्रतीत होय है कि-

पूर्व पद

आज छिपकर कहीं पर कोई चोर आया।
मगर उसकी दया ने यह पहले जनाया।
तभी 'प्रेम' आनन्द सभी जग में छाया।
हरि बोल हरि बोल सभी०।।6

अद्वैत-भक्त बन्धुऔ! जब आनन्दकन्द भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र व्रज में प्रगट भये हे तौ वा समय भादौं की कारी बदरारी दिशा निर्मल है गईं हीं, नदी सरोवरन को जल निर्मल है गयो हैं तथा प्राणीन कौ हृदय हू निर्मल है गयो हो। वैसौ ही आज यहाँ प्रत्यक्ष अनुभव है रह्यौ है। मेरौ हृदय फूल-फूल कै उमग रह्यौ है। आनन्द की हिलोरें रोकै नहीं रुकैं हैं। अवश्य ही हमारी चिरकाल की आराधना आज सफल हैवे वारी है। या सृष्टि-पटल के ऊपर आज कोई अपूर्व अलौकिक आलोकमय चित्र उदय है रह्यौ है। वाहि के आभास सों प्रकृति नटी कौ यह अपूर्व हर्षोल्लास है। हरि बोल हरि बोल। हूँ ... हूँ ...। (हुँकार गर्जन)

समाज (बंगला)

श्रीअद्वैत जानि कृष्णचैतन्यावतीर्ण
हुँकार छाड़ये आपनारे माने धन्य।
महाप्रभुर आविर्भावे प्रभु नित्यानन्द
राढ़ रहे प्रेमे गर्जे जैछे मन्द मन्द।।

(नेपथ्य-पार्श्व में उच्च स्थान पर दस वर्षीय नित्यानन्द की झाँकी)

नित्यानन्द-गौर...र...हरिबोल। गौ-गौ...गौर हरिबोल

भक्तवृन्द-(चकित होकर सुनते हुए) आचार्यदेव! यह मेघ की सी गम्भीर गर्जन कहाँ सों आय रही है?

अद्वैत-(भुजा उठा गरजते हुए) आय गये! आय गये! मेरे प्रभु आय गये। फूलमाला बनाऔ। आरती सजाऔ। गीत गाऔ। हूँ-हूँ-

समाज-दोहा

नदिया में अद्वैत प्रभु, हुँकरत आनन्द जोर।
नित्यानन्द राढ़ में, गर्जत ज्यूँ घन घोर।।

समाज अद्वैतगाना-इमन-तिताला

आये आये आये आये श्रीहरि आये।
कृष्णमुरारी जनदु:खहारी, भक्त-आधारी आये।।1
गंगाजल और आँखिन जल सों,
जिन चरनन कूँ ध्यान में न्हाये।
तुलसी दलन और भाव दलन कूँ,
जिन चरनन हित नित्य चढ़ाये।।
चरण कमल वे ही भूतल पर, सहज कृपा करि आये।।2
अब लग अँसुवन की लड़ियाँ थीं,
अब गूँथो फूलन की लड़ियाँ।
'प्रेम' डोर में लै लै पिरोऔ,
सुन्दर नाम-सुमन की कलियाँ।।
वह मनमोहन व्रज की वसिया, वनमाली हरि आये।।3

धुन-हरि बोल हरि बोल हरि बोल।

(संकीर्तन-नृत्य करते हुए भक्तमंडली का निर्गमन)

समाज (बंगला)

प्रसन्न होइलो सर्व जगतेर मन।
हरि बोलि हिन्दु के हास्य करये यवन।। (चै० च०)

दोहा

जग जन जन मन मन मधि, मोद सहज हुलास।
हरि बोल कहि यवन हू, करैं हिन्दुन उपहास।।

(प्रवेश दो मुसलमान–करीम, रहीम)

करीम–यार रहीम! आज तो हिन्दू लोग बड़ी खुशियाँ मना रहे हैं। गाहे–ब–गाहे हरि बोल का कलमा गा रहे हैं। वल्लह क्या खूब नगमा है यह हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (नकल उतारता है)।

रहीम–खुदा की कसम करीम! मेरा दिल तो आज बाँसों उछल रहा है। तबियत फड़क रही है। (नकल उतारते हुए) हरि बोल हरि बोल! आखिर माजरा है क्या! हरि बोल हरि बोल चिल्लाती हुई दुनियाँ क्यूँ दिवानी मस्तानी हो रही है?

करीम–होगी कोई वजह! हमें इससे क्या गरज! यह हिन्दू कौम ऐसी ही बुत–परस्त है। इनके तो बारह महीने में तेरह त्यौहार! मगर यार हमारे वास्ते तो यह एक उम्दा तफरीह है। हरि बोल, हरि बोल! बड़ा मजेदार है। हरि बोल हरि बोल!

रहीम–यार नकल उतारते में ही जब इतना मजा आता है तो दरअसल में कितना पुरलुत्फ होगा। वल्लाह वल्लाह! हरि बोल हरि बोल।

(नकल उतारते गाते हुए चले जाते हैं)

समाज–दोहा

फागुन पूनम चन्द्र ग्रहण, मंगल सन्ध्या काल।
जगन्नाथ जगन्नाथ भवन, प्रगटे बनि शचीलाल।।

त्रिपदी

नदिया उदय गिरि, पूर्ण चन्द्र गौर हरि,
कृपा करि भये उदय।
पाप ताप भयौ नाश, त्रिभुवन भरि उल्लास,
दिशि दिशि हरि धुनि होय।।

पद–होरी–काफी

फागुन पूनौ तिथि सुहाई,
हरि होरी रंगीली मचाई।।1।।
होरी खेलि हरि व्रज में हारे, भाग चले नदियाई।
वहाँ पहुँचत ही रंग रसिया ने, होरी नई रचाई।
हरि रंग रंगे सबाई।।2

इति हरि जु जगन्नाथ भवन महँ अवतरे आपही आई।
उत हरिनाम प्रगट होय जन जन नदिया धूम मचाई।
बचे नहीं यवन कसाई।।3
इत प्रकाश भयौ हरि जू कौ, उत गयो चन्द्र लजाई।
'प्रेम' प्रभु लखि गौरचन्द्र कूँ, कारौ परि गयो माई।
राहू कौ दोष लगाई।।4

(बंगला)

अकलंक गौर चन्द्र दिलो दरशन।
सकलंक चन्द्र आर कोन प्रयोजन।।
एतो जानि राहु कैलो चन्द्रेर ग्रहण।
कृष्ण कृष्ण हरि हरि नामे भासे त्रिभुवन।।

चौपाई

या विधि जन मन बाहर हरषें।
आये प्रभु मुद मंगल बरसें।।
मिश्र भवन उत आनन्द सरसे।
शिशु गौर शशि भूतल परसे।।
हुलु धुनि मंगल नारिन दीन्ही।
हरि बोल हरिधुनि बहु कीन्ही।।
वृद्धा इक घर बाहर दौरी।
गमनी जगन्नाथ ढिंग पौरी।।

(प्रवेश एक ओर से एक वृद्धा काँसे की थाल बजाती हुई और दूसरी ओर से जगन्नाथ मिश्र और सेवक ईशान)।

वृद्धा-बधाई मिश्र मोशाय बधाई! शची के एक लाल। अहा लाल! लाल! अद्‌भुत लाल! चाँद! चाँद! सोनार चाँद! कमल! कमल! सोनार कमल! ऐसौ सुन्दर! ऐसौ सुकोमल! ऐसौ मनोहर! आनन्द! परमानन्द! बधाई बधाई! (थाल बजाती नाचती है)।

ईशान-(हँसते हुए) धाई माँ तो बावरी है गई है।

वृद्धा-अरे! तुमहू है जाओगे! जो देखैगौ वही बावरो है जायगौ! मैं तो चली। वहीं चली। चाँद मुख देखूँगी! अहा देखूँगी (कहती चली जाती है)।

ईशान-बधाई तो लै जा बाबा के हाथ ते।

वृद्धा-(नेपथ्य में से) फिर लै लऊँगी! अबई समय नहीं है।

जगन्नाथ-(आनन्द विभोर हो) हरि बोल! हरि बोल!

समाज-चौपाई

सुनत मिश्र हियो उमग्यो भारी।
हर्ष विवश तन सकैं न सम्हारी।।
धरि धीरज मुख हरि हरि गाये।
इष्टदेव कूँ शीश नवाये।।

जगन्नाथ-हे दामोदर! हे गोपाल! आपकी जय हो जय हो! यह सुख आप ही कौ प्रसाद! ईशान! जाऔ दौड़ कै चक्रवर्ती मोशाय कूँ समाचार सुनाऔ। वे शीघ्र पधारैं। और फिर जायकै श्रीअद्वैताचार्य, श्रीवास आदि वैष्णव महानुभावन कूँ मेरौ नमस्कार करनौ। वे सब कृपा कर पधारैं और बालक कूँ आशीर्वाद देवैं। और आचार्यरत्नजी कूँ तो संग लै आमतौ। वे जात-कर्म करायँगे। जाऔ! दौड़ जाऔ! हरि बोल!

ईशान-हरि बोल, हरि बोल (कहता हुआ दौड़ जाता है)

जगन्नाथ-चलूँ! भीतर चलकै पुत्र-रत्न को मुख-दर्शन करूँ। हरि बोल! हरि बोल (कहते हुए चलते हैं)।

समाज-चौपाई

निकट सूतिका गृह जब आये।
करुण रोल भीतर सुनि पाये।।
(नेपथ्य में से स्त्रियों की करुण ध्वनि)

हाय हाय! यह बालक तो शान्त पर्‌यौ भयौ है। न तो आँख खोलै है, न रोवै है, न हाथ-पाँव ही हलावै है। हाय-हाय! यह कहा भयौ?

शची-(भीतर सूतिका गृह से ही)

दोहा

सोने की सी पूतरी कमल सुकोमल बाल।
हा विधि! ऐसौ लाल दै काहे करत कंगाल।।

जगन्नाथ-(बाहर खड़े सुनते-सुनते बैठ पड़ते हैं) हा निष्ठुर विधाता! कहा सुनाय कै यह कहा सुनाय दियौ। अमृत दिखाय कै विषय पिवाय दियौ।

शची-(भीतर से ही) हाय! मैं तो फूली नहीं समाय रही ही कि-

दोहा

सुकृति बेलि फूली सरस, अब मेरे द्वै लाल।
राम लषण आये मेरे, कै बलराम गोपाल।।

परन्तु अरे क्रूर विधाता! तूने क्षण भर में ही–

सुख सपनौ सपनौ कियौ, विधना निठुर निपूत।
मात व्यथा कहा जानिहै, बिन माता कौ पूत।।
जो न नैन उघारि है, छतियन करै न पान।
मात पूत दोनों तबै, गंगा विच तजैं प्रान।।

(प्रवेश अद्वैताचार्य जगन्नाथ मिश्र के समीप)

अद्वैत–हरि बोल! मिश्रजी! बधाई है! बधाई है!

समाज–दोहा

निज नाथ के दरस हित, आये अद्वैत गुसांई।
आवत लखि जगन्नाथ जू, परे चरन अकुलाई।।

जगन्नाथ–(आर्त्ति पूर्वक) बधाई नहीं महाविपद! रक्षा करौ आचार्यदेव! रक्षा करौ! विपदा हरौ।

अद्वैत–(विस्मय पूर्वक) विपदा? कैसी विपदा? समाचार तो आपके सेवक ने पुत्र–रत्न हैवे को दियौ हो।

जग०–पुत्र–रत्न अवश्य! परन्तु निश्चेष्ट! न आँख खोलै है, न रोवै है, न हलै–डुलै है। बचाऔ देव! कोई उपाय करौ। नहीं तो हमारे प्राण नहीं बचैंगे।

अद्वैत–कोई चिन्ता मत करौ। हरि–स्मरण करौ। हरि–स्मृतिः सर्व विपद विमोक्षणम्। मोकूँ बालक के दर्शन कराऔ।

जग०–पधारौ भीतर भगवन्!

(प्रस्थान)

(दृश्य–सूतिका गृह। शची–गोद में बालक। दो चार स्त्रियाँ आस–पास बैठी हैं)।

समाज–चौपाई

सूतिका भवन पधारे गुसांई।
रोवति शची करौ देव सहाई।।

शची

जो यह धन कहूँ जाय नसाई। तजिहौं प्रान गंगा महँ जाई।।

समाज

कहत आचार्य करौ मति क्रन्दन। देऔ माँ मोकूँ निज नन्दन।।
जगन्नाथ लै बालक आये। डारि गोद ये वचन सुनाये।।

जगन्नाथ

जीवन प्रान यह लाल हमारौ। नाव भँवर बिच पार उतारौ।।

समाज (बंगला)

श्रीगौरांग जन्म-मात्र महायोगी प्राय।
नयन मुँदिया रहिलौ दुग्ध नहिं खाय।।

चौपाई

प्रभु महाप्रभुहिं गोद सम्हारे। नेम प्रेम व्रत सुफल लहारे।।
गौर गोपाल कौ रूप निहारी। उमग्यौ उर तन दशा विसारी।।
परसत रोम रोम पुलकाये। नेह नीर नैनन भरि आये।।
धरि धीरज आये घर बाहर। गृह आंगन इक नीम तरू तर।।
बाल रूप तहाँ गौर दुराये। मुरली धर हरि रूप लखाये।।
चिन्ता दुख सब गयौ नसाई। करत स्तुति सब जय जय गाई।।
(नीम-वृक्ष के नीचे भगवान् श्यामसुन्दर मुरलीधारी की झाँकी)।

अद्वैत स्तुति-भीम पलासी-केहरवा

जय जय जनार्दन मुकुन्द मुरारी।
जय जय गौर अवतारी मुरारि।।1।।
जय मत्स्य रूप वेद उद्धारी। जय कूर्म रूप सुमेरु धारी।
जय वाराह धरनी उद्धारी। जय जय गौर अवतारी०।।2
जय नरसिंह प्रह्लाद उद्धारी। जय वामन सुर कारज कारी।
जय परशुराम क्षत्री संहारी। जय जय गौर अवतारी०।।3
जय श्रीरामचन्द्र धनुधारी। जय बलराम हल मूसल धारी।
जय गिरिवरधर मुरलीधारी। जय जय गौर अवतारी०।।4

(साष्टांग प्रणाम)

श्रीकृष्ण-दोहा

भक्ति-भक्त-अधीन हौं, यही पुरातन प्रीत।
भक्तन इच्छा अनुसरी, धरौं अवतार पुनीत।।
तुम्हरे भाव हुँकार वश, आयौ तजि निज धाम।
लीला मधुर प्रकाशिहैं, पूरौ सब मनोकाम।।

अद्वैत-(हाथ जोड़) हे भक्त-भक्तिमान् भगवन्! जब आप भक्तन की मनोकामना पूर्ण करवे के लिए ही कृपया अवतीर्ण भये हौ तौ सर्वप्रथम तौ अपने माता-पिता की कामना पूर्ण करैं। अपने प्रफुल्लित नयन-कमलन की मकरन्द सुधा उनकूँ पान करावैं। विमल वात्सल्य सुख उनकूँ प्रदान करैं। यही दास की प्रार्थना है।

श्रीकृष्ण-आचार्य जी! आप प्रेमोवेश में आय कै नेमकूँ ही भूल गये हैं।

अद्वैत-भूल के लिए क्षमा करुणासिन्धो! भूलनौ तो जीव कौ स्वभाव ही है। अब आप भूल सुधार दैवे की कृपा करैं।

श्रीकृष्ण-आपने शची माता कूँ मन्त्र-दीक्षा दीन्हीं है न?

अद्वैत-हाँ प्रभो! आपके गर्भवास काल में उनके आग्रह पै दै दीन्ही ही।

श्रीकृष्ण-परन्तु दीक्षा सों पूर्व 'हरि' नाम श्रवण करामनो भूल गये।

(बंगला)

मंत्र-दीक्षा पूर्व हरिनाम दिबे।
कर्ण शुद्ध होय नामेर प्रभावे।।
अशुद्ध कर्णे ते यदि महामंत्र लय।
असम्पूर्ण दीक्षा सेइ जानिह निश्चय।।

चौपाई

पहले हरि को नाम सुनावै। कर्ण शुद्ध तासों बनि जावै।।
शुद्ध कर्ण बिच मंत्र सुनावै। तबही दीक्षा पूर्ण कहावै।।
नाम बिना दीक्षा जु अधूरी। नाम सुनाय करौ सो पूरी।।
तबही पान स्तन हौं करिहौं। नैन उघारि दुख सब हरिहौं।।

अद्वैत-प्रभो! आपके नाम तो अनन्त हैं। मैं कौन-सौ नाम माता कूँ सुनाऊँ।

श्रीकृष्ण

हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

या बत्तीस अक्षरात्मक षोड़श नाम महामन्त्र कूँ सुनाऔ।

अद्वैत-जय हो दीनबन्धो! दयासिन्धो! आज श्रीहरि के सहित ही श्रीहरिनाम कौ हू, अवतार भयो। याहि कारण आज सर्वत्र 'हरि बोल हरि बोल' ध्वनि प्रकाशित है रही है।

पद-गाना मालकोष-द्रुत इकताला

जय हरि जय हरि नाम।
मंगलमय दोउ आज, अवतरे नामी नाम।।जय०।।
लक्ष लक्ष लक्ष कण्ठ, उच्च सुरन घोष करैं।
हरे कृष्ण हरे राम।। जय०।।
लखि कलियुग राहुग्रस्त, साधन शशि मलिन अस्त।
उदयो मंगल नाम।।जय०।।
श्याम घन दामिनी मिली, 'प्रेम' गौर वपुधरी।
प्रगटे नदिया धाम।।जय०।।

समाज चौपाई

तब प्रभु दिव्य स्वरूप दुराये। बाल रूप गौर प्रगटाये।।
लोचन कमल विमोचन कीन्हे। लाय शिशु पुनि मातहिं दीन्हे।।

अद्वैत-(बालक को जगन्नाथजी को देते हुए) लेओ सम्हारौ मिश्रजी। बालक नै नेत्र खोल दिये हैं परन्तु शची माँ! तुमकूँ नाम महामन्त्र सुननौ होयगौ। बोलौ मेरे पीछे-पीछे।

(पर्दा के आवरण में घण्टा-घड़ियाल-शंख ध्वनि के मध्य महामन्त्र श्रवण कराना)।

माँ अब तुम बालक कूँ स्तन पान कराऔ।

समाज चौपाई

लै शिशु शची स्तन मुख दीन्हौ।
करत पान मुदित मन कीन्हौ।।
हरषित हुलु धुनि तिय गन दैवैं।
बारम्बार बलैया लैवैं।।

असीसा नर नारी बहु बरसैं।
देव अलक्षित सुमनन बरसैं।।
नीलाम्बर श्रीवास हू आये।
लालहि लखि लखि नैन सिराये।।

अद्वैत-कवित्त

बोलौ हरि नाचौ गाऔ, आनन्द मनाऔ आज,
कंचन कुसुम कमनीय लाल पायौ है।
राशि नाम विश्वम्भर, कुण्डली मिलाय लीजौ,
एक नाम सुनौ अब, मेरे मन भायौ है।।
नीम नीचे सौभर महँ, जायौ शची बाल यह,
नाम मैं निमाई ताते, नीम पै धरायो है।
सबन पै 'प्रेम' मधु, अमिय बरसावैगो,
यम के लिए तो यह, नीम प्रगटायो है।।

हरि बोल

सब लोग

जय हो निमाइ लाल की।
जय हो शची दुलाल की।।

जगन्नाथ-हे आचार्य देव!

चौपाई

हम सनाथ भये आज गुसांई। तुम हमहिं मिले साँचे साँई।।
विपदा हरि ज्यूँ तुरत मिटाई। बारम्बार नमो नमो पाई।।

समाज

भक्त सकल अद्वैत सराहवैं। 'बूढ़ौ बाबू' कोई बतावैं।।

1. भक्त-मिश्रजी! हमकूँ तो आचार्य देव बूढ़े बाबा महादेव जैसे लगैं हैं। कहैं हैं कि व्रज में नन्दभवन में एक बार नन्दलाला को रोमनौ-मचलनौ तब ही बन्द भयौ हो जब महादेव बाबा आये हैं। वैसे ही यहाँ हू आपके लाला ने तबही नेत्र खोले और दूध पियौ जब ये आचार्य बाबा पधारे। यह सब इनकी ही करामात है।

जगन्नाथ-यामें कहा सन्देह! इनकी कृपा के हम सदैव ही रिनियाँ रहिंगे।

अद्वैत (बंगला)

प्रभु कहे मिछे मोर प्रशंसह केने।
एइ शिशु भालो होइला निम्ब गुने।।

आप लोग तो मेरी वृथा प्रशंसा करौ हौ-

कवित्त

मेरो नहीं हाथ कछु, नीम को प्रभाव सब,
बहुत गुन नीम माँहि, पार नहीं आवै है।
छाया तन व्याधि हरे, वायु गुन बहुत करै,
गन्ध पाय डाकिनी शाकिनी भगि जावै है।।
मूल में निवास करैं चक्रपाणि हरि आप,
वाधा सब दूर करैं सुख सरसावै हैं।
तुम्हरौ ही दु:ख नहीं, जग को दु:ख हर्यौ आज
हरि बोल हरि बोल, 'प्रेम' जग गावैं हैं।।

सब लोग-हरि बोल।

समाज-कवित्त

शची को आनन्द सुख, कहि सकै काको मुख,
दु:ख सब शेष भयौ, लाल अस पायौ है।
बार बार मुख चन्द्र, इक टक निहारि रहैं,
तृपति न होत हियौ, बेर बेर लायौ है।।
संग की सहेली कहैं, जन्मत ही तेरौ लाल,
हमरौ चित चोरि लीयौ, कौन यह आयौ है।
यशोदा सों भाग्य तेरौ, मानैं हम 'प्रेम' आज,
शची कौ दुलाल बनि, नंदलाल आयौ है।।

धुन-कवित्त

जय निमाइ लाल की। जय शची दुलाल की।।
आज शचीलाल पायौ, नेहिन उर माल पायौ,
भक्तन भूपाल पायौ, काल कलि पायौ है।
भक्ति सरताज पायौ, भाव रसराज पायौ,
नाचत सुहाग भरि, गर्व ना समायौ है।।
पतितन आधार पायौ, नाम को सहार पायौ,
प्रेम को सिंगार पायौ, गोपी पद पायौ है।

मिश्र ने फरजन्द पायौ, भूतल ने चन्द पायौ,
कारे ने हू रंग पायौ, गौर बनि आयौ है।।

धुन रसिया (आज व्रज में) सामूहिक गाना

जय निमाइ लाल की। जय शची दुलाल की।।
गौर हरि की होरी रे आज।
होरी रे होरी रे होरी रे आज।।1।।
मासन में फागुन है रंगीलौ, तिथिन में पूनौ गोरी रे आज।।2
नाम गुलाल उड़ाऔ, भरि भरि, प्रगट भये गौर हरि रे आज।

(हरि बोल)

मद की चूनरि दूरि कर डारौ, बोरौ लाज की चोली रे।।
आप हरि आज नाचन आये, अब न बचे कोई गोरी रे।।
'प्रेम' कठोर हियौ कहा गावै, भीज्यौ तऊ न पसीज्यौ रे।।

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल

इति गौर-जन्म लीला सम्पूर्ण

❧❖❧

आविर्भाव लहरी **षष्ठ कणामृत**

गौर-जन्म-बधाई

श्लोक

अभूद् गेहे गेहे तुमुल हरि सङ्कीर्तन रवो
बभौ देहे देहे विपुल पुलकाश्रु व्यतिकरः।
अपि स्नेहे स्नेहे परम मधुरोत्कर्ष पदवी
दवीयस्याम्ना यादपि जगति गौरेऽवतरति।।

(चै० चन्द्रा०)

कवित्त

घन घन घर घर, नदिया नगर वर,
हरि हरि नर नारि, गावैं जन जन हैं।

तन तन पुलकित, अश्रु बहै झर झर,
उठत हिलोर हिय, नाचै तन मन है।।
मन मन चहैं ललचावैं नहिं पावैं सुर,
भेद हू न पावैं वेद, गोपी धन धन है।
धन धन 'प्रेम' पंथ, चलिकै चलामन कूँ,
अवतरे गौर चन्द्र भाव रसघन है।।

पद–हमीर–बहार–तिताला

फूल फूल के बाजैं बधाइयाँ।
फूल माता शची ने जाइयाँ।।1।।
फागुन पूरनमासी फूली, संध्या घड़ी शुभ राशि फूली।
फूल फूल के गौर हरि पाइयाँ।।2।।
फूले निताई, अद्वैत फूले, फूले श्रीवास हरिदास फूले।
अब आशा लता फूल छाइयाँ।।3।।
बाट चलत बटोही फूले, गंगा न्हावत जन मन फूले।
फूल फूल के फूल चढ़ाइयाँ।।4।।
सुर नर मुनि मिलि नाचत फूले, अबीर गुलाल उड़ावत फूले।
'प्रेम' आनन्द जगभरि छाइयाँ।।5।।

(दृश्य–बाल गौर पलना में। खिलौने आगे रखे हुए। जगन्नाथ, शची, मालिनी आदि स्त्रियाँ बैठी पलना झुला रही हैं)।

समाज–बधाई पद–झूमका की

आज बधाइयाँ हो, श्रीजगन्नाथ के दरबार।
हुआ सुत सोहना हो, शची का गौर चन्द्र कुमार।।
आये नर नारियाँ हो, भक्त जन बहु भीर भार।
हरि धुनि छाइयाँ हो, बाजि रहे खोल करताल।।

झूमका

अद्वैत आचारज आये, आचार्यरत्न जू आये।
हरिदास मुरारि आये, श्रीवास नीलाम्बर आये।।

(प्रवेश अद्वैताचार्य, चन्द्रशेखर, श्रीवास, नीलाम्बर, हरिदास, मुरारि आदि बधाई सामान एवं अबीर–गुलाल लिये)

भक्त मण्डली–बधाई है मिश्रजी बधाई है। तुम्हारौ लाल सुखदाई है।

(बधाई वस्तु समर्पण करते एवं गाते हैं)

गाना

गौर चन्द्र कौ आज जन्म दिन हिलमिल होरी खेलौ हो।
नाचौ गाऔ हर्ष मनाऔ, शोक दु:ख पग पेलौ हो।।
नाम गुलाल मलौ मुख ऊपर, हँसि हँसि गलभुज मेलौ हो।
भरि भरि नैनन की पिचकारी, नेह सरस रंग रेलौ हो।।
भाव चाव कमोरी भर भर, लाज के शीश उँडेलौ हो।
अबीर आनन्द उड़ाय 'प्रेम' सों हरि हरि मुखसों बोलौ हो।।

(हरि बोल)

श्रीवास-मिश्रजी! तिहारौ लाल भागवत-भूषण होवै। वंश-विभूषण होवै।

चन्द्रशेखर-जनमनरंजन सुखवर्षण होवै।

नीलाम्बर-मिश्रजी! यह बालक सर्वभूत प्रिय, सर्वधर्माश्रय एवं सर्वलोक हितैषी पुरुष सिंह होयगौ।

श्लोक

अये! पुरुषसिंहोऽयं जात! प्रोच्चै वृहस्पतौ।
असौ सर्वलोकस्य पाता नित्यं भविष्यति।।

या बालक की जन्मकुंडली में वृहस्पति उच्च स्थान पै हैं। अन्य ग्रहन की हू पूर्ण सुदृष्टि है। सिंह राशि है, सिंह की लगन है। यह महापुरुष सिंह होयगौ। राशि को नाम हू विश्वम्भर है। यह साक्षात् 'नारायण समो गुणै:' होयगौ! विशेष फलागम जन्मकुंडली प्रस्तुत करकै सुनाऊँगो।

जगन्नाथ-यह सब आप सब भागवत प्रवर विप्र जनन कौ ही आशीर्वाद है।

(प्रवेश विप्र नगरी वृन्द बधाई सामान सहित)

समाज पूर्व पद

धनि धनि भाग उदयौ हौ, भयो जगन्नाथ सुत सुकुमार।
आईं द्विज नागरी हो, गावैं गीत मंगलाचार।।
लाईं जेवर जड़ाऊ हो, झगुलिया टोपी गोटादार।
हिय आनन्द चाव हो, लखि लखि छवि बलिहार।।

झूमका

लाज कुल की बहाई, गावति नाचें माई।
उतारतीं नोन राई, चिरजीवौ लाल निमाई।।

नारी वृन्द-शची माँ! बधाई है। बड़ौ ही अनोखौ लाला पायौ है-बधाई है।

रसिया

अनोखौ ही लाला जायौरी, तेरे कूँख कूँ धन्य री माई।
तेरे कूँख कूँ धन्य री माई, तेरे भाग्य कू धन्य री माई।।
नौ ही मास में बालक होवै, यह जग रीति सदाई।
चौदह मास में तुमने जायौ, रीति अनौखी चलाई।।
(या अनौखी रीति के लिये हू बधाई है। और सुनौ)
हमरे जब कोई बालक, होवै, गावें गीत लुगाई।
तिहारे लाल कौ जन्म भयौ जब, दुनियाँ हरि हरि गाई।।
(या अनोखी बात के लिये हू बधाई है माँ! और हू सुनौ।)
मात दूध कूँ पाय कै बालक, रोवत चुप है जाई।
तिहारौ लाल तबही चुप होवै, जब हरि धुनि सुनि पाई।।
(या अनोखी बात के लिये हू बधाई है माँ! और सुनो)
जैसे ढंग अनोखे सबते, रंग हू अनौखौ माई।
सोने की इक पूतरी मानौ, बिजुरी में लिपटाई।।
और एक अचरज सबही कौ यह, लेत है चित्त चुराई।
आनन्द 'प्रेम' हिय उमगावै, नैनन रहै समाई।।

(श्रीवास-पत्नी मालिनी और आचार्यरत्न-पत्नी-ये दो शची माँ की सहेलियाँ समागत विप्र-वधूओं को सिन्दूर, हल्दी, तेल, केला, नारियल, खील, बताशा, मेवा आदि माँगलिक वस्तुयें भेंट करती हैं और वे आशीर्वाद देती है)।

नारियाँ-रसिया सारंग

चिरजीवो शची तेरौ बाल शशी।
गोरे वदन पै श्याम डिठौना, सुन्दरता पै रेख कसी।।
छवि-छरी-सी बैयाँ सोहै, तापै दस दस झूलैं शशी।
चम्पकली दस चारु चरणदल, हमरे हियन में रहौजु धँसी
अरुन अधर पै श्वेत मुसकन, नित नैनन में रहौ जु बसी
'प्रेम' प्रभु पै बलि बलि जावै, न्हावत बार न जाय खसी।।

(चली जाती हैं। दो भाट-बन्दीजन आते हैं)

भाट 1-मिश्रजी बधाई है। बधाई है। बड़े दिनों में मुराद वर आई है। चिरजीवौ फरजन्द सदा ही है।

भाट 2-मिश्रजी! हम आपकी वंशावली बामेहनत ओ बामोहब्बत तैयार कर लाये हैं। हुक्म बख्शा जाय तो सुनाएँ और मुराद पाएँ।

जगन्नाथ-बड़ी खुशी सों सुनाऔ भैयाऔ!

भाट पद वंशावली वर्णन (भैरव)

जगन्नाथ जू सुनो तिहारी, वंशावली हम गावैं हैं।
विरद तिहारौ अति ही पुरातन, सार कछुक सुनावें हैं।।
बड़ बाबा तिहारे 'जितमिश्र', विप्र वैदिक श्रेणी के।
आदिवास 'करुणावास' कहिये, पश्चिम काशी नगरी के।।
वर्ष चार शत पूर्व भये इक, भूप 'श्रीश्यामल वर्मा' है।
पूर्व बंग महँ राज्य करें वे, चन्द्रवंशी कुल जन्मा है।।
चार विप्र तिन काशी ते, निज देश बंग बुलवा लाये।
तिनमें बड़े बाबा हू तुम्हरे, पुत्र तीन सहित चले आये।।
'मधुकर मिश्र' जू नाम एक कौ, चार पुत्र जिन जाये हैं।
उपेन्द्र, रंगद, कीर्तिद और, कीर्तिदास कहाये हैं।।
तिनमें बड़े 'उपेन्द्रमिश्र' जू, सात कुँवर प्रगटाये हैं।
कंसारी, परमानन्द, तीजे आप 'जगन्नाथ' आये हैं।।
पद्मनाभ, सर्वेश्वर पुनि, जनार्दन, त्रैलोकनाथा हैं।
सप्तभ्रात जन सप्त ऋषि ज्यूँ, जग विच करैं प्रकाशा हैं।।
पिता तिहारे 'श्रीहट' तजिकै, नवद्वीप कहँ चलि आये।
जहाँ सरस्वती क्रीडत घर घर, लक्ष्मी लोटति जन जन पाये
विद्या गुण बहु शील विभूषित, वंश तिहाई उच्च महाई।
पंडितजन गन मध्य आपहू, 'मिश्र पुरन्दर' पदवी पाई।।
वंश-वेलि पुरातन तुम्हारी, हम कछु बरनि सुनाई है।
सुमन मनोहर लाल तुम्हारो, जग सुवास महकाई है।।
हरि बोल की रोल उठत चहूँ, आनन्द 'प्रेम' सरसायौ है।
जय जय जगन्नाथ तात जिन, जगन्नाथ सुत पायौ है।।
ऐसी यह वंशावली परम सुखदाई है।
बधाई है मिश्रजी बधाई है।।

भाट 2-(बाल गौर को देखते हुए) वाह वाह वाह! सदके जाऊँ! क्या खूबसूरती पाई है। क्या हुस्नो-जमाल पाया है।

भाट 1-गोया तो परमात्मा ने अपने नूर का तमाम खजाना इस गौर चाँद पर ही लुटाया है-

कवित्त

अमृत के साँचे बिच, घोल कनक बीजुरी,
गौर अंग उज्ज्वल अति, विधना बनाया है।
काम रति कोटि अंग, पीस चन्द्र कोटि संग,
एक एक अंग बीच, रंग ले सजाया है।।
भाव प्रेम रस रंग, अखिल ब्रह्माण्ड का ले,
निचोड़ छान छान रोम रोम में भराया है।।
अमृत में न्हाय 'प्रेम' पोंछ देह दामिनी सों,
चाँदनी चन्दन लगाय, गौरचन्द्र आया है।।

भाट 2-दर हकीकत में। तीनों लोक के सौन्दर्य के सार से हुस्नो-जमाल की रूह से, यह गौर फूल मह मह महक रहा है।

कवित्त

रंग कनक कमल सार, रूप कामरति सार,
रमारमापति सार, छवि पारावार है।
गालन लुन्हाई-सार, मुसकन जुन्हाई-सार,
चितवन भुराई-सार, उपमा सब छार है।।
अधर ललाई-सार, नासा सुघड़ाई-सार,
चिबुक लड़काई-सार, लाड़ कौ अधार है।
बाहु सुमृणाल-सार, पाणि सुपल्लव-सार,
पदपद्म 'प्रेम' सार, शची कौ कुमार है।।

भाट 1-अरे यार गजब हो गया, कमाल हो गया।

भाट 2-क्या हुआ? कैसे हुआ? हम भी तौ सुनें।

भाट 1-मैं अभी यहाँ बैठे-बैठे मथुरा मंडल में नन्दगाँव में नन्दबाबा के भवन में पहुँच गया था।

भाट 2-होश में या बदहोश में या गैर-होश में।

भाट 1-बिल्कुल होश में, शायरी के जोश में।

भाट 2-मान लिया! पहुँच गये थे नन्दभवन। फिर?

भाट 1-फिर वहाँ मैंने जिन्दगी का सबसे अजीब नजारा देखा-बिल्कुल लामिसाल।

भाट 2-वह क्या भला?

भाट 1-वह यह कि वेदान्त का सिद्धान्त परब्रह्म एक साँवला सलौना मोहना मुन्ना बना हुआ भक्ति महारानी यशोदा नन्दरानी की गोद में से उतर पड़ा।

भाट 2-कहाँ उतर पड़ा?

भाट 1-आँगन के फर्श पर और कहाँ?

भाट 2-उतर पड़ा। फिर?

भाट 1-वह जमीन पर लेट गया।

भाट 2-अरे धूल पर लेट गया।

भाट 1-जी हाँ धूल पर! और लेटा ही नहीं लोटपोट होने लगा, हाथ पैर पटकने लगा, रोने-मचलने लगा।

भाट 2-क्यूँ भला?

भाट 1-वह खिलौना माँगता था।

भाट 2-तो नन्दबाबा के घर कोई खिलौना नहीं था क्या?

भाट 1-अरे साहब! ऐसा-वैसा खिलौना नहीं, चाँद माँगता था, आकाश का चाँद 'चन्द्र खिलौना लैहौं मैया' कह-कह पैर पटकता था।

भाट 2-वाकइ अजीब नजारा! अजीब बालक! अजीब माँग! और अजीब हरकत! फिर क्या हुआ? चन्दामामा उतर आया क्या?

भाट 1-नहीं आया! बालक बेचारा रोता रहा! मामा चन्दा मामा आ आ आजा पुकारता रहा। तब तो कमाल हो गया! इलाही करामात हो गई।

भाट 2-क्या करामात हुई?

भाट 1-चन्दा चन्दा की रट लगाते-लगाते वह बालक ही काले कृष्णचन्द्र से गौरचन्द्र हो गया।

कवित्त

क्षीर सागर को मथि मथि सुर असुरों ने,
निकाला है आकाश का, चाँद ए खिलौना है।
लाय दैरी चन्दा मैया, खेलूँगा मैं संग इसके,
यह तो मेरे मन को, बड़ा ही मोहना है।।
रोय रहे माँग रहे, मचल रहे कान्ह 'प्रेम',
आया ना गुमानी चाँद, लाल लगे रोमना है।
चन्दा चन्दा चन्दा रटत, चन्दा ही के भाव में,
कृष्णचन्द्र हो गये गौरचन्द्र सोहना है।।

इस तरह इधर तो धरती पर कृष्णचन्द्र गौरचन्द्र हो गये और उधर आकाश में गौर चाँद काला हो गया। उसे सजा मिल गई न आने के लिए।

भाट 2-क्या सजा मिली भला?

भाट 1-अरे देखा नहीं कल रात चाँद का मुख काला कर दिया गया था?

भाट 2-अरे! वह तो ग्रहण पड़ा था। सो राहू लगा था चाँद को।

भाट 1-अरे नहीं! वही तो सजा थी सजा! ग्रहण का तो सिर्फ एक बहाना था।

भाट 2-जरा खुलासा करके तो समझाओ।

भाट 1-तुम जानते हो कि चाँद क्यों नहीं आया बाल-गोपाल के हाथ।

भाट 2-मैं क्या जानूँ! तुम्हारी अक्ल का घोड़ा तेज-तर्रार है। लिहाजा तुम ही बताओ राज क्या है।

भाट 1-तो सुनो! चाँद को अपने रूप रंग का बड़ा घमंड है। इस वास्ते वह सोचने लगा कि-

कवित्त

काजल है काला कान्ह, मैं हूँ उजियाला जग,
काले और गोरे में, भला मेल कब खाना है।
कलंक की एक रेख, आज तक न मिटी नेक,
फिर काले के हाथ जा, रूप क्यूँ नसाना है।।
गर्व के हरैया उस बाँके कन्हैया ने निज,
रूप का चपेटा चाँद चाँद पै जमाना है।

पाना है दंड प्रेम ए बहाना है ग्रहण का,
देख गौर चाँद चाँद काला पड़ जाना है।।
बधाई है मिश्रजी बधाई है। कथा गौर की सुनाई है।

धुन

जय निमाइ लाल की, शची के दुलाल की।
नाम दिये प्रेम दिये, कीर्तन की पालकी।।

हरि बोल (गाना-नाचना)

समाज चौपाई

गावत भाट बधाई पाये। देत असीस भुजान उठाये।।
मान दान लहि मोद बढ़ाये। नाचत गावत हरि हरि भाये।।

(हरि बोल गाते-नाचते भाटों का चले जाना)

(प्रवेश सनकादि कुमार चतुष्टय-चार बालक केवल कटि वस्त्र पहने)।

सनकादि कुमार गाना-रसिया

कन्हाई भयो निमाई यह भागवत में गाई।
यह भागवत में गाई, यह तो गर्ग मुनि ने सुनाई।।1
सतयुग में याको शुक्ल बरन हो, लाल हो त्रेता माँहि हो,
यह द्वापर कारौ कन्हाई।।2
कलियुग में याकौ पीत बरन है, कीर्तन यज्ञ रचायौ हो,
यह कलि कौ ठाकुर भाई।।3
कृष्ण होय याने वंशी बजाई, गौरा हरि हरि गायौ हो,
संकीर्तन धूम मचाई।।4
कृष्ण हाय याने प्रेम ही लूट्यौ, गौरा प्रेम लुटायौ हो,
पायौ जो व्रज में भाई।।5
कृष्ण होय याने गोपी रुवाई, गौरा आप ही रोयौ हो,
हा कृष्ण कृष्ण कहाँ गाई।।6
कृष्ण होय याने रिन जो चढ़ाये, गौरा होय भुगतायौ हो,
हरि नाम प्रेम लुटाई।।7
कृष्ण होय याने असुर संहारे, गौरा कंठ लगायौ हो,
हरि बोल हरि बुलवाई।।8

कृष्ण होय यह रसिया साज्यौ, गौरा वैराग्य बतायौ हो,
संन्यासी रूप बनाई।।9
दया सीम गुन सीम निमाई, भजो हरि हरि गाय हो।
जो चाहौ 'प्रेम' रस भाई।।10

धुन

जय गौरा जय गौरा गौरा जय गौरा जय श्रीगौरा।
राधा भाव कान्ति लैंकै प्रगट्यो श्याम हरि चोरा।।

पद-रसिया सारंग

कारे पै चढ़ि गयो रंग गोरौ, कारे पै।
जापै रंग चढ़ै ना कोई, तापै चढ़ि गयौ रंग गोरौ।।
छिप गयौ श्याम गोरी के अन्तर,
रूप कारेको भयो गोरौ। कारे पै।।
रंग चढ्यौ, चढ्यौ भाव स्वभाव,
(तासों) टेढ़ौ बन्यौ सूधौ भोरौ। कारे पै।
करुणा दया उदारता गुण तौ,
राधा कौ याने चोरौ। कारे पै।।

(चोरी करकै फिर)

भाग्यौ चोर कोई पकर न लेवे,
जाय छिप्यौ नदिया गोरौ। कारे पै।
यह चोरी फागुन की होरी,
(याही सों) 'प्रेम' में नेम सबै बोरौ।।

(प्रवेश ब्रह्मा, शिव एवं नारद)

नारद-हे जगद्गुरु देवाधिदेव! या समय मेरे हृदय में एक कौतुहल सो है रह्यौ है। आज्ञा होय तो निवेदन करूँ।

शिव-अवश्य कहो नारद जी। ऐसे हर्षोल्लास के अवसर पर संकोच को कहा काम?

नारद-भगवन्! वह कौतुहल यह है कि भगवान् नृसिंह चतुर्दशी को प्रगट भये, वामन देव द्वादशी कूँ, श्रीरामचन्द्र नवमी कूँ तथा श्रीकृष्णचन्द्र तो अष्टमी ही कूँ अवतीर्ण भये, परन्तु गौरचन्द्र पूर्णिमा कूँ प्रगट भये हैं। यामें कछु रहस्य है कहा?

शिव-किचिंत्मात्र हू नहीं। भगवान् जा काहू देश में प्रगट होवैं वही देश दिव्य धाम बन जाय है, जा काहू काल में प्रगट होवैं वही काल सर्वमंगलमय बन जाय है, जा काहू रूपकूँ प्रगट करैं वही रूप अपूर्व, अनुपम बन जाय है तथा जो कछु क्रिया कर्म करैं वही सर्वकल्याणकारी होय है। तथापि रूप विशेष और लीला-विशेष सों भाव और रस कौ विशेष उल्लास होय है। याहि कारण भक्तजन अपनी-अपनी इष्ट-गोष्ठी में विविध विचित्र भाव-रसमाधुरी कौ आस्वादन करैं हैं। भगवान् गौर-चन्द्र के अनन्योपासकन कौ हू अपनो एक विशेष आस्वादन है। वे कहैं हैं कि व्रज की अव्वल प्रेमभक्ति चिरकाल सों जगत् के ताईं अनर्पित हती। ताकूँ ही कलियुग के जीवन के प्रति समर्पण करवे के तांई स्वयं नन्दनन्दन श्रीकृष्णचन्द्र ही शचीनन्दन गौरचन्द्र के रूप में अवतीर्ण भये हैं। और इनमें जो विशेषता बतायैं हैं सो सुनौ!

कवित्त

नदिन में गंग नदी जाके तीर गौर भये,
युगन में कलि धन्य गौरचन्द्र जाये हैं।
साधन में नाम श्रेष्ठ, जाकूँ गौर गान कियौ,
साध्य पुरुषार्थ प्रेम, पंचम लखाये हैं।।
दान में अभय दान, जाकूँ गौर दान दियौ,
मारे बिन दुष्ट खल, भव सों छुड़ाये हैं।
तिथिन में तिथिराज, उज्ज्वल पूनमराज,
उज्ज्वल रस 'प्रेम' देन, उज्ज्वल गौर आये हैं।।1

वे कहैं हैं कि अन्य अन्य अवतारन में तौ भगवान् नैं-

कवित्त

ज्ञान दियौ ध्यान दियौ, गीता व्याख्यान दियौ,
मुक्ति दई भक्ति दई, दाता पद पायौ है।
(परन्तु यह सब दैनो तौ ऐसेई है जैसौ कि)
सामान भंडार में सों, काढ़ि देत अतिथि कूँ,
थार में कौ भोग सो, तो आप गटकायौ है।
(वह निज भोग कहा है कि)
गोपी रस प्रेम जाहि, भोगत गोपाल एक,
ब्रह्मा ललचात वेद, लक्ष्मी हू न पायौ है।

सोइ रसराज आज, दैनन कूँ दानी राज,
तिथिराज पूनम में, गौराराज आयौ है।।

ब्रह्मा-हाँ वत्स नारद ! गौर अवतार की विशेषता या करुणापूर्ण अपूर्व प्रेमरस दान में ही है।

श्लोक

**रक्षो दैत्यकुलं हतं कियदिदं, योगादि वर्त्मक्रिया
मार्गो वा प्रकटी कृतः कियदिदं, सृष्टयादिकं वा कियत्।
मेदिन्युद्धरणादिकं कियदिदं, प्रेमोज्ज्वलां या महा-
भक्तेर्वर्त्मकरीं परं भगवतश्चैतन्यमूर्तिं स्तुमः।।**

(चै० चन्द्रा०)

देखौ नारदजी, भगवान् ने नाना अवतार लैकैं-

कवित्त

मारै जब राक्षस तौ मारै माखी माछर ही,
धारैं पीठ धरती तौ, उठावैं तिल राई है।
तारैं जब भक्तन औ परचारैं धर्म जब,
अपनौ ही काज सारैं, बाढ़ै ठकुराई है।।
सम्हारैं धनु चक्र जब, लाज न आवै नैक,
जीव आगे वीर बनैं, कैसी प्रभुताई है।
निकारैं प्रेम-पंथ और प्रेम दैं उबारैं जो,
ऐसे गौरचन्द्र की ही साँची ईशताई है।।

और हू सुनौ-

कवित्त

कौन से अवतार में भोग तजि जोग लियौ,
अपने घर आँच लाय, जग कूँ सिरायौ है।
कौन-से अवतार में आँसुन बहाय बहाय,
पापिन कूँ धोय धोय, निर्मल बनायौ है।।
कौन-से अवतार में, द्वार द्वार जाय जाय,
गाय गाय हरि हरि, 'प्रेम' धन लुटायौ है।
तिथिन में तिथिराज, पूनम विराजे आज,
दानिन में दानीराज, गौराराज आयौ है।।

शिव-ब्रह्माजी! भगवान् गौरचन्द्र की अपूर्व करुणामाधुरी कौ आस्वादन तौ आगे कमल खिलवे पै शान्ति सों कर्‌यौ करेंगे। या समय तौ कमनीय कनक कमल फली की रूपमाधुरी-पान करवे के लिए नयन-मन-प्राण उत्कण्ठित है रहे हैं। अतएव अब शीघ्र ही मनुष्य रूप बनाय कै मिश्र भवन में पहुँच जानौ चाहिये हरि बोल!

(तीनों का प्रस्थान)

(दूसरी ओर से प्रवेश कलिराज अपने सेनापति अधर्म के साथ)।

अधर्म-जय हो युगराज महाराजाधिराज कलिराज की जय हो।

कलियुग-नहीं सेनापति अधर्म! अब मेरी जय नहीं। जय है शचीनन्दन की! जय है उसकी-वह सुनो वह क्या आवाज हवा में गूँज रही है।

(नेपथ्य में 'हरि बोल की तुमुल ध्वनि)

अधर्म-(कानों में अँगुली दे घबड़ा कर) यह क्या? यह कैसा कोलाहल है सरकार?

कलियुग-क्या तुम्हें मालूम नहीं कि इस नवद्वीप में पैदा हुआ है एक ब्राह्मण-कुमार? उसी की खुशी का है यह इजहार!

अधर्म-कुमार? 'कु' माने पृथ्वी और 'मार' माने मारने वाला। तब तो वह पृथ्वी का मारक और पाप का सहायक ही पैदा हुआ है।

कलियुग-सहायक नहीं संहारक! पृथ्वी का मारक नहीं तारक, पतितोद्धारक, सर्वलोकोपकारक है। वह शची का लाल तुम्हारा काल है। तुम्हारी पाप-फौज की न चलैगी वहाँ चाल है और न मेरी ही गलैगी वहाँ दाल है।

अधर्म-(सक्रोध) गलत ख्याल, सरासर गलत ख्याल है यह आपका। जहाँ मैं अधर्म आपका मददगार सिपहसालार हाजिर हूँ, और काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य की मेरी फौज बेशुमार है, वहाँ आपका प्रताप सूर्य हरगिज फीका नहीं पड़ सकता है वह तो दिन दूना रात चौगुना-चमका-दमका करेगा। मेरी पाप-फौज ने धर्म की तमाम फौज को मार-मार कर पहाड़-जंगलों में भगा दिया है।

कवित्त

शौच को तो नोच, सदा-चार का अचार डाल,
क्षमा को तो दमा, दम दया का निकाला है।
विवेक वैराग बड़ी फौज, धर्म भूपति की,
भाग छिपी गिरिवन, हुआ मुँह काला है।।
दृष्टि से ही दोष हर दें दुनियाँ के सारे जो,
उनकी भी आँखों में बस धूल झोंक डाला है।
कलियुग का तेज घटा, कहै वह अन्ध 'प्रेम',
कलि का तो चौगुना सौगुना बोल बाला है।।

कलियुग-नहीं सखे! इस ब्राह्मण कुमार ने जन्म लेते ही जगद्‌वासियों के मुँह से कीर्तन कराना प्रारम्भ करा दिया। फिर बड़ा होने पर तो न जाने यह हमारी तुम्हारी क्या मरम्मत कर देगा।

अधर्म-(खिलखिला कर हँसते हुए) हा हा हा! बहम, सरासर बहम, सोलह आना बहम, कि एक बच्चे के जन्म लेने से यह सब हो हल्ला मचा रहे हैं। यह तो बिल्कुल खुद-ब-खुद हो रहा है। एक ताल का फल पककर गिरने ही वाला था कि उस पर आकर एक कौआ बैठ गया। बैठते ही फल गिर गया और देखने वाले यह समझ बैठे कि कौए ने फल गिरा दिया। ठीक ऐसा ही गलत ख्याल आपको भी हो गया है। ग्रहण के समय तो हिन्दू लोग ऐसा ही हो हल्ला मचाते ही हैं। इसमें उस बालक की भला क्या करामात!

श्लोक

महाप्रभावाः सुमहा सहायाः
क्व यूयमुच्चैश्चिर बद्धमूला।
क्वायं कऽम्बो द्विज वंशजात-
स्ततोऽपि भीः कोऽयमहो भ्रमस्ते।।

(चैतन्य चन्द्रोदय नाटक)

और भी सुनिये सरकार! अव्वल और खासुलखास बात तो यह है कि चार लाख बत्तीस हजार साल के वास्ते इस युग का ताज आपके सर पर मुश्तकिल बँध चुका है। दूसरी बात यह है कि पाँच हजार साठ साल में आपकी हुकूमत की जड़ पाताल तक पहुँच गयी है। तीसरी बात है मेरी विश्व विजयी फौज-उसके सेनापति काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसे महारथी। और चौथी बात, गुस्ताखी मुआफ हो सरकार....

कलि०–कहो, कहो! तुम्हारे हजार खून मुआफ हैं।

अधर्म–चौथी बात है आपकी बेगम मिथ्या महारानी का कपट जाल और आपके शाहजादे पाखंड का शाही रौब–दाब! इनसे क्या कोई बेदाग बचकर निकल सकता है। और ब्राह्मण कुमार तो कल का ही बच्चा है–एक ही रोज का। न उसकी कोई जड़ है न शाखा! न दोस्त हैं न मददगार! न फौज है न हथियार। फिर उससे इतनी दहशत क्यों सरकार? लिहाजा इस गलत ख्याल को दिल से निकाल दीजिए और बेखटके हुकूमत करिये।

कलि०–नहीं अधर्म! मेरा ख्याल गलत नहीं तुम्हारा ही ख्याल गलत है। देखो, जो वस्तु स्वयं प्रकाश होती है जैसे सूरज, उसको अपने प्रकाश के लिए देश, काल, पात्र जैसे किसी भी वस्तु की सहायता की जरूरत नहीं होती है।

उद्योतमात्र खलु बाण्लसूर्य, गाढं नमस्काण्ड मपाकरोति।

बाल सूर्य उदय होते ही अमावस की घोर अँधेरी को फौरन अकेला ही तहस–नहस कर देता है। और 'महौषधैरंकुर निर्गमादिव क्षतप्रभस्तक्षक नागपुंगवः' (चै० च० न०) महौषधि, एक छोटी–सी जड़ी होती है लेकिन उसके अंकुर फूटते ही नागराज तक्षक का जहर भी पानी हो जाता है। इसी से मैं कहता हूँ कि इस बालक को तुम एक विप्र बालक ही मत समझो। यह भूदेव ही नहीं देवदेव विश्वंभर भी है और अकेला भी नहीं, अपनी दैवी सेना सहित है 'सांगोपांग सपार्षद' है। इसकी सहायता के लिए संकर्षण बलराम, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, नारद, हनुमान इत्यादि पार्षदों के भी अवतार हो चुके हैं। यही मेरी चिन्ता और त्रास का कारण है।

अधर्म–लेकिन यह ब्राह्मण कुमार भगवान् ही है यह आप ने कैसे जाना? प्रमाण क्या?

कलि०–भगवान् आनन्दमय होने के कारण समस्त स्थावर–जंगम प्राणियों के चित्त को सहज ही में आकर्षित कर लेते हैं। यही सर्वाकर्षकत्व गुण ही भगवान् का असाधारण अनन्य लक्षण है। और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है–आज नवद्वीप में सर्वत्र आनन्दोल्लास एवं हरिनामोच्चारण।

अधर्म–मैं ऐसे नहीं मानूँगा, हथियार हर्गिज नहीं डालूँगा, लडूँगा, आजमाऊँगा, इम्तिहान लूँगा इस बच्चे का और ब्रह्मा, शिव, नारद–फारद इसके मददगारों का! पेल दूँगा अपनी तमाम फौज इनके ऊपर! मेरे विश्व

विजयी काम क्रोध लोभ मोह मद जैसे बहादुरों से बच निकलना देवताओं के भी बल-बूते से बाहर है फिर आदमजाद इन्सान में दम-खम ही कितना! नाकों चने न चबवा दूँ तो नाम अधर्म नहीं।

(नेपथ्य में से 'हरि बोल' की घोर ध्वनि)

अधर्म-(कानों में अँगुली देते हुए) ओफ् सुना नहीं जाता-तीर-सी छाती में आ गड़ती है। भागिए सरकार! कहीं दूर भाग निकलें जहाँ यह हो हल्ला नहीं पहुँच सके।

कलि०-(व्यंग हास्यपूर्वक) भागते क्यों हो? लड़ो और अपने बहादुरों को लड़ाओ। और सुनो अधर्म! भाग कर जाओगे ही कहाँ? यह ह-ह-की आवाज बहुत जल्दी ही उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, दुनियाँ के कोने-कोने में सर्वत्र फैलकर तुम्हारा पीछा करेगी इसका जन्म ही इसीलिए हुआ है। अब नारदजी की वह प्रतिज्ञा पूरी होने का समय आ रहा है जो उन्होंने हजारों वर्ष पहले देवों के सम्मुख की थी।

अधर्म-वह प्रतिज्ञा क्या है सरकार?

कलि०-वह प्रतिज्ञा यह है-सुन लो।

श्लोक

अन्य धर्मान् तिरस्कृत पुरस्कृत्य महोत्सवान्।
तदा नाहं हरेर्दासो लोके त्वां न प्रवर्त्तये।।

(भाग० माहा०)

नारद प्रतिज्ञा करते हैं कि मैं कलियुग में अन्य सब धर्मों को पीछे धकेल कर भक्ति का महोत्सव घर-घर में आरम्भ न कर दूँ तो मैं हरिदास नारद ही नहीं।

(नेपथ्य में से पुनः 'हरि बोल' का घोष)

अधर्म-(कलिराज का हाथ पकड़ खींचते हुए) भागिए सरकार! भागिए। गारद हो इस नारद का! यह आवाज तो इधर ही आ रही है! भागिए! फिलहाल तो जान बचाइये। आगे की बात आगे! अभी तो भागिए (खींचकर ले जाना चाहता है)।

कलि०-(अकड़ कर अड़ता हुआ) मैं क्यूँ भागूँ? यह राज मेरा, ताजो-तख्त मेरा! हमला कोई लाख करे, कब्जा कोई कर नहीं सकता, बेदखल कोई कर नहीं सकता, क्योंकि

गाना–शंकरा–बैण्ड चाल

मैं हूँ कलिराज, मैं हूँ कलिराज,
भागूँ नहीं, हारूँ नहीं, मेरा ही है राज।।1।।
चाँदनी दी चाँद में, सूरज में जिसने आग।
उसने ही सर पै बाँधा मेरे, कलियुग का ताज।।2।।
एक दो से हारूँगा जीतूँगा मैं लाख।
छीन सके कोई नहीं, मेरा तख्तो–ताज।।3।।
दो चार छूट जाते, तो आते हैं रोज लाख।
जेल तो आबाद! मेरा, चमन मेरा शाद।।4।।
नाच गाके 'प्रेम' चले जाते रोज लाख।
नाच मेरा बन्द नहीं, ऐसा मैं कलिराज।।5।।

अधर्म–(खींचते हुए ले जाता है) तो नाचते–नाचते ही चलिए मगर चलिए तो सही।

(ले जाता है)

समाज–धुन

हरि बोल हरि बोल हरि बोल

इति गौर जन्म–बधाई लीला।

❖

आविर्भाव लहरी **सप्तम कणामृत**

श्रीश्रीविष्णुप्रिया जन्म लीला

(माघ शुक्ला 5–बसन्त पंचमी)

मंगलाचरण

श्लोक

श्रीगौराङ्गप्रियां वन्दे गौरवक्षविलासिनीं।
त्रैलोक्य मोहिनीं देवीं नमामि वरवर्णिनीम्।।
महामायासुतां गौरीं नानालङ्कारभूषितां।
तां नमामि महालक्ष्मीं ह्लादिनीं शक्तिरूपिणीम्।।

चिदानन्दमयीं विश्ववन्दितां पतिदेवतां।
जगद्धात्रीं प्रेमदात्रीं नमामि भूस्वरूपिणीम्।।

पद-चौताला

जय जय जय विष्णुप्रिया चिन्मयी प्रेमदात्री।।1।।
गौरप्रिया जीवाश्रया पापी तापी त्रात्री।
वत्सला सर्वमंगला, प्रेममयी मात्री।।2।।
कनकवदना नीलवसना, भूदेवी वरदात्री।
सनातन-महामाया-सुता, गौररति पात्री।।3।।
त्यागदेवी नेहदेवी, करुणामयी धात्री।
चरणकमल शीश धरहु, करहु 'प्रेम' पात्री।।4।।

(प्रवेश नवद्वीप-अधिष्ठात्री-देवी)

देवी भैरवी-दादरा

प्रगट भये गौरचन्द्र (पर) चाँदनी छिटकी नहीं।
शक्तिमान आ गये (पर) शक्ति तो प्रगटी नहीं।।1।।
नाव भी है मल्लाह भी है, और जाने वाले सब खड़े।
देर है तो देर यही कि हाथ में बल्ली नहीं।।2।।
आ गया ऋतुराज भी, पर रानी रति छिप रहीं।
बौर अँबिया भ्रमर आये (पर) कोयलें आयी नहीं।।3।।
कली अधखिली लागे भली (पर) रस सुगंध आयी नहीं।
युगल प्रेम-प्रेमियों को, ऐसी तो भायी नहीं।।4।।
(भगवान् श्रीगौरचन्द्र कूँ प्रगट भये)

बीत गये बरस दस पर, आज आई वो शुभ घड़ी।
प्यास युगलमाधुरी की, अब मिटेगी पूरी सही।।5।।

(प्रवेश वीणा बजाते गाते हुये नारद मुनि)

नारद-तोटक छन्द

वद यादव माधव कृष्ण हरे। वद, राम जनार्दन केशव हे।
वृषभानुसुता प्रियनाथ सदा, भज गोद्रुम कानन कुंज विधुम्।।
चल गौरवनं नवखण्ड मयं, पठ गौर हरेश्चरितानि मुदा।
लुठ गौर पदाङ्कित गाङ्ग-तटं, भज गोद्रुम कानन०।।

जड़ काव्य रसो नहि काव्य रसः, कलिपावन गौर रसो हि सः।
अलमन्य कथाद्यनु शीलन या, भज गोद्रुम कानन०।।

बधाई जगदम्बे नवद्वीपाधिष्ठात्री देवी बधाई है बधाई है।

देवी-किसकी बधाई आज बाँटते फिर रहे हो मुने!

नारद-वाह-वाह-वाह। दीपक तरे अँधेरौ। कहा आपकूँ इतनौ हू ज्ञात नहीं है कि आपही की गोदी में भगवान् गौरचन्द्र की नित्यप्रिया खेलवे कूँ आय रही हैं?

देवी-एक तो खेल ही रही हैं-लक्ष्मीप्रियादेवी। अब यह दूसरी कौन आय रही हैं खेलवे?

नारद-विष्णुप्रियादेवी और कौन? कैसी अनजान-सी बनी छेड़ रही हौ!

देवी-(मुस्कराती हुई) तुम तौ त्रिलोकी के सूचना-सचिव हौ, तुमसों ही पेट की और पते की बात अतीत और अनजान की घटना सुनवे कूँ मिलै है। आज विष्णुप्रिया देवी की ही कथा कछु सुनाय देऔ!

नारद-बड़े आनन्द सों सुनौ। यही तो नारद की सेवा है। वैकुण्ठ में श्रीनारायण की तीन नित्यप्रिया हैं-रमादेवी, भूदेवी और लीलादेवी। इनमें ते रमा अर्थात् लक्ष्मीदेवी कौ अवतार तौ हैं लक्ष्मीप्रियादेवी और भूदेवी कौ अवतार हैं विष्णुप्रिया देवी। इनकी ही प्रधानता गौराङ्ग-अवतार में रहैगी।

देवी-और लक्ष्मीप्रियादेवी कहाँ जायँगी?

नारद-वे तौ विवाह के एक ही वर्ष के भीतर ही वहीं चली जायँगी जहाँ ते आयी हैं-वैकुण्ठ को। कारण कि लक्ष्मी जी हैं ऐश्वर्यमयी और यह गौरांग लीला होयगी त्याग विराग-मयी। अतएव लक्ष्मीजी की ऐश्वर्य विलासमयी सेवा कौ प्रयोजन न हैवे सों वे अन्तर्धान है जायँगी और तब त्याग और तपस्या, स्नेह और करुणा की मूर्त्ति भूदेवी विष्णुप्रिया ही गौर-प्रिया के रूप में जगत् में प्रसिद्ध होयँगी!

देवी-कैसी त्याग-तपस्या मुने? कहा विष्णुप्रिया जी कूँ कष्ट भोगने परैंगे? कहा इनको जीवन दुःखमय होयगौ तुम तो कथा आरम्भ किये बिना ही समाप्त कर रहे हौ?

नारद-जगदम्बे! जीवन-गाथा फिर सुनाय दऊँगो। अबई तौ दर्शन की चटपटी लग रही है।

देवी-(हँस के) तौ कहा गर्भ के ही दर्शन करौगे। अबई प्रगट तौ है जान देऔ। मैं हू तौ दर्शन कूँ चलूँगी। तब ताँई उनकौ गुणगान तुम्हारे मुख सों कितनौ मधुर रहैगौ!

नारद-तौ सुनौ! दस वर्ष की अवस्था में विवाह होयगौ। विष्णुप्रिया-गौर की जोरी जुरैगी। नदियावासिन के नयन-मन-प्राण शीतल होंगे। परन्तु निर्मल हू तौ बनानौ है। याही के ताँई यह गौरावतार है। यदि वे गृहस्थ को सुख ही भोगते रहेंगे तौ कदाचित् लोक मानस की शुद्धि नहीं है सकेगी। अतएव विवाह के केवल तीन महीना बाद सों ही भावी-विच्छेद की भूमिका आरम्भ है जायगी।

देवी-कौन प्रकार सों भलो?

नारद-गया-गमन के रूप सों। गौरचन्द्र पितृ कार्य करवे कूँ गया पधारेंगे। हँसते जायँगे, रोमते आयँगे श्रीकृष्ण के विरह में कृष्ण कूँ टेरते-पुकारते भये आयँगे। अध्ययन-अध्यापन समाप्त है जायगौ। संकीर्तन रास आरम्भ है जायगौ। हरिनाम संकीर्तन सों नदिया गूँज उठैगी। हजारन पापी, पतित पाखंडिन कौ उद्धार है जायगौ। चारों ओर जय जय-कार हैवे लगैगी। परन्तु याही नदिया के कोई एक भवन के कोने में द्वै प्राणिन के हृदय में अहर्निश मूक हाहाकार मच्यौ करैगौ और नेत्रन सों अश्रुधार बह्यौ करैगी!

देवी-वे द्वै प्राणी कौन-कौन?

नारद-माता और पत्नी। शची और विष्णुप्रिया! इन दोउन कूँ ही गौरसुन्दर के कृष्ण-प्रेम-विरह के दर्शन कर कर भय अरु शंका सतायौ करैगी कि कहीं ये हू अपने बड़े भाई की भाँति गृह-त्यागी-वैरागी बन जायँ और अन्त में वही होयगौ!

चार वर्ष तक नाम संकीर्तन के द्वारा नदिया में भक्ति-भागीरथी प्रवाहित करके विश्व कूँ पावन करवे के काजें गौरचन्द्र संन्यासी बन जायँगे और दक्षिण भारत कूँ चले जायँगे। छोड़ जायँगे चौदह वर्ष की बालिका वधू कूँ घर में तपस्या करवे और साठ वर्ष की वृद्ध माता कूँ वा तपस्या कूँ देखवे के लिए!

देवी-तपस्या कैसी?

नारद-विरह योग की तपस्या जो तीव्र सों तीव्रतम हौती जायगी। शयनागार देवमन्दिर बन जायगौ वह सेज जाके ऊपर सोमती छोड़कर वे

विदा है जायँगे, देव–सिंहासन बन जायगौ। वाके ऊपर प्राणाराध्य विराजमान रहेंगे पादुका के रूप में। उन्हीं के सामने वे बैठेंगी, रोयँगी, गायँगी, सोयँगी। द्वै चार वर्ष नहीं साठ–साठ वर्ष तक उनकी यह विरह योग की साधना अखण्ड चलैगी।

देवी–वा साधना को रूप कहा रहैगो।

नारद–सुनो! वे ब्रह्ममुहूर्त्त में गंगा–स्नान कर आयँगी। फिर दिन भर घर के भीतर बन्द। एक वस्त्र–धारण, भूमि–शयन और भोजन आठ पहर में एक ही मुट्ठी भात, न नमक न साग। वह भातहू मंत्र–पूत चामरन कौ।

देवी–मंत्र पूत चामरन सों कहा मतलब? मैं समझी नहीं।

नारद–प्रिय विरहिणी विष्णुप्रिया प्रात: नित्य कर्म करके एक थार में चामर और एक कोरी हंडिया लैकैं बैठ जायँगी। फिर चाँवर को एक दानौ उठायँगी और–

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

यह नाम महामन्त्र एक बेर बोल कैं वा दाने कूँ हँडिया में छोड़ देंगी। फिर दूसरौ दाना उठायँगी और एक बेर फिर महामन्त्र जप करकै हँडिया में डार दैंगी। फिर तीसरौ, चौथौ, पाँचवों दानों। या प्रकार हाथ में चामर, मुख में कृष्ण नाम, मन में प्राणाराध्य प्रियतम कौ ध्यान तथा नयनन की गंगा–यमुना–धारा में स्नान। कभू मन्त्र जपेंगी, कभू भाव में डूब जायँगी। या प्रकार जपती रोमती, डूबती–उछरती प्रात:काल की बैठीं भईं तीसरे पहर तक चामरन के एक एक दाने कूँ कृष्ण नाम सों पवित्र करैंगी।

देवी–कितने चामर पवित्र होते होंगे। मुट्ठी भर?

नारद–मुट्ठी, आध–मुट्ठी जितेक होयँ, उनकी रसोई कर तुलसा छोड़, श्रीकृष्णार्पण कर प्रसाद लेंगी। वह हू सबकौ सब नहीं।

देवी–कहा वाहू में तेहू कछु शेष छोड़ दैंगी?

नारद–हाँ अवश्य। प्रसाद–लोभी भक्तन के ताँई एकाध ग्रास मुख में दैकैं शेष छोड़ दैंगी।

देवी–धन्य है भक्तन के लोभ कूँ और प्रियाजी की करुणा कूँ।

नारद–या प्रकार यह कठोर दिनचर्या, यह भोग–त्याग तपस्या एक द्वै वर्ष तक नहीं, साठ–साठ वर्षन तक अखण्ड चलैगी! अन्त में जब उतमाहुँ

श्रीजगन्नाथपुरी में गौरचन्द्र श्रीजगन्नाथ जी के श्रीविग्रह में लीन है जायँगे तौ यह समाचार पाय के श्रीविष्णुप्रिया जी अपने प्राणनाथ कौ एक दारु–विग्रह स्थापना करैंगी और वामें प्रवेश कर अपने प्राण–प्रियतम सों जाय मिलैंगी। साठ वर्ष में जायकै साधना सिद्ध है जायगी!

देवी–वत्स! यह तौ तुमने अतिशय हृदय विदारक करुण–चरित कथा श्रवण करायी।

नारद–अम्बे! भव–प्रवाह में पतित विमुख जीवन के उद्धार के काज हमारे युगल सरकार कूँ समस्त रसन के चरित प्रगट करनो परैं हैं। साधारण लोक–मानस संयोग रस ते अधिक वियोगरस सों ही विगलित होय है, परिशुद्ध होय है। याही उद्देश्य सों श्रीयुगल सरकार कूँ नित्य संयोग के भीतर ही वियोग की हू प्रतीति करामनी परै है।

कबहू जोग वियोग न जाके।
देखा प्रगट विरह दुख ताके।।

(रा० च० मानस)

श्रीरामावतार में श्रीजानकी–रघुनाथ में, श्रीकृष्णावतार में श्रीराधाकृष्ण में तथा श्रीगौरांगावतार में श्रीविष्णुप्रिया–गौर में या विच्छेद विरह रस की योजना में हेतु ही यही है कि जीव कौ वज्र–हृदय पिघले। वह रोवै और रोय–रोय कै अपने मनके मैल कूँ धोवै। परन्तु वाह! मैं तो जन्म की बधाई गायवे कूँ आयौ हो और माँ! तुमने मेरौ स्वर ही बदल दियौ और रोयवे–धोयवे में लगाय दियौ!

देवी–तौ जन्महू तौ अबै भयो है। वह सुनौ हुलू ध्वनि और हरि ध्वनि! चलौ वत्स चलैं! छद्म वेष बनाय कै चलैं। दर्शन करैंगे। बधाई गायँगे।

नारद–हरि बोल! हरि बोल! परन्तु मा! पहली बधाई तौ आपकूँ ही दऊँगो। हे नवद्वीप देवी! आपकूँ कोटि–कोटि नमस्कार। आपकी जय हो जय हो (नृत्य)।

देवी–(हँसकर) पूरे मतवारे बावरे हौ! मेरी जय जय–कार क्यूँ?

नारद–अद्वितीय सौभाग्य के लिये। यह सौभाग्य वैकुण्ठ कौ नहीं, द्वारिका कौ नहीं, मिथिला–अवध कौ नहीं, व्रज–बरसाने कौ हू नहीं। यह सौभाग्य–सेहरा, हे नवद्वीपदेवी! केवल आपके ही शीष पै बँध्यो है कि यहाँ युगल सरकार पृथक्–पृथक् धाम में नहीं, एक ही धाम में प्रगट भये हैं। अतएव–

गौड़ सारंग-पद

जय जय नवद्वीप धाम बलिहारियाँ।
नवधा भक्ति की नव नव क्यारियाँ।। टेक।।
अवध में राम भये, मिथिला में सीता भईं।
यहाँ तेरी गोदी में तौ दोनों ही अवतारियाँ।।2।।
गोकुल में कान्ह भये, रावल में राधा भईं।
यहाँ तेरी गोदी में तौ दोनों ही अवतारियाँ।।3।।
अवध में राम खेले, मिथिला में सीता खेलीं।
यहाँ तेरी गोदी में तौ दोनों ही विहारियाँ।।4।।
नन्दगाँव कान्ह खेले, बरसाने राधा खेलीं।
यहाँ तेरी गोदी में तौ दोनों ही विहारियाँ।।5।।
यहीं पलना में झूले, यहीं पैयाँ पैयाँ डोले।
यहीं ब्याह सगाई दोनों यहीं ससुरारियाँ।।6।।
नाम नवद्वीप लेवे, नवधा सो भक्ति पावे।
बहे 'प्रेम' भक्ति हिय शत शत धारियाँ।।7।।

श्रीनवद्वीप देवी की जय।
श्रीविष्णुप्रिया देवी की जय।
श्रीगौर विष्णुप्रिया की जय जय जय।।

देवी-अब तौ पेट भर गयौ न? चलौ अब वहीं नाचेंगे-गायँगे।

नारद-परन्तु वेष बदल लैनौ चाहिये। ब्राह्मण-ब्राह्मणी बन चलैं।

(दोनों का प्रस्थान)

समाज-पद

आनन्द आनन्द आज नदिया में माई।
बजत सनातन मिश्र घर सु बधाई।।
मंगल माघ सुदी श्रीपंचमी आई।
प्रात:काल महामाया महामाया जाई।।

झाँकी-(पलना में बालिका विष्णुप्रिया। माता महामाया एवं दो चार स्त्रियाँ)।

झलमलात अंग मानौ कंचन तपाई।
कोमल कनक पूतरी ही प्रगटाई।।
जय जय धुनि दिव्य गगन रही छाई।
गावें अगोचर देवी देवी सुबधाई।।

देव स्तुति

जय जगजननी भवभय हरनी, मनुज रूप सुधारिणी।
विश्व विमोहिनी विश्व वन्दनी, विश्व लीलाविहारिणी।।
जय जय सुकेशा चारुवेशा नीलवस्त्रा सुहासिनी।
कम्बुकण्ठी कुन्ददन्ती शरद चन्द्रनिभाननी।।
जय गौरांगिनी गौर-अर्धांगिनी, गौरलीला सहकारिणी।
विष्णुप्रिया लक्ष्मीप्रिया देवी भू अवतारिणी।।
जय महामाया सुता महामाया, गौरशक्ति स्वरूपिणी।
मिश्र सनातन नन्दिनी अज ब्रह्म सनातन नन्दिनी।।
जय दयामयी जय क्षमामयी त्यागमयी तपस्विनी।
चिद्-आनन्दमयी, गौर-आनन्दमयी 'प्रेम' भक्ति प्रदायिनी।।

(पुष्प वृष्टि सहित जय जयकार)

समाज पूर्व पद

हेरि हेरि शिशु मुख मात न अघाई,
निर्धनी को धन ज्यूँ हृदय लगाई।
चूमें मुख बार बार नेह अधिकाई,
सुनत सनातन मिश्र आये उमगाई।।

(प्रवेश पिता सनातन मिश्र)

रहे सौभर दुआर ठाड़े ठिठकाई,
चितवन चकित थकित हरषाई।

सनातन

मधुर मधुर ज्योति कैसी घर छाई।
सुगन्धहू अद्भुत मह महकाई।।
सौभर नहीं मानो देवालय माई।
महामाया अंक बैठी महामाया आई।।

समाज

देखत देखत मिश्र देखि सके नाई।
अँखियन प्रेम जल छल छलकाई।।
फुरे नहीं मुख वैन, अँखियाँ लुभाई।
रह गये ठाड़े देह सुध विसराई।।
कान कछु धुनि तब दिव्य सुन पाई।
सुनत महिमा 'प्रेम' बाढ्यो अधिकाई।।

(आकाशवाणी)

श्लोक

श्रीसनातन मिश्रोऽयं पुरा सत्राजितो नृपः।
विष्णुप्रिया जगन्माता यत्कन्या भूस्वरूपिणी।।

हे सनातन मिश्रजी! आप श्रीकृष्णावतार काल के सत्राजित राजा हैं और यह कन्या आपकी पुत्री सत्यभामा है। यह भूस्वरूपिणी जगन्माता है। इस अवतार में इनका नाम विष्णुप्रिया होगा। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र आपके इसी नवद्वीप धाम में गौरचन्द्र के रूप से अवतीर्ण हुये हैं। उन्हीं के साथ इनका विवाह होगा। आप प्रयत्न पूर्वक इनका लालन-पालन करें। यह आपको अक्षय कीर्ति तथा परमगति प्रदान करेंगी। इस अपूर्व सौभाग्य के लिये बधाई है, बधाई है।

गजल

सनातन मिश्र जी तुमको बधाई है बधाई है।
महामाया महारानी तुमको बधाई है बधाई है।।1
यह तुमने कन्या जाई है, जगत ने जननी पाई है।
यह माता कन्या, कन्या मा, बधाई है बधाई है।।2
छटा नखचन्द्र की सेवा, न पावें स्वप्न में देवा।
वही प्रिय गोद में तुम्हारी, बधाई है बधाई है।।3
यह पारब्रह्म की ज्योति, यह विष्णु सीप की मोती।
तुम्हारी दोनों मुट्ठी में, बधाई है बधाई है।।4
पतितजन पावनी आईं, यह 'प्रेम' स्वामिनी आईं।
यह गौर चाँदनी आई, बधाई है बधाई है।।5।।

(पुष्प वृष्टि-जय जयकार)

(पर्दा)

समाज चौपाई

मधु मालती महामाया जाई।
महक मनोहर दिशि दिशि छाई।।
भ्रमर भ्रमरी उड़ि उड़ि बहु आवें।
लुब्ध रूप रस मुग्ध गुन गावें।।
बयस दस के बाल निमाई।
नाचें गावें खेलें सदाई।।

(प्रवेश बाल निमाइ बालकों के साथ गाते हुये)

निमाई मिश्र-काफी

जय माधव मदन गोपाल, जय मुरलीधर नन्दलाल।
जय राधाकान्त रसाल, जय मोहन गोपी ग्वाल।।1
नयन विशाला गले बनमाला, चरनन नूपुर बाजै रसाला।
चाल चलै तब लाजै मराला, पीताम्बर तन श्याम तमाला।।2
वनमाला पहिरै पचरंगी, कटि काछनी काछै बहुरंगी।
मुरली बजावै ललित त्रिभंगी,
राधा राधा राधा राधा नाम रसाल।।3
गोकुल में वह पलना झुलैया, नन्दगाँव में गाय चरैया।
वृन्दावन में रास रचैया, गोपीजन वल्लभ मोहनलाल।।4
व्रजमोहन सोहन व्रजचन्दा, व्रजनागर नटखट नंद नन्दा।
व्रज जीवन व्रज आनंदकन्दा, नयनमणि 'प्रेम' कंठ माल।।5

(नेपथ्य में हरि बोल तथा हुलु ध्वनि)

निमाई-(सुनते हुये) अरे यह हरि बोल कहाँ है रह्यौ है।

चौपाई

चलौ चलौ भाई देखें जाई। कहाँ हरि बोल धुनि रही छाई।।
बाजे काहे नगर महँ बाजे। मनहू मेरौ हुलसत आजे।।
(निमाई बालकों के साथ दौड़ निकलते हैं)

समाज

आवत जात मारग नर नारी। भीर सनातन दुआरहिं भारी।।
भीरहिं चीर निमाई निकसे। सौभर द्वार आय अति हुलसे।।

(दृश्य-महामाया माता की गोद में विष्णुप्रिया। दो चार स्त्रियाँ सनातन मिश्र बैठे हैं। निमाई का प्रवेश)।

लखे उझकत शिशु रूप प्रियाहिं। उनहु लखे सन्मुख पियाहिं।।
नयन नयन मिले दोउ पहिचाने। निज धन पाय दोउ हरषाने।।
ये अँखियाँ बोलें अरु डोलें। लेहिं देहिं सब करहिं किलोलें।।
इनकी समझन समझ कहावे। सो समझन की समझ भुलावे।।
नाचत गौर जु प्रेम मतवारा। को जाने रहस रस धारा।।

निमाइ-धुन

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।

समाज

नाचत बालसखा सुखभारी। रंग तरंग उठें सुखकारी।।
महामाया महामायाहिं जाई। विष्णु विष्णुप्रियाहिं पाई।।
नाचत जन जगजननी आई। नाचत धरनी धरित्री पाईं।।

रसिया-सखावृन्द
(बसन्ती गुलाल की होरी)

आनन्द आनन्द छायौ जगत में, जगजननी स्वामिनी आई।
जननी स्वामिनी आईं, विष्णुप्रिया महारानी आईं।।1।।
फूले सरसों फूल बसन्ती, फूले आम बौर बसन्ती।
कोयलिया आलापै बसन्ती, घटा बसन्ती छाई।।2।।
माघ पंचमी सुदी बसन्ती, घर घर चाव भाव बसन्ती।
पूजैं ठाकुर फूल बसन्ती, भोग बसन्ती मिठाई।।3।।
जामा पगिया पटुका बसन्ती, साड़ी ओढ़नी चोली बसन्ती।
बाल युवा नर नारी बसन्ती, गावें बसन्ती बधाई।।4।।
ऋतुराज की रानी बसन्ती, महामाया ने जाई बसन्ती।
'प्रेम' युगल की होरी बसन्ती, विश्व बसन्ती माई।।5।।

आरती-गीत

आई आई बसन्त पंचमी आज नदिया में बहार श्री आई।।1।।

तात सनातन सदन में आई, माता महामाया ने जाई।
विष्णुप्रिया जु कहाई, नदिया में०।।2।।
गौरचन्द्र की चाँदनी आई, भक्त कुमुदनि जन सुखदाई।
चोर कलिकूँ तौ दुखदाई, नदिया में०।।3।।
भूतल पै भूदेवी आईं, तात सहित माता भी आईं।
बहार ये बसन्त वे निमाई, नदिया में०।।4।।
त्याग तपस्या की मूरति आई, गौर 'प्रेम' त्रिवेनी आई।
बार बार नमो नमो पाई, नदिया में०।।5।।

धुन

जय भूदेवी विष्णुप्रिया।
जय गौरांगी गौरप्रिया।।
इति श्रीविष्णुप्रिया जन्म लीला।

❧❖☙

आविर्भाव लहरी **अष्टम कणामृत**

श्रीश्रीनित्यानन्द जन्म-लीला

(माघ शुक्ला त्रयोदशी)

मंगलाचरण-श्लोक

नित्यानन्दमहं वन्दे कर्णे लम्बित मौक्तिकं।
चैतन्याग्रज रूपेण पवित्रीकृतं भूतलम्।।
निरानन्दमिदं सर्वं प्रेमानन्दास्पदीकृतं।
येन तं सततं वन्दे नित्यानन्दं जगद्गुरुम्।।

भीम पलासी-केहरवा

जय जय करुणासिन्धु जय गौरचन्द।
जय जय सेवा विग्रह श्रीनित्यानन्द।।
सर्व अवतारी कृष्ण स्वयं भगवान।
तिनके द्वितीय देह श्रीबलराम।।
वे ही कृष्ण नवद्वीप श्रीचैतन्यचन्द्र।
वे ही बलराम भये श्रीनित्यानन्द।।

चैतन्य के आदिभक्त नित्यानन्दराय।
बसत चैतन्य यश जिह्वा में सदाय।।
इन सम चैतन्य के प्रिय नहिं कोई।
इन तन नित्य विहार करें सोई।।
आदि देव जय जय नित्यानन्द राय।
चैतन्य महिमा फुरे जिनकी कृपाय।।
कृपा सिन्धु भक्तिदाता वैष्णव धाम।
राढ़ देशे अवतरे नित्यानन्द नाम।।

चौपाई

धन्य माघ सुदी तेरस आई। प्रगटे श्रीनित्यानन्द राई।।
नवद्वीप पश्चिम दिसि माँहीं। वीरभूमि इक नगरी आहीं।।
तहाँ ग्राम इकचाका नामा। एक चक्रेश्वर शंकर धामा।।
महिमा पुनीत सुमंगलकारी। जहँ नित्यानन्द राम अवतारी।।

दोहा

वर्ष पाँच सौ पूर्व की, कथा कहौं सुख दान।
'भक्तिरत्नाकर ग्रंथ' सों, अनुसरि बुद्धि प्रमान।।

चौपाई

अति प्राचीन इकचाका गामा। आयो महाभारत में नामा।।
आये पांडव गन इहि ठामा। किये कछुक दिन इहँ विश्रामा।।
बहति इहाँ मोड़ेश्वरी गंगा। वसत चक्रेश्वर शिवजी लिंगा।।
वर्ष पाँच सौ ते अधिकाई। विप्र दम्पति तहँ रहै बसाई।।
सुन्दरामल बाडरी होत्री। राढ़ी श्रेणी शांडिल्य गोत्री।।

दोहा

जाति वंश कुल गुण सबै, एकै दुक्ख महान।
ह्वै ह्वै कै मरि जात सब, बचै नहीं संतान।।

चौपाई

विप्र तिया उर दु:ख जो भारी। विप्र मगन हरि भजन सुखारी।।
एक दिवस कछु सोच बिचारी। कहति नाथ सों निज मनसारी।।

(दृश्य-पं० सुन्दरामल और पत्नी मधुबाला)

मधुवाला-कृपा करौं नाथ! मेरी प्रार्थना पै नेक विचार करौ इतनी उदासीनता कहा गृहस्थ के लिये उचित है?

सुन्दरामल-प्रिये! पुत्र के मुख देखवे कौ सुख हमारे भाग्य में लिख्यौ ही नहीं है। नहीं तौ पाँच-पाँच सन्तानन में ते कहा एकहू हमारी गोद में न खेलतीं?

मधु०-सो तौ ठीक है परन्तु.....

सुन्दरा०-फिर वह किन्तु-परन्तु! जो वस्तु दैवाधीन है वाके लिये प्रयत्न व्यर्थ है।

दोहा

जाति आयु अरु भोग ये, पूर्व कर्म अनुसार।
बनी बनायी बन गयी, बने न दूजी बार।।
कर्म करीमा लिख चुका, अब कछु लिखा न होय।
राइ घटे न तिल बढ़े, मरो फोड़ सिर कोय।।

अतएव सुख-दुःख जैसौ हमारे भाग्य में होय, वाकूँ प्रसन्नतापूर्व भोगवे में ही सुख-शान्ति है।

पद-आसावरी

मन गोविन्द के गुन गाना रे।
नाहक चिन्ता करता डोले, जो दिया सो पाना रे।।1
लिखा ललाट जो मिलेगा वोही, अधिक न मिलेगा दाना रे।
कोटि जतन चाहे करले मूरख, पच पच कर मर जाना रे।।2
हरि के मौज मगन नित रह तू, अपने गीत न गाना रे।
सुख शान्ति रस 'प्रेम' चहै तो, पहन सबूरी बाना रे।।3

अतएव प्रिये! सन्तान के लिये चिन्ता और चेष्टा में अपनी अमूल्य आयु नष्ट न करके परमार्थ-चिन्तन करनौ ही मनुष्य कौ परम कर्तव्य है-तस्यैव हेतोः प्रयतेत् कोविदः न लभ्यते यत्....

मधु०-(बात काटकर) अजी! श्लोकन कूँ तौ आप अपनी कथा के लिये रहन देऔ! यहाँ तौ अपनी घर-गृहस्थी की बात है रही है। कहा भाग्य की दुहाई दैकै हाथ पै हाथ धरकै बैठे रहनौ आप जैसे विद्वान् पंडित कूँ शोभा देय है!

सुन्दरा०-परन्तु प्रिये! कर्म की रेख पै मेख कौन मार सकै है?

मधु०-कर्म ही मार सकै है और कौन? पूर्वके कर्म की पुरानी रेखा कूँ वर्तमान कर्म मिटाय कै वाके ऊपर एक नयी रेखा डार सकै है। यह आपही के मुख सों मैंने सुनी है कि याही देह सों याही जन्म में प्रारब्ध हू उलट्यौ जाय सकै है। कहा यह बात मिथ्या है?

सुन्दरा०-मिथ्या तौ नहीं है परन्तु नरम गुलगुले हू नहीं हैं। लोहे के चना हैं! भगीरथ-प्रयत्न, अत्युत्कट पुरुषार्थ करनौ परै है।

मधु०-तौ गृहस्थ के गुलगुले तौ बहुत खाय लिये। अब या देह कूँ तपस्या में क्यों न गराय दई जाय। कार्य-सिद्धि अथवा देह-नाश!

सुन्दरा०-(हास्य सहित) ओहो! तुम तपस्या करौगी तपस्या! जो ऐसी ही साध है तौ काँच के तांईं नहीं, चिन्तामणि के तांईं करो। पुत्र नहीं परमात्मा के ताईं या देह कूँ तपाओ। सकामता तौ बन्धन है, निष्कामता ही मोक्ष है।

मधु०-सत्य वचन महाराज! परन्तु एक साल के ताईं सकाम भजन ही सही, फिर निष्काम बन जायँगे।

सुन्दरा०-फिर वही धुन! मैं कै बेर समझाय चुक्यो कि सकाम नहीं निष्काम बनौ। निष्काम!

मधु०-(व्यंग) अहा! आप तो पूरे निष्काम हैं! नेकहू रसोई में देर है जाय तो मुख-घड़ियाल पै बारह बजवे लगै हैं! सिर में दर्द है जाय तो सूँघनी चाहियें। काँटौ लग जाय तौ सुई चाहिये। गर्मी बढ़ जाय तो ठंडाई चाहिये और सर्दी बढ़ जाय तौ रजाई चाहिये। या देह के सुख के ताईं तो छोटी-सी-छोटी वस्तुन की कामना करनी परै है और जो पुत्र हमारी आत्मा कौ नरक ते उद्धार करै है वाके तांईं बन जाऔ निष्काम। यह तौ वही बात भई कि 'आप न जाय सासरे देत बहू कौ सीख'।

सुन्दरा०-भले ही हँसी उड़ाऔ कै न मानौ परन्तु मेरी बात है सत्य। शास्त्र कौ निचोड़ है भगवती!

मधु०-तौ देवता! पुत्र ते पितरन कौ उद्धार होय यह कहा शास्त्र की बात नहीं है?

सुन्दरा०-है तो शास्त्र की ही बात परन्तु तत्त्व-बातहू नहीं है। पुत्र जन्म-मरण के चक्र से नांय छुड़ाय सकै है। पुत्र के दिये भये पिण्ड-तर्पण सों तौ पितर केवल भूखे-प्यासे नहीं रह सकैं हैं। पितर चाहे पशु-पक्षी,

कीट-पतंग काहु योनि में क्यूँ न होय वह वा पिण्ड और तर्पण के द्वारा अन्न-जल आनंद सों पामते रहै है। कहा याही कूँ तुम उद्धार कहौ हौ?

मधु०-तौ मथुरा-द्वारिका, काशी-केदार, प्रयाग-गया और वृन्दावन के केशीघाट में पिण्ड भरवे सों पितरन कौ उद्धार होय है-यह बात शास्त्र की झूँठी है?

सुन्दरा-नांय, झूठी तौ नहीं है परन्तु यह पिण्ड दान की महिमा नहीं, तीर्थ धाम की महिमा है, स्थल विशेष कौ माहात्म्य है। यह पुरुष कौ पुरुषार्थ नहीं, तीर्थ की कृपा है। हाँ पुत्र यदि ध्रुव प्रह्लाद जैसौ हरिभक्त निकसे तौ एक पीढ़ी कहा इक्कीस पीढ़ीन तक के पितरन कोनै उद्धार कर देय है।

दोहा

भक्तिमान होय पुत्र तौ, करै पितर उद्धार।
पूत कपूत विमुख तौ, जीवित दैवै मार।।
हरिभक्त गोकर्ण ने, किये जो पितरन पार।
धुन्धकारी कपूत ने, जीवित दीन्हे मार।।
रावण लाख कपूत बल, भयौ न भव के पार।
वैर भाव कियो राम सों, गयौ मुक्ति के द्वार।।

तात्पर्य-पुत्र नहीं तारै है, तारै है भगवान् कौ भक्त, वाकी भक्ति!

मधु०-अच्छौ तौ एक भक्तिमान पुत्र मिल जाय तौ कैसौ रहे?

सुन्दरा०-वाह! अन्धे कूँ और कहा चाहिये-द्वै आँख! परन्तु ऐसौ पुत्र मिलै कैसे?

मधु०-महादेव बाबा की कृपा सों! ये हमारे चक्रेश्वर बाबा कितने प्राचीन और प्रत्यक्ष देवता हैं-यह तौ आप सब जानौ ही हौ। जो इनकी पूजा करैं हैं ये उनकी सब मनोकामना पूरी करैं हैं। कहा ये हमारी कामना पूरी नांय करेंगे?

सुन्दरा०-हाँ-हाँ-करेंगे तौ। परन्तु.... यह तो नांय सकाम ....

मधु०-अजी! आप या 'किन्तु-परन्तु' कूँ कछु दिना के तांईं भूल ही जायँ! यामें संकोच न करें! मनु-शतरूपा ने पुत्र के तांईं तपस्या करके रामजी कूँ गोदी खिलायौ! धरा-द्रोण ने तपस्या करकें कृष्ण कन्हैया कूँ लाड़ लड़ायो। अजी! स्वयं भगवान् द्वारिकानाथ ने महादेव बाबा की तपस्या करकै जाम्बवती पटरानी के तांईं साम्ब पुत्र दिवायौ! ऐसी-ऐसी पचासन कथा पुराण शास्त्रन में हैं। जो आप मोते कहूँ अधिक जानौ हो!

फिर संकोच कैसौ ? बड़ेन के पीछै छोटे चलै ही हैं। और देखौ ! बिना पुत्र के तौ यह घर मसान जैसौ ही है। जो यदि एक पुत्र है जाय और वह हू भक्त पुत्र तौ हमारी श्मशान भूमि में सुरसरी बहवे लगैगी, हमें बुढ़ापे के तांई एक सुदृढ़ लठिया मिल जायगी और स्वर्ग के लिये हू एक नसैनी लग जायगी। क्यों, राजी हौ न ?

सुन्दरा०-मैं हार्‌यौ, तुम जीतीं भगवती ! अब जैसी तुम्हारी इच्छा !

मधु०-तौ देखौ। परसों ही शिव चौदस है। बस वा दिना सों ही अनुष्ठान आरम्भ कर देवैं।

सुन्दरा०-जैसी आज्ञा परमेश्वरी ! परन्तु एक वर्ष तक ! बस !

मधु०-अजी हाँ हाँ हाँ !

(दोनों का प्रस्थान)

समाज दोहा

आशुतोष आराधना, आशु देत फल दान।
अस विचार द्विज दम्पति, करैं नेम व्रत ठान।।

चौपाई

प्रात मौड़ेश्वरी गंगा न्हावैं। चक्रेश्वर अभिषेक करावैं।।
वेलपत्र सहस पुनि आठा। जपि जपि मंत्र चढ़ावैं माथा।।
धूप दीप आरती बहु वारैं। स्तुति बहु करैं रुद्री उचारैं।।
धारि मौन बैठि इक आसन। मंत्र लाख नित करैं पारायन।।
अन्न न जल दिवस मुख दैवैं। संध्या पूजन करि कछु लैवैं।।
पुनि शिव-कथा कहैं सुनैं राति। करैं शिवकीर्तन संग सजाति।।
एक पहर बस निद्रा जावैं। सात पहर व्रत नेम निभावैं।
दिवस मास बीतत नहिं जानैं। चाव भाव दिन दूनौ ठानैं।।
बरस काल बीते इहि भाँति। पुन्य पर्व आयी शिव राती।।

(दृश्य-चक्रेश्वर शिवलिंग। सुन्दरामल-मधुवाला का शिव पूजन। ॐ नमः शिवाय से बिल्वपत्र चढ़ाते)।

दोहा

पूजन करत सुभाव सों, मन में दृढ़ विश्वास।
शंकर आशुतोष हर, पूजिहैं जिय आस।।

चौपाई

करि अभिषेक त्रिपुण्ड जु कीन्हे। धूप दीप नैवेद्य जु दीन्हे।।
आरति करत स्तुति उचारें। हर हर बम् बम् अलख पुकारें।।

आरती

ॐ हर हर हर महादेव।
कैलासे गिरि शिखरे कल्पद्रुम विपिने, शिव कल्पद्रुम०
गुंजत मधुकर पुंजे गुंजत०० कुंज वने गहने।।ॐ।।
कोकिल कूजति खेलत हंसावलि ललिता शिव हंसा०
रचयति कला कलापं, रचयति०० नृत्यति मुदसहिता।।3।।
कर्पूरद्युतिगौरं पंचाननं सहितं, शिव पंचानन०।
त्रिनयन शशिधर मौले, त्रिनयन००विषधर कंठयुतम्।।3।।
रुण्डै रचयति माला पन्नग मुपवीतं, शिव पन्नग०।
वामविभागे गिरिजा वाम०० रूपमति ललितम्।।4।।
सुन्दर सकल शरीरे मनसिजकृतभस्माभरणं शिव मनसिज०
इति वृषभध्वजरूपं, हर शिवशंकररूपं, तापत्रयहरणम्।।
ॐ हर हर हर०।।5।।

नामावली-धुन-शंकरा

महादेव शिव शंकर शम्भो उमाकान्त हरे त्रिपुरारे।
मृत्युञ्जय वृषभध्वज शूलिन् गंगाधर मृड़ मदनारे।।1
हर शिवशंकर गौरीशं, वन्दे गंगाधरमीशं।
रुद्रं पशुपतिमीशानं, कलये काशीपुर नाथम्।।2
जय शम्भो जय शम्भो शिव गौरी शंकर जय शम्भो।
जय शम्भो जय शम्भो शिव गौरी शंकर जय शम्भो।।3

(महादेव-पार्वती का प्रकट होना)

महादेव-वरं ब्रूहि! वरं ब्रूहि!

सुन्दरा०-दोहा

जानत हौ जिय की सबै, जान शिरोमणि ईश।
भक्त पुत्र उर कामना, करौ पूरन वरदेश।।

महादेव-एवमस्तु।

पद

सुनरी विप्र तुम बड़भागी हौ, श्रीहरि के अनुरागी हौ।
पुत्रकामना करो जो तुमने, हरि इच्छामति पागी हौ।।1
वसुदेव अंश सों पुत्ररत्न इक, महापुरुष तुम पाऔगे।
नाम हाड़ाइ पंडित मंडित-गुण कृतार्थ कहाऔगे।।2
पद्मावती सुभार्या उनकी, देवी रूप कहावैगी।
पुत्र स्वयं बलराम शेष वह, भाग्यवती प्रगटावैगी।।3
नाम कुबेर बालापन में नित्या-नन्द जग में कहावैगो।
हरि को सहज नित्य आनन्द ही, मूर्त्तिमान ह्वै आवैगो।।4
(आजसों) वर्ष पचास अनन्तर श्रीहरि, गौररूप प्रगटामिंगे
भक्ति प्रचारि गौरनिताई, संकीर्तन पिता कहामिंगे।।
अधम पतित दीन दुखी प्रति, अधिक दया दिखलामिंगे।
हुलसि हुलसि हिय लाय लाय, हरिनाम 'प्रेम' लुटामिंगे।।

(सुन्दरा० मधु० प्रणाम करते हैं। महादेव-पार्वती अन्तर्द्धान हो जाते हैं। पटाक्षेप)

समाज दोहा

वृद्ध ज्योतिषी विप्र इक, बसत इकचाका ग्राम।
बोलि ग्रामवासिन कछु, कहत जु आगल ज्ञान।।

(दृश्य-एक वृद्ध ज्योतिषी भट्टाचार्य बैठे हैं। चार-पाँच ग्रामवासी-एक विदूषक, आकर प्रणाम करते हैं और बैठ जाते हैं)।

ग्राम० 1-भट्टाचार्य मोशाय! आपने बड़ी कृपा करी जो हमकूँ स्मरण कियौ। हमारे योग्य आज्ञा होवै।

भट्टा०-प्रिय बन्धुओ! मैंने आज एक रहस्य सम्वाद सुनायवे के तांईं तुम सबन कूँ बुलाय भेज्यौ है। यह तो तुम सब जानौ ही हौ कि यह हमारौ इकचाका गाम कितनौ प्राचीन है!

ग्राम० 2-हाँ महाराज! कहैं हैं कि पाँच हजार वर्ष पहले पांडव भ्राता एवं कुन्ती माता ने बनवास काल में यहाँ हू आयकै कछु दिना निवास कियौ हो।

ग्राम० 1-यह हू कहैं हैं कि तब भीमसेन ने याही ठौर पै बकासुर राक्षस कौ बध कर्‍यौ हो जो नित प्रति या गाँव ते एक गाड़ी भोजन और एक मनुष्य कूँ अपने आहार के ताँईं लियौ करतौ। ऐसी कछु कथा कहैं हैं।

विदूषक-और हमारे गाँव के देवता एक चक्रेश्वर महादेव की पिण्डी हू कहैं हैं, पांडवन की पधराई भई है! क्यों महाराज! साँची है?

भट्टा०-हाँ भाई! साँची है! ऐसौ प्राचीन है यह हमारौ गाँव। पाँच हजार वर्ष ते हू अधिक प्राचीन।

ग्राम 1-और महाराज! यह हमारौ गाँव नगर ते कम नहीं है। एक चक्रेश्वर बाबा की कृपा सों धन और धर्म, विद्या और भक्ति सब प्रकार सों सम्पन्न है।

भट्टा०-और अब कछु काल में एक अपूर्व सौभाग्य सौ हू यह प्रसिद्ध है जायगौ।

ग्राम 2-(उत्सुकता पूर्वक) कैसौ सौभाग्य महाराज?

भट्टा०-भैयाऔ! मेरी तो आयु अब ढल चुकी है। न जाने मैं वा सुख-सौभाग्य के दर्शन कर सकूँगो कै नहीं। यासों उनकी कछु महिमा गाय कै कृतार्थ होंनौ चाहूँ हूँ।

विदूषक-तौ उगल देऔ न। बहुत देर है गई चबामते-चबामते।

भट्टा०-तो सुनौ। हमारे या गाँव में श्रीबलरामजी कौ अवतार होयगौ।

विदूषक-(साश्चर्य) कहा कही, बलराम? लछिमन जी? यहाँ अवतार लेंगे?

भट्टा-हाँ हाँ! वे ही! परन्तु यहाँ उनकौ नाम होयगौ नित्यानन्द, निताई दयाल!

सब-जय निताई दयाल! जय दाऊदयाल!

ग्राम 1-कब प्रगट होंगे महाराज?

भट्टा०-यही पचास साल के अन्दर-अन्दर।

ग्राम 2-किनके यहाँ होंगे? ऐसे सौभाग्यशाली माता-पिता कौन हैं?

भट्टा०-यह बात बतायवे योग्य नहीं है परन्तु होंगे विप्र कुल में।

विदूषक-हाथी बेच कै अंकुश कौ लोभ कर गये, पण्डित जी!

भट्टा०-अब मैं बलरामजी की कछु तत्त्व-वार्ता सुनाऊँ हूँ। मेरी जिह्वा पवित्र है जायगी, तिहारे कर्ण पवित्र है जायँगे।

विदूषक-तत्त्व-फत्त्व के पत्थर मत मारौ महाराज! हम कूँ तौ लीला-रस पिवाऔ! रस!!

भट्टा०-रस पीवै के तांईं हू पात्र चाहिये पात्र! पात्र बिना रस ठहरैगो नहीं-बह जायगौ। तत्त्व सिद्धान्त ही पात्र है। लीला महल है तो तत्त्वसिद्धान्त आधारशिला है-आधार के बिना महल बनैगो ही कैसे? लीला मनोहर दृश्य है तौ तत्त्व सुदृष्टि है। लीला 'यदि मधुर रस है तौ तत्त्व राम-रस है। अतएव तत्त्वज्ञान परमावश्यक है।

ग्राम 2-महाराज! बकन देऔ या मसखरे कूँ! हम सुनेंगे जो कछु आप सुनायँगे।

भट्टा०-सुनौ! तुम्हारे बलदाऊ भैया को तत्त्व जानौगे कि वे कौन हैं तो तुम्हारी श्रद्धाभक्ति सुदृढ़ है जायगी।

(बंगला पयारों का अनुवाद)

सर्व अवतारी कृष्ण स्वयं भगवान।
उनकी दूजी देह जानौ श्रीबलराम।।
एक ही स्वरूप हैं दो भिन्न मात्र काय।
आद्य कायव्यूह, कृष्ण लीलाके सहाय।।

(चै० चरिता०)

पद

सब अवतारन के अवतारी, कृष्ण स्वयं भगवान कहावैं।
वे नटवर हैं लीलाविहारी, लीला हित नित सृष्टि रचावौं।।
द्वै प्रकार की सृष्टि जानौ, प्राकृत और अप्राकृत भाई।
धाम वैकुंठ अप्राकृत सबही, विश्व ब्रह्माण्ड प्राकृत गाई।।
इन द्वै प्रकार की सृष्टिन के तांईं

तुक

सृष्टि लीला काज चलावन, एक ते रूप अनेक बनावैं।
तिनके नाम 'विलास' रूप हैं, स्वयं रूप श्रीकृष्ण कहावैं।।

उन विलास रूपन में क्रम ते

तुक

सर्वश्रेष्ठ बलराम पुनि, नारायण वासुदेव ही जानौ।
संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, शेष आदि विलास ही मानौ।।

इनमें श्रीबलराम जी के पाँच रूप और हैं।

तुक

एक आप पुनि पाँच मूरति श्रीबलराम प्रगटाई हैं।
ये छः सृष्टि लीला नित्य, कृष्ण हेत चलाई हैं।।

श्रीबलराम सहित ये छः विलास रूप ही समस्त प्राकृत एवं अप्राकृत सृष्टि कूँ प्रगट करैं हैं। इनके नाम सुनौ-

तुक

संकर्षण अरु कारणार्णव शायी गर्भोदकशायी हैं।
क्षीरोदकशायी, शेष पाँचवी अंशकला उपजायी हैं।।

विदूषक-पण्डितजी! ये तो बड़े-टेढ़े-मेढ़े नाम हैं। इनकूँ नेक तोर-फोर कै बताय देऔ ये कौन हैं और कहा करैं हैं।

भट्टा०-सुनौ इनके विशेष-विशेष सेवा कार्य-

तुक

स्वयं बलराम कृष्ण निकट नित, द्वारिका व्रज में वास करैं।
अंश कला सों सृष्टि चलावैं, आप कृष्ण की सेवा करैं।।

श्रीबलराम जी मूल संकर्षण हैं। इनकौ एक अंश कौ नाम हू संकर्षण ही है जो बैकुण्ठ में वासुदेव भगवान् के साथ रहैं हैं।

तुक

चतुर्व्यूह वैकुंठ मघि इन, अंश, संकर्षण बास करैं।
धाम वैकुंठ अप्राकृत जेते, संकर्षण ही प्रकाश करैं।।

ये अंश संकर्षण ही गोलोक, द्वारिका, वैकुंठ आदि भगवद् धामन कूँ प्रकट करैं हैं तथा ये ही अपने एक अंश सों अनन्त प्राकृत ब्रह्माण्डन कूँ प्रकाश करैं हैं। ये अंश है-

तुक

अंश हैं कारणार्णवशायी, प्रथम पुरुष अवतारा।
जिनसों उपजत लीन हो जिनमें, कोटि ब्रह्मांड संसारा।।

विदूषक-ये कारण-कारण-शायी कौन हैं महाराज?

भट्टा०-कारण कारणशायी नहीं, कारणार्णव शायी। अर्थात् कारण रूपी अर्णव माने सागर में शयन करवे बारे। प्राकृत ब्रह्माण्ड एवं अप्राकृत वैकुण्ठ धाम के मध्य में एक चिन्मय ज्योतिर्मय जल कौ सागर है वाही कौ

नाम कारणार्णव है। यामें श्रीबलराम के अंश जो संकर्षण हैं उनके हू अंश महाविष्णु शयन करैं हें। उन्हीं कौ नाम है कारणार्णशायी। इनकूँ ही श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध तृतीय अध्याय में प्रथम पुरुषावतार कह्यौ है। इनसों ही अनन्त ब्रह्माण्डन की उत्पत्ति होय है और महाप्रलय में इनही में लीन है जाय है। ये महाविष्णु अनन्त ब्रह्माण्डन की सृष्टि करकै फिर कहा करै हैं कि-

तुक

एक एक ब्रह्माण्ड गर्भ विच, अंश अंश सों करैं प्रवेशा।
नाम गर्भोदकशायी धरावैं, द्वितीय पुरुष अवतार सुरेशा।।

विदूषक-कहा नाम बतायो गर्दभशायी?

भट्टा०-गर्दभ नहीं गर्भोदकशायी। गर्भ माने भीतर, उदक माने जल। वामें शयन करवे वारे गर्भोदकशायी। इनसों ही प्रत्येक ब्रह्माण्ड के ब्रह्मा, विष्णु, महेश उत्पन्न होय हैं। ये गर्भोदकशायी भगवान् श्रीबलराम के अंश के अंश के अंश हैं। यह द्वितीय पुरुषावतार कहावैं हैं। अब आगे-

तुक

द्वितीय पुरुष के नाभिमाल सों, नाल एक परकासा है।
चौदह लोक बसैं ता नाल में, वहीं ब्रह्मा का वासा है।।

इन चौदह लोकन में जो भूलोक है-

तुक

तिनमें जो भूलोक, तहाँ है सागर क्षीर नाम जग जानें।
तहाँ क्षीरोदकशायी विष्णु, तृतीय पुरुष अवतार कहावें।।

हमारे या ब्रह्माण्ड में धर्म-रक्षा तथा अधर्म-नाश के तांईं अवतार प्राय: करकै याही क्षीरोदकशायी विष्णु के ही होय हैं। ये विष्णु श्रीबलराम जी के अंश के अंश के अंश के अंश हैं अर्थात् चार पीढ़ी नीचे हैं तथा पाँचवी पीढ़ी में हैं अनन्त अर्थात् शेष देव जिनके शीश पै यह पृथ्वी स्थित है।

तुक

क्षीरोदकशायी विष्णु के अवतार, आदेश अनन्त कहावैं।
धरा धरैं निज शीश फना पै, कृष्णनाम गुण नित गावैं।।

ये अनन्त देवहू अनेक प्रकार सों श्रीकृष्ण की सेवा कर्‍यौ करैं हैं। यथा-

तुक

तकिया सेज छत्र पादुका, वसन भुवन भूषन सिंहासन।
सेवा शेष कोई न छोड़ी, शेष नाम पायौ तेहि कारन।।
(या प्रकार श्रीबलराम एक ओर तौ)
आप स्वयं श्रीकृष्ण समीप, बसत करत सेवा सुखकारी।
(तथा दूसरी ओर आप)
अपने अंशकला पंचक सों, सृष्टि लीला जग विस्तारी।

या प्रकार सों श्रीबलराम श्रीकृष्ण-सेवा की मूर्ति हैं। अतएव-

तुक

जहाँ कृष्ण अवतार तहाँ ही, सेवाहित बलराम हू जावैं।
कृष्ण गौर अवतार धरैं तब, नित्यानन्द बलराम कहावैं।।

अब उनकौ ही जन्म होयगौ हमारे या इकचाका गाम में। अतएव-

तुक

भाग हमारे गाम के जागे, जो श्रीनित्यानन्द बलरामा।
खेलेंगे डोलेंगे घर घर, गायँगे 'प्रेम' हरि हरि नामा।।

श्लोक

संकर्षण कारणतोयशायी,
गर्भोकदशायी च पयोब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांश कला स नित्या,
नन्दाख्य रामः रणां शममास्तु।।
जय नित्यानन्द बलराम की जय।

बालक वृन्द-(प्रवेश गाते हुए)

भीमपलास-केहरवा

जय जय नित्यानन्द परमानन्द।
गौर प्रेम मतवारा परम स्वच्छन्द।।
कृष्ण संग बलराम राम संग लखन।
गौर संग निताईं त्यूँ, एक प्रान द्वै तन।।

(श्रीगौरांग के लिये निताई कहा-कहा हैं कि)

भाई सखा भृत्य आज्ञाकारी दास।
नातो बहु सेवा बहु करैं निताइ खास।।

(श्रीनित्यानन्द कौ स्वभाव कैसौ है कि)

दु:ख क्रोध चिन्ता कहूँ छाया लेश नांई।
नाम नित्यानन्द गुन आनन्द सदाई।।

(उनको हृदय कैसौ है कि)

क्षमा दया उदारता अद्‌भुत पाई।
हत्यारे दुष्टन कूँ हू गरे लावैं धाई।।
घर घर जाय जाय सोतेन जगावैं।
बिनती करि पायँ परि हरि बुलवावैं।।

(उनकी पुकार जीवन के तांई कहा है कि)

सुनौ सुनौ पापी तापी दीन दुखी भाई।
तिहारे हित कृष्ण हरि गौर भये आई।।
एक बार प्रान भरि कहौ गौर गौर।
लऊँगौ मैं पाप सब दऊँगो प्रेम ठौर।।
गौर प्रभु ढिंग जाय विनती सुनावैं।
उद्धार कराय तब ही चैन पावैं।।

(वे गौर-प्रेम में कितने उन्मत्त है कि)

गौर-प्रेम-मदिरा में दिवानिशि भोर।
हाट बाट घाट में करैं ऊधम जोर।।
अवधूत वेष कभू दिगम्बर डोलें।
नाचैं गावैं हँसैं जल माँझ किलोलैं।।

(एक दिन तौ वे अवधूत दिगम्बर रूप में)

बैठे गौर विष्णुप्रिया पहुँचे निताई।
निरखि युगल छवि सुध विसराई।।

(वे देह-बोध सों इतने ऊपर हैं कि 32 वर्ष की अवस्था में)

बैठें गोद मालिनी की स्तन करैं पान।
मानों चार बरस के अवधूत चाँद।।
गौर प्रभु हू तिनकूँ देयँ बहु मान।
बड़ौ भाई सम मानैं दैं प्रथम स्थान।।
बहुत स्तुति करैं, महिमा बतावैं।
बिक्यौ मैं निताई हाथ निज मुख गावै।।

(गौर महाप्रभु कहैं हैं कि)

मेरी देहसों बड़ी है देह श्रीनिताई।
मेरी पूजा सों बड़ी है पूजा निताई।।
निताई सों बैर करै मेरौ गुन गावै।
बड़ौ अपराधी मेरौ घोर दण्ड पावै।।
जय जय नित्यानन्द प्रेमदाता गाऔ।
निताइ गौर कृपा सों कृष्ण प्रेम पाऔ।।

धुन-हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

श्रीनित्यानन्द-जन्म

समाज-पद

आज दिवस घड़ी अति सुखदाई।
कृष्णप्रेम मदिरा मतवारा, प्रगटे राम नित्यानन्द भाई।।
माघ सुदी तेरस मध्याह्न, चन्द्रवार शुभ योग सबाई।
नरनारी पूजत राढ़ेश्वर, हर शिवशंकर राम गुनगाई।।

(दृश्य-श्रीनित्यानन्द। ऐश्वर्य स्वरूप की झाँकी-मल्लवेश। दण्डधर)।

स्तुति-आरती

जय संकर्षण मायाकर्षण, बीजपुरुष अवतारी जय।
जय श्रीहलधर शुक्लवर्णधर, कृष्णप्रेम आधारी जय।।
जय श्रीअनन्त नाम गावन्त, वदन हजार हजारी जय।
जय श्रीशेष सेवा अशेष, विशेष रूप धारी जय।।

जय श्रीकृष्ण विलास स्वरूप,धाम वैष्णव धारी जय।
जय अक्रोध परमानन्द, नित्यानन्द अवतारी जय।।
जय शुक्ल पट्ट नील रु पीत, मल्लवेश मनोहारी जय।
जय स्वर्ण अंगद वलय रंगद, मुद्रिका दस धारी जय।।
जय कर्णकुंडल रतन झलमल, गण्ड उज्ज्वलकारी जय।
जय अंग चन्दन नूपुर चरनन, गुंजन मधुरकारी जय।।
जय स्वर्णबद्ध लौह दण्ड प्रचण्ड मूसलधारी जय।
जयकोटि करि हुँकार करि, गतिमत्त केसरीहारी जय।।
जय लोल लोचन अरुण मोचन, प्रेमाश्रुवारी जय।
जय मत्तशील रंग लील दुरूह कौतुककारी जय।।
जय दरस-परस-स्वरस-कर, हरि प्रेमपद दातारी जय।
जय निताई गौर निताई, निताई गौर निताई जय।।
जय राम कृष्ण कृष्ण राम, राम कृष्ण राम जय।।

(अन्तर्धान। शिशु निताई स्वरूप की झाँकी)

पूर्व पद

हुलु धुनि उठत हाड़ाई पंडित घर,
विप्र वधु कुल जुरि मिलि आईं।
अद्भुत शिशु पद्मावती जायौ,
निरखि असीसत दूब धराई।।
हरिबोल हरि गायौ द्वार भिखारी,
सुनत ही शिशु तन दशा पलटाई।
अंग पुलक जलधारा लोचन,
उछरि के अंक ते धरन लुठाई।।
अचरज सब नारीगन मानति,
महापुरुष कोई आयौ माई।
हरि बोल कहैं लोचन बहैं जल,
आनन्द प्रेम रह्यौ घर छाई।।
धरनि लुठत लखि जननी व्याकुल,
पकरि राखि सकै ना माई।
मात व्यथा उर जानि दयाला,
ह्वै अचेत रहै भूमि निताई।।

मात उठाय गोद भरि लीन्हे,
पयहिं प्यावत मोद बढ़ाई।
हरषि असीसति विप्र नारी बहु,
वारत चित वित 'प्रेम' बलिजाई।।

नारीवृन्द-आशीष-पद-भैरवी-केहरवा

चिरजीवौ लाल हजारा, हम तन मन प्रानन वारा।।
यह दिन दिन बाढ़ौ दूनौ, लखि चन्द्रकला हू ऊनौ।
रहे पूनौ नित उजियारा, हम तन मन०।।1
ठुमठुम घर अंगना डोलै, मामा ताता कह मधु घोलै।
जब हँसै फूल झरैं तारा, हम तन मन०।।2
यह कीरति मति गति पावै, तिहुँ लोक में सुयश कमावै।
याके स्वर्ग में बजें नगाड़ा, हम तन०।।3
यह बेलि-वंश बहु फूले, यह नित नयौ आनन्द झूले।
बहै नित्य 'प्रेम' रस-धारा, हम तन०।।4

इति नित्यानन्द जन्म लीला

❖

अथ बाललहरी **प्रथम कणामृत**

गौर-चरण-चिन्ह-दर्शन

(चतुर्थ मास की लीला)

समाज-श्लोक

वन्दे चैतन्य कृष्णस्य बाललीला मनोहरं।
लौकिकमपि तामीश चेष्टया वलितान्तराम्।।

सोरठा

बाहर लोक समान, अन्तर अलौकिक ईशता।
नर लीला परमान, बालचरित वन्दन करौं।।

दोहा

प्रथम पाँच बरस जे, कौतुक कीन्हे गौर।
तिनमें कछु वर्णन करौं, नहीं सबनकूँ ठौर।।

चरित सबै मिश्री मधुर, तज्यौ न एकहू जाय।
तऊ तजौं संकोचवश, चादर लघु न समाय।।

(दृश्य-सुन्दर पलना में बाल निमाई। शची माता तथा दो-चार स्त्रियाँ बैठी हैं)।

पद

झूलत पलना गौरहरी।
मात शची देत हैं झोटा, निरखत रूप आनन्द भरी।।
मन्द हसन लखि होत मुदित मन, रहीं छवि पै छकीं खरी।
छगन मगन की लेत बलैया, तन मन की सुधि विसरी।।
सरस माधुरी लाड़ लड़ावत, बलि बलि जावत घरी घरी।

शची-पद

(मेरे) निरखि न नैन अघाय, निमाई।
जो हेरे सो आवै फिरि फिरि, आवै तौ सहज न जाय।
निशदिन पलपल जोऊँ तौहु, जिय अधिक ललचाय।।
ममता मोह छिन छिन अति बाढ़ै, विह्वल मति भरमाय।

अन्य स्त्रियाँ

हमरौ हू मन मोह लियौ यह, नारी कहैं मुसिक्याय।।
परत न चैन भवन में चित कहँ, रैन विहान न जाय।
भोर होत प्रथम मुख देखन, आवैं दौरि इहँ माय।।
धन्य पुन्य शची मात तिहारे, हिय नित राखौ लाय।
इतनी 'प्रेम' विनय सुनौ जननी, नित मुख देखें आय।।

बस हमारी तुमसों यही विनती है शची माँ कि तुम्हारे या मनमोहन गौरसुन्दर कौ मुखचन्द्र हमकूँ नित्य याही प्रकार देखवे कूँ मिलतौ रहै।

शची-हाँ हाँ बहनाऔ! खूब आऔ, देखौ, खिलाऔ, बुलवाऔ! आशीर्वाद देऔ कि यह जोरी मेरी आँखिन के आगे खेलती रहैं।

स्त्रियाँ-पद-भैरवी-दादरा

(चिर) जीवौ शची तेरौ लाल, निमाइलाल अति रसाल।।1
अंग झगुली पीत पटकी, गौर अंग शोभा छिटकी।

निरखत जु नैन ठिठकी, अटकी रहीं, भटकी रहीं।
लटकी रहीं अलक जाल।।1
कुन्द दशन, किलक हसन, कुंडल हलन लट लटकन।
कजरे नैन तुतरे बैन, रोम रोम छवि विशाल।
कान्ति जाल, रूप माल।।2
युग युग तेरौ जीवै लाल, पुनि पुनि हम असीसें बाल।
गावैं आनन्द 'प्रेम' ख्याल, जय गोपाल गौर गोपाल।।
निमाईलाल मोहनलाल।।3

समाज-चौपाई

नारिन विदा शची तब कीनी। जात असीस बहुत उन दीनी।।
नींद जानि लालन पौढ़ाई। गृह कारज मन दीने माई।।

(शची माता गौर को पलना पर से उठा पलंग पर सुला देती हैं। आप भीतर चली जाती हैं)।

बाल गौर तबही उठि बैठे। उलटि चले पाँयन घर बैठे।।

(गौर चलकर घर की वस्तुओं को बिखेर देते)

वस्तु हाथ जो जो जहँ आई। दीनी सो सो सब फैलाई।।
करि अकाज पुनि पौढ़े जाई। को समुझै हरि कौतुक माई।।
शची आय गृह दशा निहारी। अति विस्मय शंका भय भारी।।

(शची का आना। घर की हालत देखना)

शची

चार मास कौ बाल निमाई। चलत न घुटरुन अजहू माई।।
तापै सोवत पलना माहीं। कियौ कौन ऊधम घर माँहीं।।
पुनि इक अचरज दूजौ माई। मधुर सुवास रह्यौ घर छाई।।
चन्दन चम्पा तुलसी केसर। कमलन परिमल अद्‌भुत मनहर।।

समाज

चकित थकित मति रही जु माई।
तेहि अवसर रहै मिश्रजु आई।।

(जगन्नाथ मिश्र का प्रवेश)

पाय महकवे हू पुलकाने। बूझत शची सों अचरज माने।
कछु न समझि रहै दोऊ हारी। तब इक अचरज बात निहारी।।

(भूमि पर छोटे-छोटे चरणों के चिह्न)

लघु लघु चरन चिन्ह धरनी पर।
झलकत जहँ जहँ अद्‌भुत सुन्दर।।

जगन्नाथ-(चरण चिन्हों को देख) हैं! ये कहा? छोटे छोटे चरण-चिन्ह भूमि पै कौन-के हैं? कैसे सुन्दर जगमगाय रहे हैं। इनमें तो-

दोहा

कुलिश ध्वजांकुश कमल, नारायन पद अंक।
जगमगात प्रत्यच्छ ही, लखि जिय उपजत शंक।।

शची-ये चिन्ह हैं तो बालक के छोटे-छोटे पाँवन के ही, परन्तु लक्षण तौ सब नारायण के चरण कमल के जैसे ही हैं। ऐसौ बालक यह कौन घर में आयौ? निमाइ तो अब ही चार महीना कौ है। वह तौ अबही बैठ हू नहीं सकै है! तौ यह कहा चमत्कार है? कहा प्रभु की लीला है।

जगन्नाथ-चौपाई

मिश्र कहत हमरौ कुल देवा। सालिग्राम नारायण खेवा।।
बाल गोपाल रूप प्रगटायौ। पद रज सों गेह धन्य बनायौ।
बड़े भाग्य दरसन पद पाये। पुनि पुनि रज लै शीश चढ़ाये।।

समाज

मात पिता इत रहै विरमाई। पलका सोवत बाल निमाई।
देवी देव निकट नभ ठाड़े। गावैं स्तुति अचरज बाढ़े।।

(दृश्य-पलका के अगल बगल में देवता)

देव-स्तुति-शंकरा-बैण्ड चाल

जय निमाई लाल, जय शची दुलाल।
व्रज के गोपाल, जय जय नन्दलाल।।
कनक, वरन, नयन रमन, भुवन तारन, नाम करन।
धरनि भरन, आरति हरन, श्रीउर रमन, चरन शरन।।
परम कृपाल दीन दयाल, जय निमाई०।।

जगन्नाथ-(चौंककर) देखौ शची! वह देखौ! पलका के चारों ओर यह कैसौ प्रकाश? यह गीत? यह जय जयकार? (दौड़कर पलका के पास जाते हैं। देवी-देवता अन्तर्धान हो जाते हैं) अरे! यहाँ तौ कोई नहीं! न

वह प्रकाश है, न वे मूर्त्तियाँ हैं! यह कहा मेरी आँखन कौ भ्रम है! शची! तुमने हू कछु देख्यौ-सुन्यो कै नहीं।

शची-क्यों नहीं नाथ? यह मेरे तांई कोई नई बात थोरेई है। गर्भकाल सों ही मैं कबहुँ स्वप्न में तौ कबहुँ जागृत में कोई न कोई दैवी लीला देखती आय रही हूँ।

कवित्त

आवैं धुनि गीत कभू, अद्‌भुत सुगन्ध आवै,
मूरति हू आवैं कभू, ज्योति गेह डोलैं हैं।
लपट कभू ज्योति की, उठत बाल हृदय सों,
बादर में बीजुरी ज्यौं, करत किलोलैं हैं।।
देखूँ कभी देवी देव, रिषी मुनि स्वप्न मांझ,
छाय जाय घर नाचैं, गावैं हरि बोलैं हैं।
नरसिंह मुरारि दई, देव टेर टेर हारी,
दया हैकै माया 'प्रेम', कैसे करूँ तोलै है।।

नाथ! पिताजी सों एक बार और जाय कै पूछौ न। और आज की घटना-ये चरणचिन्ह! यह कहा माया है? यह कब तक चलैगी कभू शान्त हू होयगी कै नहीं?

जग०-देवि! माया-छाया तो या बालक कूँ कभू कोई स्पर्श हू नहीं कर सकै है। यह नृसिंह कवच सों सदा सुरक्षित रहै है! हाँ! आज कोई दानव अवश्य आयो है किन्तु रक्षाकवच के कारण बालक सों हारकै अपनौ सब क्रोध घर की चीज-वस्तुन के ऊपर ही उतार गयौ है। और रहै ये चरण-चिन्ह। ये तौ निश्चय ही हमारे बाल-गोपाल प्रभु के हैं। वे ही सालिग्राम शिला में सों प्रगट हैकै घर में डोलै हैं! अहा! धन्य भाग हमारे जो हमकूँ उनके दुर्लभ चरण-चिन्हन के दर्शन भये हैं। अतएव तुम कोई भय-आशंका मत करौ। तुम्हें कछु शंकाइ होय तौ कल बालक कौ नामकरण उत्सव है। तुम्हारे पिताजी आयँगे। उनसों पूछ लीजौ।

(प्रस्थान)

समाज चौपाई

बहुविधि प्रभु ऐश्वर्य लखावैं। तात मात मन भ्रम उपजावैं।
वत्सल भाव जहाँ लहरावै। ईश्वरताई तहाँ बहि जावै।।
बालक गोद मात बैठारे। रक्षा नाम-मन्त्र उच्चारे।।

(निमाई को गोद में लेकर)

शची-पद

रक्ष मधुकैटभारे! गोविन्द मुरारे!
शीश राखैं सुदर्शन, नैन नासा नारायन।
मुख मुकन्द मुरारे, रक्ष०।।1
वक्ष राखैं गदाधर, बाहु राखैं रघुवर।
उदर दामोदर मुरारे, रक्ष०।।2
नाभि राखैं नरसिंह, जानु राखैं त्रिविक्रम,
चरण धराधर मुरारे, रक्ष०।।3
चलत अच्युत राखैं, बैठत वैकुण्ठ राखें,
धावत अनन्त मुरारे, रक्ष०।।4
खेलत गोविन्द राखैं, सोवत माधव राखैं,
सदा विष्णु मुरारे, रक्ष०।।5

(पटाक्षेप)

ꕥ❖ꕥ

बाल लहरी **द्वितीय कणामृत**

हरि-नाम-प्रेम

(प्रथम वर्ष की लीला)

समाज-चौपाई

वर्ष दिवस के गौर निमाई। घुटरुन किलकत चलत सुहाई।।
काकपक्ष जूड़ा सिर सोहै। गंडन अलक झलक मन मोहै।।
नासा मोती लोलक ललकें। कंठ बघनखा कंचन मणि के।।
कटि किंकिनि भुज वलय राजै। पग नूपुर कंचन मृदु बाजै।।
देह दिगम्बर दम् दम् दमकै। वदन चन्द्रमा चम् चम् चमके।।
अद्‌भुत बालचरित प्रगटावैं। मात तात उर प्रेम बढ़ावैं।।

(दो चार पुरवासिनी नारियाँ खेल-खिलौना मेवा-मिठाई लेकर आती हैं)।

पद

नवद्वीप की नारी सारी,
नित्य निमाई निरखन आवैं।
कल न परत सब निशि दिन देखे,
भोर होत मिलि जुरि सब आवैं।।
खेल खिलौना पाक सलौना,
भरि भरि भार थार लै आवैं।

शची

शची कहती या भीर सों हारी,
द्वै जावैं पुनि द्वै चलि आवैं।।

स्त्रियाँ

नारी करति मनुहार शची की,
हम पै मति यूँ मात रिसावै।
लखन दै अपने ललित लाल कूँ,
लाड़ लड़ाय हमहू सुख पावैं।।
धनी होय, हम कंगालिनी पै,
क्यूँ न तनिक दया दिखरावै।
सब निशि सपने गोद खिलावैं,
भोर होत ही इहाँ चलि आवैं।।

शची

हारि कहती शची लेऔ खिलाऔ,
पै चंचल नहिं गोदहिं आवै।

स्त्रियाँ

देओ हमहिं, हम गोद खिलावैं,
कहि कहि भरि अंक उठावैं।।
दीसत हरुऔ पै अति गरुऔ,
यह तौ गोद सहज नहिं आवै।
बढ़वार बड़ौ बालक कौ तन है,
बरस दिवस सों अधिक लखावै।।

(बाल निमाई गोद से)

समाज

खिसल चलें, घुटरुन बहु भाजें,
किलकिलात अति सुख उपजावैं।
मुरैं दुरैं कहूँ, भाजि चलैं कछु,
निरखि निरखि छवि सब बलि जावैं।।
कोई चुचकारत कोई पुचकारत,
चुटकी बजाय हँसाय रिझावैं।
खेल खिलौना चकई भौंरा,
फिरकी घुमाय घुमाय रमावैं।।
खेलन तजि तब रोवन लागे,
छल बहु करि करि नारि मनावैं।
मनैं ना मीठे बोल वस्तु सों,
रोवत लोटत धूम मचावैं।।

स्त्री 1-लै निमाई! यह लट्टू लै, चकई लै!

निमाई-(खिलौना फेंक देते) ऊँ ऊँ ऊँ!

स्त्री 2-लै यह मिठाई खा, लै रसगुल्ला! बड़ौ मीठौ है।

निमाई-(मिठाई फेंक रोने लगते) ऊँ ऊँ ऊँ।

स्त्री 3-अच्छौ तौ आ, घोड़ा पै बैठ जा! आ मेरी पीठ पै चढ़ जा।

निमाई-(जमीन पर लोट रोने लगते हैं)।

स्त्री 1-हाय हाय! कैसे मनावें? यह तो बड़ौई जिद्दी है। अरी ओ शची माँ! अपने या लाड़ले कूँ आयकै तौ मनाऔ! यंहा तुमसों ही मनैगो हम तौ हार गईं।

शची-(प्रवेश करती हुई) हरि हरि बोलौ, बहनाऔ, हरि-हरि बोलौ! यह अबही चुप है जायगौ।

स्त्रियाँ-(सब मिलकर) हरि बोल! हरि बोल!

निमाई-(रोना बन्द करके उठ बैठते हैं और बड़े चाव से स्त्रियों को देखने लगते हैं)।

स्त्रियाँ-धुन

बोल हरि, बोल हरि, हरि हरि बोल।
केशव माधव गोविन्द बोल।।

समाज-पूर्वपद

हरि नाम धुनि सुनि रोवन तजिकै,
हसत मगन मन अति सुख पावैं।
नारिन मुख मुख प्रति हेरत फिरि,
कमलनयन अति प्रेम जनावैं।।

स्त्री 1-अहा! कितने प्रेम सों निमाई हरिनाम सुन रह्यौ है। नेत्र कैसे खिल रहे हैं। कैसौ टकटकी लगाय हमकूँ देख रह्यौ है।

स्त्री 2-जब याकूँ हरिनाम सों इतनौ प्रेम है तौ बहनाऔ! याकूँ अब 'गौर हरि' नाम सों बोल्यौ करौ। और अब कबहू यह रोवै तो 'हरि-हरि' गाय कै याकूँ मनायौ करौ। धन्य शची माँ और मिश्रजी कूँ, जो ऐसौ हरि-प्रेमी बालक पायौ है।

पूर्व पद

धन्य लाल धनि मात लाल धनि,
धनि कुल धनि हम हरि हरि गावैं।
'प्रेम' प्रभु बुलवाय हरी हरी,
गौर हरि निज नाम धरावैं।।

दोहा

नारि कहति शची मात सों, जैसौ सुन्दर वाल।
गुनहू पायौ तैसौइ, जायौ महाजन लाल।।

शची-बहनाऔ! जो आवै है बस यही कह जाय है कि यह बालक कोई महापुरुष आयौ है। सुन सुनकै मेरौ तौ न जानै क्यूँ हृदय काँप उठै है, सुख न है कैं दु:ख ही होय है। मैं तौ तुम सबन के निकट यही अँचरा पसार कै माँगूँ हूँ कि-

सोरठा

देऔ असीस सकल, विश्वम्भर विश्व रूप ये।
जोरी रहै अविचल, मो वृद्धा निधि भ्रात द्वै।।

स्त्रियाँ-गीत-आशीर्वाद-भैरवी-दादरा

फले फूले रस झूले शची तिहारी बेलि हो,
बोल हरि बोल हो।। टेक।।

कलियाँ आवैं नव नव कलियाँ,
कुसुम फूलैं रंग रंग झलियाँ,
भ्रमर गूँजैं रस रस रलियाँ,
दिन दिन रंग रेलि हो, बोल हरि०।। 1।।
धन्य तिहारौ भवन आँगन,
लाजत है नन्दन कानन।।
अमरागन रहे लुभाय,
शुक पिक मुनि गीत गाय।
विश्व प्राण प्रेम-गान
गौर-चाँद केलि हो, बोल हरि०।। 2।।

(पटाक्षेप)

❧❖❧

बाल-लहरी **तृतीयकणामृत**

मृद्भक्षण

(तृतीय वर्ष की लीला)

समाज-

दोहा

जगन्नाथ शची गृह गगन, पूरण श्रीगौर चन्द।
उदित रहै निशिदिन मुदित, करत नारिनर वृन्द।।

चौपाई

चन्द्रकला ज्यूँ दिन दिन बाढ़हिं। मात तात सुख सिन्धु बढ़ावहिं
देव अलक्षित कौतुक करहीं। बोलत डोलत आंगन फिरहीं।।
छाया देख चोर कोई बोलैं। पकरौ कहैं नरसिंह कोई बोलैं।।
पढ़ैं मंत्र देवी-देवन के। कोई दुर्गा कोइ नारायण के।।
लगै चलन गति चाल सुहाई। जो निरखै सो रहै भुलाई।।
घर बाहर जगमग करि डोलै। गावैं बोल सुधा रस घोलैं।।

दोहा

माटी खामन मिस करि, मातहिं कियौ उपदेश।
सो लीला वर्णन करौं, सुमिरि बाल गौरेश।।

(प्रवेश शची माता)

शची-हाय हाय! अबही तक नहीं आयौ। ज्यौं-ज्यौं बड़ौ हैतो जाय है त्यौं त्यौं खेलवे की ठौर हू बढ़ती जाय घर ते आँगन, आँगन ते गली और अब मोहल्ला तक कौ चक्कर लगायवे लग्यौ है। घरी, द्वै घरीहू घर में नहीं बैठे है। नेक मेरी आँख इत-उत भई और यह निकस गयौ! कहाँ तक नजर राखूँ!

(निमाई का दौड़ते हुए आना)

निमाई-माँ माँ! भूख लगी है (लिपट जाना)

शची-(धूल झाड़ती, मुख पोंछती हुई) भूख लगी तो माँ माँ और आगे पीछे माँ किल्लायौ करै, रोयौ करै, सुनै कौन? बेटा! तू दूर खेलवे क्यूँ चल्यौ जाय है? कौन ढूँढ़ लायौ करैगौ! तेरौ बड़ौ भैय्या पढ़बे चल्यौ जाय है। तेरे पिताजी बस्ती में चले जायँ हैं। मैं न्हायवे लगी और तू भग गयौ! कलेऊ हू नाहिं करी! लै यह माखन मिश्री, दूध केला-सन्देश। खा यहीं बैठकै। मैं जाय कै रसोई देखूँ हूँ। (माखन इत्यादि खाने को देकर चली जाती हैं)।

निमाइ-(बैठकर खाने लगता है)।

समाज-

पद

प्यारौ लागै गोपाल माखन खाता।
कुछ खाता कुछ धरनी गिराता, तब मेरौ लाल अघाता।।
माखन मिश्री केला सन्देश, दूध पीवत मुसिक्याता।
अपने भाव में आप किलोलै, अल बल बोल सुनाता।।
प्रेम प्रभु की बाल छवि पर, जो देखै बलि जाता।

दोहा

कछु खायौ लिपटायौ तन, दियौ भूमि पै डार।
लै लै माटी हाथ में, खावत शची कुमार।।

जन्मभूमि की मृत्तिका, प्यारी प्रभुहिं सदाई।
गोकुल की रज चखी, अब चाखत नदियाई।।

(प्रवेश-पीतवस्त्रा योगमाया गाती हुई)

योगमाया- **पद आसावरी-तिताला**

जय जय जय जय गौर निमाई,
व्रज के कन्हाई, नदिया आईं, रूप छिपाई,
सबन भुलाई, लीला रची सुखदाई।। जय०।।
अज शिव ध्यावैं, वेद बहु गावैं, पार न पावैं, नेति सुनावैं,
'प्रेम' सों आवैं, नाचैं गावैं, माटी खावैं, अति सुख पावैं,
महिमा रज की बढ़ाई।। जय०।।

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल

(प्रदक्षिणा करके चली जाती हैं। नेपथ्य में से जय जयकार एवं हरि बोल ध्वनि)।

समाज- **चौपाई**

देव गगन में ठाड़े लखहिं। जय जय गौर हरि उच्चारहिं।।
धुनि सुनि मात दौरि तहँ आई। लखै न कोई, एक निमाई।।

शची-(चारों तरफ देखती हुई) हैं! यहाँ तौ और कोई नहीं है। इकलौ निमाई बैठ्यौ है! क्यूँ बेटा! यहाँ कोई आयौ हो?

निमाइ-(मुँह में मिट्टी का डला। मुँह बन्द किये चुप)

शची-क्यूँ निमाई। बोलै क्यूँ नहीं है? कोई आयौ हो।

निमाइ-मुँह बन्द। सिर हिलाते हुए। ऊँ हुँ!

शची-बेटा! आज तू कैसे हूँ हाँ कर रह्यौ है? बोलै क्यूँ नाहिं ? अरे! यह तेरी होंठ पै मिट्टी कैसे लग रही है? कहा मिट्टी खाय रह्यौ है! खोल तौ मुख! (बलपूर्वक मुख खुलवा कर मिट्टी का डला निकालती है) अरे पशु! तैंने मिट्टी क्यूँ खाई?

निमाइ-(रोते रोते) ऊँ ऊँ ऊँ तू ही तौ मिट्टी दै गई ही और अब ऊँ ऊँ ऊँ तू ही डाँटै है? ऊँ ऊँ ऊँ।

शची-अरे! मैं मिट्टी दै गई ही कै सन्देश, केला, मिठाई?

निमाइ-तो बेहू तौ सब मिट्टी ही हैं।

(बंगला)

रवै सन्देश आदि जतो माटीर विकार।
एहो माटी सेहो माटी, कि भेद विचार।।

दरबारी- **(हिन्दी)**

खील सन्देश मिठाई मिट्टी के विकार।
एहू मिट्टी वोहू मिट्टी, कैसा भेद विचार।।
जैसे यह मिट्टी है वैसे ही मिठाई हू मिट्टी ही है।

शची-यह मिठाई मिट्टी कैसे हैं मेरे पण्डित?

निमाइ

मिट्टी सों ही पैदा होवै, मिट्टी में मिल जाय।
आगै मिट्टी पीछै मिट्टी, यासों मिट्टी कहाय।।

शची-वाह रे मेरे वेदाँत के वेदान्ती! पेट ते ही पंडित बनकै निकस्यो है! परन्तु सुन बेटा!

(बंगला)

माटीर विकार अन्न खाइले देह पुष्ट होय।
माटी खाइले रोग होय, देह जाय क्षय।।

मिट्टी ते अन्न पैदा होय है-यह बात तो ठीक है परन्तु अन्न खायबे सों देह पुष्ट होय और मिट्टी खायबे सों देह नष्ट होय है। फिर बता मिट्टी और अन्न एक कैसे है जायँगे? और सुन-

(बंगला)

माटीर विकार घटे पानी भरे आनि।
माटी पिण्ड धरि जबै, शोषि जाय पानि।।

मिट्टी ते घड़ा बनै है अवश्य परन्तु घड़ा में तौ पानी भरके लाय सकैं है, राख सकैं हैं और मिट्टी को डला तो पानी सब सोख लेय है यासों भेद माने बिना तौ व्यवहार बन ही नहीं सकै है। समझ गयौ न?

निमाइ-हाँ माँ! समझ गयौ।

शची-यासों वत्स! मिट्टी नहीं खानौ। मिट्टी खायवे सों पेट में कीरा पर जाँय हैं। बड़ौ दु:ख होय है।

निमाइ-(डरते हुए) कीरा पर जाँय हैं माँ?

शची-हाँ! लम्बे-लम्बे! डोरा जैसे! सो अब दूध पियौ कर, सन्देश-केला खायौ कर। मिट्टी कबहू नहीं खानौ। समझ्यौ न?

निमाइ-हाँ माँ! सब समझ गयौ!

(बंगला)

एबे तो जानिनु माता, आर माटी ना खाइबो।
क्षुधा जबे लागिबे, तोमार स्तन दुग्ध पीबो।।

(हिन्दी)

जान गयो माता अब, मिट्टी नहीं खाऊँ।
लागै जब भूख माता, बोबो तेरो पीऊँ।।

शची-(निमाई को गोद में बिठा लेती है)।

समाज- **चौपाई**

बालक सबही माटी खावहि।
कोई न तत्त्व ज्ञान बखानहिं।।
माटी खामन क्रिया तो लौकिक।
ज्ञान सुनावन बुद्धि अलौकिक।।
जीव मध्य रहै लौकिक कर्मा।
ईश्वर मध्य दोउन के धर्मा।।
लौकिक मध्य अलौकिकताई।
यही ईश्वर की ईश्वरताई।।

निमाई-माँ! तू हरि हरि गा। मैं नाचूँगो।

शची-अच्छी बात। (गाती है-निमाइ नाचता है)।

कीर्तन

मुकुन्द मुरारि, हरि बोल, हरि बोल।
गोविन्द गिरिधारी, हरि बोल, हरि बोल।।

(दुगुन)

मोर मुकुट बनमाला सोहै, ललित त्रिभंग मन को मोहै।
साँवरौ सलौनौ मुरली धारी, कृष्ण मुरारि
हरि बोल हरि०।।

(पटाक्षेप)

ও❖৩

चोर-उद्धार

(चतुर्थ वर्ष की लीला)

समाज-

दोहा

शिशुकला दिन दिन बढ़ै, बाढ़ै मात हुलास।
उत्सव आनन्द मंगल, नव नव प्रेम प्रकाश।।

चौपाई

नित नव खेल की रेल बहावैं। गृह-आँगन रंगभूमि रचावैं।।
वयस बढ़त रंगभूमि बाढ़ै। हाट बाट गली गैल गरारे।।
बाहर खेलत कभु छिप जावैं। विश्व रूप हू खोज न पावैं।।
भृत्य ईशान हू खोजत हारैं। मात विकल निमाई पुकारैं।।
दृष्टि बचाय घर घुसि आवैं। धादू कंठ जननी लिपटापावैं।।
कहैं 'मैं दादा दियौ छकाय'। मोकुँ न ढूँढ़ि सकै कोई माय।।

दोहा

लखि अस चपल चरित नित, मात न मोद समाय।
मोहित नर नारी सबै, लखि लखि प्राण सिराय।।
एक दिवस खेलत चपल, निकसि चले कछु दूर।
संग न बाल सखा कोई, आप मगन मन चूर।।

(प्रवेश-बाल निमाई गेंद उछालते गाते हुए)

निमाई-

गाना-आसावरी-दादरा

खेल लागै प्यारी मोकूँ, खेल लागै प्यारी।
और को खिलारी दूजौ, मो सम खिलारी।।1
दिवस खेलूँ रजनी खेलूँ, अपने संग आपही खेलूँ।
ना जानों मैं कबसों खेलूँ, ऐसौ नित खिलारी।।2
यहाँ खेलूँ वहाँ खेलूँ, बाहर खेलूँ भीतर खेलूँ।
ना जानौं मैं काहे खेलूँ, ऐसौ 'प्रेम' खिलारी।।3

माँड

हरि बोलो हरि बोलो हरि मोर प्राण।
हरि मोर प्राण, नयनाभिराम।।1
गंगा गाये कल् कल् कल् कल्,
भ्रमर गाये गुन् गुन् गुन् गुन्।
पंछी गाये शुनो शुनो शुनो शुनो,
मधु भरा हरि नाम, हरि बोलो०।।2

(प्रवेश दो चार-धुमाली और मेषमाली)

समाज- **चौपाई**

चोर द्वै तिहि मारग आये।
भूषन तन लखि लोभ सताये।।

मधुमाली-मेषमाली- **गाना**

हम तो बड़े बीर हैं भट्ट।
जीते को मुर्दा कर डाले, हाथ सफाई लट्ठ।।1
बाबुओं के बंगला फोड़ें, बाबाओं के मट्ठ।
सेठजी का पेट फोड़ें, नाक सेठानी कट्ट।।2
पुलिस के पहरेदारों से तो, रहती है गटपट्ट।
भक्ति 'प्रेम' सब भाड़ में जाओ, लूटो माल झटपट्ट।।3

धुमाली-(निमाइ को देखते हुए) अबे चुप चुप मेषमाली! देख उधर। वह चिड़िया! सोने की चिड़िया।

मेषमाली-यार धुमाली! यह तो जेवरों से लद रहा है। बस इस पर हाथ साफ करो और जिन्दगी भर मौज करो। बैठे-बैठे खाओ और धता बताओ इस चोरों के पेशे को! कदम कदम जान खतरे में रहती है।

धुमाली-छोड़ हमारी बला! यह है हमारे बुजुर्गों की कला और इसी में है हमारा भी भला। यही तो हमारा स्वधर्म है।

शेर

स्वधर्म को न छोड़ो कितना ही वह बुरा हो।
परधर्म को न पकड़ो, कितना ही वह खरा हो।
स्वधर्म में जो रहता, होता है पार आखिर।
परधर्म जो पकड़ता, मरता है मौत काफिर।।

खतरा कहाँ नहीं है, खतरे में हम पले हैं।
मक्कार शरीफों से, हम चोर ही भले हैं।
ये मुल्क भर को लूटें, मालिक बने हैं सारे।
कहते हैं चोर हमको, गुरु घन्टाल ये हमारे।।

मेष०-(झुँझलाकर) अबे बेबकूफ! जबान बन्द कर और हाथ दिखला। तेरे इस बेवक्त के तराने से चिड़िया उड़ गई तो टापते रह जायगा!

धुमाली-तो देख मैं इसके गले का हार लूँगा।

मेष०-तो मैं कमर की कौंधनी लूँगा।

धुमा०-मैं हाथों के कड़े लूँगा।

मेष-मैं पाँवों के नूपुर लूँगा।

धुमा०-नहीं! नूपुर मैं लूँगा! तेरे लिए कौंधनी काफी है।

मेष०-तो तेरे लिए हार क्या कम है? नूपुर तो मैं ही लूँगा।

धुमा०-कैसे ले लेगा? तू है कौन?

मेष०-(लाठी तान कर) ऐसे ले लूँगा! मैं हूँ मेषमाली।

धुमा०-तो मैं भी धुमाली हूँ! ले, छीन ले!

(दोनों गुँथ पड़ते और लड़ते हैं)

मेष०-(ठंडा पड़कर) अरे वाह रे और हम हमारी अक्ल! सूत न पौनी और कोरिया से लट्ठम लट्ठ। माल तो आया भी नहीं हाथ में और लट्ठ पहले ही चलने लगे। साले! इस तबेले में चिड़िया उड़ गई तो शेखचिल्ली जैसे हाथ मलते रह जायँगे।

धुमा०-हाँ यार! बात तो ठीक है। माल हाथ आ जाये फिर निपट लेंगे हम-तुम!

समाज- **चौपाई**

बालक ढिंग आये तब चोरा।
लखि डरपाय बूझत गौरा।।

निमाइ

को तुम काहे इत आये। लखत तुमहिं जियरा डरपाये।।

मेष०

डरत काहे यह लेऔ मिठाई। चलौ संग दैं मेला दिखाई।।

धुमा०-(पुचकारता हुआ) आहा! आमार लक्खी छेले रूपेर खनी। बड़े सुन्दर हो लाला।

मेष०-(बलैया लेते हुए) मोरि मोरि! बालाइ जाय! तोमार नाम की बाबा?

निताइ-आमार नाम गौर, गौरचाँद, निमाइ चाँद।

धुमा०-बाबा निमाइ चाँद! मेला देखवे चलौ। बालक सब वहीं गये हैं। तुमकूँ नहीं लै गये कोई! चलो! हम ले चलैंगे।

मेष०-और तुमकूँ चलनौ हू नहीं परैगौ। हम कँधा पै बैठार कै लै जायँगे और मेला दिखाय कै तुमकूँ घर छोड़ जायँगे।

निमाइ-मेला कोथाय? कतो दूर?

धुमा०-दूर कोथाय, एइ जे काछे! गंगार धारे।

दूर कहाँ बिल्कुल नजदीक! गंगा तट पै।

निमाइ-(आनन्द से उछलते हुए) तबे आमि जाबो! ताम्शा देखबो! मिष्टी खाबो! नियै चलो नियै चलो!

धुमा०-तॅबे एसो सोनार चाँद। (अपने कन्धे पर चढ़ाना)

समाज-

चौपाई

झटपट लीन्हे काँध चढ़ाई।
चले नगर बाहर उमगाई।।
अन्तर्यामी गौर निमाई।
दीन्ही मति गति सब भरमाई।।

निमाइ-(स्वगत) अहूँ! मेरे गहने के लोभ सों मेरे प्रेमी बने हौ। परन्तु भाव-कुभाव कैसे ही सही, मोकूँ अपने काँधे पै चढ़ायौ तौ है। सो अब मैं इनकूँ साँचौ ही प्रेमी बनाय दऊँगो।

समाज-

चौपाई

लिये जात हैं गौर निमाई। परसि परसि पुलकावली छाई।।
तब काँपत जिय धड़कन लागै। डगमग पाँव परत न आगै।।

धुमा०-(पाँव लड़खड़ाते हैं। घबड़ाकर) अरे मेषमाली यह मुझे क्या हो गया? मेरा शरीर काँप रहा है। छाती धड़क रही है। पाँव लड़खड़ाते हैं। चला नहीं जाता।

मेष०-अबे चुपकर! शोर मत मचा। जल्दी भाग चल।

धुमा०-चलूँ कैसे? चला ही नहीं जाता। मैं-मैं-मैं तो इस बालक के शरीर पर, इसके जेवरों पर हाथ नहीं लगाऊँगा। ओफ्!

मेष०-(उसके मुँह पर अपना हाथ रखते हुए) कमबख्त कहीं के! बँधवायेगा क्या? कोई सुन लेगा तो लेने के देने पड़ जायँगे। चुपचाप चला चल।

धुमा०-नहीं नहीं! अब मुझसे यह धन्धा नहीं होगा। अरे! देख-देख इस चाँद से मुखड़े को और छोड़ इस पाप के झगड़े को।

मेष०-यही है तेरे स्वधर्म का ढोल! एक बालक का मुख देखकर ही पानी हो गया। ला, मुझे दे इसको, और कालामुख कर।

धुमा०-तू ही उज्याला कर अपना मुख! ले, सम्हाल।

मेष०-(निमाई को अपने कँधे चढ़ाते हुए) जय काली कलकत्ते वाली! तेरा खप्पर न जाय खाली! अब दसों अँगुलियाँ घी में! सारा माल मेरा ही। (दौड़कर निकल जाता है) जय काली!

धुमा०-ओह! हल्का हो गया! यह बालक मेरा सब पाप ले गया और मुझे हल्का कर गया। जी करता है कि रोऊँ, चिल्लाऊँ, गला फाड़कर बुलाऊँ! पर किसको बुलाऊँ? किसको पुकारूँ? कौन है इस पापी खूनी डाकू का? कोई नहीं, कोई नहीं। (ठहर कर) नहीं नहीं! दिल कहता है कि है है, तेरा भी है, वही है-ह...ह...हरि-हरि-हरि बोल।

(धीरे-धीरे झूमता झामता चला जाता है)

समाज-

चौपाई

खोज परी निमाइ घर नाहीं।
मात तात भ्राता अकुलाहीं।।
जहँ तहँ व्याकुल खोजत डोलैं।
गौर निमाई कहि कहि बोलैं।।

विकल मीन जिमि वारि विहीना।
मणि बिन फणि जिमि दारिद दीना।।
विश्व रूप गंगा तट खोजत।
मैया निमाइ कहाँ तू टेरत।।

विश्वरूप व्याकुल पुकारते हुए आते हैं)

विश्वरूप–निमाई! भैया! मेरे प्राण गौर! तू कहाँ चल्यौ गयौ। दोपहर है गयी! एक-एक मौहल्ला घूमि आयौ एक-एक घाट-बाट छान डार्यौ पर तेरौ पतौ न पायौ। आ भैया! माता कूँ अपनौ चाँद-मुख दिखा। वह बावरी है गई है! हाय कहाँ मैं तोकूँ पाऊँ और मैया कूँ धीरज बँधाऊँ। निमाई! निमाई! (ठहर कर कुछ सोचते हुए) ओह! एक ओर तौ मेरौ मन संसार से हटतौ जाय है और दूसरी ओर या निमाइ की ओर खिंचतौ जाय है, मेरी सारी ममता याके ऊपर ही सिमटती जाय है। हाय प्रभो! यह कहा तेरी माया है। रक्षा करौ! रक्षा करौ! निमाई भैया! गौर! (पुकारते हुए चले जाते हैं)।

समाज– **चौपाई**

आयौ चोर भटकि तिहि ठौरा।
लै गयौ आगे जहाँ ते गौरा।।

(प्रवेश मेषमाली। कन्धे पर निमाई)

मेष०–(चारों ओर देखते हुए) हैं! यह तो वही जगह है जहाँ से हम इसे उठाकर ले गये थे! मैं तो शहर से बाहर के लिए भागा था। फिर यहाँ कैसे आ गया। अच्छा! अब इधर से भाग चलूँ (भाग जाता है)।

समाज– **चौपाई**

पुनि दूजे मारग गहि धायौ।
भटकि भटकि फेरहु तहँ आयौ।।

मेष०–(आता है–और फिर भागता है, फिर आता है)

समाज– **चौपाई**

विस्मय भय दोउ मन उपजायौ।
हेरत चन्द्र वदन सु लुभायौ।।

मेष०–(कन्धे पर बैठे हुए निमाई को इकटक देखने लग जाता है)।

समाज- **चौपाई**

जन्म कठोर क्रूर मेषमाली।
आज निमाइ मोहनी घाली।।
दया मया उमगत उर आवे।
हृण्दय गरत तन वदन कँपावें।
चित्त चहै लगाय उर राखौं।
जीवन प्रान सब बलि बलि नाखौं।।
नैनन अश्रु नेह भरि आये।
बाल गौर मधु वचन सुनाये।।

निमाइ

कहा देखत तुम ऐसे भैया।
देहु उतार जाऊँ ढिंग मैया।।
बड़ी बेर तुम मोहिं बिरमायो।
यह देखौ मेरौ घर आयौ।।

समाज

भयौ चेत भय लियौ दबाई।
कहत जाऔ घर जाऔ निमाई।।

मेष०-(निमाई को उतारते हुए-घबड़ाकर) जाओ निमाई! जाओ अपने घर (निमाई चला जाता है) मैं भी भागूँ! कोई देख लेगा तो न जाने क्या समझेगा (भाग जाता है)।

समाज- **दोहा**

भवन निकट उतारि कै, चल्यौ आप पलाय।
हत्यारौ प्रेमी बन्यौ, प्रेम परस प्रभु पाय।।
प्रेम परस प्रभु पाय के, गये जु पाप पलाय।
जानि-अजानि अगिनि परस, अंगहिं देत जराय।।

(प्रवेश मेषमाली ऊपर हाथ उठाये)

मेष०-(आर्त्त स्वर में) भीख माँगूँगा! भूखा मरूँगा पर चोरी का नाम न लूँगा। अब यह मेषमाली चोर नहीं, गुलाम है तेरा! नाथ (घुटना टेक-हाथ जोड़) क्षमा दीनानाथ! क्षमा! दयासिन्धो! दया!

गजल

भटक रहा था मैं कोहवन में,
तू मुझको आकर बचा गया हरि।
चबा रहा था करील काँटे,
तू गुल चमन को दिखा गया हरि।।
बना हुआ था दिल संग जैसा,
उसे तू पानी बना गया हरि।।
पड़ा था आँखों के आगे परदा,
उसे तू छिन में हटा गया हरि।।
तेरी राह निराली, रीझ निराली,
बिगड़ी मेरी बना गया हरि।।
जो मुँह दिखाने के था न लायक,
वह गाता 'प्रेम' से आज हरि हरि।।
हरि ऽऽ हरि ऽऽ हरि ऽऽ हरि बोल!
(गाते गाते झूमते हुए प्रस्थान)
(पटाक्षेप)

❖

बाल-लहरी **पंचम कणामृत**

तैर्थिक विप्र प्रति कृपा

(चतुर्थ वर्ष की लीला)

समाज- **श्लोक**

तीर्थभ्रमण शीलस्य द्विजस्यान्नं जनार्दनः।
भुक्त्वा तं स्मारयामास नन्दगेह कुतुहलम्।।

(मुरारि कड़चा)

चौपाई

आयौ विप्र इक तीरथवासी। बाल गोपाल उपासी उदासी।।
कृष्ण कृष्ण मुख सों नित बोलै। प्रेम मगन तीरथ प्रति डोलै।।
भ्रमत भ्रमत नदियापुरी आयौ। गंगा तट सुन्दर मन भायौ।।

(प्रवेश तीर्थभ्रमणकारी विप्र। शीश जटा, कर-कमंडलु, गले तुलसी माला। कुशासन, मृगछाला)।

तीर्थवासी- **कीर्तन धुन**

जय गोविन्द जय गोपाल।
चरण शरण हम दीनदयाल।।

अहा! श्रीभगवती भागीरथी के तट पै बस्यौ भयौ यह नवद्वीप धाम तौ नवधा भक्ति कौ ही धाम जैसौ लगै है। जितनौ रमणीक है उतनौ ही भावोद्दीपक हू है-

मिश्र बसंत- **गाना**

फूलों से तरु तरु छा रहे, हरियाली वन वन छा रही।
पंछी भी कल कल गा रहे, गंगा भी छल छल बह रही।।1
आकाश निर्मल हो रहा, ए दिशाएँ कैसी खिल रहीं।
वन वनके गूँचे खिल रहे, तन मन की कलियाँ खिल रहीं।।2
समीर सुखकर बह रहा, ए सुवास मनहर ला रही।
सन्देश किसका ला रहे, शोभा यह किसकी छा रही।।3
महिमा यह कीस की गा रहे, चहुँ ओर हरि धुनि छा रही।
किस 'प्रेम' चाँद को पा रहे, आनन्द चाँदनी छा रही।।4

धुन-जय गोविन्द जय गोपाल। शरण शरण हम०० ।।

(प्रवेश जगन्नाथ मिश्र)

जगन्नाथ-(तीर्थवासी को देखकर) ये तो कोई नवीन संत हमारी नगरी में पधारे हैं। अहोभाग्य! परिचय करनौ चाहिये। श्रीचरणकमले नमस्करोमि।

तीर्थवासी-श्रीकृष्णेरतिर्मतिरस्तु। आप निश्चय ही नवद्वीप वासी हैं।

जग०-हाँ भगवन्! मोकूँ जगन्नाथ मिश्र कहैं है। आप अपनौ परिचय दै कै दास कूँ कृतार्थ करैं।

तीर्थ०-पुण्य तीर्थन में भ्रमण करवे वारौ-यही मेरौ परिचय है। आज अबही मैं यहाँ आयौ हूँ और आमत ही मेरौ हृदय एक अपूर्व भावोल्लास सों भर गयौ है। श्वांस-श्वांस में वायु नहीं भाव-भक्ति ही पान कर रह्यौ हूँ। मेरे रोम-रोम पुलकित है रहे हैं। आज मेरौ तीर्थ-भ्रमण सफल भयौ। श्रम कौ पुरस्कार मिल गयौ। धन्य है आपके महान् सौभाग्य कूँ जो जा धन्य धाम में निवास करौ हो।

जग०-भगवन्! मैं तौ एक मोह ममताग्रस्त गृहस्थ हूँ। मैं धाम की अपूर्वता कहा अनुभव कर सकूँ हूँ। आप जैसे महानुभाव कौ विमल मन-मुकुर ही धाम के स्वरूप कूँ ग्रहण कर सकै है। अहोभाग्य जो आप जैसे पवित्रात्मा के दर्शन भये।

श्लोक

महद् विचलनं नृणां गृहीनां दानचेतसाम्।
निःश्रेयसाय कल्पते भगवन्! नान्यथा क्वचित्।।

आप जैसे महानुभाव हम जैसे दीन गृहस्थिन के कल्याण के तांईं ही विचरण कर्‌यौ करैं हैं। अतएव भगवन्! कृपया चल कै या दास के घर कूँ पवित्र करैं। वहीं विश्राम करैं और अपने सत्संग सुरसरि सों हमारौ जीवन पवित्र बनावें।

तीर्थ०-जैसी गोपालजी की इच्छा! चलिये पंडितजी!

जग०-(तीर्थवासी को लेकर चलते हैं। मार्ग में चलते-चलते)

श्लोक

दुर्लभो मानुषो जन्म देहिनां क्षणभंगुरः।
तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुण्ठ प्रिय दर्शनम्।।

दोहा

मानुष तन मिलनौ कठिन, मिलै तौ मिल हू जाय।
(पै) हरिजन मिलनौ अति कठिन, मिलैं तौ हरि मिलजाय
हरि सों हित तू मत करै, हरिजन सों कर हेत।
माल मुलुक हरि देत हैं, हरिजन हरि कूँ देत।।
सुत दारा अरु लक्ष्मी, सब काहू के होय।
सन्त समागम हरिकथा, तुलसी दुर्लभ दोय।।

समाज- चौपाई

घर लै जाय चरन पखारे। आसन माल्य दै सत्कारे।।
अपने बहुतै भाग्य मनाये। आनन्द मगन भक्त गुन गाये।।

जग०- पद-भैरवी-दीपचन्दी

जो सुख होत भक्त घर आये।
सो न होत बहु सम्पत्ति पाये, बाँझहिं बेटा जाये।।1

जो सुख भक्तन कौ चरणोदक, पीवत गात लगाये।
सो सुख सपनेहू नहिं पैयत, कोटिक तीरथ न्हाये।।2
जो सुख भक्तन कौ मुख देखत, उपजत दुख बिसराये।
सो सुख होत न कबहू कामी, कामिनि उर लिपटाये।।3
जो सुख होत भक्त वचनन सुनि, नैनन नीर बहाये।
सो सुख कबहू न पैयत घर, पूत कौ पूत खिलाये।।4
जो सुख होत मिलत साधुनके, छिन छिन रंग बढ़ाये।
सो सुख होत न रंग 'व्यास' कौ, लक सुमेरुहिं पाये।।5

तीर्थ०-धन्य हैं मिश्रजी! आपकी भक्त-भक्ति कूँ! भगवान् की भक्ति करनी तौ सहज है परन्तु भक्त की भक्ति तौ कोटि कोटिन में एकाध के भाग्य में ही होय है। यह कोई सामान्य पुण्य कौ फल नहीं है-

श्लोक

महाप्रसादे, गोविन्दे, नामब्रह्माणी, वैष्णवे।
स्वल्प पुण्यवतां राजन्! विश्वासो नैव जायते।।

भगवत्प्रसाद भगवद्विग्रह, भगवन्नाम और भगवद्भक्त-इन चारन में श्रद्धा-विश्वास होनौ स्वल्प पुण्य नहीं महान् पुण्य को फल है।

(प्रवेश बाल निमाई गाते-गाते)

निमाई- **कीर्तन धुन**

गिरिधारी नन्दलाल, भजौ गोविन्द गोपाल।।

जग०-वत्स निमाई! इनके चरण-स्पर्श करौ।

निमाई-(तीर्थवासी का चरण-स्पर्श करते हैं)।

तीर्थ०-श्रीकृष्णेरतिरस्तु (इकटक देखते रहते) या बालक कौ नाम कहा है मिश्रजी!

जग०-वैसै तौ राशि कौ नाम है विश्वम्भर। परन्तु घर में हम निमाई कहकै बोलैं हैं।

तीर्थ०-कहा नाम बतायौ? विश्वम्भर?

जग०-हाँ देव! विश्वम्भर। और याकौ एक बड़ौ भाई है विश्वरूप।

तीर्थ०-वह कहाँ है? वाके हू दर्शन कराऔ।

जग०-वह तौ प्राय: गुरु-गृह में ही रह आवै है। भोजन के समय ही घर आवै है।

तीर्थ०- विश्व को भरण पोषणकारी यह नाम तौ ठीक है पर निमाइ कौ अर्थ कहा है।

जग०-अर्थ कहा बतावैं। एक तौ नीम वृक्ष के नीचे याकौ सौभर हो। दूसरे मेरी सात-सात सन्तान यमपुरी चली गईं। यह यमराज कूँ नीम जैसौ कडुवौ लगै या विचार सों हमने याकूँ नाम निमाई धर दियो-नीम पै।

निमाई-(बाल चपलता सहित) नहीं-नहीं महाराज! मैं नीम जैसौ कडुवौ नहीं। मैं तौ बड़ौइ मीठो हूँ। लोग मोते बड़ो ही प्यार करैं हैं और अनेकन नामन ते बोलै हैं-गौर, गौर-सुन्दर, गौरचाँद, गौरहरि-ऐसे ऐसे नाम मेरे अनेक हैं।

तीर्थ०-क्यों नहीं! तुम लाला! याहि योग्य हौ।

समाज- **चौपाई**

तबही सेवक आय सुनायौ।
भोजन हित माता जु बुलायौ।।

जग०-भगवन्! भीतर पधारैं। भगवत्प्रसाद प्रस्तुत है।

तीर्थ-मिश्रजी! मैं कछु समय पूर्व आप सों निवेदन कर चुक्यौ हूँ कि भगवत्प्रसाद में श्रद्धा प्रेम कोई महान पुण्य ते ही होय है। और प्रेम हैवे पै नेम आपही छूट जाय है। तब वह देश, काल पात्र कौ विचार न करके भगवत्प्रसाद प्राप्त होंत ही पाय लेय है? प्राप्त मात्रेण भोक्तव्यम् परन्तु मोमें यह प्रेम कहाँ! मैं तो नेम के बन्धन में बँध्यागौ भयौ स्वयं पाकी हूँ। अतएव क्षमा करें। प्रसाद कौ निरादर न समझें।

जग०-जैसी आपकी इच्छा! सब प्रबन्ध है जायगौ। आप अपने गोपालजी कौ भोग रसोई करैं। मैं एक सेवक कूँ आप की सेवा में भेज दऊँ हूँ। मोकूँ आज्ञा होवै।

तीर्थ०-हाँ-हाँ आप जायँ!

(जगन्नाथ जी चले जाते हैं)

तीर्थ-(स्वगत) जैसौ सुन्दर रूप वैसौ ही सुन्दर नाम विश्वम्भर, गौर, गौरसुन्दर, गौरहरि, गौर! गौर! गौर! गौर! (ठिठक कर) हैं! मैं तो या

बालक को ही नाम रटवे लग्यौ। गोपाल! गोपाल! गोपाल! गौर गोपाल! गौर गोपाल! गौर! गौर! गौर! (पुन: चौंककर) अरे! फिर वही बालक को नाम? और अपने गोपालजी के नाम के साथ? हाय! हाय! यह कैसी मेरी बुद्धि है गई। क्षमा करौ नाथ गोपाल! गोपाल! (आँखें बन्द कर ध्यान)

समाज– **चौपाई**

विप्र हृदय दु:ख विस्मय भारी।
कहत गौर गोपाल उचारी।।
ज्यूँ ज्यूँ ध्यान गोपाल कौ लावै।
त्यूँ त्यूँ गौर हृदय में आवै।।
कृपा प्रभु की समझि न पावै।
भई विचित्र दशा अकुलावै।।

(प्रवेश एक सेवक)

सेवक–भगवन्! रसोई के लिए सब प्रबन्ध कर दियौ गयौ है। आप कृपा कर पधारें।

तीर्थ०–चलौ (दोनों चले जाते हैं)।

समाज– **चौपाई**

धोय लिपाय शुद्ध करि भूमी।
पाक वस्तु सब लाय जु दीनी।।
करि विधि पाक भोग तिन लायौ।
बाल गोपाल को ध्यान लगायौ।।

(पर्दा खुलता है। तीर्थवासी भोग लगा रहा है)

तीर्थ०– **श्लोक**

त्वदीयं वस्तु गोविन्द! तुभ्यमेव समर्पये।
गृहाण सम्मुखो भूत्वा, प्रसीद परमेश्वर।।

दोहा

मेरा मुझको कुछ नहीं, जो कुछ है सब तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मोर।।

पद– **गाना–विहाग**

आओ मोहन प्राण पियारे।
तुम्हरी वस्तु तुम्हारे आगे,
प्रेम सों हौं लै सकल सँवारे।।
शबरी के बेर सुदामा का तन्दुल,
विदुराइन के तुम छिलके खाये।।
ग्वालन की तुम छाछ महेरी,
लै लै जूँठन 'प्रेम' सों पाये।।
(आँखें मूँद जप करने लगता है। गौर निमाई धीरे–धीरे आते हैं)।

समाज

अंतर्यामी गौर गोपाला। आय गये दुरि दुरि तिहि काला।।
मृदु मुसिक्याय हस्त बढ़ायौ। लै लै ग्रास भोग लगायौ।।
विप्र ह्रदय संशय कछु आयौ। खोले नैन बाल लखि पायौ।।

तीर्थ०–(साश्चर्य) अरे! निमाई! गौर! हाय हाय!

निमाई–(मुस्कराते हुए) हाँ–हाँ! तेरौ गौर गोपाल गौर

तीर्थ०–(दु:ख पूर्वक) अरे अबोध बालक! तैंने अनर्थ कर डार्‌यौ।

निमाइ–कछु नहीं! भूख लगी ही सो कछु खाय लियौ।

तीर्थ०–महान् अपराध! हे गोपालजी! बालक कूँ क्षमा करौ! बड़ौ अबोध चंचल है।

समाज

विप्र बोल सुनि मिश्रजु आये। ठाड़े गौर लखि अचरज पाये।।

(प्रवेश जगन्नाथ मिश्र)

जग०–अरे निमाई! तू यहाँ क्यों आयौ? भगवन्! आप की रसोई सिद्ध है गई का?

तीर्थ०–सिद्ध तौ है गई परन्तु बालक ने जूँठौ कर दियौ। मेरे गोपालजी कूँ खायबे नहीं दियौ।

जग०–(क्रोध पूर्वक)

चौपाई

टेरे मूरख! ढीठ भयौ भारी। यह कहा उलटी रीति निकारी।।
गुरु लघु जानै न देव द्विज जानै। हरि हित अर्पित भोग नसानै।।
नीके विधि फल आज चखै हौं। मनमाने ढंग तेरे छुटै हौं।।
(जगन्नाथ निमाई को पकड़ना चाहते हैं। वह भीतर भाग जाता है)।

तीर्थ०-(जगन्नाथजी को पकड़ते हुए) जान देऔ मिश्र जी! बालक ही तौ है।

दोहा

तुम ज्ञानी वह अज्ञ शिशु, तजि देऔ मन रोष।
दैव इच्छा ऐसी कछु, नहिं बालक कौ दोष।।

समाज-

चौपाई

मिश्र जगन्नाथ अति दुख पाये।
जोरि हाथ दोउ विनय सुनाये।।

जग०- भाग्य न मेरे अतिथि सेवा। नहिं प्रसन्न मौपै हरि देवा।।
एक बार पुनि रन्धन करहू। तुम दयाल हमरे दुख हरहू।।

तीर्थ०- कहत विप्र दुक्ख कित पाऔ। करिहौं पाक द्रव्य लै आऔ।।

जग०-तौ भगवन्! दूसरी ओर चलें। वहाँ बालक नहीं आय सकैगौ।

(दोनों का प्रस्थान। प्रवेश। शची माता निमाइ का हाथ पकड़े हुए)।

समाज-चौपाई

इत विप्र पुनि करत रसोई।
उत समझावति सुतहिं माई।।

शची-क्यों रे चंचल! तू अतिथि ब्राह्मण कौ भोग खायवे क्यूँ गयौ? तेरे तांई कहा घर में नहीं है कछु खायवे कूँ?

निमाइ-वाने मोकूँ क्यूँ बुलायौ? यह बुलावै और मैं न जाऊँ?

शची-क्यूँ झूँठ बोलै है? कब बुलायौ तोकूँ?

निमाइ-जब वाने आँख मूँद कही 'हे गोपालजी! आऔ भोग खाऔ' तब मैं गयौ। झूँठ बोलूँ तौ पूछ लेऔ वाकूँ।

शची–अरे बाबरे! उनकौ गोपाल तौ कृष्णगोपाल है। तू तौ मेरौ गौर गोपाल है। अब मत जैयो भली, और देख तेरी तौ आज जात चली गई।

निमाइ–सो कैसे माँ?

शची–सुन! वे तौ एक परदेशी ब्राह्मण हैं। न जाने उन की शाखा कहा? प्रवर कहा? गोत्र कहा? और तू है एक उच्च वैदिक श्रेणी के ब्राह्मण कौ बालक। सो तू वाकौ अन्न खाय आयौ! गई कै नहीं तेरी जात? अब तोकूँ कौन ब्राह्मण अपनी कन्या देगौ?

निमाइ– (हासिया कहेन प्रभु) 'आमि जे गोपाल।
ब्राह्मणेर अन्न खाई आमि सब काल।'

पद– **काफी–तिताला**

मैं गोप गोपाल री माई, काहे मोसों करत लराई।
विप्र अन्न गोप कोई खावै, वाकी कैसे जाति नसावै।।
जनम जनम के पाप बहावै, पुण्य फलै बहु माई।
बड़े भाग्य सों पाई।। मैं०
मैं नित ब्राह्मण पूजूँ पाऊँ, ब्राह्मण अन्न नित मैं खाऊँ
ब्राह्मण हित बहु जन्म धराऊँ, 'प्रेम' यह नेम सदाई।
(यह) साँची कहूँ मैं माई।। मैं०

शची–बस! चुपकर! जब देखौ तबही उटपटांग बात! न जानै कहाँ सों इतनी बात सीख राखी हैं। चल! सोयगौ नहीं। आज तेरी नींद कहाँ गई (सुलाती हैं)।

समाज– **दोहा**

मात सुवावन लागी पै, सोवत नहीं निमाई।
कथा सुनाय सुनाय माँ, दै निंदिया जु बुलाई।।

निमाइ–माँ! ऐसें नींद नांय आयगी। कोई मीठी सी कथा सुनाय। कथा सुनत नींद जल्दी आवै है।

शची–तौ सुन! भगवान् श्रीकृष्ण कौ एक श्रेष्ठ धाम है मथुरा।

निमाइ–वह कहाँ है माँ?

शची–वैसे तौ वह पृथ्वी पर ही है, भारतवर्ष है, परन्तु असल में वह पृथ्वी पर नहीं है, वह सुदर्शन चक्र के ऊपर विराजमान है।

निमाई–हाँ तौ फिर आगे कहौ माँ।

शची-वहाँ मथुरा के समीप एक गाँव है गोकुल। और गोकुल के समीप एक महावन है। वहाँ एक कण्व नाम के ऋषि कौ निवास हो।

निमाई-हाँ माँ फिर?

शची-वे ऋषि एक बार नन्दभवन में पधारे।

निमाई-नन्दभवन काहे ते कहैं हैं माँ?

शची-नन्द बाबा के घर कौ नाम नन्दभवन।

निमाई-नन्दबाबा कौन?

शची-कृष्णगोपाल के बाबा को नाम है नन्दबाबा।

निमाई-अच्छौ फिर कहा भयौ?

शची-नन्दबाबा ने कण्व ऋषि कौ बड़ौ आदर सत्कार कियौ और ऋषिजी ने अपने ठाकुरजी के तांई रसोई करी, भोग धर्‌यौ और जप करवे लगे।

निमाई-(हड़बड़ा कर) नीचे कूदते और दौड़ना चाहते हैं।

शची-(पकड़ती हुई) अरे! कहाँ जायगौ।

निमाई-छोड़ दै माँ, छोड़ दै। जान दै! भोग खाऊँगौ।

शची-(घबड़ा कर) फिर वही पागलपने की बात। अभी इतनौ समझायौ-बुझायौ और अबही सब भूल गयौ।

निमाई-(हँसकर बात बदलते हुए) अबही जो भोग खायकै आयौ न माँ! वाकी याद आय गई।

शची-अच्छौ तौ कथा पूरी है गई। अब तू सोय जा।

(पटाक्षेप)

समाज- **दोहा**

मात सुवावति तात कूँ, विप्र धरत उत ध्यान।
अरपि भोग गोपाल कूँ, विनवत, मधुर सुजान।।

(पर्दा खुलता है। तीर्थवासी भोग लगा रहा है)

तीर्थवासी- **कवित्त**

मचलि मचलि जैसे मात पय पान कियौ,
चोरि चोरि गोपिन कौ गोरसहू पायौ है।

गोवर्धन नाथ जैसे ब्रजवासिन पै,
माँगि माँगि भोग तुम, पसारि हाथ खायौ है।
छीन छीन छाक जैसे ग्वालन की चाखी तुम,
बीन बीन चामरहु, सुदामा को पायौ है।
'प्रेम' हू गरीब दार भात लैकै बैठ्यौ नाथ,
आऔ चाखि देखौ नाथ, स्वाद कछु आयौ है।।

समाज– चौपाई

जाप करत उर ध्यान धरायौ। गौर गोपाल दुबकि तहँ आयौ।।
लै लै भोग लगै जु पामन। बनतन विप्र के जाप न सुमरन।।
बार बार यह सुरति सतावै। बालक पुनि न आय जुठावै।।
छूट्यौ ध्यान जाप विसरायौ। उर अन्तर बालकहि समायौ।।

दोहा

बरबस अँखियाँ खुलि गईं, देख्यो बालक खात।
हाय हाय! सब व्यर्थ भयौ, यह कैसौ उत्पात।।

तीर्थ०–हाय रे निमाई। तैंने फिर गोपालजी कौ भोग जूँठो कर दियौ। बड़ौ लोभी लोलुप है।

निमाई–(हँसते हुए) निमाई नहीं! तेरौ गौर गोपाल! गौर गोपाल।

तीर्थ०–(मन्त्र मुग्धवत् निमाई को देखता हुआ) ओह! या बालक के चितवन में, मुसकान में, बोलन में न जाने कहा माया है जो मेरे विरक्त उदासीन चित्त कूँ हू मोहित कर रह्यौ है। हे गोपाल! यह तुम्हारी कैसी लीला? मेरे चिरकाल के त्याग–वैराग्य कौ फल कहा यही है–एक बालक के प्रति मोह?

समाज– सोरठा

सुनत विप्र को रौर, दौरि आये जगन्नाथ तहँ।
लख्यौ निमाई गौर, समुझि कुचाल गर्जत पुनि।।

जग०– चौपाई

भलौ पूत तू कुल में जायौ। विप्र वंश कौ नाम डुबायौ।।
देव द्विज गौर साधु सतावै। मनुज नहीं मनुजाद कहावै।।
ये लक्षण तोमें कस आये। भले पाँव पलना में दिखाये।।

समाज- **तीर्थ०**

हाथ छड़ी लै पाछे धाये। गहे हाथ विप्र समझाये।।
कहा करौ रिस छाँड़ो साँई। होनी कबहु न मिटत मिटाई।।
यह न बाल करनी मन मानौ। उर प्रेरक हरि इच्छा जानौ।।
मेरे मन कछु कामना होई। मधुर पदार्थ मिलैं रसोई।।
गौर रूप सों कृष्ण गोपाला। संयम सीख दीन्ह तत्काला।।

मिश्रजी! बालक पै क्रोध न करैं। यह वाकौ दोष नहीं। यह तो मेरेइ मन कौ दोष है। मेरे मन में अवश्य ही मधुर उत्तम पदार्थ भोजन करवे की इच्छा कहूँ छिपी होयगी। वाकूँ नष्ट करवे के तांई ही आपके बालक के रूप में मेरे गोपालजी ने ही मोकूँ संयम की शिक्षा दीन्ही है। यह तौ सब गोपालजी कौ ही कौतुक है।

समाज- बहु विधि युक्ति वचन सुनाये। मिश्र हृदय दुख मिटै न मिटाये।

जग०-मैं निस्सन्देह बड़ौ ही अपराधी हूँ कारण कि-

दोहा

भूखे आज अतिथि घर, पहर रात गई बीत।
मैं जानूँ मम पुन्य हू, गये आज सब बीत।।

चौपाई

गेह नहीं सो सियार को वासा। जाय अतिथि होय निराशा।।
प्रभु प्रसाद लेत जब देखौं। तबही धीरज अन्तर लेखौं।।

तीर्थ०-

कहत विप्र हरि इच्छा जानौ। दोष दुख अन्तर जनि ठानौ।।
अन्न भोग प्रभु आज न लैहैं। फल मूल सों ही रजनी बितैहैं।।

समाज-

सुनत वचन मिश्र मुरझाये। ठाड़े नत दुख भार दबाये।।
विश्वरूप तेहि अवसर आये। वयस नवीन सुरूप सुहाये।।
वदनचन्द्र शरद जिमि शोभा। वक्ष विशाल भुज लम्बित गोभा।।
हाथ जोरि प्रनामजू कीन्हे। विनवत वचन भक्ति रस भीने।।

विश्वरूप-

आप समान अतिथि घर आये। गेह देह पवित्र बनाये।।
पर दुखहारी सब सुखकारी। सहज सुभाव सुजन उपकारी।।

दोहा

लघु भ्राता निमाई मम, चंचल बड़ौ अशान्त।
हित अनहित समझै नहीं, निपट अज्ञ दुर्दान्त।।

सोरठा

लखि दास तन ओर, क्षमहु नारायण दोष सब।
मानौ विनय निहोर, एक बेर करौ पाक पुनि।।

समाज- **तीर्थ०**

मुग्ध विप्र भेंटि उर लाये। रूप शील अरु वचन लुभाये।।
धन्य कूख जननी कौ कीन्हौ। धन्य सुयश जनक कूँ दीन्हौ।।
धन्य भाग पितरन सुख पाये। धन्य धरनि कौ भार घटाये।।
पान करी तुव अमृत बानी। क्षुधा पिपासा सबै नसानी।।
काज कहा पुनि रन्धन कीन्हे। को करै साधन फल जब लीन्हे।।

विश्व०-हे देव! आपके भोजन कौ फल अपनी क्षुधा की शान्ति नहीं है वरन् गृहस्थ को मंगल ही फल है। अतएव हमारे मंगल के तांईं आप पुनः भोजन बनायवे कौ कष्ट स्वीकार करें। तबही हमकूँ सन्तोष होयगौ।

समाज- **विप्र**

अस कहि चरन गहै जु धाई। बोलै विप्र वचन अकुलाई।।
तजौ तजौ जनि गहौ जु चरना। करिहौं पाक मानि तुव वचना।।

समाज- सुनत वचन मिश्र प्राण जु पाये। 'हमरे हित प्रभु कष्ट उठाये।।

जग०-देव! आज हमारे सुख के तांईं आपकूँ इतनौ कष्ट उठामनौ परि रह्यौ है।

तीर्थ०-(हँसते हुए) कष्ट गोपालजी की रसोई बनायवे में कष्ट? यह हू तौ सेवा ही है और सेवा ही भजन कौ सार है सेवा माला-जाप सों कम नहीं, अधिक ही है। माला तौ अपने तांईं होय है और सेवा प्रभु के तांईं! वाह गोपालजी! वाह! आज रात भर तुम्हारी रसोई ही सही! तुमहू आज सोयबौ भूल कै खायवे के पीछै ही परे हौ। अच्छौ तौ ऐसौ ही सही! तुम्हारी जो इच्छा वही तौ होयगी।

जग०-भगवन्! अब आप भीतर सों द्वार बन्द करके रसोई बनावैं। और मैं स्वयं बाहर पहरौ दऊँगो। विश्वरूप! तुम जायकै अपनी माँ सों कहौ कि वह निमाई कूँ लैकैं द्वार बन्द करकै सोवै और तुमहू वहाँ द्वार पै सावधान रहियों।

विश्व०-जो आज्ञा पिताजी! (प्रस्थान)

(तीर्थवासी भीतर रसोई बनाने लगा। बाहर द्वार पर जगन्नाथजी और सेवकर ईशान बैठे हैं)।

जग०-ईशान! चौकस बैठ्यौ रहियो। सो मत जैयो। मैं थोरौ-सौ जाप कर लऊँ।

ईशान-हाँ हाँ! आप खूब माला फेरैं। मैं खूब चौकस बैठ्यौ हूँ। भीतर तेहू दरवाजा बन्द है। निमाई आय नहीं सकै है।

जग०-(माला-जप करते-करते ऊँघने लगते हैं)।

ईशान-मिश्रजी तौ झोका लै रहे हैं। लैन देऔ! मोकूँ नींद नहीं आयगी। आय हू गयो तौ डर कहा! भीतर दरवाजा बन्द है। विश्वरूप हू बैठ्यौ होयगौ। और निमाई हू कहा आवैगौ। वह तो सोय गयो होयगौ।

(ईशान भी लुढ़क पड़ता है)

समाज- **दोहा**

करत रसोई रैन कछु, गई अधिक बिताय।

हरीच्छा अस जानि विप्र, विनवत भोग धराय।।

तीर्थ०-(भोग अर्पण करते विनती) हे गोपालजी!

सवैया

तुम्हें बेर ही बेर पुकारत में भय पावत हौं गोपाल हरे।
तुम देव के देव हौ नाथ के नाथ मैं दीन कंगाल गोपाल हरे।।
सुख सों तुम सोवत हौ जदपि, निज मात की गोद गोपाल हरे।
अब 'प्रेम' पुकार सुनी करुनामय, आयकै खाओ गोपाल हरे।।

समाज-

अन्तर्यामी गौर कन्हाई। समय जानि निज माया चलाई।।
जहँ तहँ जन गन निद्रा आई। आये विप्र ढिंग गौर निमाई।।
या कृपा की बलि बलि जाई। भक्त बुलावत आवत सांई।।

इत ये भोजन करत लुभाये। उत विप्र कौ ध्यान नसाये।।
शंकित दीन्हे नैन उघारी। देख्यौ बालक सोई अगारी।।

तीर्थ०–

तीन बेर यह चरित निहारे। बूझत विप्र जिय कहा रे।।
देव गोपाल रहै उपवासी। उचित न बालक ऐसी हाँसी।।
बालक देश देश बहु देखे। तुम सम चंचल आजै लेखे।।
अरे बालक! तू मेरे पीछे क्यूँ पर रह्यौ है? छोड़ै क्यूँ नहीं?

निमाई–(हँसकर) मैं जाके पीछे परि जाऊँ तो परि जाऊँ हूँ। पकरि कै छोड़ दैनौ तौ मोपै आवे नहीं है। ओर–

चौपाई

तुमहू कैसे साधु कहाऔ। प्रथम बोलि पुनि दोष लगाऔ।।
तीर्थ०–तौ मैंने तोकूँ बुलायौ कब?
निमाई–मेरौ नाम लियौ जब! हरे कृष्ण गोपाल मन्त्र जप्यौ जब।

चौपाई

तुम बोल्यौ तब भोग लगायौ। दोषी अब कैसे ठहरायौ।।
तीर्थ०–(विस्मय पूर्वक)

दोहा

यह न होय बालक वचन, यह कोई अवतार।
बाल रूप में देव कोई, करत जु इहाँ विहार।।

सोरठा

परखत निष्ठा इष्ट, बाल रूप में देव कोई।
करन देव सन्तुष्ट, बूझत विनय भाव धरि।।

गजल

दया करो हे दयालु देव, बताओ यह क्या माया है।
क्षमा करो दोष सब मेरे, बताओ यह क्या०।।1
यह चाल बेढंगी, नहीं बालक की जैसी है।
मिसर घर बाल बन करके, बताओ कौन आया है।।2
दया इतनी कि आ करके, मेरे चावल को खा जाते।
हया इतनी कि पर्दे में, मुख अपना ले छिपाया है।।3

मेरी तो आँखों में कबसे, पड़े पर्दे पै पर्दे हैं।
मगर तुम अपने मुख पर तो, न डालो पर्दा भाया है।।4
समझ करके शिशु तुमको, जो कुछ कह डाला है मैंने।
क्षमा कर दरश दो अपना, हटालो 'प्रेम' माया है।।5

(साष्टांग प्रणाम)

समाज- **सोरठा**

कियौ दंडवत् प्रनाम, भये तिरोहित गौर शिशु।
प्रगट्यौ रूप महान, अष्ट भुज बालगोपाल कौ।।

निमाइ-देख-देख ब्राह्मण! मैं कौन हूँ। (प्रस्थान)

(अष्टभुज बालगोपाल की झाँकी निम्न छन्द अनुसार

समाज- **छन्द**

बाल नर हरि वपु दुराय, अष्टभुज रूप प्रगट्यौ।
शंख चक्र गदा औ पद्म, भुजन चारि मधि धर्‌यौ।।
पुनि एक कर नवनीत लिये हैं, दूजे कर सों खात हैं।
श्यामसुन्दर युगल करसों, मुरली मधुर बजात हैं।।
निज इष्ट को नित ध्यान में, जो रूप विप्र हिय फुरे।
सो रूप दिव्य लखत नैन, 'प्रेम' वश मूर्च्छित परे।।

(विप्र का मूर्च्छित हो पड़ना)

समाज- **(बंगला)**

अतिथि विप्रेर अन्न खाइलो तीन बार।
पाछे गुप्ते सेइ विप्रे कोरिलो निस्तार।।

(चौ० भा०)

बाल गोपाल-उठो विप्र! सावधान होऔ और अपने इष्ट के दर्शन करौ। तुम मोकूँ देख कै नहीं पहिचान सके या कारण मोकूँ तुम्हारौ इष्टरूप प्रकाशित करनौ पर्‌यौ।

तीर्थ०-(शनैः शनैः उठ, घुटने टेक स्तुति करना)

श्लोक

को वेत्ति भूमन् भगवन् परात्मन्,
योगेश्वरोतीर्भवतस्त्रिलोक्याम्।

क्व वा कथं वा कति वा कदेति,
विस्तारयन् क्रीडसि योगमायाम्।।
(भाग०)

तीर्थ०- **पद-वागेश्री**

तेरी माया सब ही भुलाया, सुर नर मुनि कोई पार न पाया।
को तुम कहा करौ कहा नाहिं, कब अवतार धरौ कब नाहिं।।
कैसी लीला रचौ जग माहिं, ब्रह्मा लौं यह पार न पाया।।1
भूल्यौ ब्रह्मा बालवच्छ चुराये, भूल्यौ इन्द्र जलधार बहाये।
सोइ जानै तुम जाकूँ जनाये, एक कृपा बिन भेद न पाया।।
भूल्यौ मैं हू तुमकूँ साँई, तुम नहीं भूले मोकूँ गुसाँई।
बार बार दर्शन दियौ आई, लै लै 'प्रेम' सों भोग लगाया।।3

जय हो भक्तवत्सल दीनबन्धो जय हो।

(साष्टांग प्रणति। बालगोपाल रूप का अन्तर्द्धान)

समाज- **चौपाई**

तबही रूप गोपाल दुरायो। रूप निमाई पुनि प्रगटायो।।

निमाइ-उठा ब्राह्मण! उठा! शान्त होऔ।

तीर्थ०-(उठकर निमाइ के चरणों को पकड़) क्षमा मेरे गौर गोपाल! क्षमा! मैंने नर बालक समझ कै आपकौ तिरस्कार कियौ और आपके प्रसाद कौ निरादर कियौ। याके लिए हे करुणामूर्त्ते! क्षमा!

निमाइ-दु:ख मत करौ विप्रदेव! यामें तुम्हारौ कोई दोष नहीं। भक्तजन जो कछु उल्टौ-सीधौ कर डारैं हैं, वाते मोकूँ सुख ही होय है। मैं तुमपै प्रसन्न हूँ। तुम अपनी इच्छानुसार कोई वर माँग लेऔ।

तीर्थ०-हे करुणासिन्धो! बिन माँगे ही आपके दर्शन पाय कै मैं सर्व प्रकार सों कृतार्थ है गयौ।

सवैया

विन माँगे ही मोती पाय लियौ फिर माँगू तो माँगू अब मैं कहा
जब अमृत सागर वास मिल्यो तव खारे जल की प्यास कहा।।
वर दैन चहौ तो देऔ यही तुम नदिया लीला करौ जु अहा।
देखूँ इन नैनन 'प्रेम' सबै, करि बास मैं नदिया धाम महा।।

निमाइ-तथास्तु! यह तौ तुम्हारी वही पुरानी प्रार्थना है। सुनौ-

गाना- **पद-यथाराग**

हम भक्तन के भक्त हमारे, यह नातौ टूटत नहीं प्यारे।। टेक।।
जनम जनम तुम दास मेरे हो, तुमकूँ दर्शन व्रज में दियौ हो।
भोग तिहारे खाय गयौ हो, नन्दभवन जब तुम पग धारे।।1
तुमकूँ मुक्ति की चाह नहीं है, लीला दरशन चाह रही है।
पूरी करूँ मैं चाह वही है, जो-जो भक्त 'प्रेम' हिय धारे।।2

ब्राह्मण देव! तुम्हारी सदैव यही इच्छा रही है कि जहाँ-जहाँ मेरौ अवतार होवै वहाँ-वहाँ तुम मेरी लीला देख सकौ। याहि कारण मैं तुमकूँ यहाँ लै आयौ हूँ। अब तुम आनन्द सों यही नवद्वीप में रह कै मेरी लीला के दर्शन करौ।

तीर्थ०-जय हो भक्तवाञ्छा कल्पतरु भक्त-भक्तिमान भगवन्! जय हो आपकी, आपकी दया की, और आपके पकड़ की। परन्तु नाथ! गोकुल में तौ आपकौ श्याम वर्ण हो, यहाँ तौ गौर वर्ण के दर्शन है रहे हैं।

निमाइ-विप्रदेव! भक्त के रूप में लीला करवे के ताईं यह मेरौ प्रच्छन्नावतार है।

श्लोक

अहमेव कलौ विप्र! नित्यं प्रच्छन्न विग्रहः।
भगवद्भक्तरूपेण लोकान् रक्षामि सर्वदा।।

गजल

अवतार मेरौ है यह छद्मावतार।
भक्त के रूप में भगवदवतार।।
करूँगो मैं निज नाम कीर्तन प्रचार।
बहाऊँगो मैं नाम प्रेम की धार।।
रहै जब तक मेरौ यह गौरावतार।
न कहनौ काहू सों, नहीं दऊँगौ मैं मार।।

(बंगला)

जावत थाकये मोर एइ अवतार।
तावत् कोहिले कारे कोरिमु संहार।। (चै० भा०)
कहौगे तो मार डारूँगो! सावधान।

तीर्थ०- **गाना-छाया-केदार**

जय शचीनन्दन गौर गोपाल।
जय जय नदिया निमाइ लाल।।
अलकावली घन मंडित भाल, चमकत चपल ज्यूँ घन माल।
सुख बरसत दुख भंजन जाल, जय विश्वम्भर मोहन लाल।।

(साष्टांग प्रणाम)

निमाई-हरि बोल! (कहते हुए भाग जाते हैं)

समाज- **दोहा**

प्रेममत्त करि भक्त कूँ, गये जु भाजि निमाई।
विप्र गौर अधरामृत, पावत महिमा गाई।।

तीर्थ०-(प्रसाद की थाल सिर पर रख प्रेमोन्मत्त हो गाता-नाचता है) अहा! यह मेरे प्रभु कौ प्रसाद-उनकौ साक्षात् अधरामृत। अब यह अन्न अन्न नहीं है-

गाना- **पद (झूलनो)**

अन्न नहीं अब पंच तत्त्व कौ, अन्न नहीं यह कहावै।
परस पाय हरि अधरामृत कौ, अधरामृत बनि जावै।।
पावै जो कोई माया नसावै, चिन्मय दिव्य बनावै।
योग ज्ञान करि जो नहिं पावै, 'प्रेम' सहज मिल जावै।।

भागवत में उद्धवजी भगवान् श्रीकृष्ण सों कहैं हैं कि हम तौ आपकी प्रसादी माला, वस्त्र आभूषण कूँ, धारण करकै और आपकी जूँठन कूँ पाय कै माया कूँ सहज ही में जीत लेंगे-

'उच्छिष्ट भोजनो दातास्तव मायां जयेमहि'

गाना- **पद-विहाग**

हम जूँठन खात जिये (हाँ) हम नन्दनन्दन मोल लिये।।
यम के फाँस काट मुकराये, अभय अजात किये।
सब कोई कहत गुलाम श्याम के, सुनत सिरात हिये।।
सूरदास प्रभु जू के चेरे, जूँठन खात जिये।।

उद्धवजी कहैं हैं कि-

कवित्त

पीवेंगे पवन नहीं, पावेंगे प्रसाद हम,
जायँगे न वन माँझ, रहेंगे भवन में।
बनैंगे न नागा हम, पहरैंगे पीत पट,
शीश ना मुड़ावैं नित, तेल देवैं केशन में।
मूँदैंगे न आँख हम, आँखि खोलि देखैं मुख,
राख ना मलैंगे धरैं, भूषन अंगन में।
माया के गुलाम ही के, नाक में नकेल रहै,
मायापति कृष्णदास, नाचैं 'प्रेम' रंगन में।
हम जूँठन खात जिये।।

(बैठकर प्रसाद पाने लगता है)

समाज-

चौपाई

आसन बैठि विप्र बड़भागी। लेत महा प्रसाद अनुरागी।।
दुर्लभ अधरामृत रस पायौ। हर्ष पुलक कम्प तन छायौ।।
जागे जगन्नाथ तहँ आये। जेंमत विप्र लखि सुख पाये।।

जग०-

देव क्षमहु सब चूक हमारी। बड़ी निशा भई सेवा तिहारी।।

तीर्थ०-

विप्र कहत हौं पूरन कामा। भयौ आज ही तुम्हरे धामा।।
अस प्रसाद मैं कबहू न पाये। तन मन जीवन शुद्ध बनाये।।
आज सफल तेरे व्रत तीरथ। भवन तिहारौ तीरथ तीरथ।।
तुम सम बड़भागी नहिं कोई। जाके सुवन अस द्वै द्वै होई।।

दोहा

विश्वरूप विश्वम्भर, राम कृष्ण सम जोरि।
देखौं अब नदिया बसि, यही 'प्रेम' निहोरि।।

जग०-

सोरठा

भई न कछु पहुनई, दया दृष्टि करौ दीन हम।
बीती निशा अधिकई, करहु देव विश्राम अब।।

(जगन्नाथ आदि चले जाते हैं)

तीर्थ०-कीर्तन धुन-कृष्ण गोपाला, गौर गोपाला

(पटाक्षेप)

इति तैर्थिक विप्र प्रति लीला।

☙❖❧

बाल-लहरी **षष्ठ कणामृत**

बाल नृत्य माधुरी-सर्वजनाकर्षक

(चतुर्थ वर्ष की लीला)

समाज- **पद**

जै जै जै श्रीबाल निमाई, जै जै जै शची माई।
जै जै जै सब सहचर बालक, जिन संग नाचै गाई।।
जै जै लीला गौरहरि की, मधुर सकल मनोहारी।
बाल, कौमार, पौगंड, किशोर, लीला मंगलकारी।।
बालचरित तिनहू में सब विधि, सहज प्रिय सुखकारी।
नित्य नवीन अनौखी रचना, रचत हैं नदिया बिहारी।।
कबहू घर आँगन में नाचैं, लखि लखि शचि सुख पावैं।
कबहू बालक भीर लै गलियन, नाचैं हरि हरि गावैं।।

(प्रवेश निमाई गाते हुए)

निमाइ- **गजल**

जागे जागे हरिनाम जागे रे।
मेरे जिय बिच आप ही जागे रे।।
मैं जानूँ नहीं यही जानै रे। मोहिं आय गरे सों लगानै रे।
मैं टेरूँ नहीं यही टेरै रे। मोहिं बैयाँ पकरि झकझोरै रे।।
मैं बोलूँ नहीं यही बोलै रे। 'प्रेम' आपहि हरि हरि बोलै रे।।

कीर्तन धुनि-हरि बोल हरि हरि बोल रे (कीर्तन-नृत्य)

(बालकों का क्रम से प्रवेश और प्रश्नोत्तर)

बालक 1-ओरे निमाई! तुई एका एका नाच्छिस् गाच्छिस्? आमि ओ नाच्बो गाबो! मैं हू नाचूँगो गाऊँगो।

निमाइ–आय भाय आय। (हाथ पकड़) हरि बोल हरि बोल०।

बालक 2–ओरे निमाई! आमार ओ नाच्ते गाइते इच्छे होच्छे। मेरे हू मन नाचवे गायवे कूँ करै है।

निमाइ–आय भाय! तुइ ओ नाच् गा। (हाथ पकड़) हरि बोल!

बालक 3–बाह बाह बाह! बेश् नाच गान जुटे छे! मोरि मोरि! की सुन्दर नृत्य! बलिहारी जाऊँ। कितनौ सुन्दर, कितनो प्यारौ है यह निमाई और याकौ नृत्य! निमाई! मोकूँ हू शामिल कर लै।

निमाइ–अरे यहाँ नाचैगौ–गायगौ तो पाठशाला के तांई देर है जायगी। गुरुजी मारेंगे।

बालक 3–तौ मार खाय लऊँगो पर नाचे गाये बिना तौ जाऊँगो नहीं। हरि बोल हरि बोल (शामिल हो जाता है)।

(दो चार बालक और दौड़े आते हैं और कीर्तन नृत्य में मिल जाते हैं)।

छोटा बालक 4–आरे आरे! ए किसेर गंडगोल? किसेर गंडगोल?

निमाइ–ए गंडगोल नय। ए जे हरि हरि बोल। तू हू आजा।

(बालक गोल मंडल बना लेते हैं। निमाई मध्य में)

निमाइ कीर्तन धुन–हरि हरि हरि बोल हो।

समाज– **दोहा**

गोरस वश नाचे बिरज, अब नाचत वश नाम।
तब बजाई मुख बांसुरी, अब हरि गोविन्द राम।।

समाज– **पद**

सब शिशु मिलि देत करताली,
हरि हरि बोले नाचै हो।
गले वनमाला शीश चूड़ा, चरन नूपुर बाजै हो।
हरि हरि हरि बोल हो।
कर कर गही मंडल रचहीं, मध्य निमाइ नाचै हो।
भुजा उठाय, पग चलाय, करि हलाय नाचै हो।
हरि हरि हरि बोल हो।।

निमाई एवं बालक वृन्द

पद- **जैंजैवन्ती-तिताला**

गोविन्द गोपाल गिरिवर धारी।
यमुना के नीरे तीरे धेनु चरावै, ओढ़े फिरै वह कामरी कारी।।1

अन्तरा

यशोदा मैया वाकूँ माखन खवावैं,
गोपी पिवावैं वाकूँ नौन मठा री।
नन्द बाबा वाकूँ काँधे चढ़ावैं,
दाऊ दादा वाकी करैं रखवारी।।2
गोपन कौ वह लाल कन्हैया,
गोपिन कौ वह रास बिहारी।
ब्रह्मा शिव वाकी अस्तुति गावैं,
व्रजवासी गावैं 'प्रेम' की गारी।।3

(पूर्व धुनि) हरि हरि हरि बोल हो।

समाज- **पूर्वपद**

प्रेम पूरित धरनि ढुरत निमाइ चाँद लोटै हो।

उठि कें भेंटत सो जन लोटत, आनन्द धार छूटै हो।। हरि०

वृद्ध पंडित मन गरबित, मारग चलत ठाड़े हो।

(प्रवेश-पाठशाला गमनकारी पण्डितों का दल भट्टाचार्य, साहित्यरत्न और न्याय वागीश)।

साहित्यरत्न-भट्टाचार्य मों'शाय! कितनौ मोहन है यह मिश्रनन्दन निमाई! यह रूप, यह रंग, यह अंग, यह ढंग यह बोल चाल, यह सौन्दर्य वह माधुर्य सब मधुर मधुर मधुरातिमधुर है। अहा यह निमाई कहा है स्वर्ग कौ कुसुम है, कोई गन्धर्व-बाल है।

भट्टाचार्य-अथवा तौ चारों ओर ग्वाल बाल और मध्य में नन्दलाल! तबही इतनौ मधुर, इतनौ मनोहर है।

साहित्य०-अथवा तौ चारों ओर तारागण और मध्य में चन्द्रमा! मानों तौ चन्द्रमा ही भूतल पै उतर कै-नृत्य कर रह्यौ है और रसामृत बरसाय रह्यौ है।

भट्टा०-साहित्यरत्न मो'शाय! मैं तो या निमाई कूँ नाचतो-गातो देख लऊँ हूँ। तो पाठशाला जानौ ही भूल जाऊँ हूँ! कितनौ सौन्दर्य-माधुर्य भर्यौ भयौ है या नन्हे-से बालक के अंगन में! मेरे तौ नयन-मन-प्राण मुग्ध है जायँ हैं। और याकी 'हरि बोल' ध्वनि सों तौ मेरे हृदय-यन्त्री के तार बज उठै हैं। मेरी देह पुलकायमान है जाय है यह बालक है कै सम्मोहन मन्त्र है।

साहित्य०-यथार्थ है भट्टाचार्य जी।

श्लोक

उक्तं हरेननमि परं मनोहरे नृणां प्रगीतं बहुभिस्तु किं पुनः।
मिष्टस्वरैऽर्भगणैश्च किन्तरां, श्रीगौरचन्द्रेण युतैस्तु किन्तमाम्।।

एक तौ हरि कौ नाम स्वतः परम मधुर मनोहर है, ताहु पै यदि पाँच जने मिलकै मधुर गावैं तौ औरहू मधुर मनोहर लगै है और ताहु पैहु यदि मधुर स्वर वारे बालक गावैं तौ और हू अधिक मधुर लगै है और फिर यदि बालक के सहित गौर चन्द्र गावैं तौ वह मधुर, मधुर, मधुरातिमधुर बन जाय है।

भट्टा०-तबही तौ हमारे मोहल्ले भर में याकी चर्चा है। बाल-बृद्ध, स्त्री-पुरुष सबन कूँ यह निमाई अत्यन्त प्रिय लगैं हैं। स्त्रियाँ तौ घर के काम-धन्धान कूँ छोड़-छोड़ कै याके मुखचन्द्र की चकोरी बनी फिरैं हैं। और बालक सब कछु भूल के भौंरान की भाँति या गौर कमल के संग नाचते डोलैं हैं।

न्याय वागीश-(व्यंग पूर्वक) और आप जैसे भट्टाचार्य और साहित्याचार्य महामहोदय गण अपनी पाग और पदवी कूँ भूलकै एक बालक कौ मुख देखवे में ही वैकुण्ठ कौ दिव्य सुख उपभोग कर रहे हौ! वाह! धन्य है!

साहित्य०-और आप हमारे संग यहाँ काहे कूँ ठाड़े हौ न्याय वागीश मोशाय।

न्याय०-मैं ठाड़ौ हूँ आप श्रियन के भंग के रंग की तरंग कूँ देखवे! आप महामहोपाध्यायन कौ खोल ही ढीलौ पर्य्यौ है, मनुवा राम तौ वैसी ही रंगीलौ-रसीलौ, छैल-छबीलौ है। रूप रंग की दुनियाँ कौ चस्का छूट्यौ नहीं है। अरे ऐसी ही तबियत टूटै है तौ जाऔ न, नाचौ, गाऔ, लूटौ आनन्द। यहाँ ठाड़े-ठाड़े काहे कूँ होंठ चाट रहे हौ और हाथ मल रहे हौ?

निमाइ बालवृन्द-हरि हरि हरि बोल हो।

साहित्य०–न्याय वागीश मोशाय! तुम चाहे तानौ मारौ कै हँसी उड़ाऔ परन्तु मेरौ मन तौ अब मचल रह्यौ है–बालक बनवे के तांई। हाथ उठाय कै नाचवे–गायवे के तांई हरि बोल! हरि बोल (हाथ उठा गाता नाचता हुआ मंडली में मिल जाता है)।

न्याय०–(नाक–भौं सिकोड़ते हुए) भावुकता! सोलह आना भावुकता! मन भर भावुकता। साहित्याचार्य जो ठहरे। दिन–रात काव्य, अलंकार, नायक–नायिका, रस, भाव की कोमल चर्चा सों इनको चित्त हू गर–गर के सार सत्त्वहीन पिच्छल, दुर्बल है गयौ है। अतएव भाव के झकोरन में उड़ते डोलैं हैं!

भट्टा०–और आपको चित्त कैसौ है? तबिअत कैसी है?

न्याय०–मैं हूँ न्यायाचार्य तर्क वागीश! तर्क की तुला पै मुक्ति प्रमाणन के बाट–बटखरान सों पदार्थन कूँ तौलनौ ही मेरौ दैनिक कार्य है। मेरी बुद्धि सुमेरु समान अटल अचल है। ऐसे–ऐसे भावन की हजारन लहर वापै टकराय कै बिखर जायँ हैं, विलीन है जायँ हैं।

निमाइ–मण्डली–हरि हरि हरि बोल हो।

भट्टा०–न्यायवागीश जी! मेरौ चित्त तौ इनके कीर्तन कूँ सुन–सुन करकै पिघलतो जाय रह्यौ हैं मैं हूँ हाथ उठाय कै नाचूँगो–गाऊँगो–हरि .... (जाना चाहता है)।

न्याय०–(हाथ पकड़ कर खींचते हुए) हैं हैं! कहाँ जाओ हौ। पागल मत बनौ। नेक अपनी मूँछ देखौ और शास्त्र की पूँछ देखौ–व्याकरण–साहित्य–पुराण–ज्योतिष–मीमांसा–सांख्य–वेद वेदान्ताचार्य भट्टाचार्य महामहोपाध्याय। इतनी लम्बी चौड़ी उपाधिधारी है कै बालकन के संग नाचौगे गाओगे तो दुनिया कहा कहैगी?

भट्टा०–चूल्हे में जाय दुनियाँ और भाड़ में जाय पंडिताई! हृदय सूख चल्यौ, नेक भीग लैन देऔ। बोझ कूँ फैंक कै हल्को है जान देऔ। कैद से छूटने देऔ बूढ़े ते बालक बनन देऔ और कह लेन देऔ ह ....

न्याय०–(भट्टाचार्य के मुख पर हाथ रखते हुए) तो घर पै कह लीजौं। किवाड़ बन्द करकै बन्द कमरे में नाच लीनौं–गाय लीजौं। यहाँ कूदौगे–किल्लाऔगे तो दुनियाँ तारी बजायगी, हँसी उड़ायगी।

भट्टा०–उड़ायवे देऔ। जी चाहै कहबै देऔ। मैं तो नाचूँगौ–गाऊँगौ, आनन्द लऊँगौ।

श्लोक

परिवदतु जनो यथा तथायं, ननु मुखरो न वयं विचारयामः।
हरिरस मदिरा मदातिमत्ता, भुवि लुठाम नटाम निर्विशाम।।

हरि बोल, हरि बोल (हाथ उठा नाचने लगता है)।
(बालक-वृद्ध पण्डित सब नाचने लगते हैं)

कीर्तन ध्वनि-हरि हरि हरि बोल हो।

समाज- **पूर्वपद**

वृद्ध पंडित मन गरबित, मारग चलत ठाड़े हो।
भुलाय ख्याल होय के बाल, नाचत लाज काढ़े हो।।
हरि हरि हरि बोल हो।।

न्याय०-तौ ... मैं ही अब या शर्म-धर्म कूँ लैकै कहा करूँ बड़ेन के पीछे छोटे हू जांय महाजनो येन गतः स पन्थः ये सद्भाव में नाचैं हैं, तौ मैं अभाव में ही नाचूँ ये साँचे तौ मैं झूँठौ ही सही!

झुठमुट खेले सचमुच होइ। सचमुच खेलै विरला कोई।
असल से सारा नकल संसारा। नकल के भीतर असल कबीरा।।

हरि बोल! हरि बोल! (नाचने लगता है)
(प्रवेश दो तीन नदिया नागरी खाली कलसा काँख में दबाये)

समाज-

लैकै गगरी, सगरी नागरी, निरतन ललचात हो।
ठाड़ी डगरी, मीड़ें कररी, लाज तजि ना जात हो।।

नागरी 1- **गाना-भैरवी-केहरवा**

शची जू को छैया, हमारे मन भाय गयौ।
केशर तिलक भाल पर सोहै, घुंघरारी अलकैयाँ।।
नासामणि अति सुन्दर राजै, मन्द मन्द मुसकैया।
शचीजू के आंगन मध्य नाचत, लै लैकै फिरकैयाँ।।
डगर डगर में करत कीरतन, हरि हरिनाम लुटैया।
'सूरज' शरन तिहारी आई, कीजै बेगि सहैया।।

नागरी 2-

आलो, एमन् पागिलिनी होये की गान धोरे छिस्।
जल आन्ते गंगाय जाबि ना! अरी तू बावरी बनकै

कहा गीत गाय रही है! जल भरबै गंगाजी नहीं चलैगी।

नागरी 1-(निमाई के प्रति इंगित करती हुई) ओइ देख बोन्! ओइ देख! शचीर दुलाल आमाके पागल कोरेछे (फिर गाने लगती है) शची जू को छैया, हमारे मन०।।

ना० 2-अरी! तू तौ फिर गायवे लग गई! लोक लज्जा सबै बहाय दई! बस कर और चल गंगाजी।

ना० 1-(अनसुनी करके गाती रहती) केशर तिलक भाल०

ना० 2-हाय! हाय! यह तौ साँचै कूँ बावरी है गई! अरी बहन मान जा। जो तू अपनौ भलौ चाहै तौ-

गाना- **कालिंगड़ा-केहरवा**

अरी मत गौर निहारौ री।
मैं साँची कहूँ तुम्हरे हित की, तुम मति ना निहारौ री।।1।।
एक बेर जो कहूँ लखि पैये, तौ घर लौट कबहू न जैये।
अपने कुल की नेक मन माँहिं विचारौ री।।2।।
जो सुत पति में प्रेम तिहारौ, निज घर बार लगत है प्यारौ
तो 'सूरज' शचिनन्दन सों, करि रहौ जु किनारौ री।।3।।

(गाती गाती चली जाती है)

नागरी 1-हाय हाय! मैं पुरुष न भई जो निमाई के संग-संग डोल्यौ करती! हम स्त्रिन की लज्जा कूँ धिक्कार जो या सुख सों वंचित ठाड़ी-ठाड़ी तरस रहीं है।

समाज-

ठाड़ी डगरी मींड़ें कर री, लाज तजि ना जात हो।

निमाइ-मण्डली-धुनि-हरि हरि हरि बोल हो।

(प्रवेश दो वैष्णव सन्त-रामदास और कृष्णदास)

रामदास-सीताराम धनुषधारी।

कृष्णदास-राधेश्याम मुरलीधारी।

रामदास-(स्वर ऊँचा कर) सीताराम धनुषधारी।

कृष्ण०-(स्वर और ऊँचा कर) राधेश्याम मुरलीधारी।

राम०-सीताराम सीताराम-राम-राम-राम कहो। हमारे राम बड़े हैं।

कृष्ण०-राधेश्याम राधेश्याम-श्याम-श्याम कहो। हमारे कृष्ण बड़े हैं।

राम०-हमारे रामजी बड़े हैं।

कृष्ण०-कैसे बड़े हैं बताओ तो मानें।

राम०-सुनो! कान खोलकर सुनो-

पद

कृष्ण उपासक सुन रे भैया, बड़े हमारे राम रमैया।

कृष्ण०

राम उपासक सुन रे भैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।

राम०

चन्द्रवंश कृष्ण तुम्हारा, सूर्यवंश में राम हमारा।
सूर्य देख शशिकला छिपैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

सूर्यवंश में राम तुम्हारा, चन्द्रवंश में कृष्ण हमारा।
दे रवि ताप, शशि मोद बढैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण जन्म पितु मातु डराया, राम जन्म अवधहिं सुख पाया।
छिपकर कृष्ण नन्द घर गइया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

कायर निज घर बासा करते, शूरवीर सब जगमें विचरते।
ब्रज कूँ कृष्ण आनन्द दिवैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण तुम्हारा प्रजा कहाया, राम हमारा राजा सुहाया।
राजा प्रजा में अन्तर भैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

अयोध्या के नृप राम कहाये, अज सुरेश सों कृष्ण पुजाये।
कहाँ नरलोक कहाँ सुरपुर सैंयाँ, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण कूबरी नारि उबारी, राम शिला रिषि नारि उद्धारी।
जड़ चेतन बहु अन्तर भैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

शिला नारि इक राम उबारी, द्वै जड़ तरुवर कृष्ण उद्धारी
यमलार्जुन के मोक्ष करैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण जरासन्ध रण तजि दीना, राम रावण रण पीठ न दीना।
भागन जूझन भेद बहु भैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

राम सहायक कपि दल लीना, तब रावणहिं पराजय कीन्हा।
कृष्ण सहाय बिन कंस हनैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण गोवर्धन आप उठाया, राम ताहि हित कपिहिं पठाया।
सेवक काज स्वामी न करैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

सागर सेतु राम बँधाया, कृष्ण द्वारिका नगर बसाया।
पुल से नगर काज बड़ भैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

राम०

कृष्ण लै तन्दुल तब धन दीन्हा, राम विभीषण राजा कीन्हा
कामी अकामी बहु अन्तर भैया, बड़े हमारे राम रमैया।।

कृष्ण०

राम सुपनखा नासा छेदी, कृष्ण पूतनहिं शुभ गति देदी।
कृष्ण अरिहू के मुक्ति दिवैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

कृष्ण०

राम न पूरी तियनकी आशा, कृष्ण बुझाई सबकी प्यासा।
कृष्ण 'प्रेम' दै काम नसैया, बड़े हमारे कृष्ण कन्हैया।।

निमाइ-मंडली-हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।

कृष्ण-देखो ये बालक हू हमारे कृष्ण कौ कीर्तन कर रहे हैं।

निमाइ-मण्डली-हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

राम०-ये तो हमारे राम कौ कीर्तन कर रहे हैं।

निमाइ-(समीप आ दोनों कौ हाथ पकड़ कहनौ) नाचौ-गाऔ बाबा-हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

दोनों सन्त-(गाते हुए संकीर्तन में शामिल हो जाते हैं)।

कीर्तन धुनि

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।
हरि बोल हरि बोल०

समाज- पूर्वपद

हरि हरि बोल, कीर्तन रोल, सुनि शचि उठि धाई हो।
अति रिसाय, कही सुनाय, ऊधम सह्यौ न जाय हो।।

(प्रवेश शची माता)

शची-ओ हो हो! आज तौ घर के आगे गली में ही यह धूम मच रही है। बालक तौ बालक बड़े-बूड़े हू नाच रहे हैं। पण्डित नाच रहे हैं, साधु बाबा नाच रहे हैं और ये छोरी हू ठाड़ी देख रही हैं। यह निमाई सबन कूँ पागल कर देय है। याकूँ कैसे छिपाय कै राखूँ। (आगे चलकर) अरे बालकौ! भागौ यहाँ ते! पाठशाला जानौ छोड़ कै यहाँ नाच रहे हौ। तुमनै ही मेरे निमाई कूँ बावरौ बनाय दियौ है। भाग जाऔ! नहीं तौ पीटूँगी।

बालक वृन्द-पालाय रे पालाय! शची माँ मारवे, मारवे (भाग जाते हैं)।

शची-(स्त्रियों प्रति) अरी बेटियौ! तुम सब लज्जा कहाँ छोड़ आईं जो बीच मार्ग में पुरुषन के सामने ठाड़ी हौ! जाऔ अपनौ काम करौ! पगली मत बनौ। (साधु-पण्डितों के प्रति) महाराज! मैं आप सबन कूँ प्रणाम करूँ। मेरे या बालक कूँ आशीर्वाद देऔ। याकूँ काहू की नजर न लगै। यह सदा कुशल रहै।

भट्टाचार्य-देवि! यापै काहू की नजर कहा लगैगी याही की नजर सबकूँ लग जाय है। हम पै हू लग गई। सो पाठशाला जायवौ ही भूल गये।

कृष्णदास-और हम अपनौ विचरनौ भूल कै यहीं अटक गये।

साहित्य०-धन्य है देवि! तुम्हारे कूँख कूँ! यह तुम्हारौ अवश्य ही महा विलक्षण पुरुष होयगौ। भगवान्! याकौ लाल सदैव मंगल करैं। चलौ भट्टाचार्यजी! चलैं पाठशाला।

रामदास-माई! तुम्हारे बालक के अंग-प्रत्यंग में महापुरुष के लच्छन झलक रहे हैं! यह तुम्हारी अमर कीर्ति फैलावैगौ।

शची-महाराज! सात-सात सन्तान खोय कै द्वै लाल मोकूँ मिले हैं। आशीर्वाद देऔ! इनकी दीर्घायु होवै।

राम०-दीघार्यु कहा चिरंजीवी अमर होंगे माई! रामजी सब प्रकार सों बालक कौ कल्याण करेंगे! अब चलैं हैं माई! सीताराम।

कृष्ण०-राधेश्याम माई (दोनों का प्रस्थान)।

समाज- **पूर्वपद**

सुनि शची बैन, उघरे नैन, भागे लोग लुगाई हो।
अंकम लाई, कहति माई! तजौ यह पगलाई हो।।

शची-(निमाई के अंगों को झाड़ती-पोंछती हुई) हाय हाय निमाई बेटा! देख तौ यह कमल सों मुख धूर सों भर गयौ है, कुम्हलाय गयौ है! बेटा! तू इतनौ नाचतौ-गामतौ क्यूँ डोलै है। या पागलपने कूँ छोड़ दै मेरे लाल।

निमाइ- **पूर्वपद**

मैं नहीं पागल ये सब पागल, जेतिक लोग लुगाई हो।
आवत मो ढिंग, कहत 'प्रेम' हित, हरि हरि बोल सुनाई हो।।

माँ! मैं पागल नहीं हूँ, पागल तौ ये सब हैं। मोय खेलतौ देख, ये मोकूँ घेर लेय हैं और 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहि-कहि कै मोकूँ नचावैं हैं।

शची-बकन दियौ कर उनकूँ, तू मत नाच्यौ कर। वे आप ही चुप है जायँगे! हाय हाय! तैंने धूर में लोट-लोट कै अपनी कंचन देह कैसी मैली कर लीनी है! यह मोते देखी नहीं जाय है।

निमाइ-माँ! मैं कहा करूँ? जब कोई 'हरि बोल' कहै है तौ मोपै रह्यौ नहीं जाय है। मैं हू 'हरि बोल' कहि कै नाचवे लग जाऊँ हूँ! यामें मेरौ कहा दोष है।

शची-सो तौ मैं जानूँ हूँ। तबही तौ तोकूँ 'पागल' कहूँ हूँ। पर बेटा! तू बाहर मत खेल्यौ कर। यहीं घर आँगन में ही खूब खेल-कूदकर लियौ कर। यहाँ भीतर आयकै कोई तोकूँ नचायँगे सतायँगे नहीं।

निमाइ-(झट मुख फेर नीचे सिर कर चुप खड़े हो जाते हैं)।

समाज- **दोहा**

सुनत ही दीठ पीठ करि, ठाड़े भये निमाई।
फिरि फिरि देखन शची चहै, मुरि मुरि मुखहिं दुराय।।

शची-अरे! बुरौ मान लियौ कहा? अच्छौ अब कछु नहीं कहूँगी! पर मुख दिखाय दै।

निमाई-(सिर हिलाकर) ऊँ हूँ।

शची-दिखावैगौ नहीं? (निमाई) ऊँ हूँ!

शची-बोलैगौ हू नहीं? (निमाई) ऊँ हूँ!

शची- **चौपाई**

अबहि लै किन बोलि निमाई। जब लगि हौं या तन में माई।।
'मा मा' कहि पुनि रोदन करिहै। तबहौं कित बोलन कूँ पैहै।।

निमाई-(फिर भी सिर हिला देते हैं)।

शची-अच्छौ तौ मत बोल-

'जाय डूबौं अब गंगा माहिं' (चलने लगती)

समाज-
सुनत दौरि गौर गही बाँहि।
लिपट गये लोचन भरि आये। 'मा मा' कहि मृदु बोल सुनाये।।

निमाइ-
बड़ौ होय पंडित बनूँ भारी। कीरति जग में बाढ़ै तिहारी।।
मति जिय दुख करैरी मैया। यह तौ मैं इक खेल रचैया।।

समाज-
या विधि जननी नेप बढ़ावैं। बाल चरित मधुर प्रगटावैं।।
बलि बलि बाल विनोद निमाई। आश 'प्रेम' कना इक गाई।।

कीर्तन धुन

जय शचीनन्दन जय गौर हरि।
जय गौरचन्द्र नदिया विहारी।।

(शची माता आरती उतारती है)
इति बाल नृत्य माधुरी लीला।

ᏈᏋ❖ᏊᏗ

बाल-लहरी **सप्तम कणामृत**

एकादशी नैवेद्य भक्षण

(चतुर्थ वर्ष की लीला)

दृश्य-प्रातःकाल। शची माँ निमाई को कलेऊ करा रही हैं।

समाज- **पद**

प्रातः कलेऊ करावति मैया।
कौर कौर सानि सनेह रस, पोषति प्रानन छैया।।
माखन पीठा छाना मिठाई, केला मूरी दहैया।
खावत जात मधुर बतरावत, लागत अतिहि सुहैया।।
बड़ो होय टोल जब खोलौं, बहु सुख दैहौं मैया।
कंठ लाय सुत 'प्रेम' उमंग हिय, पुनि पुनि लेत बलैया।।

निमाइ-माँ! जब मैं बड़ो होऊँगो न, तब मैं खूब पढूँगो। विस्सु दादा ते हू अधिक पढूँगो और पण्डित बनूँगो-सबन ते बड़ो! फिर टोल खोलूँगो और तुमकूँ खूब सुख दऊँगो।

शची-सुख तो जब देगौ तब देगौ, या समय तौ बेटा! तू अपने ऊधमन ते कबहू-कबहू बड़ौ ही दुःख देय है। वा दिना तैंने वा घर आये अतिथि देव कूँ कितनौ सतायौ! अरे! बड़े बूढ़ेन के आशीर्वाद सों आयु, विद्या, यश मिलै है। तू तौ उलटौ उनकूँ दुःख देय है। इन लच्छनन ते तू पण्डित कैसे बन जायगौ? कीर्तनीया भलें ही बन जाय!!

निमाइ-(भोजन फेंक कर रोने लग जाते हैं)।

शची-लैं री लै! बुरौ मान लियौ! रोयवे लग्यौ! निमाई! बेटा! खामत में रोयौ नहीं करैं हैं। चुपकर लाला! लै खा! अबही तैंने कछु खायौइ नहीं

है। लै यह सन्देश लै! यह केला लै! यह रसगुल्ला लै! (निमाई सब फेंक देता है)।

समाज- **चौपाई**

मानत नाहिंन मात मनाये। रोवत अधिकै नैन बहाये।।
मात डरपि हरिबोल सुनाई। सुनि रोवत अधिकै अधिकाई।।

शची-बड़ौ जिद्दी बालक है। रोमत-रोमत बेहोश है जायगौ पर मानैगौ नहीं! हाँ ठीक है 'हरि बोल! हरि बोल'।

निमाई-(और जोर से रोने लगता है)।

शची-हाय हाय! आज तो 'हरि बोल' मन्त्रहू व्यर्थ है गयौ। यह तौ और अधिक रोवै है। अरे मेरे लाल! तोकूँ कहा चाहिये बताय तौ सही! तू जो माँगैगौ सोई दऊँगी पर चुप है जा बेटा।

निमाई-(चुप होकर) जोगी? जो मैं माँगूँ सो देगी?

शची-हाँ बेटा! दऊँगी! दऊँगी!

निमाई-तौ ला एकादशी कौ भोग दै। आज एकादशी है। मैं तौ ठाकुर कौ भोग खाऊँगो।

शची-मैं भोग कहाँ ते लाऊँ! हमारे तौ एकादशी व्रत कोई राखै नहीं है।

निमाई-हमारे परौसी जो जगदीश और हिरण्य नाम के ब्राह्मण हैं उनके घर ते लाय दै। वे व्रती हैं। उनने फलाहार बनायौ है। सो मैं खाऊँगो।

चौपाई

लाय मँगाय तुरत दै माई। जो चाहत मो हित कुशलाई।।

शची- देव वस्तु को दैहै माई। लाय मोल दऊँ मेवा मिठाई।।

निमाई- मोल वस्तु मुख नैक न दैहौं। एकादशी नैवेद्य ही खैहौं।।

शची-अच्छौ तौ दोपहर कूँ भोग लगैगौ, तो मैं प्रसाद लाय दऊँगी।

निमाई-प्रसाद नहीं, अमनियाँ भोग लऊँगो और अबही लऊँगो! जल्दी लाय दै। ऊँ ऊँ (रोने लगते हैं)।

शची-यही तो तेरौ पागलपन है। जाकूँ देख-देख कै मेरे प्राण सूखे जाँय हैं। वा दिना वा अतिथि ब्राह्मण के गोपालजी के भोग कूँ खाय गयौ और आज एकादशी के भोग के तांईं रोय रह्यौ है। अरे! अपने नारायण के लिये बने भये नैवेद्य कूँ बिना उनकूँ भोग लगाये कौन तेरी भेंट कर देगौ।

निमाई-करैगौ क्यूँ नहीं? कहा मैं उनकौ गोपाल नहीं हूँ? जाऔ! भोग लैकैं आऔ! ऊँ ऊँ ऊँ.

शची-(दु:खपूर्वक) हे नारायण! हे मधुसूदन! या बालक की मति-गति कूँ सुधार देऔ। यह बीच-बीच में ऐसौ क्यों कहै है। याकूँ क्षमा करौ। यापै कृपा करौ।

दोहा

मंगल करौ मम लाल कौ, देओ मति सुधार।
नयनमणि तब प्राण मम, जीवन प्रेम आधार।।

निमाई-(रोते हुए) जाऔ! जल्दी लैकै आऔ! देर मत करौ।

समाज- **दोहा**

लाऔ सोई कहि रोवहिं, करत शैर अति जोर।
कह्यौ कोई तहँ जाय के, आये विप्र दोउ दौर।।

(प्रवेश जगदीश और हिरण्य)

दोनों-हरि बोल! हरि बोल!

निमाई-(और जोर से रोने लगते हैं)।

शची-ब्राह्मणो! कृपा करकैं 'हरि बोल' न करैं। आज तौ यह हरि बोल सुनकै चिढ़ै है और रोवै है। रोय-रोय कै धूम मचाय राखी है। कैसे हू नहीं मानै है।

दोनों-तौ ऐसी बात कहा है माँ?

निमाई-(दोनों हाथ पसार कर)

लाऔ विप्र नैवेद्य लै आऔ।
एकादशी निज व्रत फल पाऔ।।

नेम व्रत सब आज तिहारे। होंगे सफल हौं सत्य कहारे।।

जगदीश-विश्वम्भर बाबा। कहा तुम हमारे गोपालजी कौ प्रसाद लैनौ चाहौ हो?

निमाई-प्रसाद नहीं, अमनियाँ भोग! जाऔ जल्दी लै आऔ।

हिरण्य-यह तुमकूँ कैसे पतौ पर्‌यौ कि हमने आज व्रत राख्यौ है। न तुम हमारे घर गये, न हम यहाँ आये।

निमाई-परन्तु व्रती तौ हौ न? फलाहार तौ बनायौ है न?

हिरण्य-हाँ व्रती हैं और फलाहार हू बनायौ है।

निमाई-(आवेश पूर्वक) तौ जाओ और लै आओ फलाहार! बात मत बनाऔ! मैं सब जानूँ हूँ।

समाज- **चौपाई**

कहत कहत भाव पलटायौ। अद्‌भुत तन आवेश जनायौ।।
तमतमात तन तेज जनावै। बाल रूप पहिचान न आवै।।
तनी भौंह उलट गई अँखियाँ। फरकत होंठ फुरै नहीं बतियाँ।।
विवश विभोर जु गौर निमाई। लखि लखि माता अति अकुलाई।।

शची-देखौ-देखौ ब्राह्मणौ! मेरे लाल कूँ कहा है गयौ है। याकौ चेहरा बदल गयौ! आँखें चढ़ गईं! यह कहा अलाय बलाय है? हे नरसिंह! हे मधुसूदन! रक्षा करौ मेरे निमाई की।

जगदीश-माँ! चिन्ता मत करौ। यह कोई अलाय-बलाय नहीं है। यह तौ स्वयं गोपालजी ही बोल रहे हैं। ये बात बालक की नहीं है। नहीं है।

चौपाई

यह मति गति बालक की नांई।
गोपाल ही बोलत या तन माँही।।
याके खाये गोपाल ही खैहै।
आज सफल व्रत हमरो ह्वैहै।।
किये विरोध नहीं होवै भलाई।
माँगें जो यह दैऔ सो लाई।।

समाज-

अस कहि दौरि गये दुहुँ भाई। टेरत बरजत रहीं जु माई।।

शची-ब्राह्मणौ! भोग लगाय कै प्रसाद लानौ! प्रसाद! निमाई! वत्स आँख तौ खोल! मुख सों बोल!

निमाई-(उठ बैठते-हाथ फैलाते) लाऔ भोग! लाऔ

(दौड़ते हुए विश्वम्भर बाबा! गौर गोपाल! लेऔ अपने नैवेद्य-भोग! स्वीकार करौ।

शची-(बीच में आड़े आकर रोकना चाहती है) नहीं ब्राह्मणौ! मत देऔ ठाकुर कौ भोग! मैं तिहारे हाथ जोरूँ हूँ। मो दुखिया की ओर देखौ। या बावरे की बात मत सुनौ।

(निमाई दौड़कर छीन लेते और खाने लगते)

समाज– चौपाई

मात अटकि हटकि रहीं हार। धाय निमाई छीन लई थार।।
मात हारि मधुसूदन बोलैं। खात गौर आनन्द किलौलैं।।
बालक संगी मीत गये आई। बाँटत गौर सबन बुलाई।।

बालक वृन्द–अरे निमाई भैया! हमकूँ बड़ी भूख लग रही है। ला हमकूँ हू दै।

निमाई–हाँ हाँ मेरे ग्वाल बालौ! तुम्हारे तांईं ही तौ मैंने यह प्रबन्ध कियौ है। बैठ जाऔ और पाऔ भोग।

समाज– चौपाई

बैठे बालक अति सुख पाये। मंडल सुन्दर गोल रचाये।।
निज कर बाँटे आप निमाई। भोजन लीला रची सुखदाई।।
वन भोजन व्रजकी सुधि आई। हँसि हँसि कहत मैं ही कन्हाई।।

निमाई–अरे भैयाऔ! मैं गोपाल कन्हैया हूँ और तुम मेरे ग्वाल बाल हौ।

(गाते जाना और खाते जाना)

गाना– कान्हरा–दादरा

मैं बालक गोप बालक गौ पालक गोपाल हूँ।
वंशी वादक नीपमालक पालक व्रज लाल हूँ।।
ब्रजबिहारी गिरिवरधारी साँवरो नन्दलाल हूँ।
मदन मोहन मुरलीधारी, मोहन व्रजलाल हूँ।।

(निमाई त्रिभंग खड़े हो जाते)

समाज

वह गोपरूप, कृष्ण अनूप, गोप्य प्रगटायौ है।
विप्र ये दो ही लखैं सोई, और ना कोई लखायौ है।।
चकित मति थकित गति, रोम पुलक छायौ है।
करि निहाल, प्रभु कृपाल, रूप पुनि छिपायौ है।।

जगदीश–हिरण्य

धन्य हम पुण्य कौन, किये जो अपार हैं।
पुत्र पुष्प पूजा 'प्रेम' पाये जो मुरारि हैं।।

निगम ज्ञान, अगम ध्यान, सुगम सोई आज है।
प्रेमाधीन प्रभु कृपा को, न्यारौ कोई राज है।।

(गाते-गाते प्रदक्षिणा करके प्रस्थान)
(निमाई और बालकों का गाना)

गाना- **काफी-3**

जय हरे कृष्ण गोविन्द गोपाल, गिरिधारी लाल।
तन घन सुन्दर श्याम तमाल।।
वृन्दावन की कुंजन कुंजन कुंजविहारी लाल।
राधा वर हरि दीन दयाल।। जय०
धुनि-हरि बोल, हरि बोल, हरि हरि हरि बोल।

(बालकों का गाते-गाते चला जाना)

शची-क्यूँ रे निमाई! अब तौ तेरी शान्ति भई न?

निमाई-नहीं माँ! अबही पूरी शान्ति नहीं भई।

शची-तौ अब कहा बाकी रह गया? भगवान तू बन गयौ, भोग खाय लियौ, नाच-गाय लियौ। अब और कहा चाहिये।

निमाई-(माँ के गले में हाथ डाल) मैं भगवान कैसो? मैं तौ तेरौ निमाई हूँ। माँ! मेरी एक बात मानैगी?

शची-मानवे कूँ तौ मैं तेरी कौन-सी बात नहीं मानूँ हूँ! परन्तु तू फिर काहू कौ ठाकुरजी कौ भोग माँगैगौ, तौ मैं कहाँ ते लाऊँगी? निमाई तू मोकूँ बावरी बनाय कै छौड़ैगौ।

निमाई-नहीं माँ! अब मैं भोग नहीं माँगूँगो। मानैगी मेरी बात?

शची-अच्छो तौ बता, कौन-सी बात?

निमाई-माँ! तू आज ते एकादशी व्रत राख्यौ कर।

शची-अच्छी बात है। तौ कहा याहि के तांई तैंने इतनी रार मचाई ही? अरे यह तौ मैं वैसे ही मान जाती परन्तु यह बता कि मैंने तौ राख्यौ व्रत और तू बन गयौ भगवान् और लग्यौ माँगवे फलाहार तौ मैं कहा करूँगी? तोकूँ भोग लगाऊँगी कै अपने सालिग्राम भगवान् कूँ?

निमाई-माँ! मैं अपने घर की वस्तु माँगूँगो ही क्यों? तू भोग लगाय कै आँख बन्द करैगी और मैं खाय जाऊँगो। अच्छौ ला मेरी गेंद दै। खेलवे जाऊँगो।

शची-लै, गेंद तौ मैं दै दऊँ हूँ पर दूर मत जइयो। यहीं घर के सामने ही खेलियो। तेरी आवाज मेरे कानन में आती रहे, भलौ।

निमाई-अच्छौ माँ! (गेंद लेकर चले जाते हैं)।

शची-(देखती रहती है)।

गाना- **काफी-3**

यह कौन मेरे घर आया है, याने डारी मोहनी माया है।

अन्तरा

देखे बिना छिन चैन न आवै,
देखेहू पै नैन अकुलावै,
देखि देखि भरमाया है, यह कौन०।।1।।
अचरज रूप रंग अंग अंग है,
अचरज मति गति खेलन ढंग है,
अचरज बोल सुनाया है, यह कौन०।।2।।
जोई सोई होवै निमाई,
यह मेरौ लाल, मैं याकी माई,
बन्धन 'प्रेम' यह पाया है, यह कौन०।।3।।

(प्रस्थान। पटाक्षेप)
इति एकादशी-नैवेद्य-भक्षण लीला।

❧❖❧

बाल-लहरी **अष्टम कणामृत**

षष्ठी देवी पूजन

(चतुर्थ वर्ष की लीला)

समाज- **पद**

बाल गौर मधुर मनोहारी।
कंठ हार कंचन कौ सोहै, रंग हू कंचन मनोहारी।।
चाँचर केश चूड़ा कटि बाँध्यो, तापर माला मनोहारी।
घर बाहर आँगन गलियन में, नाचत गावत मनोहारी।।

रूप मधुर अति बोल मधुर अति, नृत्य मधुर अति मनोहारी।
धन्य 'प्रेम' नदिया नर नारी, लखत गौरचन्द्र मनोहारी।।
(निमाई बालकों के संग गाते हुए आते हैं)

निमाई- **पद**

हरि बोल हरि बोल हरि गाना।
खिल खिल जाँय दिल की कलियाँ, खुल खुल ग्रन्थि जाना।।
छावे बसन्त ओ कूजे कलियाँ, अलियाँ गुंज सुनावें।
राधा कृष्ण करैं रंगरेलियाँ, झरियाँ रस रंग लावैं।
'प्रेम' अमर हो जाना हरि०।।

समाज- **पद**

भई विलम्ब पुत्र नहिं आयौ, खेलत गंगा तीर।
कर छड़ी लै माता उठि धाईं, गहि लावन सुत बीर।।
(शची माँ छड़ी लिये प्रवेश करती हैं)

शची-क्यों रे निमाई! खायवे-पीवे की हू सुध नहीं तोकूँ? मैं पार-परौस में ढूँढ़-ढूँढ़ कै हैरान है गई और तू यहाँ गंगा किनारे नाच रह्यौ है। अब यहाँ तक पहुँचवे लग्यौ तू! तेरे बाप और दादा घर पै नहीं तौ कहा मैं हू नहीं हूँ। तू बड़ौ ही निडर है गयौ है। आज तोकूँ बाँधे बिना नहीं छोड़ूँगी। भागौ रे छोराऔ! देखौ हौ न यह कहा है (छड़ी दिखाती हैं-बालक सब भाग जाते हैं)

निमाई-कहा मोकूँ बाँधेगी?

शची-हाँ-हाँ बाधूँगी। घर तो चल सब पतौ पर जायगौ।

निमाई-अच्छौ मैं हू देख लऊँगौ (क्रोध में भरे भागते हैं माता पीछे-पीछे दौड़ती है)।

(दृश्य-गृह। निमाई दौड़ते हुए आते हैं और घर की वस्तुओं को उठा-उठाकर फेंकने लगते हैं। शची सहमी हुई खड़ी-खड़ी देखती रही हैं)।

समाज- **पूर्वपद**

खेलहिं तजि रिस भरे निमाई, निज घर आये धाईं।
फोड़े माट मटुकिया हँडिया, वस्तु सकल फैलाई।।

लखि सुत चरित शची डरपानी, निकसत ना मुख बानी।
शिशु तन निरखत नैन बहावत, मनवत मात भवानी।।
लखि जननी मुख सकुचे निमाई, नमित वदन कर लीने।।

निमाई-(लज्जित हो सिर नीचे कर खड़े हो जाते हैं)।

शची-(समीप आ गोद में लेती-मुख पौंछती हैं)

शंकित मात तात लै गौदी, पोंछत वदन मलीने।

शची-(पुचकारती हुई) बेटा! अब मैं तोकूँ कछू नांय कहूँगी खूब खेल्यौ कर परन्तु बेटा! मैं तोपै बलि-बलि जाऊँ, तू मेरी आँखिन के आगै ही खेल्यौ कर। और वत्स! चाँद तो सदा ही शीतल होय है। वह कभू गर्म होवै नहीं है। तू हू तौ मेरौ गौर चाँद है। यासों-

पूर्वपद

तातौ जनि होऔ मेरे चन्दा, दु:ख होवै देह छीजै।
मैं हू देख अति डरपाऊँ, बलि-बलि क्रोध न कीजै।।
खेलौ हँसौ मेरी आँखिन आगे, मैं देखि-देखि सिराऊँ।
दूर होत अँधियारौ लागै, छिन पल कल ना पाऊँ।।

अब चल बेटा! प्रसाद पाय लै। फिर विश्वरूप कूँ बुलाय लइयों। वह हू नहीं आयौ अब तांई।

(दोनों चले जाते हैं)

समाज-

पूर्वपद

नेह जनाय मनाय मान शिशु, पुनि भोजन करवाये।
विश्वरूप ढिंग गुरु चटसार, बोलन हेत पठाये।।
जोरति पार परौसनि नारिन, मात शची घबराई।
सुत कौ मंगल जैसे होवै, बूझति सोइ उपाई।।
श्रीवास घरनी श्रीमालिनी, सर्वजया बहन बुलाई।
बैठि मतौ मिलावति तिनसों, करनी सुतकी सुनाई।।

(प्रवेश, शची, सर्वजया, मालिनी, कमला नारियाँ)

सर्वजया-क्यूँ बहन शची! हम कैसे बुलाय भेजीं? निमाई कौ तौ कुशल है न?

शची-हाँ बहन! तुम लोगन के आशीर्वाद सों कुशल तौ है परन्तु वाके नये-नये ऊधमन के मारे मेरी तौ आत्मा अकुलावै है।

मालिनी-अरी बहन! विश्‍वरूप और विश्‍वम्भर जैसे दो-दो मणि-दीपक तिहारे घर में जगमगाय रहे हैं। फिर वहाँ अन्धकार-दु:ख कैसे?

चौपाई

सुन्दर जोरी मनहर पाई। राम लषन से दोउ भाई।।
कै व्रजवासी राम कन्हाई। प्रगट भये तुम्हरे घर आई।।
सुफल कूख भयौ तुम्हरौ माई। दु:ख चिन्ता सब देऔ बहाई।।

शची-

दोहा

विधनौ जैसौ सुख दियौ, वैसौ ही दियौ दुक्ख।
सुख दु:ख की जोरी सदा, तोरी जाय न टुक्क।।
एक पुत्र निशि द्यौस में, आवत घर इक बार।
विद्या रस महँ मगन नित, सुध हमरी हू विसार।।
दूजौ पुत्र निमाइ यह, चंचल अति करै रार।
अति अनूठे नित नये, उधमन को नहिं पार।।

सर्वजया-बहन! बालक तौ चंचल होयौ ही करैं हैं। और याहि सों प्यारे हू लगैं हैं।

शची-पहले वाके ऊधमन कूँ तौ नेक सुन लेऔ, फिर कहियों।

छन्द

कबहू घर की वस्तु बिगारै, कबहू पर घर जावै।
कबहू अंगन लेपत जूँठन, ज्ञान की बात बनावै।।
कबहू देव पूजा लै खावै, आप देव बन जावै।
उलट पुलट सब क्रिया वाकी, लखि लखि जिय डरपावै।।

(प्रवेश निमाई)

निमाई-(सिर हिलाते, मुस्कराते हुए) वाह वाह बाह! आज जे बाड़ी ते सभा जुड़े छे! बेश बेश! शुनि शुनि, तोमादेर की विचार होच्छे। आज तौ घर में ही सभा जुरी भई है। भलो, मैं हू तौ सुनूँ कहा विचार है रह्यौ है।

शची-क्यों बेटा! विश्‍वरूप कूँ बुलाय कै नहीं लायौ।

निमाइ-वे नहीं आये। सँध्या कूँ आऊँगो कही है।

सर्वजया-क्यूँ वत्स निमाई! हम सुनैं हैं कि तुम देवतान कौ आदर नहीं करौ हो। उनकी पूजा भोग तक खाय जाय हौ। साँची है कहा।

निमाइ-(मुख विचका कर) कछु साँची है, कछु झूँठी है। साँची हू नहीं है झूँठी हू नहीं है।

शची-सुन लेऔ बहनाऔ और समझ लेऔ। मैं तो हारी बैठी हूँ।

निमाइ-नहीं समझी हौ तो मैं समझाऊँ हूँ। मेरे पेट ही में सब देवी देवता हैं। जो जब मैं खाऊँ हूँ तौ सबनकी तृप्ति है जाय है, सबन की पूजा है जाय है। यासों जो यह कहैं हैं कि मैं उनकौ निरादर करूँ हूँ वे तौ निपट झूँठे है।

गाना- **खमाज-दादरा**

मैं देवदेव महादेव विष्णुदेव देवा।
सुर तैंतीस कोटि करैं मेरी चरण सेवा।।
सुर नर मुनि सहज मेरे, पावैं नहिं भेवा।
जन्म कर्म अपार मेरे, मैं ही सबकौ खेवा।।
मैं रामकृष्ण गौर हरि करौ मेरी सेवा।
बोलौ हरि गाऔ हरि, पाऔ 'प्रेम' मेवा।।

हरि बोल! (गाते-गाते भाग जाते हैं)

कमला-गजब है बहनाऔ! ऐसौ बालक तौ हमने कहूँ नहीं देख्यौ है!

शची-(आर्त्तभाव पूर्वक) हे गोविन्द! हे मुकुन्द! हे जनार्दन! मेरे या बालक के अपराध कूँ क्षमा करौ! क्षमा करौ।

गाना- **दादरा**

दोष मत लीजौ प्रभो! गरीबिनी को जायौ है।
देव सकल क्षमा कीजौ, बालक पै न रोष लीजौ।।
दुखिनी को दुक्ख छाजौ, करहु मो सहायौ है।
बावरौ ए भयौ निमाई, बावरी बनाई माई।।
देव देव करौ सहाई, हियौ 'प्रेम' विरायौ है।।

मालिनी-शची! यह बावरौ नहीं है। यह तो मोकूँ बाल-गोपाल जैसे लगै है। यह तौ उनकौ आवेश ही है।

सर्वजया-हाँ बहन! मोकूँ ऐसौ लगै है कि यह निमाइ अपने आप बनाय कै कछु नहीं कह रह्यौ है। कोई याकी सरस्वती पै बैठ कै कहवावै है।

शची-(दु:खपूर्वक) कौन कहवावै है? क्यों कहवावै है? वाकूँ और कोई नहीं पायौ जो मेरे बालक की जिह्वा पै ही चढ्यौ रहै है। याकी शान्ति कैसे होयगी, कोई उपाय बताऔ।

पूर्वपद

मति गति जाय सुधर लाला की, कोई उपाय बतावै।
मैं गुन वाकौ कबहू न भूलूँ, पुण्य बहुत कमावै।।
सुन्दर सुत ऐसौ यह मेरौ, दिन दिन जात बौराई।
देव न जानै, शौच न मानै, बिधि ना मानै माई।।

समाज-

बूढ़ी बड़ी कुल नारि जेतिक, तिन यह मत मिलाऔ।
षष्ठी देवी पूजन जु करिये, यही है एक उपायौ।।
छाया प्रेत नजर बाहर की, सब बलाय मिटि जावै।
जो सुदृष्टि देवी की यापै, करि कृपा है जावै।।

शची-अच्छौ तौ बहनाऔ, चलौ, सब मिलकर षष्ठी पूजि आवैं। मैं पूजन की सब सामग्री लैकै आऊँ हूँ। तुम निमाई की तरफ ते सावधान रहियों। वाकूँ खबर न परै। नहीं तौ है चुकी पूजा।

(जाकर पूजन-सामग्री ले आती है)

समाज-

संग सहेली लै शची माई, षष्ठी पूजन हेत चली।
दुराय काँख तरे पूजन डलिया, निकसी परी हैं चोर गली।
चलतीं बेगि सों चहुँ दिशि हेरत, आय न जाय निमाइ छली
अन्तर्यामी गौरहरि तब, आय धाय गही माय बली।।

(निमाई दौड़ते हुए आकर माँ की बाँह पकड़ लेते हैं।)

निमाइ- **गाना-काफी-तिताला**

कहाँ कहाँ तू जाय री माई।
मोहिं दै न बताई, मैं संग चलूँ धाई।। कहाँ०।।
मोहिं छोड़ इनहिं संग लैकै, अचक चली कहाँ तू कह दै।
मेरी सौंह री माई, मोहिं भूख लगि आई।।
चल घर को री माई, कै दै दै कछु लाई।
तोहि जान न देऊँ ऐसे माई।। कहाँ०।।

देवी पूजन करि तोहि दैहौं, मैं तौ मैया अबही लैहौं।
देर सही ना जाय, अति भूख ने सताई।
लई डलिया छिनाय, मात करै हाय हाय।।
प्रेमानन्द प्रभु हँसि खाई।।

शची-हाय हाय रे निमाई! फिर वही कुचाल? ला दै बेटा यह तौ देवी मैया की पूजन-सामग्री है। उनकी पूजा करके फिर सब प्रसाद तोकूँ ही दै दऊँगो।

निमाइ-(सिर हिलाते हुए) ऊँ हूँ! मैं तौ अबही खाऊँ हूँ। (भोग की मिठाई खाने लगते हैं)।

शची-हाय हाय! खाय गयौ! हे देवी मैया! क्षमा करियों या बालक के अपराध कूँ।

निमाइ-माँ! मैंने थोरौ-सौ ही तौ खायौ है। बाकी यह सब देवी मैया कूँ खवाय दीजौ।

शची-तेरौ जूँठौ कहा देवी मैया कूँ चढ़ाय दऊँ? अरे तू ब्राह्मण बालक है कै ऐसी अकहनी बात कहै है। तू कौन आयौ है हमारे कुल में? हाय! मैं कहा करूँ।

निमाइ-माँ! तू इतनौ काहे कूँ रिसावै है और दुःख मानै है? जब तू मेरी जूँठन खाय लेय है तौ देवी हू तौ मैया ही है-वह क्यों नहीं खायगी। और देवी हम सबन की मैया है-

मोकूँ जिमाय जैसें तू पहलें, मेरी जूँठन खावै।
वह तौ देवी सबकी मैया, क्यूँ नहीं जूँठन पावै।।
बुरौ न माने जूँठन सों तू, नाहिंन कभू रिसावै।
रिसावै क्यूँ फिर देवी मैया, मेरी समझ ना आवै।।

शची-हाय हाय! हद है गई--

अबही जाय गंगा मधि डूबूँ, अधिक सह्यौ न जाय।

निमाई-

जानै नहीं मेरे खाये सों, देवी बहु सुख पाय।।
वह जब मैया, मैं हूँ छैया, फिर दोष कहारी माय।
नाहक ठानति दुक्ख हिय महँ, समझै ना समझाय।
मति ना मोकूँ तजि कै मैया, गंगा डूबन जाय।।

समाज-

धाय मात गरे लिपटाये, दियौ प्रेम रमाय।

निमाई-(माँ के गले से लिपट कर) अब तौ गंगा में डूबवे कौ नाम नांय लैगी माँ!

शची-(प्यार करती हुई) ना बेटा! तू प्रसन्न रह परन्तु निमाई! मेरे लाल! तू या कुचालैं छोड़ दै।

मालिनी-चलौ! माँ बेटा में समझौता है गयौ।

सर्वजया-देवी-सुमरन सों ही काम है गयौ, पूजनौ हू नहीं पर्‌यौ।

शची-नहीं बहन! ऐसे मत कहौ। देवी-पूजन तौ मैं अवश्य करूँगी। निमाई! अब तौ तेरौ पेट हू भर गयौ। सो चल, षष्ठी देवी पूजि आवैं।

निमाई-तुमही जाओ मैं तो खेलवे जाऊँ हूँ (भाग जाना) चल्यौ गयो। चलौ बहनाओ नयी सामग्री लैकै देवी पूजवे चलैं।

(सब चली जाती हैं)

समाज- **दोहा**

पुनि नव वस्तु पूजा की, लै निकसी शची माय।
मन मन बिनवत देवी पद, करियो मात सहाय।।

(दृश्य-देवी का मन्दिर-शची आदि का प्रवेश)

सोरठा

पहुँची मन्दिर जाय, मुदित मन माता भईं।
जय जगदम्बे माय, बाधा हरै सुदृष्टि करि।।

चौपाई

लैं कर सेंदुर शीश चढ़ाये। रोरि बेंदा भाल लगाये।।
माला धराय सुभोग धराये। धूप दीप सुगन्धि सुहाये।।
भाव भक्ति भरि आरति वारैं। जय धुनि हुलू धुनि उमगि उचारैं

आरती- **पद**

आरती कीजै शैल सुता की।
शैल सुता गिरराजसुता की।।
विपति विदारिनी, दुर्गति हारिनी।
शस्त्रधारिनी, असुर संहारिनी।।

रक्षाकरिनी, भवसंसारिनी।
बुद्धिराशि गणपति माता की।।
सुख सम्पद यश मंगलदायिनी।
विद्या बुद्धि सिद्धि विधायिनी।।
प्रेम भक्तिदायिनी अनपायिनी।
पराशक्ति चिन्मयी माता की।।

(दौड़ते हुए निमाई का प्रवेश)

निमाई-माँ माँ! (शची का अंचल जा पकड़ना)

शची-अरे निमाई! तू हू आय गयौ। अच्छौ भयौ। देवी मैया कूँ हाथ जोड़, ढोग दै। ये तेरौ मंगल करैंगी।

निमाई-(हाथ जोड़-परिहास पूर्वक) जय भगवती मैया!

शची-(हाथ जोड़) हे परमेश्वरी! हे महामाये! यह बालक भलौ है बुरौ है,तुम्हारौ ही है। याके दोष कूँ मत लीजौ। अपनौ जान यापै सदा सुदृष्टि राखियौ मैं दुःखिनी तिहारे आगे आँचर पसार कै यही भीख माँगूँ हूँ कि-

गाना- सारंग-केहरवा

दुर्मति टारौ (मैंया) दुक्ख निवारौ,
लाग संहारौ, शुभ विस्तारौ।
बाल तिहारौ (मैया) तुमही सँभारौ,
भीख ए डारौ (मैया) नैंक निहारौ।।
मात बिना को, छतियन लावै,
धोवै काया, विमल बनावै।
रोष न लावै, दोष भुलावै,
देवै असीस, कंठ लगावै।।
सेंदुर चढ़ावैं (मैया) बेंदा लगावैं,
ध्वजा चढ़ावैं, दीप जरावैं।
मंगल गावैं (मैया) मंगल पावैं,
शीश नमावैं (प्रेम) बलि बलि जावैं।।

मालिनी-शची! अब तौ निमाई बड़ौ शान्त है गयो है। कैसौ चुपचाप ठाड़ौ है।

निमाई-(देवी के आगे रक्खे हुए भोग की थाल में झपट कर हाथ डालता है और प्रसाद लेकर खाने लगता है)।

शची-देख लेऔ! है गयौ न शान्त!

मालिनी-तौ प्रसाद ही तौ लियौ है, भोग तौ नहीं खायौ।

शची-हाँ सो तौ ठीक है। खाय लै और खाय लै निमाई! तेरी बुद्धि शुद्ध है जायगी। हे परमेश्वरी! ऐसौइ शान्त यह सदैव बन्यौ रहे। इतनी कृपा बनाय राखियो।

मालिनी-चलौ शची माँ! अब चलौ घर! देवी प्रसन्न है गई हैं। निमाई शान्त है गयौ है।

(सब चले जाते हैं)

समाज- **दोहा**

मंगल के मंगल निमित, पूजीं देवी माय।
पढ़ै सुनै मुद मानै तौ, मंगल प्रेमहिं पाय।।

(पटाक्षेप)

कीर्तन धुन

जय शचीनन्दन जय गौर हरी।
जय गौरचन्द्र नदिया बिहारी।।

❧❖❧

पौगण्ड-लहरी **प्रथम कणामृत**

विद्यारम्भ

(पंचम वर्ष की लीला)

समाज- **दोहा**

बाल वयस प्रभु धन्य करि, पौगंड परसै धाय।
चार बरस वय पार करि, पंचम दीन्हे पाय।।
शुभ दिन देखि मिश्रजू, बोले पंडित राय।
विद्यारम्भ निमाइ कौ, कीन्हे मोद बढ़ाय।।

चौपाई

गणपति पूजन विधि करवाई। नारिन मंगल गीत सु गाई।।
विद्या गुरु सरस्वती नाथा। पूजि सरस्वती नाये माथा।।
हाथ खड़ी पितु दिये निमाई। मंगल हुलू धुनि कुलवधू गाई।।
ऊँ नमः सिद्धम् बुलवाये। अक्षर लिखी पटिया पढ़वाये।।
विद्यारम्भ शुभ गृह कीन्हे। दान मान पंडित को दीन्हे।।
पढ़न जायँ प्रभु प्रातः काला। विष्णु पंडित विद्याशाला।।
लिखन लगे सर्वज्ञ निमाई। नर लीला प्रगटत सुखदाई।।

(दृश्य-विष्णु पंडित गृह में पाठशाला। निमाइ और अन्य बालक पट्टी लिख पढ़ रहे हैं)।

बोलत अ-आ-मधुर सुहाई। अच्छर हू पुनि लिखत बनाई।।

गुरु-क्यूँ निमाई! अ-आ-इ-ई सब याद है गये न?

निमाई-हाँ गुरुजी! अ-आ-इ-ई (सब सुना देते हैं)।

गुरु-तो वत्स! अब क कहरा पढ़ो! बोलो 'क' ते कपड़ा

निमाई-'क' ते कन्हैया, 'क' ते कन्हैया।

गुरु-ठीक है। अब ऐसे 'क' लिखो (पट्टी पर लिख देना)

निमाई-(लिखते हुए) क-क-क

समाज-

क-क-क मुख उचरत जावहिं।
धोखत झोका लेत सुहावहिं।।
घिरि घिरि मुख पै आवैं लटुरियाँ।
बिच बिच झलकै चन्द वदनियाँ।।
लटन सम्हारैं कनक अंगुरियाँ।
बिजुरी लिपटैं जाय बदरिया।।
क-क-क-मुख अमृत झरियाँ।
यह छबि देखत बनै तिहि बिरियाँ।।

निमाई-गुरुजी! गुरुजी! कक्का ही प्रथम अक्षर है न?

गुरु-हाँ वत्स! अब आगे बोलो 'ख' से खड़िया।

निमाई-क-क-क! गुरुजी! गुरुजी! कक्का ही मूल अक्षर है न?

गुरु-हाँ हाँ। पर अब 'ख' पढ़ो 'ख'।

निमाइ-गुरुजी! मोकूँ तौ कक्का ही अच्छौ लगै है यह कक्का कबते भयो गुरुजी?

गुरु-कब ते कहा। यह तौ सदा काल ते कक्का ही है।

निमाई-क-क-क। गुरुजी! याकौ कक्का नाम कौन ने धर्‍यौ?

गुरु-अरे तुम पढ़ोगे या पिटौगे।

निमाई-क-क-क! गुरुजी यह कहा बात है। यह वीरु हू कक्का कहै, यह धीरुहू कक्का कहै है, यह नीरु हू कक्का कहै है। यह सबन कौ कक्का कैसे भयो?

गुरु-(झुंझला कर) चुप! अब के मुख खोल्यौ और मार परी!

निामई-(चुप हो जाते हैं)।

गुरु-निमाई! तू पढै क्यूँ नहीं है। बोल ख-ख-ख

निमाई-(चुप रहता है)।

गुरु-अरे तू चुप कैसे है गयौ? बोलै क्यूँ नहीं है?

निमाई-आप ही ने तौ कही कि मुख्य खोल्यौ तौ मार परैगी। फिर मैं मुख कैसे खोलतौ?

गुरु-अरे बावरे! मैंने तौ बकवास करबे की मनाई करी हती। पढ़वे के तांई कब मना करी? अस्तु पढ़ 'ख' ते खड़िया।

निमाई-'क' ते कन्हैया, 'क' ते कन्हैया!

गुरु-अरे 'क' तो है गयो, अब आगे 'ख' पढ़।

निमाई-क-क-क

गुरु-अरे ख-ख-ख बोल! 'ख'

निमाइ-गुरुजी! मोकूँ तो कक्का ही प्यारो लगै है क-क

गुरु-तौ लै तेरौ कक्का (पीठ पर धौल जमा देना) कहाँ कौ सिड़ी झक्की आयौ है। माथौ खाय डार्‌यौ।

समाज- **दोहा**

गुरु समझ्यौ नहिं शिष्य की बातन की गुरुताई।
अति रिसाय कै पीठ पै, दियौ हाथ चलाई।।

चौपाई

रोवन लागे बाल विश्वम्भर।
नैनन मोती बरसत झर झर।।

(प्रवेश गुरु पत्नी)

गुरु पत्नी रोदन सुनि आईं। गोद उठाय मनाये निमाई।।

निमाइ-(रोते हुए) ऊँ ऊँ ऊँ मोकूँ गुरुजी ने मा-मा मार्‌यौ।

गुरु पत्नी-रोवै मति ना वत्स! चल, मिठाई दऊँगी।

(भीतर ले जा मिठाई देकर आती है)

अजी! आपने या बालक के ऊपर हाथ काहे कूँ उठायौ।

चौपाई

यह बालक कहा ताड़न जोगा।
याके दरस हरत सब सोगा।।
बैन सुनत तन प्रान सिरावै।
तुमहीं कैसे रिस उपजावै।।
पुरुष जाति पाषान री माई।
नारि बिना दया माया माई।।

गुरु- **दोहा**

बात निपट साँची कही, नैकहु संशय नाहिं।
माया नारिन मध्य ही, और ठौर कहूँ नाहिं।।

अतएव महामायेजू! नमस्कार। आप अब भीतरहि पधारौ

गुरु पत्नी-(उत्तेजित होकर) और आप कहा सूधे वैकुण्ठ ते टपक परे हैं कै दूसरे शुकदेव प्रगटे हैं नारि ते प्रगट है कै नारी की ही निन्दा करौ हौ? पण्डित तौ बन गये पर बालकन कूँ पढ़ामनौ नहीं आयौ। बालक मार ते पढ़ैं हैं कै प्यार ते?

गुरु-और प्यार ते न पढ़ैं तौ?

गु० प०-तौ कहा मारनौ ही चाहिये? बालक हैं तबही इन्हें मारौ हौ। बड़े होयँ गौ तौ कहा करौगे? मारौगे?

गुरु-(परिहास पूर्वक) तौ पण्डितानी जू! आपही या मेरे आसन कूँ ग्रहण करैं। मैं भीतर जाय कै आपके काम कूँ सम्हारूँ हूँ।

गु० प०-स्वीकार है। हम आपके काम में चार चाँद लगाय देंगी और आप हमारे काम कूँ धूर में मिलाय देऔगे। समझ गये न? यासों इतनी ही प्रार्थना है कि नेक ठंडौ माथौ राख कै प्रेम सों पढ़ावैं। और एक बात। यदि या बालक कूँ फिर रुवायौ तो महाभारत है जायगौ। (चली जाती हैं)।

गुरु-ला निमाई पट्टी ला! देख ऐसै लिख 'श्री'

निमाई-('श्री' मिटाकर 'क' लिखता है)।

गुरु-अरे 'श्री' कूँ मिटाय कै फिर 'क' लिख दियौं अरे श्री लिख श्री।

निमाई-गुरुजी! कक्का ही में सब हैं।

गाना- **झिंझोटी-दादरा**

क नाम ब्रह्मा मो नाभि सों जन्मा।
क नाम ज्ञान पढ़ायौ हौं ब्रह्मा।।
क नाम आनन्द रस कौ है धाम।
क नाम अक्षर परात्पर श्याम।।
क लियौ जान लियौ सब जान।
क नहीं जान्यौ सोई अनजान।।
क ज्ञान साँचो कियौ हौं बखान।
गुरु नहीं जाने क 'प्रेम' अज्ञान।।
क-क-क-क।

गुरु-अच्छी आफत आई। धमकाऊँ हूँ तौ भीतर ते गुरुरानी आय धमकेंगी। और ऐसे याकौ क-क-क कहाँ तक सुन्यौ सह्यौ जाय है। अपने धुन कौ पूरौ पक्कौ है। जाऔ रे बालकौ! आज तुम्हारे छुट्टी है। और निमाई! मैं तुम्हारी पिताजी सों जायकै कहूँ हूँ तबही तुम सीधे होऔगे और पढ़ौगे। जाऔ आज छुट्टी है सब कूँ (चले जाते हैं)।

सब बालक-(उछलते कूदते हुए) छुट्टी है छुट्टी! वाह निमाई वाह! खूब छुट्टी दिवाई! शाबास!

निमाई-तौ अब हरि बोलौ और नाचौ गाऔ।

सब बालक-(एक स्वर में) हरि बोल!

निमाई-　　　　　　　　**गाना-केहरवा**

हरे कृष्ण गोविन्द गोपाल गिरिधारी रे।
देवकी ने जायौ पै यशोदा ने बधायौ पाया
गोद खिलायौ न नचायौ दै दै तारी रे।। हरे०।।
पूतना कौ पय पियौ, धाई माता मान लियौ।
कुल के समेत वाकी मुक्ति कर डारी रे।। हरे०।।
मटुकिया फोरी मात ऊखल सों बाँधे जोरी।
बँधकर के हरि यमलार्जुन कौ उद्धारी रे।। हरे०।।
शिव नाचें आंगन में, ब्रह्मा लोटें पाँयन में।
गावैं गोपी 'प्रेम' गारी, चोर व लबारी रे।। हरे०।।

हरि बोल हरि बोल हरि बोल हरि बोल
(नाचते-गाते हुए प्रस्थान)
(पटाक्षेप)

इति विद्यारम्भ लीला

ଔ❖ଓ

पौगण्ड-लहरी　　　　　　　　　　　　**द्वितीय कणामृत**

गंगा तट चापल्य

(सप्तम-अष्टम वर्ष की लीला)

समाज-　　　　　　　　**दोहा**

सरस्वती पति गौरहरि, अनन्त वैकुण्ठनाथ।
विद्या विलास कौतुक करैं, परिकर शिशु गन साथ।।

चौपाई

सुनत ही सीख लेयँ निमाई। तुरत सुनावत गुरुहिं सुहाई।।
मात्रावर्ण युक्त अच्छर सब। सीखे सकल दिवस द्वै मधि जब
कृष्ण नाम माला चित्त लाई। पढ़ैं लिखैं गावैं सोइ भाई।।
देखि मिश्र मन भयो संतोषा। समझत चंचलताई शेषा।।
पुत्रहू राखैं पितु सन्माना। प्रगट करैं नहिं कौतुक आना।।

(बंगला)

बाहिरे निमाई चंचलताई शिरोमणि।
पितृस्थाने परम गम्भीर महागुणी।। (चै० भा०)
संगीजन संग साँझ सकारे। नये नये कौतुक करत न हारे।।

दोहा

संगी जन निमाई के, धन्य धन्य अति धन्य।
रैना दिना निमाइ बिना, जानैं नहिं कछु अन्य।।

चौपाई

भोरहिं कभु सब जुरि आवैं। निमाइ कहि कहि टेर लगावैं।।

(दृश्य-निमाइ शयन कर रहे हैं। शची माँ बैठी हैं)

शची- **पद-प्रभाती या विभास 1 ताल**

चाँद मुख दिखाऔ लाला, खोलौ प्यारे पलकें।
रजनी बीती भोर भयौ, अरुण किरण झलकें।।
उठौ लाल बोलौ मधुर, मा मा मा कलकें।
देखूँ तुव नयन कमल, नासा मोती ढलकें।।
खाऔ लाल भावै जोई, खेल खेलौ मिलिके।
बाहर सखा 'प्रेम' टेरैं, देऔ दरस चलिके।।

सखावृन्द-(नेपथ्य में से आवाज देते हैं)।

(1) ओरे निमाई! कि एखनओ घुमाच्छिस, ओठ भाई! शिग्गिर आय!

(2) आमरा एसेछि भाई! खेला कोर्‌बो! आय शिग्गिर!

समाज- **दोहा**

व्रज लीला आवेश भरि, कहत वचन निमाई।
मोहिं ग्वाल सजाय दै, गैया चराऊँ जाई।।

निमाई-(उठकर बैठते-आँखें मलते हुए) माँ! माँ! मोकूँ ग्वाल सजाय दै। मैं गैया चरायवे जाऊँगो। मेरे ग्वाल सखा मोकूँ टेर रहे हैं।

पद- **आसावरी-केहरवा**

दै माँ सजाय, मोकूँ ग्वाल सजाय दै।
मैं तौ जाऊँगो गंगा तट, चराऊँगो गाय।। मोकूँ० ।।

(दुगुन)

संग सखा सब बोलत मोकूँ,
मैं कल कह आयौ हो उनकूँ।
जायँगे गौ चारन आज गंगा तट माय।। मोकूँ०।।
लादै मेरी वंशी लकुटिया,
माखन रोटी बाँध चदरिया।
देर करै मत चढ्यौ जात दिन, टेरैं सखा आय।। मोकूँ०।।

शची-

मैं न अहीरिनी, व्रज की ग्वालिनी,
कहाँ ते लाय दऊँ सद नवनी।
केला संदेश मिठाई लै जा तू, हठ तजरे निमाई।। मोकूँ०।।

निमाइ-

मैं न संदेश मिठाई लैहौं,
बिन माखन मिश्री ना जैहौं।
जो नहिं दै तौ चोरिकै खैहौं, लाय दै 'प्रेम' माय।। मोकूँ०।।

समाज- **चौपाई**

सखा कोलाहल धूम मचावैं। आन निमाई देर न लावै।।
सुनि कोलाहल परौसिनि आई। लिये माखन मिस्री मलाई।।
मनमानी वस्तु जब पाई। खात खवावत नाचत गाई।।
सखा सकल मिलै तब आई। सजवत भेष गोपाल निमाई।।
सखा जन-आ निमाई! हम तोकूँ गोपाल सजायँगे।

गाना- **दादरा**

आ तोहि सजायें गोपाल, हम सजेंगे ग्वाल भाई।
हो हो हो हो आरे निमाई,
गोरे तन में गोप भेष, देखें कैसौ फबे भाई,
हो हो हो हो आरे निमाई।। आ०
तू बन जा माखन चोर।
हम सब ग्वाल तेरे संग, डोलेंगे साँझ भोर।
नदिया नगर घर घर घर, चोरेंगे माखन जाई।
हो हो हो हो आरे निमाई।। आ०

तू बन जा राजा ग्वाल।
हम बनेंगे मन्त्री-प्रजा, चोर कोतवाल।
देंगे हम तौ तेरी दुहाई, तू करेगौ न्याय।
हो हो हो हो आरे निमाई।। आ०
तू बजावैगौ बेनु।
हम सब तेरे ग्वाल बाल चरायँगे धेनु।
वन वन ते घेरि घेरि, लायँगे घर भाई।।
हो हो हो हो०।।
तू कदम्ब तरु तरे।
होय त्रिभंग वाम अंग, इष्ट मन्त्र सिद्ध करे।
हम सब तोहि घेरि घेरि, नाचैं गावैं भाई।।
हो हो हो हो०।।

समाज

यह 'प्रेम' भावावेश।
ब्रज के रंग बालक रंगे आपहू ब्रजेश।
ब्रज चरित्र प्रगट करत, नदिया महँ आय।।
जै जै जै जै, जै रे निमाई०।।

चौपाई

गंगा ओर चले सब धाई। नाचत गावत धूम मचाई।
कोई गावैं काँधे धरि लौठी। बाँधैं पाग कोई लांग कछौटी।।
धौरी धूमरि धूसरि बोलैं। ब्रज भाव रंग माहिं कलोलैं।।
नर नारी लखि अचरज मानैं। नयौ भेष भाव न जानैं।।

नदियावासी-

बूझैं वत्स खेल यह कैसौ। हमरे देश तौ खेल न ऐसौ।।
नयौ भेष रंग ढंग यह नूतन। कौन ठौर सीखे गौ चारन।।

समाज-

जो गोपाल व्रज गाय चराई। वही खेल अब करैं निमाई।।
नचत चलत कभु होवैं ठाड़े। लटक त्रिभंगी दै लकुट आड़े।।
सखा सकल नाचैं चहुँ ओरा। राधे गोविन्द यह ब्रज कौ चोरा।

सखा- **धुन**

राधे गोविन्द भजौ राधे गोविन्द।
मारग चलत जे लोग लुगाई। लखि रहैं चकित लोग लुगाई।।

निमाई व सखावृन्द- **भजन**

जय जय राधे कृष्ण राधे कृष्ण राधे गोविन्द।
मधुर गोकुल चन्द वृन्दावन चन्द।। जय जय० ।।1।।

(दुगुन)

मुरली धर मधुसूदन माधव, गोपीनाथ मुकुन्द।
केलि कलानिधि कुंजविहारी, गिरिधर आनन्द कन्द।।2
ब्रज नागर ब्रजराज सुनन्दन, ब्रजजन नयनानन्द।
राधारमण रसिक रस शेखर, रसमय मुसकन मन्द।।3
गोप गोपाल गोपीजन वल्लभ, गोकुल परमानन्द।
दास गोपाल आस करुणामय, केशव पद मकरन्द।।4

(गाते-गाते प्रस्थान)

समाज-

गंगा बहै निर्मल सुखदानी। विष्णु पदी विष्णुपद दानी।
घाट घाट नर नारी न्हावैं। पूजा जाप करैं हरि ध्यावैं।।

(दृश्य-गंगा-तट। गंगा स्नान, ध्यान, पूजन कारी जनता)

(प्रवेश निमाई व सखावृन्द)

समाज- **दोहा**

घाट घाट विचरत फिरैं, करैं बहुत उत्पात।
बाल वृद्ध नर नारि महँ, कोउ बचन न पात।।

अनुकरण 1

वृद्ध विप्र इक गंगा न्हाई।
ठाड़े जल महँ ध्यान लगाई।।
जल अन्तर पग धरै निमाई।
खैंचत विप्र जु टेर लगाई।
लै गयौ मगर मोहिं लै गयौ हाय।
प्रान जायँ अब बचाऔ आय।।

सुनत टेर जन बहु जुटि आये।
खैंचत पकरि न खैंच सकाये।।
छाँड़ि दिये तब चरन निमाई।
जल भीतर भये आप पलाई।।
निकसे ढिगहि गंगा तीरा।
नैंक न चंचल बने गँभीरा।।
लोग कहैं करतब याही के।
ठाड़ौ मानो सज्जन नीके।।

वृद्ध-

रे रे निमाई चंचल राज।
फिरत विप्र हत्या के काज।।
करन न देय तू सन्ध्यावन्दन।
ब्राह्मण बाल कै राक्षसनंदन।।

समाज

सुनत रिसाय न बोलै विश्वम्भर।
मारै कीच उठाय अँखियन पर।।
'पकरौ' कहि कहि लोग जु धाये।
हाथ निमाई न काहू के आये।।
काहू के बसनन लेत दुराई।
आसन पोथी देत बहाई।।
बसन पलट करि कहुँ धरि जावैं।
धोती नहीं फरिया कोउ पावैं।।
काहू के अंगन धूरि उड़ावैं।
कहूँ गीता वक्ता बनि जावैं।।

निमाई-(गीता पाठी के नेत्रों में धूल डालते हुए) अरे गीता तौ पाछे पढ़ लीजौ। पहले गीता वक्ता के दर्शन तौ कर लै।

गीतापाठी-श्रीविष्णो-3! बालक! तेरी बुद्धि भ्रष्ट है गई है। जगन्नाथ मिश्र कौ छोरा तू गीता वक्ता बनै है। श्रीविष्णो-2!

निमाई-हाँ हाँ! थोरेइ दिना में जान जाऔगे मैं कौन हूँ।

गीतापाठी-अच्छौ तौ अब तू जाय यहाँ ते। मैंने कर लिये दर्शन गीता वक्ता के! अब मोकूँ पाठ कर लैन दै।

समाज-

काहू के ध्यानहिं जाय नसावैं,
'मेरौ दरस कर' वचन सुनावैं।।

निमाइ-ब्राह्मणदेव! जो ध्यान में हू नहीं आवैं है वाकूँ आँखिन सों प्रत्यक्ष देख लै यहाँ।

ध्यानी-(आँखें खोल) हैं, कौन? अरे तू है निमाई। कहा मैं अपने इष्ट कौ ध्यान छोड़ करके तेरे दर्शन करूँ।

निमाई-हाँ हाँ! सब ही देवी देवता मेरे अंग में ही हैं। मेरे दर्शन कर लिए तो सब के दर्शन है गये।

ध्यानी-अरे ढीठ वाचाल! ऐसी बात कहनौ तौ कहा, सोचनौ हू महापराध है। हाथ जोड़! क्षमा माँग! भगवान कूँ प्रणाम कर।

निमाई-तुम ही करौ, मैं क्यों करूँ (चल देते हैं)

समाज-

काहू पीठ धाय चढ़ि जावैं।
विष्णु आप, वाहि गरुड़ बतावैं।।

निमाई-(एक विप्र के पीठ पर चढ़कर) जल्दी उड़ौ गरुड़ जल्दी उड़ौ। मेरौ भक्त मोकूँ बुलाय रह्यौ है! अरे तुम तौ बूढ़े है गये हौ। तुम पै तौ उड्यौ ही नहीं जाय है। मैं ही भाग कै जाऊँ हूँ (पीठ पर से कूद पड़ना)।

वृद्ध विप्र-ठहर जा! कहाँ जायगौ भाग के। तेरे बाप ते तेरी मरम्मत न कराऊँ! मो बूढ़े की कमर तोड़ दई होंती! कैसौ मचमचायो पीठ पै! उफ्! (कमर पकड़ता हुआ चला जाता है)।

समाज-

काहू की पूजा आप लै खावैं।
देय असीस वैकुण्ठ पठावैं।।

पूजक-अरे ढीठ! तू देव-पूजा के नैवेद्य कूँ खाय गयौ! तेरी मति तौ नहीं बिगर गई है?

निमाई-अरे! जाकौ नैवेद्य हो वाकूँ पहुँच गयौ। तेरी पूजा सफल है गई।

पूजक-तौ कहा वह तेरौ नैवेद्य हो?

निमाई-और कौन कौ हो? तू मोकूँ नहीं जानै है परन्तु मैं तौ जानूँ हूँ कि मैं कौन हूँ और तू कौन है।

पूजक-तौ बता तू कौन है और मैं कौन हूँ।

निमाई-तू मेरौ पुरानौ भक्त है और मैं तेरौ वही भगवान् हूँ।

पूजक-(क्रोध पूर्वक) अरे भगवान् बनवे वारो भगवद् द्रोही! देव द्रोही! ब्रह्म द्रोही! तेरौ सर्वनाश होयगौ।

निमाइ-(शीश झुका, हाथ जोड़) ऐसौ ही होवैगौ विप्र तुम्हारौ श्राप फलैगौ, फलैगौ, फलैगौ!

पूजक-(मर्माहत होकर पश्चात्ताप पूर्वक) हाय हाय! मेरी जिह्वा ते सरस्वती ने कैसी अशुभ वाणी निकास दई! हे प्रभो! मेरौ वचन मिथ्या होवै या बालक को सदैव मंगल ही होवै! मेरौ ही सर्वनाश है जावै। यह श्राप उलट कैं मोकूँ ही लगै।

निमाई-ब्राह्मण देवता! कोई चिन्ता मत करौ। यह तौ सब मेरौ एक खेल है। मैंने कह तौ दियौ कि तुम मेरे भक्त हौ यासों तुम्हारौ सर्वनाश नहीं, वैकुण्ठवास होयगौ। हरि बोल (आगे चलना)।

समाज-

पूजत विप्र रह्यौ महादेवा। लई उठाय वाकी शिव सेवा।।
ढूँढ़त इत उत कहूँ नहिं पाई। दुखित चकित विप्र विकल महाई।।

शिवभक्त-हाय हाय! मेरे नर्मदेश्वर कहाँ चले गये? कौन लै गयौ। अवश्य ही मोते कोई अपराध बन गयौ जासों वे मोकूँ छोड़ गये। अब मैं कहा करूँ, कहा पाऊँ उनकूँ!

सखावृन्द-(ताली बजाते हुए) वे तौ समाय गए-अहा-हा हा!

शिवभक्त-कहा कही बालकौ?

सखावृन्द-समाय गये। अपने स्थान कूँ चले गये।

शिवभक्त-(निमाई को देखते हुए) क्यों रे निमाई! चुप कैसे ठाड़ौ है। कहूँ तैंने तौ नहीं उठाय लियौ है? बोलै क्यों नहीं? ये तेरे गाल फूले-फूले-से कैसे लग रहे हैं। खोलियो मुखै (मुख खुलवा कर भीतर से नर्मदेश्वर निकलता है) हाय हाय! मेरे भोले बाबा कूँ तैंने जूँठौ कर दियौ! अपवित्र कर दियौ।

निमाई-जूँठौ कहै सो झूँठौ। गंगा नर्मदा में गोता लगावै और अपवित्र बन जाय।

शिवभक्त-तौ तेरौ यह मुख गंगा-नर्मदा है कहा?

निमाई-मुख ही नहीं, मेरे अंग-अंग में, रोम-रोम में, गंगा-यमुना, नर्मदा-गोदावरी समस्त तीर्थ हैं। तुम जानौ ही कहा हौ।

शिवभक्त-अरे ढीठ! तोकूँ हू नहीं मालूम है या शिव-द्रोह कौ कितनौ घोर दण्ड मिलैगौ।

निमाई-(हँसते हुए) दण्ड नांय पुरस्कार मिलैगौ, प्रेम मिलैगौ। मैं उनकूँ खाय जाऊँ तौ वे बड़े प्रसन्न होय हैं और वे मोकूँ खाय जाँय तौ मैं बड़ो प्रसन्न होऊँ हूँ। भेदभाव हमारी आँखिन में नहीं है, तुम्हारी ही आँखिन में है।

शिवभक्त-(दुःख पूर्वक) निमाई! तेरी तौ बुद्धि, देवतान कौ नैवेद्य खाय-खाय कै, उनकी अवज्ञा के कारण भ्रष्ट है गई है। याहि सों जो मुँह में आवै सोई बकै है। तो सों कौन बकवास करै। हाय! तैने बड़ौ ही अपकर्म कर डारयौ है। अब मोकूँ रुद्री जाप महाभिषेक आदि अनुष्ठान करनौ परैगौ। अच्छी आफत आय परी।

निमाई-आफत नहीं उत्सव! महोत्सव! खूब प्रसाद बाँटियों। प्रसाद के पीछे भक्तहू खूब जुट जायँगे तुम्हारी बड़ी जय जयकार होयगी! पुण्य बढ़ैगौ।

शिवभक्त-(चिढ़कर) ठहर जा ढीठ! पहले तोकूँ ही प्रसाद दिवाऊँ हूँ तेरे बाप ते। पीछे मैं अपनौ प्रसाद बाँटूँगो। पहले यही पुण्य-तेरी पिटाई, पीछे और पुण्य! (तेजी से चला जाता है)।

निमाई-जा जा कह दे! मैं काहू ते डरपूँ नहीं हूँ। हरि बोल।

निमाई एवं सखावृन्द **धुन**

भज नरहरि गोविन्द गोपाल।
दीनानाथ दयानिधि सुन्दर, दामोदर नन्दलाल।।

(गाते-नाचते चले जाते हैं)

(दृश्य गंगा तट-प्रवेश बालिका वृन्द पूजन सामग्री लिये-गातीं हुई।)

बालिकाएँ- **गीत-भैरवी-केहरवा**

सुन्दर श्याम बांसुरिया वारे रे,
मीठी-सी तान तू गाकर सुना रे।।1।।
चलीं यमुना को गोपी भोर, चितवत चहुँ चितचोर।
मनावैं मनही मन में मोहन लला रे, मीठी सी०।।2।।
लै लैकै घट पनघट को, लाईं माखन हम तेरे बट को।
अब आकर के झटपट ओ नटखट तू खा रे, मीठी०।।3।।
तारे गिनगिन रैन बितानी, अँखियाँ दर्शन को तुव तरसानी।
अब हँस-हँस के अमृत रस 'प्रेम' पिलारे, मीठी सी०।।4।।
(गंगा तट पर अपनी-अपनी सेवा पूजा करने के लिए बैठ जाती हैं)।

समाज-

बैठी पूजा करैं कछु बाला। आय गये तहाँ गौर गोपाला।

(प्रवेश निमाई और सखागण)

निमाई-ओ गो! तोमरा कि कौरो?

बालिकाएँ-आमरा देव पूजा कौरी।

निमाई-ओ हो हो! यह पूजा कहाँ ते सीख लीनी है-आँख बन्द करकै अन्धी बननौ-यामें कहा सुख है? आँख खोल करकै मेरे दर्शन करौ और यह सब भोग फोग मोकूँ खवाय देऔ। भूख लग रही है।

गाना- **दादरा**

पूजा फूजा दैहौं बहाई, गंगा जल माँही।।1।।
भाव बिना पूजा पोल, हरि हरि हरि बोल।
हरि रस में मत्त डोल, याते पर नाहीं।।2।।

अच्छौ यह बताऔ तुम कौन की पूजा कर रही हो।

बालिका 1-मैं शिवजी की पूजा कर रही हूँ।

बालिका 2-मैं गौरी मैया की पूजा कर रही हूँ।

बा० 3-मैं गंगा मैया की कर रही हूँ।

बा० 4-मैं गोपालजी की।

निमाई-

गंग गौरी मेरी दासी, भोलानाथ मो उपासी।
मैं ही हरि अविनाशी, पूजौ मो पाँही।।3।।

बा० 1-(गर्म होकर) ओ मा! भगवान् साजे! एतो बड़ो बुक्। अरे ढीठ लबार। तू भगवान् बनै है और देवी-देवतान कूँ अपनौ दासी दास बतावै है। वे रिस है गये तौ तेरौ सर्वनाश है जायगौ।

निमाई-और तिहारी इन पूजान ते वे बड़े प्रसन्न है जायँगे, क्यों? पूजा करौ हौ अपने तांई और कहौ हौ हम शिवजी की, गौरी-गंगा की पूजा करैं हैं। मैं सब जानूँ हूँ तुम काह के तांई पूजा कर रही हौ।

बा० 2-काहे के तांई कर रही हैं, बताया!

निमाई-दूल्हा के क्यों! काजौ ठीक है न?

बालिकाएँ-(लज्जा पूर्वक सिर नीचे कर लेती हैं)।

निमाई-अब चुप कैसे है गईं? यही है शिवजी की और गौरी-गंगा की पूजा? यह तौ अपनी पूजा है। ऐसी पूजा कूँ तौ गंगा में बहाय देऔ और हरि हरि बोलौ।

बा० 3-कहा यासों गंगा-गौरी-महादेव बाबा रिसायँगे नहीं और हरि बोले ते रीझ जायँगे।

निमाई-हाँ! हाँ! रीझ जायँगे और वर देंगे।

पूर्व पद

हरिहर गौरी गंग माय, रीझ-रीझ करैं सहाय।
वाञ्छा सब फलि है आय, दुक्ख रहै नाहिं।।4।।

ासों हरि-हरि बोलौ और यह भोग मोकूँ खवाय देऔ। बड़ी भूख लग रही है।

बा० 1-(स्नेह पूर्वक) नैंक ठहर जा निमाई! हमकूँ पूजा कर लैन दै फिर सब प्रसाद तोकूँ ही खवाय दैंगी।

निमाइ-फिर वही पूजा! अरी बावरियो! एक मेरी पूजा सों ही सबकी पूजा है जायगी। लाऔ! देर मत करौ।

बा० 2-न देंगी तो कहा कर लेगौ हमारौ?

निमाई-तो छिनाय लऊँगो।

बा० 1–(गर्म होकर) बटे! एतो जोर होये छे गाये! लै छीन तौ देखैं कैसे छिनाय लेय है।

निमाइ–देख ऐसैं (छीनने दौड़ते हैं)।

बा० 1–(भागती हुई) आरे छिस् ना, छिस् ना, छिस् ना। दूर रह! (निमाई छीन लेता है) केड़े निलो मागो! बड़ो दुष्ट छेले!

निमाई–लै और करलै पूजा! देख तेरी माला बह जाय (बहा देना) और तेरौ भोग यह जाय। (मुँह में डाल लेना) बॅड़ो मिष्टी गो! बॅड़ो मिष्टि।

बा० 2–(रोष पूर्वक) एतो दुष्टामी तोर! तू ब्राह्मण बालक है कै शची माँ ने कोई असुर जायौ है।

निमाई–कहा कही असुर? असुर नहीं–मैं हूँ।

पूर्वपद

असुरन संहारकारी, स्वयं गोलोक बिहारी।
नन्दनन्दन मुरलीधारी, जानौ मोहिं नाहिं।।5।।

यासों मेरी पूजा करौ और ढोक् देऔ मोकूँ! जो मैं रीझ गयौ न तौ।

रीझ रीझ दैहों वर, दैहों दूल्हों सुन्दर।
पूत पाँच पाँच घर, खेलैं अँगनाहिं।।6।।

समाज–

दोहा

दुबक चली इक बालिका, लियौ घेरि निमाई।
हँसत सखा सब तारी दै, रही वह खिसियाई।।

निमाइ–(पकड़ कर) अरी ठग्गो! सूमनी! मेरे भोगै दुबकाय कै लै जानौ चाहै है! ला दै।

बा० 2–नहीं दऊँगी! तेरी अम्मा ते जाय कै कहूँगी।

निमाई–अच्छौ! मोकूँ डरपावै है तौ सुन।

करौ जो कृपनताई, अरपौ नहिं भोग लाई।
बूढ़ौ दूल्हहिं व्याहि, सौत चार खाहिं।।

बा० 2–(डरकर) अरे देवता! स्राप मत दै। लै अपनी भेंट–पूजा (दे देती है) अब तौ प्रसन्न है न?

निमाई–हाँ बड़ौ प्रसन्न हूँ! जा तोकूँ भक्त दूल्हा मिलैगौ और सात–सात पूत तेरी गोदी में खेलेंगे।

समाज-

डर डर डरपाइ बाला, कर कर कर देति ला ला।
हँसत खात जात लाला, जूँठन 'प्रेम' पाहिं।।

(प्रवेश पाँच वर्ष की बालिका लक्ष्मीप्रिया पूजन सामग्री लिए हुए)।

समाज- **चौपाई**

पंडित वल्लभाचारज कन्या। नाम लक्ष्मीप्रिया कन्या।।
जाको गह्यौ पानि निमाई। सो गंगा पूजन हित आई।।
सहज सुभाव सों निरखत गौरा। उत वह भोरी इत यह भोरा

बा० 1-निमाई! तू याकूँ पहिचानै है।

निमाई-ना! यह कौन है?

बा० 1-यह पण्डित वल्लभाचार्य की कन्या है। याकौ नाम है लक्ष्मीप्रिया। तू याके संग ब्याह करैगौ।

निमाई-अच्छौ! मेरे संग हाँसी करौ हो! मैं यहाँ नहीं रहूँगो। चलौ भैयाऔ! चलैं आगे (जाने लगना)।

बा० 2-अरे निमाई! याके थार में रसगुल्ला हैं। खायगौ नहीं कहा जैसे हमारौ खाय लियो।

निमाई-(चलते रहते हैं)

सब बा०-हरि बोल

निमाई-(मुड़ते हुए) हरि बोल।

बा० 3-अच्छौ निमाई! या लक्ष्मी कूँ दूल्हा कैसौ मिलैगा?

निमाई-ऐसौ मिलैगो जैसे काहू कूँ न मिल्यौ होय। लक्ष्मी! मेरी पूजा कर! मैं महेश्वर हूँ मेरी पूजा सों मनोकामना पूरी होयगी।

(बंगला)

........................आमि महेश्वर।
आमारे पूजिले पाबे अभीप्सित वर।।

(चै० भाग०)

(लक्ष्मीप्रिया निमाई का पूजन करती है)

समाज-

पाँच बरस की लक्ष्मी बाला। पूजत नाथ श्रीगौर गोपाला।।
श्रीचरनन पै चन्दन चरच्यौ। माल धराय भोग समर्प्यौ।।
पुनि प्रनाम कौतुक सह कीन्हे। हँसि हँसि उन असीसा दीन्हे।।

समाज- **श्लोक**

सङ्कल्पो विदितोऽसि, साधव्यो मदर्चनम्।
मयाऽनुमोदित! सोऽसौ सत्यो भवितुमर्हति।।

(भाग०)

निमाई-अरी लक्ष्मी! जैसे व्रजगोपिन ने भगवती महामाया कात्यायनी देवी की पूजा करी हती और श्रीकृष्ण ने उनकूँ वरदान दैकै उनकी मनोकामना पूर्ण करी ही, ऐसे ही वे तुम्हारी हू मनोकामना पूर्ण करेंगे। हरि बोल

सब बा०-हरि बोल।

बा० 1-अच्छौ देवता! अब तौ तिहारी पूजा हू है गई! अब एक भजन सुनाय दै और नाच कै दिखाय दै-

निमाई- **कालिंगड़ा-केहरवा**

कान्हर कारौ नन्द दुलारौ, मो नैनन को तारौ री।
प्राण पियारौ, जग उजियारौ, मोहन मीत हमारौ री।।
दृग में राजत, हिय में छाजत, एक छिना नहीं न्यारौ री।
मुरली टेर सुनावत निशिदिन, रूप अनुपम वारौ री।।
चरण कमल मकरन्द लुब्ध ह्वै, मन मधुकर गुंजारौ री।
रस रंगकेलि छबीले प्रभु संग, हित सों सदा विहारौ री।।

हरि बोल हरि बोल हरि बोल हरि बोल

(गाते-नाचते-निर्गमन)

(पटाक्षेप)

इति गंगा तट चापल्य लीला।

❧❖❧

उल्हानो लीला

(सप्तम वर्ष की लीला)

श्लोक

पौगण्डादौ द्विजगणगृहे चापलं यो वितन्वन्
विद्यारम्भे शिशुपरिवृतो जान्हवी स्नान काले।
वारिक्षेपैर्द्विजकुलपतीन् चालयामास सर्वा-
स्तं गौराङ्ग परम चपलं कौतुकीनां स्मरामि।।

(श्रीगौराङ्ग लीला स्मरण मङ्गल स्तोत्रात्)

पद

सुमिरौं चपल चारु चितचोर।
कौतुक केलि कलाधर बाल, विश्वम्भर हरि गौर।।
पाव पलक महँ पढ़ैं पाठ सब, विष्णु, विष्णु गुरु ठौर।
पुनि पढ़ाय सिखावैं सखनहिं, बनैं आप गुरु गौर।।
पढ़ि पढ़ाय चलैं शिशुन संग, नाच गाय करैं रौर।
मारग चलत नारि नर मोहत, चितै रहैं ठगे ठौर।।
गंगा जल धँसि धूम मचावैं, जायँ ओर ते छोर।
डूबैं, पकरैं, उछरैं किलकैं, छिटकैं जल चहुँ ओर।।
बाल बचैं ना वृद्ध बचै कोई, करैं रार बरजोर।
खीजैं कोई 'प्रेम' कोई रीझैं, वारैं तन तृन तोर।।
(प्रवेश-निमाई गाते हुए सखाओं के साथ-सबके हाथों में पुस्तक)।

निमाई-झिंझोटी कल्यान (दादरा-केहरवा)

कहाँ मेरौ वृन्दावन, कहाँ जसोदा माई।

सखा-

यही तेरौ वृन्दावन, शची जसोदा माई।।

निमाइ-

कहाँ मेरौ नन्द बाबा, कहाँ दाऊ भाई।

सखा-

जगन्नाथ नन्द बाबा, विश्वरूप भाई।।

निमाइ–

कहाँ मेरी कारी धौरी, धूमर गाई।

सखा–

धौरी धूमर पोथी पन्ना, कारी कारी स्याई।।

निमाइ–

कहाँ मेरी मुरलिया, सुबल श्रीदामा भाई।

सखा–

कण्ठ तेरी मुरलिया, हम हैं सखा भाई।।

निमाइ–

कहाँ मेरौ यमुना पुलिन, कहाँ वंशीवट।

सखा–

पाठशाला यमुना पुलिन, वट चण्डी मण्डप।।

निमाइ–

कहाँ मेरी गोपीजन, कहाँ रा–रा–राधारानी।

समाज–

ब्रजभाव जाग्यो 'प्रेम', सुध बुध हिरानी।।

निमाइ–(श्रीकृष्ण भाव विभोर हो) राधे! हा राधे–रा–धे (मूर्च्छा। सखा सम्हालते हैं)

समाज–

सखा सम्हारैं अचरज मानैं। भाव दशा आजै लखि पानै।।
टेरत बोलत चेत करावैं। भैया निमाइ कहि कहि बुलावैं।।
पुनि सब मिलि हरि हरि गाये। भयौ चेत तब सब सुख पाये

सखा–

बूझत कहा भयौ तोहि निमाइ। गावत गावत दशा पलटाई।।

निमाइ–न जानै भैयाऔ! यह कैसे भयौ! मैं तो कृष्ण लीला कौ पद गाय रह्यौ हो परन्तु न जाने राधा नाम लेत ही मोकूँ कहा कछु है गयौ–सो मेरी सुधबुध जाती रही।

सखा–निमाई! तैंने कृष्णलीला कौ भजन कहाँ ते सीख लियौ पूर्वजन्म में तू ब्रज कौ कोई गोपाल तौ नहीं हो। जो तोकूँ गोपी–गोप, गाय वृन्दावन की याद आ रही है।

निमाई-(बात टालते हुए) चलौ गंगाजी चलैं! देर है गई है। (प्रस्थान)

समाज- **दोहा**

गये मिश्र भवन महँ, ब्राह्मण बहुत रिसाय।
जिन संग ऊधम गंग तट, कीन्ह रहे निमाय।।

(प्रवेश ब्राह्मणों का दल चिल्लाते-पुकारते हुए)

ब्राह्मण दल-ओ मिश्र मो'शाय! जगन्नाथ मो'शाय! कोथाय आछो! बेरिये एसो!

जगन्नाथ-(प्रवेश पूर्वक) नमस्कार! नमस्कार! आसुन! आसुन!

ब्राह्मण 1-हुँ! बाप कौरे नमस्कार-बेटा कौरे तिरस्कार

ब्रा० 2-तिरस्कार ही नहीं अत्याचार! घोर अत्याचार!

ब्रा० 3-हमारे पामन पै न परिकै सिर पै चढ़ै है। पीठ पै चढ़ै है! पानी में डुबावै है! प्राण लैनो चाहै है।

जगन्नाथ-(हाथ जोड़) ब्राह्मणौ! शान्त होऔ! बात कहा है कहबे की कृपा करौ!

सब ब्रा०-बात है तिहारे सपूत निमाई की करतूत! सुनौ! हमारे संग वाने कहा कर्‍यौ है-

लावनी- **गाना**

बरजहु अपनौ लाल निमाई, वाने ऊधम बहुत मचाई।

ब्रा० 1-

मैं न्हावत हो गहरे जल, पाँव खैंचि लियो आय।
मैं डरप्यौ जल जन्तु कोई, टेरत अति घबराय।।
हँसत तारी दै दै निमाई, वाने ऊधम०।।

ब्रा० 2-

गीता पाठ मैं करि रह्यौ, आँखिन झोंकी धूर।
कहत जो गीता वक्ता मैं, दर्शन कर मम नूर।।
गीता पाठ सफल ह्वै जाइ, वाने ऊधम०।।

ब्रा० 3-

मैं बैठ्यौ हरि ध्यान में, दीन्हौ धक्का आय।
खाय गयौ नैवेद्य सबै, पूजा दीनी बहाय।।
कहै मैं ही भगवान निमाई, वाने ऊधम०।।

ब्रा० 4-

मो पीताम्बर बदलि कै, धरि गयौ काहू की सारि।
मैं जो उठाई पहनवे, हँसै सबै नर नारि।।
मैं लाजन मार्‌यो निमाई, याने०।।

ब्रा० 5-

मैं पूजत महादेवहिं, जपत मंत्र शिवाय।
मेरे नर्मदेश्वर उठाय, दियौ मुँह भीतर हाय।।
यह लच्छन विप्र के नांहीं, याने ऊधम०।।

ब्रा० 1-

एक दिना मेरौ लाल प्रिय, खेलत गंगा घाट।
दियौ धक्का निमाई ने, पर्‌यौ गंग अगाध।।
परमेसुर दीन्हे नचाइ, याने०।।

सब-

दीसत में छोटौ लगै, काटै सब के कान।
बरजे ते गरजै बहू, दुगुनौ ऊधम ठान।।
जुलुम अब 'प्रेम' सह्यौ ना जाय, याने०।।

अतएव मिश्रजी! आप शीघ्र ही कोई उचित व्यवस्था करैं। जैसे बनै वैसे अपने चंचल बालक कूँ सदाचार के पथ पै लावैं।

जगन्नाथ-गाना 1 ताल या दादरा

दोष जिन धरौ कोई, वह तो निपट बाल है।
छमहु गुरुजन सकल, समुझि अपनौ लाल है।।
जानहु मोहिं अपनौ तौ, पाऊँ यह असीस मैं।
आयु सुमति शील रति, बाढ़ै लाल की ईश में।।
करि करि यतन हम तौ हारै, मानत ना खिलारी है
रावरे असीस कौ ही, बड़ौ 'प्रेम' अधारी है।।

भगवान्! आप सब वृद्धजन हैं, वह बालक है एक बार और क्षमा कर दैवे की कृपा करैं। मैं आज वा चपल कौ विशेष शासन करूँगो। समझायवे-बुझायवे सौं अब काम नहीं चलैगो। यहाँ ते वह पढ़वे के तांईं जाय है और वहाँ जाय कै ऐसे-ऐसे ऊधम करै है। अब यह बन्द करनौ ही होयगौ।

ब्रा० 1-हाँ मिश्रजी! परन्तु विशेष ताड़ना नहीं करनौ।

कवित्त

मारनो न बालक के माखन-से गालन पै
अँगुरियाँ गड़ जायँ, तौ कैसे निहारि हैं।
ताड़नौ न कमल तन, कमलन माल सोंहू
जोर-ज़रब आवै तौ, कैसे नाचि गाई है।
डाँटनौ न कड़क कै, अटकि कै न राखनौ
चाँद बिन अँधेरौ नवद्वीप है जाइ है।
(केवल) गोद में बैठार 'प्रेम', इतनो समझाय दीजौ
न्हैहौ अधिक गंग तौ, रोग लगि जाइ है।।

ब्रा० 2-हाँ मिश्रजी! आपके चंचल निमाई में न जानै कहा एक विचित्र गुण है कि वह क्षण भर में तो जराय देय है और क्षण भर में सिराय देय है-

कवित्त

रिस उपजाय देत, हृदय जराय देत
(पै) गाय कै रिझाय देत, ऐसौ तुव सूनौ है।
डारि डारि धूर वह, आँखिन थिराय देत,
सिराय देत रस च्वाय, मानौ चाँद पूनौ है।
जल सों भिगोय हमें, मानौ तौ जराय देत,
बुझाय देत आगि पै, गाय हरि दूनौ है।
ऊधम करत 'प्रेम', नीम सों निमाइ लागै,
पै मधुर अमृत सों, चौगुनौ सौगुनो है।।

जग०-कडुऔ, मीठौ, जैसौ कछु होय, वह आप सबन कौ ही बालक है। आप सबन की कृपादृष्टि वाके ऊपर बनी रहे। वाकौ कल्याण आप लोगन के हाथ में ही है।

ब्रा० 1-श्रीहरि वाकौ मंगल करैं। विद्या, बुद्धि, दीर्घायु प्रदान करैं।

ब्रा० 2-वह आपके वंश कूँ समुज्ज्वल करै।

ब्रा० 3-सुख, समृद्धि कूँ प्राप्त होवै।

ब्रा० 4-इहलोक में कीर्ति, परलोक में सदगति मिलै। अच्छौ तौ अब आज्ञा होवै मिश्रजी! नमस्कार!

जग०-नमस्कार! नमस्कार! (ब्राह्मणों का निर्गमन)

समाज– **कुंडलियां**

आये अवगुन गान कूँ, गाय चले गुन गान।
ऊधम करत प्यारौ लगै, को जग बिन भगवान।।
को जग विनु भगवान, बात जिनकी सब प्यारी।
उलट पुलट सबहि कछु, अतिशय हिय सुखकारी।।
ईशता लच्छन यहै, सबके मनन भाय है।
जो हैं सब गुन खान, तहाँ अवगुन कैसे आय है।।

दोहा

अन्तर भवन शची मात ढिंग, आईं वाला वृन्द।
जिन संग ऊधम गंग तट, किये निमाइ चन्द्र।।

(शची माता के समीप बालिकाओं का आना)

बालिकाएँ–माँ माँ ओ शची माँ!

शची–(निकल कर) कहा बात है बेटियौ! कैसे झुण्ड की झुण्ड चली आय रही हौ?

बालिका–(रुआँसी बनकर) माँ! तुम्हारौ निमाई हमकूँ बड़ो दुःख देय है। यह देखौ! वाने मेरे केशन में काँटे भर दिये हैं।

शची–ला बेटी! मैं निकास दँऊ। कहीं तैंने ही तौ नहीं भर लिये।

बा० 2–माँ! मैं घाट पै ठाड़ी ही। निमाई ने मेरे मुख पै कुल्ला कर दियौ।

शची–(हँसती हुई) तैंने मुख नहीं धोयौ होयगौ। वाने गंगा जल सों धोय दियौ।

बा० 3–वाने मेरी डलिया सों सब फूल लै लिए और अपने केशन में खोंस लिये और काँटे मेरी सारी में चुभोय दिये। वह देखौ मेरी सारी फट गई! माँ मारैगी।

शची–(प्यारी करती हुई) बेटी! दुःख मत कर। मैं तोकूँ दूसरी सारी पहनाय दऊँगी। परन्तु पूजा के तांईं काँटे वारे फूलन कूँ लै कैसे गई। अच्छौ ही तौ कियौ वाने। तोकूँ सीख दै दई!

सब–माँ! तुम्हारे निमाई के ऊधमन कौ कछु अन्त नहीं है–

गाना– **लावनी–केहरवा**

ढीठ लंगर नटखट निमाई तेरौ, ढीठ लंगर नटखट।।1।।
हम गंगा जल मध्य न्हावैं, पाँव पकरि जल माँहि डुबोबै
हमरे तन में धूर उड़ावै, भर दै केशन धूर माई, तेरा०।।
हम पूजाहू करन न पावैं, लाल तिहारौ आय सतावैं।
देव वस्तु लै वह खा जावै, कहै मैं देव कौ देव माई तेरो०।।
हम सों कहै पूजौ तुम मोकूँ, मैं वरदान दऊँगो तुमकौ।
सुन्दर दूल्हा मिलिहै सबकूँ, हम लाजन मरि जाई, माई०।।
नन्दनन्दन कहा धूम मचाई, जैसौ ऊधम करै निमाई।
जो हम जाय कहैं पितु माई, होवै 'प्रेम' लराई, माई०।।

बा० 1–ऐसे–ऐसे ऊधम वह हमसों नित प्रति कर्‌यौ करै है। हम कहाँ तांई चुपचाप सहैं और न कहैं आप सों।

बा० 2–कहैं हैं कि नन्द यशोदा के लाला कन्हैया व्रज–बालान के संग यमुना के तट पै बड़ी चंचलताई कर्‌यौ करते। सो वैसौ यह निमाई आपने जायौ है।

बा० 3–परन्तु माँ! तब तौ द्वापर हो और अब तौ कलिकाल है। जो हम कहुँ अपने मैया बाबा सों कह दैं तौ फिर आप सों उनकी कैसी लराई होयगी।

शची–ना बेटियो! अपने घर में मत कह दीजौं। जो कछु कहनौ–सुननौ होय मोसों ही आयके कह लीजौं आज वह पाठशाला ते आवै तौ सही मैं वाके बाबा सों कहकै वाके सब रंग–ढंग छुड़वाय दऊँगी।

(प्रवेश जगन्नाथ मिश्र हाथ में छड़ी)

समाज– **दोहा**

तबही बाहर गेह ले, आये श्रीजगन्नाथ।
कहत कछुक रिसाय कै, तुम जो विगार्यौ तात।।

जग०–शची! तुम्हारे अति लाड़ ने निमाई कूँ बिगार दियौ है। वह तुम्हारो लाड़लो गंगा में ऊधम मचामतौ डोलै है। ब्राह्मणन कूँ स्नान–ध्यान, पूजा–पाठ, कछु नहीं करन देय है। आज हू ऊधम कर्‌यौ है वाने।

शची–परन्तु नाथ! या समय तौ वह पाठशाला में ही होयगौ।

जग०-नहीं! वह तौ गंगा में पहुँच गयौ है। अबही कछु ब्राह्मणन के मुख से यह सुन्यौ है। उनके संगहू वाने बड़ी ढीठता करी। सो अब मैं वहीं जाय के वाकी पूजा करूँ हूँ। वह देवता बातन सों नहीं मानै है।

(क्रोधावेश में प्रस्थान)

समाज- **चौपाई**

मिश्र को पलखि धन्या कन्या।
भईं व्याकुल मति गौर अनन्या।।
कहन लगीं मारेंगे निमाई।
जाय सचेत हम करि हैं माई।।

बालिकाएँ-हाय हाय माँ! बाबा तौ रिसाय कैं छड़ी लैकैं गये हैं। कहूँ निमाई के कोमल अंग पै मार न दैवैं। हम जाय कै सावधान कर देय हैं।

शची-हाँ हाँ बेटियो! जाऔ! दौड़ जाऔ! बलिहारी जाऊँ मेरे लाल कूँ इनके कोप सों बचाय देऔ। तिहारौ यह कोमल हृदय मेरे निमाई की रक्षा करै।

बालिकाएँ-माँ! आप चिन्ता न करैं। हम अवश्य ही बचाय दैंगी।

(सब बालिकाएँ दौड़ पड़ती हैं)

शची- **दोहा**

धन्य हितू इनको हृदय, भूल गईं निज दुक्ख।
फलै फलै मनोकामना, पावैं ये सब सुक्ख।।

(पटाक्षेप)

समाज-

दौरि तट गंगा सब धाईं। ऊधम करत फिरैं जु निमाई।।
कबहू जल महँ केलि मचावैं। कबहू थल महँ खेल रचावैं।।
धूर वारि काहू तन डारै। पुनि हरि बोल हरि उच्चारैं।।

(प्रवेश निमाई और सखावृन्द गाते हुए)

निमाई सखावृन्द-बैंड मार्च

खेल खेलेंगे हम् हम् हम्
बोल बोलेंगे बम् बम् बम्।
खेल खेलेंगे, गीत गायँगे, नाचेंगे हम छम् छम् छम्।।

कंकर पत्थर ढेल चलेंगे, आनन्द से पग धरे बढ़ेंगे।
काँटों से हम नहीं डरेंगे, फूल चुनेंगे हम् हम् हम्।।
पर्वत पर झूला डालेंगे, सागर से मोती बीनेंगे।
तारों को गोदी में भरेंगे, चमकेंगे हम चम् चम् चम्।।
रोतों को तो खूब हँसावैं, हँसतों को बस सदा रुलावैं।
सोतों को जा 'प्रेम' जगावैं, ढोल बजावें डम् डम् डम्।।
हरि बोल बजे ढोल, हरि बोल बजे ढोल।। खेल०

(प्रवेश बालिकाएँ दौड़तीं हुईं)

बालिकाएँ-ओरे निमाई! पालाय, पालाय! तोर बाप् लाठी निये आस्छे। मारबे तोके। पालाय! सत्वर पालाय।

(चली जाती हैं)

निमाई-भैयाओ! तुम सब यहीं रहौ। बाबा पूछैं तो कह दीजौं निमाई तो यहाँ आयौ ही नहीं। (भाग जाते हैं)

जगन्नाथ-(दूसरी तरफ से प्रवेश कर) अरे बालकौ! निमाई कहाँ है? बताऔ।

सखा 1-बाबा! वह तौ यहाँ आयौ ही नहीं!

जग०-कैसे आयौ नहीं? झूँठ बोलौ हौ। अबही तौ ब्राह्मणन ने यहाँ ते जायकै मोसों वाकी शिकायत करी है!

बालक-तौ आयौ होयगौ। हमने तो नहीं देख्यौ।

बा०-और कोई दूसरे घाट पै गयौ होयगौ बाबा।

जग०-कहूँ होय, छोड़ूँगो नहीं। कहाँ छिपैगो अबही पकरूँ हूँ। (चले जाते हैं)।

समाज- **चौपाई**

दूजे पथ घर गये विश्वम्भर। हाथ में पोथी मोहन शशधर।।
मुख मसि बेंदा लीन्हे लगाय। मानो जल कहूँ परस्यो नाय।।
आये गेह प्रभु टेरत माय। दै मा तेल, हौं आऊँ न्हाय।।
मात निरखि तन बलि बलि जाय।
स्नान चिन्ह नहिं अंग दिखाय।।
मसि विन्दु अंग अंग जहँ तहँ।
वसन सोइ पोथी सोइ कर महँ।।

तबहि जगन्नाथ गये जु आय। गरे निमाई लिपटे जाय।।

निमाई-बाबा! बाबा! बाबा! (दौड़ बाबा के गले लिपटते)।

समाज-

गये विसर मिश्र सब क्रोधा। करैं मधुर वचन न प्रबोधा।।

जग०-

कहा मति गति लाल तैं पाई। ऊधम करत गंगा तट जाई।।
लोग उलनो जायँ सुनाई। यह तौ अनुचित लाल निमाई।।

निमाई- बाबा

मैं तौ आवत पढ़ि चट सार।
गयौ न्हान कब गंगा धार।।
ऊधम फिर कहौ कैसे कीन्ह। को तुमसों झूठी कह दीन्ह।।

शची-हाँ नाथ! यह तो पाठशाला ते आयकै ठाड़ौ ही भयौ है देखौ न, याके हाथन पै, मुख पै स्याही के चिह्न ज्यूँ के त्यूँ बने भये हैं। केशन में धूर भर रही है। भलौ यह गंगा कब गयौ।

जग०-यह नहीं गयौ तौ कौन गयौ, कौन ने उनकूँ सतायौ। कहा वे सब बड़े बूढ़े ब्राह्मण झूँठमूठ में इतनी बात गढ़ गये।

निमाई-हाँ बाबा! वे सब मोपै झूठौ ही दोष लगावैं हैं।

रसिया- **गाना**

झूठौ ही दोष लगावैं बाबा वे झूठौ ही दोष लगावैं।
प्रात उठि चटसार गयौ मैं, पोथी पढ़ पढ़ अबहि आयौ मैं
संग सखा मेरे चंचल घूमें। मोसों कहैं चल चल रे निमाइ
गंगा न्हावन जावैं, बाबा झूठौ ही०।।1।।
मैं न गयो उन संग गंगा कूँ, आय रह्यौ सूधो मैं घर कूँ
वे जो गये गंगा के तट कूँ। ऊधम उनने ही कीन्हों वहाँ पै
मेरो नाम लगावैं, बाबा झूठो०।।2।।
वे तौ बहुत उनकी तुम मानौ, मेरी बात न तुम मन आनौ
सूधेन को नहीं ठौर ठिकानौ।
झूठो 'प्रेम' अब साँचेइ करिहौं
जो ये अधिक खिजावैं बाबा०।।3।।

जो ये सब मोकूँ झूठे ही ऊधमी-ऊधमी कह कहकै मेरौ नाम बिगारैंगे तो मैं साँचे ही ऊधमी बन जाऊँगो ऊँ-ऊँ-ऊँ (रोने लगते हैं)।

शची-अजी आपने नाहक में बालक कूँ रुवाय दियौ। लोगन के कहे पै पूजा पाठ छोड़ गंगाजी दौड़े गये! अब आप जायकै अपनौ नित्य कर्म पूरौ करौ। रसोई में देरी नहीं है (जगन्नाथ जी चले जाते हैं)।

शची- **चौपाई**

बड़ौ धूत तू पूत निमाई। भली कला आज प्रगटाई।
साँचेन कूँ झूठौ ठहरायौ। बाबा को हू खूब छकायौ।।
जानूँ तेरी कपट कहानी। गंगा जाय जिमि धूम मचानी।।

दोहा

अपने पानि पगन पै, आपै मसि लिपटाय।
केशन धूरहू डारि कै, बन्यौ भोरौ आय।।

क्यों यही बात है न?

निमाई-(हँसता हुआ सिर हिला देता है)।

शची-वह तौ तेरे भाग्य अच्छे हे जो वे बेचारी बालिका यहाँ बैठी हतीं। एक तू है जो उनकूँ सतावै है और एक वे हैं जो तोकूँ बचावैं हैं। नहीं तौ आज तोकूँ छठी की याद आय जाती। बेटा तू इतनौ ऊधमी क्यों बनतौ जाय रह्यौ है। मैं तौ समझाय-बुझाय कै हार गई! तू ऐसौ को आयौ है मेरे?

निमाई-(हँसकर) वही!

शची-वही कौन!

निमाई-वही! (त्रिभंग हो मुरली धर मुद्रा में खड़े हो जाते)।

शची-अच्छा! वंशी बजायवे वारौ कन्हैया।

निमाइ-हाँ।

गाना

मैं ही कन्हैया, वंशी बजैया, धेनु चरैया, गिरिवर उठैया
नाग नथैया, चीर हरैया, गोपी नचैया, रास रचैया।।1

शची-(हँसती हुई) फिर वही पुरानी बात पागलपने की। अच्छौ! तू वंशी बजैया, नाग नथैया है, तौ हाथ बँधवैया, कटि बँधवैया हू तू ही है न?

निमाई-(हँसते हुए) हाँ हाँ! वह हू मैं ही हूँ।

दाम बँधवैया, दाम छुड़वैया, दाऊ कौ भैया, हाऊ नसैया।

नन्द कौ छैया, कामर ओढ़ैया, कंस हनैया, व्रज कौ बसैया।

शची-तौ ठहर! मैं हू आज यशोदा बनकै तोकूँ बाँध कै ही दिखाऊँ हूँ और फिर तेरे बाबा कूँ बुलवाय कै तेरी पूजा करवाऊँ हूँ। तबही तू सूधो होयगौ। यह बकवास, यह उत्पात तबही बन्द होंगे (पकड़ना चाहती हैं)।

निमाई-(भागते हुए अँगूठा दिखा-दिखा कर चिढ़ाता है)

शची-भाग, कहाँ भागैगौ! गंगा तांई पीछो नहीं छोड़ूँगी।

समाज- **दोहा**

मात तात मधि नेह की, परी जू होड़ाहोड़।
घर आँगन भाजत फिरैं, मची सु दौरा दौर।।
वह मृग छौना ज्यूँ अति भागैं। हाथ न मात के नेकहू लागैं।।
हारि शची तब कहति बुझाईं। मैं हारी तू जीत्यौ निमाई।।
को बाँधै कर पद तुव लाला। आऔ राखौं कंठ करि माला।।

समाज-
अंक भरन हित शची ललचावै। वह बाहर खेलन हित धावै।।
मात कोप करि छरी उठाई। भजै बनावत मुखहिं निमाई।।
आँगन कोन पै जूँठो हँडिया। धाय परसि निडर करैं बतियाँ।।

निमाई-(जूँठी हँडिया उठाकर) हरि बोल! पकर लै अब।

शची-हाय हाय! अरे सरभंगी! तोकूँ जूँठी हँडिया छीबे की यह कैसी कुटेव पर गई है। तू समझै है मैं तोकूँ नहीं छीऊँगी! परन्तु आज तोकूँ पकरि कै पीटे बिना नहीं छोड़ूँगी भलेइ दुबारा स्नान करनौ पर जाय (पकड़ने को आगे बढ़ती हैं)।

निमाई-तौ लै पीट लै (कहते हुए हँडिया माता के आगे पटक देते हैं)।

शची-(बैठ पड़ती हैं) अरे निमाई! तू मोकूँ मारैगौ न? तौ लै मैं मरूँ हूँ। (जमीन पर लेट पड़ती हैं) जा अब खूब ऊधम कर।

समाज-
देखत दौरि निमाई आये। माँ माँ कहि कहि गर लिपटाये।।

निमाई-
अब मैं ऊधम नाहिं जु करिहौं। कबहू माँ! तुमसों नहिं लरिहौं
उठहु बोलहु तनक निहारौ। उर कठोरता काहे धारौ।।
टेरत मा मा कहि लिपटाये। हँसत उठीं शची कंठ लगाये।।

शची-

अबकै देव दया जू कीन्ही। मोकूँ पुनि जिवाय जु दीन्ही।।
देहु छाँड़ि सब चंचलताई। नातर जैहैं देव रिसाई।।
अधिक कहा कहौं समुझाई। मेरे प्रान न बचिहैं निमाई।।
मेरे प्राणधन! लाल! (गद्‌गद् रोने लगती)।

निमाई-माँ! तुम रोऔ मति ना! मैं अब ऊधम नहीं मचाऊँगो! तुम रोऔ मत! मैं तुम्हारी आँखन में आँसु नहीं देख सकूँ हूँ (पोंछ देते हैं)।

शची-चल बेटा! भोजन कर लै। भूख लग रही होयगी (निमाई को लेकर चली जाती हैं)।

समाज- **दोहा**

तात मात की नेह भरी, लीला कौ नहीं पार।
पढ़त सुनत हृदय बहे, निर्मल प्रेम की धार।।
इति उल्हाना लीला सम्पूर्ण।

❖

पौगण्ड-लहरी **चतुर्थ कणामृत**

विश्वरूप-गृह-त्याग

(पंचम वर्ष की लीला)

श्लोक

श्रीमत् विश्व रूप सकल गुणनिधिः षोडशोब्दोऽति शुद्धः
प्रापाचार्यत्वमात्म श्रवण मननतः शक्तधीः प्रेमभक्त।
सर्वज्ञः सर्वदाऽसौ नरहरि चरण सक्तचितोऽति हृष्टः
शान्तः सन्तोष युक्तो जगति न रतिमान् वेदवेत्ता रसज्ञः।।

(मुरारि गुप्त का कड़चा)

दोहा

विश्वम्भर हरि गौर के, विश्वरूप बड़ भाई।
नित्यानन्द स्वरूप सों, कह्यौ अभेद है गाय।।

नव यौवन षोडश वयस, महा पंडित गम्भीर।
भक्ति ज्ञानमय पान करैं, छांड़ि विषय विष नीर।।
रात्रि काल निज शयन गृह, बैठि कियौ निरधार।
मन माधव कूँ बिन दिये, को उतर्यौं भव पार।।
(दृश्य-शयनागार। विश्वरूप विचार मुद्रा में शय्या पर बैठे हैं)।

विश्वरूप- **गाना-सोरठ-तिताला**

यह हृदय एक हरि कौ, यामें भाग न काहू कौ।। टेक।।
धर्म में भाग है, धन में भाग है,
हृदय में नहीं है भाग काहू कौ।। यह०।।
दया में भाग है, दान में भाग है,
'प्रेम' में नहीं है भाग काहू कौ।। यह०।।

अतएव घर में रहूँगो तौ यह हृदय संसार कूँ दैनौ ही परैगौ। कृष्णदास सों मायादास बननौ ही परैगौ। घर में रहवे सों यह घर और वह घर दोनों ही चले जायँगे। अतएव त्याग! गृह त्याग! और कोई उपाय नहीं है।

न प्रजया न धनेन न मेधया न
बहुना श्रुतेन त्यागेनैकेनामृतमश्नुते।।

दोहा

नहिं धन नहिं जन विद्या सों, वेद पाठ सों नाई।
एक त्याग ही सों मिलै, अमृत पद सुखदाई।। यह०
त्याग मूल है धर्म कौ, सेवा मूल है त्याग।
त्याग ही लक्षण प्रेम कौ, बड़ौ भाग है त्याग।। यह०
जो राखै सो खोय है, जो खोवै सो पाय।
उलटौ पंथ है 'प्रेम' कौ, मरै अमर है जाय।। यह०

अतएव त्याग! गृह त्याग! संसार-त्याग। त्यागाच्छान्ति-रनन्तरम् (कहते-कहते प्रस्थान)।

समाज- **दोहा**

अद्वैत आचारज प्रभु, ज्ञानी भक्त महान।
वैष्णव भक्त समाज के, पोषक प्रबल प्रधान।।
गौर जन्म जबसों भयौ, तबसों नदिया माँहिं।
सीताराम अद्वैत हू, करहिं वास सदाहिं।।

सोरठा

यही आश अभिलाष, कृष्ण प्रकाश कब होय।
कब भक्तन दु:ख नाश, प्रगट विहार करिहैं प्रभु।।

(दृश्य-अद्वैत सभा। अद्वैत, श्रीवास, हरिदास, मुकुन्द, मुरारि आदि भक्तजन बैठे हैं)।

दोहा

भक्तिशाला नदिया महँ, भक्त सकल तहाँ जांयँ।
ज्ञान-भक्ति-वैराग्य की, नित त्रिवेनी न्हांयँ।।

चौपाई

श्रीवासादिक भक्त नित आवैं। महत् संग सुख शान्ति पावैं।।
भवन अद्वैत सभा नित सोहै। भक्ति शास्त्र चर्चा बहु होवै।।

अद्वैत-श्रीवास जी! वा चोर कौ कहूँ अनुसन्धान मिल्यौ कै नहीं?

श्रीवास-आचार्य देव! हमकूँ तौ आज पर्यन्त कछुइ अनुसन्धान नहीं मिल्यौ। आपही रहस्य-ज्ञाता हैं। आपही कृपया कछु पतौ बतावें।

अद्वैत-श्रीवास जी! मैं तौ पहले ही आप सब भक्तन के निकट निवेदन कर चुक्यौ हूँ कि वह व्रज कौ चोर चक्रवर्ती पुराण पुरुष यहीं कहीं नवद्वीप में बाल रूप में प्रच्छन्न विहार कर रह्यौ है और वाही के दर्शन के निमित्त मैं यहाँ नवद्वीप में भक्ति-पाठशाला खोल कै बेठ्यौ हूँ। आशा है कि शीघ्र ही हमारौ मनोरथ सिद्ध होयगौ।

(प्रवेश विश्वरूप)

समाज- **चौपाई**

विश्वरूप तहँ वक्ता प्रधाना। ज्ञान भक्ति व्याख्या करैं नाना।।
भक्ति भागवत मधुर बखानैं। प्राण तुल्य आचारज मानैं।।

विश्वरूप-(सबको प्रणाम करके बैठ जाते हैं-शान्त, गम्भीर)।

अद्वैत-आज विलम्ब करकै कैसैं आये वत्स! कुशल तौ है, चित्त तौ प्रसन्न है?

विश्व०-कृपा है आपकी देव!

अद्वैत-परन्तु आज तुम्हारी ऐसी गम्भीर मुद्रा क्यों? तुम्हारे उज्ज्वल मुख पै विषाद की झलक क्यों?

विश्व०-(नतमस्तक मौन बैठे रहते हैं)।

अद्वैत-बोलौ वत्स! तुम ही तौ हमारी मंडली के वक्ता हौ। कछु भागवत-चर्चा चलाऔ और हमारौ आनन्द बढ़ाऔ।

विश्व०-आचार्य देव! मैं आज या विचार में उरझ रह्यौ हूँ कि भागवत-धर्म कौ सार है?

अद्वैत-मुरारि! तुम इनके प्रश्न कौ समाधान करौ।

मुरारि-जो आज्ञा प्रभो! तौ देहानुबन्धी धर्म कूँ समूल त्याग कै स्वरूपानुबन्धी धर्म में स्थित है जानौ ही भागवत् धर्म कौ सार ज्ञात होय है।

विश्व०-देहानुबन्धी और स्वरूपानुबन्धी धर्म सों अभिप्राय कहा है?

मुरारि-जो जो आचार-विचार, क्रिया कर्म देह सों सम्बन्ध राखै है वह देहानुबन्धी धर्म हैं और जो स्वरूप सों सम्बन्ध राखैं है वह स्वरूपानुबन्धी धर्म है। चारों वर्ण एवं चारों आश्रमन के धर्म कर्म को सम्बन्ध जड़ देह सों ही है। चिदात्मा कौ तौ वर्ण-आश्रम कछुइ नहीं है। वह तौ परमात्मा कौ अंश है। अतएव जाकौ वह अंश है वा अपने अंशी परात्पर परमात्मा पुरुषोत्तम स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण की अनन्य भक्ति करनौ ही भागवत् धर्म कौ रहस्य है याहि कारण सों स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता के अठारह अध्यायन में प्रथम अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मन कौ उपदेश करके अन्त में 'सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज' कहकै सर्व धर्मन कौ त्याग नहीं परित्याग, जड़-मूल सों त्याग करकै अपनी अनन्य शरणागति कौ आदेश उपदेश कियौ। ठीक ऐसे ही श्रीमद्भागवत में भी भगवान् श्रीकृष्ण ने उद्धव के प्रति प्रथम कर्म, योग, ज्ञान, उपासनादि कौ उपदेश करके अन्त में यही आदेश कियौ कि तू इन समस्त कर्म-धर्म, प्रवृत्ति-निवृत्ति के गहन मार्ग कूँ छोड़कै मेरी शरण में आय कै निश्चिन्त, निर्भय है जा-

कवित्त

सुने को भी छोड़ अनसुने को भी छोड़ दे,
छोड़ करने योग्य न करने योग्य छोड़ दे।
विधि औ निषेध कर्म, योग ज्ञान छोड़ दे,
मेरे भी धर्म वाक्य जो, तिनको भी छोड़ दे।
नर्क भय छोड़ और स्वर्ग चाह भी छोड़ दे,
धर्म छोड़े पाप लगै, यह भी भय छोड़ दे।

अपने सब भाव 'प्रेम' मुझसे तू जोड़ एक,
मेरी बस शरण आ, सर्व धर्म छोड़ दे।।

श्लोक

मामेकं शरणमात्मनं सर्वदेहिनाम्।
याहि सर्वात्मभावेन मया स्या ह्यकुतोभयः।।

(भा०)

बस, यही भागवत् धर्म कौ सार है।

विश्व०-(स्वगत) अहा! यही तौ मैं हूँ सुननौ चाहतौ हो-सर्व धर्म परित्याग-परन्तु....

अद्वैत-क्यों विश्वरूप! मुरारि के निरूपण सों तुम्हारौ समाधान भयो कै नहीं।

विश्व०-है तौ गयौ देव! परन्तु मेरे विचार में सर्व धर्मत्याग नहीं, अनुराग ही भागवद्धर्म कौ प्राण है, मर्म है। अनुराग हैवे पै सर्व धर्म अपने आप ही छूट जायँ हैं। बिना अनुराग भये केवल आदेश-उपदेश के बल पै धर्म छोड़वे में निश्चय ही क्लेश होय है जैसे कि अर्जुन कूँ भयौ हो जाके तांई भगवान् कूँ कहनौ पर्‌यौ है 'माशुचः' शोक मत कर।

मुरारि-(उत्तेजित होकर) कहा श्रीकृष्ण के 'प्रिय इष्ट' सखा अर्जुन में अनुराग नहीं हो? यह तौ ज्वलन्त भास्कर कूँ अन्धकार कहनौ है।

विश्व०-दादा मुरारि! शान्ति रखें। यह शास्त्र विचार है। अवश्य ही अर्जुन कौ कृष्ण-प्रेम कोई सामान्य नहीं हो किन्तु वह सर्व धर्मन कूँ बहाय दैवे में समर्थ नहीं हो। साँचौ प्रेमी तौ एक इशारे पै ही नाचवे लगै है परन्तु अर्जुन तौ श्रीकृष्ण के आज्ञा पै आज्ञा करते रहवै पै 'युद्धस्व युद्धस्व' कहवे पै हू उठ्यौ नहीं, लड्यौ नहीं, बैठ्यौ ही रह्यौ माथौ पकरि कै-

कवित्त

कहै कृष्ण बार बार, लड़ मेरौ काम कर
न तो तू ही मारता, न ये ही मरन वारे हैं।
दिखाया विराट रूप, देख सभी मर रहे,
मरे को तो मार ले पै, तब भी नहीं मारे है।
आठ दश अठारह, पाठ गीता पढ़ाय हारे,
माने न अर्जुन न दिल से मोह टारे है

झूठी देह झूठे नेह, झूठे धर्म प्यारे हुये,
साँचे सखा प्रभु प्रेम, हुए नहीं प्यारे हैं।।

तब भगवान् कृष्ण ने-

कवित्त

और न उपाय देख, हार हरि बोले तब,
सर्व धर्म छोड़ अब, आजा शरन मेरी है।
(पर) कौन माने आज्ञा वहाँ, सुनते ही सूखा मुख,
हाय धर्म छोड़ूँगा तो, पाप लगे ढेरी है।
(तब तो) भक्त बेहाल देख शरनागत पाल प्रभु,
परम उदारता की बजाई आप भेरी है।
डरे मत, पाप सारे, तुझको न छूवें प्यारे,
मैं हूँ जामिन 'प्रेम' मान ले तू मेरी है।।

औ यदि भगवान् जामिन खड़े न होंते, 'अहं त्वा सर्व-पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि' कहकै वाकूँ सर्व पापन ते छुड़ाय दैवे की प्रतिज्ञा न करते, तौ अठारह अध्याय गीता पानी में ही जाते-अर्जुन न लड़तौ, न लड़तौ। जब गुरु भगवान् ने पाप को भार अपने माथे पै लियौ तब जाय कै शिष्य भक्त ने उनकी आज्ञा मानी, उनकौ काम कियौ। यह है 'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्' कहवे वारे शिष्य अर्जुन की गुरुभक्ति एवं भगवदनुरक्ति!

अब याके संग व्रजगोपिन के कृष्ण-प्रेम कूँ तौल करकै देख लेऔ। वह याते सर्वथा विपरीत है। उनके लिए न गीता कौ ज्ञान मिल्यौ, न 'सर्व धर्म छोड़ो' कौ आदेश भयौ और न ही 'मैं तुमकूँ सब पापन ते छुडाय दऊँगो' की प्रतिज्ञा की भेरी बजी। वहाँ ये सब कछुई नहीं। वहाँ तौ जैसेही वंशी-ध्वनि उनके कानन में गई वैसे ही सर्वधर्म-कर्म अपने आप ही छूट गये-बह गये।

कवित्त

बाजी वंशी आधी रात, धाय गईं वन माँझ
उमगि सरिता 'प्रेम', धर्म सब बहाये हैं।
जाऔ घर चली जाऔ, तजौ मोकूँ धर्म भजौ,
धर्म त्याग पाप घोर, भयहि दिखायौ है।
बोलीं काज नहीं झूठे पति, झूठे नातेन सों,
जागे भाग आज हम, साँचे पति पाये हैं।

हारे श्याम जीतीं गोपी, त्रिभुवन धुजा रोपी,
'प्रेम' प्रभु पायँ परी, रिनियाँ कहाये हैं।

अतएव पहलै छोड़नौ नहीं, पहले पकरनौ है, प्रथम सर्व-धर्म त्याग नहीं, अनुराग है। प्रथम है यही मेरे विचार में निष्काम, निष्कपट भागवत् धर्म कौ सार है।

अद्वैत-साधु साधु! अनुराग ही सर्वप्रथम है।

(पंचवर्षीय निमाई का दौड़ते हुए प्रवेश)

समाज- **दोहा**

पाँच वर्ष के गौर हरि, दिव्य दिगम्बर वाल।
दौरत धावत आये तहँ, विथुरी अलकन जाल।।
मोह लियौ मन सबन कौ, रूप अरूप दिखाय।
वचन माधुरी सों पुनि, दियौ सुधा बरसाय।।

निमाई-(विश्वरूप का हाथ पकड़) दादा! दादा! चलौ भात खायवे! माँ बुलाय रही है। देर है गई है।

अद्वैत-अहा! आज तौ सुमधुर-भागवत्-चर्चा में दोपहर न जाने कब निकस गयौ। जाऔ वत्स! देर बहुत है गई! माँ तुम्हारे पाये बिना भोजन नहीं करैंगी।

विश्व०-जो आज्ञा (प्रणाम करके निमाई का हाथ पकड़ धीरे-धीरे चलते हैं)।

समाज- **दोहा**

भक्त सकल देखत रहे, चले जात दोउ भाई।
अद्भुत शोभा दुहुँन की, रहै सबही लुभाई।।

चौपाई

दशा अद्वैत कछु कही न जाई। चकित मुग्ध लखि रहै निमाई
भ्रम मोह संशय महँ झूलैं। हरि मायावश ज्ञान जु भूलैं।।

अद्वैत- (स्वागत) हाँ हाँ, वे ही आये।
नहीं नहीं, वे नहीं, को ये आये।।

मुकुन्द-आचार्य देव! यह बालक निमाई कैसौ मनोहर है। हम सब अपने गृहस्थ के मोह ममता कूँ छोड़कै यहाँ भजन सत्संग करैं हैं परन्तु जब-जब यह बालक विश्वरूप कूँ बुलायवे आवै है तब-तब यह हमारे

नयन-मन-प्राणन कूँ एक विलक्षण स्नेह की स्निग्ध धारा सों सराबोर कर जाय है। ऐसौ यह बालक कौन आयौ है देव?

अद्वैत-याकी जन्मकुंडली और याके सामुद्रिक लक्षणनसों तौ ज्योतिष पण्डित याकूँ कोई विलक्षण महापुरुष बतावैं हैं। मैं हू कई बार भ्रम में पर जाऊँ हूँ कि कहूँ यह बालक ही तौ मेरे आराध्य देव नहीं हैं।

मुरारि-(स्वगत) कह दऊँ कहा कि यह बालक वही है। यही मेरो नाम है, यही तुम्हारो चोर-चूड़ामणि है। याही ने मेरी भोजन-थार में मूत कै मेरौ योग वाशिष्ट को विचार छुड़वाय दियौ है। परन्तु नहीं मोकूँ इनकी आज्ञा नहीं है। ये स्वयं ही उचित समय पै अपने कूँ प्रकाशित करेंगे।

श्रीवास-आचार्य देव! जब या बालक कूँ देख कै हमारी ऐसी दशा है जाय है तौ श्यामसुन्दर नन्दलाल गोपाल के दर्शन कर करकै व्रजगोपी यदि देह-गेह कूँ भूल बावरी बन जाती रहीं तो कहा आश्चर्य!

अद्वैत-अच्छौ श्रीवास जी! अब आप सब पधारैं और प्रसाद ग्रहण करैं। पश्चात् सायंकाल में दर्शन दैवे की कृपा करें। मुकुन्द! हरि-कीर्तन तौ कराते जाऔ।

मुकुन्द-जो आज्ञा देव!

कीर्तन पद- **भाँड**

मन मोहन मुरलीधारी, जय माधव मुकुन्द मुरारी।
गोविन्द गिरिवरधारी, गोपाल गोपी मनोहारी।।
व्रज गोधन पालन कारी, जय माधव मुकुन्द०।।
गोपी नवनीत अहारी, गोपीजन चीर अपहारी।
गोपीजन रासबिहारी, जय माधव मुकुन्द०।।
गोपेश अजिर बिहारी, गोपीश्वर कृपाकारी।
गोपीश्वरी 'प्रेम' भिखारी, जय माधव मुकुन्द०।।

(गाते-गाते प्रस्थान)

(दूसरी तरफ से प्रवेश मुकुन्द और मुरारि)

मुकुन्द-दादा मुरारि! विश्वरूप के सम्बन्ध में आपने कछु सुन्यौ है कहा?

मुरारि-हाँ भैया मुकुन्द! सुन्यौ तौ कुछ ऐसोइ है कि घर छोड़वे कौ कछु विचार कर रह्यौ है।

मुकुन्द-तब तौ शची माँ और जगन्नाथ मिश्रजी पै वज्र-पात ही है जायगौ! यासों उनकूँ सावधान कर दैनौ चाहिए।

मुरारि-तुम्हारौ कहनौ ठीक ही है परन्तु गगनचारी पंछी पिंजरा में नहीं रह सकै है। तौहू हमकूँ अपनौ कर्त्तव्य करनौ ही चाहिए। माता-पिता कूँ सचेत कर देनौ चाहिए।

(प्रस्थान)

(प्रवेश विश्वरूप एक पुस्तक लिये)

विश्व०-माँ माँ! (प्रवेश शची माता)

शची-कहा बात है विश्वरूप?

विश्व०-माँ! मैं यह पुस्तक तुमकूँ दैवे आयौ हूँ। जब निमाई

चौपाई

पढ़ लिख जब बड़ौ होवै भाई। पुस्तक यह दै दीजो माई।।

समाज-

सुनि सहमि बूझति अकुलाई। जात कहाँ तू छोड़ि निमाई।।

विश्व०-जायवे-आयवे की तौ ऐसी कोई बात नहीं है माँ! परन्तु-

चौपाई

छिन भंगुर तन कहा विश्वासा। राखत तासों तुम्हरे पासा।।
को जानै कल काल की बाता। को रहिहै को जैहै माता।।

दोहा

धरौ तासों सम्हार अति, यह ग्रंथ घर माँहि।
राखौ विनय इतनी मम, पढ़िहै भाइ निमाई।।

शची-अच्छी बात है, धर दऊँगी सम्हार कै, परन्तु आज तू कछु उदास उदास सौ दीखै है-बात कहा है?

विश्व०-कोई ऐसी बात नहीं है। औरहू एक मेरी प्रार्थना है माँ-

चौपाई

करि अति यतन पालिहौ भाई। आम बाल सम नाहिं निमाई
यह विश्वम्भर लाल तिहारौ। मंगल जग बरसावन हारौ।।

शची-(विश्वरूप के कन्धे पर हाथ रख चिन्ता प्रकाशपूर्वक) बेटा! आज तौ तेरी सबही बात कछु विचित्र सी लगै है। तेरौ यह मुखमण्डल मलिन है रह्यौ है। तुम तौ सदा शान्त सौम्य रहौ हौ। आज कछु और-और से ही कैसे दीख रहे हौ।

विश्व०-(मुस्कराने की चेष्टा करते हुए) माँ! यह सब तुम्हारी आँखिन कौ ही भ्रम है। अब तुम जाऔ माँ! विश्राम करौ और निमाई कहाँ है वाकूँ मेरे पास भेज देऔ।

शची-हाँ! तुम दोनों भाई मिलकै आराम करौ। निमाई! बेटा निमाई! (आवाज देती है)।

निमाई-(प्रवेश करते हुए) कहाँ है माँ?

शची-देख! यहाँ अपने दादा के संग बैठ (चली जाती है)

विश्व०-यहाँ आ भैया (गोद में बिठा लेते हैं)

समाज- **चौपाई**

एक दिना विश्वरूप निमाई। अंक बैठाय कहत समुझाई।।

विश्व०- **चौपाई**

बड़े भये अब तुम तौ भाई। बाल चपलता अब न सुहाई।।
भली बुरी दस लोग सुनावैं। सुनि सुनि हम सब बहु दुख पावैं
गंगा तट मति धूम मचाऔ। समय न खेल में वृथा गँवाऔ।।
छाँड़ि खेल मन पाठ में लाऔ। धन विप्रन कौ विद्या कमाऔ

निमाई-अच्छौ दादा!

ऐसौ ही मैं तौ अब करिहौं। तुम्हरे वचन शीश पै धरिहौं।।
मन लगाय नीके विधि पढ़िहौं। पंडितराज निमाई बनिहौं।।
तुमहू देऔ मोकूँ असीसा। निज कर कमल धरौ मन शीशा।।
लघु भ्राता जानि सब छमियौ। कृपा कोर मम ओर जु रखियौ

विश्व०-भैया! मैं अपने हृदय के अन्त:स्थल सों तुमकूँ आशीर्वाद दऊँ हूँ कि-

दोहा

अक्षय कीरति लोक में, रहै युगन युग छाय।
पाऔ परम पद अन्त में, रहैं श्रीहरि सहाय।।

भैया! अब तुम माँ के पास ही आराम करौ। मोकूँ लोकनाथ के पास जानौ है।

निमाई-(हँसकर) अच्छौ दादा! (चले जाते हैं)

समाज- **दोहा**

सहज मन्द मुसिक्याय कै, भीतर चलै निमाई।
विश्वरूप हिय विकल भयौ, संयम गयौ बहाई।।

चौपाई

देखत इकटक नैन भरि आये। प्रेम बाँध विराग बहाये।।

विश्व०- **चौपाई**

कहाँ अब देखिहौं यह मुख नैना।
कहाँ अब सुनिहौं यह मधु वैना।।
मो बिन और न काहू की मानै।
अतिशय हित मोसों ही ठानै।।
को ढिग यह अब विद्या पढ़ि है।
को दै सीख सँभार जु करि है।।

(कहते-कहते सँभल जाते हैं और मुख मोड़ कर) नहीं नहीं! यह कैसौ मोह? कैसी ममता? हे नारायण! हे जनार्दन! रक्षा करौ! मेरी रक्षा करौ!

पद- **गाना-पीलू।। दादरा।।**

दूर करौ यह माया हरि जू।
साध बड़ी तुव श्रीचरनन में, चढै यह जीवन काया।।1
नदिया अगम भँवर घहरावै, निज बल पार न पाया।
तुव पल्लव-प्लव के सहारे, तरन चहौं करौ दाया।।2
मात तात सखा भ्रात तुम्हीं सब, तुम बिन जग धूर छाया।
छाया की दुनियाँ सों लै चलौ, 'प्रेम' जहाँ प्रभु काया।।3

(गाते गाते प्रस्थान)

समाज- **दोहा**

पंछी तौ उड़नौ चहै, भेदिकै पिंजर जाल।
बैठी ममता बुन रही, नूतन नेह की माल।।

चौपाई

माता मन चिन्ता अति भारी। विश्वरूप विराग निहारी।।
कहत स्वामी ढिंग सब समुझाई। बेगि व्याह कौ करिये उपाई

(दृश्य-गृह भीतर जगन्नाथ व शची बैठे हैं)

शची-नाथ! विश्वरूप की उदासी तौ दिन पै दिन बढ़ती जाय रही है। याकी ओर आपकौ कछु ध्यान हू है?

जगन्नाथ-है क्यों नहीं! परन्तु या बात कौ मोकूँ दु:ख नहीं है, सन्तोष ही है। श्रीअद्वैताचार्य जैसे ज्ञानी-तपस्वी वृद्ध महानुभाव के सत्संग द्वारा वाकौ मंगल ही होयगौ। या किशोर वयस में यदि संयम औ सदाचार की सुदृढ़ नींव पड़ गयी तौ वाकौ जीवन एक मंगल मन्दिर बन जायगौ। पण्डित समाज वाके पांडित्य के आगे नतमस्तक है तौ भक्त-समाज वाकी भागवत-कथा पै मुग्ध है। सर्वत्र वाकी प्रशंसा है। हमारे तुम्हारे लिए यह कितने आनन्द और गौरव की बात है।

शची-यह तौ सब प्रभु की ही कृपा है, परन्तु नाथ! अब वाके लिए एक पाठशाला घर में ही क्यों न खोल दई जाय। याते मोकूँ सुख होयगौ। वह सदा मेरी आँखिन के आगे ही रहैगौ। आजकल तौ वह दिन भर आचार्यजी के समीप ही रहै है, भोजन के लिए हू बुलानौ परै है। दूसरौ सुख यह होयगौ कि निमाई हू घर में ही पढ़्यौ करैगौ याते हमें वाकी देख-रेख की चिन्ता नहीं परैगी। और आपकूँ हू सुख मिलैगौ। जब वाकी पाठशाला चल परैगी तौ आपके ऊपर सों गृहस्थी कौ भार हलकौ है जायगौ। तब आप निश्चिन्त मन सों आपकौ सब समय भजन-पूजन में लगाय सकेंगे। सब प्रकार सों हमकूँ लाभ ही लाभ है।

जग०-हाँ देवी! मेरौ हू यही विचार है परन्तु विश्वरूप की सम्मति हू आवश्यक है। यासों मैं वाते पूछ देखूँगो।

शची-और नाथ! मेरी वा प्रार्थना पै आपनै कहा विचार कियौ।

जग०-कौन-सी प्रार्थना पै?

शची-विश्व के व्याह की! मैं कई बार कह चुकी आप तौ टाल ही देयँ हैं।

जग०-तौ वाकी अवस्था ही कितनी है-केवल सोलह वर्ष कम-ते-कम बीच पच्चीस वर्ष तक तौ ब्रह्मचर्य पालन करै। फिर ब्याह हू कर दियौ जायगौ।

शची-पच्चीस वर्ष तक? तब तांई कहा वह....

जग०-बोलौ, चुप कैसे है गयीं?

शची-मैं कहा कहूँ? आप स्वयं समझ लेऔ। वाके लक्षण प्रत्यक्ष ही हैं। बालपने सों ही वह कैसौ वैरागी निःसंग है। और अबतौ दिन रात सत्संग में ही डूब्यौ रहै है। न जाने कहा होनहार है? कहा विधाता की इच्छा है?

जग०-जो कछु होयगौ सो अच्छो ही होयगौ। मेरो विश्वरूप बड़ौ आज्ञाकारी है-हमारी एकहू बात नहीं टारै है। यासों हमारी आज्ञा के बिना वह कोई कार्य नहीं करैगो। तुम कोई भय-चिन्ता मत करौ।

शची-यह तौ ठीक है कि हमारौ विश्वरूप ऐसौ ही है। परन्तु होनी कौन की बुद्धि नहीं पलट देय है। आप तौ पुरुष हैं। मैं तौ अवला हूँ। मोमें इतनौ धीरज कहाँ! मेरौ हृदय तौ रह रहकै काँप उठै है। यासों मेरी प्रार्थना पै आप अवश्य ध्यान दैवें। कोई सुयोग्य कन्या के तांईं शीघ्र ही चेष्टा करैं।

जग०-अच्छी बात है। काशीनाथ मिसरा ते कहूँगो तुम्हारौ कहनौ हू ठीक ही है। सावधानी बर्तनी ही चाहिये।

(पटाक्षेप)

समाज- **दोहा**

सहचर इक मामा तनय, लोकनाथ जो नाम।
विश्वरूप ते वयस लघु, बसत जु नदिया गाम।।

(प्रवेश विश्वरूप और लोकनाथ)

चौपाई

पढ़ै ठौर डोलै संगहि। गुरु सम विश्व रूपहिं मानहिं।।
विश्वरूप हू नेह बहु राखैं। सखा मीत सम उर की भाखैं।।

विश्व०-भैया लोकनाथ! मैं तौ यह प्रण कर चुक्यौ हूँ कि मैं गृहस्थ के माया-जाल में नहीं फसूँगो। द्विपदी ते चतुष्पदी नहीं बनूँगो। अपने सुख शान्ति कूँ काहू दूसरे के हाथ में नहीं सौंपूँगो।

लोक०-तौ आप पिताजी सों स्पष्ट क्यूँ नहीं कह देऔ हो कि मैं अबही विवाह नहीं करूँगौ। वे पण्डित ही नहीं भक्तहू हैं। वे आपके विचारन कौ अवश्य ही आदर करैंगे।

विश्व०-पिताजी यदि मानहू गये तौहु माताजी कौ माननौ कठिन है। वे हठ पकरि कै बैठेंगी तौ पिताजी कूँ माननौ ही परैगौ। तब मैं कहा करूँगौ? मैंने आज तांई माता-पिता कौ कोई वचन नहीं टार्‌यौ। हाय! कहा अब टारनौ परैगौ। उनकौ विरोध करनौ परैगौ? उनकी अवज्ञा-अवहेलना करनी परैगी?

लोक०-अवश्य दादा! यदि वे आपके श्रीकृष्ण भजन में बाधक बनैं हैं तो उनकौ ही कहा स्वयं श्रीकृष्ण कौ हू विरोध करनौ ही परम धर्म होयगौ। आपही के मुखते मैंने यह भजन सुन्यौ है कि-

पद

जाके प्रिय न राम वैदही।
तजिये ताहि कोटि वैरी सम, जद्यपि परम सनेही।।
(जैसे) तज्यो पिता प्रह्लाद विभीषण बन्धु, भरत महतारी
बलि गुरु तज्यो कन्त व्रजवनिता, भये जग मंगलकारी।।

अतएव अब यदि आप ही व्याकुल अधीर है जायँगे तौ मेरी कहा गति होयगी। मैं तौ आपही के बल भरोसे पै घर छोड़कर चलवे कूँ तैयार भयौ हूँ। यासों दादा! विवेक-विचार की तलवार सों मिथ्या धर्म के बन्धन कूँ छेदन करकै उड़ चलनौ चाहिए।

विश्व०-(उनका हाथ पकड़) धन्य है भैया लोकनाथ! तुमने आज एक साँचे मित्र कौ काम कर्‌यौ जो मोकूँ सम्हार लियौ। अब माता-पिता की अनुमति की कोई आवश्यकता नहीं। बस अब अधिक विलम्ब नहीं। आज रात कूँ ही उड़ चलैंगे। तैयार हौ न?

लोक०-आपके बल पै मैं सब समय तैयार हूँ दादा।

विश्व०-अच्छा तौ आज रात कूँ तुम मेरे ही पास आय कै साइयौं। आज रात कूँ मैं आचार्य जी की सभा में हू नहीं जाऊँगो। रात्रि में गृह-त्याग करकै गंगा में कूद, पार है जायँगे-पार!

लोक०-हाँ पार!

दोनों का गाना-जैजैवन्ती-केहरवा

उड़ चल हँसा अमर लोक को, यह तो देश न तेरा है।
चुग ले दाना पीले पानी, करले रैन बसेरा है।।1

माया का जहाँ नाच नहीं है,
स्वारथ की जहाँ आँच नहीं है।
प्रीति में जहाँ काँच नहीं है, मोती साँच घनेरा है।।2
विरह का जहाँ बान नहीं है,
काया का जहाँ भान नहीं है।
रस का जहाँ परिमाण नहीं है,
आनन्द 'प्रेम' हरि डेरा है।।2

(गाते-गाते निर्गमन)

(पटाक्षेप)

समाज- दोहा

कहा सुख कहा दुख जगतमें अपनौ अपनौ भाव।
जाकौ मन लाग्यौ जहाँ, वाकौ वैसौ चाव।।
कोई निद्रा सुख लहै, कोई बैठ्यौ रोय।
कोई बात न सह सकै, कोई प्राण दै खोय।।
कोई रोवै महल में, वन में गावै कोय।
सुख दुख तौ बाहर नहीं, मन में सुख दुख होय।।

(दृश्य-शयनागार। विश्वरूप और लोकनाथ एक संग लेटे हुए। सिरहाने की ओर चौकी पर जलपात्र और एक गीता पुस्तक। पार्श्ववर्ती कक्ष में शची, निमाइ एवं जगन्नाथ सो रहे हैं)।

समाज- चौपाई

मिश्र गृह सबही सुख सोवहिं। विश्वरूप सोवन महँ जागहिं।।
सोवत मिश्र शची औ निमाई। ठाड़ौ दुक्ख सिरहाने आई।।
विश्वरूप चख निद्रा नाहीं। अर्द्ध निशा की बाट तकाहीं।।
पंछी पिंजर पर्यौ अकुलावै। छिन छिन प्रान उड़न कूँ चाहै।।

दोहा

अर्द्ध निशा आई तबै, लैन परीक्षा कठोर।
शनै शनै ठाड़े भये, धीरज धर्म बटोर।।

(विश्वरूप और लोकनाथ धीरे-धीरे उठते और भीतर सोये हुए माता-पिता की ओर दृष्टि डालते हैं)।

चौपाई

भीतर गेह प्रति दृष्टि डारी। नातौ नेह उमग्यौ इक बारी।।
हाथ जोरि प्रनाम जु कीन्हे। अश्रु बिन्दु द्वय अर्घ्य जु दीन्हे।।

विश्व०-(प्रणामानन्तर मुख मोड़ लेते हैं और ऊपर की ओर हाथ जोड़कर) हे भगवन्!

गजल

ये नहीं मेरे, मैं नहीं इनका, इनके औ मेरे एक तुम्हीं हो।
पर्दा हटा जब आँखों से तो, इनके औ मेरे एक०।।1
तुमही जननी जनक हो मेरे, इनके पुत्र भी एक०।
लेऔ सम्हालौ अपनी वस्तु, इनके औ मेरे एक०।।2
(गीता की पुस्तक उठा गाते-गाते दोनों निकल जाते हैं)

समाज- **दोहा**

एक गीता माता लै, निकस चले दोउ लाल।
वयस अल्प हरि कृपा घनी, काटि चले मोह जाल।।

(पुनः गाते-गाते प्रवेश दोनों का)

विश्व० लोक०-गाना-भैरवी-केहरवा

अपनी साँझ भई, और जग वालों का हुआ सवेरा।
सजलै सिंगार सोलह सजनी, जाना है साजन का डेरा।।
श्याम सिंगार, श्याम ही साजन, श्याम ही तेरा मेरा।
श्याम के रंग में रंग ले चोला, मिट जाय मैं और मेरा।।
जग के मीत जगत के मनुआ, वहाँ कोई मीत न तेरा।
यहाँ वहाँ के मीत श्याम से, देले 'प्रेम' तू फेरा।।

(गाते-गाते निकल जाते हैं)

समाज- **दोहा**

सुख निद्रा बीती जबै, भयौ दुखदाई भोर।
उत रविकौ प्रकाश भयौ, इत रजनी घनघोर।।

चौपाई

जागे प्रात न पाये लालहिं। सहमि परे गनिविधि कुचालहिं।।
वत्स वत्स जननी डकरावै। व्याकुल धरन लुठत बिलखावै।।

शची-

कहा मति भई तुम्हरी ताता। तजि गये दोष कहा पितु माता
सुख के समय दुख दिखराये। लाल मेरे तुम कहाँ पलाये।।

समाज-

जागि परै तबहीं जु निमाई। लखि सुनि समुझि टेरत भाई।।

निमाई-दादा! दादा! विस्सु दादा! तुम कहाँ चले गये दा-दा.... (गिर पड़ते हैं)।

जगन्नाथ-शची! शान्त होऔ! निमाई कूँ सम्हारौ। मैं पार-परौस में देखूँ हूँ। गंगा न्हायवे हू जाय सकै है। नहीं तौ आचार्य की सभा में गयौ होय। कहूँ न कहूँ पतौ पर ही जायगौ। तुम नेक शान्त होऔ और निमाई कूँ देखौ (चले जाते हैं)।

समाज-

पार परौस कहूँ भेद न पाये।
गंगा तट जित जित बहु धाये।।
खोजत खोजत दिन चढ़ि आयौ।
भेद कहूँ कछु नेक न पायौ।।
तबहिं अद्वैत सभा प्रति धाये।
बेला भोर भक्त जहाँ आये।।
करैं प्रभाती कीर्तन गाना।
मंगल मधुर मनोहर नामा।।

(प्रवेश संकीर्तन मंडली-अद्वैत, श्रीवास, मुकुन्द, मुरारि, हरिदास इत्यादि)।

संकीर्तन धुन- **प्रभाती**

राधे कृष्ण कृष्ण राधे,
राधे गोविन्द गोविन्द राधे।

(दौड़ते हुए जगन्नाथ मिश्र का प्रवेश)

जगन्नाथ-विश्वरूप! मेरौ विश्वरूप! कहाँ है आचार्य देव! यहाँ नहीं आयौ कहा?

अद्वैत-यहाँ तौ वह कल रात्रि के सत्संग में हू नहीं आयौ।

जग०-हाँ हाँ! कल रात कूँ वह घर ही हो। लोकनाथ हू वहीं सोयौ हो। किन्तु प्रभात बेला में कोई नहीं हौ। कहाँ चले गये? कहा साँचेई घर छोड़ गये। वत्स! विश्वरूप! (बैठ पड़ते हैं)। कैसे तू कौपीन पहनैगो? कैसे शीत घाम वर्षा सहैगौ? कहाँ रहैगौ? कहा खायगौ? हाय हाय! शास्त्र-अध्ययन, भक्ति, ज्ञान कौ फल कहा यही है-निष्ठुरता, निर्ममता? जननी-जनक कौ परित्याग? उनकी हत्या?

अद्वैत-(जगन्नाथजी को उठाकर) मिश्रजी! ऐसे वचन न बोलें। आप तौ पंडित हैं, भक्त हैं! कपूत ही माता पिता की हत्या करै है, सपूत तौ इक्कीस पीढ़िन कौ उद्धार कर देय है। यदि साँचेइ विश्वरूप गृह-त्याग कर चल्यौ गयौ है तो-

कुण्डलियाँ

तजै जो माया मोह को, वही है सन्त महन्त।
होय कौपीन वन्त जो, वही है भाग्य वन्त।।
वही है भाग्यवन्त, कुल पवित्र बनि जाय है।
जननी होय कृतार्थ, वसुन्धरा हरषाय है।।
पितर मनावैं मोद, कहैं हमहू तरि जाय है।
उपज्यो हमरे गोत, संन्यासी तजि माय है।

अतएव शोक मोह छोड़ धीरज धरनौ ही कर्त्तव्य है।

जग०-जानूँ हूँ देव! सब जानूँ हूँ परन्तु या हृदय कूँ कैसे मनाऊँ? कहाँ जाऊँ? कैसे अपने विश्वरूप कूँ पाऊँ।

(दौड़ते हुए शची-निमाई का प्रवेश)

शची-विश्वरूप! मेरौ विश्वरूप कहाँ है? बताय देऔ कोई? (सब-चुप) समझ गई! हम हू चलें-वनवास करेंगे। घर में लौट कौन कौ मुख देखेंगे! अरे मेरे वत्स! मेरे प्राणधन! तू भैया-भैया कहतौ निमाई के पीछे डोल्यौ करतौ! आज वाही कूँ छोड़ गयौ। इतनौ कठोर कैसे बन गयौ? हाय रे! मेरे विश्वरूप कूँ कोई लाय देऔ-मिलाय देऔ! छाती फटी जाय है! (बैठ पड़ती हैं)।

निमाई-दादा! दादा! तुम कहां गये? हाय! मैं माँ कूँ कैंसे समझाऊँ? माँ माँ! रोऔ मत! मैं तौ हूँ। दादा के स्थान पर मैं हूँ। मैं तुम्हारी सेवा करूँगो। तुम इतनी व्याकुल मत होऔ (गले से लिपट जाना)।

शची-विश्वरूप आय गयो ? वत्स! लाल!

निमाई-माँ! मैं हूँ निमाई! चेत करौ! मेरी ओर देखौ। यह तुम्हारौ रोमनौ मोते नहीं देख्यौ जाय है। हाय दादा! दादा! (गिर पड़ते हैं)।

जग०-शची! निमाई कूँ सम्हालौ! याकूँ कछु न होनै पावै। बेटा! निमाई! निमाई

शची-निमाई! गौर! लाल! आँख खोल! मोते बोल।

निमाई-(आँखें खोल इधर-उधर देखते हुए) हाय! अब मैं कौन कूँ दादा कहकै बुलाऊँगो। कौन मोकूँ गोदी में बैठाय प्यार ते पढ़ावैगो ?

जग०-(साक्रोश) पढ़ाई ? ऐसी पढ़ाई सों अब कोई प्रयोजन नहीं। आज सों तेरी पढ़ाई बन्द! मूर्ख रहैगौ तौ आँखिन के आगे तौ रहैगौ! धर्म कूँ तौ तिलांजलि नहीं देगौ! धिक्कार है वा पढ़ाई कूँ जासों मनुष्य जननी-जनक के प्रति धर्मशून्य, हृदय-शून्य पाषाण बन जाय। चलौ शची! निमाई कूँ घर लै चलौ (तीनों चले जाते हैं)।

मुकुन्द-हाय आचार्य देव! हमारे भाग्य फूट गये। निराशा की घोर अँधेरी में जो एक आशा की सुनहरी दीपक जगमगाय रही ही, वाकूँ दुर्दैव हमते छीन कै लै गयौ।

मुरारि-हमारे दुर्दिन की मरुभूमि में जो एक सरस स्थली ही जहाँ हमारी आशा-बेली श्याम तमाल सों लिपटवे के तांई लहलहाय रही ही, तापै आज हठात् तुषारापात है गयौ!

श्रीवास-हाय! अब कौन भागवत की सरस कथामृत में हमारे हृदय कूँ शीतल करैगौ।

अद्वैत-भक्तजनो! मुक्त पुरुष सदैव मुक्त ही रहै है। वह कदापि बन्धन में नहीं आवै है। यह तो माया-बद्ध जीवन कूँ मुक्ति कौ अमर सन्देश सुनायवे के तांई तथा मायासक्त जीवन कूँ अनासक्ति एवं परमासक्ति दर्शाय कै चल्यौ जाय है। सर्वत्याग तौ परम सौभाग्य है जो विश्वरूप कूँ प्राप्त भयो है। वह सर्वस्व त्याग कै परम धन्य है तौ कहा हम इतनौ हू घर बैठे नहीं कर सकैं हैं कि-

बहार-3 ताल

हरि बोल हरि बोल हरि।
हरि ज्वाला हरें, हरि शान्ति करें।।
बस शेष जीवन यही नेम धरें, हरि बोल हरि०।।1

बीज जहाँ तहाँ फल होवै, चाहे आज होवै चाहे कल होवै
मरु उषर में भी फल होवै, हरि बोल हरि०।।2
भूल में तो वे दूर ही थे, भूल ही में हम दूर ही थे।
जब भूल मिटी 'प्रेम' पास ही थे, हरि बोल हरि०।।3

इति विश्वरूप गृह-त्याग लीला।

❖

पौगण्ड-लहरी **पंचम कणामृत**

ज्योतिषी-घूरे पर से उपदेश

(अष्टम वर्ष की लीला)

श्लोक

कुमनः सुमनस्त्वं हि याति यस्य पदाब्जयोः।
सुमनोऽर्पण मात्रेण तं चैतन्यं प्रभुं भजे।।

चौपाई

चरन कमल इक सुमन चढ़ाये। कुमनहुँ सुमन विमल बनि जाये
तिन प्रभु चैतन्य चरनन नमिये। चरित चारु कछुक विस्तरिये
विश्वरूप गृह छाँडि सिधाये। निज जन दुख सिन्धुहिं डुबाये
पिता मिश्र उर दुखभय त्रासा। राखैं निमाई सततहिं पासा
जान न दैं चटसार निमाई। पढ़ि लिखि जाय न कहूँ पलाई
जब उन विद्या पढ़न न पाये। नित दूनौ उधमहिं मचाये

दोहा

एक दिवस ज्योतिषी गुनी, आयौ मिश्र गृह द्वार।
मात शची आदर सहित, कीन्हे बहुत सत्कार।।

(प्रवेश एक ज्योतिषी पण्डित-कन्धे में झोली)

ज्योतिषी- **भजन**

पीले राम नाम रस प्याला, तेरा मनुवा होय मतवाला।।
जो कोई पीवै जुग-जुग जीवै, वृद्ध होय नहीं बाला।
चौरासी के बचे फेर से, कट जाय जम का जाला।। तेरा०

इस प्याला का मोल न लागे, पकड़ हरि की माला।
जन्म जन्म के छूटें दाग सब, रंग रहे न काला।। तेरा०
सत्संगति में सौदा करले, वहाँ मिले सब हाला।
हरिनाम का शस्तर लेके, तोड़ भरम का ताला।। तेरा०
प्रेम भाव की ज्योति जगाओ, हृदय होय उजियाला।
(तब) विजय डंका जग बजवाओ, अमर बनो सब काला।।

(आवाज देता है)

जगन्नाथ मो'शाय बाड़ी ते आछेन ना की?

शची-(भीतर नेपथ्य में से) वे तो नहीं हैं। पधारैं। विराजैं। (प्रवेश कर प्रणाम करती हैं)।

ज्योतिषी-नमस्कार माँ! मैं एक ज्योतिषी हूँ। मिश्रजी सों मिलवे आयौ हूँ।

शची-बड़ी कृपा करी जो दर्शन दिये। वे बाहर गये हैं। आ ही रहे होंगे! आप नैंक बिराजें।

ज्यो०-(बैठते हुए) कुशल मंगल तौ है न माँ?

शची-हमारौ जैसौ कछु कुशल मंगल सो आप जैसे गुणीन सों कहा छिप्यौ है। एक-एक करकै सात कन्या भगवान् ने दईं और लै लईं! एक बड़ौ पुत्र पढ़ लिखकैं विद्वान् बनि सौलह वर्ष की ही अवस्था में घर छोड़ चल्यौ गयौ! कितनौ सुन्दर, कितनौ सुशील, शान्त-सौम्य हो, मैं कहा कहूँ! हाय! कहाँ जाऊँ, कहाँ पाऊँ अपनी खोयी निधि कूँ।

ज्यो०-कहूँ पतौ नहीं पर्‌यौ कहा?

शची-या अंचल में तो कहूँ पतौ नहीं पर्‌यौ। कहूँ दूर-देश कूँ निकस गयौ है। आप तौ गुनी हैं। गनना करकै तौ बतावैं वह कहाँ गयौ, फिर लौट आवैगौ कै नहीं! वाको मुख मैं फिर देख पाऊँगी कै नहीं।

ज्यो०-(गणना पूर्वक) माँ! वह तौ....दक्षिण की ओर गयौ है। वाके लौट आवे की....सम्भावना.... निकट भविष्य में तौ....कछु नहीं है (स्वगत) ओह! वह अब कहा आयगौ! वह तौ संन्यासी बन चुक्यौ है (प्रगट) माँ! भावी प्रबल होय है। वाके आगे मनुष्य कूँ तो कहा स्वयं भगवान् कूँ हू मस्तक नमानौ परै है। माँ! मेरी गणना में तौ आपकौ वह बालक कोई असाधारण महापुरुष है और असाधारण ही पदवी कूँ वह शीघ्र ही प्राप्त करैगौ।

शची-हाय पण्डितजी! मेरी गोदी में सब असाधारण ही आवैं हैं। अब एक छोटौ पुत्र रह गयौ है। वाकूँ हूँ सब कोई महापुरुष बतावैं हैं।

ज्यो०-(चौंककर) विश्वम्भर? विश्वम्भर नाम तौ महती महिमा और अनन्त गुण सूचक है। अवश्य ही यह बालक हू विलक्षण है।

शची-परन्तु महाराज! वामें लक्षण तौ सदाचार सों विरुद्ध ही प्रगट है रहे हैं।

ज्यो०-भलौ! मैं हू तौ सुनूँ कैसे लक्षण हैं वे!

शची-एक तो वामें कबहू-कबहू इतनो क्रोध आवै है कि घर में वस्तु सामने दीखैगी वाहि कूँ तोर-फोर डारैगौ और वाते हू क्रोध शान्त न भयौ तौ वाकूँ ही मूर्च्छित पार कै शान्त होय है।

ज्यो०-यह तौ दुर्धर्ष तेज कौ लक्षण है माँ! वह बड़ौ ही तेजस्वी होयगौ। बाकी बात कोई टार नहीं सकैगौ। जो कछु वह करनो चाहैगौ, वह करकै अथवा कराय कै ही हटैगौ।

शची-दूसरी बात यह है कि वह पवित्र-अपवित्र वस्तुन में नेकहू भेदभाव नहीं राखै है। पिल्ला कूँ लैकै रसोई में आय बैठे है। धमकाऔ तो बाहर घूरे पै जूँठी हँडियान में जाय बैठेगौ।

ज्यो०-(हँसते हुए) तब तौ माँ! वह बड़ौ समदर्शी और सर्वभूतहितैषी परमोदार दयालु होयगौ।

शची-परन्तु वह तौ देवी-देवतान के नैवेद्य कूँ हू छीन-झपट कै खाय जाय है! यह कौन-सौ गुण है भला?

ज्यो०-यह है सरलता, भोरौपन। माँ-बाप के हाथन ते हू बालक छीन झपट कै खाय लैय है-कहा वे बुरौ मानैं हैं। हम लोग बड़े-बूढ़े बनकै या भोरेपने कूँ खोय चतुर बने बैठे हैं देव-कृपा सों वंचित है गये हैं।

शची-इतनौ ही नहीं महाराज! वह तौ यह हू जब-कभू कह जाय है कि मैं ही भगवान् हूँ। मैं ही राम कृष्ण हूँ। मेरी पूजा करौ। कहा यह हू भोरौपन ही है?

ज्यो०-(साश्चर्य) अच्छौ! ऐसौ हू कहै है कहा?

शची-कहै ही नहीं, वाकी मुख-मुद्रा, भाव-भंगी, रंग-ढंग सब बदल जायँ हैं और मूर्च्छित तक है जाय है।

ज्यो०-तब तौ अवश्य ही देवी-देवतान कौ आवेश होय है।

शची-आवेश है तो वह अपने कूँ देवी देवता क्यूँ नहीं बतावै है, राम, कृष्ण, नरसिंह, विष्णु ही क्यूँ बतावै है।

ज्यो०-तौ कहीं वह....राम कृष्ण कौ ही अब....परन्तु वह है कहाँ? वाके दर्शन तौ कराऔ! बुलाऔ।

शची-बुलाऊँ कहाँ ते? घर में होय तब न! कहीं गंगा पै उधम मचाय रह्यौ होयगौ। पहले पाठशाला जायौ करतौ। अब वह हू बन्द है गयो।

ज्यो०-काहे कूँ बन्द है गयौ? कारण?

शची-वाके पिताजी कहैं हैं कि पढ़ लिख कै कहूँ वाकी हू आँख खुल गईं और वह हू अपने बड़े भाई की तरह घर छोड़कै निकस गयौ तो हमारी तो दोनों ही आँख फूट जायँगी। यासों मूर्ख रहै सो अच्छौ! हमारी आँखिन के आगे तौ रहैगौ।

(प्रवेश निमाई गाते हुए)

निमाई-काफी अथवा गौड सारंग-केहरवा

हरे कृष्ण गोविन्द गोपाल गिरिधारी रे।।
देवकी ने जायौ पै यशोदा ने बधायौ पायौ।
गोद खिलायौ व नचायौ दै दै तारी रे।।
पूतना कौ पय पियौ, धाय माता मान लियौ।
कुल समेत वाकी मुक्ति कर डारी रे।।
मटुकिया फोरी मात ऊखल सों बाँधे जोरी।
बँध कर यमलार्जुन कौ उद्धारी रे।।
शिव नाचैं आँगन में, ब्रह्मा लोटैं पाँयन में।
गावैं गोपी 'प्रेम' गारी, चोर लवारी रे।।

शची-यही है महाराज! मेरौ बाबरौ विश्वम्भर निमाई! यह एक और रंग है याकौ-नाचवे-गायवे कौ। अकेलौ होय, बालकन के संग होय, घर में होय बाहर होय, जहाँ देखौ वहीं, जब देखौ तब, हरि-हरि कहतौ भयौ नाचतौ-गामतौ डोलै है। ऐसौ है यह आपकौ महापुरुष-बावरौ!

ज्यो०-यह तौ माँ! भगवद्भक्ति कौ प्रधान लक्षण है। प्रह्लाद, उद्धव हू बालपने में ऐसौ ही कर्‌यौ करे हे। याकूँ आप पागल बताऔ हौ। यह तौ मोकूँ विश्व कूँ पागल कर दैवे वारौ विश्वम्भर सों लगै है।

शची-बस महाराज! आपकूँ हू याने पागल बनाय दियौ-जो कोई मेरे घर आवै है वही याकूँ देखकै मोहित है जाय है। गारुड़ी कूँ बुलायौ लहर

उतार दैवे के काज, और उलटौ लहर वाही पै चढ़ बैठी। अब बताऔ इलाज कौन करै।

ज्यो०-माँ! आप चाहे मानौ न मानौ पर यह बालक निश्चय ही कोई महापुरुष है। अन्यथा हमारे सामुद्रिक तथा ज्योतिष शास्त्र सब मिथ्या सिद्ध होंगे।

शची-तौ ऐसे यामें कहा विलक्षण लक्षण आपकूँ दिखायी दे रहे हैं?

ज्यो०-याके अंगन में महापुरुष के बत्तीसन लक्षण स्पष्ट प्रतीत है रहे हैं-

श्लोक

पञ्च दीर्घः पञ्च सूक्ष्मः सप्त रक्तः षडुन्नतः।
त्रिह्रस्व-पृथु-गम्भीरो, द्वात्रिंशल्लक्षणो महान्।।

कवित्त

नासा भुज जानु नेत्र, हनु अंग दीर्घ लम्बे,
त्वचा केश दन्त रोम, झीने अंगुरी पौर हैं।
होंठ ठोंठ जिह्वा लाल, लाल हस्त पद तल,
नखहू ललाइ लिये, लाली नैन कोर हैं।
कमर नासिका उठी, उठे स्कन्ध वक्ष पुनि,
मुख अरु नख भरे, उभरे छः ठौर है।।
ग्रीवा जाँघ इन्द्री छोटी, मोटी भाल वक्ष कटि,
नाभि स्वर बुद्धि गहरी, पाये बत्तीसों गौर हैं।।

ये बत्तीस लक्षण महापुरुष के या बालक में प्रत्यक्ष हैं। लाला! अपनौ हाथ तौ दिखाऔ (निमाई का हाथ देखते हुए) हाँ! दसों अंगुरियन में चक्र के चिन्ह हू हैं-होने ही चाहिये। ये लक्षण तौ राजराजेश्वर अथवा योगेश्वरेश्वर में ही होय हैं।

शची-ऐसे ही बतावैं हैं सबही, परन्तु पण्डितजी! मोकूँ तौ इन बातन कूँ सुन-सुन कै सुख के बदले दुःख ही होय है। मानौ तौ कोई मेरी सर्वस्वनिधिकूँ छीन रह्यौ होय।

ज्यो०-माँ! आप कोई अमंगल की आशंका न करैं। यह तो मंगल सौभाग्य और महान् गौरव की बात है।

शची-भगवान् करैं ऐसौ ही होवै। आपके वचन सत्य होवैं।

ज्यो०-(निमाई से) लाला, नेक सूधे ठाड़े हे जाऔ तौ। दोनों हाथन कूँ फैलाय देऔ (एक डोर से एक हाथ की मध्यमा अंगुली के अग्र भाग से दूसरे हाथ की मध्यमा अंगुली के अग्रभाग तक नापता है। फिर उसी डोरे से शिखा से चरण-नख पर्यन्त नापकर बराबर बतलाता है) ऐसे विशाल वपु कूँ शास्त्र में न्यग्रोध मंडल कह्यौ है-अर्थात् अपने हाथ सों जो साढ़े चार हाथ ऊँचौ और साढ़े चार हाथ ही चौड़ो होय है अर्थात् लम्बाई चौड़ाई समान होय तौ वह न्यग्रोध मंडल वारौ विलक्षण ही महापुरुष होय है। यह विशेष लक्षण अत्यन्त दुर्लभ है-सब महापुरुषन में हू सुलभ नहीं है-सो तुम्हारे या चंचल बालक में प्रत्यक्ष विद्यमान है।

समाज- **दोहा**

सुनत रहै चुप साधु बनि, निजगुन गाथा गौर।
बाल विनोद के व्याज सों, कीन्ही कृपा की कोर।।

निमाई-(ज्योतिषी की झोली पकड़) गनक ठाकुर! तोमार झुलि ते की आछे? देखि तो (छीनना चाहते हैं)।

शची-(डाँटती हुई) अरे ढीठ! तू इनसों हू ऊधम करवे लग्यौ? छोड़ इनकी झोली और हाथ जोड़-प्रनाम कर।

निमाई-(उपहास भंगी सह) नमस्कार गनक ठाकुर! पेन्नाम!

शची-(सक्रोध) अरे असभ्य! दुर्विनीत! गुरुजन की हाँसी करैं है। पण्डितजी महाराज! ये हैं आपके महापुरुष के लक्षण! काहू ते डरै नहीं है। सबन ते अटक परै है। मैं कैसे याकूँ सूधौ करूँ। मैं तौ सब उपाय करकै हार गयी।

निमाई-माँ! ये मेरी एक बात बताय दैवैं तौ मैं इनकूँ पंडित जानूँगो और तब मानूँगो।

ज्यो०-अच्छी बात है। बोलौ कहा ऐसी बात है।

निमाई- **प्रश्नोत्तर-पद-गाना-केहरवा**

तुम पंडित देऔ बताई, मेरौ पूरब जनम माई।

ज्यो०-(गणना करके)

तुम गोपाल ब्रज के कोई, प्रगटे अब नदियाई।।

निमाई-

पुण्य कौन कियौ तब ऐसे, जायौ विप्र घर आई।

समाज–

करत विचार गुनी मन अचरज, पाप पुन्य कछुई नाई।।

निमाई–बताओ न! कहा सोच में परे हौ।

ज्यो०–(स्वगत)

ये लक्षण तौ ईश्वर के, कोई जीव न पावै माई।

समाज–

वदन निहारत अति भरमावत, को यह बाल निमाई।।

निमाई–मेरो मुख कहा देखौ हौ? बताऔ न मेरे पुन्य कूँ मैं गोपाल ते ब्राह्मण कौन–से पुन्य सों भयौ?

ज्यो०–

कर्म शुभाशुभ कौ फल कहिये, पुन्य व पाप सदाई।
तिनकूँ भोगन लख चौरासी, विधना जोनि बनाई।।

(अतएव)

कर्मभोग हित देह जु सारे, कर्म बिना देह नाई।

(परन्तु)

कर्म तिहारे कछु नहीं दीसत, अचरज यही महाई।।

लाला! तुम्हारे तौ कोई कर्म ही नहीं है, फिर तुम्हारी यह देह कैसी और कौन की। यह मेरी समझ में ही नहीं आय रह्यौ है।

निमाई–(ताली बजा हँसते हुए) नांय बताय सके–

विद्या तिहारी सब लखि लीन्हीं, मैं ही दऊँ हूँ बताई।
सेवा गौउन की बहु कीन्ही, विप्र देह तब पाई।।

कवित्त

पहन्यौ नहिं पाँव पन्हा, शीश छता तान्यौ नहीं,
गौअन के पीछे पीछे, नांगे पद धायौ है।
गौऊन पिवाय जल, पीछे मैंने आप पियौ,
उनकूँ चराय तृन, पीछे छाक खायौ है।
उनके चरन रज गंगा सों न्हायौ नित,
उनही के हेत गोवर्धन पुजवायौ है।
माता कूँ भूलूँ गौउ माता कूँ न भूलूँ 'प्रेम',
फल गउ सेवा ही कौ, विप्र कुल पायौ है।।

पूर्वपद

सो न बताय सकै अब देऔ, अपनी झोली बहाई।
पोथी पत्र में नाहिन 'प्रेम' जो, पाऔ हरि हरि गाई।।

हरि बोल (झोली छीन कर भाग जाते हैं)

शची-(सक्रोध) भाग कहाँ भागैगो! न पीटूँ और पिटवाऊँ तोकूँ (पीछे-2 चली जाली हैं)।

ज्यो०-लै जाओ छलिया! मेरी झोली लै जाऔ। वह तौ खाली है। भरनौ तौ तुम्हें ही परैगौ।

पद-गाना **भाँड 3**

मेरी झोली श्याम खाली खाली,
भर देऔ ना वनमाली।। मेरी०।।
झोली लिये मैं भटकत द्वारे, टूक टूक ही सबने डारे।
भूख तौ कोई मेटि सक्यौ ना, दिन दिन बाढ़त चाली।।1
भरते भरते बीते जनम बहु, भर न पायौ नेक न कबहु।
हार गयौ तन, मन नहीं हार्यौ, कहा माया यह घाली।।2
द्वारे ठाड़ौ आज तिहारे, खाली हाथ दोऊ पसारे।
मेटौ भूख प्यास युगन की, 'प्रेम' कना इक डाली।।3

(गाते-गाते प्रस्थान)

(प्रवेश निमाई दौड़ते हुए-पीछे-पीछे शची)

शची-जा भाग जा! जायगौ कहाँ? आज तेरे बाबा ते तेरी गोपाल पूजा न करवाऊँ तौ कहियो।

निमाई-कहा बाबा सों कहैगी?

शची-कहूँगी कहा, पिटवाऊँगी। तबही तेरी अवारगी बन्द होयगी।

निमाई-तो मैं हू बाहर घूरे पै जूँठी हँडियान में जाय बैठूँ हूँ।

शची-जा बैठ जा! बैठे ही रहन दऊँगी। एक किनका हू भात नहीं दऊँगी।

निमाई-कहा भात नहीं दैगी खायवे कूँ

शची-ना, ना, ना।

निमाई-तो अपने ठाकुर भगवान् कूँ तौ देगी?

(दौड़कर भीतर मन्दिर में घुसना)

समाज- **दोहा**

दौरि गये विष्णु भवन, उठे सिंहासन जाय।
श्रीमूरति हठाय तहँ, बैठे आसन लाय।।
देखी लाल कुचाल कूँ, शची रही डरपाय।
सहमि बैठ परीं दुख भरि, विनवत देव मनाय।।

शची-

हे माधव गोविन्द हरे! बालक दोष अपार।
एक भरोसौ प्रेम यही, तुम दया भंडार।।
दिन दिन कौ अपराधी यह, तौहु तुमरौ बाल।
मो निधनी कौ धन यहै, छमहु सबै कुचाल।।

अरे निमाई! वत्स! उतरि आ! मैं तेरे हाथन जोरूँ हूँ। आ मैं तोकूँ खायवे कूँ दऊँगी! तेरे बाबा सों नहीं कहूँगी। पर तू उतरि आ नारायण के सिंहासन ते। आ मेरे लाल।

निमाई-(गर्दन हिलाते हुए) ऊँ हूँ! नहीं उतरूँगो।

गाना- **दादरा**

बोल बोल बोल, राधा कृष्ण बोल।
डोल डोल डोल, राधा कृष्ण डोल।।1।।
वाम अंग श्याम अंग राधा झूलें डोल।
नीलमणि हेम छवि, शोभा नहीं तोल।।
फूल फलैं भमर गावैं, नाचैं मोरनी मोर।
यमुना जल ढलमल करि, चूमें चरन कोर।।3
लाल राग लाल भाग, लाल वृन्दावन सुहाग।
लाड़िली लाल लाल, झूलैं 'प्रेम' डोल।।

(प्रवेश जगन्नाथ मिश्र)

समाज- **दोहा**

आय गये जगन्नाथ घर, बैठे लखै निमाई।
गर्जत तर्जत रोष भरि, असुर तू जन्म्यौ आई।।

शची-नाथ! याकूँ उतरवाऔ न! यह कैसी बुद्धि है याकी।

जग०-यह है राक्षसी बुद्धि! हद्द है गई! आज मारे बिना नहीं छोड़ूँगो (पकड़ना चाहते हैं)।

निमाई-(खड़े हो) मेरी पढ़ाई क्यों बन्द कर दई? अब मैं खूब ऊधम करूँगो। हरि बोल (कूदकर भाग जाते। जगन्नाथ भी पीछे-पीछे भागते हैं)।

शची- **कुंडलियां**

क्षमहु बालक हीन मति, देहु सुधार कुचाल।
बार बार पुकार रही, सुनहु न दीनदयाल।।
सुनहु न दीनदयाल, एक आँख फूटी मेरी।
दूजी आँख यह लाल, राखौ याकूँ तो हरी।।
किये घनेरे उपाय, फलत प्रेम नहिं एकहू।
लखौ सुदृष्टि उठाय, भली बुरी प्रभु सब क्षमहू।।

(प्रवेश जगन्नाथ मिश्र निमाई को पकड़े)

समाज- **चौपाई**

कर गहि लाये तात विश्वम्भर।
ये गरजत वे काँपत थर थर।।

जग०-अरे कुबुद्धि-शिरोमणि! आज तोकूँ ब्राह्मण-बालक कौ सदाचार सिखाऊँ हूँ। सीख लै। (मारने को छड़ी उठाते हैं। शची दौड़कर पकड़ लेती है)।

शची-

ना ना ना नाथ ऐसे मत कीजै।
तन सुकुमार मार मति दीजै।।
दया करौ बालक डरपायौ।
अश्रु नयन मुख मुरझायौ।।
देहु छांड़ि आज फेरि न करिहै।
तजि कुढंग सुढंगहि ढरिहै।।

(जगन्नाथजी निमाई को छोड़ देते हैं)

(निमाई शची माँ से जा लिपटते हैं)

शची-कह दै बेटा! अब मैं ऐसौ नहीं करूँगो, शान्त रहूँगो।

निमाई-(शची की आँचल में मुँह छिपा धीमे स्वर से) नहीं करूँगो! बचाय लै। बाबा ते डर लगै है।

जग०-सावधान निमाई! आज छोड़े दऊँ हूँ। परन्तु यही तेरे रंग-ढंग रहे तौ विधाता हू तोकूँ मेरे हाथ ते नहीं बचाय सकैगौ। कठोर शासन द्वारा तोकूँ शिक्षा दैनी ही परैगी-समझलै खूब! (चले जाते हैं)।

निमाई-(माता की आँचल से मुख निकाल हँसते हुए) ला माँ! अब तो दै भात खायवे कूँ।

शची-मैं हारी तू जीत्यौ। चल खायवे। परन्तु मेरे लाल! यह कुचाल छोड़ दै। काहू दिना वे तोकूँ पीट बैठेंगे। हाय! मैं कहाँ तांई तोकूँ बचाऊँगी। (दोनों चले जाते हैं)।

समाज- **दोहा**

नित प्रति ऊधम धूम सों, मात पिता रहै हार।
एक दिवस रिस पाय अति, दई तात कछु मार।।

चौपाई

निशि सोवत इक सपनौ पायौ।
दिव्य पुरुष विप्र इक आयौ।।
अति विशाल तन उज्ज्वल बरना।
कोटि भानु सम दमकत वदना।।
शुक्ल वसन पट शुक्लहि धारे।
काँधे शुक्ल जनेऊ डारे।।

(दृश्य-जगन्नाथ मिश्र सो रहे हैं। सिरहाने पर एक श्वेत वस्त्रधारी महापुरुष खड़े हैं)।

गिरा गूढ़ गम्भीर उचारत। तुम निज पुत्र स्वरूप न जानत।।

स्वप्न पुरुष-जगन्नाथ मिश्र! तुमकूँ अपने पुत्र निमाई के स्वरूप कौ निश्चय ही बोध नहीं है तबही तुम वाकौ ताड़न-शासन करौ हौ-

श्लोक

पशुर्यथा स्पर्शसुखं महामणे-
र्भजन्नपीमं परिलोकयन्नपि।
न वेत्ति सदसद् विवेचनां,
स्वभाव मुग्धस्य विवेचना कुतः।।

जैसे कोई पशु कूँ पारसमणि मिल जाय और वह वाकूँ अपने गरे पै बाँध कै लटकातौ फिरै तौहू वाके स्पर्श की अलौकिक महिमा कूँ जानै नहीं है, ऐसे ही तुमहू अपने पुत्र के अलौकिक दिव्य स्वरूप कूँ नहीं जानौ हौ और वाकूँ एक सामान्य बालक समझकै वैसोइ व्यवहार करौ हौ।

जग०-(सोये-सोये स्वप्न में ही) भले ही वह देवता होवै, सिद्ध होवै, ऋषि-मुनि होवै अथवा तो इनते हू बड़ौ ब्रह्मा, विष्णु, महेश क्यूँ न होवै, परन्तु या समय तौ वह मेरौ पुत्र है और मैं वाकौ पिता हूँ। अतएव याकौ पालन-पोषण शिक्षा-शासन करनौ मेरौ परम कर्त्तव्य है मैं नहीं सिखाऊँगो तौ वह कर्म धर्म कैसे सीखैगौ।

स्वप्न पुरुष-वामें ज्ञान स्वतः सिद्ध है। वहाँ तुम्हारी शिक्षा-रक्षा निष्प्रयोजन है-निरर्थक है।

जग०-मैं आपकी बात कूँ कैसे मान लऊँ जब वाके आचरण सदाचार विरुद्ध ज्ञानशून्य हैं। अतएव वाकूँ सत्पथ पै लायवे के तांईं शासन और शिक्षा करनी ही परैगी।

स्वप्न पुरुष-(मुस्कराते हुए स्वगत) धन्य है या विशुद्ध वात्सल्य भाव कूँ। भाव की परम शुद्धि याकौ नाम है। भगवान् कौ ऐश्वर्य ज्ञानहू याके आगे लुप्तप्राय है। धन्य है इनकूँ। (अन्तर्द्धान)-

(पटाक्षेप)

(दृश्य घूरे का-जूठी काली हँडिया-कुल्हड़े-पत्तल-दोने, कूड़ा-करकट का ढेर। निमाई हँडियों पर बैठे गा रहे हैं)।

समाज- **पद**

एक दिवस बाहर घूरे पै, जूँठी हँडियन बैठे निमाई।
एक एक ऊपर धरि धरिकै, आसन ऊँचौ बनाये माई।
हँडिया कारी कर भये कारे, गोरे कपोलन लागी कारी।
बाल यति अवधूत मनोहर, बैठे मगन मनोरथ भारी।।

निमाई- **कीर्तन धुन**

बोल हरि बोल हरि, हरि हरि बोल।
केशव माधव गोविन्द बोल।।

केशव माधव, मुकुन्द माधव।
मुकुन्द माधव, मोहन माधव
राधा माधव गोविन्द बोल।।

समाज– **पूर्वपद**

सुनि कुचाल मात शची आई, लखि दुख उपज्यौ भारी।

शची–

पकरी रीति अनीति सोई पुनि, बुद्धि शुद्धि सब हारी।।
ठौर कुठौर भले बुरे कौ, ज्ञान विवेक न आयौ।
विप्र वाल के लक्षण ऐसे, अपनौ नाम हँसायौ।।

निमाई–

होवै ज्ञान कहाँ ते मैया, तुम नहीं मोकूँ पढ़ायौ।
मूरख भलो बुरो कहा जाने, वह तो पशु सवायौ।।

यासों मेरे लिए तो

सब वस्तु सब ठौर एक सी, मैं तौ भेद न जानूँ।
एक के बीच में भलौ–बुरौ द्वै, भेद न कछु मन आनूँ।।

समाज–

अपनी करनी थापन हित ही, ब्रह्मज्ञान बखानै।
जिमि गोवर्धन पूजन हेत, कर्मवाद हरि ठानैं।।

शची–

मुनिकुल वन्दित वंश तिहारौ, ताकी कान निभाऔ।
उठौ लाल, जाय गंग नहाऔ, शुद्ध गात बनि आऔ।।

समाज–

मात तात मधि परी लराई, शुद्धि अशुद्धि विचारैं।
तत्त्व बखानत इत विश्वम्भर (उत) जननी प्रेम न धारैं।।

निमाई–माँ! तू इन हँडियन कूँ अशुद्ध बतावै है। ये तौ परम शुद्ध हैं और छीवे वारे कूँ हू शुद्ध कर देय हैं।

(बंगला)

विष्णुर रन्धन हाँड़ी कभु दुष्ट नय।
ए हाँड़ी परसे आर स्थान शुद्ध हय।।

(चै० भा०)

दोहा

भई रसोई विष्णु हित, जिन हँडियन बिच माई।
आप शुद्ध वे औरनहिं, देयँ शुद्ध बनाई।।

और फिर जिनके ऊपर मैं बैठ्यौ हूँ वे अशुद्ध कैसे?

दोहा

जहाँ मैं तीरथ तहाँ, कहा मैं गंगा न्हाऊँ।
गंगा कूँ गंगा करैं, ये मेरे द्वै पाऊँ।।

समाज– **चौपाई**

हँसि हँसि कहत तत्त्व समुझाई। मात नेह नदी देत बहाई।।
को अस मति तुम्हरी भरमाई। ऐसी बात कहौ मति भाई।।
आय देखैं कहूँ तात तिहारौ। ताड़न करि है भय टुक धारौ।।

निमाई–बाबा के बाबा–परबाबा हू आय जायँ तौ हू नहीं उतरूँगो।

शची–नहीं उतरैगो?

निमाई–ना, ना, सौ बार, हजार बार ना।

शची–तौ लै मैं उतारूँ हूँ। नहानौ तौ मोकूँ परैगौ ही परन्तु मैं तेरे अवधूताई को भूत छड़ी ते उतार करकै छोड़ूँगी।

निमाई–तौ लै आ पकर। मार! यह जूँठी हँडिया न मार दऊँ। (एक हँडिया उठाकर) मारूँ?

शची–लै मार तौ। मैं गंगा में न डूब मरूँ। फिर माँ–माँ कहकै रोवेगो! अबहू मान जा और उतरि आ।

चौपाई

बेगि उतरि तू आय निमाई।

निमाई–

हौं उतरौं न सिंहासन पाई।।

(बंगला)

आमि तो राजा बोने बोसे आछि। आर नाम्छि ना।

चौपाई

चूहड़न कौ राजा बन्यो जाई। देखि हँसि हैं लोग लुगाई।।

निमाई–

मोकूँ नहीं तोकूँ ही हँसि हैं। मूर्ख सुत ते को जस लहिहैं।।
कीन्ही काहे बन्द पढ़ाई। मूर्ख करिहै मूरख ताई।।

मैं तौ मूर्ख हूँ। मैं तौ हरि हरि बोलूँगो और भाँग खाऊँगो। हाँसी होयगी तो तुम्हारी होयगी।

शची–अच्छौ यह बात है। पढ़वे के तांई तेरे ये सब उत्पात हैं। परन्तु मैं कहा करूँ। तेरौ बाबा तौ मेरी कही मानैइ नहीं है।

निमाई–तौ मैं हू यहीं बैठ्यौ रहूँगो। उतरूँगो ही नहीं न मुँह में ही कछु दऊँगो! तुम दोनों मिलकै मोकूँ भूखो मार डारियों।

शची–नारायण! नारायण! मरै तेरी बला! मेरे लाल! तू तौ लाख वर्ष जी। आज कही सो कही, अब ऐसी बात मुँह ते नहीं निकासियो। मैं आज तेरे बाबा ते हठ करकै बैठूँगी। और तोकूँ फिर पाठशाला भिजवाऊँगी।

निमाई–जरूर भिजवाएगी न!

शची–हाँ जरूर जरूर भिजवाऊँगी। अब तेरे मन की तौ पूरी है गई। अब मेरे मन की हू पूरी कर दै।

चौपाई

उतरि आय अबभई मन भाई। करिहै कलेऊ आ गंगा न्हाई।।
बड़ी भोर ते बैठ्यौ जाई। बलि बलि जाऊँ मानहु माई।।

समाज–

दोहा

उतरि चले तब गंग कूँ, छलिया चतुर निमाई।
लखि मात सुख पायौ बहु, बार बार बलि जाई।।
बाल चरित हरि गौर के, निर्मल सुखद उदार।
देखत लागे अटपटे, समुझत सुख हितकार।।

इति ज्योतिषी+घूरे की लीला सम्पूर्ण

☙❖❧

पितृ-स्वधाम-प्राप्ति

(दशम वर्ष की लीला)

श्लोक

कृपा सुधा सरिद् यस्य विश्वमाप्लावयन्त्यपि।
नीचगैव सदा भाति तं चैतन्य प्रभुं भजे।।

पद

भजौ कृष्ण चैतन्य चरित चित लाय।
साधनहीन दीन मलिन रु, पापी पतितन के पितु माय।।
जिनकी कृपा सुधा सरिता अति, बाढ़त दसदिशि विश्व बहाय।
तदपि निम्न भूमि जल ठहरै, ऊँची ठौर ते बहि बहि जाय।।
ताल तलैया भरि भरि जावैं, पर्वत सूखौ रूखौ जाय।
भेद नहीं प्रभु 'प्रेम' कृपा में, भूमि भेद फल भेद लखाय।।

चौपाई

वयस आठवों लाग्यौ आय। यज्ञोपवीत समय सुहाय।।
मंगल उत्सव विप्र मनाये। जनेउ विश्वम्भर काँध सुहाये।।
जगद्गुरु हरिहू गुरु कीन्हे। मंत्र गायत्री उर धरि लीन्हे।।
उठि प्रातहि गंगा न्हावैं। संन्ध्या वन्दन कर्म निबाहैं।।
आय भवन करैं तुलसी पूजन। सालिग्राम गोपालहिं अर्चन।।
विधि विधान सह भोग धरावैं। धर्म लोक सब नेम निबाहैं।।
पाय प्रसाद चटसारहिं जावैं। गुरु सुदर्शन विष्णु पढ़ावैं।।
सन्ध्या सुकृत सुनत उर धारैं। अर्थ विविध विचार प्रचारैं।।
छात्र बड़े वय कोऊ न पारैं। विश्वम्भर ढिंग सबही हारैं।।

सोरठा

अचरज बुद्धि प्रकाश, आदर बहु गुरुजन करैं।
विश्वम्भर सुख रास, छात्र प्रिय उत्तम भये।।
मात पिता मन मोद, मति गति सुधरी लाल लखि।
चंचल बाल विनोद, नहीं भयो शीलवान अब।।

(दृश्य-मिश्रगृह। शची जगन्नाथ बैठे है)

शची-अहा देव! जब सों निमाई कौ जनेऊ भयो है तब सों वाकी चंचलता सब छूट गई है और बुद्धि हू सुधर गई है। अब तौ वह बड़े आचार-विचार सों रहै है और मन लगाय कै-पढ़ै है।

जगन्नाथ-यह सब गायत्री देवी की कृपा समझौ। गायत्री मन्त्र बुद्धि शुद्ध करै है और विद्या बल वर्चस्व बढ़ावै है।

शची-हाँ नाथ! ऐसी ही बात है। वाके सहपाठी वाकी विद्या-बुद्धि की बड़ी प्रशंसा करैं है। आय-आय कै मोसों कहैं हैं कि यह निमाई ऐसे-ऐसे कठिन प्रश्न करै है कि अठारह-अठारह बीस-बीस वर्ष के बड़े-बड़े छात्र हू याके सामने नहीं टिक सकैं हैं। निमाई की जिह्वा ते मानौ सरस्वती बोलै है। बड़े-बड़े पण्डित निमाई की बुद्धि की प्रशंसा कर-कर अघावैं नहीं हैं।

जग०-परन्तु देवि! मोकूँ यह अति प्रशंसा सुहावै नहीं है।

शची-यह कैसी उलटी बात? पुत्र की प्रशंसा पिता को न भावै!

जग०-(दु:खपूर्वक) अरी अबोध ब्राह्मणी! अति सर्वत्र दुखदाई होय है। अति रूप, अति गुण, अति विद्या, अति धन, अति बल, अति आयु-ये सब अन्त में दु:ख के ही कारण बन जाय हैं। निमाई में रूप की अति तौ है ही, वाके ऊधमन की अति हू तुम देख ही चुकी हौ और अब विद्या-बुद्धि हू में अति मात्रा है जाय रही है। यासों मेरौ हृदय रह रह कै शंका सों काँप उठै है (ठहर कर) हाय! बड़े पुत्र विश्वरूप कूँ पढ़ाय लिखाय कै पंडित कियौ। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ही वह नवद्वीप में अद्वितीय विद्वान् बन गयौ हो। परन्तु हाय! द्वै वर्ष होय हैं वह-वह मुखचन्द्र न जाने कौन-सी दिशा में अस्त है गयो-सो है ही गयो। अब कहा उदय होयगो। हा बेटा विश्वरूप! कहाँ हो! एक बार आयकै अपनो मुखचन्द्र तो दिखाय जाऔ।

शची-(रोतीं हुई) धीरज धरौ नाथ! आप तो मोकूँ धीरज बँधायो करते, उपदेश कर्‍यौ करते और अब आप स्वयं ही व्याकुल है रहे हें। अपने शब्दन कूँ स्मरण करौ और वाके तांई आशीर्वाद देओ। मंगल कामना करौ।

जग०-(सम्हलते हुये) हाँ देवि! हाँ! करौ! आशीर्वाद देऔ। वत्स विश्वरूप! नारायण तुमकूँ तुम्हारे संन्यास धर्म में अविचल ध्रुव बनाय राखैं।

पद

करैं सब देव सहाय, तुम्हारी।
जेहि मग पग दिये सोइ मग चालौ, इत उत परै न पाँय, तु०।।
कैलाशवासी योग उपासी, जगद्गुरु शंकर अविनाशी।
नर नारायण बद्रिकावासी, राखैं छाया सदाय, तु०।।
यति सनकादिक, सिद्ध कपिलदेव, परमहंस गुरु श्रीशुकदेव।
दत्तात्रेय अवधूत त्रिदेव, पद रज दैवैं आय, तु०।।
भेक धरे की टेक निभैयो, आस पितर कुल की जु पुरैयो।
परम पिता पद पावन पैयो, हमहूँ 'प्रेम' तिर जाँय, तु०।।

(प्रवेश निमाई, पुस्तक हाथ, शान्त भाव)

निमाई–(पिता का चरण स्पर्श करते हैं)

जग०–(उठा हृदय से लगाय) नारायण तुम्हारौ मंगल करैं। अपनी भक्ति दैवैं। पाठशाला जाय रहे हौ न?

निमाई–हाँ पिताजी! माताजी सों प्रसादी पान लैवे आयौ हूँ।

शची–वत्स! मैं तौ तुम्हारे पिताजी सों बातन में लग गई और तुमकूँ पान दैवौ भूल ही गयी। लेऔ (पान देना) और जाऔ पाठशाला।

निमाई–(पान मुँह में डाल चलते हैं। दो–तीन कदम चलते ही गिरने लगते हैं। शची दौड़कर सम्हालती हैं)।

समाज–　　　　**दोहा**

पान प्रसादी पात ही, भये अचेत निमाई।
गिरे लगै जब धरनि पै, गही मात शची धाई।।

शची–(घबड़ा कर) हाय हाय नाथ! यह कहा है गयौ मेरे निमाई कूँ! नित्यइ तौ नारायण कौ प्रसादी पान पावै है। कबहु तौ कुछ नहीं भयौ! आज यह मूर्च्छा कैसी? कोई वैद्य बुलाओ न! उपाय करौ! निमाई! बेटा!

जग०–लाल! गौर! आँख तो खोलौ (जल के छींटे देना) चेत करौ। देखौ तौ तुम्हारी माँ कितनी व्याकुल है रही है।

समाज–　　　　**दोहा**

शीतल जल लावत नयन, करत जू नाना उपाय।
ह्वै सचेत इत उत लखत, कहत वचन विलखाय।।

निमाई-(आँखें खोल, इधर उधर देखते हुए) दादा! विस्सु दादा! कहाँ चले गये तुम?

शची-बेटा! यह तू कहा कह रह्यौ है। भलौ यहाँ विश्व-रूप कहाँ?

निमाई-अबही तौ यहीं हते माँ! मेरे सामने ही ठाड़े हे। संन्यासी भेष! हाथ में दंड-कमंडलु। मोसों बोले चल भैया! मेरे संग रहियो।

शची-(मर्माहत होकर) अरे निठुर विधाता। वज्र मत डारै। मरेन कूँ मत मारै। एक आँख तौ फोर डारी, दूसरी तो रहन दै। एक लाल तौ तैंने छीन ही लियौ। दूसरे कूँ तो गोदी में रहन दै! अब तो दया कर।

निमाई-(शची के गले में बाँह डाल) रोऔ मत माँ! मैं कहाँ जाय रह्यौ हूँ। मैंने दादा सों कह दई है कि मैं तौ बालक हूँ; मैं कहा संन्यास समझूँ हूँ। मैं तो घर में ही रहूँगो और माता-पिता की सेवा करूँगो। तब दादा ने कही कि माता पिता के चरणन में मेरौ प्रणाम कह दीजौ। वह मेरी कोई चिन्ता न करैं। मैं सब प्रकार सों कुशल हूँ (ठहर कर) अच्छौ माँ! मैं अब पाठशाला जाऊँ हूँ (चले जाते हैं)।

(माता-पिता चुप खड़े देखते रहते हैं)

समाज- **दोहा**

भावी झलक लखाय कै, गये जु माया डार।
माता पिता समुझै नहीं, कहा जु होवनहार।।

जग०-शची! दुःख मत करौ। विश्वरूप ने हम नहीं भुलाये हैं। तबही तौ प्रणाम कहवाय भेज्यौ है।

शची-परन्तु निमाई कूँ पान-बीरी सों मूर्च्छा कैसे आयी? और फिर विश्वरूप ही क्यूँ दीख पर्‌यौ? यह कहा अनहौनी-सी बात है! अब और कहा....

जग०-छोड़ौ भविष्य की चिन्ता और जो कछु विधाता दिखावै वाकूँ देखत जाऔ। नारायण कूँ स्मरण करौ। उनको स्मरण ही सब विपदान कूँ हरै है। 'हरि स्मृति सर्व विपद् विमोक्षणम्'! अच्छौ तौ अब मैं हाट-बाजार है आऊँ। नारायण! गोविन्द! मधुसूदन! (प्रस्थान। पर्दा)

(घूमकर जगन्नाथ जी का प्रवेश)

समाज- **चौपाई**

मगहिं चलत बहु सोचत जावैं।
बूड़त उछरत थाह न पावैं।।
नित नये अचरज चरित निमाई।
लखि सुनि गुनि मति भ्रम अधिकाई।।

जग०-(चलते हुए) न जानै या निमाई के रूप में को आयौ है। याकौ मुख देखूँ हूँ तब मोहित है जाऊँ हूँ। याके वचन सुनूँ हूँ तब मोहित है जाऊँ हूँ। याकूँ गोदी में लऊँ हूँ तब मोहित है जाऊँ हूँ। ममता उमगि परै है संयम को बाँध टूट जाय है और विवेक-वैराग्य सब बह जाय है। रह जाय है केवल निमाई ही निमाई! और तौ और भजन-पूजन के समय हू यही निमाई निमाई! गौर गौर! बस (गाना)

पद

अब तो यही जिय माँहि बसी है।
गोरे लाल की माधुरी मूरति, उर सों न जाय नसी है।
हम जानैं यह तनय हमारौ, ममता डोर सुजोर कसी है।
माया मोह देवहु प्रभु अपनौ, टूटै कबहू न नेह गसी है।।

हाँ प्रभो! मुक्ति नहीं, भक्ति हू नहीं, बस यह मोह-ममता ही मैं चाहूँ कि-

जा मायावश प्राणहिं दशरथ, राम राम कहिकै विनसी है।
जा मायावश नन्द यशोदा, कृष्ण कृष्ण रटि प्रान कसी है।।
माया प्रेममयी सोइ देवहु, निरखि निरखि जीऊँ गौर शशी है
अन्त हू गौर चाँद निहारत, देह तजि लहौं लाह जसी है।।

(गाते गाते प्रस्थान)
(श्रीजगन्नाथ मिश्र का स्वप्न-दर्शन)

समाज- **बंगला**

एइ मतो मिश्र चन्द्र देखिते पुत्रेरे।
निरवधि भासे विप्र आनन्द सागरे।।
जेमन गौरेर रूप मिश्र कोरे पान।
सरीर सायुज्य होइलो किवा तान।।

(चै० भा०)

चौपाई

गौर चाँद उदित निशि वासर। हृदय हिलोरे आनन्द सागर।।
रूप सुधा करैं ज्यों ज्यों पान। तन्मय देह विदेह समान।।
जो सदेह सुख मिश्र करैं भोग। सो न विदेह मुक्त लहैं लोग।।
रूप अनुपम अंग निहार। शंकित विनती करैं पुकार।।
डाकिनी शाकिनी डारैं न विघ्न। हरियो बाधा संकट कृष्ण।।
मैं तुव दास यह तनय तुम्हार। अर्पित तुव पद करौ सम्हार।।

(या विधि)

पुत्र प्रेमरस मिश्र विभोर। नहिं जानैं संध्या कित भोर।।
सोवत इक रजनी सुख माँही। अचरज सपनौ विविध लखाहिं

(दृश्य। जगन्नाथ मिश्र सो रहे हैं)

(स्वप्न नं० 1 महाप्रभु संन्यासी भेष, भक्त-मण्डली मध्य संकीर्तन करते हुए प्रवेश)।

चौपाई

लख्यौ संन्यासी भेष निमाई। अद्भुत तेज पुंज छवि छाई।।
नाचैं गावैं रोवैं पुकारें। कृष्ण कृष्ण मुख सदा उचारैं।।
अद्वैतादि भक्तजन सारे। कीर्तन करैं चहुँ ओर महारे।।

(संकीर्तन करते हुए प्रस्थान)

(स्वप्न नं० 2 सिंहासन पर संन्यासी भेषधारी महाप्रभु। पार्श्व में भक्तगण विराजमान। ब्रह्मा, शिव, इन्द्रादि स्तुति कर रहे हैं)।

पुनि सपनौ देखहिं कि-

समाज- **दोहा**

विष्णु सिंहासन उठि कभु, बैठत आप निमाई।
भक्तन मस्तक पग धरै, जय जय धुनि रहि छाई।।

देवगण-

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य देव की जय।
जय जय श्रीशचीनन्दन गौरांगदेव की जय।

श्लोक

जयति जयति देव शचीगर्भजन्मा,
जयति जयति भक्तिदानैकधर्मा।
जयति जयति मेरुस्पर्द्धि गौराङ्गधामा,
जयति जयति धन्य कृष्णचैतन्यनामा।।

(पुष्पवर्षण)

देव स्तुति–

जय कृष्ण जय कृष्ण चैतन्य,
जय कृष्ण जय कृष्ण चैतन्य।
जय कृष्ण जय कृष्ण चैतन्य,
जय कृष्ण जय कृष्ण चैतन्य।।
जय गोकुल जय नदिया धन्य,
जय द्वापर जय कलियुग धन्य।
जय गंगा जय यमुना धन्य,
जय वंशी जय कीर्तन धन्य।।

(पुष्पवर्षण। अन्तर्द्धान)

(स्वप्न नं० 3)

चौपाई

पुनि देखत संन्यासी निमाई। नगर नगर प्रति नाचत जाई।।
कोटि कोटि जन पीछे धावैं। हरि कीर्तन धुनि घोर मचावैं।।
जय जय श्रीशचीनन्दन गावैं। जगन्नाथ पुरी मारग धावैं।।

(प्रवेश संन्यास भेषधारी महाप्रभु जनसमूह के मध्य कीर्तन करते हुए)।

महाप्रभु– **कीर्तन**

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण रक्षमाम्।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण पाहिमाम्।।

(संकीर्तन करते हुए प्रस्थान)

चौपाई

पुनि सपनो सो गयौ नसाय। उठे जगन्नाथ अति अकुलाय।।

जगन्नाथ–(धीरे–धीरे उठते हुए चारों तरफ देखते हैं) हाय हाय! यह मैंने कैसौ दु:स्वप्न देख्यौ निमाई संन्यासी रूप में! तौ वह हू हमकूँ छोड़ जायगौ–संन्यासी बन जायगौ? ओह! विश्वरूप हू तौ निमाई सों यही कह गयौ है! हे हरे! हे जनार्दन! मेरे बुढ़ापे के सहारे कूँ मत छीन लीजौ! मरेन कूँ मत मार दीजौ, दया! दया दीनबन्धो! करुणासिन्धो (घुटना टेक)

मालकोष 1 ताला

अशरन शरन हे, मंगलकरन हे।
दुक्ख दलहु हरहु विपद, आरत हरन हे।।1।।
जय माधव मधुसूदन, केशव कंसारि।
त्रिविक्रम वामन नरसिंह, दानव दरन हे।।2।।
गोकुल रक्षक गोविन्द, गोवर्धनधारी।
द्रोपदी सखा सहायक, अर्जुन शरण हे।।3।।

दादरा

दसन तृन शीश नाय, माँगूँ भीख यह निमाई
एक लाल वन कौ वासी, दूजो रहै गृह उपासी।

1 ताल

यह एक आधार प्रेम, नातर मरण हे।।4।।

(प्रवेश शची)

शची–नाथ! आपकी यह कहा विह्वल आतुर दशा है।

जग०–(अनसुने) अशरन शरन हे! नरसिंह शरन हे।

शची–(बाँह पकड़) मेरी ओर तौ देखौ! इतनी रात में आप शय्या छोड़ कै कैसे व्याकुल हैकै भगवान् को पुकार रहे हैं? कहा बात है? कहौ न नाथ!

जग०–मत पूछौ देवि! मत पूछौ! बड़ौ अमंगल स्वप्न देख्यौ है। निमाई! मेरौ निमाई कहाँ है?

शची–सोय रह्यौ है। कुशल है। बात कहा है? कछु तौ कहौ।

जग०–सुनौगी? अच्छौ तौ सुनौ। परन्तु पहले पत्थर की छाती बनाय लेऔ। मैंने सपनौ देख्यौ कि निमाई सं....सं.... संन्यासी बन गयौ है। न

सुन्दर केश है न सुन्दर भेष है। न शिखा है न सूत्र। एक भगवा वस्त्र पहने नाच रह्यौ, गाय रह्यौ, रोय रह्यौ है। सहस्र-सहस्र जनता वाकूँ घेरे कीर्तन कर रही है। निमाई, मेरो निमाई कहा मोकूँ छोड़कै चल्यो जायगो?

शची-नहीं नाथ! ऐसे मत कहौ। वह हमकूँ छोड़कै नहीं जायगौ। वह तौ कई बार अपने मुख ते कह चुक्यौ है कि मैं घर में ही रहूँगो और दादा की जगह मैं तुम्हारी सेवा करूँगो। यह बात तो वा दिना आपही के आगे कही ही फिर आप काहे कूँ घबरावौ हौ। विश्वरूप कौ तो जन्म सों ही वैरागी निर्मोही स्वभाव हो परन्तु यह निमाई तौ बड़ौ अनुरागी स्वभाव वारौ है। वह अवश्य ही गृहस्थी बनैगौ। और देखौ नाथ! सपने की बात तौ अधिक करकैं झूँठी ही होयौ करैं हैं।

जग०-ऐसौ ही होवै। भगवान् तुम्हारी ही बात साँची करैं। मेरौ यह सपनौ झूँठो ही निकसे। जाऔ, आराम करौ! मैं हू आराम करूँ हूँ-हरे! गोविन्द!

(शची चली जाती है। जगन्नाथ लेट जाते हैं)

(पटाक्षेप)

⁂

पितृ-वियोग

समाज-

दोहा

विद्या पढ़ैं हित चाव सों, भये शान्त निमाई।
अब न जावैं गंगा तट, करैं न चंचलताई।।

चौपाई

गंगा जावैं लोग लुगाई। देखि न पावैं तहाँ निमाई।।
तृषिन नैन मुख देखन चाहैं। बाट तकैं अन्तर अकुलावैं।।
बूझैं परस्पर देख्यौ निमाई। आवत जात कहूँ दीसत नाई।।
दिवस कछुक जब देख न पाये। जगन्नाथ ढिंग बूझन आये।।

(प्रवेश चार-पाच ब्राह्मण)

ब्राह्मण वृन्द-ओ जगन्नाथ मो'शाय! मिश्र मो'शाय! बाड़ी ते आछेन ना की?

जग०-(बाहर निकलते हुए) नमस्कार बाणुज्ये मोशाय! चाटुज्ये मोशाय नमस्कार आसुन! आसुन! बड़ी कृपा करी जो दर्शन दिये! कुशल मंगल तौ है न?

चाटुज्य-हाँ मिश्रजी! प्रभु की कृपा है। आपकौ निमाई तौ कुशल सों है न?

जग०-हाँ चाटुज्ये मोशाय! आप सबन के आशीर्वाद सों कुशल है।

बाणुज्य-आजकल तौ वाके दर्शन ही नहीं होय है। न गंगा के घाट-बाट पै और न कहूँ रास्ता चलते दीखै है। वाके बिना हमकूँ गंगा तट सूनौ-सौ लगै है।

भट्टाचार्य-हाँ मिश्रजी! वाकी चंचलताई तौ सही हू जाय है, परन्तु वाकौ अदर्शन तौ असह्य है। वाके दर्शन तौ कराऔ, वह है कहाँ?

गाना- कान्हरा-3

कहाँ जादूगर तिहारो छौना।
देखन न पावैं मुख, न्हान जावैं गंग जब,
चाँद वदन सुख भौना।।1।।
देखे बिना चाँद मुख, लागै नहीं प्यास भूख,
गंगा-न्हान, सेवा-सुख, लागै सब फीको रूख।
ताड़ो न वदन चाँद, राखौ न भवन माँझ,
जान देऔ गंगा न्हान, होन देऔ नृत्य गान।
(वाने) डार दियौ हम पै टोना।।2।।
नित लाल देखि पावैं, दया यही हम पै लावैं,
मंगल मनावैं 'प्रेम', युग युग जीवौ गावैं।
रार तकरारी सब, वारि वारि बलिहारी,
लागे बड़ी प्यारी प्यारी, तीन लोक न्यारी न्यारी।
मीठी खारी कहत बनै ना।
दिखराऔ वह मूरति खिलौना।।3।।

जग०-पंडितो! राम राम करके दिनन में अब वाकी चंचलताई छूटी है और पढ़वे में वाकी विशेष रुचि है गई है। निमाई! विश्वम्भर! यहाँ अइयो वत्स।

निमाई-(पुस्तक को हाथ में लिये, भीतर से निकलते हैं) पिताजी! कहा आज्ञा है?

जग०-वत्स! इनकूँ प्रणाम करौ। इनके आशीर्वाद सों आयु, विद्या, बुद्धि, वैभव, यश प्राप्त होयगौ।

निमाई-(एक-एक करके सबके चरण स्पर्श करते हैं)

ब्राह्मण 1-विद्या बलवर्चस्वमस्तु।

ब्रा० 2-स्वस्ति कल्याणमस्तु।

ब्रा० 3-श्रीकृष्णेरतिर्मतिरस्तु।

समाज- **चौपाई**

मुख असीसैं, दृग वदन निहारैं।
पुलकित तन मन प्राणन वारैं।।
रूप अनूप हेरत न अघावैं।
पुनि पुनि मिश्र भाग सराहवैं।।

वाणुज्य-मिश्रजी! हम आपके भाग्य की कहा सराहना करैं जो आपने ऐसौ सुन्दर मनोहर पुत्ररत्न पायौ है।

चाटुज्य-और आपके भाग्य सों हमारे हू भाग्य जागें हैं जो हमारे आँखिन कूँ यह दर्शन सुलभ भयौ है।

जग०-प्रिय बन्धुऔ! मैं तो आप सब महानुभाव सों यही एक आशीर्वाद की भीख चाहूँ हूँ कि वह मेरे जीवन की ज्योति निमाई मेरे समीप ही जगमगाती रहै।

सब ब्रा०-अवश्य! अवश्य! यह ज्योति चिरकाल पर्यन्त जगमगायौ करैगी। अच्छो! अब हमकूँ आज्ञा मिलै। नमस्कार (ब्राह्मणों का प्रस्थान)।

समाज- **दोहा**

रूप संन्यास निमाई को, लख्यौ जो सपने माँझ।
खटकत मिश्र हृदय सदा, कहा भोर कहा साँझ।।

चौपाई

जब जब वदन निमाई निहारैं। भूल जायँ अस मोहनी डारैं।।
कबहूँ सुख दुख कबहू पावैं। भूल कभू कभू याद सतावैं।।
दु:खहू भूल है सुखहू भूल है। सुख दुख ही संसार मूल है।।

दोहा

सुख दुःख झूला में सकल, झूलि रह्यौ संसार।
सुर नर मुनि बचै नहीं, बचैं नहीं संसार।।

चौपाई

दिवस जात लागत नहिं बारा। प्रबल अखंड काल की धारा।।
एक दिवस दुःखदायक आयो। जगन्नाथ तन ज्वर जु लखायो।।
वयस अधिक तापै दुख भारी। भई शिथिल देह सेज सम्हारी।।
एक दिवस निशि सपनौ आयौ। महाप्रयाण संदेशो पायो।।

(दृश्य-जगन्नाथ मिश्र शयन कर रहे हैं। स्वप्न दर्शन-सिरहाने पर एक वैकुण्ठ का पार्षद खड़ा है)।

पार्षद- **चौपाई**

चलहु वैकुण्ठ लैन हौं आयौ।
मैं वैकुंठ नाथ पठायौ।। (अन्तर्धान)

(पटाक्षेप)

समाज- **चौपाई**

सपनौ गुनि जगन्नाथ दृढ़ायौ।
जग ते विदा काल नियरायौ।।
हरि सुमरन हित मनहिं लगाये। गहै मौन निज जन घबराये।।
पार परौसी सब जुरि आये। भक्त विप्र बन्धु सब आये।।
चन्द्रशेखर अद्वैत श्रीवासा। मुरारि मुकुन्द भक्त हरिदासा।।

(अद्वैत, श्रीवास, मुरारि, हरिदास आदि भक्तवृन्द कीर्तन करते हुए आते हैं)

भक्तमण्डली **कीर्तन पद**

गाय गाय हरि यश जीजै।
जीवन कौ फल इतनो ही बस, छिन छिन हरि रस भीजै।।
मोहन मदन गोपाल गोविन्द, नाम चाव सों लीजै।
अन्तर 'प्रेम' पुलक जल लोचन, शीश चरन पै दीजै।।
हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।

(कीर्तन करते हुए प्रस्थान)

(पर्दा खुलता है। जगन्नाथ शय्या पर। शची पायताने की ओर बैठी है। अद्वैत आदि भक्तमण्डली आती है। शची माँ उठकर एक ओर ओट में खड़ी हो जाती हैं)

अद्वैत-हरि बोल! मिश्रजी! कृष्ण कृष्ण कहौ!

जग०-(आँखें बन्द, कृष्ण कृष्ण! गौर गौर!

श्रीवास-मिश्रजी! आचार्यदेव पधारे हैं।

जग०-(आँखें खोल देखते-उठकर बैठ जाते हैं) आचार्य-देव! प्रणाम! भक्तमण्डली कूँ नमस्कार! बड़ी कृपा करी जो आयकै दर्शन दियौ। मैं आप सबन कूँ ही स्मरण कर रह्यौ हो।

अद्वैत-आज्ञा करौ! आपकी कहा इच्छा है।

जग०-आचार्य जी! श्रीवास जी! आप सवन सों मेरी एक अन्तिम प्रार्थना है। कल रात्रि मैंने एक स्वप्न देख्यौ कि एक साँवरो सुन्दर बालक मेरे सिरहाने ठाड़ौ है और कह रह्यौ है-'मिश्रजी! वैकुण्ठ कूँ चलौ। मैं वैकुण्ठनाथ कौ भेज्यौ आयौ हूँ।' अतएव अब अवश्य ही मेरौ अन्तकाल समीप है। आप सब वैष्णव महानुभाव मोकूँ अपने चरणन की धूरि दैवें और मेरे गौर निमाई कूँ कृपा करिकै अपनावें। मैं वाकूँ आप सबन के चरणन पै डारे जाऊँ हूँ। एक बूढ़ी माँ कूँ छोड़कै संसार में वाकौ और कोई नहीं है।

अद्वैत-है क्यूँ नहीं मिश्रजी! सब संसार आपके विश्वम्भर निमाई कौ ही तौ है। हम सब हू वाही के हैं। वह आप को ही धन नहीं, हमारौ हू जीवन सर्वस्व है। वाकी आप कोई चिन्ता न करैं। चिन्ता तौ या समय केवल सर्वचिन्ता हर चिन्तामणि श्रीहरि की ही करैं। कृष्ण कृष्ण कहैं।।

शची-(रोती हुई) हे नाथ! जीवन भर दासी ने आपकी सेवा करी। अब आप कहा मोकूँ छोड़कै जानौ चाहौ हो। मैं हू संग चलूँगी। आपकूँ छोड़ है ही कौन मेरौ?

जग०-पतिव्रते! जो तुम मेरे संग चलौगी तो मेरे प्राण निमाई कूँ कौन सम्हारैगो। वह तो सर्वथा अनाथ, असहाय, आश्रयहीन है जायगौ! यासों कल्याणी! निमाई कौ पालन करियों और कृष्ण को भजियों यही मेरी अन्तिम आज्ञा है।

(प्रवेश निमाई व्याकुल दौड़ते हुए)

निमाई-बाबा बाबा! (चरणों पर गिर पड़ता है)

जग०-(उठकर सिर पर हाथ रख) वत्स विश्वम्भर! रोऔ मत! नारायण तुम्हारौ सदैव मंगल करैं।

निमाई-(रोते हुए) बाबा! मोकूँ छोड़कै कहाँ जाय रहे हौ? मैं अब कौन कूँ बाबा कहकै बोलूँगो? कौन मोकूँ गोदी में बैठार शिक्षा दैगौ। हाय बाबा मैंने तो-

दोहा

सदा दुक्ख मैंने दियौ, कबहु न दियौ सुक्ख।
क्षमहु मेरे दोष सब, मोड़ि जाऔ न मुक्ख।।
विद्या पढ़ि बड़ौ होय मैं, दैहौं सुख बहु तात।
तुम बिन सहारौ कौन अब, दुखिनी वृद्धा मात।।

जग०-निमाई! गौर रोऔ मत बेटा! धीरज धरौ, चला चली कौ नाम ही संसार है-

दोहा

चलत रहै थिर ना रहै, ऐसौ यह संसार।
अचल एक रस नित्य तौ, श्रीकृष्ण ही सार।।
नामधारी जगन्नाथ मैं, वे साँचे जगन्नाथ।
उनकूँ मति कभु भूलियो, वे ही तुम्हरे तात।।
करियो सेवा मात की, और जाय गया धाम।
भर दीजौ मम पिंडहू, लैकैं मेरौ नाम।।

अब मोकूँ गं....गं....गंगाजी लै चलौ। कृ-कृष्ण गौर....र (ढुलक पड़ते सेज पर)।

निमाई-(रोते हुए लिपट जाते) बाबा! हरि बोल।

जग०-ह....ह....हरि बोल।

भक्तमंडली-हरि बोल।

अद्वैत-चलौ श्रीवास जी! पलंग सहित इनकूँ गंगाजी कूँ लै चलौ। अन्तिम समय सन्निकट ही है।

भक्तवृन्द-(हरि बोल-कहते हुए कन्धा लगाते हैं। पर्दा पड़ जाता है)।

नेपथ्य से-हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (संकीर्तन धीरे धीरे बन्द हो जाता है)।

समाज- **दोहा**

दिव्य त्रिवेणी संगम, गंगा, हरि, हरिनाम।
जगन्नाथ तन त्याग तहँ, गये अमरपुर धाम।।

इति पितृ वियोग लीला सम्पूर्ण।

❖

कैशोर लहरी **प्रथम कणामृत**

मातृसेवा-मित्र प्रेम

(द्वादश एवं पंचदश वर्षीय लीला)

श्लोक

नमस्त्रिकाल सत्याय, जगन्नाथ सुताय च।
सभृत्याय सपुत्राय, सकलत्राय ते नमः।।

श्लोक

संन्यासार्थं गतवति गृहादग्रजे विश्वरूपे।
मिष्टालापै र्व्यथितं जनकं तोषयामास तूर्णम्।।
मातुः शोकं पितरि विगते सान्त्वयामास यश्य।
तं गौराङ्गं परम सुखदं मातृभक्तं स्मरामि।।

दोहा

पिता गये परधाम को, मात रही दु:ख पाय।
बहुत भांति विश्वम्भर, धीरज नित्य बँधाय।।
मिश्रकुल परिवार मधि, रहे तीन जन शेष।
शची निमाई और इक भृत्य ईशान विशेष।।

चौपाई

एक विश्वम्भर मात अधार। बारह वर्ष के गौर कुमार।।
पल पल छिन छिन करैं पुकार।
पुतरिन प्रति जिमि पलकन प्यार।।
गौरहु दुखिनी मात निहार। आदर नेह दिखरावैं अपार।।

कुल देवता तुलसी पूजन। गुरु ढिंग विद्या पढ़हिं दै मन।।
विष्णु सुदर्शन पंडित ठौर। कीन्ही पढ़ाई शेष जु गौर।।

(तब)

स्वजन बन्धु सवन मिलि, ठहरायौ जु उपाय।
गंगादास पंडित निकट, पढ़ैं निमाई जाय।।
पंडित वैयाकरणी वर, गंगादास सुजान।
अति हितकरि पढ़ावहिं, पढ़हिं गौर गुणखान।।

(दृश्य-निमाई अध्ययन-कक्ष में एक ग्रन्थ के पढ़ने में दत्तचित्त)

समाज- **सोरठा**

एक दिवस घर बैठि, पढ़त गौर चित तन्मय।
आईं हैं जननी पैठि, जानत नहीं ऐसे मगन।।

(प्रवेश शची माता)

ठाड़ी मौन लखति, मूरति करुणा सनेह जनु।
दुख जु हिय उफनति, समुझि विधना क्रूर गति।।

शची-(स्वगत) हाय हाय! यह शंका पिशाचिनी मोकूँ हू खाय कै छोड़ैगी। याने उनकूँ खाय कै मेरौ सुहाग तौ छीन ही लियौ। अब कहा यह मेरी गोदी हू सूनी करैगी यद्यपि निमाई मोसों इतनौ स्नेह करै है और विद्या पढ़वे में ही मगन रहै है तथापि विश्वरूप जो बात निमाई कूँ कह गयौ है और मिश्रजी ने जो सपनौ देख्यौ हो, उनकूँ मैं बहुत भुलायवै पै हू भूल ही नहीं सकूँ हूँ। चिन्ता चढ़ी रहै है! हे दीनबन्धो! हे करुणासिन्धो! मो विधवा अबला की आँचर कौ यह धन छीन मत लीजौ-यही भीख मैं दिन रात तोते माँगूँ हूँ (धीरे-धीरे समीप आ निमाई के कन्धे पर हाथ रखती है) बेटा!

निमाई-(आँखें उठा) तुम हौ माँ?

शची-(गद्‌गद्‌ कण्ठ) निमाई! गौर! (रोने लगती हैं)

निमाई-(उठ खड़े हो माता की बाँह पकड़) क्यूँ रोऔ हौ माँ? ऐसी कहा नई बात है?

शची-मैं कहा रोमनो चाहूँ हूँ बेटा! रोमनौ आप ही आय जाय है, रोकै पै हू नहीं रूकै है।

निमाई-(माँ के गले पर हाथ डाल) मेरी ओर देखौ माँ! और बीती बातन कूँ विसार देऔ।

शची- **पद-आसावटी 3**

कैसे भूलूँ मैं भूल्यौ न जाय
मेरौ हियरा भरि भरि आय।
इक दुख होय, द्वै दुख होय, सौ सौ दुख कहा भूल्यौ जाय।।1।।

अन्तरा

फूल झरैं पै काँटे रहैं हैं, सूखैं बाग पै झाड़ हरे हैं।
दुखिया पै दुख सारे परै हैं, मरे कूँ विधना मारत जाय।।2।।
कर्म काल गति जान्यौ न जाई, छिन में पर्वत छिन में राई।
बिनु बादर बिजुरी परै आई, पानी हू में आग लगि जाय।।3।।
सूनौ भवन साज सब सूनौ, चिन्ता भय उर बाढ़त दूनौ।
मेरी अमावस के तुम पूनौ, मति ना 'प्रेम' कहूँ छिप जाय।।4।।

निमाई! बेटा! मैं सब सुख सह सकूँ हूँ। सात कन्या चली गईं-सो सह लियौ! तेरौ बड़ो भाई घर छोड़कर संन्यासी बन गयौ-सोहू सह लियौ। तेरे पिताजी पधार गये-सोहू सह रही हूँ। तेरे या मुख कूँ देख-देख कै ही सह रही हूँ परन्तु वत्स! मेरे प्राण! मेरे सर्वस्व! यदि तू हू कहूँ मो.... मो दुखिया कूँ....

निमाई-(बात काटते हुए) माँ! मैं तुमकूँ कई बेर कह चुक्यौ हूँ कि मैं अबही बालक हूँ। मेरौ हू तो तुम्हारे बिना और कोई नहीं है। जैसे तुम मोकूँ नहीं छोड़ सकौ हौ, वैसे ही मैं हू तुमकूँ नहीं छोड़ सकूँ हूँ। यासों तुम निश्चिन्त रहौ-

बंगला- **चौपाई**

शुनो माता मने किछुइ न चिन्तहु तुमि।
सकल तोमार आछे जदि आछे आमि।।
ब्रह्मा महेश्वरओ जे दुर्लभ लोके बोले।
ताहा तोमाय आनिया दिबो हेले।।

(चै०भा०)

पद-खमाज

तजहु चिन्ता सुनहु वचन, कही मेरी यह मान लो।
मैं हूँ जब तौ सभी हैं तुम्हरे, कही मेरी यह०।।1।।
जो धन ब्रह्मा शिवहू चाहैं, ललचावैं पावैं नहीं।
सोई मैं लाय 'प्रेम' दुर्लभ, दऊँगौ तुमहिं मात सही।।

शची-परन्तु वत्स! या समय तौ घर में दरिद्रता कौ प्रकाश है।

निमाई-(स्मित पूर्वक) नहीं माँ! यह तो महामहेश्वर को विलास है।

शची-(हँसती हुई) हाँ हाँ मेरे महामहेश्वर! तबही तौ आज्ञा करै है-यह लाय दै, वह लाय दै, बस लाय दै ही लाय दै कर्‌यौ करै है। और जो कहूँ आज्ञा-पालन में नेकहू देर है जाय है, तौ घर की वस्तुन कूँ तोर-फोर कै प्रलय मचाय देय है। ऐसौ महामहेश्वर है मेरौ!

निमाई-(माँ के गले में हाथ डाल हँसते हुए) ऐसौ अब मैं कहाँ करूँ हूँ। वे तौ सब पुरानी बात हैं। तू उनकूँ अब तांई नहीं भूली है माँ?

शची-(निमाई कूँ छाती से लगाकर) यशोदा मैया कहा अपने कन्हैया के ऊधम कूँ कभू भूल सकी हैं जो मैं तेरे ऊधमन कूँ भूल जाऊँगी। वे कहा भुलायवे योग्य वस्तु हैं। वह तौ मेरे हृदय-सम्पुट कौ अनमोल मोती हैं।

समाज- **चौपाई**

लखि मुखचन्द्र जु चिन्ता भूलीं। नैन चकोर भये सुख फूलीं।।
चितै चितै मन माहिं सिहावै। भाग बड़ौ अपनौ जु मनावै।।
जाके सुमिरत दुख नसि जावै। दरशन कहा न सुख उपजावै।।
चलै न्हान विश्वम्भर गंगा। अचरज लीला रंग तरंगा।।

निमाई-माँ! गंगा-स्नान को समय है आयो। लाओ तेल देओ पीताम्बर देओ और गंगा-पूजन के लिए चन्दन-माला धूप दीप सब सामग्री देओ।

शची-अच्छौ! नेक ठहर जा! अबही दऊँ हूँ। माला बनाय लऊँ तोसों बतरायवे में माला बनामनौ भूल गई!

समाज- **दोहा**

'दऊँ बनाय' सुनत ही, भये रुद्र निमाई।
गरजत तरजत मात पै, अचरज कोप जु माई।।

निमाई-(क्रोध पूर्वक) संसार के सब कामकाजन में तौ सावधानी और देव-सेवा में भूल? कहा काम है ऐसे घर कौ। मिटाय दऊँ नाम-निशान याकौ।

समाज- **चौपाई**

घर भीतर गये दौरि निमाई। फोरत वस्तु जहाँ जो पाई।।
हँडिया गागर माटन फोरैं। तेल दूध घृत धरनिहिं ढोरैं।।

चाँवर दार चून फैलाए। चीर वस्त्र बहु लीर बनाए।।
वस्तु विगारि पुनि गेह विगारैं। भीतर फोरैं द्वार उखारैं।।

निमाई-(गरजते, हुँकारते, पैर पीटते हुए) मिटाय दऊँगो ऐसे घर कूँ! हूँ हूँ। जहाँ पूजा की सामग्री न मिलै वह घर उजाड़ दैवे के ही योग्य है।

समाज-

कोप भरे पुनि बाहर आये। देखत तरु तासों लगि धाये।।
तदपि न ज्वाला जिय की जुड़ाई। मात शची डरपाय दुराई।।

शची-

टेरत मधुसूदन हे मुरारी। रक्ष लाल हरौ विपदा भारी।।

समाज-

फरकत होंठ दसननहिं चबावैं। पटकत पद डोलत चहुँ धावैं।।
तोरि फोरि तब आँगन आये। जरनि न जात भूतलहिं लुठाये

(निमाई भूमि पर लोटपोट होते-होते शान्त पड़ जाते हैं)

धूर भरे तन गौर शरीरा। विथुरे केश खुले पट चीरा।।
लोटत लोटत थिर भये जाई। योग निद्रा नैनन महँ आई।।

दोहा

नन्द भवन नन्दलाल ज्यूँ, लीला करत निमाई।
दूध हेत जब पूत तजि, चली जसोदा धाई।।

शची-अच्छौ भयौ! सो गयौ! अब मैं याके क्रोध के कारणै दूर कर दऊँ-जल्दी सों माला बनाय लाऊँ और पूजा की सामग्री सजाय लाऊँ। (चली जाती हैं)

समाज- **कुंडलियाँ**

सब कुछ है जब जीव कौ, तबही है कछु नाहिं।
कछुई नहीं जब भक्त कौ, तबही सब कछु आहिं।।
तबही सब कुछ आहि, निष्किंचन-सर्वस्व प्रभु।
मात पिता सुत भाई, धन जन सम्पद सब प्रभु।।
सुर मुनि दुर्लभ 'प्रेम', भाग्य लता फूलै जु तब।
माया होय विनाश, बनि जात हरि ही एक सब।।

(शची माता पूजा की थाल लेकर आती हैं)

दोहा

साहस करि शची मात सब, पूजा सौंज लै आईं।
शनैः शनैः अंग झारती, पोंछती अंग निमाई।।

शची-

उठौ लाल खोलौ नयन, जननी बलि बलि जाय।
लैओ पूजन वस्तु सब, आऔ बेगि नहाय।।

समाज-

होय सचेत कछु नैन उघारै। पुनि उठि बैठे गेह निहारे।।
निज करनी सुधि जिय जब आई। सकुच सहित रहै शीश नमाई
शची समझावति नेह जनाई। भलौ कियौ जो कियौ निमाई।।

शची-वत्स निमाई! जो कछु तैंने कर्‌यौ सो अच्छौ ही कर्‌यौ। आज कौ दिन अवश्य ही तेरे लिए बड़ो अशुभ हो, न जाने कहा भारी विपत्ति तोपै परवे वारी ही परन्तु वह घर पै ही पर गई। मेरे प्राण! नारायण की कृपा सों तू बच गयौ। याते बढ़कर सुख मेरे लिए और कहा है। यासों अब देर मति करै वत्स! गंगा न्हाय, पूजन कर, जल्दी आय जा! मैं रसोई तैयार कर राखूँ हूँ। तोकूँ भूख लग रही होयगी।

(निमाई पीताम्बर, झारी, पूजा का थाल लेकर धीरे-धीरे चले जाते हैं। माता देखती रही है)

शची- **भैरव-इकताल**

विपदहारी मंगलकारी, हे मधुसूदन हे मुरारे।
रक्ष अनाथ बालक मोर, हे मधुसूदन०।।1।।
दु:ख की रैन अँधेरी भारी, मैं अनाथिनी विधवा नारी।
तुम बिन आन को आधारी, हे मधुसूदन०।।2।।
दु:ख लाखन विच एक सुख, गौर चाँद को मधुर मुख।
करियो ना 'प्रेम' कभु विमुख, हे मधुसूदन०।।3।।

(प्रवेश निमाई)

शची-आय गयौ बेटा! न्हाय आयौ? पूजन करि आयौ।

निमाई-हाँ माँ सब करि आयौ। लेऔ माँ, याकूँ सम्हारौ

शची-कहा है बेटा?

निमाई-लेऔ, देखौ (सोना देना)

शुची-(साश्चर्य) सौनौ? अरे आज तू फिर सौनौ लैकै आयौ है। पहले हू एक बेर लाय चुक्यौ है। अरे! यह तू कहाँ ते लै आवै है? साँची बता।

निमाई-माँ! यह सौनौ श्रीकृष्ण ने भेज्यौ है।

शची-ना! मोकूँ विश्वास नहीं आवै है। बड़ौ भय होय है याके पीछे कहूँ कोई विपत्ति न आय परैं। मैं भूखी मर जाऊँगी पर ऐसो सौनौ कदापि नहीं लऊँगी! तू साँची-साँची बताय दै निमाई! तू कहाँ ते सौनौ लै आवै है?

निमाई-माँ! मैं बिल्कुल साँची बताय रह्यो हूँ कि यह श्रीकृष्ण ने ही भेज्यौ है। कहा तुमकूँ शंका होय है कि यह चोरी कौ धन है तौ सुनौ-

गजल

मैं धन की न चोरी, माँ कबहू करूँ हूँ।
यह सत्य मैं सत्य, मैं सत्य कहूँ हूँ।।1।।
जो रहते हरि के भरोसे में निशदिन।
वे हरि के हरि उनके, मैं सत्य कहूँ हूँ।।2।।
न धन की कमी है, उधर से जनों को।
इधर ही कमी मन की, मैं सत्य कहूँ हूँ।।3।।
तुम भक्तिमती हो, ओ हरि भक्तवत्सल।
(यह) प्रमाण है 'प्रेम', मैं सत्य कहूँ हूँ।।4।।

(यासों) सोना यह लेऔ माँ, और सेवा में लाऔ। करौ दूर शंका, मैं सत्य कहूँ हूँ।

शची-(लेती हुई) अच्छौ तौ बेटा! अब सेवा पूजा करलै फिर प्रसाद पायकै पढ़वे जायगौ।

(निमाई का भीतर चले जाना)

शची-श्रीकृष्ण ने सौनौ भेज्यौ? और निमाई के ही हाथ सों भेज्यौ? तौ कहा श्रीकृष्ण निमाई कूँ दर्शन देय हैं। पहले हू एक बार घर में बड़ौ अभाव देख कै यह निमाई सौनौ लायौ और आजहू फिर लै आयौ! यह कहा कोई सिद्धि जानै है अथवा तौ श्रीकृष्ण सों ही याकौ कोई सम्बन्ध है। बालपन ते ही याके चरित कछु विचित्र ही हैं। तौहू पार परौसन में पूछताछ तौ करनी ही चाहिये। जो यह सौनौ काहू कौ न निकस्यौ तब ही याकूँ काम में लऊँगी।

(प्रस्थान)

बंगला- **चौपाई**

हेनो भते महाप्रभु सर्व सिद्धेश्वर।
गुप्त भावे आछे नवद्वीपेर भीतर।। (चै० भा०)

दोहा

सर्वसिद्धेश्वर महाप्रभु, प्रगटत चरित उदार।
गुप्त भाव सों राजहीं, पुरी नवद्वीप मझार।।

❖

निमाई-रघुनाथ

समाज- **दोहा**

किये व्याकरण शेष तब, पढ़न जु लागे न्याय।
वासुदेव पंडित महा, ताके टोल महँ जाय।।

चौपाई

किशोर पंचदश वयस सुहाई। दिन दिन निखरत सुंदरताई।।
काँधे जनेऊ अंसन पै अलकैं। पीताम्बर तन कंचन झलकैं।।
रोम रोम सों लावनि छलकें। देखत लोचन भूलें पलकें।।
तैसौइ अद्‌भुत बुद्धि प्रकाशा। अद्‌भुत नूतन विद्या विलासा।।
छात्र कहा पंडित पार न पावैं। हार जायँ तौहु नेह बढ़ावैं।।
बुद्धि सों ही करैं लराई। हृदय प्राण मन लेयँ चुराई।।
ऐसौ चरित सुनहु सुखदाई। परम उदारता गौर दरसाईं।।
(दृश्य-गंगा में नौका कर निमाइ और सखा रघुनाथ बैठे है)

निमाई रघुनाथ-गंगा स्तुति

देवि! सुरेश्वरि! भगवति! गङ्गे!
त्रिभुवनतारिणि! तरल तरङ्गे!
शंकरमौलिनिवासिनि! विमले!
मममतिरास्तां तव पद कमले।।1।।
हरि पद पद्‌म विहारिणी गंगे!
हिमविधुमुक्ताधवल तरङ्गे!

दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं
कुरु कृपया भवसागर पारम्।।2।।
तव जलममलं येन निपीतं
परं पदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे! त्वयि यो भक्त!
किलं तं द्रष्टुं न यमः शक्तः।।

कान्हरा 3

जय गंगे तरल तरंगे,
हरिपद रजहारी हरशीश जटाधारी।
पतितपावन कारी मात गंगे।। जय गंगे०।।

दोहा

विश्वम्भर सहपाठी इक, न्याय पंडित रघुनाथ।
राखत भाव निमाई प्रति, जिमि सखा लघु भ्रात।।
साँझ समै सुर धुनि सुखद, दोऊ रघुनाथ निमाई।
विहरत नौका बैठि बहु, वाग् विनोद बढ़ाई।।

रघुनाथ-सखे विश्वम्भर! हमारौ एक आश्चर्य तौ दूर करौ।

निमाई-वह कहा आश्चर्य है मित्र रघुनाथ! सुनूँ तौ सही।

रघु० **पद हमीर 3**

अचरज दिन दिन बाढ़ै विश्वम्भर।
जैसौ रूप तैसीइ विद्या, पाई कहाँ कित पढ़ै विश्वम्भर।।
तुम छोटे हम बड़े बड़े सब, तुम खेलौ हम पढ़ैं निरन्तर।
हमरे अगम जो सुगम सो तुमको, तुरत कहौ बिन पढ़े विश्व०
वयस लघु लिखी तुम टीका, 'विद्यासागरी' विद्यासागर।
पढ़ैं पढ़ावैं वैय्याकरणी, गागर में सागर विश्वम्भर।।

मित्र तुमने इतनी छोटी अवस्था में ही कलाप व्याकरण जैसे क्लिष्ट विषय पै 'विद्यासागरी' नाम की सरल सुबोध टीका लिख डारी है। विद्यासागरी टीका कहा है विद्या कौ सागर ही है-गागर में सागर भर्यौ भयौ है। व्याकरण के छात्र और अध्यापक सबही वाकूँ सादर पढ़ैं पढ़ावैं हैं। बताओ तो सखे! यह विद्या-बुद्धि तुम कहाँ ते उड़ाय लाये? पढ़ी-पढ़ाई जैसी तौ यह प्रतीत नहीं होय है। यह तो कछु अमानुषी-सी ही लगै है। साँची बताऔ याकौ रहस्य कहा है?

निमाई-

साँची बात रघुनाथ तिहारी, यह विद्या नहीं मेरे अन्तर।
निशि सरस्वती आय पढ़ावै, कहत अटपटे बैन विश्वम्भर।।

मित्र! तुम साँची ही कहौ हो, मोमें इतनी विद्या-बुद्धि कहाँ कि व्याकरण के ऊपर टीका लिख सकूं यह तो सरस्वती देवी की ही कृपा है। वह रात में मोकूँ थोरौ-घनौ कछु पढ़ाय जाय है। वाकी कृपा सों ही कछु व्याकरण मोपै आवै है परन्तु तुम तौ न्यायशास्त्र के विद्वान् हौ, अद्वितीय नैयायिक शिरोमणि गुरुदेव के प्रधान शिष्य हौ। तुम्हारे सम्मुख तौ मेरी विद्या बुद्धि सब तुच्छ है।

रघु०-बस मित्र बस! बनौ मत अधिक। तुम जैसे हो हम सब देख ही रहे हैं। तुमने केवल व्याकरण के ऊपर ही टीका नहीं लिखा है, न्याय पै हू एक टीका 'सुबोधिनी' लिख राखी है-लिखी है न?

निमाई-तुमकूँ कैसे पतौ पर गयौ?

रघु०-जैसे सरस्वती तुमकूँ गुपचुप पढ़ाय जाय है वैसे ही हमकूँ हू कोई-न-कोई चुपके से बताय जाय है। और हू सुनौ। तुम वा टीका कूँ गुरुजी कूँ दिखायवे के लिए अपने संग लाये हू हौ! क्यों? साँची कह रह्यो हूँ न?

निमाई-(स्मित पूर्वक) तुम तो मित्र! पूरे सर्वज्ञ निकसे।

रघु०-हाँसी छोड़ौ और निकासौ वाकूँ। दिखाऔ मोकूँ! पहले मैं देखूँगो पीछे गुरुजी कूँ दिखामनो।

निमाई-कहा करौगे देखकै। यह तो एक सामान्य टीका है। तुम जैसे नैयायिक विद्वान् के पढ़वे योग्य नहीं है।

रघु०-यह मैं कैसे मान सकूँ हूँ। जैसे तुम सामान्य नहीं, वैसे ही तुम्हारी रचित टीका हू सामान्य नहीं होयगी। तुम अवस्था में ही हम सों पाँच-सात वर्ष छोटे हो परन्तु विद्या-बुद्धि में हमही तुमते छोटे हैं। हम ही क्यों, पण्डित कमलाकान्त। कृष्णानन्द, मुरारि जैसे नदिया के जाने-माने विद्वान् हू तुम्हारे सम्मुख छोटे ही हैं। अतएव संकोच छोड़ौ, विनोद छोड़ौ और मेरी इच्छा पूर्ण करौ। लाऔ, दिखाऔ अपनी टीका।

निमाई-(निकालते हुए) नहीं मानौ तो लेओ, देखो (देना)

समाज- **दोहा**

लैकै निमाइ ग्रन्थ कूँ, बाँचत हैं रघुनाथ।
मिटत जात आशा सबै, नैना टपकत जात।।

निमाई-(दु:खपूर्वक) यह कहा मित्र? तुम्हारी आँखन में आँसू क्यों?

रघु०-(चुप नतमस्तक)

निमाई-बोलौ मित्र! तुमकूँ मेरी सौगन्ध जो न बताऔ।

रघु०-प्यारे विश्वम्भर! कहा कहूँ परन्तु सौगन्ध देऔ हौ तौ कहनौ ही परैगौ कि अब तुम मेरे परम मित्र ते परम बैरी बन गये हौ।

निमाई-(साश्चर्य) मैं तुम्हारौ बैरी? मैंने तुम्हारौ कहा बिगार्‌यौ, बताऔ! मैं यथाशक्ति तुम्हारौ दु:ख दूर करवे की चेष्टा करूँगो।

रघु०-तौ सुनौ! यह तौ तुम जानौ ही हो कि मैं एक न्याय को ग्रन्थ लिख रह्यौ हूँ-नाम है 'दीधिती सार'।

निमाई-हाँ जानूँ हूँ।

रघु०-तौ मेरौ विश्वास हो कि मेरौ ग्रन्थ जैसौ दूसरौ ग्रन्थ न काहू ने आज पर्यन्त लिख्यौ है और न आगे कोई लिख ही सकैगौ। मेरौ ही ग्रन्थ विश्व में अद्वितीय होयगौ और मैं अद्वितीय नैयायिक पंडित प्रसिद्ध होऊँगो। परन्तु तुम्हारे या ग्रन्थ कूँ देखकै मेरी समस्त आशा-अभिलाषा धूर में मिल गई। अद्वितीय नैयायिक बनवे कौ स्वप्न, स्वप्न ही रह गयौ। मैंने जा सूत्र की व्याख्या द्वै-द्वै पन्नान में लिखी है वह तुमने द्वै-चार पंक्तिन में ही भर दीनी है। कहाँ तुम्हारौ ग्रन्थ-रत्न कहाँ मेरौ यह ग्रन्थ काँच। कहाँ भानु और कहाँ जुगनूँ।

निमाई-बस, यही बात है मित्र?

रघु०-यह कहा छोटी-सी बात है। मेरे लिए तो मृत्यु तेहू अधिक दारुण है।

निमाई-तौ सुनो रघुनाथ! मोकूँ मित्र चाहिए। मान-सम्मान नहीं।

गान- **(भीम पलासी-विलम्बित-केहरवा)**

मान दै दै मीत कौ करौ न भाई दूर।
याते बड़ौ दु:ख नहीं करै हृदय चूर।।
प्रेम-बूँद एकहू पहुँचावै स्वर्ग बीच।
आदर बड़ाई मान तौ बस डारै नरक कीच।।

प्रेम कौ भिखारी मैं तौ, लेऊँ दैऊँ प्रेम।
आज मैं तिहारे काज, लेत हूँ यह नेम।।
दियौ दुख दियौ तुमकूँ, अब न दैहौं भूल।
मीत कहा जो मीत के, न मेटै दुक्ख मूल।।
न्याय पढ़ि पढ़ी अब, करिहौं न अन्याय।
दुक्ख जड़ मिटाऊँ तुम्हरे, तबही नाम निमाइ।।
होयगी अब तिहारी ही जग में जय जयकार।

(ग्रन्थ के पन्नों को बहाते हुए)

(यह लेओ) फाड़ कै बहाऊँ ग्रन्थ, 'प्रेम' नदी धार।।

रघु०-(अत्यन्त विस्मयपूर्वक) हैं हैं! यह तुमने कहा कर डार्‌यौ?

निमाई-(उपेक्षा पूर्वक) कछु नहीं! कागज के टूक हे-सो बहाय दिये।

रघु०-कागज नहीं, अमूल्य ग्रन्थ हो!

निमाई-परन्तु मित्र के प्रेमरत्न ते अधिक मूल्यवान् नहीं हो!

रघु०-वह तौ बुद्धि कौ सार हो।

निमाई-परन्तु विद्या कौ सार नहीं हो।

रघु०-वासों जगत् कौ ज्ञान बढ़ जातौ, नेत्र खुल जाते।

निमाई-परन्तु हृदय सूख जातौ, भाव मुँद जाते।

रघु०-वासौ जगत् कौ उपकार होतौ।

निमाई-परन्तु कल्याण नहीं होतौ।

रघु०-(निमाई को गले से लगाकर) मित्र! तुम मनुष्य नहीं देवता हौ! नहीं-नहीं देवता तौ स्वार्थी होय हैं, तुम निःस्वार्थी महाशय हौ, महात्मा हौ।

निमाई-ऐसे मत कहौ! मैं तो तुम्हारो एक तुच्छ मित्र हूँ निमाई।

रघु०-तुम्हारौ यह स्वार्थ-त्याग लोकोत्तर है। हम जा कीर्ति और प्रतिष्ठा के कीट हैं, वाकूँ तुमने मलवत् परित्याग कर दियौ।

पद- पीलू-दीपचन्दी

(यह) ग्रंथ तौ मेरौ हृदय-ग्रन्थी बढ़ावै।
हृदय तुम्हारौ तौ तारेगौ दुनियाँ।।

(यह) नाम कूँ मेरे तो जानेंगे पंडित।
नाम तुम्हारौ तौ पूजेगी दुनियाँ।।
(यह) पढ़के पढ़ाके हम डूबे डुबायें।
यह त्याग तुम्हारौ तौ तारैगो दुनियाँ।।
(यह) गंगा में तुमने न कागज बहाये।
बहा दई अहंकार की सारी दुनियाँ।
न मोकूँ ही मोल, लियौ आज तुमने।
लई मोल 'प्रेम' सों, सारी ही दुनियाँ।।
(पटाक्षेप)

समाज– **चौपाई**

जो विद्या अहंकार बढ़ावै। ताकूँ लै मझधार बहावै।।
विद्या सोई जो विनय सिखावे। विनय सोई जब कपट न आवै
कपट तो काम स्वसुख कहावै। काम तजै तब प्रेम ही पावै।।
प्रेमरूप प्रभु गौर निमाई। सहज त्याग सुभाव बताई।।
परसुख सम सुख कछुइ नाई। परहित धर्म सिखाये निमाई।।
जय जय जय हरि गौर विश्वम्भर।
हरौ काम जग भरौ प्रेम वर।।

इति निमाई–रघुनाथ लीला सम्पूर्ण।

ଓ❖ଡ

कैशोर–लहरी **द्वितीय कणामृत**

अध्यापक पंडित निमाई

(षोडश वर्ष की लीला)

समाज–

जय जय श्रीगुरु गौर विश्वम्भर।
लक्ष्मीप्रिया वर विष्णुप्रिया वर।।

दोहा

परम उदार श्रीगौरहरि, ग्रन्थ अमूल्य बहाय।
कीरति यश पथ मित्र कौ, अकंटक दियौ बनाय।।

सोरठा

किया पुनि परित्याग, न्याय-पढ़न शालागमन।
लागै पढ़ावन आप, छात्र ते गुरु पद वरन।।

चौपाई

विप्र मुकुन्द संजय धनी मानी। विद्या प्रेमी रु भक्त अमानी।।
पुत्र पुरुषोत्तम संजय सुन्दर। खोजत विद्या हित पंडित वर।।
निजघर 'चंडी मंडप' भारी। विस्तृत सुन्दर सुविधाकारी।।
विद्या मन्दिर योग्य निहारी। खोले 'टोल' तहँ गौर विचारी।।
भये अध्यापक छात्र निमाई। यह धुनि नदिया घर घर छाई।।
सुनि सुनि छात्र जहँ तहँ ते आये। धन्य भाग गुरु गौरहिं पाये।।
षोडश वय राजै नवयौवन। मोहन रूप शील गुण मोहन।।
सरल सुविधि सुबोध पढ़ावैं। विद्या दैवैं हृदय चुरावैं।।

दोहा

नाता गुरु औ शिष्य कौ, जायँ सहज विसराय।
सखा सनेही मीत ज्यूँ, बोलैं हँसैं सुख पाय।।

(दृश्य-पाठशाला। अध्यापक पंडित निमाई एवं विद्यार्थी वृन्द)

निमाई-भैयाऔ! कल कहाँ तक ग्रन्थ कौ विचार भयो हो?

छात्र 1-कारक पर्यन्त गुरुदेव!

निमाई-अच्छौ तौ पहले आज पर्यन्त के विचार की किंचित् आवृत्ति कर लई जाय फिर आगे पाठ चलैगौ। अच्छौ तौ बताऔ 'गोपालो मम स्नेह पात्र:' शुद्ध है कै अशुद्ध?

छात्र 1-अशुद्ध है 'गोपालो मम स्नेहपात्रम्' होनौ चाहिए कारण कि 'पात्र' शब्द अजहल्लिंग है।

निमाई-उत्तम! 'तं भोजनं देहि' शुद्ध है कै अशुद्ध?

छात्र 2-अशुद्ध है गुरुदेव 'तस्मै भोजनं देहि' कारण कि 'सम्प्रदाने चतुर्थी' न तु द्वितीया।

निमाई-उत्तम! 'स मिथ्यां वदति' शुद्ध है कै अशुद्ध?

छात्र 3-अशुद्ध है प्रभो! 'स मिथ्या वदति' होनो चाहिए कारण कि अव्यय पद की विभक्ति नहीं होय है।

निमाई–बाढ़म्। 'सा अश्वा गच्छति' शुद्ध है कै अशुद्ध?

छात्र 4–अशुद्ध है देव! 'सा अश्वी गच्छति' होनो चाहिए कारण कि 'अश्व' को स्त्रीलिंग 'अश्वी' है 'अश्वा' नहीं।

निमाई–अब सन्धि विच्छेद करौ और नियम बताओ–'प्रत्येक:'

छात्र 1–प्रति+इक:=प्रत्येक:। 'ईको यणचि'।

निमाई–नयनम्

छात्र 2–ने+अयनम्=नयनम्। 'एचोऽयवायाव'।

निमाई–तल्लीन:

छात्र 3–तत्+लीन:=तल्लीन:। 'तोर्लि:'।

निमाई–इष्ट:।

छात्र 4–इष्+त:=इष्ट:। 'ष्टुनाष्टु:'।

निमाई–अब अनुवाद करौ–'धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का।

छात्र 1–इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट:।

निमाई–पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

छात्र 2–कष्ट: खलु पराश्रय:।

निमाई–मुख में राम बगल में छुरी।

छात्र 3–विष कुम्भं पयो मुखम्।

निमाई–कलियुग में वेदान्तियों की बहार है।

छात्र 4–कलौ वेदान्तिनो भान्ति फाल्गुने वालका इव।

निमाई–आज यहीं पाठ कौ विश्राम है। संध्या निकट है। नगरे में सों हैके गंगाजी के दर्शन कूँ चलैं।

छात्रगण–जैसी आज्ञा गुरुदेव! पधारौ।

समाज– **भीम पलासी–द्रुत 1 ताल**

कौतुक रस जनन संग, पंडित निमाइ करत रंग।
नगर भ्रमत छैल सजत, उठत छवि तरंग।।1।।
कंचन रंग सुघड़ अंग, पीतपट अति सुरंग।
मुख तमोल छवि अनंग, लाजत गति गयन्द।।2।।
हठ करि पथ वाद ठनत, पंडित जन गरब हरत।
प्रेम प्रभु स्वरूप वदत, बुझि सकै को ढंग।।3।।

(प्रवेश गदाधर पंडित)

चौपाई

गदाधर पंडित मग पाये। उरझत गौर मन मोद बढ़ाये।।

निमाई-भैयाऔ! यह गदाधर पंडित जाय रह्यौ है। घेर लेऔ।

छात्र 1-गुरुदेव! यह तो बड़ो भोरौ भारौ वैष्णव है। आपके दर्शन करते ही लाजवन्ती की नांई मुरझाय जाय है। जान देऔ या गरीब बेचारे कूँ! काहु गुमानी पंडित कूँ पकरैंगे।

निमाई-नहीं भैया! याकी गरीबी मोकूँ अति प्रिय लगै है। मैं तौ याके संग ही कछु वाक् विनोद करूँगो (गदाधर प्रति) नमस्कार गदाधर मो 'शाय नमस्कार। कैसे बचकै जाय रहे हौ। नेक हमपै हू कछु कृपादृष्टि करौ।

गदाधर-नमस्कार निमाई पंडित नमस्कार (बचकर चला जाना चाहता है) (महा प्रभु के संकेत पर छात्र गदाधर को घेर लेते हैं)।

छात्र 1-अजी! सुनौ तौ सही! ऐसे क्यों किनारौ काट रहे हौ? हमारे गुरुजी ते इतनौ क्यूँ डरपौ हो। आप तौ पंडित हो! कछु शास्त्रालाप होन देऔ।

गदाधर-अजी! कछु कार्य विशेष की त्वरा है।

निमाई-परन्तु पहले एक शंका-समाधान कर जाऔ।

गदा०-अजी! मैं आपकौ कहा समाधान कर सकूँ हूँ। मोकूँ क्षमा करौ। जान देऔ।

निमाई-नहीं नहीं! आप सब योग्य हो। भागवत के पंडित हौ मेरौ एक छोटौ सौ प्रश्न है कि मुक्ति कौ लक्षण कहा है।

गदा०-दु:ख कौ आत्यन्तिक नाश ही मुक्ति कौ मुख्य लक्षण है।

निमाई-केवल दु:खनाश नहीं वाके संग ही परमसुख की प्राप्ति हू मुक्ति कौ मुख्य लक्षण है।

गदा०-दु:खनाश हैवे ते सुख-प्राप्ति तौ अवश्यम्भावी है ही।

निमाई-नहीं है। दु:ख मिटते ही सुखहू मिल जाय है-ऐसी बात कदापि नहीं है।

गदा०-क्यों नहीं है? ज्वर-नाश होते ही स्वास्थ्य-लाभ होय है कै नहीं?

निमाई-तत्काल, एक काल में नहीं होय है। कछु समय तक दुर्बलता रहै है अतएव पथ्य करनौ परै है, सावधान रहनौ परै है। नेकहू असावधानी सों, कुपथ्य सों पुनः वही रोग और वही दुःख आय परै है।

गदा०-तौ मुक्ति के पक्ष में पथ्य कहा है?

निमाई-(हँसते हुए) तुम तो वैष्णव भागवत हौ और मोकूँ अवैष्णव अभक्त मानौ हौ यासौं मैं तो नास्तिक अभक्त की सी ही बात कहूँगो। सुनौगे?

गदा०-ना ना निमाई पंडित! मोकूँ जान देऔ! क्षमा करौ।

निमाई-अच्छौ तौ भगतजी! भागवत-सिद्धान्त ही सुनौ। मुक्ति के पक्ष में पथ्य है भगवान् कौ आश्रय-उनकी भक्ति। भक्ति बिना ब्रह्मज्ञानी हूँ-'पाय सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरि।' 'आरुह्य कृच्छेण परं पदं, ततः पतन्त्यधोऽनादृत युष्मदङ्घ्रयः'।

गदा०-धन्य है! आपने भागवत-सिद्धान्त सुनाय मोकूँ कृतार्थ कर दियौ। अब तौ जान दैऔ! देर है रही है।

निमाई-(हँसते हुए) अजी आप सों बतरायवे में बड़ौ सुख होय है। और अभी तौ मूल प्रसंग ही पूरौ नहीं भयौ।

गदा०-और न कभू पूरो ही होयगौ! यासों जान दैऔ।

निमाई-अच्छौ इतनौ और बताय जाऔ कि दुःख-नाश कौ साधन कहा है?

गदा०-प्रकृति-पुरुष विवेक ही प्रधान साधन है।

निमाई-विवेक कौ साधन कहा है?

गदा०-सदसद् विचार। सत् कहा असत् कहा याके विचार सों विवेक उत्पन्न होय है।

निमाई-और विचार कौ साधन कहा है?

गदा०-बुद्धि है-बुद्धि सों विचार होय है।

निमाई-यह बुद्धि-तत्त्व कहा है?

गदा०-यह प्रकृति-विकृति है।

निमाई-प्रकृति चेतन पदार्थ है अथवा जड़?

गदा०-जड़ है।

निमाई-तौ चेतन पदार्थ कहा है?

गदा०-पुरुष-जो प्रकृति ते परै है।

निमाई-तो अहो आश्चर्य! तुम जड़ सों जड़ कूँ जीतनौ चाहौ हौ। माया सों माया कूँ बाध करनौ चाहौ हो अन्धकार सों अन्धकार कौ विनाश करनौ चाहौ हौ। यह तुम्हारौ अहंकार है-अज्ञान है। जड़ बुद्धि सों विमल विवेक नहीं होय है-नहीं हैं सकै है। बुद्धि ते परे जो परम पुरुष है 'यो बुद्धेः परतस्तु सः' वाकी कृपा सों ही बुद्धि विमल होय और तब ही यह गुणमयी माया जीती जाय सकै है-'मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते' यहाँ 'एव' कार पद के द्वारा कर्म, ज्ञान, योग आदि समस्त साधनन कौ निराकरण एवं भगवत्कृपा कौ ही प्रतिपादन है।

पद

हरि की कृपा सद्बुद्धि आवै, हरि की कृपा विवेकहू लावै।
हरि की कृपा ज्ञान उपजावै, हरि की कृपा माया बिनसावै।।
हरि की कृपा मुक्ति पद पावै, हरि की कृपा प्रेमरस प्यावै।
हरि की कृपा अन्न बहु खावै, हरि बिन भुस कूटत मरि जावै।।

समाज-

तुलसीदास हरि गुरु करुणा बिन, विमल विवेक न होई।
बिन विवेक संसार घोर निधि, पार न पावै कोई।।

(प्रवेश भक्त मुकुन्द। गदाधर का प्रस्थान)

मुकुन्द-वाह वाह वाह!

श्लोक

परोपदेश बेलायां सर्वे व्यास समा द्विजा।
तद्नुष्ठान बेलायां मुनयोऽपि न पण्डिताः।।

परोपदेश के समय तो सबही वेदव्यास बन जायँ है परन्तु आचरण के समय बड़े-बड़े ऋषि मुनि हू मूढ़ के समान व्यवहार करैं हैं। तुमहू ऐसेइ हौ निमाई पंडित-बात भक्ति की और काम कुछ नहीं!

निमाई-अहा! आप हैं भक्त मुकुन्द पंडित जी! नमस्कार! नमस्कार!

मुकुन्द-नमस्कार! श्रीकृष्ण तुमकूँ अपनी भक्ति प्रदान करैं। तुम्हारौ जीवन भक्त कौ सौ बनैं। अपनी भक्ति की इन बड़ी-बड़ी बातन कूँ कछु तौ साँची करकै दिखाऔ।

पद

करिहौ सत्य कब अपनी बानी।
भक्ति भक्ति कहि कहिकै बखानौ, अंग न कभू दरसानी।।

निमाई पण्डित! तुम्हारी बातन में ही भक्ति है, तुम्हारी देह में तौ भक्ति के एकहू लक्षण नहीं है। भक्त तो बड़ौ दीन होय है। तुम तौ महा अभिमानी हौ। भक्त तौ काहू सों वाद–विवाद नहीं करै है। तुम तौ सबन सों लड़ते भिड़ते डोलौ हो। या पंडित के कान पकरे, वा भक्त की नाक पकरी। काहू की हाँसी करी, काहू कूँ चिढ़ाये–ऐसी–ऐसी चंचलताई में ही तुम्हारौ दिन बीतै है। याहि कारण सों–

पूर्वपद

भक्तन कूँ तुम ऐसे लागौ, जैसे हाऊ लरिकानी।
अगल बगल बचि बचिवे जावैं,
(तुम) मारौ वचन कमानी।।
जाति, रूप, गुण, विद्या सुन्दर, भक्ति बिना न सुहानी।
विधना भक्ति प्रेम जो देवै (तो) पीऊँ धोय पग पानी।।

निमाई–(व्यंगपूर्वक) धन्यवाद! धर्मोपदेशक जी महाराज। बड़ी कृपा करी जो बिना चाहै ही मोकूँ उपदेश दियौ! भगत जी! आप जैसो भक्त बनवे की तौ मेरी हू बड़ी इच्छा है। परन्तु करूँ कहा। एक तो मोकूँ कोई सद्गुरु नहीं मिल रह्यौ है। दूसरे, या समय मैं स्वयं गुरु बन्यौ भयौ हूँ अतएव–

(बंगला)

कतो दिन पढ़ाइया मोर चित्ते आछे।
चलिमु बुझिया भालो वैष्णवेर काछे।।

अबै कछु दिना मोकूँ पढ़ाय लैन देऔ। फिर मैं कोई आप जैसौ उत्तम वैष्णव बनूँगो। यासों मोकूँ वैष्णव के लक्षण तो बताय देऔ कि जासों मोकूँ गुरु ढूँढ़वे में सहायता मिलै।

मुकुन्द–वैष्णव संस्कार चतुष्टय जाके भयौ होय है वह वैष्णव है।

निमाई–वे संस्कार चतुष्टय कौन–कौन से हैं?

मुकुन्द–प्रथम है वैष्णवी दीक्षा अर्थात् वैष्णव गुरु ते विष्णु मन्त्र की दीक्षा।

निमाई–और दूसरौ?

मुकुन्द-दूसरौ ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक-छाप। तीसरी तुलसी कण्ठी-माला-धारण। और चौथौ वैष्णव नाम। ये ही वैष्णव के चार संस्कार होय हैं।

निमाई-तो वैष्णवता केवल बाह्य संस्कारगत वस्तु है? वह कहा अन्तर्भाव गत वस्तु नहीं है सकै है? ऊर्ध्वपुण्ड्र है, तुलसी कंठीमाला है तब तौ वैष्णव है और नहीं है तौ वैष्णव नहीं। वाह! बड़ी सस्ती वैष्णवता है।

मुकुन्द-उतर परै न अपने चंचल स्वभाव पै-वाद-विवाद पै। निमाई पण्डित! तुम्हारे सिर पै तो सदा शास्त्रार्थ कौ भूत चढ़्यौ रहै है। हमारे पास इतनौ समय कहाँ जो बैठे ठाले तुम्हारे भूत सों लर्‌यौ करैं। हाँ! इतनौ अवश्य ही कहे दऊँ कि भाव के लिए हू संस्कार की परम आवश्यकता है। संस्कार भाव कूँ जागृत राखे है और पुष्ट करै है। या मर्म कूँ काहू दिना स्वयं समझ जाऔगे।

निमाई-(व्यंग पूर्वक) धन्यवाद भगतजी! एक दिन मैं हू अवश्य ही वैष्णव बनूँगो और ऐसौ वैष्णव बनूँगो, ऐसो वैष्णव बनूँगो कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश हू मेरे दर्शन कूँ आयौ करैंगे।

सवैया

पंडित मूरख ठानत मोहि कूँ,
आप कहावत भक्त औ ज्ञानी।
देत हैं सीख हरि भजवे कूँ,
नहि जानत मेरौ रूप अज्ञानी।।
रहौ जु रहौ नहीं देर अहो,
बनिहौं अस वैष्णव भक्त अमानी।
भजिहौ मोहिकूँ पूजिहौ मोहिकूँ,
गाईहौं मोहिंकूँ ईश्वर ज्ञानी।।

मुकुन्द-भगवान् तौ पीछे बनौगे निमाई! पहले भक्त तो बनौ, भक्ति करनौ तौ सीखौ।

निमाई- **चौपाई**

करौं क्यों भक्ति जु सोऽहं सोऽहम्।
तुम नहिं जानत कोऽहं कोऽहम्।।
मैं भक्ति क्यूँ करूँ, सोऽहं सोऽहम्।

मुकुन्द-सोऽहं कौन?

निमाई-सोऽहम्-वही मैं, मैं वही।

मुकुन्द-वही कौन?

निमाई-वही विश्वम्भर.............मुञि सर्व लोकेर ईश्वर।

मुञि विश्व धरौं, मोर नाम विश्वम्भर।।

सोऽहम्-विश्वम्भर मैं।

मुकुन्द-(कानों पर हाथ रखते हुए) महापराध! भगवदपराध! भक्त्यपराध।

निमाई-(चिढ़ाते हुए) सोऽहं भगतजी, सोऽहम्।

मुकुन्द-श्रीविष्णु! श्रीविष्णु! पूरे उद्दण्ड हौ। अत्यन्त धृष्ट हौ। श्रीविष्णु! श्रीविष्णु! (चल देते हैं)

निमाई-जाऔ, जाऔ, भाग जाऔ! कब तक भागौगे! एक दिन आऔगे और फिर आऔगे मेरे समीप। (दूसरी तरफ से निकल जाते हैं)।

मुकुन्द-(चलते-चलते) हे भगवन्! या निमाई पण्डित के ऊपर कृपा करौ। याके रूप गुण, विद्या, जीवन-जन्म कूँ सफल करौ-

पद

रूप दियौ विद्या दई तुमने, भक्तिहू याकूँ मिल जाती।
प्रेम सखा बन जातौ हमरौ, आशा बेलिहु खिल जाती।।
जाते काँप कुतर्की पंडित, चाल पाखंड की किल जाती।
भक्तिकी भेरी बज उठती, तब छाती कलिकी हिल जाती।।

(गाते गाते निर्गमन)

इति विद्या विलास-सम्पूर्ण।

आवश्य निवेदन

अब इससे आगे का गौर-चरित है उनका प्रथम विवाह-श्रीलक्ष्मी प्रियाजी के साथ जो नवद्वीप के ही पंडित बल्लभाचार्य की कन्या थीं। विवाह के प्राय: एक वर्ष पश्चात् अध्यापक प्रभु गौरसुन्दर अपने छात्रों के साथ पूर्व बंगाल की यात्रा को गये परन्तु जब वहाँ से लौटकर घर आये तो श्रीलक्ष्मीप्रिया जी अपने गौर नारायण के असह्य विरह में अन्तर्धान हो चुकी थीं। इसके दो वर्ष पश्चात् आपका दूसरा विवाह श्रीविष्णुप्रिया जी के साथ

हुआ। आगे की लीलाओं में (गया गमनागमन, संन्यास-ग्रहणादि में) श्रीविष्णुप्रिया जी की विशेष प्रयोजनीयता है। उनके बिना वे लीलाएँ सम्पन्न ही नहीं हो सकती। अतएव उनके विवाह को ही हमने अपने लीलाभिनय में स्थान दिया।

पूर्व बंगाल की यात्रा को भी हम नहीं ले सके कारण उसमें श्रीलक्ष्मीप्रिया जी का स्वधामगमन प्रसंग है। उनके संयोग के प्रदर्शन बिना वियोग किसका?

अतएव प्रथम विवाह तथा पूर्व बंगाल यात्रा की जानकारी के लिए पाठकों से चरित-ग्रन्थ को पढ़ने का अनुरोध करते हुए हम अपनी लीला की ओर अग्रसर होते हैं।

(लेखक)

❧❖❧

यौवन लहरी **प्रथम कणामृत**

दिग्विजयी-उद्धार

(अष्टादश वर्षीय लीला)

श्लोक

जीयात् कैशोर चैतन्यो मूर्तिमत्या गृहाश्रमात्।
लक्ष्म्याऽर्चितोऽथ वागदेव्या दिशांजयि जयच्छलात्।।

बंगला

जय जय गौरचन्द्र महामहेश्वर।
जय नित्यानन्द प्रिय नित्य कलेवर।।
जय जय जगन्नाथ पुत्र विप्रराज।
जय जय तुव सब भगत समाज।।

चौपाई

जय जय विद्या वधुवर गौर। जय जय पंडितराज सिरमौर।।
जय जय लक्ष्मीप्रिया प्राननाथ। गृहाश्रम किये धन्य सनाथ।।
जय जय तपनमिश्र हितकारी। मंत्रदाता काशी दातारी।।

जय जय नव नव लीला प्रचारी।
जय जय भुवि दिवि पावनकारी।।

दोहा

काश्मीरी पंडित प्रवर, दिग्विजयी परचंद।
भक्तिफल दियौ गौरहरि, करि विद्या मदखंड।।

(प्रवेश दिग्विजयी पण्डित शिष्य मण्डली सहित)

शिष्य 1-जय जय दिग्विजयी पण्डित प्रवर की जय।

शिष्य 2-जय जय सरस्वती वरपुत्र की जय।

शिष्य 3-सुनो सुनो नदियावासियों! तुम्हारे नगर के लिए यह परम सौभाग्य तथा गर्व का विषय है कि अखिल भूमण्डल मण्डन, समस्त प्रतिवादी कुल विखण्डन, अज्ञान तमः राशि-विभंजन, विद्यामार्तण्ड-प्रचण्ड-ब्रह्मकुलमंडन, भगवती वीणापाणिवरनन्दन, उद्भटभट्ट घट्टविघटनकारी, दिग्दिगन्तविजय वैजयन्ती-उड्डीयनकारी, कविकुल कलरव कुण्ठितकारी, प्रकट भूस्वर्ग काश्मीर देशालंकार, अमित-गुणरत्न भंडार, श्री श्री श्रीअनन्त श्रीविभूषित सुप्रसिद्ध दिग्विजयी पंडितराज श्रीमहाराजपाद ने तुम्हारे इस नदिया नगर में पदार्पण किया है।

आप श्री ने काश्मीर, पंचनद, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, केरल, कर्णाटक, द्रविड़, मध्यप्रदेश, उत्कल, काशी, कांची, उज्जैन, प्रयाग, गया, हरिद्वार, हिमाचल, कन्याकुमारी पर्यन्त समस्त देशों में परिभ्रमण करके, तथाकथित पण्डित मण्डली को शास्त्रार्थ में परास्त करके अपनी विजय-वैजयन्ती अखिल गगन मण्डल में फहरायी है। यह एक नवद्वीप ही अवशिष्ट रहा है। अतएव सुनो नवद्वीपस्थ विद्वज्जनमण्डली! यदि किसी में शास्त्रार्थ करने का साहस हो तो सम्मुख आवे। अन्यथा विजय पत्र लिख देवे। यदि शास्त्रार्थ में हमारी विजय हुई तो तुमको हमें यथोचित पुरस्कार प्रदान करना पड़ेगा और यदि हमारी पराजय हुई तो ये हमारे अश्व-गज, उष्ट्र, वाहन, ग्रन्थादि समस्त सम्पत्ति विजयी पुरुष को प्राप्त होगी।

जय दिग्विजयी पंडित प्रवर की जय
जय भारतीवर पुत्र प्रवर की जय

(प्रस्थान)

(दृश्य-पाठशाला में पंडित निमाई और छात्रवृन्द)

समाज- **चौपाई**

मुकुन्द संजय गृह चण्डी मण्डप।
चटशाला तहाँ गौर पढ़ावत।।
वय अठारह तन कंचन लाजै।
यज्ञसूत्र पीताम्बर राजै।।

कमल नयन सुबाहु विशाला। अलक सुवासित तिलक सुभाला
मुखभूषन ताम्बूल सुहावै। चितवन मुसकन चित्त चुरावै।।
चहुँदिशि छात्रमंडली सोहै। मध्य निमाई चाँद मन मोहै।।
अद्‌भुत व्याख्या नित्य बखानैं। अचरज पंडितजन सब मानैं।।
जो बिन तिलक भाल लखि पावैं। सदाचार विधि धर्म सिखावैं।

निमाई-(एक छात्र का मस्तक तिलक हीन देख) क्यों सतीश! तुम्हारे मस्तक पै तिलक क्यों नहीं शोभा दै रह्यौ है?

सतीश-(चुपचाप नतशीश खड़ा रहता है)।

निमाई-हाँ समझ गयौ! आज तुम संध्या-वन्दन किये बिना ही पढ़वै चलै आये हौ। ब्राह्मण कुमार है कै यह भूल तुम्हारी अनुचित है। तिलक बिना मस्तक मरघट समान है।

बंगला

तिलक ना थाके यदि विप्रेर कपाले।
तबे तारे श्मशान सदृश वेद बोले।।

चौपाई

तिलक नहीं हरि मन्दिर जानौ। तिलक बिना तन मरघट जानौ
तिलक न मुख सिंगारहि मानौ। भक्ति भक्त भूषन यह जानौ।।

यह तिलक केवल मुख-शोभा ही नहीं है, यह शुभ होय है, मंगलकारी होय है। या कारण सों समस्त धार्मिक कार्य, नित्य-नैमित्तक दोनों, तिलक सों ही आरम्भ किये जाय हैं-

चौपाई

तिलक यज्ञ में, तिलक ब्याह में,
तिलक राज-अभिषेक काज में।
तिलक गमन में, तिलक मान में,
तिलक मूल है सकल काम में।।

याहि कारण सों, धर्मशास्त्र की आज्ञा है कि यदि काहू ब्राह्मण के मस्तक पै तिलक न होवैं-

विप्र भाल तिलक नहिं सोहै।
ताकूँ राजा दण्ड यह देवै।।
गधा चढ़ाय पुनि नगर घुमावै।
देश निकास दै दूर पठावै।।

'गर्दभन्तु समारोप्य राजा राष्ट्रान् प्रवासयेत्' अतएव जाऔ-

जाय तिलक करि नेम निभाऔ। पुनि विद्या पढ़न हित आऔ।।

सतीश-जैसी आज्ञा गुरुदेव! आपने कृपा करकै ज्ञानांजन शलाका के द्वारा मेरी आँख खोल दीनी! अब ऐसौ प्रमाद पुनः कदापि नहीं होयगौ। आपकी जय हो!

(प्रणाम कर चला जाता है)

(प्रवेश दो पंडित-भट्टाचार्य व न्यायाचार्य)

निमाई-(उठकर) नमस्कार भट्टाचार्य मो'शाय! नमस्कार न्यायाचार्य मो'शाय! आस्ते आज्ञा होक्।

दोनों पं०-नमस्कार निमाई पंडित! नमस्कार।

भट्टा०-आपकौ अध्यापन कार्य तौ सुचारु चल रह्यौ है न?

निमाई-हाँ भट्टाचार्यजी! आशा हू ते अधिक।

न्याया०-क्यों नहीं! आप इस प्रकार सों योग्य हौ! गौड़ांचल के उदीयमान सूर्य हौ। हमारी नदिया के चाँद हौ।

भट्टा०-हमारे पंडित समाज के गौरव हौ परन्तु....किन्तु....या समय. ...

निमाई-संकोच काहे कौ भट्टाचार्यजी! स्पष्ट कह डारौ न।

भट्टा०-या समय हमारे ऊपर एक महान् संकट आय पर्यौ है। वाहि कूँ निवेदन करवे हम यहाँ आये हैं।

निमाई-आप निःसंकोच भाव सों मेरे योग्य आज्ञा करैं।

भट्टा०-हमारे नवद्वीप में दिग्विजयी काश्मीरी पंडित के आगमन की वार्त्ता तौ आप श्रवण कर ही चुके होंगे।

निमाई–(स्मरण पूर्वक) हाँ हाँ! काहू ने सुनायो तो हौ कि कोई एक बड़ौ भारी विद्वान शास्त्रार्थ करवे के ताँईं यहाँ आयौ है। तौ फिर कहा भयौ?

न्याया०–यही कि हमारी क्षुधा–निद्रा विदा है गई है पंडितन ने अपने टोल बन्द कर दिये हैं गंगा की ओर जानौ हू छोड़ दियौ है, हाट–बाजार के काज कूँ हू नहीं निकसै हैं कि कहूँ वा दिग्विजयी सों सहसा भेंट न है जाय। आज तीन दिना सों वह गरज रह्यौ है और हमारी विद्वन्मंडली मुख छिपाय कै बैठी है। नवद्वीप की तौ नाक ही कटी जा रही है।

निमाई–क्यों, कहा कोई पंडित अग्रसर नहीं है रह्यौ है। यहाँ तौ एक ते एक धुरन्धर विद्वान हैं।

भट्टा०–(दु:खपूर्वक) कोई अग्रसर नहीं है रह्यौ है। पंडित रघुनाथ, रघुनन्दन, कमलाकान्त, कृष्णानन्द जैसे महारथी हू साहस नहीं कर पाय रहे हैं। अब तौ हमारी लाज, नवद्वीप की लाज, गौड़ मंडल की लाज सब आपही के हाथ में है, पण्डित निमाई।

निमाई–परन्तु वाकूँ तो सरस्वती–सिद्ध बतावैं है।

न्याया०–तो आपहू कोई कम थोरे–ई हैं। आपमें हू कोई गुप्त सिद्धि अवश्य ही है। यह पाठशाला ही याकौ प्रत्यक्ष प्रमाण है। हमारे नवद्वीप में दस सहस्र हू ते अधिक अध्यापक पंडितन की पाठशाला हैं परन्तु इन सबन में अधिक ख्याति आपकी या नवीन पाठशाला ही की है। 17–18 वर्ष की अल्पावस्था में ही इतनी विद्या–बुद्धि अवश्य ही कोई पूर्वजन्म की सिद्धि ही कौ फल है।

भट्टा०–अर्थात् यह दिग्विजयी तौ या जन्म में साधन करके सिद्ध भयौ है और आप तौ जन्म–सिद्ध हौ, स्वत: सिद्ध हौ!

निमाई–(संकोच पूर्वक) अजी! आप एक चंचल बालक कूँ काहे कूँ इतनौ बढ़ाय–चढ़ाय रहै हौ। भलौ मोमें इतनी विद्या–बुद्धि कहा जो एक सरस्वती वर पुत्र के सम्मुख मुख खोल सकूँ।

भट्टा०–(दु:खपूर्वक) तौ कहा हमारे बंग–देश की काशी या नवद्वीप की प्राचीन प्रतिष्ठा धूलिसात् है जायगी? कहा हमारी जन्मभूमि विद्यावीर विहीन है गई? रत्नप्रसू जननी कहा रत्नशून्या है गई? हाय! अब माता की मर्यादा कौन राखैगौ?

निमाई–भगवान् ही राखेंगे और कौन राख सकै हैं–

दोहा

राई कूँ पर्वत करै, पर्वत कूँ करैं राई।
कीरी हू सागर तरै, कुंजर डूबि नसाई।।

पद-लावनी

ए हरि को ऐसोई सब खेल, मोल छिन में, छिन में अनमोल।
हरि के हाथ में जीत औ हार, वे ही इक करन करावनहार।।1

दोहा

अपने बल सौं जो बढ़ै, घटत न लागै बार।
रहै आसरे राम के, होय न बाँको बार।।
ए हरि कौ एक ही प्यारौ खेल, मेल गरीब सों गुमानिन ठेल।
करैं हरि गुमान अहार, वे ही इक करन करावनहार।।
हरि के हाथ में०।।

भगवान् गर्वाहारी और दीन हितकारी हैं। गर्व को आहार करनौ और गरीबन सों प्यार करनौ-ये ही द्वै उनके काम हैं। अतएव वे या दिग्विजयी कौ गर्व हू चूर्ण करेंगे ही।

भट्टा०-परन्तु न जाने कब करैंगे, कैसे करैंगे, कौन के द्वारा करैंगे। या चिन्ता के मारे हम तो तीन दिन में सूख कै आधे है गये और यदि नवद्वीप की लाज चली गई तब तो गंगा माता की गोद में ही चिर-शान्ति मिलैगी।

निमाई-इतनी चिन्ता काहे कूँ करौ भट्टाचार्य जी! भगवान् कौ भरोसौ राखौ!

न्याया०-कैसे राखैं? या विपत्ति सों हमारी रक्षा करैं, या अभिमानी कौ गर्व-गंजन करैं, कछु चमत्कार दिखावैं, तब तो हमहू मानैं कि भगवान् है और रक्षा करैं हैं। ऐसे कैसे मान लैवैं?

निमाई-(हँसते हुए) तौ भगवान् कूँ ही ऐसी कहा गरज परी है जो नैयायिक तर्काचार्यों के आगे अपनी परीक्षा दैवैं अथवा उन पर कृपा करैं। प्रथम विश्वास तब कृपा! प्रथम बीज तब वृक्ष और तब फल। आप विश्वास तो राखौइ नहीं हौ और चाहौ हौ कृपा, रक्षा, चमत्कार! बीज तौ बोओगे नहीं और खानौ चाहौ हौ बढ़िया फल।

न्याया०-(झुँझलाकर) वाह वाह वाह! हम तौ आपकूँ अपनौ दुःख सुनायवे आये और आप हम सों ही लगै लड़वे। वा दिग्विजयी सों जाकै लड़ौ तब तौ समझैं।

निमाई-मोकूँ कहा गरज परी है जो मैं वासों लड़वे जाऊँ।

भट्टा०-न्यायाचार्य जी! इनकौ तौ ऐसौ ही चंचल स्वभाव है। इनसों बात बढ़ामनौ उचित नहीं है। हम अपनौ निवेदन कर चले। ये अवश्य ही कोई उपाय करैंगे। निमाई पण्डित! हम तौ आपके बल पै निश्चिंत है चले। अब हमकूँ आज्ञा होवै! नमस्कार।

न्याया०-नमस्कार!

निमाई-नमस्कार! नमस्कार!

(दोनों पंडितों का प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

(प्रवेश दिग्विजयी पंडित शिष्य मंडली सहित)

दिग्वि०-आज सात दिना सों मैं नवद्वीप की गली-गली में, टोल-टोल में, गृह-गृह में, जाय-जाय कै पंडितन कूँ ढूँढ़ रह्यौ हूँ परन्तु सब मेरे भय सों छिप गये हैं। पाठशाला सब बन्द हैं। गंगा-पुलिन पंडित-दल सों सूनौ है। मैंने तो सुन्यौ हो कि संध्या समय गंगा-घाट पै पण्डितन को मेला जुर जाय है। असंख्य छात्रन के सहित पंडितजन शास्त्रालाप करैं हैं परन्तु सब मिथ्या! सात दिवस की अवधि में एकहू तो पंडितमन्यमानी नहीं दीख्यौ।

शष्यि 1-सिंह-शार्दूल के आगमन पै कहा कहूँ श्रृगालन कौ-सियारियान कौ-झुण्ड दीखै है-मारे डरकै सब अपने-अपने भिटे में दुबक जाय हैं।

दिग्वि०-(हास्यपूर्वक) हा हा हा! बिना शास्त्रार्थ ही विजयश्री।

शिष्य 2-यामें सन्देह ही कहा! अब तौ भारतवर्ष के उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम में, कोई स्थान अपराजित नहीं रह्यौ। श्रीगुरुदेव कौ अखण्ड साम्राज्य स्थापित है गयौ।

दिग्वि०-यह आशातीत विजय है! वीणापाणी भगवती भारतीश्वरी ही की असीम अनुकम्पा कौ फल है।

शिष्य 1-तौ गुरुदेव! अब विजय-प्रस्थान को शंख कल प्रातः ही बजैगो न?

दिग्वि०-अवश्य! अब यहाँ और अधिक प्रतीक्षा निष्प्रयोजन है। चलौ! पुण्यसलिला पतितपावनी जननी जाह्नवी कूँ प्रणाम कर आवैं।

शिष्य 2-पश्चात् प्रातःकाल प्रस्थान-डंका बजाते, झंडा फहराते, विजय-घोष करते-दहाड़ते भए-

जय जय दिग्विजयी पंडित की जय।
जय जय सरस्वती वर पुत्र की जय।
जय जय काश्मीर विभूति विद्यामूर्त्ति की जय।

(सब का प्रस्थान)

समाज-

संध्या धन्या सुहावनी बेला। गंगा तीर नर नारिन मेला।।
सहस सहस जन आवैं जावैं। पूजैं गंगा स्तुति गावैं।।
बाल वृद्ध युवा नर नारी। श्रद्धा भाव गंगा प्रति भारी।।
धरि धरि काँख तरे गागरिया। आवत जात 'नदे' नागरिया
अपने अपने रस सब भोरा। गमने तहँ छात्रन सह गौरा।।

(प्रवेश पंडित निमाई-छात्रमंडली सहित)

सलिल समीप विश्वम्भर आये। ठाड़े निरखत गौर सुहाये।।
इत गौरा उत गंग पावनी। शोभा दोउ दोऊन मन भावनी।।
प्रेमसिन्धु आनन्द हिलोरैं। उत गंगा इत गौर किलोलैं।।
अति विभोर बोल हरिबोलैं।
सुनि सुनि सज्जन हरिहरि बोलैं।।

निमाई-हरि बोल

जनता-हरि बोल।

पुनि प्रभु पुलिन भूमि विराजै। प्रगटत महिमा गंगा आजै।।

निामई-प्रिय शिष्यो! भागीरथी गंगा की उत्पत्ति कहाँ ते भई, बताऔ!

छात्र 1-हिमालय में गंगोत्री ते गंगा प्रगटी हैं।

निमाई-गंगोत्री में कहाँ ते आई?

छात्र 2-शंकर बाबा के जटाजूट ते! तबही जटाशंकरी कहाई।

निमाई-उनकी जटा में कहाँ ते आई?

छात्र 2-ब्रह्मा के कमण्डलु ते।

निमाई-कमंडलु में कहाँ ते आई?

छात्र 3-वामन भगवान् के अंगुष्ठ कूँ धोय करके भर लियौ हौ। ब्रह्मा ने अपने कमंडलु में!

निमाई–परन्तु अंगुष्ठ कूँ धोयवे के ताँईं जल कहाँ ते लाये ब्रह्माजी ?

छात्र 3–कहा पतौ। भर लाये होंगे कहूँ ते।

निमाई–कहाँ ते लाये मैं बताऊँ हूँ। सुनौ ध्यान दैकै मैं गंगादेवी की रहस्य जन्मकथा सुनाऊँ हूँ।

(आगे पदानुसार पृष्ठभूमि में अनुकरण चलेगा)

निमाई– **मालकोष–केहरवा**

एक समय शिव शंकर भोला गिरि कैलास में गाय रहे।
हरेकृष्ण गोविन्द गोपाल हरे राम रमापति ध्याय रहे।।

दृश्य नं० 1–शिव–हरे कृष्ण गोविन्द गोपाल हरे राम।।
(संकीर्तन)

निमाई–

बीन बजावत हरि गुन गावत, नारद मुनि तहँ आय रहे।
अति हरषाय मिलाय साज सुर, करत संग सुख पाय रहे।।

दृश्य 2–(नारद का आना और शिव के संकीर्तन में सम्मिलित हो जाना। दोनों हरे कृष्ण गोविन्द....)

निमाई–

सुनत गणेश गह्यो जु मृदंग, लाग्यौ बजावन ताल पै ताल है।

दृश्य 3–(गणेश आकर मृदंग बजाने लगते हैं)

(तीनों का संकीर्तन–वादन–नृत्य)

निमाई–

भई धुनि घोर, लहर उठी जोर,
चली हरि ओर, भेदि अंड जोल है।

दृश्य 4–

बैठे गोविन्द गोपाल गोलोक में,
सुनि धुनि प्रेम मगन निहाल है।

(श्रीकृष्ण संकीर्तन सुनते उठकर दौड़ पड़ते हैं)

निमाई–

धाय के बेगि कैलासहिं आये, तीन जहाँ रसलीन ह्वै गावैं।

(श्रीकृष्ण का शिव–नारद–गणेश के पास आना)

श्रीकृष्ण-

'अब विश्राम करौ गुन धाम,
लेऔ कही मान', हरि बैन सुनावैं।
'एक तो नाद कला यह निराली, नीरस पाहन सरस बनावै
पुनि तुम प्रेम-रसायन मेल्यौ, मेरौ तन मन गरि गरि जावै'
अतएव हे शिवजी! हे नारदजी! अब संकीर्तन कूँ विश्राम देऔ।

निमाई-

सुनि हरि बैन, हँसत त्रिनैन,
कहत 'रस स्वाद छुड़ाय न छूटै'।

शिव-

हम कहा गावैं, तुमहि गवाऔ,
तुमहि लुटाऔ, तब हम लूटैं'।।

(तीनों पुनः संकीर्तन करने लगते। श्रीकृष्ण तन्मय खड़े सुनते रहते हैं)

निमाई-

पुनि गुन गावैं, हिय हुलसावैं, प्रेम बढ़ावैं, तार न टूटै।
तीन तिकट के प्रेम विकट में, बँधे मुरारि बंध न छूटै।।
(तीनों-हरे कृष्ण गोविन्द....। श्रीकृष्ण खड़े-खड़े झूमते रहते हैं)।

निमाई-

यूँ ही भोले सहज मतवारे, तापै प्याला नाम उड़ावैं।
तापै नारद बीना बजावैं, लहर लहर रस लहर चढ़ावैं।।
तापै वादक पुनि गणनायक, परन की रेल पै रेल चलावैं।
तीन तिकट के 'प्रेम' विकट में, नाथ त्रिलोकी गरि गरि जावैं

(श्रीकृष्ण निश्चल स्तम्भित खड़े रहते हैं)

निमाई- किंचित् समय पश्चात्-

मुंदे नयन महेश के उघरे, देखत प्रभु तन बहि बहि जावै।
अंग अंग रसधार दुधारा, चौधारा शत धार बहावैं।।
अति भय पायौ, भाव नसायौ, अब नहिं गावैं कोई बजावैं।
'नीर' और 'नर' रूप ब्रह्म को लखि लखि,
प्रेम सों जय जयकार मचावैं।।

शिव-देखौ देखौ नारद जी! देखौ गणेश! भगवान् श्रीकृष्ण के रोम-रोम सों रस की धारा, शत सहस्र धारा प्रवाहित है रही है। समस्त श्रीविग्रह जलमय है गयौ है। आश्चर्य! महाश्चर्य! हमारे नाम संकीर्तन कूँ श्रवण करकै ये प्रेम के ताप सों द्रवीभूत हैकै, पिघल कै, गर-गरकै बहे जा रहे हैं।

जय हो नराकार ब्रह्म की जय हो
जय हो नीराकार ब्रह्म की जय हो
जय हो हरिनाम प्रेम संकीर्तन की जय हो।

निमाई-इतने में कहा भयौ कि ब्रह्माजी दौड़े-दौड़े आय पहुँचे।

(प्रवेश दौड़ते हुए ब्रह्मा कमंडलु लिये)

निमाई-

ब्रह्म चतुर्मुख आय धाय करमंडलु माँझ नीर भराये।
सोइ जल लै वामन पग धोये, चरणोदक तब नाम कहाये।।
सोइ जल लै शिव शीशपै धार्यौ, लैकै भगीरथ पितर तराये
ज्ञानी जलकूँ ब्रह्म कहै पर प्रेमी ब्रह्मकूँ जल ही बनाये।।

ऐसी है यह गंगादेवी-जल के रूप में यह स्वयं ब्रह्म ही बह रह्यौ है। याही कारण सों गंगाजल कूँ ब्रह्म-वारि, ब्रह्मद्रव हू कहैं हैं। और याहि कारण याके स्पर्श मात्र सों जीव ब्रह्मसायुज्य मुक्ति कूँ प्राप्त है जाय है।

छात्र मंडली-जय ब्रह्ममयी गंगा महारानी की जय।
जय ब्रह्मधारा धारा भगवती की जय।

निमाई-हरि बोल।

(प्रवेश दिग्विजयी पंडित शिष्य मण्डली सहित)

छात्र 1-(महाप्रभु से) गुरुदेव! यह सामने सों वह दिग्विजयी पण्डित आय रह्यौ है।

निमाई-(उठकर दिग्विजयी प्रति) एहि एहि साधो! निवसात्र लोके, भवान् वर्णितो दिग्विजयीति मन्ये। अहोभाग्य! पधारौ पधारौ! आपही दिग्विजयी पंडितराज हैं।

दिग्वि०-बाढम्! दर्शनेन प्रीतोऽस्मि। स्वपरिचय प्रदानेन कौतुहलं निवारय।

छात्र 2-अस्मिन् नवद्वीपे सुविख्यात पण्डित शिरोमणि स्वनामधन्योऽयं विश्वम्भरो निमाई पण्डित प्रवरः।

दिग्वि०–अहो! आप ही निमाई पण्डित हैं।

निमाई–परन्तु यह कथन कछु सत्य कछु असत्य है।

दिग्वि०–कथं कथम्? कैसे–कैसे?

निमाई–मेरौ नाम निमाई है–यह तौ सत्य है परन्तु 'पण्डित' कथन असत्य है। मैं पण्डित नहीं हूँ।

दिग्वि०–भद्रं भद्रं, विनयीनामवतंसोऽसि। जैसे आप की पण्डिताई की ख्याति असाधारण है, वैसे ही आपकौ रूप–शीलहू असामान्य दृष्टिगोचर होय है।

छात्र 1–(दूसरे छात्र प्रति धीरे से) आधी जीत तौ है गई गुरुजी की!

छात्र 2–और आधी अबै भई जाय है। बड़ौ आनन्द होयगौ।

दिग्वि०–तौ निमाई पण्डित! आप अध्यापन कार्य करौ हौ।

निमाई–जी हाँ!

दिग्वि०–कौन–से विषय कौ?

निमाई–व्याकरण को।

दिग्वि०–पाणिनी?

निमाई–नहीं जी! कलाप व्याकरण।

दिग्वि०–(अवज्ञा की हँसी हँसते हुए) हा हा! कलाप हू कोई व्याकरण है! वह तौ बाल–बोध है।

निमाई–मैं तो कलाप हू भलीभाँति नहीं समझूँ हूँ।

दिग्वि०–(अवहेलना सहित) तौ अब मैं तुमसों कहा शास्त्रार्थ करूँ! लाऔ (विजयपत्र दिखाते हुए) तुमहू अपनो हस्ताक्षर दै देऔ, तौ मैं चल्यौ जाऊँ।

निमाई–(स्मितपूर्वक) अजी मेरे हस्ताक्षर सों प्रयोजन?

दिग्वि०–यह देखौ मेरौ विजयपत्र! तुम्हारे नवद्वीप के समस्त पंडित समाज ने बिना शास्त्रार्थ किये ही पराजय स्वीकार कर लीनी है और विजय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। अब एक तुम ही शेष हौ। तुमहू अपनी पराजय स्वीकार कर लेऔ और हस्ताक्षर दै देऔ।

निमाई–अजी! यह बालक आप सों कहा शास्त्रार्थ कर सकै है। मेरी तौ सदा पराजय ही है।

दिग्वि०–तौ लाऔ हस्ताक्षर कर देऔ ! अलमति विस्तारेण विलम्बेन च।

छात्र 1–पण्डित जी ! नैंक सावधानी सों प्रमाद दोषशून्य वाणी बोलौ।

दिग्वि०–(गरजते हुए) कहा कही ? प्रमाद दोष मेरी वाणी में ?

छात्र 1–हाँ हाँ प्रमाद दोष। वदतोत्व्यघात दोष !

दिग्वि०–कहाँ पर ? कैसे ?

छात्र 1–ऐसे ही आप हमारे गुरुजी कूँ बालकहू समझौ हौ और हस्ताक्षर हू माँगौ हौ। ये द्वै वचन परस्पर विरोधी हैं। यदि इनकूँ बालक करके ही मानौ हौ तो एक बालक के हस्ताक्षर सों कहा दिग्विजयी की नाक ऊँची है जायगी। और जब हस्ताक्षर माँगौ हौ तौ इनकूँ पण्डित करके अवश्य ही मानौ हौ ! तौ फिर करौ शास्त्रार्थ। हराऔ इनकूँ और लेऔ इनकौ हस्ताक्षर।

छात्र 2–और पण्डित जी ! आप दिग्विजयी भये तौ कहा, आपने मनुस्मृति तौ पढ़ी ही नहीं है।

दिग्विजयी का शिष्य–(क्रुद्ध होकर) सावधान् प्रलाप मत बको। एक मनुस्मृति तौ कहा वशिष्ठ, पराशर, गौतम, हारीत, अत्रि, याज्ञवल्क्य, व्यास, यम इत्यादि समस्त स्मृति और उपस्मृति हमारे श्रीगुरुदेव के जिह्वाग्र भाग में निवास करैं हैं।

छात्र 2–परन्तु बुद्धि में निश्चय ही नहीं बसै हैं। नहीं तौ यह हमारे श्रीगुरुदेव की अवस्था कूँ नहीं देखते, उनकी विद्या की परीक्षा करते। मनुस्मृति तौ डंके की चोट कहै है कि श्वेत केशन सों मनुष्य वृद्ध नहीं होय है, विद्या सों ही वृद्ध मान्यौ जाय है। यथा–

श्लोक

न तेन वृद्धो भवति, येनास्य पलितं शिरः।
यो वै युवाप्यधीयानः, तं देवाः स्थविष्टः विदुः।।

छात्र 3–और हू सुनौ पंडित जी ! थोरे जल में रहवे वारे मेंढ़का ही टर्र–टर्र टर्रायौ करैं हैं। गहरे जल के मगर–मच्छन की तौ कोई टेरहू नहीं पावै है। वे जहाँ तहाँ कुदकते–फुदकते, लड़ते–झगरते नहीं डोलैं हैं।

छात्र 4–यथार्थ है मित्र ! नहि शूरा विकथ्यन्ते दर्शयन्त्यैव पौरुषम्।

दोहा

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावैं आप।
विद्यमान रन पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रलाप।।

दिग्वि०-(उत्तेजित होकर) ओह! यह व्यंगोक्ति! यह वाग्बाण!

दिग्वि० शिष्य 1-यह परिहास! यह लाञ्छना।

दिग्वि० शिष्य 2-यह जघन्य उपमा मेंढ़क की। यह कदर्थ तुलना कायर सों।

दिग्वि०-तौ आ जाऔ! करौ शास्त्रार्थ! कौन करैगौ।

निमाई-अजी! हम आपसों कहा शास्त्रार्थ कर सकैं हैं। आपके निकट तो हमारी चिरपराजय है। फिर नवीन पराजय सों कहा प्रयोजन! हाँ! यदि आप कृपा करकै अपनौ काव्यामृत हमकूँ पान करावैं, तौ हमकूँ बड़ौ आनन्द होयगौ।

दिग्वि०-(आनन्दित हो) उत्तम प्रस्ताव! बोलो कौन-से विषय के ऊपर आशु रचना करके सुनाऊँ।

निमाई-या गंगा तट पै माँ गंगा कौ ही माहात्म्य श्रवण करावैं।

दिग्वि०-तर्हि श्रूयताँ यत्किञ्चित वदामि!

श्लोक

अभिनव दिशवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
र्मदनमथनमौले र्मालती पुष्पमाला।
जयति जय पताका काप्यसि मोक्षलक्ष्म्या
क्षपित कलिकलङ्का जाह्नवी नः पुनातु।।1।।
महत्त्वं गंगायाः सततमिदमाभाति नितरां
यदेषा श्रीविष्णोश्चरणकमलोत्पत्ति सुभगा।
द्वितीय श्रीलक्ष्मीरिव सुरनरैरर्च्च्य चरणा
भवानी भर्त्तुर्या शिरसि विभवत्यद्भतगुणा।।2।।
पापहारि दुरितारि तरङ्गधारि
शैल प्रचारि गिरिराज गुहाविदारि।
झंकार कारि हरिपाद रजोपहारि
गंगा पुनातु सततं शुभकारिवारि।।3।।
भगवति भवलीलामौलिमालै तवाम्भ-
कणमणु परिमाण प्राणिना ये स्पृशन्ति।

अमरनगरनारी-चामरग्रहिणीनां
विगत कलिकतङ्कातंकमंके लुठन्ति।।4।।

छात्र 1-(परस्पर प्रति) बाप रे बाप! यह वाणी है कै आँधी। श्लोकन की झड़ी-सी लगाय दीनी। घंटा भर में सौ श्लोक बनाय डारे! और एक ते एक नवीन, अद्‌भुत, अनुपम।

छात्र 2-निस्सन्देह याकी जिह्वा पै सरस्वती कौ निवास है, ऐसे सरस्वती-सिद्ध की हम हाँसी कर रहे हैं। भलो कौन इनकूँ जीत सकै है।

छात्र 3-हे नरसिंह! हे गोविन्द! रक्षा करियों या संकट ते।

निमाई-धन्य है धन्य है आपकी अपूर्व कवित्व-प्रतिभा की! निस्सन्देह आप अद्वितीय कविराज हैं परन्तु यदि आप इनमें ते कोई एक श्लोक की व्याख्या करवे की कृपा करैं तो हमहू कछु रसास्वादन कर सकैंगे।

दिग्वि०-(अवज्ञा पूर्वक) मैं तौ सौ श्लोक बोल गयौ! बताऔ कौन-से श्लोक की व्याख्या सुननौ चाहौ हो।

निमाई-श्लोक महत्त्वं गंगाया: (नं० 2 श्लोक पूरा का पूरा सुना देते हैं) या श्लोक की व्याख्या सुननौ चाहूँ हूँ।

दिग्वि०-(विस्मित होकर) आश्चर्य! परमाश्चर्य! मैं तौ झंझावात के समान सौ श्लोक बोल गयौ। उनमें से एक श्लोक और एक ही बार श्रवण करकै कैसे आपने कंठस्थ कर लियौ-समझ में नहीं आवै है।

निमाई-कोई आश्चर्य की बात नहीं! यदि सरस्वती की कृपा सों आप आशुकवि है सकै हैं तौ उन्हीं की कृपा सों कोई आशु श्रुतिधर हू है सकै है जो सकृत श्रवण मात्र सों ही धारण कर लेय है।

दिग्वि०-निस्सन्देह ऐसौ ही है! आप श्रुतिधर हौ। आस्ताम्। अब श्लोक की व्याख्या सुनौ। गंगा कौ यह महत्त्व सतत ही अतिशय रूप सों प्रकाशित है रह्यौ है। श्रीविष्णु के चरणकमलन ते उत्पत्ति हैवे सों यह सौभाग्यवती है। यह द्वितीय श्रीयुक्त लक्ष्मी के समान हैं। इनके चरण सुर-नर करकै वन्दनीय हैं। यह अद्‌भुत गुणवती हैवे के कारण भवानी पति शंकर के मस्तक पै स्थित हैकै अपने प्रभाव कूँ विस्तार कर रहीं हैं।

निमाई-यह तौ केवल श्लोकार्थ मात्र भयौ। अब याकी समीक्षा द्वारा गुण दोष की विवेचना करैं-कहा यामें गुण और कहा यामें दोष हैं-यह बतावैं तब ही रसास्वादन सम्भव है!

दिग्वि०-(उत्तेजित होकर) मेरी कविता में दोष? दोष कौ तौ लेशाभास हू नहीं है। शब्दालंकार तथा अर्थालंकार करकै विभूषित है। तुम तौ केवल व्याकरण ही पढ़े हौ। काव्यालंका तढ़े पढ़े ही नहीं हौ। फिर तुम मेरे काव्य के सौन्दर्य कूँ कहा समझौगौ?

निमाई-तबही तौ मैं आप सों जिज्ञासा कर रह्यो हूँ कि आप विचार पूर्वक याके गुण दोष मोकूँ समझाय देवैं। मैं अलंकार पढ्यौ तौ नहीं हूँ परन्तु मैंने सुन्यौ अवश्य है। यासों मोकूँ श्लोक में बहुत-से दोष-गुण दीखें है। आप रोष न करैं तो कछु निवेदन करूँ।

दिग्वि०-यदि वे यथार्थ होंगे तो रोष काहे कूँ करूँगो। बताऔ यामें कहा-कहा गुण दोष हैं?

निमाई-यामें मुख्यत: पाँच गुण और पाँच दोष हैं।

दिग्वि०-(विस्मय पूर्वक) पाँच दोष?

निमाई छात्र 1-हाँ पण्डितजी, एक, द्वै, तीन, चार, पाँच!

निमाई छात्र 2-तीन और द्वै पाँच-समझे पंडितजी!

निमाई-आज्ञा करैं, पहले दोष गिनाऊँ कै गुण?

दिग्वि०-(चुप)

दि० शिष्य-पहले दोष ही बताओ! देखैं आपकी प्रतिभा। समस्त भारतवर्ष में आप ही एक समालोचक आज मिलै हौ। देखैं-सुनैं आपकी समालोचना।

निमाई-या श्लोक में द्वै स्थान पै 'अविमृष्ट-विधेयांश' नामक दोष है। तीसरौ दोष 'विरुद्धमतिकृत' है। चौथौ दोष 'भग्नक्रम' और पाँचवों हैं 'पुनरात्तता' दोष।

दिग्वि०-'अविमृष्ट विधेयांश' दोष द्वै स्थान पै कहाँ-कहाँ है।

निमाई-यह दोष प्रथम तो 'महत्त्वं गंगाया: इदम्' में आयौ है। आपकूँ कहनौ चाहिए हौ 'इदं गंगाया: महत्त्वम्'। कारण कि 'महत्त्वं' पद विधेय है तथा 'इदं' पद अनुवाद है। ज्ञात वस्तु कौ नाम अनुवाद और अज्ञात कौ नाम विधेय है। अलंकार शास्त्र कौ यह नियम है कि पहले अनुवाद और पीछे विधेय को प्रयोग करै 'अनुवादमनुक्त्वा न विधेयमुदीरयेत्' अर्थात् अनुवाद कहे बिना विधेय कूँ न कह डारै। परन्तु आप ने या नियम के विपरीत पहले विधेय और पीछे अनुवाद कौ प्रयोग कियौ है। अतएव 'अविमृष्ट-विधेयांश' दोषापत्ति भई कै नहीं?

दिग्वि०-(स्वगत) सत्यं सत्यं बड़ी भूल भई! (प्रकाश्य) और दूसरी ठौर यह दोष कहाँ है?

निमाई-'द्वितीया श्रीलक्ष्मीरिव' में। या पद सों आपको तात्पर्य यही है न कि गंगा दूसरी श्रीलक्ष्मी के समान हैं।

दिग्वि०-हाँ यही है मेरौ तात्पर्य।

निमाई-तो आपकूँ 'श्रीलक्ष्मी द्वितीया इव' ऐसौ कहनौ उचित हौ। परन्तु यहाँ आपने विधेय पद 'द्वितीया' कूँ पहले कह दियौ और अनुवाद पद 'श्रीलक्ष्मी' कूँ पीछे कह्यौ। ऐसौ करवे के कारण 'द्वितीया' कौ 'श्रीलक्ष्मी' पद के संग समास है गयौ और समता अर्थ के स्थान पै लघुता अर्थ है गयौ। अर्थात् गंगा दूसरी श्रीलक्ष्मी के समान हैं-यह अर्थ न है कै गंगा श्रीलक्ष्मी ते कछु न्यून गुणवादी कोई देवी हैं ऐसौ हीन अर्थ है गयौ। परन्तु आप यदि 'श्रीलक्ष्मी द्वितीया इव' कहते तो यह दोषापत्ति न होती।

निमाई छात्र 1-वाह वाह वाह! अश्व के आगे शकट।

निमाई छात्र 2-घोड़ा के आगे गाड़ी! वाह! बहुत बढ़िया।

दिग्वि०-(स्वगत) निस्सन्देह यहहू एक दोष आय गयौ। (प्रकाश्य) तीसरो दोष 'विरुद्धमति' कहाँ है।

निमाई-'भवानी भर्त्तुः' में-समझ गये होंगे आप।

दि० शिष्य-ऐसे नहीं! विचार करकै समझाऔ।

निमाई-तौ समझौ! यामें विरुद्ध अर्थ कूँ उत्पन्न कर दैवे वारौ एक भयंकर दोष है।

गाना-पद- **(तर्ज राधेश्याम)**

भव नाम तौ कहिये शंकर को,
और भव की पत्नी भवानी है।

(प्रश्न) है न? (उत्तर) हाँ है।

पर ऐसी भवानी के हू भर्त्ता, कही अति खोटी बानी है।

(जैसे कोई कहै कि)

ब्राह्मण की पत्नी के पति के हाथ में दानहिं देऔ जू।
(तो) एक पति कोई और हू है यही अर्थ यहाँ होवै जू।।

(ऐसे ही जब आप कहैं हैं कि)

भव की पत्नी भवानी के भरतार के शीश पै गंगा है।
तो एक पति कोई औरहू है यह अर्थ अनर्थ बेढंगा है।।

या प्रकार सों 'भवानी भर्त्तुः' कहवे सों भव की पत्नी भवानी कौ एक दूसरौ भर्ता औरहू है जाके शीश पै गंगा है ऐसी 'विरुद्ध मति' उत्पन्न है जाय है। यदि आप 'गिरिजा भर्त्तुः' कहते तौ यह 'विरुद्ध मति' दोषापत्ति नहीं होती।

दिग्वि०-(स्वगत) ओफ्! भयंकर भूल है गई।

निमाई छात्र 1-(ताली पीटता हुआ) अहा हा! कैसौ सुन्दर पद! शिव की पत्नी भवानी कौ दूसरौ पति! वाह दिग्विजयी जी! वाह!

निमाई छात्र 2-एक बालक हू ऐसी बात नहीं कहैगौ।

दिग्वि०-अच्छो! चौथौ दोष 'भग्नक्रम' कहाँ है?

निमाई-श्लोक के द्वितीय चरण में है। प्रथम चरण में 'त' कौ अनुप्रास है, तृतीय चरण में 'र' कौ अनुप्रास है। चतुर्थ चरण में 'भ' कौ अनुप्रास है परन्तु द्वितीय चरण अनुप्रास-शून्य है-एकहू अक्षर द्वै बार नहीं आयौ है-अतएव 'भग्नक्रम' दोष स्पष्ट ही है।

दिग्वि०-(स्वगत) या बालक पंडित ने तो मेरौ मुँह बन्द कर दियौ। (प्रकाश्य) अच्छौ पाँचवों दोष 'पुनरात्तता' कहा है।

निमाई-'विभवत्यद्‌भुतगुण' पद में है। पहले तौ आपने 'विभवति' क्रिया पद के द्वारा वाक्य की समाप्ति कर दीनी पश्चात् 'अद्‌भुत गुण' विशेषण पद को प्रयोग कियौ। यासों 'पुनरात्तता' दोष आय गयौ।

निमाई छात्र 1-यह तौ भूल कौ संशोधन है।

निमाई छात्र 2-और चूकवे कौ नाम ही भूल है। पंडित जी ऐन समय पै तौ चूक ही गये! अब पीछे सम्हारे ते कहा होय है।

दिग्वि०-(स्वगत) कहा करूँ! इन दोषन के खंडन करवे के लिए कोई उपाय नहीं सूझै है। या बालक के निकट आज मेरी पराजय निश्चित है।

निमाई-अब आप श्लोक के गुण हू श्रवण करैं। यामें पाँच गुण हैं-द्वै शब्दालंकार और तीन अर्थालंकार। द्वै शब्दालंकारन में एक तौ 'अनुप्रास' है और दूसरौ 'पुनरुक्तवदाभास' है। प्रथम, तृतीय और चतुर्थ चरण में अनुप्रास है सो तौ अबही वर्णित है गयौ। अब 'पुनरक्तवदाभास' बताऊँ हूँ। यह 'श्रीलक्ष्मी' शब्द में है। 'श्री' को अर्थ 'लक्ष्मी' ही है। यासों एक ही

अर्थ के निमित्त द्वै–द्वै शब्द को प्रयोग पुनरुक्ति जैसौ लगै है परन्तु पुनरुक्ति नहीं है कारण कि यहाँ 'श्री' कौ अर्थ लक्ष्मी नहीं है। शोभा–सौन्दर्य है। अतएव श्रीलक्ष्मी कौ अर्थ भयो श्रीयुक्त–शोभा सौन्दर्य युक्त लक्ष्मी। या प्रकार सों यह पुनरुक्ति दोष नहीं पुनरुक्ति दोष जैसौ प्रतीत होय है–'पुनरुक्तवदाभास' गुण है।

दिग्वि०–(स्वगत) धन्य है! अद्‌भुत अपूर्व विचार है।

निमाई–अब तीन अर्थालंकारन कौ विचार सुनैं। इनमें एक उपमालंकार है, दूसरौ विरोधाभास है और तीसरौ अनुमानालंकार है। 'लक्ष्मीरिव' में उपमा अलंकार है। सुरनरगण जैसे लक्ष्मी की अर्चना करैं हैं वैसे ही गंगा की हू अर्चना करैं हैं। लक्ष्मी के संग गंगा को उपमा दी गई है। यासों यह उपमालंकार है। क्यों ठीक है न?

दिग्वि०–हाँ ठीक है।

निमाई–'श्रीविष्णोश्चरणकमलोत्पत्तिसुभगा'–या पद में विरोधाभासा–लंकार है। गंगा में ते ही कमल की उत्पत्ति होय है। कमल में ते गंगा की उत्पत्ति–विरोध जैसो ही लगै है। परन्तु वास्तविक विरोध नहीं है। कारण कि श्रीभगवान् की अविचिन्त्य शक्ति के द्वारा उनके चरणकमल में ते गंगा प्रगट होय है। अतएव विरोध नहीं विरोध जैसो ही है–यह विरोधाभास अलंकार नामक गुण है। क्यों ठीक है न?

दिग्वि०–हाँ ठीक है।

निमाई–(3) अब अनुमान अलंकार बताऊँ हूँ! साध्य और साधन कौ एकत्र उल्लेख सों अनुमान अलंकार होय है। या श्लोक में गंगा कौ महत्त्व और वा महत्त्व कौ कारण दोनों एकत्र बताये गये हैं। गंगा को महत्त्व (साध्य) यही है कि विष्णुपाद–पद्म ते उनकी उत्पत्ति है। और या महत्त्व कौ कारण (साधन) की हू विष्णुपाद पद्म ते उत्पत्ति ही है। या प्रकार सों यहाँ साध्य और साधन एक ही है। अतएव अनुमान अलंकार बन्यौ है। क्यों ठीक है न?

दिग्वि०–हाँ ठीक है।

निमाई–या प्रकार सों, स्थूल विचार में आपके श्लोक में पाँच गुण और पाँच दोष हैं। और सूक्ष्म विचार करवै पै तौ और हू अनेक दोष मिल सकैं हैं।

निमाई- **पद**

पाँच कहा दस बीस गुन हौं (पर) एक औगुन सब छार करै।
सिंगार सजे सुन्दर तनकूँ ज्यूँ बूँद सफेदी ढार करै।।

तथापि धन्य है आपके सौभाग्य कौ कि आपके ऊपर-

यह देवकृपा की प्रतिभा है, जो कविता सरिता धार बहै।
अवसर नाहिं विचार कूँ तामें, यासों दोष रहै जु रहै।।
(परन्तु)
गुन औ दोष विचार सहित रचना ही निर्मल होवै है।
तब निर्मल तन पै अलंकार हू, झलमल झलमल सोहै है।।

दिग्वि०-(स्वगत) ओह! या बालक के आगे आज मेरी प्रतिभा स्तम्भित है, वाणी कुण्ठित है। निश्चय ही सरस्वती आज मेरे ऊपर रुष्ट और निमाई के ऊपर तुष्ट है गई है।

निमाई-दिग्विजयी महाराज! कहा विचार कर रहे हैं। कछु कहवे की कृपा करौ।

दिग्वि०-निमाई पंडित! आपकी व्याख्या सुनकर मैं आश्चर्य चकित हूँ स्तम्भित हूँ। आपने काव्य-अलंकार पढ़े बिना ऐसौ अपूर्व अर्थ कैसे कर डार्यौ-याहि विचार में मैं डूब रह्यौ हो।

निमाई-अजी मैं शास्त्र विचार कहा जानूँ। यह तौ माँ सरस्वती ने जैसे कछू बुलवायौ, वैसौ बोल दियौ।

दिग्वि०-(स्वगत) निस्सन्देह यही बात है। यह सरस्वती ने ही मेरी पराजय करायी। पहले तौ मेरे मुखते दोष-पूर्ण श्लोक बुलवायौ। पश्चात् विचार के समय मेरी विद्या-बुद्धि कुण्ठित कर दीनी-मैं एकहू शब्द न बोल सक्यौ। मूक मूढ़ बनकै बैठ्यो रह्यौ।

निमाई छात्र 1-हा हा हा! जैसौ अहंकार वैसो पुरस्कार। चारों खाने चित्! न हाथ हिलै है न मुख चलै है।

निमाई छात्र 2-अहा! हमारे गुरुजी ने एक फूँक में ही पर्वत उड़ाय दियौ, सागर सुखाय दियौ।

निमाई-चुप रहौ! मानी कौ मान-नाश करनौ प्राणनाश ते हू महत् अपराध है। ऐसौ काम भूलकै हू न करनौ।

छात्रगण-जैसी आज्ञा गुरुदेव!

निमाई-दिग्विजयी जी महाराज!

गाना

मैं तो शिष्य समान हूँ तुम्हरौ, क्षमहु मेरी चंचलताई।
तुम पंडित कविराज शिरोमणि, अद्‌भुत भारती कृपा पाई।।

दिग्वि०-जाके एक ही श्लोक में पाँच-पाँच दोष वाकी पंडिताई की यह स्तुति वृथा ही है।

निमाई-अजी दोष तौ भवभूति, कालिदास, जयदेव जैसे महाकविन के काव्य में हू पाये जाय हैं। दोष-गुण की समालोचना करनौ तौ सहज है अद्‌भुत कवित्व शक्ति प्राप्त करनौ कठिन है।

पूर्वपद

बहुत जौहरी लाल रतन के (पर) लाल रतन इक दो ही कहीं।
(ऐसे ही)
सहज है टीका टिप्पणी करनी, कविता करनी कठिन सही।।
अद्‌भुत कविता शक्ति तिहारी, नर में सम्भव कभू नहीं।
बहै अखंड अनर्गल धारा, मानों गंगा धार बही।।
वय विद्या गुण ज्ञान मान में, सब विधि तुम हौ गुरु हमारे।
करौ विश्राम रैन बहु बीती, कल पुनि सुनिहैं शास्त्र तिहारे।।

कल फिर आपके मुखसों शास्त्र-विचार सुनैंगे। अब आप निज निवास स्थान के लिए गमन करैं और हमकूँ हू आज्ञा होवै। नमस्कार!

(महाप्रभु व छात्रवृन्द का प्रस्थान)

दिग्वि०-नमस्कार! (दु:खोन्मत्त होकर) अब या कारे मुख कूँ काहू कूँ नहीं दिखाऊँगो। कहूँ वन कूँ चल्यौ जाऊँगो और अनशन द्वारा प्राण त्याग कर दऊँगो परन्तु एक बेर माँ सरस्वती सों पूछ तौ लऊँ कि उननै क्यों मोकूँ त्याग करकै मेरी पराजय करवायी।

(प्रस्थान-शिष्य मंडली सहित)

बंगला

एइ मते निज घर गैला दुइ जन।
कवि रात्रि कैलो सरस्वती आराधन।। (चै० च०)

चौपाई

दोउ जन निज निज भवन सिधाये।
कविवर व्यथा कही ना जाये।।
रजनी काल देवी आराधहिं।
जपत मंत्र निज व्यथा सुनावहि।।

(दृश्य-दिग्विजयी जप में स्थित। कुछ काल पश्चात्)

दिग्वि०- विहाग-3

देवी सरस्वती! शरण मैं तेरी।
कहा अपराध बन्यौ तुव सुत सों, कीनी सहाय न मेरी।।
तुम्हरे ही वरदान सों मेरी, बाजि रही जग भेरी।
काश्मीर कामाख्या काशी, महाराष्ट्र दीनी फेरी।।
सदा सहाय करी तुम अम्बे, जब जब मैं सुमिरे री।
काहे आज विसार जु दीनी, यह गति कीनी मेरी।।
तुमहिं आराधन जन्म बितायौ, भलौ दियौ फल एरी।
'प्रेम' गोदी गंगा की सोऊँ, कहा काज जिये री।।

समाज- दोहा

करत करत जप मंत्रहिं, अति व्याकुल कविराज।
देवी शारदा दरस दै, दियौ भेद समझाय।।

(श्वेत वस्त्र धारिणी वीणा पुस्तक धारिणी श्रीसरस्वती देवी का ध्यान में आविर्भाव)

सरस्वती-पुत्र! मैं आय गई।

दिग्वि०-(ध्यान में ही) मातेश्वरी! प्रणाम! कृपामयि! यह कैसी तुम्हारी कृपा? समस्त भारतवर्ष में मेरी विजय कराय अन्त में एक बालक के निकट पराजय करवाय दई। पहले मेरी जिह्वा सों दोषयुक्त श्लोक बुलवायौ, पश्चात् मेरी जिह्वा में सों अन्तर्द्धान ही है गईं-मैं एक गूँगौ गँवार जैसौ बनाय कै बैठार दियौ।

सरस्वती-पुत्र! तुम जिनके विरुद्ध विचार कर रहे हते, उनके सम्मुख हैवे में मोकूँ लज्जा बोध होय है। याहि सों मैं तुम्हारी जिह्वा छोड़ गयी ही।

दिग्वि०-वह तौ एक सामान्य नर बालक है। वाके सम्मुख आपकूँ लज्जा कैसी?

सरस्वती-नर बालक नहीं, वे मेरे पति हैं, स्वामी हैं। मैं उनकी चरण-दासी हूँ। उनके सम्मुख मैं मुखर नहीं, मूक हूँ!

दिग्वि०-(विस्मित हो) यह कहा कहौ माँ! निमाई पंडित नारायण?

सरस्वती-हाँ पुत्र! तुमने जो जीवन भर मेरी आराधना करी है वाकौ परम फल ही मैंने तुमकूँ दियौ है। शास्त्रार्थ द्वारा दिग्विजयी बननौ विद्या कौ फल नहीं है। विद्यापति कूँ प्राप्त करनौ ही परम फल है। सोइ फल मैंने आज तुमकूँ दियौ है। माता की नांई तुमकूँ परम पिता सों मिला दियौ है। यासों यह तुम्हारी पराजय नहीं, माया की पराजय है। अतएव

गजल- वसन्त-विलम्बित लय

करो दुःख दूर न शंका जु लाओ।
जागे भाग आज ही, आनन्द मनाओ।।
मैं भूली न तुमको, पकड़ कर न छोड़ा।
जनम भर की सेवा का, फल आज पाओ।।
जो नर को ही जीते, वह विद्या न भारी।
पाये आज प्रभु को, परम जय मनाओ।।
हुआ काम माता का, आज ही तो पूरा।
पिता से मिलाया, अब जय उनकी गाओ।।
मैं दासी हूँ उनकी, स्वयं वे हरी हैं।
शरण जाओ उनकी, परम प्रेम पाओ।।

(अन्तर्द्धान। पटाक्षेप)

समाज- दोहा

प्रातः होत ही दिग्विजयी, गयौ गौर हरि द्वार।
विद्या मद तजि मान सब, करी शरन पुकार।।

(दृश्य-शयनागार में निमाई पंडित-बैठे हुए)

दिग्वि०-(नेपथ्य से) भगवन्! मैं आपकी शरण आयौ हूँ शरण प्रभो!

निमाई-भीतर पधारौ!

दिग्वि०-(करबद्ध प्रवेश करते हुए) मैं आपकौ महापराधी हूँ। क्षमा करौ नाथ! शरणागतोऽस्मि! (दौड़कर चरणों में पड़ना)

निमाई-(उठते हुए) दिग्विजयी जी महाराज? आप या बालक के चरणन में प्रणाम करकै मोकूँ अपराधी क्यूँ बनाऔ हौ!

दिग्वि०-अपराधी बनाऊँ नहीं हूँ! अपने अपराध कूँ क्षमा करवाऊँ हूँ। क्षमा करौ देव! शरण देऔ।

निमाई-यह आप कहा कहैं है-कहाँ मैं बालक और कहाँ आप वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, पण्डितराज महाकवि! आप क्यों ऐसी वाणी बोल रहे हैं।

दिग्वि०-चतुर चूड़ामणि! अब और अधिक चतुराई चलैगी नहीं!

पद

छलो मत छलिया, भूलूँ न बतियाँ
भई जु कृपा मैं जान गयौ।
गई जु निशा भई मंगल उषा अब
अँखियाँ खुलीं पहचान गयौ।।
मात सरस्वती दई सुमति अति
तुम्हरे चरन को ज्ञान दियौ।
करौ 'प्रेम' मधुकर पद पराग तर
बहुत विषय रस पान कियौ।।

निमाई-पंडितराज जी! आपके ऊपर सरस्वती देवी की पूर्ण कृपा भई है। परन्तु आप देवी के वचनन कूँ अपने हृदय में ही राखैं, मुख सों कदापि प्रगट न करैं। और यह हू आप भलीभाँति समझ लेवैं कि विद्या द्वारा गुणी, मानी विद्वान् पुरुषन कौ मान हरण करनौ विद्या कौ सदुपयोग नहीं है। यह अहंकार की वृद्धि करै है और अहंकार ते पतन होय है। अतएव श्रीकृष्णानुशीलन करकै विद्या कूँ सफल बनावैं। और एक बात-श्रीवृन्दावन जाय कै निष्किंचन रूप सों श्रीकृष्ण कौ भजन करैं।

दोहा

तजौ अविद्या जाल महा, रहौ वृन्दावन जाय।
तीन बात हृदय धरौ, भव बन्धन कट जाय।।
जीवे दया, नामे रुचि, वैष्णव सेवा।
साधन को सार यह, मिलै हरि देवा।।

हरि बोल।

दिग्वि०-जय हो कृपासिन्धो जय हो! अब मैं ऐसौ ही करूँगो मैं अबही अपने तुरंग-मातंग, ग्रन्थ-वाहन आदि समस्त माया कौ आडम्बर पंडित जनन में वितरण कर दऊँ हूँ, शिष्य मंडली कूँ विदा कर दऊँ हूँ और निष्किंचन बनकै श्रीवृन्दावन के लिए प्रस्थान करूँ हूँ। आज सों आपकी कृपादृष्टि ही मेरौ अनन्त बल और चरणरज ही (झुककर रज धारण करना) मेरौ अक्षय सम्बल है। हे मेरे गुरु-गोविन्द! आपकी जय, सदा जय जय जय हो।

गाना-जय हरि कृष्ण गोविन्द विष्णु गौर हरि।

(आरती-पटाक्षेप)

इति दिग्विजयी-उद्धार लीला।

❖

यौवन लहरी **द्वितीय कणामृत**

श्रीगौर-विष्णुप्रिया-विवाह लीला

जय शचीनन्दन जय गौर हरी।
विष्णुप्रिया प्राण धन नदिया विहारी।।

दोहा

गौरचन्द की चाँदनी, जिन घर प्रगटी आय।
जय जय सनातन मिश्र पिता, जय महामाया माय।।
सनातन मिश्र नवद्वीप महँ, पंडितराज कहाय।
पत्नी महामाया सों, विष्णुप्रिया जन्माय।।

चौपाई

मूरति मनो रूप प्रगटाई। दरसन नैनन प्रान सिराई।।
दया नेह गुन शील अनूपा। परिजन प्रानन कोटि सरूपा।।
भक्ति बाल वयस सों दृढ़ाई। मातु पिता गुरु सेवा भाई।।
नित माता संग न्हावन जावैं। नर नारी लखि लखि सुख पावैं।।
वयस दस नव बाल किसोरी। भोरी सहज लज्जा महँ बोरी।।

(प्रवेश महामाया-विष्णुप्रिया-गंगा स्नानार्थ)

पद

गंगा न्हान विष्णुप्रिया नित, माता संग संग जावैं।
लाज भरी गुन रूप शील भरी, चाल मराल लजावै।।
आंचर गहि जननी के पीछे, लघु लघु पग चलि जावैं।
नर नारी सब मुग्ध होयँ लखि, ये सबकूँ शीश नवावै।।
गंग न्हाय नित तुलसी पूजैं, अन्तर विनय सुनावैं।
देव रूप अनूप मिलै वर, गुप्त प्रेम उमगावैं।।

शची-(प्रवेश गंगा स्नानार्थ। धोती-झारी लिये)

मात शची हू न्हावन आवैं, लखि विष्णुप्रिया लुभावैं।
जोरि हस्त ये शीश नमावैं, वेहू आसीस सुनावैं।।
करि प्रनाम दोऊ चलि जावैं, शची देखत रहि जावैं।
को यह बाला चित्त चुरावै, जानन हित अकुलावैं।।

शची-(खड़ी देखती हुई) यह बालिका कौन है? याने कितनौ आदर भाव सों हाथ जोरिकै मोकूँ प्रणाम कियौ। जैसौ शील वैसौ ही रूप। प्रथम मिलन में ही याने मेरौ चित्त चुराय लियौ! कैसे याकौ परिचय पाऊँ। (प्रस्थान)

समाज- **पद**

प्रथम बार मिलन में अचरज, आनन्द सहज उर बाढ्यौ।
पुत्र वधू उत सास सम इत, नेहफन्द उर डार्‌यौ।।
राखैं गोय मनहिं मन दोय, प्रगट न कोऊ जनाये।
मिलन परस्पर दोउन हिय मधि, अतिशय नेह बढ़ाये।।
आवै जबही सुरसरी न्हावन,दृष्टि जहाँ तहाँ डारै।
बिन देखे अकुलावै मन मन, मुख नहिं बैन उचारै।।
एक दिवस मारग मिली इकली, शची मात तब बूझी।
बेटी नाम कहा है तेरौ, सुता सुघड़ तू काकी।।

(प्रवेश-शची और विष्णुप्रिया दो तरफ से)

विष्णु०-(प्रणाम करती हैं)

शची-(हृदय से लगा) बेटी! तेरी मनोकामना पूरी होवै। बेटी! तेरौ नाम कहा है? तू कौन की है? बहुत दिनन सों मेरी यह जानबे की लालसा है।

पूर्वपद

'विष्णुप्रिया' यह नाम मृदु स्वर, अति सकुचाय बताऔ।

शची-

कैसो सुन्दर नाम तिहारौ, अति ही सुख हिय पायौ।
माता संग तिहारे आवै, वाकौ नाम कहारी।।

विष्णु-

महामाया है नाम मात कौ, पिता राजपंडित भारी।

शची-भलो! अब मैं पहचान गई-

विप्र सनातन राज सुता तू, अब मैं नीके जानी।

समाज-

बार बार मुख चूमत नेह भरि, लै हिय सों लपटानी।
पुनि इत उत बतराय प्रेम सों, दै जु असीस पठाई।।
विष्णुप्रिया मूरति शची नैनन, हृदय गई जु समाई।।

दोहा

चली जात शची गृह कूँ, मन मन करत विचार।
यह वधू मेरे निमाई कूँ, कैसे मिलै मुरारि।।

शची-अहा! कैसौ चन्द्रमा सों मुख है, कमल के-से नेत्र हैं। और गुलाब कौ सौ रंग है। तापै कितनौ भोरौपन है कितनी नम्रता है! जब मोकूँ देख लेय है, तबही आयकै मेरे पाँव छीवै है। औरहू तौ कितनी बालिका मोकूँ मारग में मिलैं हैं। कोई तौ मेरी इतनी भक्ति नहीं करै है। और मेरौ हू मन न जाने यासों इतनौ नेह क्यों करै है। जबही याकूँ देख लऊँ हूँ तब ही ऐसो ही जी करै है कि याकूँ अपनी गोद में भर लऊँ और घर लै चलूँ! अहा! यह कहूँ मेरे निमाई कूँ मिल जाती!! परन्तु कहाँ यह राजपंडित की कन्या और कहाँ मेरौ गरीब निमाई-न बाप है न भैया। ताहू पै दूसरौ वर! याकूँ यह गृह-लक्ष्मी कैसे मिल सकै है। परन्तु याकी आशा-अभिलाषा हू तौ मोपै छूटै नहीं है, दिन-दिन बढ़ती जाय है-

पद-खमाज दादरा

कहा कहौं कासों कहौं कोई नहीं मेरौ।
हरि बिन सहाय और कोई नहीं मेरौ।।
अबला के धन हो तुमही, निधनी के धन हो।
गरीबन के काज सारौ, यही तिहारौ पन हो।।

रूप शील गुन की सीम चम्पकली सी माई।
होवै मेरे लाल की या बाल सों सगाई।।
नव किसोरी बाल यह नव तरुन किसोर।
नयन सफल होवैं 'प्रेम' देखूँ गाँठ जोर।।

(प्रस्थान)

समाज- **दोहा**

विष्णुप्रिया अरु गौर कौ, प्रथम मिलन सम्वाद।
'गौरांग उदय' ग्रन्थ कहँ, कह्यो लह्यो रस स्वाद।।
ग्रन्थ 'वैष्णवाचार' हू कहै कथा कछु सोई।
निज मति अनुसरि सो कछु, कहौं विवाद न कोई।।

समाज- **पद**

एक दिवस माता संग विष्णुप्रिया,
सुरसरि न्हान चली सुखदाई।

(प्रवेश महामाया-विष्णुप्रिया-वस्त्र-झारी)

वयस एकादस प्रथम किसोर, भुराई मधि नव तरुनाई।।
जगजननी जननी के पीछे, गमनी मूरति कमनी भली।
सहज अरुन पग तल जावक युत, झलकत छलकत रंगरली।।

(प्रवेश पंडित निमाई छात्रमंडली सहित)

नागर निमाई पंडितराज, छात्र मंडली संग लिये।
विहरत गंगा तीर अचानक, मारग मधि दरसन जु दिये।।
को धन को धनी कही न जावै, दोउ धनी दोउ धनहू अनुमान
मिलत नैन दोउ दोउ पहचाने, प्रीतम प्रिया जु चतुर सुजान

(पं० निमाई आदि चले जाते हैं। विष्णुप्रिया नतशीश माता सहित मंच पर चलती रहती)।

पूर्वपद

कोटि काम कमनीय कलित छवि, रूप माधुरी लेश चखाई।
तन मन प्राण हृदय नैनन विच, मूरति मधुर प्रिय उरझाई
ग्रीवा नमित निमोलित लोचन, ध्यान धरत चलीं पीछे माई
परम विवश मन अंग शिथिल सब,
ज्यों त्यों गंगा न्हान चली।।

जल थल गौर गगन गौरमय सब, जित देख तित गौर छली।
सकुच सलज नहीं भेद जनावै, राखै सब सों रहसि दुराई।।
विनवत रैन दिवस मन ही मन, करौ देव अब प्रेम सहाई।।

दोहा

उत माता शची चाव इत, विष्णुप्रिया उर भाव।
सनातन महामाया हू, करैं जु सोई चबाव।।

महामाया-नाथ! विष्णुप्रिया अब ग्यारहवें वर्ष में परि गई है। वाके लिए अब कोई योग्य वर ढूँढ़नौ चाहिए।

सनानत-प्रिये! मैंने नवद्वीप सब देख डार्यौ। कोई सुयोग्य पात्र नहीं दीखै है। हाँ, एक पात्र तो अवश्य है परन्तु न जानै वह हमारी कन्या कूँ स्वीकार करै कै नहीं।

महामाया-भलौ ऐसौ वह कौन है जो आपकी कन्या के संग जोरिबे कूँ तैयार नहीं होवेगौ?

सनातन-वह है पंडितराज निमाई। मैं तो राजपंडित ही हूँ परन्तु वह तो पंडितराज है-नवद्वीप के पंडित समाज कौ मुकुटमणि, दिग्विजयी विजयी। याहि कारण मैं संकोचवश चर्चा नहीं चलाय पाऊँ हूँ।

महामाया-परन्तु नाथ! वाकी माता सों मेरौ खूब परिचय है। गंगाजी पै हमारौ और उनकौ प्रायः नित्य ही मिलन होय है। आप कहौ तौ मैं उनसों बात चलाऊँ। वेहू विष्णुप्रिया सों बड़ौ स्नेह करैं हैं, वाकूँ हृदय सों लगा लेय हैं और बड़ौ प्यार करैं है, असीस देय हैं। येहू उनकूँ पायकै बड़ौ ही सुख मानै है। इन दोउन में ऐसी प्रीति है गई है मानों तौ बड़ी पुरानी जान पहिचान होय।

सनातन-तब तौ बड़ी ही सुन्दर बात है। अवश्य बात चलईयों। उनके मन को भेद लीजौं। फिर मैं काशीनाथ मिसरा जू कूँ भेजूँगो।

(दोनों का प्रस्थान)

समाज- **चौपाई**

इत दम्पति यह मतौ मिलायो। वानक विधि उत सहज बनायौ
मात शची रहीं अति अकुलाई। पुत्रवधू सो मिलै कब आई।।
कन्या निकसि न हाथ सों जावै। पुत्र ही घर तजि कहूँ न पलावै
तासों आप ही साहस कीनौ। काशीनाथ बोलि घर लीनौ।।

(प्रवेश शची और काशीनाथ मिसरा)

शची–मिसरा जी! जैसे बनै तैसे वा कन्या कूँ तौ मेरे निमाई के लिए लाय दैनौ ही परैगौ। मैं तो सोमती जागती वाही कौ सपनौ देख्यौ करूँ हूँ। अहा! वह लक्ष्मी कब मेरे घर कूँ, पवित्र करैगी!

काशी०–हाँ माँ! वह कन्या तौ रूप–गुण की खान है और वैसौ ही आपकौ निमाई है–रूप–गुण– विद्या–बुद्धि–निधान है। इनकी बड़ी अनूठी जोरी बनैगी।

शची–परन्तु जुरै कैसे? कहाँ वे धनीमानी राजपंडित और कहाँ हम साधारण गृहस्थ। फिर भलौ सम्बन्ध कैसे जुर सकै है?

काशी०–खूब जुर सकै है और मैं जुराय कै दिखाय दऊँगो हम पंडित कारे कूँ गोरौ और बूढ़े कूँ जवान बनाय कै जोरी जुराय सकैं हैं। फिर आपकौ निमाई तौ साक्षात् इन्द्रराज ही है। भलौ ऐसौ कौन होयगौ जो निमाई कूँ अपनौ जमाई बनायवे में अपनौ सौभाग्य न समझैगौ?

शची–भगवान् तुम्हारौ मंगल करैं। तुम अबही जाऔ और राजपंडित के दोनों हाथन कूँ पकरि कै मेरी विनती सुनाय दैओ कि एक अनाथिनी विधवा वृद्धा पै कृपा करके वाके निमाई कूँ अपनाय लैवैं।

काशी०–माँ! तुम कोई चिन्ता मत करौ। तुम तौ यह समझि लेऔ कि वह दुलहिन हमारे घर आय गई और रुनक झुनक करती डोल रही है।

अबही मिश्र सनातन सों मिलि, शुभ सम्वाद सुनाऊँ।
दोनों ओर नगाड़े–नौबत खुशियों के बजवाऊँ।।
जोरी लक्ष्मी नारायन–सी, गृह मन्दिर पधराऊँ।
तबही 'प्रेम' न्यौछाबर माता, मनमानी मैं पाऊँ।।

शची–हाँ हाँ भैया! सब तुम्हारौ ही है! निमाई हू तुम्हारौ ही है। तुम्हारौ भगवान् भलौ करैं।

(दोनों का प्रस्थान)

बंगला

काशीनाथि पंडित चोलिलो सेइ क्षणे।
दुर्गाकृष्ण बोलि राजपंडित भवने।।

चौपाई

जाय सनातन भवन दुआरे। टेरत काशीनाथ मोद महारे।।

काशी-सनातन मो'शाय बाड़ी ते आछेन ना की?

सनातन-(निकलते हुये) आस्ते आज्ञा होक् काशीनाथ मो'शाय।

काशी-नमस्कार पंडित मोशाय!

सनातन-नमस्कार घटक मो'शाय नमस्कार! आसुन, बोसुन। आज तो बड़े दिनान में कृपा करी। कहा कोई विशेष समाचार है?

काशी०-तौ कहा हम कोई वैसे ही आवैं हैं। बड़ौ ही विशेष समाचार है आपकी कन्या के लिये बड़ौ ही उत्तम संबंध लैकैं आयौ हूँ।

सनातन-धन्यवाद! कहौ कहाँ सों लाये हो। हम तौ आजकल याही चिन्ता में परे भये हैं कि कहूँ सों कोई योग्य वर मिल जाय।

काशी०-बस अब चिन्ता नहीं, आनन्द! विधाता अनुकूल भयौ है। आपके ही नहीं हमारे हू भाग्य जागे हैं। बड़ी सुन्दर जोरी जुरैगी, कृष्ण-रुक्मिणी की-सी!

सनातन-परन्तु बताऔ तौ सही वह कौन है ऐसौ उत्तम वर?

काशी०-पंडितराज निमाई और कौन?

सनातन-(सानन्द) निमाई पंडित? कहा निमाई हमारौ जमाई बनैगौ? साँची कहौ हौ कै हाँसी करौ हो!

काशी०-हाँसी सों मोकूँ लाभ कहा? उल्टी हानि ही होयगी। सुनौ निमाई की माता शची ने मोकूँ बोलिकै आपके पास भेज्यौ है। वे आपकी कन्या के ताईं व्याकुल हैं। उननै अँचरा पसारि कै आपसों कृपा की भीख माँगी है। जैसी तो आपकी लक्ष्मी कन्या, वैसौ ही उनकौ पुत्र नारायण।

(बंगला)

जैछे कृष्णरुक्मिणी ते अन्योन्य उचित।
सेई मतो विष्णुप्रिया आर निमाइ पंडित।।

सनातन-(काशीनाथ के दोनों हाथ पकड़) अहा मिश्रजी! आपने तौ आकाश कौ चन्दा ही लायकै मेरे हाथन में धर दियौ है। हमारी आशा-अभिलाषा की बेल खिलाय दीनी शची माँ ने। तो आज हमकूँ रिनियाँ बनाय लियौ है। अहा! गौर चाँद हमारौ जमाई बनैगौ!

काशी०-तौ अब मोकूँ आज्ञा होवै। शची माँ कूँ जायकै यह शुभ सम्वाद सुनाऊँ।

सनातन-हाँ हाँ शुभस्य शीघ्रम्। उनकूँ मेरौ प्रणाम सुनईंयों। और अधिवास कौ मुहूर्त शोध कै बताय जईंयों। हम सब तैयारी आरम्भ कर देयँ हैं।

काशी०-हाँ हाँ अवश्य! अच्छौ तौ नमस्कार!

(प्रस्थान)

सनातन-नमस्कार! नमस्कार! (भीतर जा कर समाचार सुनाना)।

समाज- **दोहा**

जाय बेगि भीतर भवन, दियौ सम्वाद सुनाय।
महामाया विधुमुखी सब, आनन्द उर न समाय।।

सनातन-

अब तौ वाँञ्छा पूर्ण भई, चाँद हाथ आय गयौ।
धन्य हरि दयालु धन्य, निमाई अब जमाई भयौ।।
लगन शोधि साजौ सब, विधना अनुकूल भयौ।
शरणागत पाल प्रभु, पल में नौका पार कियौ।।

समाज- **दोहा**

विष्णुप्रिया आनन्द उर, जानि सकै अस कौन।
मणि फणि मीनहिं उदधि ज्यूँ, मन प्रमोद सुख भौन।।
सखी सहेली संग की, हँसि हँसि करैं विनोद।
अब प्रिया लक्ष्मी भई, कहि कहि ठानैं मोद।।
सुनि सुनि विष्णुप्रिया अति, सकुचै लज्जा पाय।
उठि भाजै सखी संग सों, बैठै निरजन जाय।।

पद

आज फली मनसा चहुँ ओर।
रंक दीन घर नवनिधि मानौ, आई आप बरजोर।।
बहुत दिनन महँ हँसी शची माँ, गये दुक्ख सब छोड़।
मधुर युगल छवि भाव मगन मन, पोंछत नैनन कोर।।
सखा भक्त सब प्रेम प्रभु के, करत मतौ इक ठौर।
ब्याह रचाऔ अपूर्व गौर कौ, देख्यौ सुन्यौ न और।।

(प्रवेश मुकुन्द संजय, बुद्धिमन्त खान-दो चार भक्त)

समाज- **दोहा**

गौरचन्द्र प्रिय भक्त इक, नाम बुद्धिमन्त खान।
भूमि पति कायस्थ सो, सेवक धनी महान्।।
मुकुन्द संजय विप्र इक, सेवक पुनि धनवान।
कलह मधुर मच्यौ दुहुन में, सुनहु प्रेम सुजान।।

मुकुन्द-क्यों भैया बुद्धिमन्त! हमारे गौरचन्द्र के दूसरे विवाह की बात साँची है?

बुद्धिमन्त-बिल्कुल साँची है। बड़े भाग्य सों यह अवसर आयौ है।

मुकुन्द-तौ कहा तुम्हारे ही भाग्य सों, हमारे भाग्य सों नहीं। देखो बुद्धिमन्त! तुम गौरसुन्दर की सेवा में सबते अगारी कूद परौ हौ। अरे! हमारे ताँईं हू कछु छोड़ दियौ करौ-छोटी-सी सेवा ही सही! मोटी सेवा तुम मोटेन के लिये ही सही।

बुद्धि०-छोटी-मोटी की बात नहीं। मुख्य बात तो यह है कि यह ब्याह अपूर्व हौनौ चाहिये-जैसौ काहू ने देख्यौ-सुन्यौ न होय। यह भार मेरे जिम्मे रह्यो, मैं अपने गौरचाँद के ब्याह में अपनौ सबरौ धन लुटाय दऊँगो-समस्त खर्च मैं उठाऊँगो।

मुकुन्द-और हम मक्खी मार्‌यौ करेंगे वाह! गौरसुन्दर एक तुम्हारे ही हैं और तुम ही अकेले उनके भक्त हौ-भक्त के अवतार हौ!

बुद्धि०-और तुम नहीं हौ भक्त के अवतार। पहले ब्याह में तुमने ही तौ खर्चा उठायौ हो तौ अबकै मैं क्यों न उठाऊँ। यामें भक्त-अभक्त की बात ही कहा-यह तौ अपनी-अपनी पारी की बात है। मैं अपनी पारी काहू कूँ नहीं दऊँगो।

मुकुन्द-सुनौ! मैं ब्राह्मण हूँ। मेरौ अधिकार पहले, पीछे औरन कौ, समझे!

बुद्धि०-समझौ तुम जो दूसरे की पारी छीननौ चाहौ हौ। अधिकार के नाम पै अन्याय करनौ चाहौ हौ। तुम ब्राह्मण भये तौ कहा, मैं कायस्थ हूँ-मोसों नहीं जीत सकौगे-कायदा कानून में।

मुकुन्द-रहन दैओ अपनौ कायदा-कानून। हुकुम ब्राह्मण कौ चलैगो-मैं करूँगो सब तैयारी।

एक भक्त-अरे! काहे कूँ बात बढ़ाय रहे हौ! समझौता न कर लेऔ! ऐसे कब तक मैं-मैं करते रहौगे।

दूसरा भक्त-जब तक पैसा है तब तक। भैया! यह पैसा की गर्मी बक्-बक् कर रही है। याकौ नाम है सेवकाई की लड़ाई! प्रभु की सेवा नहीं, मेरी सेवा, तेरी सेवा, छोटी सेवा, बड़ी सेवा, बाहरी सेवा। सेवा के भीतर अहम् अहम् अहम्, रुद्रदेव को डम् डम्-डमरू बाज रह्यौ है।

मुकुन्द-बस करौ उपदेशक जी महाराज! सेवा के लिए तौ न गाँठ खुलै है और न हाथ पाँव ही हिलैं हैं। बस जब देखौ तब जबान ही चलै है। उपदेशक जी! यदि या घोड़ी पै नेक लगाम राख्यौ करौगे तो यह हू एक बहुत बड़ी सेवा होयगी! अच्छौ भैया बुद्धिमन्त आधौ खर्च तुम्हारौ और आधौ मेरौ! क्यों अब तौ प्रसन्न हौ न?

बुद्धि०-प्रसन्न तो नहीं हूँ पर मान लऊँ हूँ। चलौ ऐसौ ही सही भैयाऔ! मैं अबके अपने गौरसुन्दर को ब्याह एक साधारण ब्राह्मण के ब्याह जैसौ नहीं, एक राजकुमार कौ जैसौ ब्याह करूँगो!

मुकुन्द-फिर वही मैं करूँगो! और मैं कहाँ गयौ?

दूसरो भक्त-पैसा की भट्टी में गयौ और कहाँ! यह 'मैं' मरनौ बड़ौ मुश्किल है। अरे मैं और मैं दोनों मिलकै हम है जाऔ हम और झगड़ा खतम!

दोहा

मैं मैं मैं बकरी करै, गर्दन काटी जाय।
तू तू तू मैना करै, बैठी मेवा खाय।।

यासों दोनों जने मिलकै तैयारी करौ। जैसौ दूल्हा वैसी ही बरात, वैसौ ही सिंगार साज-बाज, दान-मान, नाच-गान, खान-पान सब कछु हौनौ चाहिये।

बुद्धि०-पदार्थ-पकवान मैं बनवाऊँगो।

मुकुन्द-बरात मैं सजवाऊँगो।

बुद्धि०-नेग मैं बाँटूँगो!

मुकुन्द-बढ़ार मैं जिमाऊँगो।

(प्रस्थान)

भक्त- **पद-पीलू 3**

यह सेवा की धार करार।
सेवा सों मेवा कोई पावै, डूबैं बहुत मझधार।।

धन सों करौ चाहे तन सों करौ, मन कौ 'प्रेम' सम्हार
मन भर खीर में कन भर काँजी, देत सबै रस फार।।

(प्रस्थान)

समाज- **दोहा**

अब सुनहु कौतुक इक, विश्वम्भर प्रभु कीन।
सुलभ नहीं दुर्लभ हरि, प्रीति रीति परवीन।।

(प्रवेश पं० निमाई एवं छात्र मंडली)

चौपाई

छात्रन संग चले जात निमाई। काशीनाथ मिले मग माई।।

निमाई-मिश्रा जी! नमस्कार! कहाँ भागे जाय रहे हौ।

काशी०-और कहाँ? वहीं जाय रह्यौ हूँ।

निमाई-वहीं कहाँ?

काशी०-वहीं! समझ लेऔ।

निमाई-मैं कहा अन्तर्यामी हूँ जो समझ लऊँ।

काशी०-अन्तर्यामी कहा। एक मूर्ख हू समझ सकै है। फिर तुम तौ महापंडित हौ! वही!!

निमाई-कछु मुख तेहू तो बताऔ कहाँ?

काशी०-तो सुन लेऔ। वहीं, तुम्हारे ससुर के घर।

निमाई-ससुर कौन?

काशी०-तुम्हारी दुल्हिन कौ बाप राजपंडित सनातन मिश्र और कौन! अधिवास कौ मुहुर्त लैके जाय रह्यौ हूँ वहीं! समझे?

निमाई-कछु नहीं समझ्यौ। मोकूँ तौ या बात की कछुई खबर नहीं।

काशी०-हैं! यह कहा कहौ हौ! तुमकूँ अपने ब्याह की खबर नहीं?

निमाई-(सिर हिलाते हुये) ना-ना-ना!

काशी०-हैं! यह कहा आश्चर्य! 'जार बिये तार खबर न ई। पाइ पड़ौसीर घूम नाई।' तुम्हारी माँ ने ही तो यह सम्बन्ध मेरे द्वारा निश्चय कियौ है। नगर भर में याकी चर्चा है और जाकौ ब्याह वाकूँ खबर ही नहीं। यह कैसे सम्भव है? कहा शची माँ ने तुमसों नहीं पूछी?

निमाई-(सिर हिला) ना। (प्रस्थान)

समाज- **चौपाई**

उत्तर और कछु नहीं दीने।
'ना' कहि हँसि प्रभु गमन जु कीने।।
काशीनाथ जिय शंका भारी।
यह कहा धोकौ भयो मुरारी।।

काशी०-(स्वगत) यह हाँसी है कै सांची है कहा-आश्चर्य है? इनकी इच्छा के बिना माता स्वतन्त्र कर ही कहा सकै है। फिर इनकूँ खबर कैसे नहीं और जो यदि नहीं है, फिर ब्याह कैसो? यह 'ना' ना ही है कै 'हाँ' है-कैसे पतौ परै। कहाँ तौ मैं अधिवास कौ मुहूर्त बतायवे जाय रह्यौ हो और कहाँ अब ब्याह की ही नाहीं कर दैनी परैगी। मेरौ तौ गरौ कट जायगौ। परन्तु बात छिपायवे की हू तो नहीं है! अब कहा करूँ? कैसे सम्हारूँ? बड़ी समस्या आय परी! दुर्गा! मधुसूदन! सहायता करौ। (प्रस्थान)

समाज- **चौपाई**

राजपंडित मिश्र घर जाई। काशीनाथ सब कही बनाई।।

(प्रवेश सनातन मिश्र एवं काशीनाथ)

सनातन-नमस्कार मिश्राजी! नमस्कार!

काशी०-(धीरे-धीरे) नमस्कार! नमस्कार!

सनातन-ऐसे ढीले-ढाले क्यों बोल रहे हौ? कुशल तो है न?

काशी०-हाँ सब कृपा है!

सनातन-तौ मुहूर्त में कछु विलम्ब है कहा?

काशी०-ना! विलम्ब तौ कछु नहीं है।

सनातन-तो फिर अधिवास कब कौ रह्यौ?

काशी०-वैसे तौ मुहूर्त कल कौ ही निकस्यौ है परन्तु।

सनातन-फिर परन्तु कैसी?

काशी०-(अटकते हुये) नहीं-वैसे तौ....कछु बाधाहु नहीं है और....है हू कछु! परन्तु कोई बात नहीं परन्तु।

सनातन-स्पष्ट कहौ न! बात कहा है?

काशी०–अबही मारग में निमाई पंडित मिले।

सनातन–कुशल–क्षेम तौ है न?

काशी०–हाँ सो तौ सब कुशल है परन्तु....कछु....ऐसी ही है।

काशी०–ब्याह सों उदासीन जैसे लगै हैं। कहैं हैं कि मोकूँ तौ ब्याह की कछु खबर ही नहीं है!

सनातन–यह कैसी बात? कहा शची माँ ने उनसों पूछे बिना ही सम्बन्ध भेज्यौ हो?

काशी०–पतौ नहीं! मैं माँ सों जायकै पूछू हूँ। आप कोई चिन्ता न करैं। भगवान् सब भलौ ही करैंगे। अवश्य कहीं कोई भूल–भ्रांति है गई है सौ सब दूर है जायगी! पंडित निमाई बड़े मातृ–भक्त हैं। वे माता की आज्ञा कबहू नहीं टार सकैं हैं। यह कोई समझ की ही गड़बड़ी है। सो मैं सब सुलझाय कै शीघ्र ही खबर लाऊँ हूँ। आप चिन्ता तजि श्रीहरि स्मरण करैं अच्छौ नमस्कार! दुर्गा! मधुसूदन।

(प्रस्थान)

सनातन–हे दयालु विश्वम्भर! ऐसौ मैंने तुम्हारौ कहा अपराध कियौ है जो तुमने मोकूँ यह दण्ड दियौ। मैंने तौ ब्याह की सामग्री–वस्त्र–अलंकारादि सब पूरी तैयारी कर लीनी। और शीघ्र ही तुम्हारे चरण–धोयवे कौ सुख–स्वप्न देख रह्यौ हो। परन्तु हाय! तुमने क्षणभर में सब निष्फल कर दियौ। हे दीनबन्धो! जो यदि आप हमकूँ स्वीकार नहीं करौगे तौ मैं अवश्य ही प्राण–त्याग कर दऊँगो।

समाज– **बंगला**

फुक्कार कोरिया काँदे बोलिया हरि हरि
तोमा ना पाइया विश्वम्भर आमि मोरी,
आमि तो किछुइ अपराध ना कोरि।
अकारणो आमाय दंडिला गौर हरि।।

सनातन– **शंकरा–दादरा**

भक्तों को दुख से सदा ही उबारा
दयामय प्रभो हे दयामय प्रभो।
पड़े दुख में हम हैं दास तुम्हारे,
हमारी भी विपदा हटाओ प्रभो।।

भीष्मक जनक जामवन्त की जैसे,
कन्या को तुमने अपनाया प्रभो।
हमने भी तुमको सौंपी है कन्या,
फिर क्यों नहीं इसको अपनाओ प्रभो।।
उदारता अपनी दिखाओ प्रभो,
दयामय प्रभो हे दयामय प्रभो।।2
पत्र पुष्प भी भक्तों की लेता हूँ मैं,
यही तो अर्जुन से कहा था प्रभो।
रो रो के कन्या ये दासी चढ़ाता,
फिर क्यों नहीं इसको अपनाओ प्रभो।।
वचन सत्य करके दिखाओ प्रभो,
दयामय प्रभो हे दयामय प्रभो।।3
सुता ही नहीं हम सब ही तिहारे,
चरणों में बिक ही चुके हैं प्रभो।
अब 'प्रेम' सुदृष्टि दया करके फेरो,
जोरी जुगल अब लखाओ प्रभो।।
मरते को अमृत पिलाओ प्रभो,
दयामय प्रभो हे दयामय प्रभो।।4

समाज–

सोरठा

यह दारुण समाचार, भनक परी प्रिया श्रवन महँ।
कुसुमलता सुकुमार, कुटिल कुठार छेद्यौ मनौ।।
उठैं जु दुक्ख तरंग, मृदुल हृदय विदीरत अति।
सुख सपनौ भयौ भंग, पंगु भई तन मन गति।।

विहाग–झप० (दृश्यात्मक)

हाय हाय विष्णुप्रिया मरम व्यथा सहे,
कहत ना बनै, सेवति तन मन दहै।।1
बिजन बैठी विकल लिखति धरनि तल,
कौन की सुध कर नैन युगल बहै।।2
कबहू सेज दुरति अंग ना सम्हारत,
सुन्दर वदन शोभा छिन छिन रंग नये।।3
कबहूँ सेत अरुन भावमय मुख बरन,
छिन छिन अर्घ्य 'प्रेम', अँखियाँ दै रहै।।4

विष्णुप्रिया- **झिंझोटी कल्यान केहरवा**

अब सुध लीजौ मेरी नाथ, मैं तो दासी जनम जनम की।।
जब सों मोकूँ दरसन दीन्हे, गंगातीर सखन संग लीन्हे।
मूरति गई समाय हिय में, देवाराध्य परम की।।
नाम सुनत मेरौ हिय भरि आवै, गुनन सुनत मेरे श्रवन सिरावै
मन मन करहुँ प्रनाम, देऔ सेवा पद कमलन की।।
मनि बिन फणि ज्यों जल बिनु मीन।
तैसे मो जीवन तुम आधीन।
होन चहै मम प्रान 'प्रेम' भ्रमरी पद कमलन की।।

समाज- **दोहा**

चाची विधुमुखी नाम सों, आय गई तेहि भौन।
बूझत आदर सनेह सों, बोलति नहीं यह मौन।।

विधुमुखी-बेटी! आज अकेली कैसे बैठी है। कांचना, अमिता सखी सब कहाँ चली गईं? यह मुख तेरौ कैसे कुम्हलाय रह्यौ है। काहू ने कहा कछु कह दीनी(ठोड़ी पकड़ मुख उठाती हैं) तू तौ रोय रही है! कहा बात है? मैया ने कछु कही कहा?

समाज- **चौपाई**

दुख सरिता अधिक उमगाई। आदर नेह समीप जु पाई।।
उठिकै भीतर गईं पलाई। विधुमुखी सरल समझ न पाई।।

विधु०-चलूँ! दीन सों पूछूँ। उदीनै कछु धमकाय दियौ होयगौ। किन्तु त्रुटि-दोष तौ याके स्वभाव में है ही नहीं। तौ फिर बात कहा है? आज ये इतनी उदास क्यों है। यह तौ मोकूँ अपने पुत्र सों अधिक प्यारी लगै है।

(प्रस्थान)

(दृश्य-पं० निमाई सखा मंडली में बैठे हैं)

समाज- **चौपाई**

भक्त वच्छल प्रभु गौराराई। जानि भक्त दुख धरी करुनाई।।
तुरत लियौ इक सखा बुलाई। कहत वचन तासों समुझाई।।

सखा-कैसे स्मरण कियौ प्रभो?

महा०-एक आवश्यक कार्य है भैया! तुम राजपंडित सनातन मिश्र के घर अब ही चले जाऔ और उनसों मेरी यह बात समझाय कै कह देऔ कि-

पद

मैं माता के आधीन सदा, तुम दुख चिन्ता सब दूर करौ।
वह तौ हँसी कुछ सूझी थी, जब बात मिश्र ने बूझी थी,
मत वाकौ कछु हृदय में धरौ, तुम०।।
मैं जो कहौं सो साँची कहौं, नहीं झूठी कही नहीं आगे कहौं
यह छेड़ में रस है विशेष भरौ, तुम०।।
यह सब तुम कहियौ समुझाई, पै नाम न लीजौ मेरौ भाई
लाज राख काज 'प्रेम' करौ, तुम०।।
समझ गये ना कहा कहनौ और कैसे कहनौ है-

सखा-समझ गयौ प्रभो! मैं सब बात सजाय-गुजाय के अच्छी तरह से कह दऊँगो परन्तु ब्याह की मिठाई और बधाई पूरी लऊँगो।

(मारग में काशीनाथ मिश्रा एवं प्रभु के सखा का विनोद)

समाज-

सखा राजपंडित ढिंग आयौ। समाचार कहि दुक्ख नसायौ।।
धन्य प्रभु तुव छल चतुराई। पद पद लेवहु जन परचाई।।
दुक्ख देऔ पुनि गरे लगाऔ। दुख कौ फल सुखहि बताऔ।।

दोहा

सुख कौ मूल है दुक्ख ही, दुक्ख सहे सुख पाय।
दुक्ख देखि भूलै ना हरि, सो निश्चय हरि भाय।।
पुनि सनातन मिश्र भौन, हूलू धुनि गई छाय।
ब्याह बात फैली तुरत, सुनैं सोई हरषाय।।

नाई-(प्रवेश) सुनौ नदियावासी विप्रो! बड़ौ ही आनन्द समाचार है। कल शुभ दिवस में हमारे पंडितराज दिग्विजयी-विजयी गौरसुन्दर निमाई चाँद के विवाह कौ अधिवास है। अतएव आप सब विप्र मंडली उनके भवन में पधार कै शुभाशीश दैवे की कृपा करैं। जय हो गौरसुन्दर की जय। निमाई चाँद की जय। हरि बोल!

ಌ❖ಌ

गौर-विवाह-अधिवास

समाज- **चौपाई**

नदिया आज महानन्द प्रकास।
निमाइ चाँद कौ शुभ अधिवास।।
सभामध्य विश्वम्भर द्विजमणि।
लाजत ण्राजत काम चन्द्रमणि।।
गन्ध माल्य ताम्बूल-प्रदान।
आवत तौ जन पावत मान।।

(अनुकरण) **दोहा**

लोक रीति अनुसरि तहाँ, प्रथमहिं धोबी आय।
पात्र मृत्तिका धर्यौं धरन, चिह्न स्वस्ति बनाय।।
पग धरि तापर चलै निमाई। दई असीस वचन मन भाई।।
पुनि आगे नाई इक आयौ। मंगल मुकुर सुमुख दिखरायौ।।
दै असीस सन्तोषे नाई। नारी मंगल गावति आईं।।

(सुहागिनी नारियाँ अधिवास-सामग्री लिये)

नारियाँ- **गीत**

आज चाँद निमाई कौ शुभ अधिवास
साजौ डाली गावौ गीत हेली।।1।।
धान दूब व सिंदूर लावौ, फूल माल तमोल रचावौ।
थाल मंगल रुचि सों सजावौ, धूप दीप आरति हेली आज०
घट गंगाजल भरि लावौ, तामें कर्पूर सुगन्ध मिलावौ।
अंग तेल हरदी लगावौ, करौ मंगल रीति हेली, आज०।।
करौ उबटनौ गात न्हावौ, पीतपट सुरंग धरावौ।
काढ़ि केश लै कुसुम सजाऔ, सेत पीत बहु हेली, आज०।।
घृत दीप की आरती वारौ, गौरी गंगा ढिंग अचरा पसारौ
चिरजीवै शची कौ दुलारौ, 'प्रेम' नित्य नित्य हेली।।

(दृश्य-महाप्रभु चौकी पर विराजमान। आचार्य चन्द्र-शेखर मौसा-थाल में पान-सुपारी-माला। ब्राह्मण आ आकर तिलक करते-आशीर्वाद देते हैं)

समाज-

विप्र वृन्द बहु आवहिं जावहिं। करैं तिलक मंगल बहु गावहिं।।
आचार्य सबनहिं माल धरावहिं। अरपहिं पान तमोल सुहावहिं
फिरि फिर विप्र कोई आवहिं। लै लै जावहिं तोष न पावहिं।।

विप्र 1-वाह रे! हम निस्पृही ब्राह्मण। पान सुपारी पै ही हमारी नीयत बिगर रही है। थाली-लोटा, धोती-अंगोछा पै तो मार-पीट है जाती।

विप्र 2-अरे! विवेक-विचार तौ घर में कर लीजौ। अबई तौ लैते जाऔ, खाते-चबाते, पहनते जाऔ।

समाज- **चौपाई**

देखि देखि मन प्रभु मुसक्यावैं। निज जन टेरि सुवचन सुनावैं।।

महा०- **बंगला**

सभारे ताम्बूल माल देह तीन बार।
चिन्ता नाहीं व्यय कोरो जे इच्छा जाहार।।

(चै०मं०)

मौसाजी! जोई आवै उन सबकूँ पान तथा माला तीन-तीन बार देऔ। कोई चिन्ता नहीं खूब खर्च करौ।

समाज- **चौपाई**

तीन तीन बार जब पाये छलहिं छांड़ि हिया हरषाये।।
विप्र प्रिय प्रभु दीनदयाला। भले बुरे सबके प्रतिपाला।।

विप्र 1-देख्यौ भैयाऔ! ये हमारे गौरसुन्दर कितने बड़े ब्राह्मण भक्त हैं। हम जितने लोभी हैं, यह उतने ही उदार हैं।

समाज- **दोहा**

बार बार लै लै सबै, जै जै बलि बलि जायँ।
ऐसौ दान व मान हम, देख्यौ सुन्यौ जु नाय।।

विप्र-

ब्याह घने धनिन के देखे। ऐसे दान कहूँ नहीं देखे।।
ना जानैं लै गये जु कितने। भूमि पर्यौं देखौ है उतने।।
हमरे घर कहुँ जो ये होवैं। पाँच सात अधिवास न होवैं।।

❧❖❧

गौर-विष्णुप्रिया-विवाह लीला (उत्तरार्द्ध)

समाज- **चौपाई**

सकल जनन चित महा हुलासा।
सब कहैं धन्य धन्य अधिवासा।।

(अनुकरण)

मिश्र सनातन हू तहँ आये। अधिवास वस्तु सब लाये।।
संग विप्र बन्धुवर लीने। बाजत बाजे गीत नवीने।।
विधि सौ चन्दन माल चढ़ाये। पान सुपारी परस कराये।।
लै प्रसाद कन्या के काजा। गये मिश्र घर सहित समाजा

कन्या-गृह-अधिवास

निज गृह जाय कन्या अधिवास। किये मिश्र उर अति उल्लास।।
विप्र प्रवर सबै जुरि आये। चन्दन माल पान सु पाये।।
विष्णुप्रिया आँगने पग धारीं। सुन्दरताई सीम महारी।।
सभा मध्य सिंहासन ऊपर। राजति हरसावति नारी नर।।
कुल ललना हूलु ध्वनि करहीं। धान दूब लै शीश पै धरहीं।।
माल धराय सुगन्ध धरावहिं। महामाया सब कहँ परितोषहिं।।
या विधि दुहुँ ओर अधिवास। छाय रह्यौ चहुँ ओर उल्लास।।
शची प्रान मन मोद हिलोरें। आनन्द कोलाहल चहुँ ओरें।।

दोहा

रजनी बीती सुखमई, भयौ सुमंगल भोर।
गंगा न्हाय गृह आयकै, पूजैं विष्णु गौर।।

गौर-उबटन

दोहा

उज्ज्वल मणि सिंहासन, दीपत मणि प्रकास।
बैठे द्विजमणि गौर प्रभु, रूप लावन्य छबि रास।।

चौपाई

चहुँ ओर सुहागिनी नारी। दिव्य साज पट भूषन धारी।।
भाँति भाँति बहु चौक पुराये। उबटन सौंज सकल सजाये।।
रमनी कुल उबटन तन लागीं। मानत आज आपन बड़भागी।।
उबटनौ मनौ अंगराग सुहाई। नतग्रीवा बैठे हरि राई।।
हस्त कोउ कोउ चरण कपोला। पृष्ठभाग कोऊ भुज लोला।।
निज निज रुचि प्रति अंगन उबटहिं।
मनवांछित सुख उर उपभोगहिं।।
तेल सुवासित कोऊ डारहिं। कुन्तल कारे केश सम्हारहिं।।
मची परस्पर होड़ा-होड़ी। हँसैं परस्पर कहैं निगोड़ी।।
हट पीछे कहि कहिके ठेलैं। वह वाकूँ वह वाकूँ पेलैं।।
रस रिस भरि भरि दैं मृदुगारी। आई बड़ी रंगीली दारी।।
कोई परस मात्र करि पावैं। पुलकि गात इकटक रहि जावैं।।

दोहा

वस्तु दिव्य इक ओर पुनि, दूजी ओर सुभाव।
दिव्य प्रेम आनन्द तहँ, वनितन उर सरसाव।।

चौपाई

समय जात न कोई जानैं। अभिषेक बेला नियराने।।
गंगा जल कर्पूर मिलाये। लै लै कलसन शीश ढुराये।।
मची परस्पर ठेलम ठेल। सहज रंग रस रेलम रेल।।
नमित नैन बैठे द्विजराई। भूलि गये सब चंचलताई।।
करि स्नान सुगात अंगोछे। दमकत तन रविकर हू ओछे।।
न्हाय प्रभु बाहर पग धारे। सखा रुचि सों वदन सिंगारे।।
नारिन दान मान बहु पाये। उमगि उमगि आसीस सुनाये।।
दुलहा कौ परसादी-उबटन। दुल्हिन मांहिं पठायौ तच्छन।।
दुहूँ ओर उबटन भयौ जु पूरन। आनन्द प्रेम सकल मन पूरन

दोहा

सोई हरद औ तेल शची, कन्या उबटन काज।
पठये ब्राह्मण हाथ दै, गृह सनातन राज।।
करी कुलवधू उबटना, विष्णुप्रिया श्रीअंग।
हरद तेल प्रसाद सों, उझलि पर्यौ तन रंग।।

चौपाई

दुहुँ ओर भयौ उबटनौ चार। ता पीछे भयौ महा ज्यौनार।।
नदियावासी बहु जुरि आये। बाल वृद्ध नर नारी आये।।
सहस सहस आवैं अरु जावैं। बैठे पावैं लै लै जावैं।।
चर्ब्य चोष्य पेय अपारा। को जानैं को भरै भंडारा।।
कौने वस्तु संग्रह कीनी। कौने परोसि परोसि दीनी।।
कौन करी रसोई नाना। जानै ना शची ना कोउ आना।।
कोउ काहु की सुध नहीं लेवा। आपहि आप होत सब सेवा।।
अचरज कहा जहाँ वर विश्वम्भर। दुलहिन विष्णुप्रिया लक्ष्मीवर
दान मान बहु ब्राह्मण पाये। जय जय गाये असीस बरसाये।।
पहर तीसरौ उदयौ आई। वर सिंगार अवसर सुखदाई।।
सखा सकल हुलसत जुरि आये। करि सिंगार जु बरना बजाये
चन्दन लेप किये सब अंगा। बिच बिच रेखा मृगमद गन्धा।।
अर्धचन्द्र तिलक वरमाला। बिन्दु मृगमद मध्य रसाला।।
कंचन मुकुट सोहे सिर ऊपर। माल सुगन्धित पूर्ण कलेवर।।
दिव्य पीतपट सूक्ष्य विराजे। मणि रत्न भूषन अंग भ्राजे।।
कुंडल कंचन श्रुति झलकौहें। बाजुबन्द नव रत्नन सोहें।।
नखन चन्द्रिका झलमल झलकें। मुद्रिका अंगुरिन मध्य ललकें
तन आभा दम्दम् दमकौ है। ठहरै नैन तहाँ अस को है।।
नर नारी सब रहै लुभाई। अचरज दूलह बनैं निमाई।।

कवित्त

सखा मनभामते सब कहैं मन भामतोई
भामते को भेष मनभामतो बनायौ है।
चारु चन्द्रभाल पै चन्दन कौ चन्द सोहै
मध्य मृगमद बिन्दु श्याम झलकायौ है।
छोड़ द्वै चार लटन अलक सम्हारे और
रत्नन मुकुट मोर, सेहरा भुलायौ है।
कुंडल किलोल करैं, कपोलन लोल 'प्रेम'
चोर चित तोलबे कूँ, बुलाक लटकायौ है।

कवित्त

कनक नूपुर पग किंकिणी जटित मणि
कंकण अंगद-हेम, रतन खचायौ है।

चीन पट पीताम्बर दामिनी लपेटि तन
झीनौ जरीदार कटि, पटुका कसायौ है।
कोरदार अँखियन, कजरा करारे भरे
इतर फुलेल तन, भौन महकायौ है।
करपद मेंहदी अधर पान बीरा 'प्रेम'
दांये हाथ कंकण दै, बनरा बनायौ है।।

नारियाँ– **बरना–गीत**

छबिलौ मेरा बरना ब्याहन जाय।
मेरे बरना के सिर मुकुट विराजै, मुकुट विराजै
चितवन चित्त चुराय।। मेरो०
मेरे बरना के गले मोतियन हार–2 चूमत चरनन जाय।
मेरे बरना के होंठ पान की लाली–2 बोलत फूल झराय।।
मेरौ बरना मानौ कमल मधुमय, मधुकर रहे मंडराय।
मेरे बरना के लागी चटपटी, बरनी कूँ ललचाय।।
मेरौ बरना छवि रूप पिटारी, कोटिन काम लजाय।
मेरौ बरना देव गौर रंगीलौ, प्रेम रंग बरसाय।।

समाज– **दोहा**

पहर एक बासर रह्यौ, कह्यौ विप्र पुकार।
करौ बरात चढ़ाई अब, लाऔ तनक न बार।।
दै परिक्रमा मात की, पदरज शीश चढ़ाय।
विप्रन प्रति प्रनाम करि, डोला चढ़े निमाइ।।
डोला चढ़ि दूलह चलै, हूलु धुनि मची घोर।
चहुँ ओर जयकार धुनि, जय विश्वम्भर गौर।।
गोधूलि बेला समय, पहुँची जाय बरात।
आय सनातन आगवनि, इष्ट बन्धु लिये साथ।।

सोरठा

दूल्ह भरि निज अंक, सनातन ससुर उतारहिं।
परसत पुलकित अंग, बिन्दु प्रेम जल वारहिं।।

चौपाई

लै वरहिं वर मंडप आये। वर आसन वर विधि पधराये।।
सुमन वृष्टि नर नारी करहिं। देखत दूल्हे नैन न टरहिं।।

मण्डप-शोभा

छन्द

आयौ वरना चित्त हरना, मध्य मंडप सोहना।
होत हुलुधुनि बरसें सुमननि, हरसें लखि मनमोहना।।
कदली खम्भ कलस मंगल, बार बन्दन झूलहिं।
झालर जरीदार मोती हार, कोर चाँदनी चूमहिं।।
माल लरियाँ फूल फुलियाँ, झब्बा झूमि झूमियाँ।।
अगुरु धूप इतर गन्ध, कहक झीनी भीनियाँ।।
कनस पानस बाती घृत रस, दीपावली दीपति भली।
कनक उज्ज्वल दूल्ह झलमल, दीप शोभा दलमली।।
सखा सुमित्र बन्धु छात्र, पार्श्व गुरुजन राजहीं।
देव गन्धर्व सिद्ध संगत मनहुँ इन्द्र बिराजहीं।।
निमाई चंचल बैठ निश्चल छल बल हारियाँ।
अति स्वतन्त्र प्रेमतन्त्र मन्त्र मुग्ध निहारियाँ।।
चोरी करत जु सवन के तिनके भयी जो चोरि।
प्रेम फन्द में पड़ गये चलै न कुछ बस गौर।।

चौपाई

मिश्र घरनी मातृगन लीन्हे। धान दूब मस्तक पै दीन्हे।।
दै असीस प्रदच्छिना करहीं। सप्तदीप घृत आरति करहीं।।
कौड़ी खील सुमन बरसाये। लोकाचार किये मन भाये।
भीतर विष्णुप्रिया विराजहिं। सखी सहेली सुन्दरी साजहिं।।
करत बहुविध हास परिहासा। विष्णुप्रिया प्रिय दर्शन आसा।।

दोहा

शुभ दर्शन बेला समझि, कह्यौ विप्र सुनाय।
पधराऔ कन्याहिं अब, ब्याह मंडप लाय।।

चौपाई

गहि आसन पै कन्याहि लाये। छबि निहार नर नारी सिहाये।।
आनन छवि सकै को बरनी। विष्णुप्रिया विष्णु मन हरनी।।
कोई कहैं ये लक्ष्मी नारायन। हरपार्वती कोई मन भावन।।
युगल रूप महालावन्य सागर। छवि तरंगन बोरत नारी नर।।

कवित्त

कोई कहैं योग्य वर, विष्णुप्रिया के यह ही
दोऊ चन्दा चाँदनी, धूप व तमारी हैं।
कनक पूतरी दोऊ परतर नहिं कोऊ
छवि रूप उनिहार, विश्व मनोहारी हैं।
कोउ कहैं विधि फेर, सीधौ भयौ आज जो पै
नयन पाहुने आये, व्रज के विहारी हैं।
नवद्वीपवासी हम सब गोपी ग्वाल देव
येहू वे ही प्रेम व्रज के प्यारे प्यारी हैं।

कवित्त

कहैं केती भाग्यवती, देखौ विष्णुप्रिया सती
सेय रमा पारवती, पति ऐसौ पायौ है।
कहै कोई रति काम, गौरीहर कोई वाम
कोई रुक्मिनी श्याम, कहि सराह्यौ है।
कहैं कोई शची इन्द्र, राघवेन्द्र सिया कहैं
लक्ष्मीनारायण सम, कोई मनभायौ है।
जैसी जाकी प्रेम गति, कहैं निज निज मति
छवि युगल रूप नैन, सभी कौ लुभायौ है

दोहा

प्रेममयी विष्णुप्रिया, गौर प्रेम अवतार।
चिरजीवौ जोरी युगल, जाय प्रेम बलिहार।।

बंगला

तव मध्य अन्तः पट कोरि लोकाचार।
सप्त प्रदक्षिणा कोराइलेन कन्यार।।

(चै० भा०)

(कन्या पक्ष वाले कन्या को आसन सहित उठा दूल्हा के चारों तरफ घुमाकर सामने बैठा देते हैं)

चौपाई

सात बार फेरा जु कराई। द्वै जन दुल्हिन पकरि घुमाई।।
पुनि शुभ दृष्टि अवसर आयो। कौतुक हेतु सबन मन भायो।।

(कौतुक विनोद-आमने सामने बैठे वर कन्या को आसन समेत अपने-अपने पक्ष वाले उठाते हैं)

बंगला

उच्च कोरि वर कन्या तोले हर्ष सने।
क्षणे जिने प्रभु गणे, क्षणे लक्ष्मी गणे।।

(चै० भा०)

चौपाई

दूल्हा ऊँचौ हमारौ सोहै। कन्या हमारी ऊँची मोहै।।
ऊँचौ कौन होड़ परी भारी। पकरि उठावैं हास महारी।।
दूल्हौ ठाड़ौ भूतल ही पर। दुल्हिन पग पीड़ा अति सुन्दर।।
द्वै द्वै पग पुनि उचकि उठावैं। दूल्हा सों करि बड़ौ दिखावैं।।
मच्यौ सरस हास परिहासा। जन जन उर आनन्द हुलासा।।
शुभ दर्शन की आयी बेला। चार नयन भये जु मेला।।

(वर कन्या को आने सामने खड़ा कर)

दोहा

वर कन्या के शीश पै, झीनौ वस्त्र ओढ़ाय।
चतुर नयन शुभ मिलन हित, दिये सब नैन बचाय।।

चौपाई

दुहुँ दुहुँन कूँ लखि पहिचाने। प्रीति पुरातन हित मुसक्याने।।

छन्द

नयन नयन मिलत चीन्हे, दोउ दोउन के प्राणधन।
नयन नयन नवल कीन्हे, गुप्त प्रीति पुरातन।।
नयन नयन वचन दीन्हे, हम अनन्य अनन्य धन।
नयन नयन सबल कीन्हे, अखण्ड 'प्रेम' बन्धन।।

दोहा

नयन मिलन रस विमल अति, महामंगल मुदखान।
नयन मूँद पेखै कोई, पावै प्रेम महान।।

परस्पर माल्यार्पण

चौपाई

छिन द्वय महँ लियौ वस्त्र हटाई। सम्मुख दोऊ ठाड़े माई।।
बदलन लागे परस्पर माला। जन बरसावत सुमनन माला।।
प्रथमहिं लै विष्णुप्रिया माला। प्रिय चरनन पै अरपी माला।।
उन उठाय प्रिया उर डारी। जय जयकार करैं नर नारी।।
सो माला दूजी कर धारी। इष्टदेव के कंठहिं डारी।।

छन्द

माल सुमन धराय मानौ बाल सुमन जनायौ है।
अपनौ तन मन प्राण जीवन, गूँथि सबहि चढ़ायौ है।।
नाथ ने हू पहन माला, अपनी लै पहनाई है।
तुम हार कै मेरी भईं, मैंने हू हार पाई है।।

चौपाई

तब दोऊ फूल फूल बरसावैं। फूल फूल जन जय जय गावें।।

बंगला

दण्डेक जे सब लीला जतो होइया छे।
शत वर्ष ताहा बर्णिवे हेनो के आछे।।

(चै० भा०)

सोरठा

घड़ी एक के बीच, भई लीला सुखदाई जो।
सौ वर्ष लौं गीत, गावै अन्त न पावहिं।।

(चरण-प्रक्षालन)

सोरठा

चरन-पखारन लगन, आयौ पावन महा सुखद।
महामाया मिश्र मगन, बैठे झारी पानि लै।।

पद

धनि धनि आज की घरियाँ।
भावत मन पावन पद पंकज, धोवत आनन्द भरियाँ।।

हंस परम जाकौ ध्यान ही लावैं, शिव मन मन्दिर पूजन पावैं।
सो सम्पत्ति आज मिश्र दम्पत्ति, पुनि पुनि कर पर धरियाँ।।
जिन चरनन की धोवन सुर धुनि, त्रिभुवन मलहर पावन करनी
वेई विमल चरण कमलन ये, मलि मलि उज्ज्वल करियाँ।।
जिन चरनन ने अवध जनकपुरी, द्वारिका ब्रजरज धन्य करी।
वेई चरन आज नदियावासी, परम हरषि उन धरियाँ।।
नाम लेत जो मंगलकारी, शरन लेत जो भवदुख हारी।
धोय धोय जे पीवत प्रियके, तिन पद रज सिर धरियाँ।।

चौपाई

कन्यादान परम सुखदाई। करत राजपंडित हरषाई।।
सम्प्रदाय-विधि सबही कीनी। विष्णु प्रीति हित कन्या दीनी।।

छन्द

गिरिराज पति जिमि पशुपतिकर गिरिजा कन्या दान की।
दान की जिमि जानकी, मिथिलेश राम भानु की।।
भानु की सतभामा, सत्राजित कृष्ण वाम की।
वाम की तिमि विष्णुप्रिया, मिश्र गौरा चाँद की।।

भाँवरी-फेरा

छन्द

प्रेम गठ-बन्धन सुदृढ़ कर, होन लागी भाँवरी।
रेशमी जरी पट किनारी, और चारौं पाँवरी।।
पति सहित रति निरखि सत सत, खान लागी साँवरी।
सखी सहेली भाव भरि भरि, जायँ प्रान निछावरी।।
दीनी सप्त प्रदक्षिणा प्रिया, चाम अँग सुहाव री।
युगल जोरी बनी निहारी, शुभ असीसै गाव री।।
जीवौ जुग जुग जब लौं गंगा, यमुना धार बहाव री।
चन्द्रभानु गगन मंडल, जड़ैं जब लौं जडाव री।।
शीश शेषनाग जब लौं, धरा धरहिं धराव री।
श्रीवत्स रमाहरि वक्ष पै, तिहुँ काल नित भावरी।।
तिमि विष्णुप्रिया गौर प्रेम, जोरी नित सरसाव री।
ये भाँवरी पै भाँवरी परैं, भाँवरी रस भाँवरी।।

प्रणय-कलह

कन्या पक्ष-
जय विष्णुप्रिया देवी।
जय हमारी दुल्हिन की।

वर पक्ष-
जय विश्वम्भर देव
जय हमारे दूल्हा की

समाज-

मच्यौ तब प्रणय विवाद। कहौ बड़ पक्ष को आज।।

वर पक्ष-

वर पक्ष उठे तब बोल। नहीं काहु बातन तोल।।
कहाँ चरन कहिये कहाँ माथ। तुम धोये पग अपने हाथ।।
हाथ जोरि दियौ तुम मान। पुनि दासी कन्या करी दान
अब करिये जु कहा अनुमान। आँखिन आगे ही प्रमान।।

कन्या पक्ष-

बैठे दिग्विजयी विजयी। लेओ बूझि इनसों ही सही।।
कहौ दाता बड़ो कै मँगता। क्यूँ बनत हौ बड़े महन्ता।।
हम दया जो तुमपै कीनी। घर आये कूँ भीखहि दीनी।।
यह 'प्रेम' भीख लै जाऔ। गुन हमरे जुग जुग गाऔ।।

नारियाँ- **गारी-गीत**

हे गौर विश्वम्भर शची दुलारे, बूझत नदिया नारी जू।
संशय अपनो सुनावति तुमकूँ, देत नहीं हम गारी जू।
पुत्र पिता दोउन में कहिये, कौन सो हैं जगन्नाथ जू।
बाप के नाम पै जब तुम बोलौ, आवत नाहिन लाजा जू।
तुमसो सुन्दर भूतल नाहिन, तुम तौ इन्द्र ही आये जू।
शची इन्द्राणी पत्नी कूँ तुम, कैसे मात बनाये जू।
माया पति तुम माया कन्या, कैसे दुल्हिन बनाये जू।
द्वै द्वै नारी ब्याही तुमने, भले जु प्रेम निभाये जू।।

(सखियो! दोष इनकौ नहीं, इनके कारे रंग को है)

गीत

ये कारे हैं जु कारे। गोरी ने गौर कर डारे।।
ये बाहिर सों ही गोरे। भीतर तौ कारे के कारे।।

ये बाहिर के ही सूधे। भीतर त्रिभंगी टेड़े।।
ये रिनियाँ हैं जु रिनियाँ। याहि सों नीची अँखियाँ
ये घोष हैं व्रज के घोष। अब बिप्र बनन की हौंस।।
ये ऐसे हैं शरमीले। तेरह मास पेट में खेले।।
ये ऐसे बेशरमीले। नित नाचत नदिया डोले।।
ये चोर पुराने चोर। अबहू वही चोर के चोर।।
ये आये नहीं यहाँ ब्याहन। आये हैं नारी चुरावन।।
ये पंडित नहीं अ-नारी। यासों आये चुरावन नारी
हम गारी दै दै हारी। हम सर्वस इनपै वारी।।
ये गारी सुने जो सारे। गौर हरि के प्रेम प्यारे।।
बधाइयाँ 'प्रेम' हम जावैं सब बलिहार।।

पूर्ण-पूर्ण-

ब्याह विधि सब भई सम्पूरन। मनसा सबकी भई सम्पूरन।।
नारी गन हुलु देवहिं पूरन। शंख दुन्दुभि बाजहिं पूरन।।
सुमन देव बरसावहिं पूरन। गृह आंगन भये सब पूरन।।
विष्णुप्रिया विष्णु सों पूरन। विष्णु विष्णुप्रिया सों पूरन।।
कलि हत जीव भये सब पूरन। करुणा द्वार खुल्यो अब पूरन।।
बार बार नमो नमो पूरन। गौर विष्णुप्रिया पद पूरन।।

दोहा

विवाह शेष भोजन दोऊ, किये जु मन्दिर माँझ।
बासर सज्जा रैन पुनि, किये तियन सुख साज।।

(बंगला)

भोजन कोरिया सुख रात्रि सुमंगले।
लक्ष्मी कृष्ण एकत्र होला कुतुहले।।

(चै० भा०)

नारियाँ- कंगन-पद (लय भिन्न-भिन्न)

आऔ री सखियाँ आऔ री, हँसि हँसि सरस विलसाऔ री।
हिलि मिलि कंगना खुलाऔ री, जल कंचन थार भरि लाऔ री
गंगादास चटसार नहीं यहाँ, मुकुन्द संजय को नहीं टोल।
सूत्र न्याय-व्याकरण नहीं, जो झटपट देओगे जु बोल।।

दूध पियौ माता कौ कितनौ, आज होयगौ वाकौ तौल।
तुमहिं पुरुष हम मानेंगी जब, देऔगे कंगनाहि खोल।।
क्यूँ इतनौ अधिक लजाऔ जू, सब बन्धुन निकट बुलाऔ जु
मौसी माता बोलि पठाओ जू, नही देवी हमारी मनाओ जू
आज जान नहीं पावौगे, छल छन्द सबही बेकारी है।
तुम विश्वम्भर तौ यह हू तौ, महामाया ने फन्दा डारी है।।
तुम चट करि जाऔ छिनही में, नहीं दारभात की यारी है
छूटै न जन्म जन्मान्तर यह, गाँठ प्रेम की प्यारी है।।
ज्यों ज्यों खोलौ बँधि जाऔ जु, दिन दूने जकड़े जाऔ जू।
कल अबलान आज अजमाऔ जू, दूध पियौ जो माँकौ बताऔ जू
शक्ति पुरुण में होड़ परी है, को जीते को हारे है।
खोलत खोलत खोलि सकै ना, लाजन भीजे मारे है।।
जय विष्णुप्रिया महारानी की, जय जय सखी उचारे है।
विश्व भर में जय जय विश्वम्भर, घर में 'प्रेम' हारे हैं।।
बाजे विजय के बजाऔ री, वारि जुगल पै जाऔ री।
फूलन पै फूल बरसावौ री, इन्हें आँखिन (को) कजरा बनाऔ री

समाज– **चौपाई**

सुख रजनी छिन माँहि पलाई। आनन्द जागरन कह्यौ न जाई
कुल आचार प्रात सब कीन्हे। मध्य दिवस भोजन सुख लीन्हे।।
तीजे पहर आइ पारी विदाई। बाजे बजैं धुनि मंगल छाई।।

विदाई

सासससुर लिये माला चन्दन। करत रीति विदाई दुख मन।।
देत विदाई हिय अकुलावै। गद्गद् कंठ वैन न आवै।।
माता पिता सुता उर लावैं। सजल नैन आसीस सुनावैं।।
पति सेवा महँ तन मन दीजौ। सास चरन की सेवा कीजौ।।
दोऊ कुलहिं उज्ज्वल करियो
चिरजीवो बेटी सुहागिनी रहियो।।

विष्णुप्रिया–

रोवति कुँवरि कहति मोहिं माता। बेगि बोलि लीजौ हे ताता
जानि पराई भूलि ना जइयौ। जाई तुम्हारी सुध कभु करियौ

समाज–

अस कहि बार बार उर लिपटति।
नर नारिन अँखियाँ जल भीजति।।

दोहा

लघु भ्राता यादव तहाँ, रोवत लखि सुकुमारि।
आँसू पोंछति करन सों, करति बहुतहिं प्यार।।
मात पिता चरनन परी, दूलह दुलहिन दोय।
किये प्रनाम बहु भाव सों, रहै वे इकटक जोय।।

चौपाई

दूलह दुलहिन शोभा भारी। मगन नैन सकैं ना टारीं।।
छलकत छलकत आनन्द भारी। बार बार जावैं बलिहारी।।

दोहा

सुता हस्त लैकै धर्यौ, विश्वम्भर कर माँझ।
छलछल नयन सनातन, गद्‌गद् बोलहिं बात।।

सनातन–

कवित्त

धन्य है भवन मेरौ, विश्वम्भर ब्याहे जहाँ
धन्य यह माँड्यौ जहाँ जुरी यह जोरी है।
धन्य मेरौ भाग पायौ जमाई निमाई आज
धन्य मेरी सुता पायौ तुव पद ढौरी हैं।।

(हे! विश्वम्भर! मेरे पास तुमकूँ दैवे कूँ है ही कहा)

एक दीन सुता हुती, सो तौ करि दासी दीनी,
अब दऊँ कहा और, मेरी मति भोरी है।
लैऔ यह पुत्र मेरौ, हाथ गही करौ चेरौ,
तुव हाथ सौंपी 'प्रेम' याकी जीवनडोरी है।

महामाया–

आशीर्वाद

हे विष्णुप्रिया तू विष्णुप्रिया, साँची ही हरि की प्रान दुलारी।
मात पिता दोउ धन्य भये हम, ये पुरवासी सब नर नारी।।
दैं कहा सीख लाड़ लड़ी तू, तिय धर्मन की जाननहारी।
भाग सुहाग अचल विलसौ, चिरजीवौ दोऊ नदिया बिहारी।।

समाज-

बंगला

तब प्रभु नमस्कार कोरि सर्व मान्य गणा।
लक्ष्मी संग डोलाय कोरिला आरोहर।।

(चै० भा०)

दोहा

जोरि हाथ डोला चढ़ै, दूलह दुलहिन दोय।
शंखधुनि हरि बोल हुलु, मंगल जै जै होय।।

सोरठा

भई बिदाई बरात, बाजे बहु बाजन लगै।
दान द्रव्य बहु भाँत, दास दासि दीनन लहै।।

बरात-विदाई

पद

एक बरात सुखदाई चली, नर नारी बहु आगे चलै।
मारग नगर जन भीर, भौनन छत अटारिन पै चढ़ै।
हरषैं सुमन बरसैं सुमन, सुनयन भरि भरि हेरहीं।
जो हेरहीं सो हेरहीं, लोचन सकैं ना फेरहीं।
कहैं विष्णुप्रिया भाग्यवती, इन कौन से सुकृत किये।
जो पुरुष भूषन स्वयं विश्वम्भर, आप हरि पाणि गहे।
कोई कहैं ये गौरी शंकर, जैसी जोरी सोहहीं।
लक्ष्मीनारायण कहैं कोई, सीताराम ज्यौं मोहहीं।

कवित्त

पहुँची घर जाय, सुख नदिया बरसाय
फल लोचन चखाय, बरात गौरचाँद की।
बाल युवा वृद्ध नारी, जुरि आई भीर भारी।
उघारि डोला उघारि, उझकैं तिय गाम की।
शची रानी नेह खानी, सकै सुख को बखानी
सुध बुध विसरानी, माता ज्यौं राम की।
दरस हेत अकुलाय, आस दई देव पुजाय
थार आरती सजाय, चलीं ढिंग पालकी।

पद- **युगल-आरती-माता द्वारा**

फूल आरती शची उतारती, फूली सुहागिनि संग अली।
फूली द्रव्य वारि डारती, फूली हुलु धुनि दैं अली।।
फूली वधू विश्वम्भर कर गही, फूल भवन प्रवेश भली।
फूली जननी चूमि वधुहिं, अंक भरि नृत्यत भली।।

शची-

फूली आशा बेलि मेरी, लक्ष्मी मैं पाई भली।
फूली आजहि दुक्ख भूली, फूली भाग्य जो भली।।
फूली ठाड़ी जोरी आगे, फूली माधुरी लखि भली।
फूली फूली लै बलैयाँ, प्रेम प्रभु प्रिया भली।।

समाज- **युगल छवि-माधुरी**

बैठे कनक सिंहासन दोऊ, तन मन अति शरमीले।
राजदुलारी रतिमदहारी, गौर रूप गरबीले।।
चन्द्र रोहिणी प्रभासूर्य ज्यौं, छवि छलकत जु छबीले
रोमरोम रस आनन्द बरसत, रसिकन सुख सरसीले
हंस-हंसिनी-राज जु बैठे, प्रेममन्त्र सों कीले।
उरझावत नरनारी नैनन, आपहु अति उरझीले।।

बंगला

ए सब ईश्वरेर लीला जे पढ़े सुने।
से अवश्य विहरये गौरचन्द्र सने।।

(चै० भा०)

चौपाई

मंगल गौरहरि ब्याह सुमंगल।
पढ़ै सुनै पावै मुद मंगल।।
अन्तर लहरैं 'प्रेम' सुमंगल।
विहरै गौरहरि सहित सुमंगल।।

इति व्याहुलौ सम्पूर्ण।

ঔ❖ঙ

नदिया नगर-विहार

(अष्टादश वर्षीय लीला)

श्लोक

विद्या विलासैर्नवखण्ड मध्ये
सर्वान् द्विजान् यो विरराज जित्वा।
स्मार्तांश्च नैयायिक तार्किकांश्च
तं ज्ञानरूपं प्रणमामि गौरम्।।

दोहा

जय शचीनन्दन गौर जय, जय जय सहचर वृन्द।
जय नदिया नर नारि जय, निरखत नदिया चन्द।।

सोरठा

नदिया नगर विहार, गौरचन्द्र सुखकन्द को।
मंगल मोद अपार-विस्तरन, हरन द्वन्द को।।

पद- **भीम पलासी**

चंचल मनहर गौर सुभाऊ।
वयस आठ दस पंडितराज, जानैं नदिया नगर प्रभाऊ।।1
गुरु गम्भीर रहैं टोल मधि, बाहर सहज चंचल भाऊ।
पंडित डरपैं, वैष्णव भाजैं, मिलै निमाई जो कहूँ ठाँऊ।।2
नित गंगाजल केलि सुहावै, छात्रन संग प्रमोद बढ़ाऊँ।
सख्य हास्य रस सबहि विलसैं,
लेयँ मधुर रस को नहिं नाऊँ।।3
तीजे पहर नित छात्रन संग लै,
विहरैं नदिया हिय हुलसाऊँ।
घर बैठे जन दरशन पावैं,
विहरन मिस कृपा बरसाऊँ।।4
अधर पान मुख चाँद मनोहर,
सुधा बोल पै लोग बिकाऊँ।

गौर चरित्र पवित्र 'प्रेम' अति,
मानुष नहीं ए ईश प्रभाऊँ।।5

(प्रवेश पंडित निमाई-छात्रमंडली सहित)

निमाई- **पद-गौड़ मल्हार-3**

नदिया नगर चलि विहरिये भाई।
सुरसरी तीर पै धीर समीर, बहत सदाकाल सुखदाई।।
नित नई शोभा चितवत लोभा, नई नई गोभा हिय उपजाई
फल फूल साग बहु विधि लैहैं, गन्ध माल बसन मन भाई।।

भैयाऔ! भगवती भागीरथी के तट पै बसी भई यह नवद्वीप नगरी मोकूँ अत्यन्त ही प्रिय है। याकी नित्य नई-नई शोभा के दर्शन करकै चित्त में नई-नई लालसा उठ्यौ करै है। यासों चलौ, नगर की शोभा दर्शन करवे चलें, और कछु साग-सब्जी फल-फूल आदि आवश्यक वस्तु हू लै आवैं।

छात्र पुरुषोत्तम-गुरुजी! आज्ञा होय तौ पिताजी के समीप जाय कछु द्रव्य लैं आऊँ।

निमाई-नहीं पुरुषोत्तम! आज उधार ही सही। द्रव्य जब होयगौ तब दै देंगे।

समाज- **पूर्वपद**

हँसत हँसावत हिय हुलसावत, नगर डगर चले गौरा राई।
बाल वृद्ध नर नारि सबनकूँ, आनन्द 'प्रेम' लुटावत जाई।।

दोहा

हेरत हाट सुठाठ पन, चले जात पुर बाट।
लखि छवि मोहित जन सबै, टेरत निज निज घाट।।

(दृश्य-नदिया बाजार। दुकानें क्रम से-तमोली, गन्धी, माली, बजाज, मनिहार, गोप-ग्वाला की)

तमोली-ओ ठाकुर मो'शाय आमार पान खेये जान्। आसून।

गन्धी-एदिके पंडित मो'शाय एदिके! आमाके पायेर धूलो दिये जान्।

माली-आगे आमार माला पोरे जान। दया कोरुन। आसून।

समाज- **चौपाई**

प्रथम तमोली ढिंग पग धारे। पग परि सो आदर सत्कारे।।

तमोली-

ना जानौं कहा पुन्य हमारे। आये तुम मो गरीब दुआरे।।
सेवा योग्य कहा हौं गुसांई। पान पात बिन कछुई नाई।।

यासों या गरीब कौ पान पत्ता स्वीकार है जाय।

निमाई-परन्तु भैया!

द्रव्य नहीं कछु हम पै भाई।

तमोली-कौड़ी एकहू न लैहौं साईं।।

निमाई-लैहौं नहीं बिन मोल।

तमोली-तो मैं गंगा डूबिहौं।

निमाई-ऐसे बोल न बोल, हार्यौं मैं तुव प्रेम ढिंग।

तमोली-(सबको पान देता है। चरणों को छूता है)

समाज- **बंगला**

दिव्य चूर्ण कर्पूरादि जतो अनुकूल।
श्रद्धा कोरि दिलो नाहि निलो मूल।।

(चै० भा०)

चौपाई

इन मुख भूषन उनकूँ कीन्हे। उन मगदूषण इनको लीने।
इन उनको मुख लाल बनायौ। उन इनकौ मन लाल रंगायौ।।
पान-दान सम मान न कोई। प्रभु प्रसाद सम फल नहिं कोई।।
आगे गन्धी गह्यौ पग आई। धन्य भाग पधारे गुसांई।।

निमाई-भैया गन्धी! बढ़िया इतर दिखाऔ।

गन्धी-देखौ ठाकुर! एक ते एक बढ़िया। (एक-एक शीशी खोलते हुए) यह दिलवहार! यह हीना! यह रात की रानी! यह गुलाब इतर! (वस्त्र पर लगाते जाना) और यह एक शीशी आपकी भेंट है।

निमाई-(लेते हुए)

चौपाई

मधुर सुवास मोल कहा है।

गन्धी– पद रज पाऊँ लाभ महा है।।

निमाई– मोल बिना ऐसे नहीं लैहौं।

गन्धी– अबही मोल मैं हू नहीं लैहौं।।

प्रथम परख वस्तु की कीजै। वास रहै कछु काल तौ दीजै।।
धोये हू पर मिटै न सुवासा। तौ जानौ यह वस्तु है खासा।।

निमाई–ऐसौ बढ़िया इतर है?

गन्धी–परीक्षा करकै देख लैऔ। यह मैं आपके पीताम्बर पै लगाय दऊँ हूँ। सात दिना तक याकी सुगन्ध नहीं छूटैगी। फिर आप जो कछु मूल्य देऔगे सो मैं लै लऊँगो।

निमाई–अच्छौ भैया! जैसी तेरी इच्छा। (आगे बढ़ना)

समाज–

इन तन गौर सुगन्धित कीन्हौ। उन गन्धी दुर्गन्ध हर लीन्हौ।।
आगे फूल गली चली आई। फूल महक मनहर जहँ छाई।।

माली 1–ओ ठाकुर मो'शाय! आमार माला पोरे जान्। एदिके आसून।

माली 2–ना, ना! आमार एखाने आसून। मूल्य किछुइ निबो ना।

माली 1–आमि ओ निबो ना! आसून प्रभो! आसून!

(दोनों माली आकर महाप्रभु की बाँह पकड़ लेते हैं। अपनी अपनी दुकान में ले जाना चाहते हैं)

निमाई–भैयाओ! लड़ौ मत! दोनों ही मिलकै माला पहनाय देऔ।

दोनों माली–(महाप्रभु का सिंगार करते हुए गाते जाते हैं)

पद हमीर–3

आज भाग्य हमारे जागे हो।
घर बैठे चिन्तामणि पाये, चित चिन्ता सब भागे हो।।

निमाई–बस भैयाऔ बस! एक–एक माला ही बहुत है। सारी दुकानैं काहे कूँ लुटाय रहे हौ। हम पै दैवे कूँ मूल्य तौ कछु है नहीं।

माली–

पूर्वपद

दुख दारिद्र नसाये सबही, कल्पतरु पद लागे।
दै न सकै जो धन कुबेर कौ, सो रस प्रेम हिय पागे।।

चौपाई

जो सुख हम दर्शन सों पाये। सो नहीं सोनौ चाँदी कमाये।।
आज ही सब दारिद्र नसाये। तुव पद कल्पतरु घर पाये।।

समाज–

अस कहि कहि मन मोद बढ़ावैं। हुलसि हुलसि हरि गौर सजावैं
तब मधुपुरी जिमि माली सुदामा। कियो सिंगार कृष्ण बलरामा
अब नदिया सोइ लीला पुरानी। नित नव नव यह प्रेम कहानी
करि सिंगार किये जु प्रनामा। सब विधि सों भये पूरन कामा

(महाप्रभु का आगे बढ़ना)

पट पत्तन पहुँचे प्रभु जाईं। जय जयकार पटकार मचाई।।
अपनी अपनी ओरहिं बोलैं। चहैं सबै हमहीं सों भोलैं।।

बजाज–(अपनी–अपनी दुकान पर बुलाते हैं)।

निमाई–(एक बजाज की दुकान पर जा)

'भालो वस्त्र आनो' प्रभु बोलये वचन।
तन्तुवाय वस्त्र आनिलेन सेइ क्षण।।

(चै० भा०)

बजाज–लेऔ ठाकुर! यह शान्तिपुरी धोती! यह बरहमपुरी साड़ी! यह ढाका की साड़ी! यह मनिपुरी अण्डी! यह काश्मीरी दुशाला।

छात्र 1–(मुख फेरकर) और दाम के नाम पै यहाँ गोविंद गोपाला मदन गोपाला।

निमाई–भैया! हमें टसर–दुशाला नहीं चाहिये। हमें तौ एक धोती चाहिये।

बजाज–एक नहीं द्वै लै जाऔ। यह पीताम्बरी आपके लिये और यह साड़ी माँ ठाकुरानी के लिए।

निमाई–इनकौ मूल्य कहा है?

बजाज–जो आप दै देऔगे वही मोकूँ स्वीकार है।

निमाई–परन्तु या समय तौ हाथ खाली है।

बजाज–तौ कहा चिन्ता! दस दिना, पन्द्रह दिना, महीना दिन पीछे जब सुविधा होवै तब दै दीजौ परन्तु वस्त्र लै जाऔ। आप पहनौ। माँ ठाकुरानी कूँ पहनावौ। याहि में मोकूँ बड़ौ संतोष है।

निमाई–ना भैया! उधार लैनो अच्छौ नहीं। फिर कभू लैंगे। चलौ भैयाऔ आगे। (चलना)

समाज– **दोहा**

चित चाहत चरनन परी, सर्वस दीजै वार।
कृपनता आड़ी ठड़ी, करत जु तीखी मार।।

बजाज–(स्वगत) हाय हाय! जी करै है कि इनके ऊपर दुकान ही लुटाय दऊँ परन्तु बाप–दादन की गाढ़ी कमाई लुटाय दऊँगो तौ गृहस्थ की गाड़ी कैसे चलैगी! और गृह–लक्ष्मी तो कच्चौ ही खाय जायगी! परन्तु ऐसे ब्राह्मण देवता मेरी दुकान पै ते खाली ही चले गये तौ मेरे सारे पुण्य ही खाली है जायँगे। नहीं नहीं खाली नहीं जान दऊँगो। भाग्य में जो होयगौ सो होयगौ। गृह–चण्डी सों हू निपट लऊँगो! ओ ठाकुर देवता! लै जाऔ! दाम नहीं चाहिए। अपनी पग–धूरि दै जाऔ। खाली मत जाऔ! लै जाऔ।

निमाई–(लौटते हुए) इतनी हानि क्यूँ उठामनो चाहै है भैया?

बजाज–हानि नहीं लाभ होयगौ। मेरौ कल्याण होयगौ। एक तौ आप ब्राह्मण, तापै विद्वान् और ताहू पै परम धार्मिक सदाचारी। ऐसे सत्पात्र कूँ दान दिये पै, जल में तेल की बूँद की नांई, चौगुनौ, सौ गुनौ फल देय है। यासों आप मेरी भेंट कूँ स्वीकार कर लेऔ। मोकूँ निराश न करौ।

निमाई–अच्छौ तौ भाई! तुम्हारी इच्छा पूर्ण होवै। तुम्हारो मंगल होवै।

समाज– **चौपाई**

वसन अरपि पदरज सिर धारै। मोद मगन चिन्ता जु बिसारे।।
गौर चरित लखि छात्र विचारैं। बदत परस्पर जो जिय धारैं।।

(छात्रों का वार्तालाप–महाप्रभु से अलग)

छात्र 1–देख्यौ भैयाऔ! हमारे गुरुजी की मोहिनी शक्ति! यह 'बूनो' बेटा अपने बाप कूँ हू उधार नहीं देय है और वही गुरुजी के दर्शन ते कैसौ पिघल कै उदार दाता बन गयौ?

छात्र 2-'पैसा न धेला, लूट चले मेला' वाह!

पुरुषोत्तम छात्र 3-ऐसे शब्द मत कहै भैया! यह लूट नहीं, यह तो प्रीति कौ व्यवहार है। 'दैनो और लैनो' 'ददाति-प्रतिगृह्णाति' यही प्रीति के लक्षण हैं।

छात्र 2-(व्यंग पूर्वक) अच्छौ तौ गुरुजी महाराज दुकान दुकान पै जाय-जाय कै प्रीति कौ उपहार स्वीकार कर रहे हैं। यही बात है न?

छात्र 1-तौ कहा तुम्हारी जेब काट रहे हैं जो तुमकूँ इतनौ दर्द है रह्यौ है। यहाँ के दैवे-लैवे में न कहीं जोर है, न जुल्म है। धमकी है न दबाव है। जब लैवे-दैवे वारे दोनों प्रसन्न हैं, राजी हैं तो फिर काजी के न्याय कौ कहा काम?

पुरुषो०-बस करौ भैयाऔ। क्यों बात कूँ बढ़ाऔ हौ। देखौ गुरु विप्र, महानुभावन की शुभ दृष्टि सों धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष-चारों पदार्थ सुलभ हौ जाँय हैं। यासों कौन जानै है कि आज इन दुकानदारन ने कहा-कहा नहीं पाय लियौ है। हम-तुम तौ प्रगट लैन-दैन कूँ ही देख सकैं हैं, परन्तु गुप्त लैन-दैन कूँ तौ ये ही जानैं।

निमाई-(पीछे मुड़ते हुए) क्यूँ भैयाऔ! तुममें यह कहा शास्त्रार्थ छिड़ गयौ है?

पुरुषो०-कुछ नहीं गुरुदेव! ऐसी कोई विशेष बात नहीं है 'धन बड़ो कै धर्म बड़ो'-याके ऊपर ही कछु चर्चा चल परी ही।

(आगे घोष ग्वाला की दुकान-माखन मलाई दूध दही)

समाज-

तब प्रभु गोप गृह पग धारे। प्रीति पुरातन प्रभु न बिसारे।।

निमाई- **बंगला**

ओरे घोष बेटा दही दुग्ध आन।
आज तोर घरेर लइमु महादान।।

(चै०भा०)

अरे घोष ग्वालाऔ! दूध दही लाऔ। आज मैं तुमपै ते महादान लऊँगो।

ग्वाल 1-आऔ मामाजी आऔ! चलौ भात खायवे घर चलौ। आओ काँधे चढ़ाय कै लै चलूँ।

निमाई-अरे! मैं ब्राह्मण तुम ग्वालन कौ भात कैसे खाय सकूँ हूँ।

ग्वाल 2-न जाने कितेक बार तौ खाय चुके हौ-माँगि-माँगि कै और चोरि-चोरि कै! और अब बामन बन गये हौ।

समाज- **दोहा**

गोपन जिह्वा सरस्वती, कहत पुरातन बात।
गूढ़ बात ब्रज की सुनत, गौर प्रभु मुसकात।।

ग्वाल 1-अच्छौ तौ रहन देऔ। माखन मलाई दूध दहीइ खाऔ।

समाज- **चौपाई**

दूध दही माखन औ मलाई। देत समोद संतोषे निमाई।।

दोहा

ग्वाल वाल लै मधुपुरी, जेहि विधि विहरे श्याम।
संग सखा लै गौरचन्द्र, विहरत नदिया धाम।।

चौपाई

जाकी रही उर भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।।
वनिता मदन समान निहारें। पंडितजन बृहस्पति जनु धारें।।
भक्तन हित प्रभु स्वयं भगवाना। करैं पाद पद्मन प्रनामा।।
देखहिं योगी सिद्ध कलेवर। दुष्टन लागहीं महा भयंकर।।
निन्दक जन पाखंडी ठानैं। मायावश नाहिंन पहिचानैं।।

(दृश्य-शंख बनिक की दुकान-शंख की चूड़ियाँ)

शंख वनिक घर गौरा आये। लखि प्रभुहिं भाग्य मनाये।।
करि प्रनाम रज शीश चढ़ाये। विश्वम्भर हँसि वचन सुनाये।।

निमाई-भैया शंख वनिक! एक जोड़ी शंख की चूड़ी दिखाऔ।

शंख व०-एक नहीं ठाकुर! द्वै जोड़ी लै जाऔ और अपने चरण की धूलि दै जाऔ!

समाज-

सुन्दर चूड़ी शंख की लायौ। देखत विश्वम्भर मन भायौ।।

निमाई-बोलत 'मूल्य तो हम पै नाई।'

शंख व०-लै घर जाऔ तुम गुसांई।।

मन आवै जब मोल जु दीजै। मति चिन्ता दैवे की कीजै।।
पहिनिहैं माँ दैहिं अशीशा। सती वचन नहिं जायँ कभु मृषा।।

समाज-

शंख वनिक के वचन सुहाये। शुभदृष्टि करि सुख बरसाये।।
आजहु शंख बनिक की जाति। गौर भक्त धनधान्य अघाति।।

सोरठा

ज्योतिष इक सर्वज्ञ, ताके गृह गमने जु प्रभु।
बूझत बनिकै अज्ञ, पूर्वजन्म वृत्तान्त निज।।

निमाई-सर्वज्ञ मो'शाय बाड़ी ते आछेन ना कि?

सर्वज्ञ-(घर से निकलते हुए) नमस्कार पंडित मो'शाय! आसुन आसुन! आसन ग्रहण कोरुन।

निमाई-(आसन पर बैठते हैं)

सर्वज्ञ-(स्वगत) यह कौन है ऐसौ दिव्य पुरुष?

निमाई-मैंने सुन्यौ है कि आप बड़े भारी ज्योतिषी हैं तथा जन्म-जन्मान्तर पर्यन्त को वृत्तान्त बताय सकैं हैं। यासों आपकूँ सर्वज्ञ कहैं हैं। मोकूँ हू अपने पूर्वजन्म कौ वृत्तान्त जानवे की उत्कण्ठा है। सो बतायवे की कृपा करैं।

सर्वज्ञ-जैसी आज्ञा' मैं ध्यान करकै बतायवे की चेष्टा करूँ हूँ (ध्यानस्थ हो मंत्र-जाप)

समाज-

चौपाई

लाग्यौ जपन मन्त्र गोपाला। लखत कौतुकी गौर कृपाला।।
बिन बुलाये आप घर आये। निज जन जानि कृपा दरसाये।।
अपनौ ईश्वर रूप लखाये। अवतार चरित बहु प्रगटाये।।
सोइ जानै जिहि आप जनावहिं। अगम सुगम प्रत्यच्छ लखावहिं
प्रथम लख्यौ विष्णु अवतारा। शंख चक्र गदा आयुध धारा।।

सर्वज्ञ-(ध्यान में ही स्वगत)-साश्चर्य दर्शन का वर्णन धीरे-धीरे।

समाज-

निशा काल बन्दीगृह माँहिं। मात पिता बहु स्तुति गावहिं।।
पुनि बालक वसुदेव लै धाये। गोकुल नन्दभवन धरि आये।।
देखत पुनि प्रलय जलभारी। वराह रूप हरि धरनि उधारी।।

सर्वज्ञ-ओह! अब तो विष्णु भगवान् नहीं वराह भगवान् के दर्शन है रहे हैं। चारों ओर केवल जल जल, महा प्रलय को जल। मध्य में विशाल वाराह विग्रह। दीर्घ दशन पर धरती चन्द्रकला की भाँति शोभा दे रही है-जय हो वाराह भगवान् की जय।

स्तुति

वसति दशन शिखरे धरणी तव लग्ना।
शशिनि कलङ्ककलेव निमग्ना।।
केशव धृत शूकर रूप। जय जय देव हरे।।

समाज-

पुनि देख्यौ नरसिंह अवतारा। भक्त हेतु प्रभु उग्र अपारा।।

सर्वज्ञ-(ध्यान में ही स्वगत-साश्चर्य वर्णन) ओहो! अब तो वाराह भगवान् नहीं नरसिंह! भगवान् बालक भक्त प्रह्लाद के वचन-रक्षा एवं प्राण-रक्षा हेतु अपूर्व नरसिंह धारी भगवान् की जय हो जय हो।

स्तुति

तव कर कमल वरे नखमद्भुत शृङ्गं।
दलित हिरण्यकशिपु तनुभृङ्गम्।
केशव धृत नरहरि रूप। जय जय देव हरे।।

समाज-

पुनि देखत हरि वामन रूपा। वयस आठ वटु बाल अनूपा।।
छत्र कमंडलु कौपिन धारे। मारग चलत हलत भू भारे।।

सर्वज्ञ-(ध्यान में ही) अहा ये तो वामन भगवान् हैं। देवतान की कार्य-सिद्धि के लिए व्यापक विराट् प्रभु वामन अंगुल के बौना बन गये। जय हो वामन देव की जय हो।

स्तुति

छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुत वामन।
पदनखनीर जनितं जनपावन।।
केशव धृत वामन रूप। जय जय देव हरे।।

समाज-

पुनि दूर्वादल श्याम शरीरा। वीरासन बैठे रघुवीरा।।
कर शर चाप दुष्ट संहारी। शरनागत भयहारि खरारी।।

सर्वज्ञ-(ध्यानस्थ ही) अहा! दूर्वादल श्याम रघुनन्दन राम। जय हो। धनुर्धारी शरणागत भयहारी रावणारि राम जय हो।

स्तुति

वितरसि दिक्षुरणे दिक्पति कमनीयं।
दशमुख मौलिबलिं रमणीयम्।
केशव धृत राम शरीर। जय जय देव हरे।।

समाज- **सोरठा**

अचरज चरित निहार, देखत नयन उघार चहुँ।
सम्मुख शचीकुमार, विस्मित धरत ध्यान पुनि।।

सर्वज्ञ-(आँखें खोल। महाप्रभु को देखता हुआ स्वगत) हैं! यह कहा आश्चर्य है? बाहर तौ यह शचीनन्दन निमाई पंडित बैठे हैं। और मेरे हृदय में अवतार स्वरूप के दर्शन होय हैं! कहा ये सब अवतार रूप निमाई पंडित के ही हैं। यही याके पूर्व जन्म कौ वृत्तान्त है। (सिर हिलाते हुए) ऊँ हुँ! यह कैसे सम्भव है! अच्छौ फिर सावधान है कै मन्त्र जपूँ। (ध्यानस्थ हो जाना)।

समाज-

पुनि देखत गोपाल दिगम्बर। कटि किंकिनि नवनीत धरे कर।।

सर्वज्ञ-अरे! यह तो बालगोपाल, यशोदा दुलाल हैं। जय हो। नवनीत-अहारी, गोकुल बिहारी की जय हो।

श्लोक

नीलोत्पलदलश्यामं, यशोदानन्दनन्दनम्।
गोपिकानयनानन्दं, गोपालं प्रणामाम्यहम्।।

समाज-

पुनि देखत गोपी मनोहारी। ललित त्रिभंगी मुरलीधारी।।
चहुँ ओर व्रजगोप कुमारी। पान करहिं मुखचन्द सुधारी।।

सर्वज्ञ-अहा! ये तो गोपीनयन कमल मालाधारी, वनिता विभूषणकारी, वंशीधारी, व्रजविहारी गोविन्द हैं।

स्तुति

जय जय जय, देव देव देव, त्रिभुवन मंगल दिव्य नाम धेय।
जय जय जय, देव कृष्ण देव, श्रवणमनोनयनामृतावतार।।

समाज-

इहि विधि देखत रूप अवतारा।
चकित थकित मति ज्ञान विसारा।।
नयन उघार बिलोकन लागे।
संशय अतिशय अचरज जागे।।

निमाई-

हँसि बूझत प्रभु 'कहा निहार्यौं। को मैं, कहो कहा निर्धार्यौं।।

सर्वज्ञ-

जो देखौं सो अचरज माई। झूठ सांच कछु कह्यौ न जाई।।
कै तुम ही कछु जानौ माया। करि प्रवेश अन्तर मम काया।।
धरि धरि रूप अनेक दिखाऔ। पुनि आप महँ लीन कराऔ
मति भ्रान्त निश्चय नहिं पावै। को तुम कैसे समझ न आवै।।

निमाई-अच्छौ तौ आप एक बार और ध्यान करकै देखौ। कदाचित् अबकै निश्चय कर पाऔ।

समाज-

धरि धीरज पुनि ध्यान लगायौ। जपत मंत्र युगतत्त्व लखायौ।।
राधाकृष्ण मनोहर जोरी। मोहन मदन किशोर किशोरी।।

सर्वज्ञ-अहा हा! अबकै तौ मोकूँ साक्षात् वृन्दावनविहारी विहारिणी युगल श्रीराधाकृष्ण के दर्शन है रहे हैं।

श्लोक

वृन्दावन विहाराढयौ सच्चिदानन्द विग्रहौ।
मणिमण्डपमध्यस्थौ राधाकृष्णौ नमाम्यहम्।।
पीतनीलपटौशान्तौ गौरश्याम कलेवरौ।
सदारासरतौ रम्यौ राधाकृष्णौ नमाम्यहम्।।

समाज-

युगल रूप निज तत्त्व बतायौ। मति सर्वज्ञ अतिहि भरमायौ।।
भूल्यौ जप अरु ध्यान भुलाऔ। खोलत नैंनन बैन भुलाऔ।।
आनन्द विस्मय संशय भारी। बूझि सकत ना बोल उचारी।।

निमाई-

बोले विश्वम्भर गौर निमाई। को मैं कहा देख्यौ कहौ समझाई

'के आमि की देखो, केनो ना कहो भांगिया'

(चै० भा०)

खोल करके क्यूँ नहीं बताऔ हौ कि मैं कौन हूँ और आप ने कहा देख्यौ।

सर्वज्ञ–तौ सुनौ मैंने जो कछु देख्यौ।

कवित्त

कारागर विच देख्यौ कृष्ण, जन्म प्रथम पुनि
देख्यौ गोकुलहिं जाय, नन्दलाल जायो है।
धरति दसन धरे, देख्यौ वराह वपु
प्रह्लाद प्रिय नरसिंह, वामनहु लखायो है।
धरे धनु राम खात, माखन गोपाल देख्यौ
गोपीकृष्ण देखि राधाकृष्ण लखि पायो है।
(यासों मेरी) मति भरमाइ कहा, कहौं 'प्रेम' गाई अब
देऔ तुमहिं बताइ, तुम कौन यहाँ आये हो।।

निमाई–सर्वज्ञ जी महाराज! यह सब आपके नेत्रन कौ भ्रम तथा मन के संस्कार हैं। भलौ मैं यह सब कैसे है सकूँ हूँ।

सर्वज्ञ–और मैं ही कैसे मान सकूँ कि ये सब मेरी आँखिन कौ भ्रम है।

तर्ज रामायण– **गाना**

आँखों का धोखा कैसे कहूँ, आँखें ये रूप न देख सकै।
मन का ही तानाबाना कहूँ, तो मन ऐसा नहीं सोच सकै।।
सब देख लिया सब जान लिया,
तुम हरगिज नाथ न छिप सकते।
यह मंत्र हैं मेरे गुरु के शब्द, गोपाल भी झुठला नहीं सकते
विद्या तो कायल है मेरी, कहती है तुम तो वही वही।
(पर) दिल को भी घायल कर दो,
तो मानूँगा तुमको वही सही।।
देख लिया सब जान लिया, पर मानत मानत मानूँगा।
यह ज्ञान सफल होगा 'प्रेम' जब, चरणों को सर्वस्व ठानूँगा

(महाप्रभु के चरणों को पकड़ लेना)

प्रभो! जैसौ मैंने आपकूँ जान्यौ है, वैसौ ही मैं आपकूँ मानहूँ सकूँ, हृदय सों मान सकूँ, नि:शंक हैकै मान सकूँ, जीवन भर सदैव मान सकूँ-बस इतनी कृपा औरहू कर जाऔ मेरे ज्ञान कूँ प्रेम दैकै सफल कर जाऔ।

दोहा

बिन बुलाय स्वयं आय घर, निज स्वरूप दरसाय।
दियौ ज्ञान अब प्रेम दै, लैऔ दास बनाय।।

निमाई-अच्छौ तौ एक गुप्त रहस्य सुनो-

सवैया

तुम दास पुरातन हो मेरे,
गोपाल स्वरूप उपासी हो।
कीन्हे बहु साधन जनम जनम,
भये तासों नदियावासी हो।
फल साधन कौ कछु आज मिल्यौ,
अवतार चरित उर भासी हो।
धरनौ उर माँहिं न कहनौ कहीं,
जब लौं मम लीला प्रकासी हो।।

जब तक मेरी यह प्रगट लीला है तब तक आज कौ अनुभव अपने मन में ही राखनौ, मुख सों कदापि प्रकट न करनौ। नमस्कार (प्रस्थान)

सर्वज्ञ-धन्योऽस्मि! कृतार्थोऽस्मि! जन्म सफल है गयौ। यह गौरांग-विहार अत्यन्त निगूढ़ है। याहि सों प्रभु ने रहस्य प्रगट करवे के लिए निषेध कियौ है। ऐसौइ होयगौ। मैं काहू ते नहीं कहूँगो। गुप्त रूप सों ही प्रभु की लीला को दर्शन करूँगो।

(प्रस्थान)

समाज-

अब चरित्र पुनीत इक सुनिये। भक्तवत्सल गौर गुण गहिये।।
यह प्रभु की रीति पुरानी। निज जन संग लरत हठ ठानी।।
तिन महँ विप्र श्रीधर बड़भागी। बेचत साग पात फल भाजी।।
धन दरिद्र भक्ति धनवाना। कृष्ण नाम निशिदिन करै गाना।।
करैं गौर तासों प्रेम लराई। सुनि गुनि प्रभुपद भक्ति दृढ़ाई।।

(दृश्य-केला के पत्ते-थोड़-मोचा-साग सब्जी की दुकान पर बैठा श्रीधर)

श्रीधर-(कीर्तन) हरे कृष्ण गोविन्द राम नारायण।

(प्रवेश महाप्रभु छात्र मंडली सहित)

निमाई-क्यों रे श्रीधर! तू मोकूँ गारी दै रह्यौ है?

श्रीधर-ठाकुर! मैं गारी कहाँ दै रह्यौ हूँ-मैं तो हरि-कीर्तन कर रह्यौ हूँ। हरे कृष्ण गोविन्द....

निमाई-फिर दई गारी! मेरे मुख पै मेरौ ही नाम लै लै कै गारी गाय रह्यौ है।

श्रीधर-तो कहा हरे कृष्ण गोविन्द नाम तुम्हारे ही हैं।

निमाई-मेरे नहीं तौ और कौन के हैं?

श्रीधर-निमाई पंडित! तुम इतने बड़े भारी विद्वान हैकै हू नास्तिक की-सी बात करौ हौ। पधारौ देवता! मोकूँ अपने भगवान् कौ कीर्तन करन देऔ।

निमाई-ऐसे नहीं जाऊँगो! ला मेरी भेंट पूजा।

श्रीधर-काहे बात की?

निमाई-मैं तेरौ ठाकुर हूँ-ब्राह्मण देवता हूँ-या बात की।

श्रीधर-देखौ पंडित! मैं साग पात बेचकर दिन भर में चार छः आना पैसा कमाऊँ हूँ। वामें ते आधौ पैसा गंगा मैया की धूप-बत्ती, फूल बतासा में चला जायँ हैं और आधे ते मैं अपनौ गुजारौ करूँ हूँ। फिर भलौ मैं आपकौ कहा सत्कार कर सकूँ हूँ। और फिर जैसे तुम ब्राह्मण, वैसेइ मैं हूँ ब्राह्मण और एक गरीब ब्राह्मण। तुम्हें अपनी भेंट पूजा लैनी है तो आगे बहुत-से मोटे-मोटे माली कुंजड़े हैं। उनके पास चले जाऔ।

निमाई-ना, मैं तौ, तोते ही लऊँगो और लर-झगर कै लऊँगो। सुन कान खोल के। तैंने-

चौपाई

पूर्व जनमहिं करी कृपनाई। तासों भाग्य दरिद्र लिखाई।।
अब तो खोलनो मुट्ठी सीख। मति कहूँ आगे माँगै भीख।।

और देख मैं हू तेरौ जैसौ ही निष्किंचन दरिद्र हूँ। यासों हम तुम तौ बन्धु-सखा हैं।

दोहा

बैर प्रीति समान में, यही सनातन रीति।
तुम दरिद्र मैं हू दरिद्र, हम तुम दोऊ मीत।।

श्रीधर- **दोहा**

पहिरि पीताम्बर साग हित, बनौ दरिद्र कंगाल।
साहुकार आगे बहुत, करिहैं तुमहिं निहाल।।

निमाई-ठीक है! बातन सों नहीं अब हाथन सों काम लऊँगो (मोचा या थोड़ उठा लेते हैं)

समाज- **दोहा**

तबही नटखट गौर हरि, लियौ थोड़ उठाय।

श्रीधर-

सौंह तुमहिं है गंग की, जो न देऔ निमाय।।

निमाई-

गंगा गंगा की सौगन्ध कहा दिवावै।
मैं बाप गंगा कौ, वह बेटी कहावै।।
चरण ते मेरे निकसी गंगा तेरी माई।
करै प्यार बेटी सों आप बाप सों लराई।।

श्रीधर-(कानों पर हाथ रखते हुए) श्रीविष्णु! श्रीविष्णु हाय हाय निमाई पंडित! तुम कूँ है कहा गयौ है देखौ। (गजल प्रश्नोत्तरी)

भगवान बनकर न मुझको जलाओ।
हरि भक्त प्यारे तुम बनकर दिखाओ।।

निमाई-

बनूँ क्यों मैं भक्त, भगवान ही हूँ मैं
विश्वम्भर हूँ मैं, नाम मेरा तुम गाओ।।

श्रीधर-

माँगते साग पर बनते विश्वम्भर।
भिखारी के दर पै भिखारी न आओ।।

निमाई-(जो तू गरीब भिखारी है तौ यह बता)

भजे श्रीपति को, नाम तेरौहू श्रीधर।
फिर अन्न औ वस्त्र से क्यूँ दुक्ख पाओ।।

श्रीधर–

महल में रहे चाहे पंछी हो वन में।
ये चार ही दिना चाहे जैसे बिताओ।।

(और सुनो! मैं दरिद्र अवश्य हूँ पर दुखिया नहीं)

हरे कृष्ण गाऊँ और सुख से रहूँ हूँ।
मेरे सुक्ख को तुम कहा जान पाओ।।

निमाई–

खायो नून चून और लंगोटी लगाई।
यही सुक्ख है तो दु:ख क्या बताओ।।
श्रीधर! तू चंडी कूँ क्यूँ नहीं भजै है।
जो कट जायँ दारिद्र, महा सुक्ख पाओ।।

श्रीधर–

नहीं देवी–देवों से कोई काम मुझको।
हरे कृष्ण नाम ही तुम गाके सुनाओ।।
श्रीकृष्ण प्रेम ही परम धन है सुन्दर।
न हमको तुम माया के लालच दिखाओ।।

निमाई–

समझा अब समझा तू इतना धनी है।
बना ढोंग गरीबी का, धन तुम छिपाओ।।
(परन्तु) छिपेगा छिपावेगा कब तक तू धन को।
लूँगा मैं लूट न बच मुझसे पाओ।।

श्रीधर–

मैं बाहर हूँ जैसा कुछ भीतर भी वैसा।
न ढोंग कपट का तुम दोष लगाओ।।
दया अब करो हाथ जोडूँ तिहारे।
सताओ नहीं अब तो जाओ जी जाओ।।

निमाई–

मैं ऐसे न जाऊँ बिना भेंट पूजा।
ला थोड़ा मोचा न देर लगाओ।।

(बंगला)

एबे कला मोच थोड़ दैहो कौड़ी बिने।
दिले आमि कोन्दल कोरि ना तुमि सने।।

(चै० भा०)

केला, केला को फूल, औरे केला कौ गूदा-ये तीन दै दै और बिना मूल्य के दै दै तो मैं अबही चल्यौ जाऊँ हूँ।

श्रीधर-मैं हार्‌यौ तुम जीते देवता! यदि गरीब के साग पात पै ही तुम्हारी आँख लग गई हैं तो-

उजड़ जाऊँ चाहे पर, सेवा में उजड़ूँ।
ले जाओ जो चाहो पर खाली न जाओ।।

सुनौ! मैं एक मोचा, दो थोड़, चार केला और कछु केला पत्ते तीसरे-तीसरे दिन आपके घर पहुँचाय दियौ करूँगो और वहीं आपके दर्शन कर आऊँगो और आज की भेंट यह लेऔ-

ले जाओ जी आज दे आऊँगा नित ही।
तुम आकर यहाँ फिर न रार मचाओ।।

निमाई-अच्छी बात। परन्तु जो काहू दिना न दै आयौ तो समझ लै मैं वा दिना भोजन नहीं करूँगो भूखौ ही रहूँगो।

तेरे साग पात बिना नहीं मैं जेमूँ।
रहूँगा प्रेम भूखा यह भूल न जाओ।।

श्रीधर-नहीं नहीं मैं भूल नहीं करूँगो। समय पै ही दै आयो करूँगो। अब पधारौ। इतनी देर सों मेरौं कीर्तन बन्द है। अब कीर्तन कर लैन देऔ-'हरे कृष्ण गोविन्द राम०'

निमाई-(जाते-जाते लौटकर) श्रीधर! श्रीधर! एक बात पूछनौ तौ भूल ही गयौ-एक छोटी-सी बात।

श्रीधर-(झुँझलाते हुए) छोड़ौगे नहीं मोकूँ? कहौ कहा बात है।

निमाई-बस यही, कि तू मोकूँ कहा समझै है?

श्रीधर-ब्राह्मण ठाकुर! विष्णु कौ अंश और कहा?

निमाई-बंगला

तुमि आमा' देखो जेनो ब्राह्मण छाओयाल।
आमि आपनारे बासि जे हेनो गोपाल।।

(चै० भा०)

दोहा

तू मोकूँ देखत मनो, मैं कोई ब्राह्मण लाल।
मैं समझत हौं अपन कूँ, ब्रज को कोई गोपाल।।

श्रीधर-अच्छौ, गोपाल ही सही! हे गोपाल जी! मैं तुम्हारे हाथ जोरूँ, पाँव परूँ हूँ, पधारौ यहाँ ते। आपकी बातन कूँ सुन सुनकै मेरौ पित्त गरम है गयौ है-समय हू नष्ट भयो कीर्तन बिना! अब तौ कृपा करौ। इतने बड़े पंडित विद्वान है गये तौ हू चंचलताई बालपने की न गयी। दण्डवत! पधारौ! हरे कृष्ण गोविन्द राम नारायण।

समाज-

गौर प्रभु निज तत्त्व सुनायौ। हँसत पै श्रीधर समझि न पायौ।।
जिमि हरि प्रिय विदुर के सागा।
तिमि गौरहिं प्रिय श्रीधर सागा।।
नित श्रीधर के पातन पावैं।
थोड़ा मोच परम प्रिय भावैं।।
भक्त वत्सल अस दीन दयाला।
मनहर चंचल शची दुलाला।।
बहु विधि नदिया नगर विहरहिं।
नर नारिन के चित्त वित हरहिं।।
सो विहार कछुक इहाँ गायौ।
आश 'प्रेम' कन मन जु लुभायौ।।

दोहा

विहरि नदिया नगर घर, आये संध्या काल।
पूरन चन्द्र उदित भयौ, प्राची दिशा नभ भाल।।

(दृश्य मन्दिर-द्वार पर महाप्रभु विराजमान)

विष्णु मन्दिर निज भवन के, बैठे सन्मुख द्वार।
राका रजनी छवि विमल, निरखत शची कुमार।।

चौपाई

निकट सुरसरि कल-कल वाहिनी।
जल-थल-नभ-दिशि भई चाँदनी।।
लखि बाढ्यो उर भावरस सागर।
बह गयो छद्म तौ रह गये नागर।।

जमुना जैसी जान्हवी भासै।
चन्द्र चन्द्रिका शरद प्रकासै।।

सोरठ धमार

(श्री) वृन्दावन सुधि आई। सब छल छद्म बहाई।
ठाड़े गौर त्रिभंग। कंचन दामिनी अंग।।

(महाप्रभु ललित त्रिभंगी-वंशी वादन मुद्रा)

(नेपथ्य में वंशी ध्वनि)

लम्बित उर वनमाला। भाव नयन विशाला।।
मुरली अधरहिं धरे। नाद अपूरब भरे।।

निमाई- **पद**

मैं तो जानूँ ना कछु और, मेरी रट राधा राधा राधा।
मैं जागूँ तौ ध्याऊँ राधा, मैं सोऊँ तौ देखूँ राधा।
मैं खेलूँ तौ गाऊँ राधा, मुरली में राधा राधा राधा।।
मेरी अँखियाँ ज्योति राधा, मेरी छतियन मोती राधा।।
तन वसन पीत राधा, मन में हू राधा राधा राधा।
मैं निर्गुन सगुन राधा, मैं सगुन निर्गुन राधा।
आदि नाद 'प्रेम' है राधा, सर्वमूल में राधा राधा राधा।।

समाज- **चौपाई**

अपूरब मुरली गौर बजाई। मात बिना न काहु सुनि पाई।।
सुनत ध्वनि तन दशा भुलाई। आनन्द सिन्धु हिय उमगाई।।

(प्रवेश आश्चर्य चकित शची माता)

गृह ते निकसि जु बाहर आई। यह धुनि कितसों आवत माई।।

(नेपथ्य में वंशी ध्वनि)

शची-(चारों ओर देखती हुई) हैं! यह वंशी की ध्वनि कहाँ ते आय रही है। है तो हमारेइ घर के भीतर! यह कौन बजाय रह्यौ है! अहा! कैसी मधुर मनोहर ध्वनि है! अरे! यह तो अपने मन्दिर में सों आय रही है। (दौड़कर भीतर जाती हैं। वंशी ध्वनि बन्द हो जाती है। पर्दा खुलता है। मंदिर के द्वार पर महाप्रभु त्रिभंग खड़े हैं)।

समाज-

धाय चली मंदिर दिशि माई। द्वारे देखत ठाड़े निमाई।।
लखत निमाइ ढिंग चलि आई। वंशी धुनि अब आवत नाई।।
विस्मय भय विह्वल चहुँ हेरति। पुनि 2 तनय वदन विलोकति
ज्योत्स्नामय गौर शरीरा। लखि जननी भई प्रेम अधीरा।।

शची-अरे! अब तो वंशी धुनि हू नहीं है। यहाँ तो निमाई ठाड़ौ है। परन्तु यह मेरे गौर की देह है या ज्योत्सना की ही मूर्त्ति है। कहा चन्द्रमा ही निमाई की देह में उदय है आयौ है। नख ते शिख तांई चाँदनी सी जगमगाय रही है देह। यह कहा आश्चर्य देख रही हूँ।

समाज- **दोहा**

लखत गौर के हृदय पै, उदयौ चन्द्रमा आय।
वक्षस्थल विशाल पै, मंडल चन्द्र लखाय।।

तब प्रभु निज ऐश्वर्य दुरायौ। मृदु मुसिक्याय क्षुधा जनायौ।।

निमाई-माँ! बड़ी भूख लग रही है।

शची-चल बेटा! जेंम लै। मैं तौ कबते तेरी बाट में बैठी हूँ। आज तू नगर घूम करकै बड़ी देर ते आयौ। चल भीतर (दोनों का गमन)

समाज- **बंगला**

एइ मतो कतो भाग्यवती शची आई।
जतो देखे 'प्रकाश', ताहार अन्त नाई।।

(चै० भा०)

दोहा

पद पद सुत ऐश्वर्य बहु, दरसत है शची माई।
परसत नहिं वात्सल्य रस, सरसत 'प्रेम' सदाई।।

इति नगर भ्रमण लीला।

आवश्यक निवेदन-

श्रीगौर चरित क्रमानुसार यह 'नगर भ्रमण' पहले लिखा होने पर भी इसका अभिनय 'विवाह' के पश्चात् किया जाना चाहिए। कारण कि विवाह के बाद ही दूसरे दिन 'गया गमन' लीला आती है। और आज शुभ मिलन के पश्चात् कल विच्छेद करा देना भाव-रस विरुद्ध होगा।

❖

श्रीश्रीगौरलीला-पदावली

मङ्गलाचरण

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्दौ सहोदितौ।
गौडोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शब्दौ तमोनुदौ।।1।।
आजानुलम्बित भुजौ कनकावदातौ,
संकीर्तनैकपितरौ कमलायताक्षौ।
विश्वम्भरौ द्विजवरौ युगधर्मपालौ,
वन्दे जगत्प्रियकरौ करुणावतारौ।।2।।
अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्ण कलौ,
समर्पयितुमुन्नतोज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम्।
हरिः पुरटसुन्दर द्युतिकदम्ब सन्दीपितः,
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः।।3।।
राधाकृष्णप्रणयविकृतिर्ह्लादिनी शक्तिरस्मा-
देकात्मानावपि भुवि पुरा देहभेदं गतौ तौ।
चैतन्याख्यं प्रकटमधुना तद्द्वयञ्चदयमाप्तं,
राधाभावद्युति सुबलित नौमि कृष्ण स्वरूपम्।।4।।
अद्वैतप्रकटीकृतो नरहरिप्रेष्ठः स्वरूपप्रियो,
नित्यानन्दसखः सनातनगतिः श्रीरूपक्षत्केतन।
लक्ष्मीप्राणपतिर्गदाधररसोल्लासी जगन्नाथभूः,
सांगोपांग सपार्षदः स दयतां देवः शचीनन्दनः।।5।।
वैराग्यविद्यानिजभक्तियोग शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्णचैतन्य शरीरधारी कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये।।6।।
संसार-सिन्धु तरणे हृदयं यदि स्यात्,
संकीर्तनामृतरसे रमते मनश्चेत्।
प्रेमाम्बुधौ विहरणे यदि चित्त वृत्ति-
श्चैतन्यचन्द्रचरणे शरणं प्रयातु।।7।।

माखन चोर से हरि बोला बैरागी बन गये-

मीरा का मीठा उलाहना

अब तो हरी नाम लौ लागी, साधो हरी नाम लौ लागी।
सब जग कौ यह माखन चोरा, नाम धर्‍यौ वैरागी।।
कहाँ छाँड़ी बहु मोहन मुरली, कहाँ छाँड़ी सब गोपी।
मूड़ मुड़ाय डोर कटि बाँधी, माथे माहि न टोपी।।
मात यशोमति माखन कारन, बाँधे जाकौ पाँव।
श्याम किशोर भये नव गौरा, चैतन्य जाकौ नाम।।
पीताम्बर कौ भाव दिखावै, कटि कोपीन कसे।
दास भक्त की मीरा दासी, रसना कृष्ण बसे।।

❧❖❧

गोपिन के अनुराग आगे, आप हारे श्याम।
जान्यो यह लाल रङ्ग कैसे आवैं तन में।।
ये तो सब गौर तनी, नख-सिख बनी ठनी।
खुल्यौ यों सुरङ्ग अङ्ग-अङ्ग रङ्ग बन में।।
श्यामताई माँझ सो ललाई हू समाई जो ही।
तात मेरे जान फिरि आई यह मन में।।
जसुमति-सुत सोई शची-सुत गौर भये।
नये-नये नेह चोज नाचें निज गन में।।
(श्रीभक्तमाल के टीकाकार श्रीप्रियादास)

दोहावली

कलियुग में कीर्तन हरि, यही कृष्ण कौ रास।
श्याम ही गौरा रूप में, याके देव हैं खास।।1।।
सखा भये सखियाँ सकल, निज-निज रूप दुराय।
श्यामहुँ ढकि तन श्यामता, बनि गये गौरा राय।।2।।
रास ठौर कीर्तन रच्यौ, मुरली हरि धुन गाय।
युगल एक बनि गौर हरि, दीनों प्रेम लुटाय।।3।।
जो गौरा सोई श्याम हैं, जोइ श्याम सो गौर।
राधा कृष्ण दोऊ मिले, भये गौर एक ठौर।।4।।
बाहर सों जो गौर है, भीतर कृष्ण स्वरूप।
कलि में कीर्तन यज्ञ सों, भजिये कृष्ण अनूप।।5।।

'गो' अक्षर गोविन्द सों, राधा सों लियौ 'रा'।
दोऊ मिल एकै भये, नाम पर्‌यौ गौरा।।6।।
ब्रज के तुम गोपाल हो, नदिया निमाई लाल।
भक्तन के उर माल हो, जय जय जय शचीलाल।।7।।
कौशल्या के राम हो, यशुमति के जु कन्हाय।
शचि के सोइ निमाइ तुम, बसौ सदा उर आय।।8।।
ज्ञान ध्यान सब कछु गयौ, भक्ती हू चलि जात।
गौरा ह्वै श्रीकृष्ण जो, हरि हरि बोलन गात।।9।।
भाव भरे और रस पगे, करुणा के आगार।
जय शचीनन्दन गौरहरि, विष्णुप्रिया उर हार।।10।।
गो गो कहि उन्मत्त जे, गौरा कह्यौ न जाय।
ऐसे प्रभु निताई के, नित ही वन्दौं पाँय।।11।।
गौरा प्रेम-स्वरूप हैं, आनन्द रूप निताय।
चहौ 'प्रेम' आनन्द तौ, भजिये दोनों भाय।।12।।

ध्रुवपद-यथाराग

जयति जय गौरदेव, नमो बारम्बार।
उदित नदिया उदयाचल, कलि पावन अवतार।।1।।
अद्वैत आना गोलोक धन, नरहरि श्रेष्ठ प्राणजन।
स्वरूप प्रिय निताई सखा, सनातन जीवाधार।।2।।
रूप हृदय-नित-विहारी, लक्ष्मी प्राणपति सुखारी।
गदाधर-उर-रसोल्लासी, विष्णुप्रिया उर हार।।3।।
जगन्नाथ सुत निमाई, श्रीवास सदा सहाय।
सांगोपांग पार्षद सङ्ग, करौ 'प्रेम' प्रचार।।4।।

❧❖❧

जय जय जय गौरदेव, कलि पावन अवतार।।टेक।।
उज्ज्वल कनक बरन अंग, अंग अंग भाव तरंग।
रंग रंग नव अनंग, नमो नमो बार बार।।1।।
नयन कमल सरस धार, भूषण नवरस विकार।
गति विलास नृत्यकार, नमो नमो बार बार।।2।।
अधम पतित प्रति ढरन, कण्ठ लाय अभय करन।
अभूत भूत करुणा करन, नमो 'प्रेम' बार बार।।3।।

❧❖❧

ध्रुवपद-यथाराग

जयति जय गौर निताई, बलि बलि बलि जाई।।
काम कोटि रूप धाम, चन्द्र कोटि सुधा धाम।
मातृ कोटि क्षमा धाम, दया धाम भाई।।1।।
कोटि कल्पतरु उदार, गहन सिन्धु कोटि धार।
भाव कोटि पारावार, रस आगार गाई।।2।।
कोटि करि सम हुँकार, कलि कोटि तर्जनहार।
देव कोटि कोटि बार, 'प्रेम' नमे पाई।।3।।

सवैया

भवसिन्धु अपार सुपार करन की
मन में जो अभिलास बड़ी है।
हरि संकीर्तन नाम सुधारस
पीवन की जो चाह खरी है।
'प्रेम' सुधा सागर लहरी में
मधुर किलोल चहौ जो करी है।
शरन गहौ चैतन्य चरन की
मुख सौं बोलौ गौर हरि है।।

सवैया

धर्म की छाँह न छीये कभू
निशिवासर पाप में बूड़ि रहै जे।
पावन सारन सन्तन की न
दृष्टि परी कबहू जिन पै है।
नाचत गावत लोटत ते हू
हरि रस अमृत पीपी छकै है।
ऐसे उदार श्रीगौर निताई की
बोलो 'प्रेम' सों जै जै जै है।।

जयगान धुन

जै जै श्री चैतन्य महाप्रभु गाइये।
सत् चित् आनन्द रूप सदा उर धाइये।।
प्रेम सिन्धु परिपूर्ण हिये उमगाइये।
गौर किशोर रूप की बलि जाइये।।1।।
जै गौर नित्यानन्द जयद्वैतचन्द्र।
गदाधर श्री वासादि गौर भक्त वृन्द।।2।।
जय रूप, सनातन, भट्ट रघुनाथ।
श्रीजीव, गोपाल भट्ट दास रघुनाथ।।
एइ छय गोसाञि करि चरण वन्दन।
जाहा हैते विघ्न नाश अभीष्ट पूरण।।3।।
जय शचीनन्दन जय गौर हरि।
विष्णुप्रिया प्राणधन नदियाबिहारी।।4।।
हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः।।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।
हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।।

आरती

आरती नदिया बिहारी की, संकीर्तन रास बिहारी की।
कनक सम गौर अङ्ग सोहे, वदन हरि नाम मधुर मोहे।।
भुवन मङ्गल पावन जो हे, विश्वम्भर गौर बिहारी की।
सङ्कीर्तन रास बिहारी की।।1।।
सदा उर भाव महा धारें, चलत नैनन सों रस धारें।
सुबाहु विशाल, गरे वनमाल, मधुर छवि जाल।
श्रीविष्णुप्रिया बिहारी की।। सङ्कीर्तन रास।।2।।
दाहिने राम निताई दयाल, गदाधर बांये भाव रसाल।
अद्वैत श्रीवास, भक्त ओर-पास, सेवत सुख-राशि।
आश शचि-सुत सुखकारी की।। सङ्कीर्तन रास।।3।।
हरि हरि धुनि मङ्गल छाई, खोल करताल औ शहनाई
कटें भव-फन्द, मिटें कलि-द्वन्द, भजौ गौर-चन्द।
जय जय प्रेम-अवतारी की।। सङ्कीर्तन रास।।4।।

आरती

ॐ जय जय गौर हरी।
नित्यानन्द दयाल भक्तभेष हरी।।1।।
ब्रजलीला पूरन हित, गौरा रूप धरी।
आये राधा-माधव, एकै देह करी।।2।।
साधन हीन मलीन, लखि कलि जीव हरी।
आपहुँ तजि संसारहि, भये संन्यासी हरी।।3।।
ईश्वरताई छिपाई, कहुँ प्रगटाई हरी।
लीला नर ईश्वर की, मधुर रचाई हरी।।4।।
पहले पापिन तारे, दोष न देखें हरी।
मारन हूँ जो आवें उनसों बुलावें हरी।।5।।
दया क्षमा गुण धाम, 'प्रेम' रस धाम हरी।
तुम सम तुम ही निताई, गौर श्याम हरी।।6।।

सम्मिलित गायन पद

::1::

जय नन्दनन्दन गोपीजनवल्लभ राधानायक नागर श्याम।
सोई शचीनन्दन नदिया पुरन्दर, सुर-मुनि-गण मनमोहन धाम।।
जय निज कान्ता कान्ति कलेवर, जय-जय प्रेयसी-भाव-विनोद।
जय ब्रज सहचरी लोचन मंगल, जय नदिया वधु नयन आमोद।।
जय जय हरि श्रीधाम सुबल सखा, प्रेम प्रवर्द्धन नव घन रूप।
जय रामादि सुन्दर सहचर, जय जय मोहन गौर अनूप।।
जय अतिबल बलराम प्रियानुज, जय जय नित्यानन्द आनन्द।
जय जय सज्जन-गणभय भंजन, गोविन्ददास आश अमन्द।।

::2::

श्रीगौर चन्द्र कृपालु भज मन, सकल कलि कल्मष हरम्।
श्रीकृष्ण नाम ओ प्रेम देवता, कृष्ण चैतन्य हरि परम्।।1।।
पीत अङ्गन पीत भूषण पीत सूत्र पट धरम्।
पीत माला पीत नूपुर पीत कान्ति कलेवरम्।।2।।

ललित वलित बाहु ऊर्ध्व विशाल वश परिसरं।
मधुर मनहर भुवन मङ्गल, नृत्य कमनीय करं।।3।।
नयन नीरज नवल नित्य, नेह रस करुणा भरं।
बोल हरि हरि बोल गद्गद्, नाम हरि मङ्गल करं।।4।।
पतित पापी खल सुरापी, यवन म्लेच्छ मलहरं।
परम करुणा, पर उदारता क्षमा शान्ति उर धरं।।5।।
दीन करुणा दीनबन्धु, दीनानाथ हरि स्वयं।
दीन भेष भाव धरि संन्यासी रूप नामं धरं।।6।।
श्री वृन्दावन रस प्रेम माधुरी, सारसाध्य परतरं।
पद वास ब्रज हरिनाम साधन दाता गौर सुन्दरं।।7।।
हठ भाव तजि सत भाव धरि जे गावें सुने श्रीगौर हरिम्।
ते पावें निश्चय राधा-कृष्ण 'प्रेम' पावन दुर्लभम्।।8।।

::3::

जय गौर हरि जय गौर हरि जय गौर हरि।
कीर्तन कारी नदिया विहारी स्वयं अवतारी गौर हरि।।1।।
भाव रसधारी, पतित उबारी, भव दुःखहारी गौर हरि।
रूप रसाला, नयन विशाला, परम कृपाला गौर हरि।।2।।
दया अपारा, परम उदारा, पतित अधारा गौर हरि।
गुण आगारा, रूप भण्डारा, भाव रसधारा गौर हरि।।3।।
नाथअनाथा लक्ष्मीनाथा, कन्थानाथा गौर हरि।
श्रीजगन्नाथा चल जगन्नाथा, सुत जगन्नाथा गौर हरि।।4।।
जगदानन्दवर नित्यानन्दवर, विष्णुप्रियावर गौर हरि।
ब्रह्मानन्दवर 'प्रेमानन्द' कर, अद्वैतानन्द गौर हरि।।5।।

::4::

आओ जय निताई गौर चाँद आऔ हे।
आओ जय संकीर्तन पिता आऔ हे।।
आओ गदाधर अद्वैत संग, श्रीवासादि लै साँगोपाँग।
(करहु संकीर्तन रंग) करहु प्रभो, करहु प्रभो करहु।।
निताई हे गौर हे निताई हे गौर हे।
करहु संकार्तन रङ्ग कीर्तन राज आऔ हे।।1।।
संकीर्तन सुभट गौरांग नट आऔ हे।
संकीर्तन रास प्रकट करहु, एक में युगल नृत्य करहु।

(महाभाव रस रास मिलित तनु, एक में युगल नृत्य करहु।।
बिजुरी वरण ढाका श्यात, एक में युगल०)
भाव रसहिं प्रकट करहु नाम प्रेम लुटाऔ हे।।2।।
(आऔहे! आऔहे! आऔहे! नाम प्रेम लुटाऔ)
(कलि कूँ धन्य करन आये, नाम प्रेम लुटाऔ)
(मन्द भागी कलि के जीव, भाग्य देने आये हो, नाम प्रेम०)
(हमकूँ डूबत देखि आप, नाम नौका लाये हो, नाम प्रेम०)
(हरि बोल-हरि बोल-हरि बोल-हरि बोल)
निताई हे गौर हे, निताई हे गौर हे।।3।।
आओ जय भुवन मोहन सुन्दर आऔ हे।
आओ जय गौर श्याम धाम आऔ हे।।
(आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे!)
नाचो हृदय आँगन माँहि, नाचो भक्तन दृगन माँहि,
नाचौ 'प्रेम' जीवन माँहि आनन्द बरसाऔ हे।
(दया दृष्टि दान करौ, आनन्द बरसाऔ हे)
हम हैं चरन शरन तेरी, दया दृष्टि दान करौ-
आनन्द बरसाओ हे)
(निताई चाँद प्रेम दाता, दया दृष्टि दान करौ)
(पारस मणि गौर चाँद, दया दृष्टि दान करौ)
(आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे! आऔहे!)
(निताई हे! गौर हे! निताई हे! गौर हे! आनन्द बरसाऔ हे!)
हरिबोल-हरिबोल-हरिबोल-हरिबोल

::5::

चेतो दर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापणं,
श्रेयः कैरवचन्द्रिका वितरणं, विद्यावधूजीवनं।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं, प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं।
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्ण संकीर्तनम्।।

पद-चेतो दर्पण मार्जनः

हरि कीर्तन गंगा यमुना सों, बढ़कर पावन धारा।
चित दर्पण निर्मल कर देवे, जो कहै बारम्बारा।।1।।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

भव महादावाग्नि निर्वापणं:
हरि कीर्तन सावन भादों की, रिमझिम रिमझिम धारा।
भव दावानल सब ही बुझावै, जो कहे बारम्बारा।।2।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

श्रेय: कैरवचन्द्रिका वितरण:
हरि कीर्तन है शरद पूनौ की, अमृत चाँदनी धारा।
मंगल कुमुद कली खिल जावे, जो कहे बारम्बारा।।3।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

विद्या वधू जीवनं:
हरि कीर्तन यह प्राणपती है, बरसावे रति धारा।
विद्या वधू तब ही हो सुहागिनौ कहे बारम्बारा।।4।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनम्:
हरि कीर्तन हिरदै उमगावै, आनन्द सागर धारा।
पद पद पूर्ण पीयूष पिवावै, जो कहै बारम्बारा।।5।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

सर्वात्मस्नपनं:
हरि कीर्तन है कायाकल्प कूँ, दिव्य रसायन धारा।
माया दास हरिदास बन जावै, जो कहै बारम्बारा।।6।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।

परं विजयते श्रीकृष्ण संकीर्तनम्:
हरि कीर्तन की धूम मची जग, चहुँदिशि नामधुनि धारा।
सब साधन सिरमौर 'प्रेम' यह, जो कहें बारम्बारा।।7।।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।।

::६::

जय जय मङ्गल हरे कृष्ण नाम।
सुमरन करौ भाव सौ धरों ध्यान।।1।।
रसना रस नाहीं सरस करौ हे।
श्रवण बधिर खोल दिव्य धुनि भरौ हे।।
मंगल करो अवतारी नाम।।2।।

हृदय मलिन मंजुल मृदुल करौ हे,
जीवन विफल सत्य सुफल करौ हे,
सुन्दर करो अवतारी नाम।।3।।
कृष्ण रूप लीला उर फुरौ हे,
कृष्ण 'प्रेम' जीवन में भरौ हे,
आनन्द करो अवतारी नाम।।4।।

::७::

हरि हरि हरि हरि नाम जो गावै।
हरि भगवान स्वयं तहाँ आवै।।
हरि के अङ्ग बसे बस देवा। हरि पद को तीरथ करें सेवा,
हरि गाऔ घर बैठौ न्हाऔ। तन मन के सब मैल बहाऔ।।
हरे कृष्ण०। हरे राम।
नाम समान न दान है कोई, नाम समान न ज्ञान है कोई,
नाम समान न यज्ञ है कोई, नाम समान न देव है कोई,
नाम सदा सुख दुख में गाऔ, गाय गाय हरि पदवी पाऔ।
हरे कृष्ण०। हरे राम०।।
हरि कौ नाम यह फूल कली है, गावत गावत जाय खिली है,
महक मधुर मादक तब आवै, मन मधुकर तजि विषय रमावै।
रूप धाम लीला तब देखै, जीवन सफल 'प्रेम' करि लेखै।
हरे कृष्ण०। हरे राम०।

::8::

मधुर सुमंगल नाम कहौ मुख, ध्यान धरौ हिय सुखदाई।।1।।
(हरे कृष्ण गोविन्द रामनारायण केशव कलिमलहारी-
हाँ मोहन मुरलीधारी, हाँ श्याम गिरवरधारी),
पीत बसन तन नील सुघन छवि बनमाला जु सुहाई।
अङ्ग त्रिभङ्ग ललित मनमोहन, मुकुट लकुट छवि छाई।।2।।
हरे कृष्ण गोविन्द रामनारायण०।।
भाल तिल कुंकुम और चन्दन कुण्डल विमल सुहाई।
अलक कपोलन मधु मृदु मुसकन, मधुर मधुर अति भाई।।3।।
हरे कृष्ण गोविन्द, रामनारायण०।।
गोपी गोप गौअन मधि राजत, गोकुलचन्द कन्हाई।
मन्द मधुर मुरली मुख बाजत, आनन्द 'प्रेम' रसदाई।।4।।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।।

::9::

जय माधव मदन गोपाल, जय मुरलीधर नन्दलाल।
जय राधाकान्त कृपाल, जय मोहन गोपी ग्वाल।।1।।
नयन विशाला, गले वनमाला, चरनन नूपुर बाजे रसाला।
चाल चलें जब लाजें मराला, पीताम्बर तन श्याम तमाला।।2।।
वनमाला पहरे पचरंगी कटि कछनी काछे बहुरंगी।
मुरली बजावै ललित त्रिभंगी, राधा राधा नाम रसाल।।3।।
गोकुल में वह पलना झुलैया, नन्दगाँव में गाय चरैया।
वृन्दावन में रास रचैया, गोपीजन वल्लभ मोहन लाल।।4।।
ब्रजमोहन सोहन ब्रजचन्द्रा, ब्रजनागर नटखट नन्द नन्दा।
ब्रज जीवन ब्रज आनन्द कन्दा, नयन मणि प्रेम कण्ठ माल।।5।।

::10::

गौरा गा जाइयो मधुर मधुर हरिनाम।
सोय रहे हम नींद में भारी, सपने के सुख में ही सुखारी,
टेरि सुटेरि जगा जइयो, मधुर मधुर०।।1।।
रात अन्धेरी डर है भारी, छोड़ न दीजो जगाय मुरारी,
दीप दिखाय लिवा जइयो, मधुर मधुर०।।2।।
जाना दूर है दम तो नहीं है, राह खर्च कौ दाम नहीं है,
दम और दाम दिवाय जइयो मधुर मधुर०।।3।।
मारग् में दरिया है भारी, काठ की नैया चले तहाँ री,
नैया कृपा की लै अइयो, मधुर मधुर०।।4।।
बहुत दिनन सों आस लगी है, हृदय में 'प्रेम' की प्यास लगीहै,
अपने हाथ पिवाय जइयो, मधुर मधुर०।।5।।

::11::

हरिहरि गाना, हरिहरि गाना, हरिहरि गाना, हरिहरि गाना।
हरि का भजन करो, हरि है तुम्हारा, हरि हरि गाना।।
इसी नाम से तेरा काम बनेगा, यही नाम तेरे संग चलेगा।
हरि नाम लेने वाला, हरि का प्यारा, हरि का भजन करो।।2।।

कोई कहे सीता राम, कोई कहे राधे श्याम।
कोई गिरधर गोपाल, कोई राधा माधव लाल।
वही एक प्राण प्यारा, सभी का सहारा, हरि का भजन।।3।।
सुख दु:ख भोगे जाओ, लेखा सब मिटाते जाओ।
हरि गुण गाते जाओ, हरि को रिझाते जाओ।
वे हरि करुणासिन्धु (वे हरि दीनबन्धु) नमो बारम्बारा।।5।।
दीनों पर दया करो, बने तो सेवा भी करो।
मोह सब दूर करो, 'प्रेम' हरि ही से करो।
यही भक्ति, यही योग, यही ज्ञान सारा, हरि का भजन।।5।।

::12::

निताई निमाई दोउ प्रेम के अवतार हैं।
रूपगुण लीला इनकी पावे कौन पार हैं।।
गोकुल विहार तजि नदिया में अवतारी।
राम कृष्ण दोउ करें लीला मनोहर हैं।। निताई।।
ऐसा अवतार कहुँ सुन्यौ नहीं पढ़्यौ है।
पातकी उद्धार किये जाय द्वार द्वार है।। निताई।।
कौन अवतार करि माँग्यो पाप पापिन सों।
मारन हारेन को कियौ कौन उन हार है।। निताई।।
कलि के सताये सब साधन नसाये को।
'प्रेम' प्रभु गौर दियौ नाम कौ आधार है।। निताई।।

::13::

अवतार नीकौ गौरा, कलि में अवतार।
गौर रूप को छद्म बनायौ आयो श्याम चोरा।।1।।
चाँद नाचे सूरज नाचे और नाचे तारा।
पाताल में बासुकी नाचे गाय हरि हरि गौरा।।2।।
ब्रज में प्रेम प्रेमी नाचें यहाँ तो पापी चोरा।
जगाई मधाई जैसे नाचें गाय हरि-हरि गौरा।।3।।
बाट चलत बटोहौ नाचें खेलत नाचें छोरा।
माल मोलते गाहक नाचें गाय हरि हरि गौरा।।4।।
जननी गोदमें दूध पीमते, नाचें बालक छोरा।
पति संग सोवति कुलबाला, गाबें हरि हरि गौरा।।5।।

नाचें कोई है गावे कोई जाने न निशि भोरा।
दया नगर में नदी 'प्रेम' की बहाय दई गौरा।।6।।

::14::

हरि नाम लुटाने वाले (हरि प्रेम लुटाने वाले)
जय गौर हरि, जय गौर हरि।।टेक।।
तब मुरली मधुर बजाई, कोई गोपी ही सुन पाई;
अब कण्ठ से हरिधुनि गाई, सब दुनियाँ ने सुन पाई,
सोतों को जगाने वाले, जय गौर०।।
तब आधी रात बजाई, छिप करके वन में गाई,
अब तो दिन रात सदा ही, घर घर में धुनि पहुँचाई।
नाम यज्ञ रचाने वाले, जय गौर०।।
तब गोपिन चीर चुराये, देह के सब धर्म छुड़ाये,
अब पापिन पाप चुराये, भुज भरि भरि के उर लाये,
रस 'प्रेम' पिलाने वाले, जय गौर०।।

::15::

आयौ कलि पावन हरि गौर, सुनायौ नाम हरि हरि बोल।
नदिया में अवतार लियौ है, हरि कीर्तन प्रचार कियौ है,
कलियुग में आधार दियौ है, गौर निताई हरि बोल।।1।।
आप नाचे और जगत नचाये, नाम संकीर्तन रास रचाये,
कलि कीलन को मन्त्र सुनाये, गौर निताई हरि बोल।।2।।
भक्तन कूँ गिन गिन के नचाये, पापिन कूँ चुन चुन के नचाये,
नीचन कूँ नम नम के नचाये, गौर निताई हरि बोल।।3।।
घर के भीतर के लोग नचाये, वन भीतर के बाघ नचाये,
मठ भीतर के बाबा नचाये, गौर निताई हरि बोल।।4।।
दिग्विजयी कूँ दीन बनायौ काजी यवन कूँ दास बनायौ,
जगाई मधाई गरे लगायौ, गौर निताई हरि बोल।।5।।
नाम संकीर्तन यज्ञ रचायौ, राधा भाव ओ प्रेम लखाऔ,
'प्रेम' को मूल नाम बतायौ, गौर निताई हरि बोल।।6।।

::16::

बनि आये हैं मल्लाह आप हरि,
बहते देख जीवों को कलि में, ले आये हैं नैया आप हरि।
निज नाम की नैया आप हरि। बनि०।।1।।
नैया भी आप खिवैया भी आप, बाँह गहैया भी आप हरि,
उठाऔ, बैठाऔ, ले जाऔ पार आप।। बनि०।।2।।
हरि संकीर्तन भेरी बजाई, देश देश में खबर पहुँचाई,
भाग सके ना, कोई बचे ना, कीर्तन सेना, प्रेम की सेना,
घेरे ओ टेरें ओ पैयाँ परें, कहें आये हैं मल्लाह आप हरि,
बनि०।।3।।

::17::

क्या धूम मचा दी है तूने
ऐ नदिया नागर गौर लला।
हरि बोल हरि बोल कह नचाया जगत
ऐ नदिया नागर गौर लला।।1।।
कोई रूप के तेरे घायल हैं
स्वरूप से कोई कायल हैं।
कोई गुण के तेरे गायल हैं
ऐ नदिया नागर गौर लला।।2।।
तेरे सोने के नूपुर पायल हैं
जहाँ प्राण मेरे लिपटायल हैं।
तेरे नैना रस बरसायल हैं
ऐ नदिया नागर गौर लला।।3।।
भुजदण्ड मृणाल उठायल हैं
हेम वक्ष विशाल बढ़ायल हैं।
उर पापी तापी लगायन हैं
ऐ नदिया नागर गौर लला।।4।।
तुम आप नचे औ नचायल हो
तुम आप छके औ छकायल हो।
प्रेमानन्द लुटे औ लुटायल हो
ऐ नदिया नागर गौर लला।।5।।

❧❖❧

।। जय गौर।।

श्रीश्रीगौरांगलीलामृत

(द्वितीय भाग)

प्रणेता–

स्वामी श्रीप्रेमानन्दजी

प्रकाशक

ब्रज रासलीला संस्थान

गोविन्द विहार ● 535/2 रमणरेती ● वृन्दावन

निवेदन

'श्रीगौराङ्गलीलामृत' ग्रन्थ का यह द्वितीय खण्ड प्रिय पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड में श्रीगौराङ्ग स्वरूप तत्त्व, गौरांगावतार प्रयोजन, आविर्भाव लीला एवं बाल निमाई, विद्यार्थी निमाई तथा अध्यापक पं० निमाई की चरितावली–जन्म से २१ वर्ष तक की कुछ झाँकियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

इस द्वितीय खण्ड में २१ से २४ वर्ष तक, संन्यास पूर्व तक की प्रमुख लीलाओं का दिग्दर्शन कराया गया है। जिस कार्य के निमित्त आपका यह गौरांगावतार है, उसी से इस खण्ड का प्रारम्भ होता है–वह कार्य है: रागानुगा प्रेमभक्ति का दान एवं कलियुग धर्म नाम संकीर्तन का प्रचार।

पितृ–श्राद्ध–कार्य के निमित्त श्रीमन् महाप्रभु गया गमन करते हैं। वहाँ श्रीगदाधर भगवान् के पादपद्म तीर्थ के दर्शन से उनमें अभूतपूर्व भावोदय हो जाता है एवं श्रीवृन्दावन बिहारी श्रीकृष्ण के दर्शन के लिये पागल हो उठते हैं। बस यहीं से उनमें वह विलक्षण परिवर्तन होता है जो उनकी जीवन धारा को लोक–पथ से मोड़कर भगवद्पथ की ओर उन्मुख कर देता है। विद्या विलासी गर्वोद्धत पण्डित निमाई अब विनयावनत, भक्त पदरजाकांक्षी अमानी–मानद महाभागवत बन जाते हैं।

गया गये थे–हँसते गाते। नदिया लौटे रोते–बिलखते। पढ़ना–पढ़ाना छूटा। पाठशाला संकीर्तनशाला बन गई और वहाँ 'आदि संकीर्तन' 'हरि हरये नमः। कृष्ण यादवाय नमः' का प्रथम मंगल उद्घोष होने लगा।

इस प्रकार विद्या–विलास का अध्याय समाप्त होता है एवं प्रेमभक्ति–विलास का एक अखण्ड अनन्त अध्याय प्रारम्भ होता है। दूर–दूर से भक्त–चकोर–वृन्द आ आकर गौरचन्द्र को घेर लेते हैं। उनके मुखचन्द्र सुधा एवं उस मुखचन्द्र से निःसृत हरिनाम सुधा का नित्य पान कर–करके कृतार्थ हो जाते हैं। नारदावतार भक्तराज श्रीवास का गृहांगन संकीर्तन–मन्दिर बन जाता है। वहाँ रात–रात भर महाप्रभु भक्त परिकरवृन्द सहित संकीर्तन किया करते हैं।

उस संकीर्तन महामहोत्सव में कभी–कभी महाप्रभु में अपने भगवद्भाव का भी प्रकाश हो जाता है। तब भक्तों को अपने–अपने भावानुसार राम, कृष्ण, वाराह, नृसिंह, दुर्गादेवी आदि के दर्शन होते हैं एवं वे वरदान, अभयदान, परम कल्याण को प्राप्त कर कृतकृत्य हो जाते हैं।

प्रेम और आनन्द एक सिक्के के दो रुख हैं। जहाँ प्रेममूर्त्ति गौरचन्द्र हों वहाँ आनन्द मूर्त्ति भी होनी ही चाहिये। बस 'नित्य-आनन्द' भी आ मिले। यही निताई-निमाई मिलन है। दो दिवानों के साथ एक तीसरा नाम दिवाना-सवा लाख नाम नित्य कीर्तनकारी यवन हरिदासजी आ मिले अब तक तो संकीर्तन श्रीवास-गृह में द्वार बन्द करके ही होता रहा पर अब महाप्रभु के आदेश से श्रीनित्यानन्द एवं हरिदासजी ने नदिया नगर में घर-घर जाकर हरिनाम-संकीर्तन की धूम मचा दी। नाम-प्रेमी के साथ ही तार्किक एवं तान्त्रिक पंडितों का एक बड़ा वर्ग नाम-संकीर्तन का प्रबल विरोध करने लगा उन्होंने संकीर्तनकारियों को डराया धमकाया, पिटवाया, मुसलमान हाकिम से फरियाद की, नगर कोतवाल दुर्दान्त दुष्ट जगाई-मधाई एवं नगर काजी तक का आश्रय लिया जो अन्त में हरिनाम एवं नामी के प्रबल प्रताप के सम्मुख नत-जानु होकर संकीर्तन के सहायक प्रेमी सज्जन बन गये।

इस प्रकार कलियुग का धर्म हरिनाम संकीर्तन जो श्रीवास-गृहांगन से प्रारम्भ हुआ वह नदिया नगर में गूँजता हुआ कालान्तर में भारत-गगन में व्याप्त हो गया और अब विश्व के कोने-कोने में मंगल उद्घोष कर रहा है।

इन सब विषयों का सविस्तार वर्णन इस खण्ड में मिलेगा तथा अन्त में एक मधुर मनोहारी लीला के दर्शन होंगे- श्रीमन्महाप्रभु द्वारा श्रीकृष्ण लीलानुकरण जिसमें श्रीगौरांग प्रभु श्रीराधारानी तथा श्रीअद्वैताचार्य जी श्रीकृष्ण की भूमिका का अभिनय करते हैं।

अपनी भूल-भ्रान्तियों के लिये सभय निवेदन है कि-

सब गुन रहित कुकवि कृत बानी।
राम नाम जस अंकित जानी।।
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही।
मधुकर सरिस सन्त गुनग्राही।।

श्रीवृन्दावन — आशीषाकांक्षी लेखक

प्रेमानन्द

विषय-सूची

प्रकाशकीय

कलियुग पावनावतार महाप्रभु श्रीश्रीकृष्णचैतन्यदेव नित्यानन्द प्रभुपाद के लीलाग्रन्थ 'श्रीगौरांगलीलामृत' का द्वितीय भाग सुधी पाठकों के करकमलों में प्रस्तुत है।

जैसा कि पूर्व निर्णीत है ग्रन्थ को ४ भागों में प्रकाशित किया जाना है। शेष २ खण्ड भी पाठकों की सेवा में शीघ्र ही प्रस्तुत किये जायेंगे।

इस अद्‌भुत रसवर्षणकारी ग्रन्थ की रचना परमादरणीय पूज्य सन्त श्रीस्वामी प्रेमानन्दजी द्वारा की गयी है, जो कि महाप्रभु लीलाभिनय के आधुनिक जनक हैं। आज जितनी भी गौरांगलीला विभिन्न मण्डलियों द्वारा प्रस्तुत की जाती हैं, उनके पार्श्व में स्वामीजी का कुशल निर्देशन एवं प्रस्तुतीकरण ही उनमें रसाभिवृद्धि करता है। उन्होंने बड़ी कृपा करके इस ग्रन्थ के प्रकाशन की स्वीकृति प्रदान की है।

जनसाधारण को सहज में यह ग्रन्थ उपलब्ध हो सके, इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुये ग्रन्थ की न्यौछावर लागत मात्र रखी है। इससे प्राप्त धनराशि अन्य प्रकाशनों में ही व्यय की जायगी।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में सहयोगी सभी सज्जनों की हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। त्रुटि विच्युति की क्षमा प्रार्थना के साथ—

स्वामी हरिगोविन्द

गया गमन लीला

(विंशति वर्षीय)

भक्तिं कन्दलयन् कलिं कवलयन् प्रेमाब्धिमुद्वेलयन्।
मोहं व्याकुलयन् रसं च कलयन् लोभं च निर्मूलयन्।।
पापं निर्बलयन् धृतिं सबलयन् कल्लोयन् मानसं।
देवः कोऽपि चमत्कृतो विजयते चैतन्य चन्द्रः प्रभुः।।

जय जय श्रीगौर चन्द्र जय नित्यानन्द।
जय अद्वैत चन्द्र जय गौर भक्त वृन्द।।
दिग्विजयी गौर, 'वादीसिंह' पदवी लही।
भये पंडित सिरमौर, अखंड गौरमंडल मधि।।

चौपाई—

दान मान पूजा बहु पावै। धनी मानी सब शीश नमावैं।।
वस्तु द्रव्य भेंट बहु आवै। दीन दुखी मधि गौर विलावैं।।
विप्र संन्यासी अतिथि नित आवैं। श्रद्धाभक्ति सेवा सुख पावैं।।
गृहस्थ धर्म अतिथि सेवा। करि करि आप सिखावैं देवा।।
गंगा न्हाय तुलसी नित पूजहि। सालिग्राम नारायन अर्चहिं।।
धरि नैवेद्य प्रसादहि पावहिं। पुनि चटसार पढ़ावन जावहिं।।

विद्या विलासी कौतुकी, रूप शील गुन धाम।
भक्ति विलास प्रकाश हित, जान चहैं गया धाम।।

सुनहु सो तीरथ कथा सादर। गये गया जिमि गौर गुनाकर।।
नदिया घर घर विद्या विलासा। सहै भक्ति बहु दुख उपहासा।।
भक्ति भक्त निन्दैं पाखंडी। वाम पंथ गहि पूजैं चंडी।।
भक्ति प्रकाशन हित भगवाना। तीरथ मिस हृदय विच आना।।

(दृश्य–महाप्रभु विचार–मुद्रा में विराजमान)

गौर—

अहो! हमारी यह नवद्वीप नागरी साक्षात् विद्या–नगरी ही है। बालक–वृद्ध सबही विद्यारस में मत्त रहै हैं। जो कछु धर्म–कर्महू है वामें परमार्थ कम है स्वार्थ ही अधिक है। शुद्ध भागवत धर्म की तो उपेक्षा ही

नहीं, उपहास हू है। विद्या-वधू में भक्तिरत्न कूं उत्पादन करकै वाकूं सफल बनायवे वारो जो यह परम भागवत धर्म है वासों तो ये हमारे नवद्वीप के भट्टाचार्य और न्यायाचार्य और तंत्राचार्य प्रायः सभी विमुख हैं। अहा! हरि जैसे शुद्ध सिद्ध भक्त यहाँ आये, हरिनाम को प्रभाव हू प्रत्यक्ष दर्शाय दियो, परन्तु पंडित समाज ने उनकू एक अबोध कीतनीया ही ठहरायो। और जनसाधारण ने हू उनको उपहास ही कियो। भक्ति और भक्त की निन्दा कर करके सब महापराधी ही बने। हाय! कैसी विमुखता!

पद-गाना कालिंगड़ा-३--

हाय बह्यौ जात संसार, महा मोह की धार।
अब कैसे होवै पार, दई हरि भक्ति विसार।।१।।
गीता बाँचैं भागवत बाँचैं, पंडित ज्योतिष कहावैं आछैं।
वेहू हैं भक्ति में काँचैं, करैं न नाम उचार।।२।।
वाद विवाद में दिवस गंवावैं, कृष्णनाम मुखसों नहिं गावैं।
भक्त जनन की हाँसी उड़ावैं, बड़ो ज्ञान अहंकार।।३।।
रही घोर विमुखता छाई, भटकत जीव नहिं पंथ लखाई।
नाम 'प्रेम' की ज्योति जगाई, करिहौं भक्ति प्रचार।।४।।

समाज (बंगला चै० भा०)—

चित्ते इच्छा हैलो, आत्म प्रकाश कोरिते।
भाविलेन आगे आसि गिया गया हैते।।

गौर—(दोहा)

विधि मर्यादा अनुसारि, करिहौं भक्ति प्रकाश।
तीरथ फल को छल करी, अब बनिहौं हरिदास।।
तीर्थ भ्रमण सों चित्त के, मैल राशि कट जाय।
पुनि साधु सत्संग सों, परमारथ मन भाय।।
भाग्यवान जनकूं पुनि, सद्गुरु हू मिलि जाय।
भक्ति मुक्ति अरु प्रेम को, मारग तब खुलि जाय।।

धर्मशास्त्र को यह विधान है कि तीर्थ-सेवन अवश्य करनो चाहिये। वासों चित्त शुद्धि होय है। वहाँ साधु संग सों परमार्थ में रुचि बढ़ै है। सद्गुरु की हू प्राप्ति होय है और तब आत्म-कल्याण को मार्ग खुल जाय है। अतएव पितृ-कार्य कूं निमित्त बनाय के गया के लिए यात्रा करूं। याके लिए प्रथम माताजी सों आज्ञा लै लऊं। (प्रस्थान)

समाज (चौपाई) —

मात समीप गौर चलि आये। चरन परसि पुनि विनय सुनाये।।

गौर—

(मातृ-चरण स्पर्श करते-माता आशीर्वाद देती है)

शची—

वत्स निमाई! आज तुम्हारो प्रसन्न वदन कछु मलिन सों दिखाई दै रह्यौ है। कारण कहा है?

गौर—

माँ! आज मोकूं पिताजी के अन्तिम समय की सुधि आय रही है।
अन्त समय कही जो ताता। ताकी सुधि कर लीजै माता।।
जाय गयाहिं मम पिंड भरिहौ। कृष्ण भक्ति सदा उरधरिहौ।।
गये वर्ष दस गमने ताता। पूरी भई न अबलौं बाता।।
देओ आज्ञा मैं गयाकूं जाऊं। पितृकार्य विधिसों करि आऊं।।
अब विलम्ब उचित न माई। दै आज्ञा करौ मेरी सहाई।।

शची—

सुनि शचि मात कहति अकुलाई। तू मो देह की आत्मा निमाई
जान चहौ पितरन मंगल हित।
रोकि सकौं न, (पै) धीर धरौं कित।।
जान चहौ जो निश्चय भाई। दीजौ पिंड इक मोकूं हू जाई।।

गौर—

कहत गौर ऐसे जिन भाखो। फिरिहौं बेगि उर धीरज राखौं।।
पुत्र सोई जो पितरन तारै। विनती करूं बाधा मति डारै।।
पुत्र गया जब पिंड भरावै। तोष-पोष पितर बहु पावै।।
पितर आस धरि बाट निहारैं। पुत्र आय कब हम प्रति पारै।।

शची—

जानूं हूँ बेटा-यह तेरो परम कर्त्तव्य है कि गया जाय कै पितरन कूं पिंड दान करै। और यासों उनकी परितृप्ति होयगी। फिर मैं भलो बाधा कैसे डार सकूं हूँ। परन्तु मोकूं विश्वरूप की याद आय जाय है और शंका भय के मारे तोकूं आँखिन ते दूर करवे में प्राण छटपटावैं हैं-

गौर ज्योति तू नैन में, देह मध्य तू प्रान।
जैयो मति मोहिं छोड़कै, धर्म प्रेम की आन।।

गौर—

जात हूँ दूर तदपि सुन माई। अपने ढिंग नित समझो निमाई।।
शंका भय सब उर ते टारौ। ऐहौं बेगि यह निश्चय धारौ।।

शची—

एक और हू बात है बेटा! जब तुम पूर्वबंग की यात्रा कूं गये हुते तो तुम्हारे विरह में मेरी लक्ष्मी वधू के प्राण-पखेरु उड़ गये हे। या कारण सों हू मेरी छाती धक्पक् करै है। तुम जाओ अवश्य परन्तु कब तक लौट आओगे या बात कूं निश्चित रूप सों विष्णुप्रिया कूं बताय कै, समझाय कै, धीरज बंधाय कै तब जाओ।

गौर—

ऐसो ही करूंगो माँ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

शची—

मैं तुम्हारे यात्रा को प्रबन्ध करूं हूँ। तुम्हारे मौसा आचार्य चन्द्रशेखर और द्वै-चार जने संग जायेंगे।

गौर—

ठीक है। (चरण पर प्रणाम कर-प्रस्थान)

शची—

(देखती रहती) यह गौर-मुख ही मेरे जीवन को एकमात्र आधार रह गयो है। सबनकूं खोय कै एक याहि कूं देख-देख कै जी रही हूँ। या चाँद मुख कूं देखै बिना दिन हू अंधेरी रात जैसी लगै है। तौहू विदाई तो दैनी ही परैगी। गया जाय कै पिता कूं पिंड भरैगो तो उनकूं हू तृप्ति होयगी। वे सुख पायेंगे (रोती हुई) मैं अपने सुख के लिए उनके सुख में क्यूं बाधा दऊं। चलूं विष्णु मन्दिर में जाय नारायण के निकट मंगल-प्रार्थना करूं जाते मेरो निमाई पितृ कार्य करके सकुशल शीघ्र लौट आवै। (प्रस्थान)

(दृश्य-शयन कक्ष-विष्णुप्रिया उदास बैठी हैं)

समाज दोहा—

नववधू श्रीविष्णुप्रिया, ता ढिंग गये निमाई।
उठि व्याकुल चरनन परी, धीरज गयो बहाई।।

गौर (उठाते हुए)—

प्रिये! तुम इतनी अधीर व्याकुल क्यों है रही हो!

विष्णुप्रिया (गद्गद् वाणी रुक रुककर)-

प्राणनाथ! सुनूं हूँ कि आप··· माता कूं छोड़ कै ग···ग गया कूं···(रोने लगती है)

गौर—

हाँ प्रिये! गया जानो चाहूँ हूँ। पिताजी की अन्तिम आज्ञा यही ही कि मैं गया जाय कै उनकौ पिण्ड भर दऊंगो। यासों तुमहू अपनी अनुमति देओ।

विष्णुप्रिया-(नतमस्तक रुदन करती हैं)

प्रिये! धीरज धरो! मैं पितृ कार्य करके शीघ्र ही लौट आऊंगो। अधिक विलम्ब नहीं करूंगो। द्वै-तीन मास के भीतर ही आय जाऊंगो। ये दिन तुम्हारे माताजी की सेवा में सहज ही बीत जायेंगे।

विष्णुप्रिया—

नाथ! जब सों दासी कूं श्रीचरणन पै स्थान मिल्यौ है तबसों इनको वियोग यह दासी जानै ही नहीं है। अब इतने दीर्घकाल को वियोग कैसे··· (रुदन)

गौर—

प्रिये! धर्म-कार्य में आत्म सुख को त्याग तो करनो ही परै। धर्म-पत्नी हैवे के नाते सों धर्म कार्य में मेरी सहायता करौ। तुम माता की सेवा में तत्पर रहौ और मोकूं पिता की सेवा के लिए जायवे की अनुमति देओ।

समाज (दोहा)—

लाज शील मूरति प्रिया, पुनि विछोह दुख भार।
पद नख सों भूमि लिखत, अन्तर व्यथा अपार।।

विष्णुप्रिया-(मौन नख से भूमि कुरेदती रहती हैं)

गौर—

प्रिये! तुमही इतनी अधीर है जाओगी तो बेचारी वृद्धा माता कूं कौन धीरज बंधावैगो। मैं तो तुम्हारे ही भरोसे निश्चिन्त हैके उनकूं छोड़ रह्यौ हूँ। यासों जो तुम मोकूं प्रसन्न राखनौ चाहौ हो तो माताजी की सेवा में सावधान रहनौ। मैं शीघ्र ही लौट आऊंगो! अब मोकूं विदा देओ प्रिये।

विष्णुप्रिया (हाथ जोड़)—

जैसी आज्ञा नाथ! भगवान् आपको मंगल करै और मोकूं शीघ्र ही श्रीचरणन के दर्शन होवैं (चरण पर मस्तक प्रदान)

समाज (दोहा)—

एक बेर मुख हेरिकै, दियो शीश नमाय।
चरण द्वय पै बूंद द्वय, दीन्हे अर्घ्य चढ़ाय।।

गौर-(प्रियाजी के शीश पर दक्षिण हस्त कमल पधरा)

कल्याणी! तुम्हारो मंगल होवै (प्रस्थान)

विष्णुप्रिया-(उठकर इकटक देखती रहती हैं)

गाना-पद चौताला-जैजैवन्ती

विपदहारी हरे मुरारे, केशव मधुसूदन।
रक्ष मोर प्राणनाथ, चरणे निवेदन।।
अनिल अनल जल थल सों, करियो सदा मंगल।
प्राणधन आवैं भवन, सेऊं 'प्रेम' चरन।।

(गाते-२ प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

चन्द्रशेखर आचार्य कछु, शिष्यन सहित निमाई।
गमन किये गया धाम कूँ, यात्रा सुनो सुखदाई।।
मार्ग चले जात शचीनन्दन। जनमनरंजन जग अघ गंजन।।

(प्रवेश गौरचन्द्र, चन्द्रशेखर आचार्य, तीन चार बड़े-बड़े छात्र)

छात्रवृन्द (रसिया)—

धनि धनि भारतभूमि मुकुटमणि, जाकूँ अमरागन ललचाय।
अमरागन ललचाय हाँ हाँ।

जहँ जन्म लै भव तरिवे कूँ, अमरागन ललचाय।।१।।

(देवता लोग वहाँ स्वर्ग में)

पीवैं अमृत लाखन बरसन, (पर) अन्त गिरैं इहाँ आय।

(और यहां तो)

मरती बेर 'नारायण' कहि इहाँ पारीहू तिर जाय।।

(और भारत में जितने तीर्थ हैं उतने स्वर्ग में कहा समस्त ब्रह्माण्ड में हू नहीं हैं-यहाँ)

पग पग में इहाँ तीरथ वासा, भुक्ति-मुक्ति लुटाय।
आँचर में पल रहे हैं याकी, ध्रुव प्रह्लाद सदाय।।

(और भैयाओ, भक्त प्रेमी, साधक सिद्ध, सन्त महन्त, यती-सती, ज्ञानी-ध्यानी हमारे या भारत में ही भये हैं और या समय हू हैं, स्वर्ग में तो केवल भोगीराजन को मेला है)

सती सिद्ध संतन वीरन की, अक्षय खान यह माय।
कर्म धर्म तप ज्ञान की भूमि, यासी त्रिभुवन नाय।।

(और यह भारतभूमि भक्तनकी ही खान नहीं भगवान् की हू खान है। और देशन में तो एक-एक अवतार ही हैं और हमारे भारत में असंख्य अवतार हैं)

युग युग तेरी गोदी में खेलैं, राम कृष्ण हरि आय।
धाई माई भगवान भक्त की, प्रेमानन्द वलि जाय।।

भक्त और भगवान् कूँ गोदी में खिलायवे वारी ऐसी यह भारतभूमि है। बोलो 'भारत माता की जय'।

चन्द्रशेखर—

हाँ भैयाओ! हमारी यह धन्य भारतभूमि में भगवान् श्रीहरि की याद जगायवे वारे व्यक्ति और स्थान सर्वत्र हैं और वहाँ स्वर्ग में भगवान् कूँ भुलायवे वारे ही समस्त व्यक्ति, स्थान और वस्तु हैं। तबही तो देवता लोग अपने भाग्य की निन्दा और भारतवर्ष की स्तुति-गान करते भये कहैं हैं कि-(भाग०)

न यत्र वैकुण्ठ कथा सुधापगा,
न साधवो भागवतास्तदाश्रया।
न यत्र यज्ञेश मखा महोत्सवाः,
सुरेश लोकोऽपि न वै स सेव्यताम्।।

गंगा न बहती हो हरि कथा की जहाँ।
भक्त न रहते प्यारे प्रभु के भी जहाँ।
कीर्तन-कथा-महाउत्सव न होते जहाँ।
रहने दो देवलोक को भी, रहना न रहना तहाँ।।

चन्द्रशेखर—

ऐसो है भारत और भारवासिन को सौभाग्य कि देवताहू यहाँ जन्म लैनो चाहैं हैं।

छात्र—

और हम ऐसे हैं जो स्वर्ग जानो चाहैं हैं, देवता बननो चाहैं हैं।

चन्द्रशेखर—

अपनी-अपनी समझ की बात है। हमारे शास्त्र की घोषणा तो यही है कि-

धनि धनि भारत भूमि........।
(गाते-गाते सब चले जाते हैं)

समाज (चौपाई)—

मारग चलै जात शचीनन्दन। जनमनरंजन अघ दुख गंजन।।
बाल वृद्ध पंगु सुनि धावैं। नयन नीर पशु पक्षी बहावैं।।
कुलवती लाज काज तजि धावैं। कहैं लखो नंदलाल ये गावैं।।
सहज भाव गौरा चलि जावैं। रूप मोहन विश्व रमावैं।।
नर नारिन उर बाढ़ै हुलासा। उपजै धर्म भक्ति विश्वासा।।
इहै भानु स्वभाव प्रभावा। उदय होत तम त्रास नसावा।।
नदी वन गाँव पार बहु कीने। मोद विनोद विविध सुख दीने।।
कछुक दिवस चलि चिर नदी आये।
गिरि मन्दार दरस तहँ पाये।।

श्रीमधुसूदन देव जु, राजैं गिरि मन्दार।
तीरथ पावन परम यह, विदित सकल संसार।।

(दृश्य-मन्दार पर्वत के ऊपर मन्दिर श्रीमधुसूदन देव की झाँकी। महाप्रभु आदि का प्रवेश)

पुजारी—

जय मधुसूदन देव की जय
जय मन्दार निवासी नारायण की जय

आओ यात्रियो। दर्शन करौ मधुसूदन देव के। बड़े पुण्य सों इनके दर्शन प्राप्त होय हैं।

चन्द्रशेखर—

पुजारी जी महाराज! हम बंगाल देश के यात्री हैं। आप हमें मधुसूदन देव की कथा सुनायवे की कृपा करैं।

पुजारी—

कृपा कहा यह तो हमारो कर्त्तव्य है। सो सुनो मैं कछु सुनाऊँ हूँ। या पहाड़ी को नाम मन्दार पर्वत है। यह वही मन्दराचल पर्वत को एक अंश है कि जाकी रई बनाय कै देवता और दैत्यन ने समुद्र-मन्थन कियौ हो। मन्थन के चिह्न अबहू या पर्वत के अङ्ग पै स्पष्ट दिखायी देय हैं। याहि ठौर पै भगवान् ने मधु नामक दैत्य कूँ मार्‍यौ हो। वाके मस्तक कूँ छेदन करके वाके धड़ कूँ या पर्वत के नीचे दबाय दियौ हो और वाके ऊपर अपनो चरण पधराय दियौ हो। उन्हीं चरणारविन्दन के स्पर्श सों ही या स्थान को विशेष माहात्म्य है। और यह जो भगवान् मधुसूदन को विग्रह है, यहहू बड़ो प्राचीन है। इनके चरणारविन्दन कूँ तुलसी चन्दन द्वारा पूजवे को अधिकार सबही को है। अतएव आपहू सब तुलसी चन्दन चढ़ायकै पूजन करैं-

ॐ नमो भगवते मधुसूदनाय।
इदं सचन्दनं तुलसीदलं समर्पयामि।
अनेन भगवान् मधुसूदनः प्रीयन्ताम्।

छात्र १—

पुजारी जी महाराज! भगवान् को नाम मधुसूदन कैसे पर्‌यौ सो कृपा करकै बतावैं।

पुजारी—

एक तो मधु नाम के दैत्य कूँ मारवे सों मधुसूदन नाम पर्‍यौ है। दूसरो तात्त्विक अर्थ यह है कि जीव के शुभ और अशुभ कर्मन को नाम हू मधु है। शुभ कर्म सों पुण्य और पुण्य सों उच्च योनि मिलै है और अशुभ कर्म सों पाप और पाप सों नीच योनि मिलै है। परन्तु जो जीव भगवान् की शरण

में जायँ हैं उनके शुभाशुभ दोनों प्रकार के कर्मन को शरणागत पालक भगवान् खण्डन कर देयँ हैं जासों वह भक्त जन्म-मरण के चक्र सों मुक्त है जाय है। कर्मरूपी मधु कूँ पान करैं हैं यासों मधुसूदन कहावैं हैं।

कर्म शुभाशुभ की मधु, तिनकूँ करैं नित पान।
पान करि उद्धार करैं, सो मधुसूदन नाम।।

अब सब मिलिकै इनकी स्तुति करैं-

स्तुति—

ॐ जय मधुसूदन देव।
जग हित नाना रूप अवतारी, पार न पावैं देव।।१।।
पूरब में जगन्नाथ विराजैं, पश्चिम में द्वारकेश।
दक्षिण पदमनाभ जनार्दन, यहाँ मधुसूदन देव।।२।।
हरिद्वार में श्रीहरि राजैं, मथुरा केशव देव।
वृन्दावन गोविन्द विराजैं, यहाँ मधुसूदन देव।।३।।
बद्री खण्ड में बद्रीनारायण, काबेरी रंगदेव।
मरुखण्ड श्रीनाथ बिराजैं, यहाँ मधुसूदन देव।।४।।
त्रिवेणी में वेणी माधव, गया गदाधर देव।
तिरुपति में बालाजी राजैं, यहाँ मधुसूदन देव।।५।।
वरदराज कांची में राजैं, पंढरपुर विठलेश।
डाकोर में रणछोर बिराजैं, यहाँ मधुसूदन देव।।६।।
आरती मधुसूदन जी की, जो 'प्रेम' सहित गावै।
मिट जायँ सब कर्म शुभाशुभ, हरिपद पद पावै।।७।।

कीर्तन धुनि—

जय मधुसूदन प्रभो मधुसूदन।
करो कृपा हम चरण शरण।।

(संकीर्तन पश्चात्-दण्डवत् प्रणाम। पुजारी द्वारा माला-प्रसादादि वितरण। प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

मधुसूदन दर्शन करि, विहरत गौरा राय।
गिरि मन्दार सुहावनो, उर शान्ति सुख पाय।।

अनुचर कछु गाँव लखि आये। रैन बसेरा तहाँ नहिं भाये।।

(प्रवेश महाप्रभु के दो संगीजन)

छात्र १—

हरे! हरे! ऐसो अनाचार या देश के ब्राह्मणन में–खान पान भक्ष्याभक्ष्य को तो कोई विचार ही नहीं है। इनके घर में रात्रि निवास तो कहा हम पाँवहू न धरैं! राम! राम!

छात्र २—

और ऐसे अनाचारी कदाचारी ब्राह्मण ही बने भये हैं मधुसूदन भगवान् के पंडा–पुजारी। आचार शुद्धि बिना देह शुद्धि नहीं और देह शुद्धि बिना देवपूजा में अधिकार नहीं। आचार ही प्रथम धर्म है, परम धर्म है। चलो भाई, गुरुदेव के समीप चलैं।

(महाप्रभु के समीप आगमन)

गौर—

क्यूँ भैयाओ! देख आये गाँव? कोई स्थान मिल्यौ।

छात्र १—

स्थान तो बहुत मिले परन्तु निवास योग्य तो एकहू न मिल्यौ। अपने विचार में तो वृक्ष को आश्रय ही उत्तम है।

गौर-

जैसो तुम्हारो विचार! आज रात्रि वृक्ष तरे ही बिताय करकै कल प्रातः आगे चलैंगे।

छात्र २—

हम रसोई की सामग्री लै आये हैं। यहीं पाक को प्रबन्ध कर लेयँ हैं।

गौर—

जैसो उचित समझो, करौ।

(छात्रों का प्रस्थान। पर्दा)

समाज (चौपाई)

तरु तर रजनी कीन्हे वासा। लीलामय इक लीला प्रकासा।।
ताव चढ़्यौ श्रीअंगन भारी। कोप प्रवल उतरै न उतारी।।
संगीजन व्याकुल सब भारी। करि बहु यत्न रहै सब हारी।।

(दृश्य-वृक्षमूल-भूमि पर एक आसन पर महाप्रभु लेटे हुए हैं। चन्द्रशेखर आचार्य और छात्रजन उदास बैठे हैं)

चन्द्रशेखर—

वत्स गौर! तुम्हारे जन्म ते आज तांई या २०-२१ वर्ष की अवस्था पर्यन्त तुम्हारे मंगल अङ्ग में काहु प्रकार को रोग-दु:ख देखवे में नहीं आयो। फिर आज यह भयंकर ज्वर कैसे आय गयो जो काहु उपाय सों शान्त ही नहीं है रह्यौ है? तुम ही बताओ अब हम कहा उपाय करें?

गौर—

मौसाजी! या समय हम तीर्थ-यात्री हैं। तीर्थ यात्रा के नियमन को हमने व्रत लै राख्यौ है। तौहु जो यह विघ्न आयौ है यामें द्वै ही कारण सम्भव हैं-मेरो दोष कै मेरे संगी जनन को दोष! अब याकी शान्ति को उपाय एक ही है-विप्रचरणोदकपान।

पापतुलदहने हुताशनं, सौख्यवारिवर्षणोऽम्बुदम्।
रोगमृत्युविनिवारणोऽमृतं, विप्रपादकमलाम्बु देहि मे।।

पद गाना-देश-दादरा—

पाप जायँ छार छार, जैसे रूई आग है।
बहै सुक्ख धार धार, जैसे मेघ राग है।
रोग नसै जीवै मृत, जैसे सुधा पान है।
विप्र पाद अम्बु ऐसो, देओ बचै प्रान है।।

'सर्व रोग खण्डे विप्रोदक पाने'-यासों मोकूँ विप्र चरणामृत लाय कै पिवाओ तो मेरो ज्वर छूट जायगो।

समाज (बंगला चै० मं०)—

ब्राह्मण अवज्ञा देखि विश्वम्भर।
द्विजभक्ति प्रकाशिवो कोरिला अन्तर।।

छात्र १ (धीरे से)—

मौसाजी! कहाँ सों लायें विप्र चरणामृत यहाँ के विप्र तो विप्र ही नहीं हैं।

चन्द्रशेखर (डाँटते हुए)—

ऐसे मत कहो। याद रखो हम तीर्थ-यात्री हैं। हमकूँ काहू की निन्दा नहीं करनी चाहिए। जाओ लै आओ कहूँ ते।

छात्र १ (दूसरों से)—

चलो भैयाओ! खोजैं काहू अच्छे से विप्र को।

(छात्रों का चले जाना)

समाज (सोरठा)—

गुरुदेव! हम तो गाँव सब देखि आये। हमकूँ तो एकहू ब्राह्मण नहीं दीख्यौ।

गौर—

तो कहा या गाँव में एकहू ब्राह्मण नहीं हैं?

छात्र २—

जनेऊधारी तो बहुत हैं परन्तु ब्रह्म कर्महीन हैं।

गौर—

अच्छो तो तुम तो सब आचारवान् उत्तम ब्राह्मण हो। तुम ही कोई मोकूँ अपनो चरणोदक दै देओ तो मैं ज्वर-ज्वाला सों बच जाऊँ।

छात्रजन—

(कानों में अंगुली देते हुए) श्रीविष्णो! श्रीविष्णो! ऐसी आज्ञा न करैं। हम अपने गुरुदेव कूँ अपनो चरणोदक देंगे तो हमकूँ तो नरक में हू ठौर नहीं मिलैगो।

छात्र १—

आचार्य जी चाहें तो दै सकै हैं। ये आपके मौसा हैं और सब प्रकार सों उत्तम हैं।

चन्द्रशेखर—

भैयाओ! मेरो हू साहस नहीं होय है। गौरसुन्दर मेरो भतीजो है तो कहा, विद्या, गुण, प्रभाव आदि में तो कोई महापुरुष प्रतीत होय है। यासों मैं कैसे........

समाज (चौपाई)—

करत सकुच न साहस होई। दै न सकहिं चरणोदक कोई।।
द्वापर में श्रीद्वारिका माँहि। दुखी द्वारिकाधीश महाहि।।
कहैं भक्त पग धूरि देवै। उदर शूल मेरो हरि लेवैं।।
रानी डरपीं नारद डरपैं। कोई न पग धूरिहिं अरपै।।
व्रज गोपी राधा सुनि पाईं। पोट बाँधि पग धूरि पठाई।।
आतम सुख चाहैं सब कोई। कृष्ण सुख चहैं विरलो कोई।।
सोइ चरित कछु भाव सोइ, गौर प्रभु दरसात।
माँगत विप्र पादोदक, संगीजन सकुचात।।

(प्रवेश एक विप्र कृषक। खुला शरीर। मात्र एक धोती पहने-जनेऊधारी-कन्धे पर रस्सी और फावड़ा या कुदाली)

समाज—

विप्र कृषक तेहि मारग आयो। भोरहि खेत सींचन हित धायो।।
प्रभु आज्ञा जन निकट बुलाये। गौर विप्र वत्सल मन भाये।।
उठि प्रभु शीश चरन धरि दीन्हे। निज तन ताप निवेदन कीन्हे।।

गौर—

हे विप्रदेव! मेरे शरीर में भयंकर ज्वर है। आप यदि कृपा करकै मोकूँ अपनो चरणोदक देवैं तो मोकूँ विश्वास है कि मेरो ज्वर निश्चय ही शान्त है जायगो।

विप्र कृषक—

यह आप कहा कह रहे हैं। आप तो कोई विद्वान् पण्डित से लगैं हैं। मैं तो एक ब्राह्मण जमींदार हूँ!

गौर—

आप कोई होवैं मोकूँ आपके कर्म सों नहीं आप सों प्रयोजन है। मेरो कष्ट तो आपही कूँ निवारण करनो होयगो।

कृषक विप्र—

जैसी मधुसूदन की इच्छा। यदि मेरे पाँव के धोवन सों आपकूँ लाभ होंतो होय तो कोई बात नहीं, लै लेओ।

समाज (दोहा)—

मधुसूदन को भक्त लखि, हरषै गौराराय।
संगीजन पग धोवहीं, सो कछुक सकुचाय।।

धोय लाय प्रभुहीं दीन्हे। अति हरषाय पान जु कीन्हे।।
हरिचरणामृत हरिजन पीवैं। हरि हरिजन चरणामृत पीवैं।।
पीवत ही गयो ताव पलाई। विप्र भक्ति हरि गौर सिखाई।।
संगीजन लज्जा दुख भारै। कहतिं परस्पर दोष हमारे।।

संगीजन—

हमरी आँखिन दोष जे आये। आपसही दुख बोध करायै।।
देखे न दोष गुणहि तोलै। सीख अनमोल दई बिन बोलै।।
जय जय जय गुरुदेव गुसांई। साँचे अदोषदर्शी कहाई।।

गुण दोषमय सृष्टि की, करि को सकै सुधार।
आप भलो तो जग भलो, बुरे कूँ बुरो संसार।।

गौर—

मौसाजी! अब आगे चलनो चाहिए।

चन्द्रशेखर-

वत्स! अबै तो तुम्हारो ज्वर छूट्यौ है। सो आज को दिन यहीं विश्राम कर लैं। कल चलैंगे।

गौर—

आप कोई चिन्ता न करैं। मेरो शरीर पूर्ण स्वस्थ है। और मन शीघ्र ही गया धाम के दर्शन कूँ उत्कण्ठित है रह्यौ है। और गया हू तो अब दूर नहीं है वहीं चलकै विश्राम करैंगे। यासों चलनौ ही चाहिए।

चन्द्रशेखर—

जैसी तुम्हारी इच्छा। चलौ भैयाओ! (सब का प्रस्थान)

समाज—

विप्र भक्ति महिमा दरसाई। आगे पंथ चलै हरषाई।।
गया क्षेत्र महँ कीन्ह प्रवेशा। हाथ जोरि नमत विश्वेशा।।
भूलि गये सब चंचलताई। चटक चाल रंग कौतुक भाई।।

चलत चाल अब धीरे धीरे। भरे भाव अन्तर गम्भीरे।
ठौरहिं ठौर करहिं प्रनामा। भक्ति भाव सह लेयँ हरि नामा।।
प्रथम ब्रह्मकुंड मधि न्हाए। पिंडन पितरन हेत चढ़ाये।।
पुनि फल्गु नदी नहानहिं कीन्हे। षोड़श गया महँ पिंडहि दीन्हे।।
प्रेत गया करिराम गया गमने। युधिष्ठिर ब्रह्म शिव गया भरने।।

विधि युत षोड़श गया महँ, षोडशी पिंड भराय।
दान मान विप्रन दिये, पितृ पुरुष सुख पाय।।
(प्रवेश महाप्रभु, चन्द्रशेखर आदि)

गौर—

मौसाजी! अब और पितृ-कार्य कहा-कहा शेष रह गयो है?

चन्द्रशेखर—

वत्स! षोड़श गयान में षोड़श पिंड-दान है गयो। अब ब्रह्मकुण्ड में पुनः स्नान करकै गया-शिर पै पिंड-दान ही शेष रह गयो है। वाकूँ सम्पन्न करकै श्रीगदाधर भगवान् के विष्णुपाद पद्म तीर्थ के दर्शन करैंगे। पूजन करैंगे। बस वहीं पितृ-कार्य सम्पूर्ण है जागयो। चलौ अब ब्रह्मकुण्ड कूँ। [प्रस्थान]

(दृश्य-भगवान् गदाधर का मन्दिर। सिंहासन पर
पादपद्म तीर्थ [श्रीचरण-चिह्न] चन्दन-चर्चित
माल्य-मंडित श्रीचरणचिह्न। गन्ध, पुष्प,
धूप, दीप आदि से विप्रगण श्रीचरण
पूजन कर रहे हैं। प्रवेश महा-
प्रभु, चन्द्रशेखर, आदि
पूजन सामग्री लिये
हुए)

समाज—

कीन्हे मन्दिर मध्य प्रवेशा। सुन्दर वपु विशाल गौरेशा।।
भीर तहाँ जनगन बहु भारी। भरत पिंड करि साक्षी मुरारी।।
विप्र गयासुर कथा सुनावहिं। गया धाम महिमा बहु गावहिं।।

विप्र (पंडा) —

सुनो–सुनो यात्रियो! गया धाम को माहात्म्य सुनौ। माहात्म्य ज्ञान बिना श्रद्धा भक्ति नहीं होय है अतएव जा तीर्थ में जावै वाको माहात्म्य अवश्य सुन लेवै। गया की कथा बहुत प्राचीन है। एक समय धर्म की पुत्री धर्मवती अपने पति महर्षि मरीचि की चरण–सेवा कर रही ही। वाही समय वहाँ ब्रह्माजी पधारे। तो ससुर समझकै धर्मवती ने उठकै उनकूँ प्रणाम कियो, स्वागत कियो। किन्तु मरीचि ने पति–सेवा–त्याग रूप अपराध मान लियो और धर्मवती कूँ शिला बनवे को श्राप दै दियौ। तब धर्मवती ने सहस्र वर्ष तक कठोर तपस्या करी। वासों प्रसन्न है कै भगवान् नारायण तथा सभी देवतान ने वाकूँ यह वरदान दियौ कि हम सब देवता तथा स्वयं नारायण वाकी शिला रूपी देह के ऊपर सदा स्थित रहैंगे।

और तबही ऐसो संयोग आय पर्‍यौ कि त्रिपुरासुर को पुत्र गयासुर हू निष्काम भाव सों दीर्घकाल सों तपस्या कर रह्यौ हो। तो भगवान् नारायण ने वाकूँ यह वरदान दियौ कि तुम्हारी देह समस्त तीर्थन ते हू अधिक पवित्र बन जायगी। परन्तु वरदान पायकै हू वाने तपस्या बन्द न करी तपस्या में वाकी सहज प्रीति ही। सो वह निष्काम भाव सों तप करतो ही रह्यौ। वाके तप के तेज सों त्रिलोकी संतप्त हैवे लगी। देवतागण काँप उठे। अन्त में भगवान् विष्णु के आदेश सों ब्रह्माजी गयासुर के समीप गये और यज्ञ करवे के लिए वाकी पवित्र देह की याचना करी। वाने स्वीकार कर लियौ और वह भूमि पै लेट गयो। तब देवतान ने वाकी पीठ पर दीर्घकाल पर्यन्त यज्ञ कियौ। जब यज्ञ समाप्त भयौ तो देवता तो यूँ समझ रहे हे कि गयासुर अवश्य ही जर–बर करकै मर ही गयो होयगो परन्तु वह तो ज्यूँ को त्यूँ उठ बैठ्यौ। स्वार्थी देवतान कूँ बड़ी चिन्ता भई।

अन्त में वह जो धर्मवती शिला बनी भई परी हती वाकूँ लायकै देवतान ने गयासुर की पीठ के ऊपर धर दीनी। इतने पै हू वह दब नहीं सक्यौ, उठवे लग्यौ। तब तो समस्त देवता वाकी पीठ पर चढ़ गये तौहू वह दब न सक्यौ अन्त में स्वयं भगवान् विष्णु गदाधर रूप सों वाके शरीर पै आय विराजे। वेई गदाधर भगवान् के चरण–चिह्न हैं जो विष्णु पादपद्म तीर्थ सों विख्यात है। वाके तांई भगवान् को यह वरदान है कि जो कोई गयासुर के पीठ पै अङ्कित मेरे इन चरण–चिह्नन के दर्शन करैगी वह समस्त पापन सों मुक्त है जायगो और जो यहाँ पिण्ड–दान करैगो वाकूँ अक्षय पुण्य की प्राप्ति होयगी।

गयासुर की देह के कारण ही या ठौर को नाम गया पर्‍यौ है। गयासुर की देह को विस्तार दस मील पर्यन्त है। एक तो यह देह की परम पवित्र है। वापै ता देह के ऊपर धर्मवती शिला है और ता शिला के ऊपर समस्त देवतान के सहित स्वयं गदाधर भगवान् विराजैं है। या कारण सों या देह के ऊपर काहू एक ठौर पै हूँ पिंड भरवे सों पितर प्रेत योनि सों छूट करकै अक्षय तृप्ति कूँ प्राप्त करै हैं बोलो-

श्रीगदाधर भगवान् की जय।
श्रीपादपद्म तीर्थ की जय।
भक्त गयासुर की जय।

पुजारी—

भैयाओ! भक्त गयासुर को सौभाग्य राजा बली और कालिय नाग ते हू श्रेष्ठ है कारण कि-

यच्छ्रीपादसरोरुहं बलि शिरस्येकं क्षणं केवलं।
दत्तं श्रीमधुसूदनेन न तु तच्चिन्हं मनाक् स्थापितम्।।
भाग्यं श्रील गयासुरस्य सुमहद् यत्तन्मुहूर्त्तान् बहून्।
दत्तं मूर्द्धनि तदीय चिन्हमयि यच्चित्रं चिर स्थापितम्।।

कवित्त—

पायो पद बलि जब, धार्‍यौ पद शीश वामन,
पायो पै एक ही छन, चिन्ह तो न पायो है।
पायो चिन्ह कालिय ने, फन् फन् पै कन्हैया के,
पै तर्‍यौ वो आपही, न जग तार पायो है।
धुजा बज्र अंकुश यव, चिन्ह दिव्य दुर्लभ वे,
अमिट अखण्ड जुग जुग गय पायो है।
पायो है आप पुनि जग कूँ दिखाय रह्यौ,
मरेन तराय रह्यौ, जीतेन 'प्रेम' पायो है।।

या प्रकार सो गयासुर के सौभाग्य की और वाके उपकार हू की विश्व में कोई तुलना नहीं है। वाही की कृपा सों विश्वकूँ यह श्रीविष्णुपादपद्मतीर्थ प्राप्त भयो है। आओ भाग्यवानो! वानो! श्रीपादपद्मन को पूजन करौ। इनकी पूजा साक्षात् श्रीगदाधर भगवान् की पूजा है।

(गौरसुन्दर, चन्द्रशेखर आदि चन्दन, तुलसी माला आदि से पूजन करते हैं। आरती उतारते हैं)

स्तुति (सम्मिलित गायन)—

रमा उर रमैया, ए शिव उर बसैया,
धराधर नपैया, ए बलि कर छलैया,
अहिल्या तरैया, ए भवसिन्धु नैया,
कन्हैया के पैयाँ नमस्ते नमस्ते।।
ए दारिद दरैया, ए कल्मष धुवैया,
ए मन्मथ नसैया, ए इच्छा नसैया,
ए अघगिरि जरैया, ए सुरसरि बहैया,
कन्हैया के पैयाँ नमस्ते नमस्ते।।
ए वन वन फिरैया, ए फन फन नचैया,
ए घर घर डुलैया, ए माखन चुरैया,
ए टेड़े द्वै पैयाँ, उर 'प्रेम' रमैया,
कन्हैया के पैयाँ नमस्ते नमस्ते।।

पुजारी—

अब श्रीपादपद्मन के तांई प्रणाम करौ-

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्ट दोहं
तीर्थास्पदं शिव विरञ्चिनुतं शरण्यम्।
भृत्यार्तिहरं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं,
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्।।
त्यक्त्वा सुदुस्त्यज सुरेप्सित राज्यलक्ष्मी,
धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम्।
मायामृगं दयितयेप्सिनमन्वधावत्,
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्।।

गौर (भावविह्वल सगद्गद् कण्ठ)-

वन्दे...महापुरुष ते च....च....चरणार-चरणारविन्दम् कहते-कहते भूमि पर लुण्ठित हो पड़ते हैं।

समाज (दोहा)—

श्रीपाद पद्म महिमा सुनत प्रेम दशा उमगाई।
वन्दत लोटत धरनि पै, सुधबुध रहै भुलाई।।

चरण महिमा सुनि विप्रगण मुखे।
आविष्ट होइला प्रभु प्रेमानन्द सुखे।।

अश्रुधार बहै दुई श्रीपद्‌म नयने।
लोमहर्ष कम्प होइलो चरणदर्शने।।
सर्व जगतेर भाग्ये प्रभु गौरचन्द्र।
प्रेमभक्ति प्रकाशेर कोरिलो आरम्भ।।

महाप्रभु (घुटने टेक भावगद्‌गद्) पद आसावरी-३-

वन्दौं चरण सरोज तिहारे।
सुन्दर श्याम कमलदल लोचन, ललित त्रिभंग प्राणपति प्यारे।।
जे पदपद्‌म सदाशिव के धन, सिन्धुसुता उर सों नहिं टारे।
जे पदपद्‌म तात रिस त्रासत, मनवचक्रम प्रह्लाद उबारे।।
जे पदपद्‌म परसि भई पावन, सुरसरि दरस कटत अघ भारे।
जे पदपद्‌म परसि ऋषिपत्नि, गज नृग व्याध पतित बहु तारे।।
जे पदपद्‌म रमत वृन्दावन, वृन्दा....वृन्दा....वन........
वृन्दा.....वन.....विहारी! हा रा....रास वि....हारी......

प्रणतदेहिनं पापकर्शनं, तृणचरानुगं श्रीनिकेतनम्।
फणिफणार्पितं ते पदाम्बुजं, कृणु कुचेसुनः कृन्धि हृच्छयम्।
प्रणतकामदं पद्‌मजार्चितं, धरणिमण्डनं ध्येयमापदि।
चरणपंकजं चरण.....चरण.....पंकजम्......

(विह्वल क्रन्दन)

समाज (दोहा)—

चरण कहत हेरत चरण, उमग्यौ अन्तर सिन्धु।
अँखियन सों बरसात हैं, अमृत झर गौर इन्दु।।

धार दुधार चौधारा छूटहिं। भीजत वसन ओ भूमि भीजहिं।।
अद्‌भुत प्रेमदशा उमगाई। गई देह सुधबुध विसराई।।

यात्रीगण-(आगे की चौपाइयाँ-कवित्त यात्रियों के)-

कोई कहहिं यह राजकुमारा। देव-सिद्ध, गंधर्व कुमारा।।
कोई कहहिं शुकदेव चलि आये। वे श्याम ये गौर सुहाये।।
रूप मनोहर उपमा नाहिं। भाव अपूरब तन झलकाहिं।।

कवित्त यात्री १—

दमके कंचन सों अङ्ग, अङ्ग अङ्गछवि तरंग,
मोह रह्यौ मन भृंग, कैसो रूप पायो है।

दमके विशाल भाल, झलकैं कपोल लाल,
छूटि रहै अलक जाल, बरबस लुभायो है।।
नैनन में नीर भार अंगन अनंग भार,
'प्रेम' को तरंग भार मिलिकै दबायो है।
गरे वनमाल धरि, रूप जयमाल वरि,
विश्व कूँ विजय करि, काम किधौं आयो है।।

यात्री २—

नहीं भाई! यह कामदेव नहीं मोकूँ तो यह स्वयं देवराज इन्द्र अथवा तीर्थराज प्रयाग प्रतीत होयँ हैं—

देख्यौ नहीं ऐसो रूप, है कोई कुँवर भूप,
पर्‌यौ प्रेमभक्ति कूप, धन्य कूख जायो है।
दुर्लभ किधौं भारत, के तीर्थन न्हाय न्हाय,
पावन करन तन इन्द्रराज आयो है।।
जागे हैं भाग किधौं, तीरथ फल देन आज,
मूरतिधर तीर्थराज, तीरथ में आयो है।
नर होय देव होय जोय मूर्ति 'प्रेम' यह,
आँखिन को फल हम, आजै साँचो पायो है।।

समाज—

भाँति भाँति सों जन अनुमानहिं। कोई न विश्वम्भर पहिचानहिं

(प्रवेश संन्यासी महात्मा ईश्वरपुरी)

ईश्वरेच्छा ईश्वरपुरी, आये मन्दिर माँहि।
देखत चीन्हे गौरहरि, प्रेम सहित चेताहिं।।

ईश्वरी—

गौरसुन्दर! विश्वम्भर देव! सावधान होओ! यह आपकी कैसी दशा है। शान्त होओ (ठहर कर) निमाई पण्डित! नदिया चाँद! नेत्र खोलो! देखो! बोलो! (कान में) कृष्ण कृष्ण!

गौर—

(व्याकुल क्रन्दन पूर्वक) कृष्ण! हा कृष्ण! चरण-चरण.....

ईश्वरपुरी—

गौरचन्द्र! धीरज धरो! मेरी और दृष्टिपात करौ!

गौर—

(सावधान हो देखते हुए) आप? श्रीपाद ईश्वरपुरी जी महाराज! ॐ नमो नारायणाय (चरण पकड़ते हैं)

ईश्वरपुरी—

(उठाकर हृदय से लगा लेते है)

गौर—

धन्य भाग मेरे जो आज आपके पुन: दर्शन यहाँ भये और मेरी तीर्थ-यात्रा सफल भई। गया में तो पिण्ड दान करवे पै ही पितरन को उद्धार होय है परन्तु आप जैसे सन्त महापुरुष तो वह गया हैं कि जिनके दर्शन सों परम कल्याण होय है।

पद-पोलू—

तीरथ नहीं कोई तुम्हारे समान। तीरथ परम तुम मंगल धाम
तिहारे दरश आज उघरै नैन। नींद नसी बीती मोह रैन
भ्रमत रह्यौ आज समझयौ भूल। कृष्ण भजन बिन जीवन शूल
करौ अब मेरो भवसों उद्धार। डूबत नैया लगाओ जु पार
दया करो देव! दया प्रेमसिन्धु। देओ देओ एक एक प्रेमबिन्दु
(चरण पकड़ लेना)

ईश्वरपुरी (उठाते हुए)—

प्यारे गौरसुन्दर! मैं इतने आदर सम्मान के योग्य नहीं हूँ।

मैं कछु-कछु आपके स्वरूप कूँ जानूँ हूँ।

छलो ना छलो ना अब करो मत छलना।
जानूँ मैं जानूँ कछु तुम्हारी महिमा।।
नदिया लखे जे चरित तिहारे।
चंचल मधुर वे अद्‌भुत प्यारे।।
रूप विद्या गुन सब अद्‌भुत पाये।
ईश्वर बिना ये जीव महँ न आये।।

नदिया महँ तुमकूँ मैं जब सों निहारे।
और कछुई मेरो चित न चहारे।।
सत्य कहौं सत्य छाँड़ि आन भाऊँ।
कृष्ण दरस सुख तुम लखि पाऊँ।।
तन मन प्रान जिउ सुशीतल होवै।
कटै ग्रंथि हृदय स्वरूप ज्ञान होवै।।
ताते परतीति प्रीति हृदय दृढ़ाई।
आये हैं स्वयं कृष्ण बनि गौर निमाई।।

गौर—

जोरूँ हाथ पायँ परूँ मोकूँ न बढ़ाओ।
मैं तो दीनदास तुव स्वामि न बनाओ।।

और जो आपकूँ मोमें श्रीकृष्ण की प्रतीति होय है यह मेरो स्वरूप नहीं, यह तो आपकी भक्ति की महिमा है। भक्त सर्वत्र अपने इष्ट के ही दर्शन करै है—

तिहारे तो रोम रोम कृष्ण ही रमाये।
तासों जहँ तहँ तुम कृष्ण लखि पाये।।

ईश्वरपुरी—

प्रिय गौरचन्द्र! यह आपको दैन्यभाव आपके प्रच्छन्न स्वरूप के उपयुक्त ही है। आप तो—

प्रेमसिन्धु भावसिन्धु रस आनन्दसिन्धु।
अखिल ब्रह्माण्ड सुखी पाय जाको बिन्दु।।
भाव के अभाव वश मैं तो दीन हीन।
करौ कृपा होऊँ धन्य पाऊँ प्रेम कीन।।

गौर—

(सदैन्य करबद्ध) भगवन्! ऐसो न कहैं। आप गृह-त्यागी विरक्त हैं, मैं गृहासक्त हूँ। आप जीवन्मुक्त हैं मैं संसार बद्ध हूँ। आप कृष्णानुरागी हैं, मैं विषय-भोगी हूँ। आप नारायण स्वरूप हैं जगद्गुरु हैं। कृपा करौ—

पूर्वपद—

कृष्ण भक्ति हीन मोहिं भगति सिखाओ।
दूर कृष्ण चरण सों, निकट लै जाओ।।

देओ कृष्णमंत्र दीक्षा, कृष्णहि मिलाओ।
गहौ हाथ गुरुदेव, पार जु लगाओ।।

ईश्वरपुरी (पद मालकोष)—

मंत्र कहा तन प्रान सभी कुछ, तुम्हरी लीला काज।
बनाओ जोई बनिहों सोई, जीवन ए सेवा साज।।
सब ही नाचैं कोई न जानैं, कौन नचावन हार।
छिप छिपकर सब खेल रचावै, कौतुक प्रिय करतार।।
गुरु बनाओ जगद्‌गुरु तुम, नर लीला अनुसार।
गुरु बिन गोविन्द नाहिं मिलैं, यह शिक्षा परचार।।

गौर—

तो भगवन्! अब कृपा करौ। दास कूँ दीक्षा प्रदान करौ।

ईश्वरपुरी—

हे स्वेच्छामय! मेरी कहा सामर्थ्य जो आपकी इच्छा के विरुद्ध कछु कर सकूँ। जीव कूँ गुरु-पादाश्रय की शिक्षा दैवे के तांई आप मोकूँ गुरु पद को गौरव प्रदान कर रहे हैं। आपकी आज्ञा को पालन करनो मेरो कर्त्तव्य है। अतएव अपनो इष्टमंत्र, आपके ही श्रीकृष्ण स्वरूप को मंत्र, दशाक्षरी कृष्णमंत्र आपकूँ प्रदान करूँगो। चलौ एकान्त में जायँ।

(प्रस्थान। दृश्य-अन्तर्पट डाल मंत्र प्रदान घण्टा घड़ियाल ध्वनि)

समाज (चौपाई)—

पायो दसाक्षरी मंत्र गोपाला। उदयो मंत्र अर्थ तत् काला।।
तन पुलकित बहैं नैनन धारा। उमग्यौ भावसिन्धु अपारा।।
राधा नाम की उठहिं तरंगा। गौर भये श्रीश्याम त्रिभंगा।।

गौर—(भावाविष्ट गर्जन-भुजा ऊर्ध्व)

गिरिवर धार्यौ मैं अघासुर मार्यौ।
पूतना उद्धारी मैं असुर संहार्यौ।।
नन्द यशोदा कहाँ बलराम। यमुना गोवर्धन सुबल श्रीदाम।।
कहाँ वृन्दावन कहाँ गोपी राधा। कहाँ मुरली मेरी हरनी बाधा
कहाँ गोधन सब कहाँ सखा ग्वाल।
टेरि टेरि सुमरत श्रीशची लाल।।

समाज (दोहा) —

पुनि तब दास्य भाव युत, दूजो उठ्यौ तरंग।
हा कृष्ण कहाँ पाऊँ कहि, लुटत विकल सब अंग।।

गौर—

(भूमि पर लोट-पोट होते हुए) हा कृष्ण! प्यारे कृष्ण! कहाँ पाऊँ? कहाँ जाऊँ?

समाज—

पुनि तन बाह्य सुधि फिरि पाई। देखे ईश्वरपुरी गुरुराई।।

गौर—(उठकर हाथ जोड़)

जय जय जय गुरुदेव गुसांई। तुमही जीव के परम सहाई।।
बिछुड़े जन धन आज मिलाये। भटके कूँ निज गृह पहुँचाये।।
जीवन आजहिं सफल बनाये। देऊँ कहा शीश 'प्रेम' चढ़ाये।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

(साष्टांग प्रणति)

हेनो शुभ दृष्टि तुमि करोह आमारे।
जेनो आमि भासि कृष्ण प्रेमेर सागरे।।

हे परम दयालु गुरुदेव! अब पुनः इतनी कृपादृष्टि और कर देओ कि यह दास अहर्निश कृष्णप्रेम सागर में डूबतो-बहतो रहै। (पुनः चरणग्रहण)

ईश्वरपुरी—

(उठाकर हृदय से लगाना। दोनों प्रेमालिंगनबद्ध)

समाज (दोहा) —

सुनि प्रभु वचन ईश्वरपुरी, लीन्हे हृदय लगाय।
दोउ दोऊन कूँ सींचहि, नैनन नीर बहाय।।

ईश्वरपुरी—

गौरसुन्दर! आज मैं तुम्हारे सम्बन्ध सों कृतार्थ है गयो। नित्य सम्बन्ध के ऊपर यह एक मधुर लीला-सम्बन्ध स्थापित भयो। जय कृष्ण!

गौर—(हाथ जोड़)

अब शिष्य के स्थान पै पधार करकै भिक्षा करकै भिक्षा स्वीकार करैं।

ईश्वरपुरी—

अवश्य! चलौ!! (सबों का प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

समाज (पद यथाराग)—

चकई री चल चरण सरोवर जहाँ न प्रेम वियोग।
जहाँ भ्रम निशा होत न कबहुँ, भयरुज नहिं दु:ख सोग।।
जहाँ सनक से मीन हँस शिव मुनिजन, नख रवि प्रभा प्रकास।
प्रफुल्लित कमल निमिष न शशि डर, गुँजत निगम सुवास।।
जिहि सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल, सुकृत विमल रस पीजै।
सो सर छाँड़ि कुबुद्धि विहंगम, इहाँ रहि कहा कीजै।।
जहाँ श्रीसहस सहित हरि क्रीड़त, शोभित सूरजदास।
अब न सुहाय विषय रस छिल्लर, वा समुद्र की आस।।

ईश्वरपुरी पै करि कृपा, रहें दिवस कछु और।
समय आयो अब जानिकै, प्रेम प्रकासत गौर।।

(दृश्य-महाप्रभु जप में ध्यानस्थ। रास-दर्शन)

एक दिवस जपैं मंत्र जब, पाये दरसन रास।
भये तिरोहित कृष्ण लखि, करत विरह प्रकास।।
चहुँ ओर हेरहिं विकल, टेरहिं नैन बहाय।
मोहन रासबिहारी हा! कहाँ गये जु छिपाय।।

गौर—

(उठकर इधर-उधर ढूँढ़ते हुए व्याकुल गिर पड़ते हैं)

पद (सोहनी)—

वंशी बजाय वन बुलाय, रास रचाय कहाँ गये।
मूरति श्याम, नैनाभिराम, हाय दिखाय कहाँ गये।।
चंचल नैन, रस के ऐन, मधुर वैन, रस के दैन।
मोहन मैन, ललित बेनु, हाय सुनाय कहाँ गये।।

प्राण ललन, हृदयरमन, जीवन धन, 'प्रेम' शरन।
वृन्दावनचन्द कृष्णचन्द, सुधा पिवाय कहाँ गये।।

हा नाथ! रमण! प्रेष्ठ! क्वासि क्वासि महाभुज।
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे! दर्शय सन्निधिम।।

हे नाथ! अनाथिनी की सुधि लैओ! अब तो मेरी मरणदशा है! हे प्राणप्रियतम! प्राण जाँय हैं तुम बिन। हे महाबाहो! कहाँ हो? आओ न! अपनी भुजान में भरि लेओ मोकूँ! मैं दासी हूँ दुखिया हूँ! कृपा करौ। जीवन सखे! दर्शन देओ! प्राण जाँय हैं। जायवे सों पहले एक बेर तो मुखचन्द्र दिखाय जाओ! कहा नहीं आओगे? अच्छो तो मैं ही आऊँ हूँ। कहाँ छिपौगे, छिपौ! मैं खोज निकासुँगी। प्यारे! श्याम! श्याम! (कहते हुए दौड़ते-गिर पड़ते हैं)

कृष्ण रे! बापरे! मोर जीवन श्रीहरि।
कोन् दिगे गेला, मोर प्राण चुरि कोरि।।

पद (देश-३)—

मैं कित ढूँढूँ कित जाऊँ, कहाँ गये अपनो धन पाऊँ।
नाम लेत नाम लियौ न जावै, मुख देखन हित नैन अकुलावै।।
प्राण पुकारैं प्राण मिलाओ, नहीं हमहिं कूँ लैन पठाओ।
कैसे हाय मिलाऊँ, मैं कित०।।१।।
बार बार काहे तरसाओ, वदन दिखाय छिप छिप जाओ।
तुम छोड़ो मैं कैसे छोड़ूँ, तुमसों तोड़ कौन सों जोड़ूँ।
और न मोकूँ ठाऊँ, मैं कित०।।२।।
आगे जाऊँ तो कहाँ जाऊँ, पीछे तो अब परै न पाऊँ।
औघट घाट संग न साथ, सुध लीजौ हे अनाथन नाथ।
'प्रेम' दया कब पाऊँ, मैं कित०।।३।।

हा कृष्ण! प्राणकृष्ण! वृन्दावन चन्द्र! दर्शन देओ।

(नेपथ्य में वार्तालाप)

छात्र—

आचार्य जी! आचार्य जी! जागो न! सुनौ तो, यह गौरसुन्दर की क्रन्दन-ध्वनि आय रही है।

चन्द्रशेखर—

हैं! यह कण्ठ तो वत्स निमाई को ही है। आधी-रात कूँ यह यह कैसे रोय रहे हैं। चलौ! सम्हारौ।

(दौड़ते हुए चन्द्रशेखर आचार्य आदि का प्रवेश)

चन्द्रशेखर—

(गौर को उठाते हुए) वत्स निमाई। सावधान होओ। शान्त होओ। इतने चंचल अधीर बनवे सों हम नदिया कैसे पहुँचेंगे! शान्त होओ वत्स।

गौर—

हा वृन्दावन! हा वृन्दावन बिहारी! प्यारे! कृष्ण!

छात्र १—

आचार्य जी! यह कोई रोग तो नहीं है। इनकी तो दशा बिल्कुल ही बदल गई है।

छात्र २—

गदाधर भगवान् के चरण-दर्शन के समय सों ही यह दशा भई है। वाके ऊपर ईश्वरपुरी जी ने न जानै कहा मंत्र फूँक दियौ कि ये उन्मत्त है चलै हैं।

चन्द्रशेखर—

भैयाओ! यह कोई रोग नहीं। यह तो प्रेम को विकार है। भगवत्प्रेम की प्रथम अवस्था है पूर्वराग की। (गौर प्रति) वत्स निमाई! भगवान् गदाधर ने तुमकूँ अपनी प्रेमभक्ति प्रदान करी है—यह तो बड़े आनन्द की बात है। परन्तु तुम्हारी देह-दशा कूँ देख-देखकै हमकूँ बड़ी ही व्यथा होय है। शान्त हैकै श्रीकृष्ण कौ सुमिरन करौ और लौट चलौ नदिया कूँ।

गौर—

(दु:खपूर्वक) नदिया? हाय नदिया कैसे लौट जाऊँ? नहीं! नहीं लौटूँगो! वृन्दावन जाऊँगो।

गाना पीलू—

नदिया! जन्मभूमि नदिया प्रनाम।
बुलाय रह्यौ कृष्ण वृन्दावन धाम।।

वंशी बजावै वह मोकूँ बुलावै। घर वन कछुई न मोकूँ सुहावै
माता सों कहियो प्रनाम जु मेरो। देओ असीस मिलै श्याम मेरो

चन्द्रशेखर—

वत्स! माता ने तुमकूँ हमारे हाथन में सौंप्यौ है। फिर हम तुमकूँ खोय कै माता कूँ कहा मुख दिखायँगे। और तुम वृन्दावन में श्रीकृष्ण के लिये ही जानो चाहौ हो तो सुनो—

मन में है श्रीकृष्ण तो, सब वन वृन्दावन।
मन में नहीं श्रीकृष्ण तो, वृन्दावन हू वन।।
तुम्हरे तो हृदय सदा, श्रीकृष्ण को वास।
यहाँ वहाँ कितहू रहौ, सब वृन्दावन वास।।

वत्स! तुम्हारो हृदय ही वृन्दावन है। वहाँ श्रीकृष्ण को नित्य निवास है। यासों वृन्दावन तो तुम्हारे भीतर ही है फिर बाहर के वृन्दावन के लिए इतने व्याकुल क्यूँ है रहे हौ। तुम तो स्वयं महापण्डित हो। मैं तुमकूँ अधिक कहा समझाऊँ। नदिया लौट चलौ। वहाँ माता के समीप वास करकै आनन्द सों श्रीकृष्ण को भजन करनो। तुम्हारे लोक परलोक दोनों बन जायँगे।

गौर—

(मर्माहत हो) हाय! घायल की चोट कूँ पण्डित कहा समझैगो। प्रेम-पंथ कूँ ज्ञानी कहा जानैगो?

गाना-म्हाड—

प्रीतम बसै जा देश में, प्यारी ताकी पौन।
प्रेम छटा परसे बिना, यह सुख समझे कौन।।

कियो नहीं जाने प्यार कबहू, वह प्यार की बातें जानै कहा।
छोटी सी वस्तु हू प्यारे की, प्रान सों प्यारी लागै महा।।
भेषहू प्यारे को प्यारो लगै, और देशहू प्यारे को प्यारो लगै।
वा देश की वायुहू प्यारी लगै, वा भूमि की धूरिहू प्यारी महा।।
वा देशको जपनो ही मंत्र महा, वा देशको सपनोही सुख महा।।
वा देशको मरनो ही लाभ महा, वा 'प्रेम' बिना जीवन ही कहा।।

(गाते-गाते 'वृन्दावन! वृन्दावन' कहते हुए दौड़ निकल जाते हैं)

चन्द्रशेखर—

ठहरो ठहरो वत्स! हमहू संग चलैंगे। ठहरो! ठहरो!
(सब पीछे-पीछे दौड़े चले जाते हैं)

समाज (दोहा)—

चलै दौरि विकल प्रभु, धरैं अटपटे पाँय।
को हौं, कहाँ धाय रह्यौ, सुधबुध सब बिसराय।।
गगन गिरा तबही भई, कहति वचन चेताय।
नदिया लीला प्रगट करि, जैहौ वृन्दावन धाय।।

(दृश्य-गगन स्थित योगमाया-पीतवस्त्रधरा)

योगमाया (आकाशवाणी—बंगला चै० भा०)—

तुमि श्रीवैकुण्ठनाथ लोक निस्तारिते।
अवतीर्ण होइया छो सबार सहिते।।
अनन्त ब्रह्माण्डमय कोरिया कीर्तन।
जगतेर बिलाइते प्रेमभक्ति धन।।
अतएव महाप्रभु चलो तुम घर।
विलम्बे देखिबा आसि मथुरा नगर।।

गजल—

सुनाओ नाम पधारो नदिया, प्रेमभक्ति की बहाओ नदिया।
सूख रही है तुम्हारी बगिया, न भूल जाओ हे नाथ दुखिया।।
संग लै परिकर आये हो भूपर, करन कीर्तन प्रचार घर घर।
करौ सो कारज चलके अब घर, हे देव देव! हे विश्वम्भर।।
चलकर पापी गरे लगाओ, नाम-प्रेम का पंथ चलाओ।
जय जय जय लीला प्रगटाओ, 'प्रेम' प्रभु तब व्रजहिं जाओ।।

लीलामय! लीला के आवेश में लीला के क्रम कूँ ही न भूल जावैं। यद्यपि अपनी तीन वाञ्छान की पूर्ति करवे के निमित्त ही आपको यह गौरावतार है, तथापि हरिनाम प्रेम प्रदान द्वारा निज भक्तियोग की लुप्त धारा कूँ पुनः प्रवाहित कर दैनो हू तो आपके या अवतार को प्रधान कार्य है। अतएव प्रथम अपनो संकीर्तन रास कों प्रकाशित करिबैकै पश्चात् श्रीवृन्दावन-गमन करवे को सुअवसर आवैगो। अतएव अपनी लीलादासी योगमाया की प्रार्थना कूँ स्वीकारवे के लिए प्रस्थान करैं। (अन्तर्द्धान)

गौर—

(भूमि पर पड़े आकाशवाणी को सुन रहे हैं। इतने में चन्द्रशेखर आदि दौड़ते हुए आ पहुँचते हैं)

छात्रजन—

ये रहे गुरुदेव! यह रहे!

चन्द्रशेखर—

(महाप्रभु को उठाते हुए) हाय-हाय वत्स! ऐसे उन्मत्त हैकै कहाँ जाय रहे हो! हाय! कैसे निस्सहाय दीन-हीन की भाँति मार्ग पै परे हौ! यह हमारे लिये तो असह्य है! सावधान होओ! कृष्ण कहो और नदिया कूँ लौट चलौ।

गौर—

चलौ देव! हा कृष्ण! कृष्ण!

संगीजन—

कृष्ण! कृष्ण! (सबों का प्रस्थान)

समाज (बंगला चै० भा०)—

जेवा शुने ईश्वरेर गया विजय।
गौरचन्द्र प्रभु तारे मिलिबे हृदय।।

गया गमन प्रभु के चरित, पढ़ै सुनै चित लाय।
गौर प्रभु अन्तर मिलैं, कभु न 'प्रेम' विसराय।।

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधागोविन्द।।

इति गया गमन लीला सम्पूर्ण।

❧❖❧

गया से आगमन

वैराग्य विद्या निजभक्तियोग,
शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्ण चैतन्य शरीरधारी,
कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये।।
कालान्नष्टं भक्तियोगं निजं यः,
प्रादुष्कर्त्तुं कृष्णचैतन्य नामा।
आविर्भूतस्तस्य पादारविन्दे,
गाढं गाढं लीयतां चित्तभृङ्गः।।

जय जय श्रीगौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जय अद्वैत चन्द्र जय गौरभक्त वृन्द।।

समाज (दोहा)—

गौर गये गया धाम कूँ, सूनो नदिया धाम।
सूने शिष्यन के हृदय, सुमिरैं नित गुरु नाम।।

चौपाई—

सूनो भवन अमावस निसदिन। दीपशिखा प्रिया छीन मलिन।।
तन पर्यौ भौन मन प्रीतम पासा। रहैं प्रान मुख निरखन आसा।।
सखी सहेली धीर धरावहिं। मात शची अति नेह जनावहिं।।
छिन छिन मन मानत न मनाये। पिय दुख चिन्ता दुगुन जराये।।

(दृश्य-विष्णुप्रिया-मुक्तकेश-वेश सामान्य। दो सखियों के मध्य बैठी हैं)

विष्णुप्रिया— (शोकमुद्रा स्थित)

गाना सिन्धु काफी-३—

बीतत दिन पिया नहिं आये, छिन छिन मेरो जिय कलपाये।
गिनत गिनत दिन बीते मासा, स्वासा तरफ तरफ अकुलाये।।
अपने दु:ख सों दूनो सजनी, प्रीतम दुख छिन छिन जु रुलाये।।
कमल सुकोमल मृदुल चरन वे, कंकर कंटक पथ कित धाये।।

कहाँ वह भोजन विविध मिठाई, मात कहाँ करि नेह जेंमावे।।
दरसन करि करि मैं जो अघाती, उन बिन ग्रास न एकहु भाये।।
सेज सुकोमल धवल वे पौढ़ते, मैं चाँपती पग फूली न माई।
पथ पथ दुखित थकित मेरे नाथ, सुध आवत प्रान उड़नहिं चाई

समाज—

बहुविधि सखी समझावहिं, धीरज धर्म कथाहिं सुनाई।
छिन डूबत छिन उछरत प्रिया, पीर 'प्रेम' की दुरै न दुराई।।

कांचना—

सखी विष्णुप्रिये! बड़े आनन्द की बात है।

विष्णुप्रिया—

कहा है काँचने!

कांचना—

मैंने आज स्वप्न में दिव्य वेष में तुम्हारे पतिदेव के दर्शन किये।

विष्णुप्रिया—

तो फिर कहा सखि!

कांचना—

तो यही कि उनकूं तुम अब आये ही समझो। मेरो स्वप्न मिथ्या नहीं होयगो। (पर्दा)

समाज (चौपाई)—

तेहि समय दूत शची ढिंग आयो। विश्वम्भर सन्देशो लायो।।
(नेपथ्य में से आवाज-माँ माँ शची माँ)

शची—

(बाहर निकलती हुई) कहा बात है? आओ-कौन है?

दूत—

(प्रवेश पूर्वक प्रणाम कर) माँ! आपके निमाई चाँद आय रहे हैं। मैं उननै सम्वाद दैवे भेज्यौ हूँ।

शची—

(सहर्षोत्कण्ठा) आय गयो निमाई आय गयो! कहाँ है; कहाँ है (बाहर दौड़ती हैं)

दूत—

नेक ठहरो माँ! अबही कछु दूर हैं। थोरेई देर में आये जायँ हैं। तब तांई आप मंगल तैयारी कर लेओ।

शची—

(लौटती हुई) हाँ हाँ! ठीक कही। मैं आरतो सजाऊँ हूँ। तुम सब बँधनवार बाँधो, जल को छिरकाव करौ ईशान! आम के पत्ते, केले के पत्ते लै आ! जल्दी कर और कलसा में गंगा जल भर ला। काँचना! चन्दन घिसलै! विष्णुप्रिये! साँथियो काढ़! निमाई आय रह्यौ है। शीघ्र ही मंगल-तैयारी सब कर लेओ (प्रस्थान)

समाज (दोहा) —

तीन मास तीरथ करि, आये नदिया गौर।
समाचार सुनि सुनि सब, आये प्रियजन दौर।।

(आगे यथाक्रम अभिनय)

मात शची फूली न समाई। ठाड़ी द्वार आरती सजाई।।
विष्णुप्रिया दै ओट जु ठाड़ीं। प्रिय दरस हित लालसा बाढ़ी।।
प्रभु धाय गहे पद माता। उर सों लाय असीसति माता।।
पुनि पुनि आरति प्रेम उतारैं। निरखि निरखि हर्षित तनु बारैं
छात्र प्रभु के दौरत आये। गुरु दर्शन हित अति उमगाये।।
गहि गहि गुरुपद कीन्ह प्रनामा। हस्त शीश धरि असीसत कामा
(गौर) अति हित करि बूझत कुशलाई।
(छात्र) उदय भानु दुख तमहिं नसाई।।
ससुर सनातन मिश्रहू आये। तृषित नैन मुख निरखि सिराये।।
प्रभु पद परसि कीन्ह प्रनामा। मिश्र लाये हृदय सुखधामा।।
बूझत कुसल करि तीरथ आये। विनवत मधुर वचन सुनाये।।
कृपा आशीर्वाद तिहारी। यात्रा मंगल पूर्ण हमारी।।

गयो दुक्ख वियोग को, भेंटत हर्ष हुलास।
पै नयो इक दुख लग्यौ, लखि गौरचन्द्र उदास।।

नहिं कपोलन पै अरुनाई। अधरन मृदु मुसिकन हू नाई।।
नैन कछु गीले सकुचीले। बोलत बैन हू मन्द लजीले।।
चंचल भाव सुभाउ हिराये। प्रकृति सकल पलट दरसाये।।
पुनि इक दूजो अनुभव पायो। मंडल तेज वदन तन छायो।।

सनातन—

(स्वगत) अहो! ये गौरचन्द्र तो गया सों दूसरे ही बनकै आये हैं। आकृति-प्रकृति, बोल-चाल, रंग-ढंग सबही बदल गये हैं (प्रकाश्य) वत्स विश्वम्भर! अबही यात्रा करकै आये हो। विश्राम करौ। फिर काहु अन्य समय पै तीर्थ-यात्रा को वृत्तान्त सुनैंगे।

गौर—(प्रणाम करते हैं)

(सनातन मिश्र चले जाते हैं)

गौर—

(छात्रों के प्रति) प्रिय छात्रो! मैं तुमसों मिल करके प्रसन्न भयो। अब तुमहू सब जाओ। फिर अइयों।

छात्रगण—

जो आज्ञा गुरुदेव! (चरण स्पर्श कर चले जाते हैं)

समाज (दोहा)—

बिदा किये प्रभु जन सकल, मात रहीं ढिंग आय।
बूझति लाल तन कुशल तो, वदन गयो कुम्हिलाय।।

सोरठा—

मुख नहिं निसरत बैन, मात चरन अकुलाय गहे।
झरत जु दोउ नैन, विकल मात बूझति व्यथा।।

शची—

वत्स! निमाई! तू क्यूँ रोवै है। तीन मास में आयो है तो माँ माँ कहकै तो बोल बतराय तो सही! हाय हाय गया-यात्रा में तोकूँ न जानै कैसे-कैसे कष्ट उठामने परै होंगे!

गौर—

(सम्हलते हुए) नहीं माँ! कष्ट विशेष कछु नहीं भयो! यात्रा आनन्द पूर्वक ही भई।

शची—

बेटा! मैंने सुनी कि जाते समय मार्ग में तोकूँ ज्वर चढ़ि आयो हो।

गौर—

(उपेक्षा पूर्वक) हाँ एक रात्रि के लिए कछु सामान्य सो ज्वर आय गयो हो। सो प्रात:काल ही उतर गयो।

शची—

बेटा! जन्म सों अब तक बीस वर्ष में यह प्रथम रोग तेरे भयो। यह अवश्य ही पद-यात्रा के कष्ट को फल है। कहाँ यह सुकुमार शरीर और कहाँ इतनी लम्बी पैदल यात्रा। मेरे पाँच नहीं सात नहीं, एक तू ही मेरी आँचर की निधि है। अब मैं तोकूँ कदापि कहूँ नहीं जान दऊँगी। भई सो भई, अब तू या उदास व्याकुल भाव कूँ छोड़ कै हँस-बोल बेटा! तू ऐसो कैसे है गयो?

समाज (चौपाई)—

बोले प्रभु उन्मत्त की नाँई। वृथाइ जन्म गयो मो माई।।

गोर पीलू—

वृथाहि माँ तुम मोकूँ जायो। वृथा पालि तन पुष्ट बनायो।।
वृथा दिवस काटे रस रंगना। एकहू पल कियो कृष्ण भजनना
पूत कपूत तुम ऐसो जायो। जिन जननी तुव दूध लजायो।।
कृष्ण बिना को भव की नैया। कृष्ण बिना को पार खिवैया।।
कृष्ण बिना को साँचो सहैया। कृष्ण बिना को प्रेम करैया।।
कृष्ण सोई मैं भूल्यौ मैया। रोऊँ नहीं तौहु रोऊँ मैया।।

देओ मात असीस, पूरी होवै साध मम।
निश्चय बीसों बीस, जननी असीस अमोघ जु।।

(माता के चरण पकड़ लेना)

समाज—

अस कहि चरन गहै जु निमाई। मातृभक्ति सिखावन सांई।।
प्रथम देव माता ही कहिये। ताकी कृपा कृपा हरि पइये।।
मात उठाय हृदय गहि लीन्हे। मनवांछित आसीसा दीन्हे।।

शची—

वत्स! मैं हृदय सों आशीर्वाद दऊँ हूँ कि श्रीकृष्ण तुम्हारे ऊपर प्रसन्न होवैं। तू श्रीकृष्ण की खूब भक्ति कर-उनको भजन कर। मैं नेकहू बाधा नहीं दऊँगी परन्तु मेरे लाल! घर में ही रहकै कर। मो वृद्धा विधवा को तेरे सिवाय कोई सहारो नहीं है। या बात कूँ मत भुलाय दीजौ। और अधिक मैं कहा कहूँ। मैं तोकूँ कहा कर्त्तव्य धर्म की सीख दै सकूँ हूँ।

गौर—

माँ! तुम निश्चिन्त रहौ! मैं तुम्हारी आज्ञा के बिना कछुई नहीं करूँगो।

शची—

चल बेटा! अब न्हाय धोयकै कछु भोजन करलै, फिर विश्राम करियौ। (दोनों का प्रस्थान)

समाज पद (यथाराग)—

जाहि लगन लगी घनश्याम की।
धरत कहूँ पग परत कितै हूँ, भूल जाय सुधि धाम की।।
छवि निहार नहिं रहत सार कछु,
घरी पल निशिदिन याम की।।
जित मुँह उठै तितैही उठि धावै, सुरति न छाया घामकी।।
अस्तुति निंदा करौ भले ही, नेह तजी कुल गाम की।
'नारायण' बौरी भई डोलै, रही न काहु काम की।।

(दृश्य-गौर-गृह। गौरचन्द्र के समीप बड़े-बड़े सखा श्रीमान् सदाशिव और मुरारि का आगमन)

समाज (दोहा)—

संध्या समय पंडित सखा, मुरारि गुप्त श्रीमान।
आये सदाशिव सहित तहँ, मिलन गौर मुदमान।।
सादर सखा सकल उर लाये। बूझत मंगल क्षेम सुहाये।।

श्रीमान्—

गौरसुन्दर! आज हमारे लिए बड़े ही हर्ष को दिन है जो तीन मास को वियोग-संताप तुम्हारे मुखचन्द्र के दर्शन सों शान्त है गयो।

सदाशिव—

हाँ भैया! तुम कहा आये, हमारे तो प्राण ही लौट आये। तुम तो प्रसन्न हो न? तीर्थयात्रा तो सकुशल पूर्ण भई न?

मुरारि-

प्यारे विश्वम्भर! अपनी यात्रा को वृत्तान्त तो कछु सुनाओ!
बोलो, कैसे चुप बैठे हो? यह कहा दशा है तिहारी।

समाज (चौपाई)—

बूझत तीरथ कथा सुनाओ। गौर कहैं हरे कृष्णहिं गाओ।।

गौर—

कृष्ण कहो भैयाओ! कृष्ण गाओ! कृष्ण नाम सुनाओ! कृष्ण बिना मोकूँ कछुई कहवो-सुनवो भावै नहीं है।

समाज—

कहन चहत कछु कहि ना आवै। हृदय भाव वेग उमगावै।।
अब लौं दशा रहै जु दबाई। परी फूट बन्धु सखा पाई।।
लाज कान सुध सबहि हिरानी। बोले प्रेम विरह भरी बानी।।

गौर गाना (सिन्धु काफी-३)—

श्यामसुन्दर की बात कहो री।
और कछु नहिं भात अहो री।।

मोर मुकुट माथे पै फहरै, लटपटी पाग तरे लट लहरै।
पियरो पट कटि तटपै पहरै, देखत दुख मिट जात अहोरी।।
बात सुनाओ, नाम सुनाओ, मुख दिखराओ आन मिलाओ।
निरमोही सों जाय सुनाओ, प्रान उड़न अब चात अहोरी।।
आय मिलैकै मुख न दिखावै, लावै हियकै पग ठुकरावै।
भावै ज्यों त्यों 'प्रेम' सतावै, वे ही मेरे नाथ अहो री।।

समाज (चौपाई)—

सखा सकल कहैं समुझाई। धीरज धरहु भाई निमाई।।

सखा—

हम तो प्रथम दशा यह हेरी। कारण कहा न समझि सकैरी।।
कहहु कछु जिय भेद बताओ। भय शंका हमरी जु नसाओ।।
बाह्य दशा विश्वम्भर पाई। धरि धीरज कछु कहत सुनाई।।

गौर—

भैयाओ! गया ते लौटती समय मार्ग में—
'कन्हाई नाट्यशाला' इक ग्रामा। रैन तहाँ कीन्ही विश्रामा।।
लख्यौ निशि स्वप्न कृष्ण कन्हाई।
कृष्ण क......न्हा....ई प्राण क......न्हा......ई।।

समाज—

कहत कन्हाई कह्यौ ना जाई। डूबै प्राण कृष्ण महँ जाई।।
हरि बोल हरि सखा उचारैं। अचरज दशा लखि करत विचारै

(सखागण में पृथक् परस्पर वार्त्ता)

श्रीमान्—

अहो आश्चर्य! जो निमाई पंडित विद्या के गर्वरूपी सुमेरु शिखर पै समारूढ़ महा चंचल हो आज वह भवसागर के अथाह तल में उछर-डूब रह्यौ है। जो कृष्ण कृष्ण कहवे वारे वैष्णवन की हँसी उड़ायो करतो आज वह स्वयं कृष्ण-कृष्ण कहकै रोय रह्यौ है। और अपने ही वस्त्र नहीं हमारे वस्त्रन को हू भिजोय रह्यौ है।

सदाशिव—

वस्त्र ही नहीं श्रीमान—

सवेया—

छूटैं फब्बारे नयनन सों, फुलवारी तक जल पहुँच गई है।
बहते हे पनारे गोपिन के, सो आँखिन सों हम देखलई है।।
धार दुधार चौधारन प्रेम सब ज्ञान की गठरी बहाय दई है।
तीरथ को फल प्रेम इन पायो, और तो न्हायकैं धूर लई है।।

मुरारि—

नहीं सदाशिव! यह कृष्णप्रेम तीरथ को फल नहीं है कारण कि—

तीरथ काटत पाप को, देत पुण्य में भाग।
कोटि पुण्य नहिं दै सकै, यह जु प्रेम की आग।।
यह जो प्रेम की आग, कोटि पुण्य नहिं दै सकै।
जागैं हैं जब भाग, हरि कृपा प्रेम सहजै जगै।।
शुक नारद प्रह्लाद, इनहू ते यह प्रेम अकथ।
ताकी मूरति गौर, करत तीरथ कूँ तीरथ।।

श्रीमान्—

साँची कहौ हो मुरारि। यह कृष्ण प्रेम तो महत्कृपा अथवा भगवत्कृपा सों ही प्राप्त होय है तीर्थ दर्शन-मज्जन प्रेम नहीं दै सकै है—

कुंडली—

जाकों दर्शन इत है फलै, वाकों दर्शन उत।
जाको दर्शन इत नहीं, वाको मिलत न उत।।
वाको मिलत न उत, फिरत भटकत सब ठौरन।
मन को मैंल न जात, खात घर घर के कौरन।।
'भगवत रसिक' संग, मुकुट ले माजै ताको।
तब निज बदन दिखात, श्याम श्यामा हैं ताको।।

अतएव गया यात्रा में इनके ऊपर अवश्य ही महत्कृपा अथवा भगवत्कृपा की घटना घटी है परन्तु निश्चय कैसे होय। इनकी तो यह उन्मत्त दशा है। इनकूँ कछु सचेत तो करो।

सब भूखा—

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (संकीर्तन)

समाज—

हरि बोल हरि कहि चेतावहिं। नैनन शीतल जल पुनि लावहिं

चेतन ह्वै प्रभु तब कुछ, कही बात कर जोर।
करहु क्षमा मोहिं जाओ घर, कहिहौं काल्हहिं भोर।।

गौर—

भैयाओ ! आज मोकूँ क्षमा करौ। कल प्रात:काल तुम सब शुक्लाम्बर ब्रह्मचारी की कुटिया पै आमनो। वहीं मैं आऊँगो और सब वृत्तान्त सुनाऊँगो।

श्रीमान्—

जैसी तुम्हारी इच्छा! हम अवश्य ही वहाँ पहुँच जायँगे। अब तुम विश्राम करौ। यात्रा में विशेष परिश्रम भयो है-नमस्कार

गौर—

नमस्कार (सबसे मिलते हैं)

(सब सखा चले जाते हैं)

(पर्दा)

समाज (चौपाई)—

हृदय लाय विदा प्रभु कीन्हे। प्रेम भाव सुध तन मन छीने।।
भक्तन हृदय आनन्द महाई। भयो भक्त पंडित जो निमाई।।
मारग जात न मोद समावैं। कृष्ण कृपा की बलि बलि जावैं।।

(प्रवेश श्रीमान्, सदाशिव, मुरारि)

श्रीमान्—

धन्य है भगवन् धन्य है। आपने हमारी चिर-अभिलाषा पूर्ण कर दीनी जो निमाई चाँद कूँ भक्त बनाय दियो।

मुरारि—

जैसो अपूर्व रूप, अपूर्व विद्या है, वैसी ही अपूर्व भक्तिहू मिल गई। सोने में दुर्लभ सुगन्ध आय गई! हरि बोल।

सदाशिव—

अब यदि निमाई जैसो धुरन्धर पंडित हमारी भक्त-मंडली में मिल जाय तो भक्ति-भक्त-विरोधिन के मुख पै तारे पर जायँ।

श्रीमान्—

बिल्कुल ठीक है भैया! भक्ति कूँ दुर्बल हृदया स्त्री, अनपढ़ गँवार तथा शूद्रन के लिये ही बतायवेवारे ज्ञानी गुमानिन कूँ हू मुँह तोड़ उत्तर मिल जाय।

मुरारि—

नवद्वीप के पंडित शिरोमणि, दिग्विजयी-विजयी 'वादी-सिंह' गौरसुन्दर ने अब भक्ति मन्दिर में पदार्पण कियो है-या शुभ सम्वाद कूँ श्रीअद्वैताचार्य, श्रीवास आदि भक्त समाज कूँ चलकर सुनामनो चाहिए।

श्रीमान्—

अवश्यमेव! शुभस्य शीघ्रम्। आनन्द-परमानन्दम्। हरि बोल

संकीर्तन—

हरि बोल हरि बोल हरि बोल

(संकीर्तन करते-करते चले जाते हैं)

समाज (दोहा)—

पंडित पूजा पाक दिल, ऐ दिमाग मत लाय।
लगे जरब अँखियान की, गरब सबै उड़ जाय।।

पद—

लखि जिन लाल की मुसकान।
तिनहीं विसरी वेद विधि, जप जोग संजत ध्यान।।
नेम व्रत आचार पूजा, पाठ गीता ज्ञान।
रसिक भगवत दृग दई, असि ऐंच कै मुख म्यान।।

मृदु मुस्कान निहार कै, धीर धरत है कौन।
नारायण कै तन तजै, कै बौरा कै मौन।।

विहाग (दोहा)—

ब्यारु करि पुनि गौर हरि, रहे शयन गृह जाय।
कृष्ण कृष्ण मुख कृष्ण कहत, कृष्ण प्रेम उर छाय।।

(दृश्य-महाप्रभु शय्या पर लेटे हुए)

समाज (चौपाई)—

मन रह्यौ वृन्दावन में जाई। सेज पर्यौ तन तरफत माई।।
निरखत यमुना पुलिन सुहाई। गोपी खोजत फिरत कन्हाई।।

(प्रवेश विरह व्याकुल गोपियाँ गाती हुई)

गोपियाँ— गाना (मिश्र खम्भावती-केहरवा)—

छोड़ि गये गिरिधारी।
वंशी बजाय रास रचाय, छोड़ि गये गिरिधारी।
हाँ कहाँ रासबिहारी।।
सूख गया जल यमुनाजी का, तुम बिन व्रज वन सूना।
प्रेम नदी के बीच भँवर में डूबत हैं व्रज नारी।
हाँ कहाँ रासबिहारी।।

रौला—

हे मालती हे जात जूथिके! सुनो हित दै चित।
मान हरन मन हरन लाल गिरधरन लहै इत।।
हे केतकी इततैं कितहू चितये पिय रूसै।
नन्दनन्दन किधौं मन्द मुसकि तुम्हारे मन भूसै।।
छाँड़ि गये गिरिधारी हाँ कहाँ गये रासबिहारी।।

(गाती-गाती प्रस्थान)

समाज—

अवलोकत प्रभु सुधि दरसाई। गोपी भाव लियो प्रबल दबाई।।
चहत बहुविधि भाव दुराये। लहर सिन्धु किमि रुकत रुकाये।।
कबहु पौढ़हिं कबहु उठि रोवहिं।
कबहुँक इकटक नयन विलोकहिं।।

गौर—

(शय्या पर बैठे हुए) हा प्राणनाथ! कहाँ छिप गये? रास रचाय कै फिर काहे कूँ छोड़ गये?

गाना-दादरा—

जा श्याम ने मोहन मुरली बजाई।
वह श्याम मेरो कहाँ रह्यो लुकाई।।
जा श्याम ने मोहि वन में बुलाई। वह श्याम मेरो०।।
जा श्याम ने कुल कान सब छुड़ाई। वह श्याम मेरो०।।
जा श्याम ने छवि सपने लखाई। वह श्याम मेरो०।।
जा श्याम ने 'प्रेम' अगिनि जराई। वह श्याम मेरो०।।

वा मुख देखन कूँ कहौ, कीजै कौन उपाय।
कहा कहौं कासों कहौं, परी कठिन अति आय।।
ये लोचन आतुर अधिक, उनहीं पीर कछु नाँय।
जलते न्यारी मीन ज्यूँ, तरफि तरफि अकुलाय।।
रोम रोम तन जरि उठै, बरि बरि उठै शरीर।
कब छिरकोगे आयकै, कृपा कटाच्छन नीर।।

(छटपटाते-२ कुछ शान्त हो जाते हैं। स्वप्न में मुरली मनोहर के दर्शन। सिरहाने पर खड़े हैं। एक झलक देकर अन्तर्हित हो जाते हैं। महाप्रभु शान्त पड़े रहते हैं)

समाज (सोरठा)—

आपन रूप लुभाय, आपन कूँ टेरत फिरैं।
तन सुधबुध विसराय, महाभाव गति अटपटि।।
तरफत सेज निमाई, रोम रोम ज्वाला जरै।
विष्णुप्रिया तहँ आई, लेकर बीरी हार सुमन।।

(प्रवेश विष्णुप्रिया-थाल में पान बीड़ी, फूलमाला लिये)

प्रीति भरी विष्णुप्रिया, चरन कमल ढिंग जाय।
जीवन नौका विलोकहिं, पूजति नैनन लाय।।

दिये नैन प्रभु खोल, लखै सन्मुख विष्णुप्रिया।
बोलत गद्गद् बोल, विष्णु कहाँ विष्णुप्रिया।।

गौर—

विष्णुप्रिये! तुम विष्णु कूँ प्रिय हो! बताओ तुम्हारो वह विष्णु, मेरो वह कृष्ण कहाँ है? कृष्ण.....कृ....

समाज (दोहा)—

कृष्ण कृष्ण मुख कहत ही, कृष्ण कह्यौ ना जाय।
प्राण प्राण तब पीउ कहैं, नैनन नीर बहाय।।

विष्णुप्रिया—

(घबड़ाती हुई) हा हा नाथ! आप क्यूँ रोऔ हो। यह कैसो भाव है आपको? इतनो व्याकुल तो मैंने आपकूँ कबहू नहिं देख्यौ! कहा दु:ख है नाथ आपकूँ? धीरज धरौ! बोलौ कछु!

समाज (दोहा)—

अबला सरला बालिका, पतिहिं निहारि अधीर।
रहीं विलोकि वदन चन्द, भरि भरि अँखियन नीर।।

गौर—

हाय हाय! कहा तुमकूँ वह मेरी तरह छोड़ि गयौ? तबही तुम रोय रही हौ। वह जितनो मनोहर है उतनो ही निर्मोही है। जितनो दयालु है उतनो ही निठुर है। फूल और शूल दोनों! हाय! मेरी नाँई तुमहू वाके फन्दे में फँस गई!

समाज (दोहा)—

सुनि रोवति अधिकै अधिक, समझति ना पिय बैन।
लखि लखि गौर सराहहिं, धन्य धन्य तुव नैन।।

गौर—

अहा! तुम्हारे ही नेत्र धन्य हैं, धन्य हैं जो प्यारे कृष्ण के लिए रोमनो जानैं हैं। हाय! मेरे ऐसे नेत्र न भये जो ये हू उनके लिए रोयौ करते।

विष्णुप्रिया—

(अधीर रोती हुई) प्राणनाथ! यह कैसो प्रलाप-विलाप है आपको! याकूँ न तो मैं समझ ही सकूँ हूँ और न देख ही सकूँ हूँ। मेरी तो छाती फटै है, रुआँस रोकै नहीं रुकै है।

गौर—

अच्छो तो तुम मेरे लिए रोय रही हौ। मैं तो समझ रह्यौ हो कि तुम कृष्ण के लिए रोय रही हो। भलो, तुम मेरे लिए क्यूँ रोय रही हौ?

विष्णुप्रिया—

आप मेरे पति हो, स्वामी हो, प्राण हो, जीवन हो, सर्वस्वधन हो। आपको सुख-दुःख ही मेरो सुख-दुःख है। फिर मैं आपकी ऐसी दशा देखिकै क्यों न रोऊँ?

गौर—

विष्णुप्रिये! पति तो सबके एकमात्र श्रीकृष्ण ही हैं। पति नाम आत्मा को है, देह को नहीं।

विष्णुप्रिया—

परन्तु मेरो सम्बन्ध तो आपही सों भयो है। यासों मैं तो एक आपही कूँ पति करकै जानूँ मानूँ हूँ। आत्मा कूँ मैं कहा जानूँ?

गौर—

यह तो जीव को देह-सम्बन्ध है। आत्म सम्बन्ध तो केवल एक श्रीकृष्ण सों ही है। देह-सम्बन्ध को पति सत्य नहीं है, नित्य नहीं है। सत्य और नित्य पति तो श्रीकृष्ण ही हैं। यह देह-सम्बन्ध हू साँचे पति श्रीकृष्ण सों मिलवे के निमित्त सों कर्‍यौ जाय है, उनकूँ भुलायवे के लिए नहीं। वे श्रीकृष्ण मिलैं हैं निष्काम निर्मल प्रेम सों। वा प्रेम कूँ सीखवे-सिखायवे के लिए ही स्त्री-पुरुष को यह देह-सम्बन्ध जोर्‍यौ जाय है। और जब काहु स्त्री-पुरुष को यह देह-सम्बन्ध जोर्‍यौ जाय है। और जब काहु स्त्री-पुरुष के भाग्य सों उनके हृदय में कामना रहित विशुद्ध प्रेम उदय है जाय है तो वहाँ स्वयं श्रीकृष्ण को नित्य प्रकाश होय है। तब स्त्री-पुरुष को देह-भाव छूट जाय है और देह सम्बन्ध हू टूट जाय है। रह जाय है केवल कृष्ण और कृष्ण-प्रेम। यासों आओ हम दोनों अपने साँचे प्राणपति कृष्ण कूँ पुकारैं।

गाना (विहाग-दादरा)—

कहो कृष्ण टेरो कृष्ण लेऔ कृष्ण नाम।
हा हा खाओ याचो कृष्ण-प्रेमभक्ति नाम।।
सत्य पति नित्य पति आदि पति राम।
प्राणपति, आत्म पति, कृष्ण हरि श्याम।।
बड़ोइ मधुर मधुर मधुर, मधुर कृष्ण नाम।
नाम कृष्ण रूप कृष्ण, ललित सुठाम।।
साँची कहौं लखौ लखों, मूरति ललाम।
हँसन नयन मधुर वदन, मधुर सुधा धाम।।
हँसन.....नयन.......मधु.......मधु.......

(गाते-२ व्याकुल क्रन्दन मूर्च्छा)

विष्णुप्रिया—

हैं हैं! इनकूँ यह कहा है गयो ? माँ माँ! कहाँ हो आओ! दौड़ो! (प्रवेश शची माता)

शची—

कहा है बेटी? क्यूँ रोय रही है?

विष्णुप्रिया—

देखौ न इनकूँ! सम्हारो! यह तो रोमते-रोमते बेसुध है गये हैं! हाय हाय! यह कहा भयो?

शची—

निमाई! वत्स! विश्वम्भर! चेतकर! सावधान हो।

विष्णुप्रिया—

माँ नेक जोर ते बोलो! तबही कहूँ सुन पायँगे।

शची—

निमाई! बेटा! सावधान है जा! मेरी और तो देख! आँख खोल न! बोल!

गौर—

(नेत्र खोल) माँ! तुम? माँ! कृष्ण कृ......ष्ण हा कृ......ष्ण

(रोने लगते)

शची—

(व्याकुल हो) हाय हाय! तू क्यूँ रोवै है। अबै तो तू व्यारु करकै हँसतो-बोलतो आयो हो और अबही यह तेरी कहा दशा है गई! हाय मैंने तोकूँ गया जानौ ही क्यूँ दियो! तेरी हँसी-खुशी कहाँ चली गई? हाय मैं कहा करूँ! हे नारायण! दया करौ मो अनाथिनी पै।

गौर—

(कुछ सम्हल कर) माँ! तुम क्यूँ चिन्ता कर रही हो! मैं तो स्वस्थ हूँ! मोकूँ कोई दु:ख नहीं है।

शची—

है कैसे नहीं? रोमत-रोमत तेरो कण्ठ भारी पर गयो है, आँख सूज आईं हैं। तेरे वस्त्र, तेरी सेज आँसुन सों भीज गये हैं! अवश्य ही तेरे हृदय में कोई बड़ी भारी व्यथा है। बता मेरे लाल! तोकूँ कहा दु:ख है। सौगन्ध है मेरी जो छिपायो तो।

गौर—

तो सुनो माँ! ब्यारु करकै जव मैं यहाँ आय लेट्यौ तो कहा देखूँ हूँ कि सिरहाने पै साँवरे रंग को एक बड़ोइ सुन्दर बालक ठाड़ो है—

पीलू-दीपचन्दी—

श्याम रंग वनमाला गरे है।
मुरली अधर वह मनहिं हरे है।।
नैनन में मेरे समाय रह्यौ है।
पर्दे में प्राणन के छाय रह्यौ है।।
इतनो वह भोरो इतनो वह प्यारो।
इतनो वह मोहन मो.....ह.....न.....दुला.......रो।।
(क्रन्दन)

विष्णुप्रिया—

माँ! यह तो फिर रोयवे लगै। मोकूँ तो बड़ोइ भय होय है। इनकूँ शान्त कराओ न माँ!

शची—

निमाई! बेटा! शान्त हो न! धीरज तो धर देख तो यह बेचारी भय और दु:ख के मारे व्याकुल है रही है। और मोकूँ हू बड़ी शंका और भय दबाय रह्यौ है। हाय रे बेटा! कहा तू हू अपने बड़े भैया की तरह मो मरी कूँ मारवे की सोच रह्यौ है कहा हाय रे! अब मैं कहा करूँ!

स्वामी निलो कृष्णचन्द्र निलो पुत्रगण।
अवशिष्ट सबे गात्र आछे एक जन।।
अनाथिनी कृष्ण मोरे एइ देहो वर।
सुस्थ चित्ते मोर गृहे रहु विश्वम्भर।।

अरे विधाता! तैंने और सब कछु हरण कर लियो सो कर लियो परन्तु अब या एक कूँ तो छोड़ दे। एक या गौर ज्योति कूँ तो घर में रहन दै। कहा अनाथिनी विधवा कूँ अन्धी करकै ही छोड़ेगो? बुढ़ापे की लठिया हू छीन लेगौ। मैं तोते गोदी पसार करकै बस यही एक भीख माँगू हूँ कि यह मेरो निमाई मेरी आँखिन के आगे स्वस्थ बन्यौ रहै। और मोकूँ कछुई नहीं चाहिये।

गौर—

(सम्हल कर) माँ! व्यर्थ ही शंका और भय मत करो। देखौ! मैं अब शान्त हूँ, स्वस्थ हूँ। मोकूँ नींद आय रही है। सोऊँगो। सो तुमहू जाय कै सोओ।

शची—

हाँ बेटा! सोय जा! आधी रात हैवे पै आ गई। यात्रा को हार्‌यौ-थक्यौ है। शान्ति सों आराम कर (लिटा देना) चुप-चाप सोय जा। बेटी! तूहू आराम कर। जो यदि कछु बात भई, तो मोकूँ जगाय लीजौ। (प्रस्थान)

समाज (सोरठा दोहा)—

भाव विवश परि रहै प्रभु वाह्य सुधि विसराय।
विष्णुप्रिया पग चाँपति, विधिसों विनवत जाय।।

विष्णुप्रिया——(पायताने की ओर बैठ चरण पलोटती हुई)

गाना (सोरठा-३)—

नित उठि तोसों माँगौं यही हरि।
माँगौं यही हरि, माँगौ यही हरि।।
तुम दुखियन के दुक्ख मिटाओ
पोंछौ अँसुवन अंक लहि, हरि।।१।।

अन्तरा—

हाथ की चूरी शीश को सेन्दुर
भाल की बेंदी प्राणपति, हरि।
व्यथा मिटाओ इन तन मन की
करि देओ थिर मति गति, हरि।।२।।
खेलैं विहरैं भक्त जनन संग
माता 'प्रेम' सों हँसिकै बोलैं, हरि।
आठ पहर में एकहू पल तो
दासी सों दासी कह बोलैं, हरि।।३।।

(पटाक्षेप)

संकीर्तन धुन—

जय शचीनन्दन गौर गुणाकर।
विष्णुप्रिया प्राणधन, नदिया सुधाकर।।

इति गया से आगमन लीला सम्पूर्ण।

❧❖☙

यौवन लहरी **षष्ठ कणामृत**

शुक्लाम्बर कुटिया में गौर

जय जय श्रीगौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जय अद्वैतचन्द्र जय गौर भक्तवृन्द।।

पद—

गौर गुरु करि आये, गया धाम।
मंत्र दसाच्छरी रूप कृष्ण को, गुरु मुख सुनि उर पाये।।
मति गति भई कछु औरे औरे, रूप रंग पलटाये।
मंत्र मूरति मदन मोहन हरि, अन्तर बाहर छाये।।
नवल नेह रस नवल पीर 'प्रेम', वरनत वदन न आये।
नवल भक्ति रस नवल चरित हरि, नवल गौर प्रगटाये।।
अब आगे सुनहू चरित, गौरा शचीकुमार।
कृष्ण विरह दरसाय जिमि, प्रगटत भक्ति उदार।।

(दृश्य फुलवारी—श्रीवास, गदाधर, मुकुन्द आदि भक्तजन फूल बीन रहे हैं)

समाज (दोहा)—

प्रात समय बहु भक्तजन, श्रीवास मन्दिर जाय।
कुन्द कुसुम बीनैं तहाँ, हरि रस यश बहु गाय।।
गदाधर, गोपीनाथ, अरु, रामाई श्रीवास।
मुकुन्द आदि भक्तजन, बीनत सुमन सुवास।।

श्रीवास भक्तमंडली (भैरव-३)—

नन्दभवन को भूषन माई।
यशोदा को लाल वीर हलधर को, राधारमन परम सुखदाई।।

इन्द्र को इन्द्र देव देवन को, ब्रह्म को ब्रह्म अधिक अधिकाई।
काल को काल ईश ईशन को, अति ही अतुल तौल्यौ नहिं जाई।।
शिव को धन संतन को सर्वस्व, महिमा वेद पुरानन गाई।
नन्ददास को जीवन गिरिधर, गोकुल गाँव को कुँवर कन्हाई।।

समाज (दोहा)—

श्रीमान हु आयो तहाँ, कह्यौ गौर सम्वाद।
बाढ्यौ भक्तन गोत अब, सबन हृदय आह्लाद।।

(प्रवेश श्रीमान्)

श्रीमान्—

बधाई श्रीवास जी बधाई! आज तो आपकूँ एक महामहोत्सव मनामनो चाहिए।

श्रीवास—

ऐसी कहा विशेष हर्ष की बात है-कहा शुभ समाचार है जो फूलै न समाय रहे हो?

गदाधर—

पहले अपने आनन्द की प्रसादी तो बाँटो फिर उत्सव को हू प्रबन्ध है जायगो।

श्रीमान्—बाँटवे ही के तांई तो आयो हूँ! बड़ी अनहोनी बात है! असम्भव सम्भव है गयो।

परम अद्भुत कथा महा असम्भव।
निमाइ पंडित हैला परम वैष्णव।।

सब भक्त—

(विस्मय पूर्वक) निमाई वैष्णव है गयो? हाँसी तो नहीं कर रहे हो?

श्रीमान्—

हाँसी नहीं साँची! बिल्कुल साँसी! जैसे मैं बोल रह्यौ हूँ और तुम सुन रहे हो, यह साँची है, वैसे ही यह बातहू साँची है कि निमाई पंडित परम वैष्णव, महाभागवत है गयो है, है गयो है।

श्रीवास—

परन्तु भयो कैसे? कहा अघटन घट गई! यह तो बड़ो चमत्कार है गयो।

श्रीमान्—

यह तो आप जानौ ही हो कि वे गया ते कल लौट आये हैं।

श्रीवास—

हाँ! सुन तो लियो—तो कहा?

श्रीमान्—

यही कि कल संध्या समय हम उनसों मिलवे गये हे-मुरारि, सदाशिव और मैं। तो वे बड़े शान्त और उदास बैठे पाये। हमने उनते गया यात्रा को वृत्तान्त सुननो चाह्यौ तो वे फफक कै रोय उठे और बोले 'कृष्ण कहो, कृष्ण नाम सुनाओ! मोकूँ और कछु नहीं भावै है।' इतनो कहकै रोयवे लगे। बड़ी कठिनाई सों हमने शान्त कर्‌यौ और वृत्तान्त पूछ्यौ तो बोले कि गया ते लौटती समय मार्ग में एक रात्रि श्रीकृष्ण के स्वप्न में दर्शन भये—आगे बोलनो बन्द है गयो और हा कृष्ण-कृष्ण कहकै रोयवे लगे। और आँसू हू द्वै चार बूँद नहीं—धारा पै धारा दुधारा-चौधारा-शतधारा! इतनी प्रेमभक्ति को स्रोत कैसे कहाँ ते फूट पर्‌यौ—मनुष्य में तो यह सम्भव नहीं—

जे भक्ति देखिलाम आमि ताहार नयने।
ताहाते मनुष्य बुद्धि नाहि आर मने।।

गजल—

जो भक्ति प्रेम देखी है आँखों में उसकी,
तो आँखें भी मेरी बदल-सी गई हैं।
न लगता वह मुझको मनुष्य सा कोई,
निमाई की मूरत अब कृष्ण मई है।।
कहता बस यही कृष्ण गाओ सुनाओ,
जीवन संजीवन तो बूटी यही है।
रो रोके सबको रुला देता 'प्रेम' वह,
निमाइ की मूरत अब कृष्ण मई है।।

श्रीवास—

(सोल्लास) गोत्रानुवर्द्धताम्! गोत्रानुवर्द्धताम् (अहा)

बढ़ावें बढ़ावें गोत जाति हरी है।
बनावें बनावें भक्त घर घर हरी है।
बजावें बजावें नाम डंका हरी है।
बहावें बहावें 'प्रेम' घर घर हरी है।।

हरि बोल! (सब) हरि बोल!!

श्रीमान्—

श्रीवास जी! कल तो निमाई पंडित गया यात्रा को वृत्तान्त नहीं सुनाय सकै परन्तु आज या समय उननै हम शुक्लाम्बर कुटिया पै बुलाये हैं। यासों अब मैं वहीं जाय रह्यौ हूँ। और आप महोत्सव की तैयारी करौ।

श्रीवास—

अवश्य लेऔ महोत्सव और नित्य ही महोत्सव। आज ही तो मेरी चिरकाल की अभिलाषा पूरी भई है और जो मेरे प्रिय सखा स्वर्गीय जगन्नाथजी को पुत्ररत्न निमाई श्रीकृष्ण प्रेमी भक्त बन गयो है। अब तुम जाओ और वहाँ यदि कुछ विशेष वार्ता भई तो आयकै हमकूँ सुनामनो जैसे यह सुनाई।

श्रीमान्—

अवश्य सुनाऊँगो। नमस्कार (प्रस्थान)

श्रीवास, भक्तजन—

हरि बोल हरि बोल हरि बोल (संकीर्तन करते हुए दूसरी तरफ से चले जाते हैं एक गदाधर ही पीछे ठहर जाता है)

समाज (सोरठा)—

कृष्ण भक्त गदाधर, वयस लघु गुन रूप बहू।
पूजत गौरहिं अन्तर, करत सकुच बाहर बहू।।

गदाधर—

अहा! अब जायकै विधाता मेरे अनुकूल भयो है जो मेरे प्राणाराध्य गौरसुन्दर में प्रेम भक्ति उदय भई है।

पद—

मैं नमन करूँ चरनन विधना, मन भामती बेला आई है।
मेरे सपनों की आशा बेली, अब फूलने फलने आई है।।
मैं देख देख जिसे दूर ही से, दिल ही दिल तरसा करता।
उस देव के पद कमलन की अब, पूजन की पारी आई है।।
माला बना कुसुमन की नव नव, प्रभु के अंग सजाऊँगा।
गोदी में रख सहलाऊँगा, वे चरण युगल सदाई हैं।।
अब डर कैसा नहीं छोड़ेंगे वे, गायँगे कृष्ण गवायँगे।
पीऊँगा प्रेम-पपीहा वन, पीयूष स्वाति सुखदाई है।।

यासों चलूँ शुक्लाम्बर जी की कुटिया कूँ। मैं बुलायो तो नहीं है परन्तु ब्रह्मचारी जी दयालु हैं। मैं उनकी कुटिया के भीतर छिप करकै बैठ जाऊँगो और गौरसुन्दर के दर्शन करूँगो और उनकी कृष्ण-कथा सुनूँगो (प्रस्थान)

(दृश्य-गंगातट। शुक्लाम्बर की कुटिया। शुक्लाम्बर बैठे मालाजाप कर रहे हैं)

समाज—

कृष्ण कथा रस लोभी गदाधर।
जाय लुकायो कुटि शुक्लाम्बर।।
सदाशिव मुरारिहु आये। पुनि श्रीमान हू जाय मिलाये।।
आवत हेरे गौर विश्वम्भर। भाव मगन सुमिरत प्राणेश्वर।।
(प्रवेश महाप्रभु भाव विभोर गाते हुए)

गौर (आसावरी-जयताल)—

हे देव! हे दयित! हे भुवनैकबन्धो!
हे कृष्ण! हे चपल! हे करुणैकसिन्धो!
हे नाथ! हे रमण! हे नयनाभिराम!
हा हा कदानु भवितासि पदं दृशोर्मे।।

हे देव! प्रकाश स्वरूप करो, हे देव! हृदय में विलास करो।
हे दयित! प्रिय तुमही अति, हे दयित! दयालु दया जु करो।।
हे बन्धो! सकल जग उपकारी, हे कृष्ण! आनन्द प्रदान करो।
हे चपल! परम स्वतंतर पै करुणासिन्धु करुणा करो।।
हे नाथ! सकल जग पालक हो, दरसन दे पालन प्रान करो।
हे रमण! रमो उर अन्तरहिं, अब आँखिन आगे रमन करो।।

हे नैनन के अभिराम तुम्हीं, रस रूप सों शीतल नैन करो।
हा हा कब नैनन के पथ पै, बनि 'प्रेम' पथिक विश्राम करो।।

आओ देव! मेरी आँखिन के आगे अपनो रूप प्रकाश करो! तुम पूजा के ही देवता नहीं, प्राणन के हू देवता हो, दयित हो अतिशय प्रिय हो, सहज दयालु हो। या दीन हीन दुखी दास पै हू दया करो! दया! करुणासिन्धो करुणा! करुणा।

(सामने कुटिया के खम्भे की ओट में श्रीकृष्ण की झाँकी।
महाप्रभु इकटक देखने लगते हैं)

समाज—

तन्मय रूढ़ दशा उमगाई। सन्मुख श्यामहिं लखत निमाई।।
यह तन्मयता सीम कहावै। आप श्याम जग श्याम दिखावै।।
भुजा उठाय मिलन हित धाये। पकरत खम्भ गिरे मुरझाये।।
नयन पूतरी फिर गईं, दसन दसन मिलै आय।
वदन बहावत फेन रस, जनु लई मृगी दबाय।।
सखा विकल अकुलाये भारी। धीरज कछु उरधारि मुरारी।।
करत कछुक शीतल उपचारा। बोलत नाम लै बारम्बारा।।
तिन यह दशा प्रथम लखि पाये। सूझत ना कछु जतन उपाये।।
खोलहु नयन बोलहु मुख भाई। हे मधुसूदन! करौ सहाई।।
बड़ी बेर लोचन कछु उघरे। मुख सों बैन सकैं ना उचरे।।

(महाप्रभु आँखें खोलते हैं)

हेरि सखन तन नयन बहावैं। अँगुरी सों निज हृदय बतावैं।।

गौर—

मेरो कृष्ण हृदय महँ नाहिं। हस्त हिलाय भाव जनावहिं।।
पुनि कछु सम्हरि जु बोलै रोय। पायो धन मैं दीन्हो खोय।।

हाय हाय! छूट गये प्यारे! हाथ में आयकै हू छूट गये! अब यहाँ (हृदय को बता) कछुई नहीं रह्यौ-सूनो, सूनो श्याम बिना सब सूनो! अरे कोई उनकूँ लाय देऔ! मिलाय देओ! हाय मेरो कृष्ण-कृष्ण कहाँ है?

बाँह छुड़ाये जात हो, निबल जानिकै मोहिं।
हृदय सों जब जाओगे, सबल बदूँगो तोहि।।

गीत-दादरा—

नैनों से नैना मिलाके, प्यारी छवि दिखलाके
अब बोलो कित भागे।।१।।
कित ढूँढूँ कित जाऊँ, कित श्याम पिया पाऊँ
मत भूलो मोहि पिया, प्रेम के झीने लागे
बँध गई मैं आके।।२।।
मैं तो रंगा के कफनी, बन जाऊँ प्रेम जोगिनी
मोहिं ले चलो री कोई, जहाँ बसत निरमोही
मनाऊँगी मैं तो जाके।।३।।
वह माने तो मनाऊँ, न माने तो मनाऊँ।
मोहिं नहीं और ठाऊँ, परी रहूँ 'प्रेम' पाऊँ,
जगाऊँगी अलख मैं काके।।४।।

हाय प्राणनाथ! मोकूँ छोड़कै कहाँ चले गये। अब मैं कहा करूँ? कहाँ जाऊँ? कैसे पाऊँ तुम्हें? प्यारे। प्यारे! श्याम! मोहन! प्राण....... ..

(भूमि पर लोटपोट हो रुदन)

समाज (दोहा)—

प्रेम पीर प्रबल अति, देत हृदय मरोर।
तरफत लोटत भूमि पै, छिनछिन गति कछु और।।

कृष्ण रे बापरे मोर, कोन् दिके गेला।
एतो बोले प्रभु काँदिते लागिला।।

कृष्ण प्रेम फाँदे प्रभु शचीर नन्दन।
चतुर्दिके बेड़ि काँदे भागवत परम।।
गृहेर भीतर मूर्च्छा गेलो गदाधर।
कृष्ण बोलि काँदिते लागिला परस्पर।।

सब भक्त—

हा कृष्ण! कृष्ण! हा कृष्ण

समाज—

उठिलो मंगल कृष्णप्रेमेर क्रन्दन।
प्रेममय हैलो शुक्लाम्बरेर भवन।। (चै० भा०)

गदाधर—

(नेपथ्य में से क्रन्दन) हा कृष्ण! कृष्ण!

समाज—

सुनत थिर ह्वै कछु विश्वम्भर। बूझत रोवत को गृह अन्तर।।
कहत शुक्लाम्बर तुम्हरो गदाधर।

गदाधर—

रोवत आय पर्यौ चरनन पर।।
प्रभु उठाय निज हृदय लगाये।

गौर—

कहत गदाधर तुम हरि भाये।।

बालपन सों कृष्ण भजन, तुम तो कीन्हे भाई।
हौं तो अपनो जन्म सब, दीन्हों वृथा गँवाई।।

पद-दादरा—(गदाधर के गले से लिपटे हुए गाना)

कहौं पीर प्राणन की, धरौं धीर कैसे।
पायो लखि मारग गया, लख्यौ अबहि तैसे।।
शिशु एक साँवरो सलोनो मन मोहनो।
रह्यौ समाय प्राण नैन, तजत नाहिं सपनो।।
वदन सोइ मोहन मदन, लख्यौ सामने भाई।
बजाय वंशी नचाय नैन, गयो प्रेम हिराई।।

अब करहु तुम मम दु:ख खंडन।
आन मिलाओ देओ नंदनंदन।।

भैया मुरारि (कण्ठ से लिपट)

श्याम मेरो बड़ोइ मन मोहना।
करि है कृपा कब मोपै सोहना।।

भैया सदाशिव (कण्ठ से लिपट कर)
आओ हम तुम कृष्णहिं टेरैं। वे प्रभु हमरे, हम उन चेरैं।।
(शुक्लाम्बर प्रति हाथ जोड़) ब्रह्मचारी जी!
तुम विरागी तन मन हरिदासा। देओ भक्ति पूरहु मो आशा।।
निज पग धूरि शीश मम देहु। कृष्णभक्ति असीस पुनि देहू।।

कहो कृष्ण मोकूँ कृष्ण सुनाओ।
कृष्ण भजो सब मोकूँ भजाओ।।

समाज—

जन जन गरे लगि लगि हरि रोवहिं।
कृष्ण कहैं पुनि कृष्ण बुलावहिं।।
इहि विधि गौरा नाम सिखावहिं।
माँगन मिस करि प्रेम लुटावहिं।।
दानी शिरोमणि दीन कहावहिं।
लच्छन प्रेम भक्ति प्रगटावहिं।।

सब भक्त—(संकीर्तन)

कृष्ण हे कृष्ण हे, कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण हे कृष्ण हे, कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।।

समाज (दोहा)—

आये तीरथ कथा कहन, भूलि गये सो बात।
एक कृष्ण रस नाम बिन, मन मुख आन न आत।।
अद्‌भुत आनन्द रस रह्यौ छाई।
दिन गयो बीत न कछु सुध पाई।।
न्हान न भोजन ना जल पाना। सखा सकुच वचन मुख आना।।

श्रीमान्—

भैयाओ! अब तो दिन बीत गयो! संध्या है आई सबेरे के आये भये गौरसुन्दर को भोजन तो कहा स्नान जलपान हू नहीं भयो। अब तो इनकूँ घर लै चलनो ही चाहिए।

मुरारि—

हाँ भैया! शची माँ घबराय रही होंगी। चलौ इनकूँ सम्हार कै लै चलौ।

श्रीमान्—

प्रिय विश्वम्भर! अब कल फिर कृष्ण-कथा कहैंगे-सुनैंगे। संध्या है आई है। अब घर कूँ चलनो चाहिए। माँ व्याकुलता सों बाट देख रही होंगी।

सब—हरि बोल! हरि बोल! हरि बोल

समाज (दोहा)—

पकरि प्रभुहिं लै चलै, बोलैं हरि हरि गाय।
सबके उर आनन्द महा, विधना करी सहाय।।

(सखाओं का परस्पर वार्त्तालाप)

अब तो विधना भयो सहाई। दियौ गौर प्रिय भक्त बनाई।।
करिहैं कहा पाखंडी जे पंडित। करिहै निमाई सबकूँ खंडित।।
बड़ आधार हम पायो निमाई। भक्ति भक्तपुर बढ़िहै भाई।।
कोई कहत तीरथ फल जायो। ईश्वरपुरी महत् संग पायो।।
कोई कहत अद्वैत गुसांई। तप फल भयो प्रगट निमाई।।
कोई रहसि बतावत भारी। निज निज मति गति सब अनुसारी।।
आनन्द मगन सब हरि हरि गावहिं।
कृष्ण कृपा भई गुनि मन हरषावहिं।।

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल (गाते-गाते प्रस्थान)

समाज (पद)—

सोइ रसना जो हरि गुन गावै।
नैनन की छवि यहै चतुराई, जो मकरन्द मुकुन्दहिं ध्यावै।।
निर्मल चित्त तो सोई साँचौ, कृष्ण बिना जिय और न आवै।
श्रवनन की जु यहै अधिकाई, सुनि हरिकथा सुधा रस-प्यावै।।
कर तेई जे श्यामहिं सेवैं, चरनन चलि वृन्दावन आवै।
सूरदास बलि जैये ताकी, जो हरिजु सों प्रीति बढ़ावै।।

गृह गौर पहुँचाय, सखा सिधारे भवन निज।
माता हितचित लाय, देहकर्म करवाये सब।।
न्हाय गौर ब्यारू किये, रहे शयन गृह जाय।
करति सेवा विष्णुप्रिया, भाग धन्य मनाय।।

(पटाक्षेप)

इति शुक्लाम्बर कुटिया लीला।

∽❖∽

पाठशाला धातु सूत्र

समाज (दोहा)—

गुरु भूले व्यवहार जग, परै प्रेम के पाश।
छात्र सकल उत दिन गिनैं, गुरु ढिंग पढ़वे आश।।
हेरि हेरि मारग नित हारे। तब गुरु गृह गमन उर धारे।।
एक दिवस भोरहिं जुरि आये। करि प्रनाम बोलत सकुचाये।।

(पाँव सात छात्रों का प्रवेश)

छात्र—

माँ माँ शची माँ!

शची—

(बाहर निकलती हुई) ओहो! तुम हो छात्रो! आओ आओ, बैठो। कछु जलपान कर लेओ।

छात्र—

माँ प्रणाम! गुरुजी कहाँ हैं? हम उनकूँ प्रणाम करवे आये हैं।

(प्रवेश महाप्रभु का)

छात्र—

(महाप्रभु के चरणों को स्पर्श कर प्रणाम करते हैं। हाथ जोड़ नतमस्तक खड़े रहते हैं)

गौर—

बोलो प्रिय छात्रो! कहा बात है?

छात्र—

भूरि भाग्य आपहिं गुरु पाये। बाट निहारत दिवस बिताये।।
करहू उजागर सूनी शाला। देहु विद्या गुरु दीनदयाला।।

गौर—

आज तुम सब पाठशाला आमनो। मैं हूँ आऊँगो।

छात्र—

जय हो गुरुदेव की (चरण स्पर्श कर प्रस्थान)

समाज—

गमन वचन प्रभु दै संतोषे। भये विदा उर आशा पोषे।।
शिला नारायण तुलसी पूजन। किये विश्वम्भर कछु सचेत मन
अरपि नैवेद्य प्रसादहिं पाये। संग छात्र इक शाला धाये।।

(दृश्य—पाठशाला-छात्रगण बैठे हैं)

मुकुन्द संजय भवन महँ, चण्डी मण्डप ठौर।
छात्र सकल बैठे तहँ, बाट निहारत गौर।।

शशी—

आज गुरुजी पधारेंगे और पढ़ायँगे! आनन्द! बड़ौ आनन्द!

रजनी—

पढ़ायँगे सो पढ़ायँगे, हँसायँगे, खिलायँगे, नगर में घूमवे-घुमायवे लै जायँगे और.......

प्रफुल्ल—

और गंगाजी में कूद-कूद कर न्हायँगे और तैरेंगे, डूबैंगे और डुबायँगे। गुरुजी सों पढ़वे ते हू अधिक आनन्द तो उनके संग गंगाजल में धूम मचायवे में है! क्यों भैया पुरुषोत्तम! तुम कैसे चुप बैठे हो?

पुरुषोत्तम—

भैया प्रफुल्ल! बात तो तिहारी सब साँची है परन्तु मैंने पिता जी के मुख सों यह बात सुनी है कि अब गुरुजी को स्वभाव बिल्कुल बदल गयो है। वे अब पहले जैसे चंचल नहीं बड़े गम्भीर उदास रहे आवैं हैं।

समाज (दोहा)—

बहुविधि चर्चा करि रहै, सुनी सुनायी बात।
आवत लखे गुरुदेवहिं, भये ठाड़े सकुचात।।

(प्रवेश महाप्रभु शान्त अन्तर्मना। पीछे एक छात्र ग्रन्थ लिए)

आसन राजै गौर, किये प्रनाम पग परसि सब।
हेरत भाव विभोर, मूरति मधुर गुरु गौर की।।

गौर—

कृष्ण-कृष्ण कहौ और अपने-अपने ग्रन्थ कूँ खोलौ और पाठ पढ़ौ।

समाज—

छात्र सकल कौतुकवश बोलैं। कृष्ण कृष्ण कहि ग्रंथन खोलैं।।

शशी—

कृष्ण कृष्ण! सिद्धो वर्ण समाम्नाय।

प्रफुल्ल—

कृष्ण कृष्ण! सिद्धो वर्ण समाम्नाय।

रजनी—

कृष्ण कृष्ण! सिद्धो वर्ण समाम्नाय।

गौर—

सर्व वर्ण में, स्वर में व्यंजन में सिद्ध है श्रीकृष्ण।

पुरुषोत्तम—

वर्ण समुदाय अकार सों क्षकार पर्यन्त स्वतः सिद्ध माने जायँ हैं। आप उनमें श्रीकृष्ण सिद्ध है बताओ हो। यह तो हमारी समझ में नहीं आयो।

गौर—

नित्य सिद्ध नित्य मुक्त हरि कूँ बतावैं।
तासों नित्य सिद्ध सब वर्ण ही कहावैं।।

अकार सों क्षकार पर्यन्त सम्पूर्ण वर्ण समुदाय स्वयं भगवान् कूँ ही बतावैं हैं, यासों वे हू नित्य सिद्ध कहावैं हैं।

प्रफुल्ल—

प्रभो! यह व्याख्या तो हमारी समझ में आई नहीं। स्पष्ट करकै समझाय दैवे की कृपा करैं।

गौर—तो सुनो!

आम्नायते उपदिश्यते परम धर्मोऽनेनेति आम्नाय वेदः। सम्यक् आम्नाय समाम्नाय। किम्वा, आमनति उपदिशति विष्णोः परमं पदम्।

आम्नाय नाम वेद को है। वेद परम धर्म को उपदेश करे हैं। परम धर्म नाम श्रीष्ण को ही है। श्रीकृष्ण के परम पद को ही वेद सम्यक् रीति सों वर्णन करैं हैं। यासों वेद समाम्नाय कहावैं हैं। वेद में श्रीकृष्ण भजन के अतिरिक्त और कछुई नहीं है। 'वासुदेव परा वेदा:'।

गाना (पयार-छन्द)—

कृष्ण भजन उपदेशे सम्यक् आम्नाय।
आदि मध्य अन्त एक श्रीकृष्ण रमाय।।
कृष्ण धातु कृष्ण वर्ण कृष्ण अर्थ रूप।
अक्षर वर्ण सब श्रीकृष्ण स्वरूप।।
एक द्वै बहुवचन सब ही श्रीकृष्ण।
पुरुष प्रकृति प्रत्यय सबही श्रीकृष्ण।।
कृष्ण ही त्रिकाल सिद्ध सूक्ष्म ओ वृहत्।
लट् लुट् लिट् विधि भूत ओ भविष्यत्।।
काव्य व्याकरण कृष्ण न्याय ओ वेदान्त।
सत्य तत्त्व वेद्य वस्तु आदि मध्य अन्त।।
कृष्ण सों ही सिद्ध सब कृष्ण सर्वाधार।
कृष्ण कर्म धर्म ज्ञान योग प्रेम सार।।

शशी—

(धीरे से दूसरे के प्रति) कहा गुरुजी की वायु तो नहीं विगर गई जो न जानैं कहा कहा कहे जायँ हैं।

रजनी—

चुप चुप! गुरुजी जो कछु कहैं सुनते जाओ। पीछे समझ-समझाय लेंगे।

प्रफुल्ल—

गुरुजी! धातु संज्ञा काहे की है?

गौर—

श्रीकृष्ण-शक्ति की।

गाना—

धातु सूत्र बखानूँ हूँ सुनो छात्रगन।
कौन की सामर्थ्य है जो करै तो खंडन।।
कृष्ण शक्ति ही देह धारै ओ चलावै।
सत्य शिव सुन्दर ओ प्रिय देह बनावै।।
देह मध्य धातु रूप, में है कृष्णशक्ति।
करैं सब याहि सों है नेह और भक्ति।।
देह ते निकस जाय जब कृष्ण धातु।
कौन पुत्र पति फिर कौन पितु मातु।।
चूमें मुख जाको वाको छिये ते नहावैं।
राखैं गोदी आज काल्ह चिता पै जरावैं।।
कृष्ण शक्ति ही यासों धातु है पियारो।
करै कोई खंडन यह मत है हमारो।।
कृष्ण ही है सत्य इक, कृष्ण ही सुन्दर।
कृष्ण ही आनन्द प्रेम, कृष्ण ही धातु वर।।
बोलो कृष्ण भजौ कृष्ण, सुनो कृष्ण नाम।
अहर्निश कृष्ण चरण करौ प्रेम ध्यान।।
कृष्ण माता कृष्ण पिता कृष्ण प्राणधन।
कृष्ण चरनन करौ तन मन अर्पण।।

समाज (दोहा)—

मुग्ध मंत्रवत् सुनत सब, धातु सूत्र विसराय।
जहँ कृष्ण आपहि गुरु, तहाँ कहा रहि जाय।।
गुरु मौन सब मौन शिष्य, भक्तिभाव प्रभाव।
वाह्य दशा पाई प्रभु, बोले मधुर सुभाव।।

गौर—

भैयाओ! धातु सूत्र को अर्थ कैसो भयो?

पुरुषोत्तम—

गुरुदेव! जो कछु आप बखानौ हो वह तो सब सत्य ही है वासों हमारे व्याकरण पढ़वे को उद्देश्य तो सिद्ध नहीं होय है।

गौर—

तो मैंने कहा व्याख्या करी?

सब छात्र—

केवल श्रीकृष्ण हरि।

गौर—

तो कहा मोकूँ कहा वायु ने आय घेरी?

पुरुषोत्तम—

सो हम कैसे कहैं देव? कारण कि वायु रोग के लक्षण तो कछु और ही होय हैं और आप में कछु और ही हैं—

सवैया—

दुख देत है आपकूँ औरन कूँ जाकी विगरत तन वायु है।
दुख तन मन को हर लेत सबै, यह आपकी अचरज वायु है।।

शशी—

अलबल बोल कुबोल बकै, जाकी विगरत तन वायु है।
हरिरस अमृत बरसावत, यह आपकी अचरज वायु है।।

रजनी—

मुख जात बिगरि भय लागत है, जाकी विगरत तन वायु है।
मुख मोहन लखि भय भागत है, यह आपकी अचरज वायु है।।

प्रफुल्ल—

यह वायु यहाँ की नाहिं प्रभो, कोई आप देश की वायु है।
जग वायु वारे जानैं कहा, यह कौन देश की वायु है।।

गुरुदेव! आपके वचनामृत कूँ श्रवण करकै हमारे हृदय में एक अनिर्वचनीय आनन्द को अनुभव होय है परन्तु..........

गौर—

परन्तु कहा? कहो संकोच मत करौ।

प्रफुल्ल—

भगवन्! आज साढ़े तीन मास सों हमारी पाठशाला बन्द है। अब आप गया-यात्रा करके पधारे हैं तो अब हमकूँ पुन: पोथी में सों संथा मिल जानो चाहिये। यही हम सबनकी प्रार्थना है।

गौर—

अच्छो भैयाओ! मैं कल अवश्य पोथी में सो पढ़ाऊँगो अब चलौ गंगाजी कूँ। वहाँ संध्या वन्दन कर घर जायँगे।

छात्र सब—

(पुस्तक बाँधकर खड़े हो जाते हैं)

गौर—

(आगे-आगे चलते हैं। छात्र कुछ पीछे हटकर परस्पर धीरे-धीरे बातें करते हुए चलते हैं)

शशी—

मीछे आशा बाबा! मीछे आशा। काल ओ आस्वे ना आर पाठ ओ पाओया जावे ना। गुरुदेवेर जे रकम मति गति ताते एके बारे छुटी! जन्मेर मतो छुटी!!

रजनी—

ठीक् बोल्छो भाया। एखन बोइ गुलो के गंगा मायेर कोले रेखे दिलेइ हय! की बोलो?

प्रफुल्ल—

ता मन्द नय! तार पोर हरि बोलो आर धेइ-धेइ कोरे नेचे बेड़ाओ!

पुरुषोत्तम—

थाम् रे प्रफुल्ल थाम्! चेंचास ना! आमि बोली जे सकले मिले दादा गुरुर काछे चोलो! उनकूँ अपनो दु:ख सुनायँगे। वे अवश्य ही गुरुजी कूँ समझाय-बुझाय देंगे।

रजनी—

ठीक् बोले छो! काल सकाले दादा गुरुर काछे जाओया जाक्। तब ही हमारो कार्य सिद्ध होयगो।

(प्रस्थान)

समाज (दोहा) —

गंगा तट बहु काल रमि, संध्या तहाँ बिताय।
आये गौरा भवन निज, मात हियो हुलसाय।।
चरन पखारे विष्णुप्रिया, आसन दियो बनाय।
बैठे गौरा ब्यारु करहिं, मात जेमावति जाय।।

(दृश्य-महाप्रभु भोजन कर रहे हैं। शची माँ दाहिने ओर बैठी हैं। विष्णुप्रिया बाँयी ओर आड़ में खड़ी हैं)

समाज (पद विहाग) —

ब्यारु करत श्रीगौर निमाई।
मात शची बैठी ढिंग आगे, रुचि अनुसरी परसतहि जाई।
अन्तर्गृह विष्णुप्रिया वाला, अवलोकत पति नैन सिराई।
मात तात बतरावत बाहर, सुनति सुखद हित चितलाई।
आज तात कहा पढ़्यौ पढ़ायो, कहौ कछु जननी बलिजाई।
अवसर पाय कपिल सम बोले, शची देवहूति माता बनाई।
बनिवक्ता प्रभु भक्ति बखानत, श्रोता जननी घरनी बनाई।
अक्षर एकहू जो हियो आवै, पाय 'प्रेम' सहज तरि जाई।।

गौर—(गजल हमीर-केहरवा-बिलंवित लय) —

सुनो माँ जो कछु पढ़्यौ ओ पढ़ायो।
पढ़्यौ कृष्ण कृष्ण कृष्ण, कृष्णहिं पढ़ायो है।।१।।
नहिं कृष्ण नाम सों बड़ो सत्य कोई।
नहिं भागवत हू सों बड़ो सत्य कोई।
नहिं कृष्ण पद सों शरन बड़ी कोई।
नहिं कृष्णदास सों पदवी बड़ी कोई।
यही पढ़यौ मैंने आज यही तो पढ़ायो।
पढ़्यौ कृष्ण कृष्ण०।।२।।
सदा सर्वभाव करि भजो कृष्ण चरन।
अभय अशोक पद अमर ही करन।।
ब्रह्मा लगि जीव सब काल के वदन।
एक कृष्णदासही के काल सिरपै चरन।।
यही पढ़्यौ मैंने आज०।।३।।

कर्म कृष्ण धर्म कृष्ण विद्यासार कृष्ण।
जप कृष्ण तप कृष्ण योग सार कृष्ण।।
आदि कृष्ण मध्य कृष्ण अन्ते कृष्ण कृष्ण
जीवन सफल मिल जाय 'प्रेम' कृष्ण।।
यही पढ़्यौ मैंने आज०।।३।।

शची—

वत्स निमाई! तेरी तो सबही बात निराली हैं। बेटा! मैं एक बात कहूँ हूँ कि तू जो कुछ धन सम्पत्ति जहाँ कहूँ पावै है सो सब लायकै मोकूँ दै देय है तो—

गयाय पाइले कृष्ण प्रेम हेनो धन।
देवता दुर्लभ वस्तु अनुपम रतन।।

गया में तोकूँ कृष्ण प्रेम जैसो अमूल्य धन प्राप्त भयो है। यह देवतान के तांई हू दुर्लभ है सो—

आमारे करुणा जदि थाके तुव चित्ते।
देहो कृष्ण प्रेम धन, डराऊँ चाहिते।।

वा देव दुर्लभ धन को एक किनका प्रसाद कहा अपनी कंगालिनी जननी कूँ नहीं दैगो? मोकूँ तो माँगवे में हू संकोच, भय होय है। तू ही यदि मेरे ऊपर कछु दया-माया करै तो मैं तबै पाय सकूँगी।

गौर (बंगला चै० भा०)—

वैष्णव प्रसादे प्रेम पावै माता तुमि।
निश्चय एइ कथा कोहिलाम आमि।।

माँ! श्रीकृष्ण के निजजन जो वैष्णव हैं उनकी कृपा सों ही तुम प्रेम निश्चय ही पाओगी।

वैष्णव गुसांइ प्रेम दिते निते पारे।
ताहा विना प्रेम केहो दिवारे ना पारे।।

वैष्णवजन ही प्रेम लै-दै सकै हैं। उनके बिना और कोई प्रेम नहीं दै सकै है। स्वयं श्रीकृष्ण हू मुक्ति तो दै देय हैं परन्तु प्रेमभक्ति दैवे में संकोच करैं हैं।

शची—

बेटा! मैं तो तोकू ही परम वैष्णव समझूँ हूँ सो तू ही मोपै यह कृपा कर दै।

गौर—

हरे कृष्ण माँ! हरे कृष्ण! ऐसे मत कहो। मैं तो वैष्णव के पद-रज के समान हू नहीं हूँ। हरे कृष्ण हरे कृष्ण।

शची—

(सप्रेम) हरे कृष्ण हरे कृष्ण।

विष्णुप्रिया—

(भीतर से) हरे कृष्ण हरे कृष्ण

समाज (दोहा)—

सुनत तात के वचन सत्, मात गात पुलकात।
नैन धार सों प्रेम बहै, हरे कृष्ण मुख गात।।

विसर गईं सब दुक्ख, पुत्रवधू अरु पुत्र हू।
मगन प्रेमरस सुक्ख, प्रभु प्रसाद सोंधनि भई।।

कृष्ण कृष्ण बोले डाके, हृदय उल्लास।
कहिए 'लोचन' गौरा प्रथम प्रकाश।। (चै० मंगल)

(गौर, शची एवं विष्णुप्रिया द्वारा संकीर्तन)

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।।

(पटाक्षेप)

इति पाठशाला धातु सूत्र व्याख्या लीला सम्पूर्ण।

यौवनमृत लहरी **सप्तम कणामृत**

अध्यापन समाप्ति-आदि संकीर्तन

वैराग्यविद्यानिज भक्तियोग शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्णचैतन्य शरीरधारी कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये।।

पद (हमीर-३)—

चरण शरण कृपासागर के।
पुरुष पुरातन नित नूतन तन, कृष्णचैतन्य कृपासागर के।।
नव नव जनम करम युग युग प्रति, अव्यय अद्वय तत सागर के।
नरसिंह वामन रामकृष्ण श्रीकृष्णचैतन्य कृपासागर के।।
कृष्ण राग विराग भक्ति निज, सार जु साधन सागर के।
काढ़ि पिवावन हेत उठे भुज, कृष्ण चैतन्य कृपा सागर के।।
क्यूँ मन मूढ़ विषय विष गटकत, बसि समीप सुधा सागर के।
'प्रेम' मधुप बनि रम पद पंकज, कृष्णचैतन्य कृपा सागर के।।

समाज (चौपाई)—

जब सों गौर गया ते आये। कृष्ण प्रेम विरह प्रगटाये।।
कबहुँ हँसैं कबहुँ रोवैं। नृत्य करैं कभु सुध बुध खोवैं।।
बोलैं कबहुँ मौन कभु धारैं। प्रीति पगै पन आन विसारैं।।
नित्य कृत्य सब लौकिक कर्मा। छूट न लागै प्रीति के धरना।।
गये भूल सब वाद विवादा। रह गयो कृष्ण कृष्ण हरि नादा।।

(प्रवेश महाप्रभु गाते हुए-काँधे पर धोती)

गौर—

भजन गोपालं दीनदयालं वचन रसालं ताप हरम्।
सुन्दरवनमालं नयन विशालं रूपरसालं चित्तहरम्।।
वारिजवदनं लज्जितमदनं आनन्दसदनं प्रेमधरम्।
मोहन घनश्यामं नयनाभिरामं लावण्यधामं चन्द्रवरम्।।

(गाते-२ प्रस्थान)

(दृश्य-गंगा-तट। स्नानार्थी आ जा रहे हैं)

समाज (चौपाई)—

गंगा न्हान गौर चलि जावहिं। वैष्णव पद रज शीश चढ़ावहिं

गौर—

(पीछे-पीछे आते हुए एक ब्राह्मण की चरण रज मस्तक पर लगाते हैं)

ब्राह्मण १—

हाय-हाय पंडित निमाई! ऐसे मत करौ। आप बड़े कुलीन विद्वान् पंडितराज हैं, और मैं एक क्षुद्र.......

गौर—

क्षुद्र नहीं महान् हैं, वैष्णव भक्त हैं। भक्तन की चरणरज सों न्हाये विना भगवद्भक्ति नहीं मिलै। मेरे बीस वर्ष वृथा ही गये। अब कृपा करो, आशीर्वाद देओ कि मोकूँ श्रीकृष्णभक्ति मिलैं एक कृपा औरहू करौ। मैंने जान-अजान में जो कछु आप सों हाँसी-मसखरी करी होय वाके लिए मोकूँ क्षमा करो (चरण पकड़ना चाहते हैं)

ब्राह्मण १—

(पीछे को हटता हुआ महाप्रभु के हाथों को पकड़ उनको हृदय से लगाता है) धन्य हैं आपकी या दीनता कूँ। दीन के ऊपर ही भगवान् और भक्त सबन की कृपा होय है। दीनता सों ही भक्ति फूलै-फलै है। भगवान् आपकी भक्ति कूँ दिनोंदिन बढ़ावैं। हरि बोल!

समाज (चौपाई)—

आसन वासन काहु के सम्हारें।
वसन काहु के आप पखारें।।

गौर—

हे विप्रदेव! लाओ मैं धोय दऊँ आपके वस्त्र (हाथ में से लेकर धोने लगना)

ब्राह्मण २—

(वस्त्र छीनते हुए) हाय हाय! आप मेरे माथे पै अपराध काहे कूँ चढ़ाओ हो?

गौर—

नहीं देव! मैं अपने माथे पै चढ़े भए अपराधन कूँ कछु धोनो चाहूँ हूँ। कछु सेवा करकै इन हाथन कूँ सफल करनौ चाहूँ हूँ। सेवा बिना हाथ शव के हाथ समान हैं। हाय! आज एक—

भक्ति भक्त सों दूर हो, विद्या मद अति चूर।
खुली आँख अब जानगो, भक्ति बिना नर कूर।।

मैं चंचल वाचाल बनि, जो कछु कियो अपराध।
परी पायँ माँगौ क्षमा, देहु चरणरज माथ।।

(चरण पकड़ना)

विप्र २—

(महाप्रभु को उठा हृदय से लगा) अहो! कैसो अद्‌भुत परिवर्तन! असम्भव दीनता! जाके पास अभिमान करवे के तांई सब कछु है—जाति, कुल, रूप, यौवन, विद्याबुद्धि, मान-प्रतिष्ठा, कीर्ति-ख्याति—सर्वप्रकार सों जो परिपूर्ण है, वहाँ ऐसी दीनता, ऐसो विनय? अवश्य ही प्रिय गौरसुन्दर! आपके ऊपर भगवान् की विलक्षण कृपा भई है। हरि बोल

समाज (चौपाई)—

निज कूँ दोषी कहि जनावैं। दीन दुखी ह्वै शीश नमावै।।
नर नारी लखि गरि गरि जावै।
हुलसि हुलसि हरि हरि सब गावैं।।

लखि दीनता गौर, पिघलत नर नारिन हृदय।
मचत जु हरि धुनि रौर, नई रीति प्रचार की।।

इहि विधि हरिनाम बुलवावैं, निज तन लच्छन भक्त दिखावैं।।
तन अति दीन ओ मन रस भीनो। ये द्वै लच्छन भक्त के चीनौ
भाव विवश मति गति पलटाई। लौकिक कर्म बनै न बनाई।।
जायँ पढ़ावन हित चटसारा। भूलि पोथी नित कृष्ण प्रचार।।
छात्रन मिलि सब मतो मिलाये। परम गुरु गंगादास पै धाये।।
व्याकरण जिन ढिंग पढ़ै निमाई। तहाँ जाय निज व्यथा सुनाई
दीजौ मो ढिंग गौर पठाई। असि कहि विदा किये समुझाई।।
आये छात्र जहँ गुरु निमाई। आज्ञा सकुच सहित जु सुनाई।।
(दृश्य-वृद्ध पंडित गंगादास स्वगृह में बैठे हैं। प्रवेश महाप्रभु पीछे-पीछे छात्रवृन्द)

समाज—

सुनि आज्ञा गुरु ढिंग पग धारै। सकुचत नैन न वैन उचारै।।
गुरुपद परसि प्रनाम जु कीन्हे। हिय सों लाय असीसा दीन्हे।।

गंगादास—

विद्याबलवर्चस्वमस्तु! वत्स! मंगल होवै तुम्हारो कहो तुम्हारे अध्ययन-अध्यापन को कार्य तो सुचारु रूप सों चल रह्यौ है न?

गौर—(नतमस्तक मौन स्थित)

गंगादास—

प्रिय विश्वम्भर! मैंने यह सुन्यौ है कि जब सों तुम गया करकै आये हो तबसों अध्यापन-कार्य सों कछु उदासीन से है गये हो और वैष्णव भक्तन को कछु........कछु.....अनु.......अनुकरण जैसो करवे लगै हो। कहा यह बात साँची है?

गौर—(मौन नतमस्तक खड़े रहते)

गंगादास—

(सिर हिलाते हुए) अस्तु। समझ गयो। यामें संकोच करवे की कहा बात है। भगवान् की भक्ति करनो तो जीव को परम धर्म है, परम लक्ष्य है ही परन्तु—

अध्ययन छाँड़िले जदि भक्ति होय।
बाप माता मह कि तोमार भक्त नय।।

विद्या-पढ़नो-पढ़ाँवनो त्याग करकै ही यदि कोई भक्त बन सकै है तो कहा तुम्हारे पिता जगन्नाथ मिश्र और तुम्हारे नाना नीलाम्बर चक्रवर्ती मो'शाय कहा भक्त नहीं हते। कहा वे ब्राह्मण के धर्म-कर्म, पठन-पाठन सब छोड़ करकै ही भक्त बने हे। देखो वत्स यह ब्रह्म-कर्म-धर्म बड़े भाग्य सों अनेक जन्मन में जाय कै प्राप्त होय है। और एक बात तो विचारो कि—

भद्राभद्र मूर्ख द्विज जानिबे के मन।
इहा जानि कृष्ण बोलो करो अध्ययन।।

गजल—

क्या कर्म है अकर्म क्या धर्म है अधर्म।
बिन पढ़े क्या कोई जानेगा इनका मर्म।।
जाने बिना तुम कैसे, औरों को ज्ञान दोगे।
तुम आपभी डूबोगे, औरों को डुबा दोगे।।
ब्राह्मण का कर्म पहला, धन विद्या कमा लेना।
फिर दोनों ही हाथों से, उसको लुटा भी देना।।

विद्या है पूरी तुममें, भक्ति भी आ गई है।
सोने में कमी जो थी, (वो) सुगन्ध आ गई है।।
विद्यापति भी कृष्ण, भक्तिपति भी कृष्ण।
तुम विद्या और भक्ति, दोनों से पूजो कृष्ण।।
हरे कृष्ण राम गाओ, (पर) विद्या पढ़ो पढ़ाओ।
स्वधर्म में ही रहकर, भक्ति करो कराओ।।
गीता भी कहती यही है, सिद्धि इसी से पाओ।
स्वधर्म छोड़ भक्ति का, ढोंग मत फैलाओ।।
ब्राह्मण गुरु सभी का, गुरु धर्म को निभाओ।
वैष्णव बनो भले तुम, न अज्ञान को बढ़ाओ।।

और अपने इन विद्यार्थी छात्रन की ओर तो देखो इनकी तुम्हारे ऊपर कितनी श्रद्धा भक्ति है कि ये तुमकूँ छोड़कै काहु दूसरे गुरु के समीप पढ़नो नहीं चाहै हैं। अतएव—

भालो मतो गिया शास्त्र बोसिया पोढ़ाओ।
व्यतिरिक्त अर्थ कोरो, मोर माथा खाओ।।

तुम शान्त हैकै इनकूँ शास्त्र पढ़ाओ। तुमकूँ मेरी सौगन्ध है जो तुमने कछु अन्य अर्थ कियो तो।

गौर—

(हाथ जोड़ नत शीश) गुरुदेव! आप की आज्ञा शिरोधार्य है। मैं अब सूत्रन को सर्वथा निर्दोष सत्य तथ्य व्याख्या करूँगो। देखूँ कौन वाको खण्डन करि सकै है।

छात्र १—

(दूसरे छात्र से धीरे से) वही व्याख्या होयगी कृष्ण ही कृष्ण में। भलो कौन वाकूँ खंडन कर सकै है।

छात्र २—

व्याख्या खंडित होय न होय, हमारी पढ़ाई तो खंडित है ही गई!

गौर—

गुरुदेव! आपकी चरणरज की कृपा सों नवद्वीप को कोई पंडित मोसों शास्त्रार्थ नहीं कर सकै है। श्रीचरणन में दास को प्रणाम स्वीकार होवै।

गंगादास—

शुभमस्तु। भद्रमस्तु। विजयतां वत्स।

समाज—

शीश नमाय चलै विश्वम्भर। कछुक वाह्य दृष्टि कछु अन्तर।।

छात्र १—

बोलत छात्र परस्पर माँहिं। हमरो काज सर्यौ कछु नाँहिं।।

(कारण कि)

गुरु की बानी गुरु ना समझी। जइये कौन ठौर अब दूजी।।

छात्र २—

ना कोई खंडन करिहै आई। ना पुनि पैहैं पाठ हम भाई।।

छात्र ३—

चिन्ता वृथा सबै तजि दीजै। गुरु जो पढ़ावैं सो पढ़ि लीजै।।
को करि तर्क बढ़ावै शाखा। होइहै सोइ जो राम रचि राखा।।

समाज—

चलै जात मारग विश्वम्भर। मगन भावना भीजे अन्तर।।
पंडित एक भवन निज भीतर। पाठ भागवत गावत सुन्दर।।

(नेपथ्य में पाठ कर रहे हैं)

पं० रत्नगर्भ—

एक समय की बात है। मथुरा जी के समीप यमुना तट पै, अक्रूर घाट की ठौर पै, कंस के द्वारा नियुक्त माथुर ब्राह्मण यज्ञ कर रहे हते। भगवान् कृष्ण-बलराम ग्वाल सखान के संग गाय चरामते भये यज्ञ ते थोरेई दूर पै आय पहुँचे। मध्यान्ह काल हो। क्षुधा सबन कूँ लग रही ही। यशोदा मैया की भेजी भई छाक में विलम्ब है गयो हो। तो श्यामसुन्दर ने कुछ सखान सों कही कि तुम यज्ञ की ठौर पै जाओ और हमारो नाम लैके ब्राह्मणन पै ते कछु भोजन माँगि लाओ। सखान ने जाय कै याचना करी परन्तु वे तो अपने स्वाहा-स्वाहा में ही लगै रहै। काहु ने उनसों बातहू न करी वे बिचारे निराश लौट आये। तो नन्दलाला बोलै अबकै तुम ब्राह्मण-पत्निन के पास जाओ। वे मेरो नाम सुनत खेम ही देंगी। सखा ब्राह्मणिन के ढिंग गये और डरपत-डरपत कृष्ण बलराम के तांई भोजन की याचना करी। ज्यूँ ही उनै

सुनी कि प्यारे व्रजराज कुमार भूखे हैं और भोजन माँगैं हैं, वे तो बैठी ते ठाड़ी है गईं और भर-भरके थार पकवानन कै दौर परीं—भाग परीं, रोकै नाय रुकीं! और जाय पहुँची। आज पर्यन्त जाको नाम ही नाम सुन्यौ हो, रूप कबहु नाय देख्यौ हो, आज वे ही आँखिन के आगे ठाड़े साक्षात् दर्शन दै रहे हैं। उनके पाँव रुक गये! नेत्र थिर है गये! इकटक देखवे लगीं। अहा! कैसो साँवरो सलोनो मन मोहनो रूप है। कैसो नटवर वेष है, ललित सिंगार है। वाकूँ श्रीशुक मुनि वर्णन करैं हैं—

श्यामं हिरण्यपरिधिं वनमाल्यवर्ह-
धातुप्रवाल नटवेष मनुव्रतांसे।
विन्यस्त हस्तमितरेण धुनानमब्जं
कर्णोत्पलात्मक कपोल मुखाब्जहासम्।।

(भाग०)

गौर—

(मार्ग चलते-चलते श्लोक को सुनते ही भाव-विह्वल व्याकुल होकर)

श्या....श्याम....क-क.....कनक पी-पीतांवर.....मो-मोर-पिच्छ.... ...वन.....वन.....मालाधर। श्याम! प्या......रे (मूर्च्छित हो पतन)

समाज—

नटवर वेष को श्लोक सुनायो।
सुनत गौर आँखिन महँ आयो।।
मन मोहित भयो तन शिथिलाये।
वैन न निसरत नैन बहाये।।

कहत श्याम श्यामहिं समाये। गिरै धरन छात्र अकुलाये।
तिन यह दशा प्रथम लखि पाई। करैं कहा सूझै न उपाई।।
बार बार गुरुदेव पुकारैं। चलत न वश रहै सब हारै।।
तरफत गौर रूप सर लागे। लोचन झर झर झरै अनुरागे।।
वदत वचन कभु आधहिं आधे।

गौर—

श्याम......म जी.....वन प्रा.....ण आ.......राधे।।

अ......अलक क......क कपोल.....मुखाब्ज.....मृदु मु......मु-मुस्कान मुस्का.......न।।

छात्र—

व्याकुल छात्र करैं कहा माई। होयँ सचेत कैसे गुरु भाई।।
लोक भीर मग बाढ़त जाई। हे विधना करहु न सहाई।।

समाज—

सुनि कोलाहल पंडित आयो। गृह अन्तर जिन श्लोक सुनायो।।

पं० रत्नगर्भ—

यह तो पंडित प्रिय निमाई। दशा ऐसी भई कैसे भाई।।

छात्र—

कहा आप श्लोक जे गाये। ज्ञान भान सब इनके नसाये।।
करौ कृपा कछु करो उपाई। हमरे जीवन प्रान ए सांई।।

पं० रत्नगर्भ—

चिन्ता मत करो बालको। मैं उपाय करूँ हूँ।

श्यामं हिरण्यपरिधिं.......

(पुनः पाठ)

गौर—

(कुछ सचेत हो उठते हुए) अहा श्याम! श्याम पीताम्बरधारी, वनमालाधारी अहा! पढ़ो-पढ़ो फिर वही श्लोक पढ़ो।

पं० रत्नगर्भ—

श्यामं हिरण्यपरिधिं.... (पुनः पाठ)

समाज (दोहा)—

ललित श्लोक पुनि ललक सों, पढ़त सुने हरि गौर।
उठि आलिंगन रीझ दियौ, पर्यौ प्रेमपद ठौर।।

गौर—

(उठते हुए) अहा आपने मोकूँ बड़ो आनन्द दियो! अपूर्व आनन्द! मैं आपकूँ कहा दऊँ, कहा दऊँ..... (कहते-कहते पंडित को आलिंगन)

पं० रत्नगर्भ—

(भावविह्वल हो चरण पकड़ रुदन) हा श्यामसुन्दर! प्राणनाथ! कृपा करो। कृपा.....

समाज (बंगला चै० भा०)-

प्रभुर चरण धोरि रत्नगर्भ काँदे।
बन्दि हैला द्विज चैतन्येर फाँदे।।

गौर—

(चरणस्थित रत्नगर्भ प्रति) अहा! फिर तो पढ़ो 'श्यामं हिरण्यपरिधिं...' तृप्ति नहीं होय है! अहा! पढ़ो न!

छात्र १—

(पंडित के चरण पकड़) कृपा करौ आचार्यदेव! अब और न पढ़ैं। ये कहूँ मूर्च्छित हैकै गिर न परैं। हमकूँ तो बड़ो भय है रह्यौ है! देखौ न इनकी कहा दशा है गई है! केश बिखर गये हैं। धूर सों देह सन गई है। वस्त्र आँसुन सों भीज गये हैं। बस अब न पढ़ैं और—

समाज—

रत्नगर्भ गह्यो मौन न बोलहिं।
ठाड़े गौर सम्हारै जनहिं।।
बार कछुक सुधि वाह्य पाई।
नयन उघारि बोलै जु लजाई।।

गौर—

(इधर उधर देखते हुए) तुम सब मोकूँ कैसे पकरि कै ठाड़े हो। कहा मैंने कछु चंचलताई करी? और ये आचार्य जी हू पधारे हैं। कहा बात है? प्रणाम! आचार्य देव! मैंने कछु अनुचित चेष्टा तो नहीं करी?

रत्नगर्भ—

नहीं गौरसुन्दर नहीं! आपने जो कछु कर्‌यौ वासों तो आप निश्चय ही कृतकृत्य है गये। आपकी विद्या सफल है गई! जीवन धन्य-धन्य है गयो! आप तो स्वयं भागवत की मूर्ति बन गये हो (रुककर खेदपूर्वक) एक हमहू भागवती पंडित हैं जो

शब्दन को व्यौपार करैं, करैं अर्थ हजार।
औरन कूँ करैं चाँदनो, अपने घर अँधियार।।
बाट बतावैं जगत कूँ, आप न सूझै बाट।
पाठ पचासन किये पै, रहै काठ के काठ।।
फँसकर अक्षर जाल में, अक्षर लखे न हाय।
धन्य धन्य अँखियाँ तुव, अक्षर श्याम लखाय।।
भागवत कृष्ण स्वरूप है, अक्षर अक्षर कृष्ण।
पढ़ैं हम पै देखौ तुम, आँखिन आगे कृष्ण।।
आय द्वार दर्शन दियो, हृदय लाल कियो धन्य।
भागवत भगवद्रूप तुम, देओ प्रेम अनन्य।।

(महाप्रभु के चरण पकड़ना)

गौर—

(उठाते हुए) आचार्य जी! भागवत तो साँचे आप ही हो जो मो जैसे ऊधम दीन हीन कूँ हू भगवद्रूप समझौ हो। आशीर्वाद देओ मोकूँ कृष्णभक्ति मिलै! प्रणाम

(प्रस्थान छात्रन सहित)

समाज—

करि प्रनाम चले गौर निमाई। प्रेमभाव रह्यौ अन्तर छाई।।
मगन कृष्ण गुन गावत जाहिं। सुनत छात्र कहत कछु नाहिं।।

(प्रवेश गाते हुए महाप्रभु एवं छात्रवृन्द)

गौर—

हा हा कृष्ण! गोपाल कृष्ण! कृष्ण कृष्ण गिरिधारी श्याम-सुन्दर! मदन मदहर! नटवर! श्रीवन विहारी माधव मोहन माधुरीमय मुकुन्द मुरलीधारी गोविन्द गोपीनाथ गोकुलचन्द गोकुलविहारी।

(गाते-गाते प्रस्थान। पटाक्षेप)

समाज (दोहा)—

डूबत कृष्ण विरह में, कृष्ण नाम आधार।
पढ़न पढ़ावन तजि सबै, कियो नाम प्रचार।।
सो लीला वर्णन करौं, बाँधे ग्रंथन डोर।
हरि संकीर्तन रास ज्यूँ, प्रथम रचायो गौर।।

नाम संकीर्तन धर्मकलि, सर्वधर्म सिरमौर।
ताके प्रथम आचारज ये, युगल निताइ गौर।।
धन्य निताइ गौर प्रभु, धन्य धन्य हरिनाम।
धन्य धन्य जे गावहिं, हरे कृष्ण हरे राम।।

(दृश्य-पाठशाला। महाप्रभु और छात्रवृन्द)

गौर—(भाव निमग्न विराजमान)

(छात्र परस्पर धीरे-धीरे बातें करते हैं)

छात्र १—

अब कौन ते जायकै कहैं! दादा गुरु ने हू समझाय दीन्हे! ये तौ ध्यान लगाय बैठे हैं! अब कौन पढ़ावैगो!

छात्र २—

भैयाओ! छोड़ो आशा इनसों पढ़वे की। ये तो वही पढ़ायँगे जो मार्ग भर गामते आये हैं—कृष्ण कृष्ण!

छात्र ३—

धातु कृष्ण, संज्ञा कृष्ण, कारक कृष्ण, कर्त्ता कृष्ण, कर्म कृष्ण, करण कृष्ण, आदि कृष्ण, मध्य कृष्ण, अन्त कृष्ण—सब कृष्ण ही कृष्ण में व्याख्या चलैगी यही गुरुजी ते कह आये हैं! बस चुप बैठे रहौ और सुनते जाओ—

समाज (सोरठा)—

अर्धबाह्य दशा पाय, वदत विश्वम्भर गौर हरि।
कहो कृष्ण मुख गाय, सर्वशास्त्र फल परम यह।।

गौर—

बोलो कृष्ण भजो कृष्ण, सुनो कृष्ण नाम।
अहर्निश श्रीकृष्ण-चरण करो ध्यान।।

जाहार चरणे दूर्बाजल दिले मात्र।
कभु नाहिं जमेर से अधिकार पात्र।।

जिनके पद जल दूब चढ़ाये। यम के भय सब जात नसाये।।
अघ वक पूतना जे पद तारे। भजहु भजहु सोइ चरन पियारे।।

कृष्ण माता कृष्ण पिता कृष्ण प्राण धन।
कृष्ण चरणे करो तन मन अरपन।।
जब लगि प्राण शक्ति, भजो कृष्ण कृष्ण।
हाहा खाऊँ पाँव परूँ, कहो कृष्ण कृष्ण।।

समाज (दोहा-सोरठा)—

दास्य भाव विभोर प्रभु निज महिमा रहै गाय।
बीते या विधि पहर द्वय, अन्त तौहु नहिं आय।।
बाह्य दशा कछु पाय, निरखे शिष्यन वदन प्रति।
रहे अन्तर सकुचाय, बूझत हौं जू कहा कह्यौ।।

छात्र १—

पूज्य गुरुदेव! हमकूँ तो अब ऐसो प्रतीत होय है कि हमारे भाग्य में आपके श्रीमुख सों विद्या लाभ करनो नहीं लिख्यौ है।

छात्र २—

और आपके श्रीमुख कूँ प्रसन्न देखनो हू कदाचित् हमारे भाग्य में नहीं है। हाय प्रभो! जब आप रुदन करौ हो तो हमकूँ बड़ोइ कष्ट होय है!

गौर—

तो मैंने कहा कह्यौ?

सब छात्र—

केवल कृष्ण कृष्ण।

पद—

कृष्ण भक्ति इक पाठ पढ़ाओ, पाठ बन्द और सारे।
तुमकूँ उत्तर देय को जग में, सत्य हैं अर्थ तिहारे।।
चार छह अठारन नेहू सार कृष्ण निरधारे।
हमही किन्तु धारि सकत नहीं, यह तो दोष हमारे।।
माता पिता गुरुदेव सखा तुम, उभय लोक रखवारे।
भावै जोई करौ प्रभु हम तो, 'प्रेम' पत्र यह डारे।।

गौर—

प्रिय बन्धुओ! तुम कदाचित् समझ सकौ कै नहीं परन्तु तौहु मोकूँ तो कहनो ही परैगो—अपनी दशा को कारण बतामनो ही परैगो। तो सुनो। गया

ते लौटती समय मार्ग में एक गाँव कन्हाई नाट्यशाला में हम रात ठहरे। वहाँ मोकूँ स्वप्न में एक बड़ोइ सुन्दर साँवरो सलोने बालक को दर्शन भयो। वह कितनो सुन्दर हो मैं कहा कहूँ। बाको वह श्याम वर्ण हो कै जलधर घन हो, वह वदन हो कै सौन्दर्य-सार-सदन हो। तनपै वह पीत वसन हो कै मेरो ही अनुरागी मन हो। माथे पै मोर पंख हो कै मेरे चित्त डसवे कूँ डँक हो, अधरन पै वह वंशी ही कै मेरे मन-मीन फाँसवे की वंसी ही। मुख पै वह मन्द मुसकान ही कै मोहन मंत्र की खान ही। गरे पै वह वनमाला ही कै मेरे प्राण पुष्पन की माला ही। वा मनमोहन ने नैन-सैन द्वारा मोकूँ बुलायो। सो मैं वासों मिलवे कूँ दौरयौ परन्तु हाय रे दुर्भाग्य! वह न जाने कहाँ शून्य में लीन है गयो और मेरी नींद भंग है गई।

तबही सों वह साँवरो सलोनो मनमोहनो बालक मेरी आँखिन में बस गयो है और प्राणन में धँस गयो है। वह मोकूँ दिन रात घेरे ही रहै है, छेड़ै है, सतावै है, रुवावै है। मैं तो तुम कूँ पढ़ायवे के विचार सों ही आऊँ हूँ परन्तु—

आसावरी (दोहा) —

जबहि धीरज धारि उर, खोलूँ पोथी पात।।
अक्षर अक्षर मिटि सबै, अक्षर इक रहि जात।।

वह अक्षर कैसो है कि—

कारो उजियारो कोऊ, मुरली वारो बार।
चितवत मुसकावत सदा, नाचत नैन अगार।।

कृष्ण वर्ण एक शिशु मुरली बाजाय।
सबे देखौं भाई सेई, बोले सर्वथाय।।

मालकोष (दोहा) —

जो देखूँ सो कृष्ण सब, कृष्ण शब्द सुनौं कान।
कृष्ण कृष्ण हा कृष्ण बिन, सूझत नहिं कछु आन।।
कृष्ण विना दूजी कथा, फुरै न रसना मोर।
मतिगति अति परवश भई, कहीं अधिक कहा और।।
कृष्ण कृष्ण सब कृष्ण कहो, देऔ यही मोहिं दान।
अनतहि जाय विद्या पढ़ौ, लेऔ कही मो मान।।

समाज (दोहा-सोरठा) —

असि कहि प्रभु स्वहस्त सों, दीनी ग्रंथन डोर।
दई भारती कूँ विदा, गही भक्ति कर जोर।।
रुदन करत सब शिष्य, तुम तजि अनत न जाइहैं।
देओ यही आशिष्य, तुम नित गुरु हम दास तुव।।

सब छात्र—

गुरुदेव! हमहू आपकूँ छोड़कै काहू दूसरे पै नहीं जायँगे, नहीं पढ़ैंगे। आप जैसो गुरुँ हमकूँ दूसरो कौन मिलैगो! आप हमारे गुरु ही नहीं, हमारे माता-पिता, बन्धु-सखा सबही हो।

(सम्मिलित गायन)

पद—

तुम सम हे प्रभो! कहाँ गुरु पैहैं।
निरखि परखि नदिया हम लीन्हीं, ठौर नहीं दूजी जहाँ जैहैं।।
को हमहीं कूँ तात समराखि है, मात ज्यूँ लाड़ लड़ै है।
बन्धु समान कौन हित करिहै, सखा समान को खेल खिलै है।।
को हम संग जलकेलि करिहै, नगर डगर संग लै विहरै है।
को हँसि खेलि सहज रीति सों, नीति धर्म व ज्ञान सिखै हैं।।
मात पिता गुरु सखा बन्धु सब, नातो ऐसो और कहाँ पै हैं।
जानि 'प्रेम' पुरानो ए नातो, हमरी सुधि प्रभु नाहिं भुलै हैं।।

छात्र १—

गुरुदेव! हमकूँ पढ़वे-न-पढ़वे को दु:ख इतनो नहीं है जितनो कि आपते बिछुड़वे को है। हाय! अब हमकूँ आपको यह संग सुख कहाँ मिलैगो?

छात्र २—

हे प्रभो! हम आपकूँ जीवन-जन्म भर नहीं भूल सकैंगे। आपहू हमारी कबहु-कबहु सुधि लैवे की कृपा कर्‌यौ करेगे। अधिक कहा कहैं हम।

सब—

हम तो सब आपके ही श्रीचरणन के नित्य दास हैं।

(चरणों से लिपट रुदन)

समाज (दोहा)—

चरण कमलसों लिपटि कै, रुदत वाल बलहीन।
हमहिं न नाथ विसारियो, तुव चरनन आधीन।।
गहि उठाय जन जन प्रति, भेंटै हृदय लगाय।
प्रेमभक्ति उर संचरी, वचन असीम सुनाय।।

गौर—

(सबसे मिल चुकने पर) मेरे प्यारे बन्धुओ! सुनौ-

दिवसेक जदि आमि होइ कृष्णदास।।
तबे सिद्ध हबे तो सबार अभिलाष।।

जो मैंने—

सवैया—

एकहू दिन बनि कृष्ण को दास,
भक्ति करी होय कृष्ण की साँची।
फलिहै सबही आश तिहारी,
रहिहै कामना कोई न काँची।।
फुरिहै सब शास्त्र बिना ही पढ़ै,
रहि है गुन विद्या कोई न बाँची।
'प्रेम' यह कृष्णदास की बानी,
कृष्ण करि हैं साँची साँची।।

कृष्णेर कृपाय शास्त्र स्फुरुक सबार।
तुमि सब जन्म जन्म बान्धव आमार।।

जनम जनम के बन्धु तुम, सुनौ साँची कहूँ बात।
भूलौं नहिं भुलाय सकौं, प्रीति पुरातन नात।।

अब तुम सब अपने-अपने घर जाओ। वहाँ नित्य प्रति सब मिलकै संकीर्तन कर्‌यौ करौ। यही मुख्य विद्या है जासों भगवान् में मति-रति होय है और यही मुख्य कर्म है जासों भगवान् सन्तुष्ट होयँ हैं। 'सा विद्या तन्मतिर्यया, तत्कर्म हरितोषं यत्।।'

छात्रवृन्द—

जय हो, दयालु गुरुदेव की जय हो, जय हो। अब कछु गुरु-दक्षिणा के लिए आज्ञा होवै प्रभो।

गौर (दोहा)—

कृष्ण धर्म है, कृष्ण धन, कृष्ण ही काम महान।
कृष्ण मुक्ति है, कृष्णप्रेम, कृष्ण कृष्ण करौ गान।।
सात सुमेरु तुलै नहीं, आधे कृष्ण के नाम।
कृष्ण कृष्ण कहौ कृष्ण यही, देओ दक्षिण दाम।।

अतएव भैयाओ! तुम सब मोकूँ कृष्णनाम गायकै सुनाओ। यही सबते बड़ी गुरु-दक्षिणा होयगी। आज पर्यन्त तुमने जो कछु विद्या पढ़ी है वाकूँ आज संकीर्तन करके सफल करौ—

छात्र १—

संकीर्तन कैसे करैं प्रभो! हम तो नहीं जानैं हैं।

गौर—

देखो! पहले मैं कृष्ण-नामावली बोलूँ पीछे तुम सब बोलियो। ऊँचे कण्ठ सों स्वर मिलाय कै। भगवान् के नामन कूँ गायवे को नाम ही संकीर्तन है। यासों बोलो ऊँचे कण्ठ सों, स्वर मिलाय कै—

आदि संकीर्तन धुन।
हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।

इति अध्ययन समाप्ति, संकीर्तनारम्भ।

❖

यौवन लहरी **अष्टम कणामृत**

भावविलास-भावविष्ट दिनचर्या

जय जय श्रीगौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जय अद्वैत चन्द्र जय गौर भक्तवृन्द।।

संसार सिन्धुतरणे ह्यदये यदि स्यात्,
सङ्कीर्तनामृतरसे रमते मनश्चेत्।

प्रेमाम्बुधौ विहरणे यदि चित्त वृत्ति-
श्चैतन्यचन्द्रचरणे शरणं प्रयातु।।

सवैया—

भवसिन्धु अपार सुपार तरनकी मन में यदि अभिलाष भरी है।
हरि संकीर्तन नाम सुधारस पीवन की यदि चाह खरी है।।
प्रेमसुधा सागर लहरी महँ मधुर किलोल चहौ जो करी है।
शरन गहौ चैतन्य चरन की मुख सों बोलो गौर हरी है।।

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे गोविन्द।।

बन्दौं आचारज प्रभु श्रीसीतानाथ अद्वैत।
जिन प्रगटायो गौरहरि, धरि अनन्य व्रत हेत।।

प्रगटे गौरहरि नदिया माहीं। जानत श्रीअद्वैत गुसांई।।
जब जब देखैं तब तब भूलैं। को ए निमाई मन मन तोलैं।।
हरत हृदय यह हरि विश्वम्भर। वदत बुद्धि यह बालक नर वर
या विधि संशय दोला झूलैं। करि करि निर्णय फिरि फिरि भूलैं
नर लीला कछु ऐसीइ माई। ब्रह्मा शिवहू रहै भुलाई।।

एक दिवस निशि भोर महँ, अद्वैत भाव विभोर।
मनमन्दिर मधि पैठिकै, विनवत प्रीतम चोर।।

(दृश्य—शयनागार। अद्वैताचार्य सेज पर बैठे हैं)

अद्वैत (पद—जौनपुरी-आसावरी-तिताला)—

सब निशि जागत जोवत बीते, आये ना तुम आये ना।
रह गयी माला हाथ की हाथ में, आये ना तुम आये ना।।१।।
आयो हो आयो हो चोई निशा-अवसान में।
गावत मधुर कछु मुरली की तान में।
चाल वह कैसी कहूँ लटकन मटकन।
चितवन दया भरी मन्द मन्द मुसकन।
लै लै माल धाये हम हाथ, पाये ना तुम पाये ना।।
रजनी गयी वह चाँद गयो अब।
ज्योति गयी वह साज गयो अब।
भोर भयो निशि घोर भयो 'प्रेम'।
पाये ना तुम पाये ना।।

कीर्तन-धुन—

हरे कृष्ण गोविन्द गिरिवर धारी।
मोहन माधव मुकुन्द मुरारी।।

(ध्यान में श्रीराधाकृष्ण के क्षणिक दर्शन)

समाज (चौपाई)—

राधा कृष्ण हित झलकाये। परस्वरूप तत्त्व दरसाये।।
एक युगल तन युगल एक तन। कहत बनै ना जानत नयनन।।
झाँकी बाँकी गई दुराई। गिरा गम्भीर श्रवनन आई।।

(आकाशवाणी-नेपथ्य में से)

हे अद्वैताचार्य जी! तुम्हारो संकल्प सिद्ध है गयो। तुम्हारी तपस्या पूर्ण भई। तुम्हारे इष्टदेव श्रीमदनगोपाल प्रगट है गये हैं। और अब देश-देश में, नगर-नगर में, ग्राम-ग्राम में संकीर्तन को प्रचार करेंगे तथा देवदुर्लभ प्रेमभक्ति धन कूँ कलिहत पापी पतित जीवन के प्रति लुटायँगे। अतएव अब तुम्हारे समस्त मनोरथ पूर्ण है जायँगे।

(महाप्रभु श्रीगौरचन्द्र की भावनिमग्न मूर्त्ति का प्रकाश)

अद्वैत—

(विस्मय-विस्फारित नेत्रों से दर्शन करते हैं)

समाज (चौपाई)—

तबहिं चकित अद्वैत गुसांई। लखै सम्मुखहि गौर निमाई।।
उज्ज्वल तन मुख उज्ज्वल चन्दा।
उज्ज्वल हास सुधांशु अमन्दा।।

गौर—

बोले गौर आज मैं जाऊँ। काल्ह तिहारे ढिंग पुनि आऊँ।।

समाज (सोरठा)—

विस्मित लोचन फारि, रहै हेरि अद्वैत प्रभु।
मुस्कन मोहनी डारि, गये जु हिराय गौरहरि।।

(महाप्रभु का अन्तर्द्धान)

बैठि विचारत अचरज भारी। साँच झूठ न सकैं निरधारी।।
श्रीवास मुरारि भक्त जुरि आये। जय जयकार करत हुलसाये।।

(प्रवेश श्रीवास मुरारि आदि भक्तमंडली)

जय विश्वम्भर देव की जय हो। जय अद्वैत गुसांई की जय हो।

श्रीवास—

आचार्य देव! उठो उठो! सुनो सुनो! बड़े आनन्द की बात है।

अद्वैत—

(खड़े होते हुये) कहा बात है श्रीवास जी? आज इतने भोर कैसे? कहा प्रभात-कीर्तन करवे को विचार है?

श्रीवास—

प्रभात ही नहीं अब तो दिन रात संकीर्तन की धूम मच्यौ करैगी।

अद्वैत—

कैसे? बात कहा है श्रीवास जी?

श्रीवास—

बड़े आनन्द, बड़े मंगल की बात है। उद्धत पण्डित निमाई अब भागवत शिरोमणि बन गयो है। हमारो गोत्र बढ्यौ है! आनन्द! परमानन्द!!

अद्वैत—

यह तो मैंने हू सुनी है कि जबसों वह गया धाम ते आयो तब सों वाको स्वभाव पलट गयो है। वह वैष्णव भक्तन की चरणरज लैवे लग्यौ और उनसों कृष्णभक्ति की याचना कर्‌यौ करै है।

श्रीवास—

याचना कहा परम सिद्धि है गई है। कल तो उनने अपनी पाठशाला ही बन्द कर दई और वहीं चण्डी-मण्डप कूँ संकीर्तन मण्डप बनाय लियो। छात्र मण्डली संकीर्तन- मण्डली बन गई। और—

सवैया—

तब धूम मची संकीर्तन की नहीं अँखिन देखी सुनी नहीं ऐसी।
आय जुरै बहु पास परौस के देखन कूँ नई बात जु ऐसी।।
देखत भाव को ताव चढ्यौ सब काज वो लाज भूले जन ऐसी।
नाचत गावत लोटत भू पर नाम प्रेमनिधि पाई जु ऐसी।।

और निमाई पण्डित की भावोन्मत्त दशा तो कछु कहवे में नहीं आवै है—

सवैया—

खंडित पंडित गर्व सबै बहु मंडित भाव प्रचंडन ऐसे।
दंड युगल भुज तुंग उठाये मंडल मध्य विमंडन ऐसे।।
गर्जन हरि हरि हुँकरन करि करि, चक्रन फिरि फिरि नर्तन ऐसे।
अंगन अंग तरंगन प्रेम सुरंग ढंग सबै विलच्छन ऐसे।।

ऐसो अलौकिक अपूर्व भाव तथा अनुभाव के प्रकाश के दर्शन कर हम तो चकित हैं—

सवैया—

यह काया पलट यह भाव अलख, नहिं लखे सुने संसार महँ ऐसो।
अश्रुधार यह प्रेमभार कहाँ मरनहार नर तन महँ ऐसो।।
बार बार उठै हिय विचार को एक अवतार है गौर जु ऐसो।
प्रह्लाद कहूँ शुकदेव कहूँ महाभागवत भगवत कौन है ऐसो।।

अद्वैत—

श्रीवास जी! मैंने हू आज एक बड़ो अद्भुत स्वप्न देख्यौ है। वासों मेरो मन विश्वास और अविश्वास सों दोलायमान है रह्यौ है।

कवित्त—

रूप एक अनूप देख्यो राधाकृष्ण दोउ मानो,
मिले अनमिले तौहु, एक वपुधारी है।
गयो जु विलाय तत्छन वह नव रूप,
आय परी श्रवनन बानी सुखकारी है।।
सिद्ध भयो हे अद्वैत! तुम्हारो संकल्प 'प्रेम'
भूतल पै मदनगोपाल अवतारी है।
उत सुनै श्रवनन इत देखै नयनन,
भुजा उठाये ठाड़ो नदियाविहारी है।।
काल्ह आऊँगो कहि पुनि, भयो वह अन्तर्द्धान।
सोचूँ बहू समझूँ नहीं, कहा निमाई भगवान।।

श्रीवास—

तो आपको निर्णय कहा है?

अद्वैत—

यही तो मैं निश्चय नहीं कर पायो हूँ। परन्तु हाँ—

जबहि जब देखूँ कहीं, सुन्दर गौर निमाई।
वरवश चितहिं चोरि कै, देत सबै विसराई।।

और एक रहस्य बात मैं आज आप सों कह रह्यौ हूँ—

सवैया—

आज सों नहीं यह काल्ह सों नहीं,
नहीं पाँच पचासन दिन सों है।
वर्ष चार द्वै आठ दस सों नहीं,
यह चल रही बारह वर्ष सों है।।

(वह यह है कि)

बैठत हों जब ध्यान धरि मन,
लाय मदन गोपाल सों है।
तब श्याम सों गौर व गौरसों श्याम,
छिन ही छिन पलटत 'प्रेम' सों है।।

श्रीवास—

आचार्य देव! यह तो आपने एक अति रहस्यमयी लीला सुनायी। परन्तु यह आँख-मिचौनी, यह लुका चोरी कब तक चलैगी? चोर पकर्‌यौ हू जायगो कै नहीं?

अद्वैत—

श्रीवास जी! यह अवतार-रहस्य बड़ो ही दुर्ज्ञेय है, दुर्बोध्य है। ब्रह्मा की सौ-सौ बुद्धि हू गोता खाय जाय हैं। फिर हम तुम जैसे एक बुद्धि वारे जीव भ्रम में पर जायँ तो कहा आश्चर्य। परन्तु (कुछ ठहर आवेश पूर्वक) यदि मेरो स्वप्न सत्य है और तुम्हारो अनुमान सत्य है तो मेरे आराध्य प्रभु कूँ अपने या वृद्ध दास के ऊपर प्रत्यक्ष कृपा करनी ही परैगी, अद्वैत के घर स्वयं पधार कै परिचय दैनो ही परैगो!

श्रीवास आदि—

जय हो अद्वैताचार्य की जय हो।
जय हो सीतानाथ प्रभु की जय हो।

सम्मिलित गायन—

आओ हे आओ हे दीनबन्धु आओ हे।
दीनबन्धु करुणासिन्धु वदनइन्दु दिखाओ हे।।
हम बलहारे दुखियासारे, दीनहीन तुमही कूँ पुकारें।
तिहारे कृपा की बाट निहारें, विन्दु 'प्रेम' पिवाओ हे।।

हरिबोल हरिबोल (गाते हुए प्रस्थान)

भाव विलास

समाज (दोहा)—

पूर्वराग के भाव सब, प्रगटत हैं हरि गौर।
कृष्ण विरह निमग्न मन, जानै ना संध्या भोर।।
जेहि उर उपज्यो प्रेमरस, सो नित रहत उदास।
भूल्यौ हँसिवो खेलिबो, खान पान सुख वास।।
भाव बढ्यौ तब जानियो, यह गति होत अनूप।
भूले भूख रु सैन सब, नैन भरे रहैं रूप।।0

(दृश्य-शयनागार। गौरसुन्दर भावविभोर बैठे हैं नेपथ्य में वंशी ध्वनि)

गौर—(श्रवण पूर्वक)

पीलू-केहरवा—

बाजैरी यह बाजैरी, कन्हैया की वंशी बाजैरी।
तन में बाजे कै मन में बाजै, कहाँ कहाँ यह वंशी बाजैरी।।
यहाँ यहाँ यह वंशी बाजैरी, वहाँ वहाँ यह वंशी बाजैरी।
तन मन वन सब गूँज रह्यौ है, राधा राधा ही राधा गाजैरी।।
पग न चलत अब तन न हलत कछु,
'प्रेम' नैनन में जल भरि राजैरी।।

(प्रवेश शची माता)

समाज (दोहा)—

पुत्र दशा नित अटपटी, लखि लखि कै शची मात।
विनवत विधना विधि बहू, कहा साँझ परभात।।

शची—

(कुछ देर खड़ी देखती रहती, फिर धीरे-धीरे आकर निमाई के कन्धे पर हाथ रख) बेटा! निमाई! गौर।

गौर—

(अनसुने गाते रहते) बाजैरी, कन्हैया की.....

शची—

(झकोलती हुई) निमाई! चेत कर वत्स! सावधान हो यह कहा गाय रह्यौ है! वंशी कहाँ बाजै है?

गौर—

(अनसुने) यह बजी (ठहर कर) यह बजी। बाजैरी कन्हैया की वंशी। (कभी इधर कभी उधर जाते)

शची—

हाय दई! मैं कहा करूँ! हे विधाता! तैंने मेरे निमाई कूँ कहा कर दियौ। एकै तो मेरो लाल और वाकोहू यह हाल! हाय! मैंने याकूँ गया जान ही क्यूँ दियो! न गया जाँतो, न यह दशा होंती। पढ़नो-पढ़ामनो छूट्यौ सो तो छूट्यौ याको तो हँसनो-बोलनो हू छूट गयो। वा बेचारी विष्णुप्रिया सों हू बोले-बतरावै नहीं है। जब देखो तबै उदास, सूनो-सूनो, अनमनो अथवा तो रोमनो। कृष्ण हा कृष्ण कहनो! भक्ति करवे वारे तो मैंने बहुत देखे। वे पूजा पाठ करैं हैं, जप-नेम करैं हैं और अपनो काम धन्धो हू करैं हैं। परन्तु याकी चाल तो सबन ते न्यारी-निराली है। हाय कहा उपाय करूँ! कैसे याकी मति-गति फेरूँ! निमाई! वत्स! अरे नेक तो अपनी बूढ़ी अम्मा को ओर देख।

गौर—

(सचेत हो) माँ! तुम हो! क्यूँ कहा बात है?

शची—

बात तो तू ही बता बेटा, यह तेरी कहा विचित्र दशा है बेटा! तू तो पण्डित है, विद्वान् है। मैं तोकूँ कहा समझाय-बुझाय सकूँ हूँ। अपने कर्त्तव्य को ज्ञान मोते अधिक तोकूँ अवश्य ही है। तौहू कहूँ हूँ, मोह-ममता कहवावै है। मैं साठ वर्ष की तेरी बूढ़ी विधवा माँ हूँ और वह एक बारह वर्ष की वधू विष्णुप्रिया है। हम द्वै अबलान को एकमात्र बल आधार तेरो ही है यासों

हमारी ओर देखकैं नेक धीरज धार्यौ कर, शान्त सुस्थिर रह्यौ कर! अरे! मेरी सुध चाहे लै न लै परन्तु वा बेचारी बालिका की तो कबहु कछु खोज खबर लै लियो कर! और अधिक कहा कहूँ बेटा।

गौर—

(गद्गद् कण्ठ) कृष्ण कृष्ण कहो माँ! माता-पिता, पति-पुत्र, बन्धु-सखा सब कृष्ण ही हैं। वे सदैव मंगल ही करैं हैं। फिर भय-चिन्ता-दु:ख काहे बात को!

शची—

अच्छो बेटा! जा गंगा-स्नान करि आ। आज तोकूँ देर है गई।
शीघ्र ही स्नान करकै अइयो। लै यह अंगोछा, पीताम्बरी।

समाज (दोहा)—

गंगा नहावन भोरहिं, निकसे गौराराय।
प्रेम भाव विभोर हिय, सुधबुध रहै भुलाय।।

भाव विवश तन सुध विसराये। समझत हौं वृन्दावन धाये।
असन वसन धरे चलि जावहिं। सुमिरत व्रज वृन्दावन गावहिं

(प्रवेश महाप्रभु कन्धे पर पीताम्बर)

गौर-म्हाँड—

कहाँ वृन्दावन व्रजेन्द्रनन्दन, व्रजभूषन श्रीविहारी है।
तमाल तनु कहाँ बादक वेणु कहाँ, पालक व्रजवनवारी है।।१।।
यमुना तट कहाँ वंशीवट कहाँ, कहाँ वह रासविहारी है।
राधाकुण्ड कहाँ कृष्णकुण्ड कहाँ, कहाँ गोवर्धनधारी है।।२।।
सुबल श्रीदाम कहाँ गोगोप धाम कहाँ,
कहाँ विपिन विहारी है।
ललिता विशाखा कहाँ चन्द्रा चित्रलेखा कहाँ,
कहाँ कीरति कुमारी है।।

समाज (दोहा)—

विलम्ब लखि माता शची, पठये ढूँढ़न लोग।
सखा गदाधर नरहरि, चले धाय प्रभु खोज।।

(प्रवेश गदाधर-नरहरि सखा)

गदाधर—

देख-देख भैया नरहरि! वह जाय रहे हैं प्रभु! प्रभो! प्रभो!

गौर—

कौन? गोप बालक हो? वृन्दावन को मार्ग कौन-सो है।

नरहरि—

हाय हाय प्रभो! हमकूँ पहचानो नहीं हो कहा? मैं हूँ आपको दास नरहरि और ये आपके प्रिय गदाधर।

गौर—

भले आये! तुमहू वृन्दावन चल रहे हो न? उत्तम! संग-संग चलेंगे। कृष्ण-कथा कहते सुनते मार्ग सहज ही में कट जायगो! गदाधर! जब हम प्यारे कृष्ण को प्यारो वृन्दावन, वृन्दावन पहुँचेंगे न, तो वामें प्रवेश करते ही वा पावन भूमि पै लोट कै साष्टांग दण्डवत करेंगे (करते हुए) प्रणाम वृन्दावन! कृष्ण प्रेमरस धाम, वृन्दावन! कृष्ण लीला स्थली वृन्दावन! वृन्दावन! कोटिशः प्रणाम! (लुण्ठन)

झिंझोटी कल्याण दादरा-केहरवा—

हरि पद रज जो पाऊँ, नैनन लाऊँ।।
जा वन में मेरो श्याम विहारी, पैयाँ पैयाँ धावै।
वंशी बजाय गराय कै पाहन, पद पद चिह्न बनावै।
मैं रज सो, शीश चढ़ाऊँ, व्रज में जाऊँ।। हरि०।।

जा वन में तेरो रासविहारी, थेइ थेइ करि नाचै।
एक बूँद जा सुख के आगे, तीन लोक सुख काँचै।
तहाँ यमुना पुलिन जाऊँ, रज में न्हाऊँ।। हरि०।।

जा व्रज में मेरो कुंजविहारी, संग महारानी राधा।
पद पद 'प्रेम' प्रयाग बनावै, रसहिं बहावै अगाधा।
तहाँ तरु तरु ढिंग जाऊँ, हृदय लगाऊँ।। हरि०।।

नरहरि गदाधर—

(पकड़ कर उठाते-सम्हालते हुए) धीरज धरो प्रभो!

गौर—

वृन्दावन कितेक दूर है अबही? हा वृन्दावन!

नरहरि—

हम आय पहुँचे वृन्दावन! देखो प्रभो! वह सामने यमुना बह रही हैं। (धवल धारा गंगा का दृश्य)

समाज (चौपाई)—

दूरहि सों प्रभु गंगा दिखाये। विरमावहिं कहि यमुना आये।।

गौर—

(हाथ जोड़) अहा यमुने! प्रणाम! तुम्हारे अतुलनीय सौभाग्य कूँ प्रणाम! तुम्हारे ही जल-थल पै गोपी-राधा-कृष्ण नित्य विहार करैं हैं। यह सौभाग्य त्रिलोकी में काहु सरसरिता-सिन्धु कूँ प्राप्त नहीं है। प्रणाम! कोटिश: प्रणाम।

पद—

धीर समीरे यमुना तीरे, वसति बने वनमाली।
गोपी मीन पयोधर मर्दन, चंचल युगकर शाली।।
धीर समीरे धीर समीरे, धीर समीरे, धीर समीरे।
धीर समीरे यमुना तीरे।।

चलो भैयाओ! स्नान करैं! अहा! प्यारे श्याम के अङ्ग संग सों यह यमुना-जल हू श्याम है गयो है। वे कृष्ण ये कृष्ण!

मुरारिकाय कालिमा ललाम वारिधारिणी
तृणीकृत त्रिविष्टपा त्रिलोकशोकहारिणी।
मनोऽनुकूल कूलकुंजपुंजधूतदुर्मदा
धुनोतु मे मनोमलं कलिन्दनन्दिनी सदा।।

भैयाओ! या कृष्णा यमुना के स्नान सों मन की कालिमा छूट जाय है और कृष्ण की दिव्य कालिमा-लालिमा चढ़ जाय है। आओ! आचमन करैं (जल हाथ में लेते) हैं! यह जल तो स्वच्छ निर्मल है—गंगाजल जैसो! (दृष्टि उठा गंगा पर डालते) और यह यमुनाहू तो कछु श्वेत गंगा जैसी प्रतीत है रही है। यमुना की नीलाभा कहाँ चली गई?

गदाधर—

याको कारण यह है प्रभो कि आप जो सम्मुख ठाड़े हैं। यह आपको—

उज्जवल कंचन बरन देह, झलमल झलके अंग।
झांई परत जमुना भईं, कारी ते गोरी गंग।।

गौर—

चुपकर गदाधर! यह अनुचित अति प्रशंसा मोकूँ नेकहू नहीं भावै है—

अति उक्ति बनाय कै, जाकूँ सराहत आज।
रूप सेई कुरूप करौं, साजूँ ऐसौ साज।।

मैं या रूप कूँ कुरूप सजाय दऊँगो!

नरहरि गदाधर—

(मर्माहत हो) हा हा प्रभो! यह आप कहा कहौ हो, हम कहा सुनैं हैं। भूल भई हमसों! क्षमा करो! दया करो (चरण पकड़) ऐसे वचन श्रीमुख सों फिर न कहैं।

गौर—

अच्छो! चलो यमुना-स्नान करैं।

समाज (दोहा)—

भेद तुरत दुराय प्रभु, कहत जु जमुना न्हायँ।
हाथ जोरि गदाधर कह्यौ, यह तो गंगा माय।।

गदाधर—

चेत करौ प्रभो! यह यमुना नहीं गंगा ही है।

नरहरि—

(हाथ जोड़) हाँ प्रभो! आप गंगा न्हायवे माँ ने भेज्यौ है। देखौ न आपके काँधे पै अंगोछा और पीताम्बर पर्‌यौ है। अतएव चेत करौ प्रभो! और गंगा स्नान करौ।

गौर—

(वस्त्रों को देखते हुये) साँची तो, मैं तो गंगा न्हायवे निकस्यो हूँ। न्हाय कै जाऊँगो, सेवा पूजा करूँगो। तबही जायकै नारायण को भोग लगैगो। हाय हाय! मोते बड़ी चूक पर गई—सेवापराध बन गयो। हाय रे! मैं कहा करूँ? मैं कहा अपने वश में हूँ। चलौ जल्दी न्हायकै चलैं। माँ कितनी चिन्ता में परी होंगी!

गदाधर—

उननै ही तो विलम्ब देख हम भेजे हैं।

गौर—

भैयाओ! कृष्ण कृष्ण कहते-कहते, वृन्दावन-वृन्दावन कहते-कहते मैं सब कुछ भूल जाऊँ हूँ। देश-काल-पात्र काहू को ज्ञान नहीं रहै है। तुम सब मोकूँ ऐसे ही सम्हार लियौ करौ। चलौ अब स्नान करैं। (प्रस्थान। पटाक्षेप)

विद्वेषी पण्डितदल

समाज (चौपाई) —

पंडित दल बहु नदिया माहीं। भावभक्ति सों परची नाहीं।।
विद्या गर्व मानऽहंकारा। खर्ब किये गौर बहु बारा।।
ते शिशुपाल सरिस जिय जरहिं। प्रभु प्रताप तेज ते डरहिं।।
तिन अवसर यह नीको पायो। निपट झूठ चबाव चलायो।।

(प्रवेश विद्वेषी पण्डित, भट्टाचार्य, तर्करत्न और आयुर्वेदाचार्य)

पण्डित दल—

ओ शची माँ! शची माँ! एकटु बाहिरे आसुन! बाहर पधारें! दर्शन देवें!

शची—

(प्रवेश कर हाथ जोड़ती) आसुन आसुन!

पण्डित दल—

माँ नमस्कार! माँ पेन्नाम (प्रणाम)

शची—

भगवान् आपनादेर मंगल कोरुक्। आनन्द मंगल तो है न? अच्छे दर्शन दिये! मेरो निमाई हू कहूँ मार्ग में मिल्यौ?

पण्डित सब—

ना माँ! क्यूँ? कहाँ गयो है?

शची—

गंगा न्हायवे गयो है। बड़ी देर है गई! आयौ नहीं है।

पंडित सब—

(परस्पर में इशाराबाजी और कानाफूँसी करते)

भट्टाचार्य—

तर्करत्न मो'शाय! कहूँ गंगा में तो नहीं कूद पर्यौ?

तर्करत्न—

कहा आश्चर्य भट्टाचार्य जी! बावरो को कहा भरोसो!

आयुर्वेदाचार्य—

वाँकूँ तो खम्भा सों बाँध करकै राखनो चाहिये। अथवा तो घर में बन्द करकै राखनो चाहिये। खुलो छोड़वे में तो पूरो खतरा है!

शची—

(घबड़ाकर) ये सब आप कहा कह रहे हैं? मैं यह कहा सुन रही हूँ कहा मेरो निमाई बावरो है गयो है? साँची बताय देओ, बात कहा है?

भट्टाचार्य—

(खाँसते-अटकते हुए) माँ! कछु......कछु ऐ.......ऐ सोई कहा कहैं माँ। कहैं तो बुरो न कहैं तो बुरो-तुम्हारी हानि हू चुपचाप कैसे देखैं। 'अनभल जाइ न देखि तुम्हारो'।

शची—

नहीं पण्डित जी नहीं! हितैषी की हित की बातन को मैं काहे कूँ बुरो मानूँगी!

भट्टाचार्य—

तो आयुर्वेदाचार्य मो'शाय! आपही कह देओ न!

आयुर्वेदाचार्य—

यह काम तो तर्करत्न मो'शाय अच्छो कर सकेंगे। नेक सजाय गुजाय युक्तियुक्त बनाय कै कह दैंगे।

तर्करत्न—

नहीं आयुर्वेदाचार्य जी! बीमारी को महकमा तो आपको ही है। आपकी बात ही वजनदार होगी! कह देओ।

आयुर्वेदाचार्य—

तो माँ! मोकूँ ही कड़वो बननो परैगो! कहा करैं हमारो धन्धो ही ऐसो है। हमारी बात कड़वी, दवा कड़वी, फीस कड़वी और अन्त में रोगी बच गयौ तो भगवान् ने बचाय दियौ और मर गयौ तो यमराज के सगे भैया वैद्य ने मार डार्‌यौ। परन्तु तौऊ नीति कहै है कि तीन व्यक्ति कूँ कड़वी बोलवे से डरनो नहीं चाहिये। वे तीन हैं–मंत्री, गुरु और हम वैद्य।

सचिव वैद गुरु तीन जो, प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म धन तीन कर, होय बेगही नाश।।
यासों मोकूँ हू अप्रिय सत्य कह दैनो ही परैगो।

तर्करत्न—

हाँ-हाँ कह डारौ! भूमिका बहुत है गई।

आयुर्वेदाचार्य—

तो सुनौ माँ! तुम्हारे निमाई में भयंकर लक्षण प्रगट है रहे हैं!

शची—

कैसे भयंकर लक्षण कविराज जी?

आयुर्वेदाचार्य—

निमाई की वायु कुपित है गई है जासों उन्माद के सारे लक्षण प्रगट है रहे हैं।

भट्टाचार्य—

बिल्कुल उन्माद! प्रबल प्रकोप!

तर्करत्न—

निःसन्देह! प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्।

शची—

हाय हाय पण्डितो! कहा प्रत्यक्ष है? कहा भयंकर लक्षण हैं। बताय देओ समझाय देओ, उपाय करूँगी।

आयुर्वेदाचार्य—

सुनो माँ! मैं पाँच-सात लक्षण मुख्य-मुख्य बताऊँ हूँ। तुम मिलान करकै देखौ कि ये लक्षण तुम्हारे निमाई में हैं कै नहीं। (एक-एक करके लक्षण बतलाता, शची से पूछता और शची स्वीकारती जाती है) १. मौन-गुमसुम रहनो २. प्रलाप-बेमेल-बेतुकी बोलनो ३. निद्रा-नाश ४. स्तम्भ—देह अकड़ जानो ५. अपस्मार—दौरा परनो ६. मूर्च्छा आदि उन्माद के लक्षण हैं जो आप के निमाई में प्रत्यक्ष ही हैं।

भट्टाचार्य—

प्रत्यक्ष ही नहीं, प्रबल-प्रबलतर-तम होते आय रहे हैं।

तर्करत्न—

तबही तो देखौ न पाठशाला बन्द करके, अध्यापन छोड़ करकै नाचवे-किल्लायवे रोयवे लग्यौ है और अब न जाने कहाँ भटक रह्यौ है।

शची—

(दुःखातुर हो) तो उपाय? उपचार? कविराज जी! मेरे निमाई कूँ बचाओ! मैं जन्मभर आपको गुण गाऊँगी! बोलो उपाय?

आयुर्वेदाचार्य—

घबराओ मत माँ! मोकूँ निमाई की पूरी चिन्ता है। मैं आयो ही वाकूँ देखिवे और औषधि हूँ संग लैकै आयो हूँ। यह लेओ आयुर्वेद को चमत्कार 'शिवा तैल।' भयंकर ते भयंकर वायु-प्रकोप को दमन-शमन कर देय है। राम-बाण जैसो अमोघ है देह पै याकी मालिश कर दियौ करौ।

शची—

और पथ्य-परहेज कहा है वैद्यराज जी।

आयुर्वेदाचार्य—

गर्म वस्तुन ते परहेज और शीतल वस्तुन को सेवन! यह 'शिवा-तैल' अत्यन्त ही गर्म है याके ऊपर कोई उष्ण दाहक पदार्थ नहीं दैनो-तरी पहुँचायवे वारी शीतल वस्तु ही दैनो।

तर्करत्न—

और द्वै चार घण्टा ठण्डे जल में डुबाय कै राख सकौ तो शीघ्र ही फल मिलैगो। गर्मी सब शान्त! वायु सब शान्त! और मस्तिष्क शीतल स्वस्थ!!

भट्टाचार्य—

और आगे-पीछे घर में बन्द करकै ही राखनो अथवा खम्भा सों बाँध करकै राखनो। खुलो छोड़वे में खतरा ही खतरा है! गंगा में ही कूद परै! क्यों आयुर्वेदाचार्य जी! ठीक है न यह व्यवस्था?

आयुर्वेदाचार्य—

सर्वोत्तम व्यवस्था! मेरी त्रुटी आप दोनों ने पूरी कर दीनी! धन्यवाद! पानी में डुबाय कै राखनो! और खम्भा सों बाँध करकै राखनौ! सावधान कूँ चोट नहीं है। यासों माँ! सावधान रहनो! एक पुत्र तो खोयो, कहूँ दूसरो हू न खोय बैठनो।

(प्रवेश महाप्रभु, गदाधर और नरहरि)

पण्डित दल—

(सकपकाते हैं—परस्पर प्रति संकेत करते हुए) माँ! नमस्कार! पेन्नाम माँ! (खिसक पड़ते हैं)

समाज (दोहा)—

आवत गृह लखि गौरहिं, गये विद्वेषी पलाय।
बूझत प्रभु शची मात सों, कहा बात है माय।।

गौर—

माँ! यह पण्डितन को दल काहे कूँ आयो हो?

शची—

(दु:खपूर्वक) कहा कहूँ बेटा! ये कहैं हैं कि निमाई की वायु कुपित है गई है। वाकूँ उन्माद रोग है गयो है याके तांई यह 'शिवा तैल' मालिश करवे कूँ दै गये हैं और तोकूँ बाँधकै पानी में डुबोय राखवे कूँ कह गये हैं। हाय हाय! मैं कहा करूँ निमाई! तोकूँ यह है कहा गयो बेटा? अरे! कछु सुनै है कै नहीं? मैं कहा कर रही हूँ।

गौर—

(अनमने से) कहा कह रही हो माँ?

शची—

हाय रे! तैंने कछु नहीं सुन्यौ कहा? अपने आप तो बात पूछी और जब मैं बोली तो कछु सुन्योइ नहीं! अरे बेटा! तेरे कान-आँख कहाँ रहैं हैं। तू मन ही मन कहा सोचतो रहै जो बाहर की कछु नहीं सुनै है? तू क्यूँ इतनो सूनो, उन्मनो, गैर-होश सौ रहै है? यह तेरी मति-गति कैसे पलट गई? तेरी वह हँसी खुशी बोल चाल सब कहाँ चली गई? गया ते आयकै तू कहा ते कहा है गयो! हे विधाता! मैं कहा करूँ? कौन ते कहूँ।

(प्रवेश श्रीवास पण्डित)

(शची माता चली जाती हैं)

समाज (सोरठा)—

पंडित भक्त श्रीवास, सुनिकै भक्त निमाइ की।
बाढ्यौ हिय हुलास, आये आपहि मिलन हित।।
पितृ समान प्रभु आदर दीन्हे। चरन परसि प्रनाम जु कीन्हे।।

गौर—

छमहु सकल मम चंचलताई। अपनो दास अब जानो निमाई।।
करौ सोई मोकूँ उपदेशा। मिलै जासों कृष्ण प्राणेशा।।
कृष्ण विना जगबात न भावै। निशिदिन चिन्ता चाह सतावै।।
तन मन मति गति थिरता नाई। कहैं लोग बौरायो निमाई।।
शंका यह करौ दूर गुसांई। हित अनहित समझों कछु नांई।।

गजल—

अब कोई तो बतादे, ए मुझको क्या हुआ है।
मैं कुछ समझ न पाता, ए मुझको क्या हुआ है।। १।।
दिल में इकदर्द उठता, आँखों से बह निकलता।
रोके से रुक न सकता, ए मुझको क्या हुआ है।। २।।
छिन छिन तड़फ मैं उठता, घायल बेहोश गिरता।
बचने से बच न सकता, ए मुझको क्या हुआ है।। ३।।

कोई मर्ज कहते इसको, पागल ठहराते मुझको।
समझाऊँ कैसे किसको, ए मुझको क्या हुआ है।।४।।
क्यूँ मैं हूँ इतना रोता, क्यूँ जान अपनी खोता।
क्या 'प्रेम' सबको होता, ए मुझको क्या हुआ है।।५।।

श्रीवास—

प्यारे गौरचन्द्र! सुनो मैं बताऊँ हूँ। यह कोई रोग नहीं, प्रेम को महायोग है। यह अमलात्मा ऋषि-मुनिन कूँ हू दुर्लभ है जो श्रीकृष्ण कृपा सों तुमकूँ सुलभ भयो है।

गजल (कब्बाली)—

जो तुमको हुआ वह न इनको हुआ।
फिर कैसे ये समझें, तुम्हें क्या हुआ है।। १।।
इस मर्ज से बढ़कर न कोई दवा है।
इस दर्द से बढ़कर न कोई शफा है।
यह हरि की ही दौलत हरि की दुआ है।
यह समझेगा कोई जो उसका हुआ है।। २।।
जो रखते हैं होश बेहोश वही हैं।
जो खोते हैं होश बाहोश सही हैं।
जो कुछ भरा था वह खाली हुआ है।
होकर के खाली वह पूरा हुआ है।। ३।।
यहाँ की हवा अब हवा हो गई है।
हवा उसके होठों की अब भर गई है।
महक भीनी आई वह, मदहोश हुआ है।
लगे लोग कहने कि बेहोश हुआ है।। ४।।
मेरी मुराद आज पूरी हुई है।
हरि की मेहर तुम पै पूरी हुई है।
मिटे स्वप्न हमारे, सवेरा हुआ है।
तुम उसके हुये प्रेम, तुम्हारा हुआ है।। ५।।

यह दुर्लभ श्रीकृष्णप्रेम ही परम पुरुषार्थ है जो तुमकूँ प्राप्त भयो है। या प्रेम के द्वारा तुम आप श्रीकृष्ण को रसास्वादन करौ और हमकूँ कराओ। मायामुग्ध संसारी जीव जो चाहैं सो कहैं, इनकी न सुनौ और अपने रस में मगन रहौ। यही निन्दक एक समय तुम्हारे पूजक बन जायँगे।

गौर—

आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। अब मैं निश्चिन्त भयो। जो यदि आपहू मेरी दशा कूँ वायु रोग को उन्माद बतामते तो मैं या रोगी शरीर कूँ अवश्य ही भागीरथी जननी की गोद में अर्पण कर देतौ आपने पिता की भाँति मेरी रक्षा करी है और मोकूँ भक्तिमार्ग में प्रेरणा दीनी है। ऐसे पितातुल्य गुरुजन सों हू मैंने बहुत हास-परिहास कर्यौ है वाके लिये मैं लज्जित हूँ, संतप्त हूँ। आपकी सहज क्षमा तो बालक के ऊपर है ही। अब अपनो आशीर्वादहू देओ कि श्रीकृष्ण चरण में मेरी मति-रति होवै।

(श्रीवास के चरण पकड़ना)

श्रीवास—

(उठाकर हृदय लगाते हुए) हरिबोल! प्यारे विश्वम्भर! यह आशीर्वाद ही कहा, यह तन, मन, जीवन, सर्वस्व तुमकूँ समर्पित है। कब सों मेरी यह साध ही कि तुम्हारो विद्या विलास छूटै और भक्ति विलास होवै। श्रीकृष्ण बड़े ही करुणामय हैं। मेरी चिरकाल की साध पूरी कर दई। तुमकूँ अपनी प्रेम-भक्ति दै दीनी। अब हम सब मिल करकै एक स्थान पर उनको नाम-गुण-कथा-कीर्तन कर्यौ करेंगे। अहा आज मेरे आनन्द की सीमा नहीं है। हरिबोल। प्रिय विश्वम्भर! अब फिर शीघ्र ही मिलूँगो।

गौर—

(हाथ जोड़ नतशीश) दास को प्रणाम स्वीकार होवै।

श्रीवास—

श्रीकृष्णेरतिरस्तु (प्रस्थान)

गौर—

माँ माँ ओ माँ!

शची—

(प्रवेश कर) श्रीवास जी चले गये कहा?

गौर—

हाँ माँ चले गये।

शची—

कहा बताय गये? रोग तो नहीं बतायो?

गौर—

ना माँ! कह गये कि कोई रोग नहीं है। तुम बिल्कुल निश्चिन्त रहौ और श्रीकृष्ण को भजन करौ।

शची—

बड़ी कृपा करी श्रीवास जी ने! बचाय लई मोकूँ! बेटा! गोपाल जी की सेवा-पूजा में आज देर है गई। तुम वस्त्र बदल पीताम्बरी पहन कै पूजा करौ। मैं भोग की तैयारी करूँ हूँ।

(प्रस्थान। पटाक्षेप)

श्रीवास—(गाते हुये प्रवेश)

पद (काफी या देश)—

हरि प्रेमी का मग न्यारा है।
वह खाँडे की सी धारा है।।१।।
नहीं वेद पुरान में गाया है, जिन पाया दिल में छिपाया है।
ज्यूँ मोती सीप में धारा है।। हरि०।।२
कभी प्यारे के गुण गाते हैं, कभी ध्यान में गुम हो जाते हैं।
कभी बहती आँसुन धारा है।। हरि०।।३
कभी मरने को उठ धाते हैं, ले दरस आश फिर आते हैं।
अब आवे प्रीतम प्यारा है।। हरि०।।४
जग पागल पागल कहता है, वह रोता है जग हँसता है।
नहीं 'प्रेम' का कोई इजारा है।। हरि०।।५

(गाते-गाते प्रस्थान)

गौर की कृष्ण-पूजा

समाज (चौपाई)—

विष्णुप्रिया पीतपट दीन्हे। पहन प्रभु पूजा गृह गमने।।
मन्दिर महँ मूरति गोपाला। मुरलीधर मोहन नन्दलाला।।

(दृश्य-पूजा गृह। सिंहासन पर त्रिभंगी मुरलीधर पूजा-पात्र, चन्दन, धूप, दीप, पुष्पादि)

गौर—

(प्रवेश कर इकटक दर्शन करने लगते हैं)

समाज—

बाँकी झाँकी छवि लुभानी। अँखियां लखत रहीं उरझानी।।
अके जके रहै ठाड़े हिराने। उमग्यो प्रेम सुनेम भुलाने।।
तबहि भाव व्रज को उमगायो। समझत श्याम घर मेरे आये।।

गौर—(भाव विह्वल होकर)

आओ मेरे गोपाल! नन्दलाल! वन में ते भाग आये हो न? भूख प्यास लगी होयगी! हाय-हाय कहाँ यह नवनीत अंग, कहाँ तेज धूप! सह न सके! भागि आये। मेरे प्रभु! बड़ो अच्छो कियौ! यशोदा रानी के आँचर की निधि! नीलमणि! मो गरीबनी के घर आये! आओ मेरे हृदयघन! तुमकूँ हृदय सों सटाय लऊँ.........

(भुजा फैला पकड़ना चाहते हैं)

विष्णुप्रिया—

(दौड़कर पकड़ लेती हैं) हाय नाथ! यह कहा करौ हो। सावधान होओ। नहीं तो मैं माँ कूँ बोलूँ हूँ।

गौर—

विष्णुप्रिये! जाओ शीघ्र जायकै माँ सों कहौ माखन मिश्री, मलाई, दूध दही सब लै आवैं! हमारे घर ये-ये (बताते हुए) बड़े भाग सों आये हैं। नन्दनन्दन! यशोदा-हृदय-चन्दन! हमारे यहां आये हैं। श्रान्त हैं! क्षुधित हैं! लाओ शीघ्र लाओ माखन-मिश्री! माँ कूँ बोल लाओ।

विष्णुप्रिया—

प्राणनाथ! आप पहले पूजन तो कर लेओ। फिर भोग हू लगामनो। माँ लाय रही हैं माखन मलाई।

गौर—

(अनसुनी करते हुए श्रीमूर्ति को देखते हुए)

सुधराई भीम पलासी केहरवा—

देखो रूप सागर बहे जाय, मेरे ही आँगन आय।।
देखो देखो अङ्ग अङ्ग, भर्‍यौ नव रस रंग।
छलकत छवि तरंग, डूबत मन तरंग।
नयन मीन बहे जाय।।
(मेरे) नयन न रूप समाय।। देखो
नूपुर कंचन पहरे, चरन चरन धरे।
लटकन वाम करे, अधरन वेनु धरे।
मधुर मधुर मुसकाय, (मेरे) रोम रोम रमि जाय।। देखो०।।

(देखो देखो! यह रूप, यह छवि सागर बह्यौ जाय है—
व्रज वीथिन में, वन में, उपवन में बह्यो जाय है -अहा। यह)

व्रज संजीवनमणि, यशोमति नीलमणि।
गोपिन शीशमणि, राधा उरहारमणि।।
याचत मो घर आय, प्रेम दया बरसाय।। देखो०।।

विष्णुप्रिया—

(चरणों से लिपट) नाथ! यह आपकूँ कहा है गयो!

समाज (दोहा)—

व्याकुल बाला विष्णुप्रिया, रही चरन लिपटाय।
मुख ना निसरत वैन कछु, नैन बहावत जाय।।
भये गौर सचेत, सुध आई कछु काज की।
बोले वचन सहेत, आन वसन लाओ प्रिये।।

गौर—

विष्णुप्रिये! यह वस्त्र तो मेरे आँसुन सों अशुद्ध है गयो है।
याकूँ पहन कै कैसे पूजन करूँ! दूसरो वस्त्र लै आओ।

विष्णुप्रिया—

(पीताम्बर लाकर देती हैं। गौरसुन्दर बदलते हैं)

शची—

(नेपथ्य में से) बेटी विष्णुप्रिये! पूजा पूरी नहीं भई कहा? भोग कूँ बहुत देर है गई।

विष्णुप्रिये—

नेक ठहर जाओ माँ! पूजा अबही कछु शेष है। (महाप्रभु प्रति) प्राणनाथ! नेक धीरज धरकै सेवा पूजा कर लैओ न! इतने व्याकुल हैवे सों कैसे सेवा पूरी होयगी! कहूँ माँ आय गई तो आपकी यह दशा देख उनकूँ कितनो दु:ख होयगो। यासों नेक शान्त सुस्थिर है के पूजन करौ।

गौर—

विष्णुप्रिये! मैं शान्त ही तो रहनो चाहूँ हूँ पर रह नहीं सकूँ हूँ—रहन नहीं देय वह मोकूँ-वह-वह

पद (सोहनी-केहरवा) —

वह मुसकन चितवन जिय जगै, वही वैन मधु श्रवण सुनावै।
नैन लखै मुख कमल श्यामल, मैं नहीं रोऊँ वही रुवावै।।
गोपवेश मुरलीकर धारे, पीताम्बर तन श्याम सुहावै।
तीन लोक की सुन्दरताई, धरे वह सम्मुख वेनु बजावै।।

(ऐसे मधुर मनोहर रूप सों जब वह मेरे सम्मुख आवै है तो)

मन नहीं मानै प्राणदेव कूँ, कहा कोई चन्दन पुष्प चढ़ावै।
खोजूँ कोई वस्तु नहीं पाऊँ, तब अँखियाँ जलधार चढ़ावै।।
जो अपनो अपनो ही प्रीतम, पूजा उसकी नेक न भावै।
प्राण चहै बस प्राणदेव की, रोम रोम पै बलि बलि जावै।।
कृष्ण प्रेममय प्रेमी मुकुटमणि, पूजा 'प्रेम' प्राण की चाहै।
प्रेमशून्य कठोर प्राण मम, कसक यही उर धसक रुवावै।।

हा कृष्ण! कैसे तुम्हारी पूजा करूँ। तुम वस्तु सों नहीं, प्रेम सों ही सुखी होओ हो। मैं तो प्रेम गन्धशून्य हूँ। हे प्रेम-सिन्धो! एक बूँद प्रेम देओ—अपनी सेवा की सामग्री प्रेम देओ! प्रेम! प्रेम बिना मेरी छाती फटी जाय रही है (रोते-रोते भूमि पर लोटपोट हो जाते हैं)

समाज (दोहा) —

कहत कहत अधीर विकल, लोटत रोवत हाय।
बालाप्रिया विष्णुप्रिया, सोचति नैन बहाय।।

विष्णुप्रिया—

(स्वगत) नहीं जानूँ यह कृष्ण-प्रेम कहा होय है फिर मैं कैसे समझूँगी इनकी प्रेम-कथा और प्रेम-व्यथा। हाँ एक सीख मिली, एक संकेत मिल्यौ

कि मोकूँ हू अपने प्रेममय प्राणप्रियतम की पूजा ऐसे ही करनी होयगी—रोय-रोय करकै प्राणन की दीप जरानी परैगी—जीवन भर। (महाप्रभु कूँ उठाते हुये) नाथ! नेक धीरज धरो क्षण-क्षण में विह्वल-व्याकुल है जाओगे तो सेवा पूजा कैसे होयगी।

गौर—

(अत्यन्त दुःखपूर्वक) मैं हू तो पूजा ही करनी चाहूँ हूँ पर कर ही नहीं सकूँ हूँ। हाय रे! यह विडम्बना!

(प्रवेश गदाधर। विष्णुप्रिया संकोचवश भीतर चली जाती हैं)

गदाधर—

सेवा-पूजा है चुकी प्रभो?

गौर—

(गदाधर का हाथ पकड़) अच्छे समय पै आये सखे! आज सों यह सेवा पूजा तुम सम्हालो गदाधर! लेओ मैं अपने प्राण-गोपालकूँ तुम्हारे हाथ सौंपूँ हूँ। तुमही यथार्थ अधिकारी हो।

गदाधर—

नित्य तो आप सेवा कर्यौ करते। फिर आज ऐसो विचार क्यूँ कर रहे हो नाथ?

गौर—

मेरी मति-गति सब उलट जो रही है। मैं अब सावधान नहीं रह सकूँ हूँ।

जब गोपाल मूरति निहारौं। चाहौं तन मन प्राण सब वारौं।।
उत वह हँसन चितवन मोहै। इत हिय शत शत साध विलोवैं
विकल विवश तन मन अकुलावै। भरि भरि नैनन धार चढ़ावै
सूझै न मंत्र तंत्र विचारा। निभै न सेवा विधि आचारा।।
अतएव गदाधर! तुम करौ पूजा। मैं द्वार पै बैठ्यौ दर्शन करूँगो।

गदाधर—

जैसी आज्ञा प्रभो!

पद (तर्ज-कोई तन०)—

अधिकार दियो सिर धार लियो,
अब लाज तिहारे ही हाथन में।
मैं तो नट हूँ तुम नटवर हो,
मेरी डोर तिहारे ही हाथन में।।१।।
हैं यंत्र भी मंत्र भी तंत्र सभी,
तुलसी चन्दन गन्ध दीप सभी।
पै लाऊँ कहाँ सों नातों में,
यह नातो तिहारे ही हाथन मैं।।२।।

(यह आपके प्रेम देवता गोपाल तो)

गोपिन के ये माखन खवैया,
मात यशोदा के स्तन पिवैया।
प्रेम बिना कछु जानैं न मानैं,
वह प्रेम तिहारे ही हाथन में।।३।।
प्रेम भजन करन करवावन,
प्रेम मधुर व्रज को दरसावन।
हे प्रेम भोगी बने प्रेमयोगी,
यह 'प्रेम' तिहारे ही हाथन में।।४।।

गौर—

प्रिये सखे गदाधर! नन्दलाल गोपाल अत्यन्त ही कोमल करुणामय हैं। वे तुम्हारे ऊपर अवश्य ही पूर्ण कृपा करेंगे। अब तुम उनकी पूजा करौ। आज बहुत विलम्ब है गयौ। मैं बैठके तुम्हारे द्वारा पूजा के दर्शन करूँ हूँ (बैठ जाते हैं)

गदाधर—

जो आज्ञा प्रभो! (पूजा करने लगता है)

(पटाक्षेप)

समाज (बंगला च० भा०)—

प्रेमरसे प्रभुर संसार नाहिं स्फुरे।
अन्येर कि दाय विष्णु पूजिते ना पारे।।

विषय कर्म की कौन चलावै। हरि सेवाहू होंन न पावै।।
प्रेमसिंह जब तन वन गर्जै। धर्म कर्म सब मृग ज्यूँ लर्जै।।
वरजल नैना जात न बर्जै। ढरत नेह की नव नव तर्जै।।
अँखियाँ रोवैं अँखियाँ धोवैं। अँखियाँ भरि भरि अंजली न्हावैं
अँखियाँ मोती माल धरावैं। अँखियाँ अँखियाँ भोग जिमावैं।।
अँखियाँ आरती दीप फिरावैं। अँखियाँ अंजलि पुष्प चढ़ावैं।।
अँखियन की स्तुति अँखियाँ। 'प्रेम' समर्पण अँखियाँ अँखियाँ।।

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु बैठे है)

गदाधर—

(पूजा से उठकर पंचपात्र लेकर महाप्रभु के समीप आ) लेओ प्रभो! यह गोपालजी के अभिषेक को जल। यासों आप तुलसी महारानी को स्नान करावैं।

गौर—(पंचपात्र हाथ में ले तुलसी समीप गमन)

गोविन्दवल्लभां देवीं.....देवी......देवी।
गोबिन्दवल्लभां देवीं-देवीं-राधे-राधे।।

(रुदन)

समाज (दोहा)—

गोविन्दवल्लभा कहत ही, चित्त गयो भरमाय।
गये भूलि तुलसी प्रिया, रोवत राधे गाय।।

गदाधर—

प्रभो! सावधान होओ! धीरज धरो। तुलसा जी कूँ स्नान कराओ। मंत्र मैं बोल दऊँ हूँ।

गोविन्दवल्लभां देवीं, जगच्चैतन्य कारिणीम्।
स्नापयामि जगद्धात्रीं, विष्णुभक्तिप्रदायिनीम्।।

गौर—

(जल लेकर) हे महारानी तुलसी! तुम विष्णुभक्ति-प्रदायिनी मैं भक्तिशून्या कंगाल हूँ, दीन दुःखी हूँ यह गोविन्द के स्नानामृत गंगाजल कूँ स्वीकार करौ और एक बूँद कृष्णभक्ति प्रदान करकै मेरी आत्मा कूँ शीतल करौ (जल चढ़ाना)

गदाधर—

लेओ प्रभो! प्रसादी माला! धारण कराय देओ।

गौर—

(माला लेकर तुलसी जी पर चढ़ा देते हैं)

गदाधर—

अब प्रदक्षिणा कर लेओ प्रभो! मैं मन्त्र पढ़ता हूँ।
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यादि कानि च।
तत्सर्वं विलयं याति तुलसि! त्वत् प्रदक्षिणात्।।

गौर—

(चार बार प्रदक्षिणा करके घुटना टेक प्रणाम-मन्त्र पढ़ते हैं)

वृन्दायै तुलसी देव्यै प्रियायै केशवस्य च।
कृष्णभक्तिप्रदे देवि! सत्यवत्यै नमो नमः।।

हे तुलसी देवी! हे कृष्णभक्तिप्रदे! कृष्णभक्ति! केवल कृष्णभक्ति देओ। और मैं कछु नहीं चाहूँ। कृष्णभक्ति। बस कृष्णभक्ति! कृष्ण-हा कृष्ण-कृ......ष्ण......कृ.....ष्ण

(पृथ्वी पर मस्तक टेक रुदन)

गदाधर—

(सम्हाल कर उठाने हुये) प्रभो! शान्त होओ! धीरज धरो! चलकर श्रीकृष्ण कौ प्रसाद ग्रहण करौ। दिन तीन पहर बीत गयो है। माता दोनों भूखी-प्यासी बैठी हैं। अब देर न करौ। चलौ (पकड़ कर धीरे-धीरे ले जाता है)

संकीर्तन धुन—

जय शचीनन्दन गौर गुणाकर।
प्रेमपरसमणि भावरस सागर।।

इति गौर भाव-विलास लीला

❖

अद्वैत-वांछा-पूर्ति एवं श्रीवास-गृह संकीर्तनारम्भ लीला

बाँगला पयार (चै० भा०)-

जय जय विश्वम्भर द्विजराज।
जय विश्वम्भर प्रिय वैष्णव समाज।।
जय गौरचन्द्र धर्म सेतु महाधीर।
जय संकीर्तनमय सुन्दर शरीर।।
जय नित्यानन्देर बान्धव-धन प्राण।
जय गदाधर अद्वैतेर प्रेमधार।।

अद्वैत-वांछा-पूर्ति

गौर चरित आगे सुनहु, जैसे अद्वैत चन्द्र।
गौर चरन पूजन किये, जानि सुनहु, जैसे अद्वेत चन्द्र।
गौर चरन पूजन किये, जानि स्वयं कृष्ण चन्द्र।।
अद्वैत उर शंका भ्रमशीला। लखिलखि गौरचरित नरलीला।।
परिचय प्रभु को पुनिपुनि पाये। तदपि पुनिपुनि माया भुलाये।।
ठानत कबहु कृष्णहि गौरा। रूप दुराय आयो व्रज चौरा।।
पुनि विवेक बाधा उपजावैं। नर ईश्वर मानत सकुचावै।।

(दृश्य-मन्दिर। श्रीमदन गोपाल मूर्ति। तुलसी गमला। अद्वैताचार्य पूजा कर रहे हैं)

समाज (दोहा सोरठा)-

एक दिवस अद्वैत गृह, पूजत मदनगोपाल।
अर्पत चन्दन तुलसीदल, अन्तर भाव उत्ताल।।
कबहु भुजा उठाय, बोलत हरि हरि नरहरी।
पूजाहू विसराय, हँसे, रोवें, गर्जें कभु।।

अद्वैत संकीर्तन—(पद-भैरव-केहरवा)—

हरि हरि नरहरि नारायण हरि।
राम कृष्ण वासुदेव वामन हरि। टेक।।१।।

केशव कंसारिकाल कालियकदन हरि।
गोविन्द गिरिधारी गोप गोकुलमंगल हरि।।
रवि कुलपति रघुपति मुरारी हरि।।
माधव मुकुन्द मधुसूदन मुरारि हरि।। हरि०।।२।।
दीनबन्धु दुःखहारी द्रौपति-दयाल हरि।
शरण्य शरणप्रिय शरणागत पाल हरि।
शबरी-सुदामा-सुग्रीव-बन्धु-सखा-नाथ हरि।
लोक वेद इष्ट धर्म मुक्ति 'प्रेम' नाम हरि।।
हरि हरि नरहरि नारायण हरि।
राम कृष्ण वासुदेव वामन हरि।।

(उन्मत्त कीर्तन)

समाज (बंगला पद)—

एक दिल प्रभु गदाधर कोरि संगे।
अद्वैत देखिते प्रभु चलिलेन संगे।।

(प्रवेशःभावमग्न गौर एवं गदाधर)

एक दिवस प्रभु गदाधर संग। गये अद्वैत घर उर नवरंग।।
भाव विभोर अद्वैत भंडारी। गरजत गृह मधि हरि हुँकारी।।
इत हरि गौर जु ठाड़े द्वारे। 'हौं आयौं' गरजत हुँकारे।।

गौर—

(द्वार पर खड़े-अर्ध-निमीलत नयन-ऊर्ध्वबाहु गम्भीर कण्ठ ध्वनि) मैं आय गयौ! तेरी हुँकार मोकू गौलोक ते खैंच लायौ है! देख अद्वैत! देख (कहते-कहते मूर्च्छा एवं पतन)

समाज (दोहा)—

कहत कहत आवेश भर, भये अचेत निमाई।
दौरि अद्वैत अंकम धरै, रहै निरखि अकुलाई।।

अद्वैत—

(गौर-शीश को गोद में रखे हुये, आवेश पूर्वक) मेरे प्राण निमाई! मेरे विश्वरूप के भाई निमाई!

पद—

खोलौ आँख मुख सों बोलों, कहा यह दशा भाव निमाई।
कहा यह मूर्च्छा नहीं कभु नहीं, यह तो महाभाव सुभाई।।
वदन कान्ति मलिन नाहि, दमकत शत गुन सुहाई।
अंग अंग रोम रोम, छलकत भरि छवि लुनाई।।
रूप अनूप नररूप नाहिं, अङ्ग सुरंग नर अङ्ग नाई।
भाव तरंग प्रेम अभंग, अलौकिक अति लौकिक नाई।।
(नर-बालक मो वृद्ध ब्राह्मण को मोहित कर ले यह सम्भव नहीं।
तुमकू देख देखकर)

मो वीतराग मन में राग, उमगत बरबस लुभाई।
मोहन यह मन हरन जादू, नहीं कहूँ नररूप में नाई।।

(अतएव मेरी अन्तरात्मा कहै है कि)

हो तुम वही हो दयानिधि हो, प्रणत दीन जन गुसांई।
दीन पुकार सुजन गुहार, सुनि आये हो रूप दुराई।।1

(और कल रात्रि में स्वप्न में जो परिचय मिल्यौ वह कहा कभू भूल सकूँ हूँ। यासों)

गयो सव जान लियो पहिचान, अब न सकिहौं छिपाई।
करूँगो चोरी, चोर की चोरी, लग्यौ दाव 'प्रेम' आई।।
अरे अच्युत! गंगा जल लै आ और पूजन की सब सामग्री लै आ।

समाज (दोहा)—

चोरी करूँगो चोर की, कहि कहि टेरि अद्वैत।
पूजा साज सामान सब, मँगवाये अति हेत।।

(पुत्र अच्युत पूजा-सामग्री ले आता है)

गौर अचेत तन सुध कछु नाई। धोवत चरन अद्वैत गुसांई।।
चदन्द चर्चि सुगन्ध लगाये। पुष्प धूप दीप चरन चढ़ाये।।
बार बार यह श्लोक उच्चारे। 'नमो ब्रह्मण्य देव' पुकारे।।

अद्वैत-

ॐ नमो ब्रह्मण्य देवाय गो ब्राह्मण हिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः

(समस्त पूजा इस श्लोक से सम्पन्न करके)

समाज-

नमो नमो कहि चरनन ऊपर। करें प्रणाम शीश पुनि धरधर।।
जय जय देव पुकारें। चरणन की महिमा उच्चारें।।
जय जय जय देव देव देव, त्रिभुवनमंगल दिव्य नाम धेय।
जय जय जय देव कृष्ण देव, श्रवण मनो नयनावतार।।

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं
तीर्थास्पद शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम्।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष ते चरणाविन्दम्।।

गदाधर (चौपाई)-

कहा करौ यह अद्वैत गुसांई। यह तुम्हार बालकहि निमाई।।
मंगल हानि अमंगल साजा। होत जिय भय लखि तुव काजा।।

अद्वैत (दोहा)—

थोरे दिनन महँ जानिहौ, बालक कौन निमाई।
शंका उरते टारिकै, करत रहौ सेवकाई।।

समाज—

गौर हरि तब तन सुधि पाई। उठि देखत चहुँ कछु सकुचाई।।
पुनि अद्वैत चरन गहे धाई। क्षमा करहु मम चंचलताई।।

गौर—

(अद्वैत-चरणों में प्रणाम कर हाथ जोड़)
तन यह मलिन भक्ति नहिं पाई। दया करहु मोपै जु गुसांई।।
अहो भाग्य तुव पद रज पाई। बड़े दिनन की साध पुराई।।

बंगला पयार (चै० भा०)-

धन्य होइलाम आमि देखिया तोमारे।
तुमि कृपा कोरिले से कृष्णनाम स्फुरे।।
तुमि से कोरिते पारो भववन्ध नाश।
तोमार हृदय कृष्ण सर्वथा प्रकाश।।

समाज (सोरठा)-

अन्तर भाव दुराय, बोले आचारज प्रभु।
तुम्हरि भक्ति मन भाय, तुम सुपुत्र ममबन्धु के।।

अद्वैत—

विश्वम्भर! तुम मेरे प्रिय बन्धु के सुपुत्र तथा मेरे प्रिय शिष्य विश्वरूप के लघुभ्राता हो। स्वयं हू सुपण्डित हो और अब श्रीकृष्ण में तुम्हारी भावभक्ति हू भई है। अतएव तुम मोकूँ अतिशय प्राणप्रिय हो। एक इच्छा है वैष्णव समाज की सुनोगे विश्वम्भर?

गौर—

(हाथ जोड़) आज्ञा करौ आचार्यदेव!

अद्वैत—

वह इच्छा यही है कि तुम्हारे संग मिल करकै हम श्रीकृष्ण- संकीर्तन करनो चाहैं हैं तथा श्रीकृष्ण-कथा आस्वादन करनो चाहैं हैं।

गौर—

आचार्यदेव! मैं सर्वप्रकार सों आपकी सेवा कूँ प्रस्तुत हूँ। वैष्णव महानुभावन की इच्छा यथासाध्य पूर्ण करनो मेरो परम धर्म है। अब हमकूँ आज्ञा होय। हमारो प्रणाम स्वीकार होवे।

(प्रणाम कर गौर-गदाधर का प्रस्थान)

अद्वैत—

(देखते रहते हैं! उनके चले जाने पर) ओह! स्वामी हैकें दास कूँ प्रणाम! यह दीनता हैकै छल-प्रवंचना? परन्तु यह आँख मिचौनी तो तुम्हारो पुरानो खेल हो-

पद-मिश्र बसन्त-

तुम खेलते जाओ हम खेलते जायँ,
यह खेल पुराना नया नया।।टेक।।
ना जाने वह कौन घड़ी थी, हम तुमसे जब अलग हुये।
अलग हुये चाहे नहीं हुये पर, भूल गये तुम्हें भूल गये।
तुम हँसते रहे हम रोते रहे, यह खेल पुराना नया नया।।१।।

(तुम) रूप रूप बहुरूप बनाकर, रंग मंच पर खेल रहे।
हम देख देख के नाच तुम्हारा, तुमही कूँ फिर भूल रहे।
तुम भुलाते रहे हम भूलते रहे, यह खेल पुराना नया नया।।२।।

जल में कमल कमल में रस यह, कोई न जाने भ्रमर बिना।
आकाश में चाँद चाँद में रूप यह, कोई न जाने चकोर बिना।
तुम छिपते रहे हम ढूँढ़ते रहे, यह खेल पुराना नया नया।।३।।

नहीं साधन पर इक साध बड़ी, तुव कृपाही पै आश आड़ी।
ए हटाना ही होगा घूंघट को, है 'प्रेम' की तुमको आन बड़ी।
तुम तजते रहो हम भजते रहें, यह खेल पुराना नया नया।।४।।

जाओ नाथ जाओ! बैठो छिप करकै। मैंहू जाय छिप करकै बैठूँ हूँ-या नवद्वीप कूँ छोड़ शान्तिपुर में जाय बैठूँ हूँ। और तबही आऊँगो जब तुम अपने या पर्दा कूँ हटाओगे, अपने परस्वरूप कूँ प्रकाशित करौगे और मोकूँ बाँधिकै अपने पास लै जाओगे (भुजा उठाकर घोषणा)

बंगला पयार (चै० भा०)-

सत्य जदि प्रभु होये, मुईं होइ दास।
तबे मोरे बाँधिया आनिवे निज पास।।

(पटाक्षेप)

या प्रकार सों—

समाज—

गौर प्रकाश करन हित, अद्वैत दृढ़ पन ठान।
बसै शान्तिपुर जायकै, को समझै गति आन।।
प्रगटाये अद्वैत हरि, हरि हरि करि हुँकार।
परचाये पुनि पुनि हरि, कीन्हे जग परचार।।

संकीर्तन रासारम्भ

इत विश्वम्भर महाप्रभु, वैष्णव भक्तन संग।
करैं संकीर्तन नित प्रति, भक्तिभाव बढै रंग।।
संकीर्तन निजघर करें, कभु निजजन घर जाय।
कृष्णनाम अरु भक्तिरस, प्रगटत गौराराय।।
अब सुनहु धीवास घर, नित संकीर्तन रास।
माघी शुक्ला एकादशी, कियौ गौर प्रकाश।।

(दृश्य-श्रीवास गृह। महाप्रभु, श्रीवास, मुरारि, मुकुन्द)

माघमास मंगल हरिवासर। भवन श्रीवास राजैं विश्वम्भर।।

संग श्रीवास मुकुन्द मुरारि। अन्तरंग निज जन सुखकारी।।
बोले गौर मृदु मधुबानी। गद्‌गद् कंठ दीन दु:ख मानी।।

(गाने के साथ अर्थ भी करते)

गौर-(पद-कान्हरा)-

सुनहु मंत्र को सार, भाई।
कृष्ण नाम आनन्द प्रेम रस, जीवन मूलाधार।।टेक।।१।।
आज हरिवासर शुचि रजनी, हरिजू के उरहार।
खोये बहुत सो, सोय नींद हम, अब तो लेहु सम्हार।।२।।
सब मिलि आज करौ प्रतिज्ञा, सत्य नेम व्रत धार।
हिलि मिलि कीर्त्तन हम सब करिहैं, नित प्रति निशि मझार।।
हरे कृष्ण हरे रामहि गायँगे, हरि मूरति उरधार।
न्हावें भक्ति-भागीरथी 'प्रेम' रीझैं कृष्ण मुरार।।

श्रीवास—

प्रिय गौरसुन्दर! संकीर्तन तो नित प्रति आप कर रहे और कराय रहे हो, कबहु अपने मन्दिर में, कबहु अपने मौसा आचार्य चन्द्रशेखर के गृह में और कबहु मो दास के आँगन में।

गौर-

हाँ! सो तो ठीक है परन्तु अब एक स्थान और एक समय निश्चित कर लैनो चाहिये। यदृच्छा, स्वेच्छा ते अधिक एक नियम को बन्धन श्रेयस्कर है।

श्रीवास-

अति उत्तम विचार है। तो आपही स्थान और समय को निश्चय कर देवैं।

गौर-

मेरे विचार में तो आपके गृह को जो यह आँगन है यही हमारे संकीर्तन-मण्डल के लिये सब प्रकार सों उपयुक्त रहैगौ। यहीं नित्य प्रति संध्या-उपरान्त हम सब सम्मिलित होवें और द्वय प्रहर रात्रि तक श्रीकृष्ण नाम एवं लीला-कीर्तन करयौ करें।

आपकूँ (ठहर कर) कछु असुविधा....कष्ट तो अवश्य.....

श्रीवास-

(बात काटते हुये) मोकूँ असुविधा और कष्ट? वैकुण्ठ ले जायवे के लिये विमान द्वार पर आवै और वामें बैठकै वैकुण्ठ जायवे में कष्ट होवै? प्रेम भक्ति को दिव्य हार पहिनायवे स्वयं श्री हरि आवैं और वाकूँ पहनवैं में गर्दन दूखै? यह संकीर्तन महामहोत्सव तो नित्य अमृतपानकारी अमरापुरी के अमर गणन कूँ हू दुर्लभ है। वे हू या भारत भूमि में जन्म लैकै हरिकथा मृत पान करवे और हरिनामाक्षर गान करवे कूँ लालायित रहैं है। इनके अभाव में वे स्वयं कूँ धिक्कारते भये कहैं हैं कि-

कवित्त-

लुट गये हाय हम, आय स्वर्गलोक यहाँ,
निशदिन बारौं मास, इन्द्रिन को उत्सव है।
अमृत ही पीवैं कथा, अमृत न पान करें,
अप्सरान संग रमैं, साधु संग दुर्लभ है।
लाख वर्ष जीये कहा, अन्त गिरैं औधे मुख,
मानुष तो मास छः में, पावें पद ध्रुव है।
ए स्वर्गहू नर्क सम, वो मर्त्यहू स्वर्ग जहाँ,
नित्य हरि गान 'प्रेम' महामहोत्सव है।

ऐसो जो देवतान कूँ हू दुर्लभ महामहोत्सव है, सो आज मेरे द्वार को अतिथि होनौ चाहै है! अहा हा!

कवित्त-

जग्यौ भाग आज ही, याचे विन चिन्तामणि,
द्वार आय मेरे सब, चिन्ता चहै हरन है।
जीवन सफल करि, महाफल दैन स्वयं,
कल्पतरु आय घर, वास चहै करन है।
नाम धुनि घोर जब, हरे कृष्ण हरे राम,
भक्त भगवान मिलि, नाचें गायँ धरन है।
बहै पद पद धार, प्रेमानन्द पारावार,
कूकर शूकर कीट, अधम हू तरन है।

अतएव हे कृपासिन्धो! अब आज एकादशी की पावन रजनी सों ही या संकीर्तन महामहोत्सव को श्रीगणेश कर दैवें और फिर कल सों नित्य वाही समय पै होयो करै तो मैं सर्व प्रकार सों कृतार्थ है जाऊँगो।

गौर-

परन्तु आपकूँ एक बात को विशेष प्रबन्ध करनो परैगो।

श्रीवास-

आप जो कछु आज्ञा करैंगे सो सब है जायगो।

गौर-

हमारी भक्तमण्डली के अन्तरंग जनन के अतिरिक्त बाहर के स्त्री-पुरूष कोइहू भीतर न आमन पावें यह प्रबन्ध करनौ परैगो तथा द्वार बन्द राखनौ परैगो।

श्रीवास-

जैसी आज्ञा प्रभो! परन्तु यदि बाहर के लोग कोई आय गये तो कहा कोई हानि है?

गौर-

उनकी नहीं, हमारी हानि है। कारण कि यह हमारो संकीर्तन एक मनोरंजन नहीं होयगो कि जामें क्षण भरकूँ मन बहलायवे के लिये जो कोई आयकै नाच-गाय लै। नहीं। यह संकीर्तन तो हमारो एक मुख्य साधन है और कृष्ण-प्रेम जैसे परम फल को साधन है। याके लिये चाहिये भाव। और भाव होय है जहाँ एक इष्ट और एक लक्ष्य होय है। एक चाह, एक व्यथा होय है। या प्रकार सों जब सब कीर्तनकारिन के मन, बुद्धि, प्राण, हृदय एक होयँ है तब ही भाव जमै है अर्थात् सजातीय संग में ही भाव उदय होय और वृद्धि होय है। विजातीय संग में भाव को संकोच होय है। और भाव बिना प्रेम असम्भव है, एक जन्म की तो कहा चलै-

कोटि जन्मेहू यदि करे संकीर्तन।
तबहु न पाय ये कृष्ण प्रेम धन।।

श्रीवास-

परन्तु भगवन्नाम कीर्तन के लिये तो शास्त्र में देश, काल, पात्र आदि को कोई विचार ही नहीं है। एक मूक और पशु कूँ छोड़कै मनुष्य मात्र को सामान अधिकार कह्यौ है।

गौर-

ठीक है। अधिकार समान है फल समान नहीं। जैसो भाव वैसो फल। सकाम भाव वारेन के लिये सामान्य रोग सों लगाय मुक्ति पर्यन्त छोटे-मोटे अनेक फल हैं। परन्तु यह सकाम कीर्तन है। सकामी और कृष्ण-कामी के भाव में कोई मेल नहीं है। याहि कारण सों हमारे संकीर्तन में सकाम भाव वारेन कूँ कोई ठौर नहीं है।

श्रीवास-

तो निष्काम संकीर्तन कैसो होय है प्रभो?

गौर-

केवल एक श्रीकृष्ण-प्रेम प्राप्ति के लिये श्रीकृष्ण नाम को आश्रय लैनो-यह निष्काम कीर्तन है। यह हू नामापराध ते बच करकै करै तबही कृष्ण-प्रेम प्राप्त है सकै है। नहीं तो जैसे मैंने अबही कह्यौ हौ कि-

कोटि जन्महू जदि करे संकीर्तन।
तबहु नहिं पाय ये कृष्ण प्रेम धन।।

श्रीवास-

तो निष्काम कीर्तन कैसे करयौ जाय है। याकी कोई रीति- नीति हू है कहा-

गौर-

हाँ है। सुनौ संक्षेप में-

तृणादपि सुनीचेन, तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिनो मानदेन, कीर्तनीयः सदा हरिः।।

तीन भाव के ठीक-ठीक बन पायवे पै ही निष्काम कीर्तन की सिद्धि होय है-

(१) पहलो भाव-अपने कूँ तृणहू ते अति तुच्छ समझनो

श्रीवास-

यासों कहा लाभ होय है?

गौर-

यासों अहंकार नष्ट होय है। अहंकार अर्थात् बड़प्पन ही अपराध की जड़ है। यह जड़ कट जाय है। और-

(२) दूसरो भाव है-वृक्ष ते हू अधिक सहनशील हौनो शान्त धीर हैकै सब कछु सहनौ।

श्रीवास-

यासों कहा लाभ है प्रभो?

गौर-

यासों कामना की जड़ संकल्प कट जाय है। तबही साँची निष्कामता आवै है। और-

(३) तीसरो भाव है- आप निराभिमानी हैकै ओरन कूँ मान दैनो-

श्रीवास-

याको लाभहू बतायवे की कृपा करैं प्रभो!

गौर-

यासों साँची दीनता आवै है और दीनता पै ही दीनानाथ तुरन्त रीझ जावैं हैं-

पद गाना भीम पलासी (तर्ज-राधेश्याम रामायण)-

हरिनाम कीर्तन सब ही करौ, इसमें सबका अधिकारी सही।
पर कृष्ण प्रेम की चाह करौ तो, तीन बात भी करौ सही।।१।।
पहले तो अपने को समझो, मैं तो कुछ भी हूँ ही नहीं।

तृणादपि सुनोचेन-

तिनका भी मुझसे बेहतर है, मैं तिनके से भी बुरा सही।।

(यासों अहंकार नष्ट होयगो कारण कि)

यह अहंकार यह मैं-मैं ही, सब अपराधों का मूल यही।
इस मैं को मिटाने के लिये, तिनका सा बन जाओ सही।।२।।

तरोरपि सहिष्णुना-

जो कुछ बीते सहो खुशी से, जैसे सहते वृक्ष सभी।
सुख दु:ख हानि लाभ सभी को, समझो हरिकी मौज यही।।३।।
सुख ही मिले हमें दु:ख न मिले,
यह चाह है जब तक दिल में कहीं।
तब तक कीर्तन भजन किसी का,
नहीं होगा निष्काम सही।।४।।
अपनी चाह पड़े चूल्हे में, प्यारे की चाह ही चाह सही।
इसलिये सीखो तुम भी प्यारे, वृक्षों से यह पाठ सही ।।५।।

(और तीसरी बात है)

अमानिनो मानदेन-

जब चाह मिटी निष्काम हुये, अहंकार मिटा अपराध नहीं।
जब ही दीनता सच्ची गरीबी, पद पद में झलकेगी सही।
तब आप वह मान से दूर रहेगा, औरों को देगा मान सही।

कीर्तनीयः सदा हरि-

जब ऐसा बनकर करे कीर्तन, रीझ मिले हरि प्रेम सही।।६।।
यासों द्वार बन्द कर देओ और आओ सब मिल करके संकीर्तन करें-

सम्मिलित संकीर्तन-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।
हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।
गोपाल गोविन्द राम, गोपाल गोविन्द राम।
गोपाल गोविन्द, गोपाल गोविन्द।।

(तुमुल संकीर्तन-नृत्य)
(नेपथ्य में कोलाहल)

अरे! किवाड़ खोलो! खोलो। हमहू देखेंगे-गायँगे।

समाज-

कीर्तन सुनि लोग बहु आवहिं। बन्द द्वार कोई जान न पावहिं।।
कोई भक्तजन कोई विद्वेषी। कोई पंडित कोई तर्क विशेषी।।
मन आवै जाके सोई भावहिं। धूरि उछारि भानु कहँ ढाँपहिं।।

(विद्वेषीजन-मुखोपाध्याय, चट्टोपाध्याय भक्तजन-संन्याल, घोष मो,शाय)

मुखोपाध्याय-

चाटुज्जे मों,शाय! देख्छो त, श्रीवास वामुनटि दुआर खोल छेना! आमरा कि ब्राह्मण नय। हम समाज के गुरु और फिर विद्वान् पण्डित-वेद पढ़वे पढ़ायवे तक को हमारो अधिकार है फिर संकीर्तन देखवे को हमारो अधिकार नहीं? यह हमारो अपमान है-घोर अपमान। यह हम कदापि नहीं सह सकैं हैं।

चट्टोपाध्याय-

कदापि नहीं मुकुञ्जे मो,शाय! कदापि नहीं! हम याको बदलो लेंगे और अवश्य लेंगे। बड़े भगत बनैं है। अरे! यहहू कोई भगवान् को भजन है कै भूत-प्रेत, डाकिनी-शाकिनी को पूजन है। भगवान् तो घट-घट व्यापी है। इनको तो ध्यान करनो चाहिये-आसन में बैठ, तनर स्थिर, मन स्थिर करकै। गधा की नांई रैंकनो और बन्दरन की नांई कुदकनौ-यहहू कोई ईश्वर-भजन है! यह तो जंगली कोल किरात भील को काम है।

मुखोपाध्याय-

बिल्कुल ठीक! भजन तो सतोगुनी क्रिया है-चंचल मन कूँ शान्त एकाग्र करवे को साधन है। और यह नाचनो, कूदनो, चिल्लानो, हाहा हूहू करनौ तो महा रजोगुणी तमोगुणी क्रिया है। यह मन कूँ शान्त नहीं पागल बनाय देय है। बाहरे इनको भजन।

चट्टोपाध्याय-

और फिर ब्राह्मण है कै नट-भाँडन की तरह नाचनो गामनो?

शास्त्र-विरुद्ध अनाचार स्वेच्छाचार-

तपो जपो योगपथो यथोचितो
हितो मखोऽपि क्व गतो न दृश्यते।

सरोदनैः नर्त्तन-कीर्त्तनैरिमे
वशी करिष्यन्त्यबुधा किमीश्वरम्।।

अहो! कलिकाल को प्रभाव! ब्राह्मणहू जप तप योग-याग त्याग करकै नट-भाँड- कलावन्त बन रहे हैं। अध:पतन की पराकाष्ठा!

मुखोपाध्याय-

और एक अत्यन्त निन्दनीय कर्म तो इनको पंचमकार सेवन है! यह लोभ कीर्तन के मिस सों किवाड़ बन्द करके माँस-मदिरा आदि को सेवन करैं हैं। जहाँ गुप-चुप को काम, वहीं पाप को धाम। यह श्रीवास वामुन को घर दुराचार, बामाचार को अड्डो है!

चट्टोपाध्याय-

याकूँ खोद करकै गंगा में बहाय दैनो चाहिये यह हमारे पंडित समाज के लिये महाकलंक और लोक-समाज के लिये एक भयंकर संक्रामक व्याधि है।

भक्त संन्याल-

(हाथ में डंडा) देखो मुखुज्जे, चाटुज्जे मो,शाय। आप लोग विद्वान् पण्डित है कै हू ऐसी-ऐसी मिथ्या पाप-कल्पना क्यूँ करौ हो? निर्दोष जनन के ऊपर मिथ्या कलंक क्यूँ लगाओ हो। यह तो महापराध कर रहे हो।

चट्टोपाध्याय-

ओहो भगतजी! धन्यावाद या उपदेश के लिये! हम तो निन्दक ही सही आप तो भ-ग-त जी हैं न? फिर भगतजी! आप भीतर क्यूँ नहीं जाय सकै। बाहर बैठे क्यूँ झख मार रहे हो?

भक्त घोष-

घर वारेन की मौज-भीतर घुसने दें न दें। यासों हम बाहर बैठे-बैठे ही हरिनाम सुन-सुन कै आनन्द लै रहे है। आपहू आनन्द लैओ! मिथ्या निन्दा कर-करकै क्यों पाप कमाय रहे हो?

संन्याल-

और निन्दा करनो तो मल खायवो जैसो ही-सूअर को काम है। कहा आप श्रीमान ने यह श्लोक नहीं पढ़यौ-सुन्यौ है कि-

निन्दकान् शूकरांश्चैव सफलान् निर्मिमे हरिः।
शुद्धयन्ति शूकरैर्ग्रामाः साधवश्चापि निन्दकैः।।

छन्द-

दो ही जीवों को ईश्वर ने, सफल बड़े बनाये हैं।
नित उठ करते साफ और को, मैला आपही खाये हैं।।
एक तो करता साफ बस्ती को, दूसरा करता साधु को।
एक को कहते सूअर सूअर, दूजे निन्दक कहाये हैं।।

अतएव सूअर के संगामी मत बनो भट्टाचार्यो!

दोनों पण्डित-

(क्रुद्ध होकर) अरे! हम सूअर नहीं! सूअर होयगो तू, तेरो बाप, तेरो दादा-परदादा-तेरे.....

संन्याल-

(हाथ का डंडा दिखाते हुये) चुप करौ मूढ़ पडितों! जीभ सम्हार के बोलो! नहीं तो यह देखो कहा है। मैं कोरो भगत ही नहीं 'सखत' हू हूँ। तुम जैसे सूअरन के हाँकवे के काजे ही मेरे हाथ में यह सोठाराम शास्त्री है। यासों चुप बैठके सुनो कै रास्ता पकरौ। नहीं तो आओ, यासों शास्त्रार्थ करौ।

(डंडा उठाता है)

दोनों पण्डित-

(भागते हुये) १. ओ हो यह दिमाग, २. यह गुस्ताखी १. तेरे इन हाथों को बंधवाय कै तुड़वाय न दऊँ तो कहनो!, चलौ काजी के पास। २. चलकर इन पाखंडिन को भंडा फोड़ कर देओ और इनके हिमायती समेत इनकूँ मजा चखाय देओ।

(दोनों चले जाते है)

संन्याल-

अच्छो भयो। पिंड छूटयौ।

'दुष्ट संग जिन देय विधाता। ताते भलो नरक को वासा'।

घोष-

न आप भगवन्नाम सुनें, न औरन कूँ सुनन दैवें। अब आनन्द सों सुनैंगे। बड़े भाग्य सों भगवन्नाम सुनवे कूँ मिले है।

समाज (सोरठा)-

तिनमें जे सुकृत जन, बैठि छार सुनैं नाम।
कहत जु परस्पर जन, परै रहौ या द्वार पै।।

घोष (दोहा)—

द्वारै धनी के पड़े रहो, धक्का धनी के खाय।
कबहु धनी निवाजि है, जो घर छाँड़ि न जाय।।

भैयाओ! भिखारी द्वार तक आय सकै है। इतनो ही जीव के हाथ में है। आगे दाता की मौज! मुठ्ठी खोलै न खोलै।

संन्याल-

हाँ भैया! यात्री घाट तक ही जाय सकै है। आगे माँझी की मौज! नाव लावै न लावै।

नारायण हरि कृपा की तकत रहे नित बाट।
जानहार जिमि पार को, निरखत नौका घाट।।

अतएव भैयाओ! यही घाट पै परै रहौ। यहि द्वार पर अड़ै रहौ। कबहू तो कृपा होयगी।

नाम सुनहु अरु विनती करहु। सत्य सनेह फल फलिहै कबहु।।

समाज-

कोई कहै जग उद्धारन कारन। हरि अवतार निमाई धारन।।

(यासों जगत् के कल्याण के लिये)

नगर नगर घर घर प्रति जैहैं। नृत्य संकीर्तन निज दरसैहैं।।
आस-अभिलाष या विधिकरहीं। भाग्यवानजन द्वार न तजहीं।।

(महाप्रभु एवं भक्तमंडली का भीतर से निकलना)

प्रात होत प्रभु निज घर जावहिं। दर्शन करि तव नैन सिरावहिं

जनता १-

जय हो गौरसुन्दर की। जय हो नदिया चाँद की।

२-प्रभो! हम दीन-दुखियान पै हू कृपादृष्टि करें।

३-हमकूँ हू हरिनामामृत पान करावै। हम अभागे कहा वंचित रहेंगे नाथ?

४-हमकूँ कहा आपके चरण-समीप ठौर नहीं मिलैगो।

(सब दण्डवत् प्रणाम करते है)

गौर-

हरि बोल!

जनता-

हरि बोल!

गौर-

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कालौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।।

दादरा-

हरि को नाम, हरि को नाम, हरि को नाम ही केवल।
कलि में नहीं है नहीं है, नहीं है अन्य साधन बल।।
यासों भैयाओ! तुम सब-

अपने अपने भवन नित, पिता पुत्र पति नारि।
सब मिलि करहु कीर्तन, नाचहु दै करतारि।।

परन्तु याके संग-संग एक बात और हू करनौ-

तन सों कछु सेवा करौ, मन ते तजो अभिमान।
(तब) मुख ते हरि नाम करौ, होय प्रेम कल्यान।।

संकीर्तन-

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।

जनता-

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।

(कुछ समय संकीर्तन) पश्चात् महप्रभु का प्रस्थान। पीछे पीछे जनता)

समाज-

इहि विधि कीर्तन गौर सिखावैं।
नदिया कीर्तनमयी बनावैं।।

नदिया नगर में प्रेम की, नदी बहै चहुँ ओर।
हरि कीर्तन नित मत्त मन, नहिं जानै निसिभोर।।
निगम अगम तप ज्ञान सभी को।
सार संकीर्तन रास हरी को।।
अनुसरि महाजन हौं कछु गायो।
रास संकीर्तन गौर रचायो।।
अजहुँ गौर लीला नित करहीं।
भाग्वान कोइ कोइ लखि सकहीं।।
एक कृपा पै सहज विश्वासा।
करिहैं गौर कबहु पद दासा।।
जय जय गौर दीन हितकारी।
करहु कृपा हौं 'प्रेम' भिखारी।।

धुन-

जय शचीनन्दन जय गौर हरी।
विष्णुप्रिया प्राण धन नदिया बिहारी।।

इति संकीर्तन रासारम्भ लीला।

❖

यौवनामृत लहरी **दशम कणामृत**

प्रथम आत्म प्रकाश

१-कलियुग में भक्ति, विवेक, वैराग्य की दयनीय दशा

२-श्रीवास को अभय-प्रदान नृसिंह रूप प्रकट कर

मंगलाचरण-

जय जय श्रीगौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
अद्वैत गदाधर श्रीवासादि भक्तवृन्द।।

(प्रवेश गाते हुए दो भ्राता विवेक-वैराग्य)

विवेक-वैराग्य-पद-आसावरी-३ ताल-

कहाँ जावें कहाँ पावें हाय।
मीत बिहूनो सब जग सूनो, ठौर कहाँ पावें हाय।। टेक।।

शौच कहाँ है सत्य कहाँ है, शान्ति कहाँ, त्याग कहाँ है क्षान्ति कहाँ हे।
दया कहाँ समता मैत्री कहाँ पावें।। हाय।।
भ्रात भगिनी सब बुन्धु हमारे, प्रिय परिवार परिजन सारे।
बिछुरे सब कलियुग के मारे, 'प्रेम' कहाँ पावें।। हाय।।

विवेक-

भैया वैराग! कलियुग ने मो विवेक के लिए कहूँ कोई ठौर नहीं राखी है। गृहस्थ में, विरक्त में, बस्ती में, वन में, राज में, समाज में, सर्वत्र कलिराज को विस्तार दिन प्रतिदिन बढ़तो ही जाय रह्यौ है।

वैराग्य-

दादा विवेक! जब आपकूँ ही ठोर नहीं तो फिर मो वैराग्य कूँ कौन मुँह लगावै है। वैराग्य तो सदा विवेक को अनुगत सेवक है। अत: जहाँ मूल विवेक ही नहीं वहाँ वैराग्य वृक्ष कहाँ सों उपजैगो।

विवेक—

भैया वैराग! सत् कूँ असत् और असत् कूँ सत माननो- अमृत कूँ विष और विष कूँ अमृत माननो-दूध कूँ पानी पानी कूँ दूध माननो-यही कलिकाल को विवेक है।

वैराग्य—

दादा! विवेक तो हँसन कोही काम है। वही क्षीर कूँ पान कर नीर कूँ त्याग देय है। सो हँस अब कहाँ अबतो जहँ तहँ काक, उलूक, बक, मानस सकृत मराल। याहि कारण सों बुरी-बुरी वस्तुन सों तो प्यार बढ़तो जाय रह्यौ है और अच्छी वस्तुन सों घटतो जाय रह्यौ है।

विवेक—

या उलटे कर्म-धर्म को नाम ही तो तामस धर्म है। शास्त्र सन्त, पुकार-पुकार कै कह गये हैं कि कलियुग में तामस धर्म ही छाय जायगो सो पदे-पदे प्रत्यक्ष है।

तामस धर्म सब करहिं नर, जप तप व्रत मख दान।
देव न वरषहिं धरनि पै, बोय न जमहिं धान।।

(राम च० मा०)

वैराग्य–

हाय दादा! हमारे वर्णाश्रम धर्म के पालन सों लोक–परलोक दोनों सिद्ध है जायँ है। या लोक में प्रिय पदार्थ और परलोक में स्वर्ग या मुक्ति दोनों मिल जाय है। अभ्युदय एवं निःश्रेयस् दोनों प्राप्त है जाय हैं। परन्तु अब तो हमारे या वर्णाश्रम धर्म को ह्रास है गयो है।

विवेक–

ह्रास नहीं नाश है गयो, मृत्यु है गई है। सारतत्त्व निकस गयो है, हाड़ पंजर ही रह गई है।

वैराग्य–

यह हाड़–पंजर, यह ठठरी हू अधिक दिन नहीं टिक सकैगी। चरमराय कै चूर–चूर है जायगी।

विवेक–

हाय भैया! स्वयं विष्णु भगवान् के श्रीमुख से उत्पन्न समाज के गुरु ब्राह्मणों की कहा दुर्दशा है कि–

कवित्त—

पाँच कर्म गये रह्यो छटो दान लैनो एक,
काँधे पै जनेऊ रह्यौ, विप्र की निशानी है।
(और भुजा सों उत्पन्न क्षत्रिन की यह दुर्दशा है कि)

कवित्त–

राज गयो तेज गयो, नाम ही रजपूत रह्यौ
जोतैं हर कै चाकरी, करैं दरबानी है।
(और जंघा सों उत्पन्न वैश्य की यह करनी है कि)

कवित्त—

चूसें रक्त दुनिया को, बनैं महादान वीर,
वंश तुलाधार बूडयौ, जात बिन पानी है।
भारत गोपाल भूमि, बहतो गोरस जहाँ,
वही आज 'प्रेम' हाय, गोरक्त सों सानी है।।

वैराग्य-

और विष्णु भगवान् के श्रीचरण सों उत्पन्न शूद्रन कूँ तो आपने छोड़ ही दियो।

विवेक-

सावधान वैराग! सावधान! 'शूद्र-शूद्र' नाम लैओगे तो युगराज कलिराज भयंकर नाराज है जायेंगे और कठोर दण्ड देंगे। कलिराज की हू जाति शूद्र है। यासों अपने राज में अपनी जाति विरादरी के भाई भलीजान कूँ उच्च राज्याधिकारी, मुल्क के मालिक बनाय दिये हैं। यासों उनके तो गुणगान करौ, जय जयकार करौ। 'शूद्र' शब्द जिह्वा पै तो लाओ ही नहीं, अपनी बुद्धि सों हू भूल जाओ, शब्दकोष में ते निकार देओ-

कवित्त-

नाम शूद्र लेओ मति, दंड पाओगे भारी
मालिक वे मुल्क के हैं, राज अधिकारी हैं।
विधि के विधाता कहो, संविधान दाता कहो
न्याय के व्याख्यता कहौ, जय जयकारी है।
व्यास पराशर मनु, ऋषि मुनि विप्रन मिलि
जुल्म ज्यादती बेहद, शूद्रन पै कारी है।
ताते अब विप्र धर्म, विप्र शास्त्र जाति पाँति
मेटि बदला लैवे कूँ, कलि करी तैयारी है।।

वैराग्य-

दादा! जैसे आज विवेक के नाम पै अविवेक चल रह्यौ है वैसे ही त्याग के नाम सों भोग और वैराग्य के नाम सों विषय-राग चल रह्यौ है। जैसे आपकूँ चारों वर्ण में कहूँ ठौर नहीं है, वैसे ही मो वैराग्य कूँ हू चारों आश्रमन में कहूँ ठिकानो नहीं-

कवित्त-

असक्त बने साधु तो, निर्धन ब्रह्मचारी बने
सधै नहीं तन मन, विषय लिपटानौ है।
बहाय दीनै गृहस्थन, दया दान संयम व्रत
बढ़ामनौ कुटुम्ब ही, धर्म कर्म मानौ है।

केश रह्यौ साधुन को, भेष ही संन्यासिन को
त्यागिन को कर्म मठ, मन्दिर बनामनौ है।
धर्म अर्थ काम मोक्ष, पुरुषार्थ चार नहीं
पुरुषार्थ एकै 'प्रेम', पैसा कमावनौ है।।

धन्य कलिराज! आज धर्म अर्थ काम मोक्ष भगवान् की सेवा में नहीं, तुम्हारी चाकरी में ठाड़े हैं। सर्वत्र तुम्हारो ही अखण्ड साम्राज्य है अतएव-

विवेक-वैराग्य (पूर्वपद)-

कहाँ जावें कहाँ पावैं हाय।
मीत बिहूनो सब जग सूनो, ठौर कहाँ पावें हाय।।
(नेपथ्य में से आकाशवाणी)

जहाँ भक्तिदेवी भक्तन की संकीर्तन मंडली में नृत्य कर रही है, वहीं जाओ। वहीं तुम्हारे भ्राता-भगिनी सब मिल जायँगे।

विवेक-

परन्तु वे नृत्य कहाँ कर रहीं हैं-बताय देओ कृपया।
(प्रवेश भक्तिदेवी पीतवसना)

भक्ति-

नवद्वीप में, नवधा भक्ति की पावन नगरी नवद्वीप में भक्ति नृत्य कर रही है और कहाँ?

विवेक-

अहा! ये तो स्वयं भक्ति देवी प्रगट है गईं। मातेश्वरी! यह विवेक आपके श्रीचरणन में प्रणाम करै है।

भक्ति-

भद्रमस्तु वत्स!

वैराग्य-

अम्बे! वैराग की प्रणति हू स्वीकार होवै।

भक्ति—

मंगलमस्तु वत्स!

वैराग्य—

हमारे लिये मंगल कहाँ माँ! हमारे लिये तो चारों ओर ज्वाला ही ज्वाला है।

विवेक—

हम आश्रयहीन अनाथ हैं अम्बे!

वैराग्य—

सर्वत्र अपमानित हैं, विताड़ित है!

भक्ति—

नहीं-नहीं। विवेक-वैराग कूँ आश्रय दैवे वारे, आदर-सम्मान करवे वारे तो अनेक हैं।

विवेक—

बताओ माँ बताओ! कौन-कौन है?

वैराग्य—

प्रथम तो असंख्य कथावाचक विद्वान् पण्डित हैं। विवेक-विचार के अक्षय-भंडार तो वे ही है।

विवेक-

(खेद पूर्वक) हाय माँ! पण्डितजन तो मो विवेक कूँ अपने वाग्जाल में ऐसो उरझाय-अटकाय दै हैं कि हृदय तक पहुँचवे ही नहीं देय हैं। फिर मैं बसूँ तो कहाँ बसूँ।

वैराग्य—

और मों वैराग कूँ तो पोथी पत्रान में ही बाँधकै धर देय हैं। कथा-प्रवचन के समय खोल देय हैं और फिर बाँध देय है अपने संग तो कभू राखैइ नहीं हैं।

भक्ति—

पण्डितन में नहीं तो मुंण्डितन में चले आओ। विवेक वैराग के तो वे जीवन्त मूर्त्ति ही होय हैं।

विवेक—

मुण्डितन ने तो हम दोनन कूँ मान–प्रतिष्ठा की वेदी पै बलिदान चढ़ाय दियौ है।

भक्ति–

तो परमहंस मंडलेश्वरन के आश्रमन में चले जाओ।

विवेक–

वहाँ के प्रवचनन की झड़ी में तो हम बहते डोलें हैं। यहाँ हमारे पाँव धरती पै टिक नहीं सकें हैं।

भक्ति–

तो अवधूत मंडलिन में निवास करौ।

विवेक–

वे तो अपनी घोटा–छानी में ही अलमस्त परै रहैं हैं। हम कंगलान की ओर तो कृपा–दृष्टि ही नहीं करैं हैं। आँख उठाय कै हू नहीं देखैं हैं।

भक्ति—

तो नागान की जमात में सुख सों विचरयौ करौ।

वैराग–

वे तो हमकूँ हाथी और ऊँटन पै लादते डोलें हैं। सो लदते–लदते हमारी बुद्धि धूर खाय गई है। यासों हम तो दूर ही रहैं हैं।

भक्ति–

तो साधुन के अखाड़ेन में चलै जाओ।

वैराग्य–

वहाँ उनके झण्डा और निशानन के बोझ हमसों ढोयो नहीं जाय है। उनके नीचे हमारी हड्डी–पसली चूर–चूर है जाय है।

भक्ति–

तो तपस्विन की धूनी ताप्यौ करौ।

वैराग्य-

तापनो कहाँ वहाँ तौ बैठयो हू नहीं जाय है। चिल्मन की धुआं धार सौं दम घुटै है और चिमटान की मार सों होश गुम है जाय है। तपस्विन कूँ तो हम दूर सों ही दण्डवत् करें हैं।

भक्ति—

तो विरक्तन की कुटियान में डेरा जमाय दैओ।

वैराग-

कुटिया नहीं माँ कोठी! कालोनी! वहाँ हमारो प्रवेश निषेध है माँ!

भक्ति-

तो योगीराज की गुफान में घुस कै रहौ।

विवेक-

वहाँ तो ऋद्धि-सिद्धि घुसी बैठी है। उनके आगे हम स्र्वस्वहीन कूँ कौन पूछै है!

भक्ति—

तो फिर निर्जन वन में स्वच्छन्द विचरयौ करो।

विवेक-

वन तो कट-कटकै भवन उपवन बन रहे हैं। वहाँ विचरनो तो कहा घुसनो हू कठिन है।

भक्ति—

तो बड़े-बड़े पावन आश्रम तो खुले हुये हैं।

विवेक—

गृहस्थिन के लिये खुले हुये हैं माँ, विरक्तन के लिये नहीं। 'गृहपायेष्वाश्रमेषु' (भाग०) आश्रम गृहस्थिन के भवन बने भये हैं।

भक्ति—

तो तीर्थ-धाम में निवास कर्‌यौ करौ। वे तीर्थ सब विवेक-वैराग्य-त्याग के ही तो महान् केन्द्र हैं।

वैराग—

क्षमा करनौ माँ! तीर्थ अब त्याग-वैराग के नहीं विषय-भोग के केन्द्र हैं। मायापुरी हैं, कलिपुरी है वहाँ तो हमारी छाया हू प्रवेश नहीं कर सके है।

भक्ति—

तो छोड़ो बाहर यत्र-तत्र भटकनो। भगवान् के निज धाम मन्दिरन में चले जाओ। शास्त्र इनकूँ निर्गुण दिव्य देश कहै हैं। वही तुम्हारे लिये निष्कण्टक स्थान है।

वैराग—

हाय माँ! भगवान् को घर हू अब हम कंगालन के लिये नहीं, धनवानन के लिये है। आदर सम्मान तो उनको होय है। हम कूँ तो धक्का मिलैं हैं।

विवेक—

हाँ माँ! समदर्शी सर्वपिता भगवान् के निज मन्दिर में इतनी विषमता है, इतनो भेदभाव है, रागद्वेष है, है कि हम विवेक-वैरग्य की तो वहाँ पद-पद में, क्षण-क्षण में हत्या ही हत्या है। यासों अब और कोई ठौर आपकी दृष्टि में होय तो बतावैं।

वैराग—

हाँ माँ! हम दोनों भैयान ने बस्ती-वन सब छान डारे परन्तु हमकूँ कोई निर्द्वन्द्व स्थान कहूँ न मिल्यौ। नगर में हमारी हाँसी तो वन में हमारी फाँसी है। साधु और गृहस्थ सबन ने हम विवेक वैराग कूँ माया महारानी की पिटारी में बन्द कर दियौ है।

विवेक-वैराग—गाना-पद-यथाराग—

यह नट की-सी सब माया है।
उदर भरन या दाम नाम हित, नाना स्वांग रचाया है।।१।।
साज नकल सब वस्तु नकल सब, खेल नकल मचाया है।
नशा नकल का ऐसा छाया, खेल असल भुलाया है।।२।।
शम दम जप तप तीरथ व्रत सब, हरि हित हेत ही गाया है
हरि हीरा के बदले इनसे, विषय काँच कमाया है।।३।।
जंगल बस्ती साधु गृहस्थी, एक ही रंग रंगाया है।
भेदभाव सब द्वैत मिटा 'प्रेम', माया द्वैत ही छाया है।।४।।

भक्ति—

तो वत्स विवेक-वैराग! एक शुभ सम्वाद सुनौ। हमारे-तुम्हारे दु:ख को दूर करवे के निमित्त ही परम दयालु भगवान् गौरचन्द्र अवतीर्ण भये हैं।

विवेक—

प्रयोजन कहा है मातेश्वरी!

भक्ति—

सुनो! कलियुग में प्राय: समस्त कर्म धर्म निस्सार है। केवल एक भागवत धर्म ही कलि को अलंकार है। अतएव मोकूँ कृतार्थ करवे के लिये स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र भक्त रूप सों प्रचछन्न है कै अवतीर्ण भये हैं।

वैराग—

तो या समय वे कहा कार्य कर रहे हैं?

भक्ति—

या समय वे बंगदेश के नवद्वीप पुरी में श्रीहरिनाम-संकीर्तन कर रहे और करवाय रहे हैं।

विवेक—

कहा उपदेश द्वारा अथवा ग्रन्थ लिख करकै।

भक्ति—

वत्स! उपदेश करनौ एवं शास्त्र-ग्रन्थ लिखनौ तो आचार्य वर्ग को कार्य होय है। गौरचन्द्र आचार्य नहीं वे तो स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र हैं। उनके तो शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध-मात्र सों ही जीव मोहित और उन्मत्त है जाय है।

विवेक—

उनको रूप कैसो है अम्बे?

भक्ति—

'आनन्द एव भगवतो रूपम्' आनन्दमय भगवान् को रूप आनन्द ही है। जा रूप के दर्शन सों परमानन्द को उदय होय है वही भगवान् को रूप है। आनन्द में ही उनके रूप के दर्शन होय हैं और उनके ही रूप के दर्शन

सों आनन्द होय है। आनन्द और रूप परस्पर सापेक्ष हैं। परन्तु यह रूप और यह आनन्द प्राकृत रूप और आनन्द सों विलक्षण होय है।

वैराग—

मातेश्वरी! आपकूँ तो भगवान् गौरचन्द्र ने आश्रय दै कै कृतार्थ कर दियौ। कहा वे मो वैराग्य कूँ हू आश्रय दैंगे? कृतार्थ करैंगे?

भक्ति—

अवश्य! परन्तु उपयुक्त समय पै ही। या समय वे गार्हस्थ्य-धर्म कूँ प्रगट कर रहे हैं। आगे चलकै वे विरक्त धर्म कूँ हू प्रकाशित करेंगे तब उनको परमाश्रय पायकै तुमहू कृतार्थ है जाओगे। अतएव चिन्ता छोड़ो। आनन्द मनाओ।

गाना (पद-दादरा)—

कुदिन कुचाल गये हैं लाल, सुदिन सुकाल आये हैं।
व्रज बिहारी नन्दलाल हरि गोपाल आये हैं।।१।।
कलिकराल जीव बेहाल देखि दयाल आये हैं।
कृष्णनाम मंगलधाम संकीर्तन रास लाये हैं।।२।।
सार को सार परमाधार नाम कृष्ण गाये हैं।
नाम जो कृष्णनामी सो कृष्ण, कृष्ण ही बताये हैं।।३।।
नाम में ज्ञान नाम में ध्यान, नाम में भक्ति गाये हैं।
सेवा शान्ति दया क्षांति, नाम के संग ही आये हैं।।४।।
मंत्र है नाम गुरु है नाम, धाम परात्पर गाये हैं।
नाम आराध्य 'प्रेम' साध्य, कृष्णचैतन्य गाये हैं।।५।।

(गाते-गाते तीनों का प्रस्थान)

श्रीवास को अभय दान

समाज (दोहा)—

गौरहरि श्रीवास घर, रचैं संकीर्तन रास।
कृष्णनाम गुनगान नित, नवनव चरित प्रकाश।।

कीर्तन करत दिवस चलि जावै। रैन प्रभात कबहु ह्वै आवै।।
यह न शक्ति जीव की होई। नाच गाय सकै निसदिन कोई।।
प्रेम देव जब देह मधि आवैं। तन मन प्राणन मत्त नचावैं।।
सोई प्रेम जहँ धरै शरीरा। रस बरसाय हरै तन पीरा।।

को कहि सकै तहँ आनन्द अवधि। जन जन उर बहै प्रेम पयोधि
ज्यूँ ज्यूँ नदिया नगर में, बाढ़ै कीर्तन जोर।
त्यूँ त्यूँ खल निन्दक हृदय, उठै व्यथा मरोर।।
नाना भाँति सों दूषहिं, देहिं मिथ्या अपवाद।
गारी देयँ युगल करैं, करैं जाय फरियाद।।
एक दिवस सुरसरी वर तीरा। विहरत प्रभु संग भक्त भीरा
(दृश्य—गंगा तट—प्रवेश महाप्रभु भक्तमंडली सहित)
अनुपम सुन्दर गौर कलेवर। पीत बसन ताम्बूल अधर वर।।
चन्दन चर्चित अंग मनोहर। दर्शन भौर परम मंगल कर।।
नमत गंगहिं आप विश्वम्भर। भक्ति भाव परम उर अन्तर।।

महाप्रभु—

(हाथ जोड़ गंगा को प्रणाम करते। भक्त अनुसरण करते)

गंगा-स्तुति—

देवि! सुरेश्वरि! भगवति! गंगे!
त्रिभुवन तारिणि! तरल तरंगे।
शंकरमौलि निवासिनि! विमले!
मम मतिरास्तां तव पद कमले।।१।।
हरिपदपद्मविहारिणि! गंगे!
हिमविधुमुक्ताधवलतरंगे!
दूरीकुरु मम दुष्कृति भारं
कुरु कृपया भवसागर पारम्।।२।।
तवजलममलं येन निपीतं
परमपदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे! त्वयि यो भक्तः
किल तं द्रष्टुं न यम शक्तः।।३।।
तुव जल निर्मल पान कियो जिन
पायो परमपद निश्चय ही तिन।
माँ गंगे! तुव भक्त जो होवै
समरथ नहीं यम उसे देख लेवै।।४।।
पुण्ये! धन्ये! मुनिवर कन्ये!
बारम्बार नमो नमो चरणे।

पान करौं जल, गान करौं गुण,
पाप ताप हरि करौ निर्मल मन।।५।।
(गंगाजल मस्तक पर चढ़ा-पान करता एवं प्रणाम करता)
(प्रवेश विद्वेषी पं० मुखोपाध्याय, चट्टोपाध्याय)

समाज (दोहा) —

पंडित द्वेषीजन तहँ, आय बनावहिं बात।
राज-रोष सुनायकै, भय उपजावन चात।।

चट्टोपाध्याय—

पण्डित निमाई! तुम तो यहाँ गंगा-तट पै बड़े निश्चिन्त निर्भय विचर रहे हो!

मुखोपाध्याय—

छैल छबीले बने भये राजकुमार जैसे!

गौर—

(मुस्कराते हुये) तो चिन्ता-भय ही काहे बात की?

मुखोपाध्याय—

तुम तो बड़े ही भोरे-भारे हो। दिन-रात न जानै कहा भाव में मस्त रहौ हो। राज के हलचल की कछु खोज-खबर ही नहीं राखौ हो। परन्तु हमकूँ तो बड़ो भय ने आय दबायो है।

गौर—

कहा भय है ऐसो? मैं हू सुन सकूँ हूँ कै नहीं!

चट्टोपाध्याय—

क्यूँ नहीं! तुमकूँ सुनायवे कूँ ही तो हम आये हैं।

गौर—

तो आज्ञा करौ पंडित जी!

चट्टोपाध्याय—

तो यह जो तुम श्रीवास के घर में रात के समय यह......यह......यह......कहा कहै वाकूँ........सं.......सं

गौर—

संकीर्तन!

चट्टोपाध्याय—

हाँ हाँ संकीर्तन की धमा-चौकड़ी मचाऔ हो न, तो तो वाकूँ सुनकै· ......

मुखोपाध्याय—

चुप क्यूँ है गये? कह देओ न कि नवाब की फौज आय रही है! द्वै नौकान में भरकै फौज। यवन! म्लेच्छ!

गौर—

काहे कूँ आय रही है?

मुखोपाध्याय—

पकड़वे कूँ!

गौर—

कौन कूँ!

मुखोपाध्याय—

हम सबन कूँ! और साँची-साँची कहैं तो तुमकूँ।

गौर—

तो मैं कहा करूँ?

चट्टोपाध्याय—

पलायनम्! पलायति स जीवति! भाग जाओ नवद्वीप छोड़कै। तुमहू बच जाओगे और हमहू।

गौर—

जी! यह तो मोपै होनौ कठिन ही है।

चट्टोपाध्याय—

तो फिर हमकूँ स्पष्ट ही तुम्हारो नाम लै दैनो ही परैगो। तुम ही या ऊधम-उत्पात के मुखिया हो। तुम्हारे पीछे हम नवद्वीप वासी क्यूँ पकरै जायँ!

मुखोपाध्याय—

गेहूँ के संग घुन काहे कूँ पिये जायँ।

गौर—

तो बड़े आनन्द सों मेरो नाम लै दैनो।

मुखोपाध्याय—

तो तुमही क्यूँ न मान जाओ। द्वै-चार दिना के लिये कहूँ बाहर चले जाओ! तुम तो दिग्विजयी-विजयी पण्डित हो। तुम्हारे लिये कहा देश और कहा विदेश! जहाँ जाओगे वहीं पुजोगे। विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।

चट्टोपाध्याय—

और तुम तो केवल पण्डित ही नहीं, वैष्णव भक्तहू हो धर्मनीति के ज्ञाता हो। धर्मनीति कहै है—

त्येजेदेकं कुलस्यार्थे, ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे, आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्।।

या नीति के अनुसार नवद्वीप की भलाई के काजै तुमकूँ अन्यत्र चल्यौ जानौ चाहिये। धर्मनीति पै चलकै हमारी रक्षा करनौ तुम्हारो साधु कर्त्तव्य है।

गौर—

(मुस्कराते हुये) धन्यवाद या धर्मोपदेश के ताँई। परन्तु मैं तो एक क्षुद्र जीव हूँ। धर्म को भार ढोयवे की सामर्थ्य मोमें नहीं है!

मुखोपाध्याय—

तो देखौ निमाई पण्डित! नवाब के सिपाही तुमकूँ पकरि कै लै जायँगे और न जानै कहा-कहा कष्ट दैंगे। यासों हमारे लिये नहीं तो अपने लिये ही भाग जाओ। और अपनी जान बचाओ!

गौर—

अजी! वे मोकूँ कष्ट नहीं देंगे—आदर देंगे, बड़ो आदर देंगे। यहाँ नदिया में आप जैसे बड़े-बड़े पण्डित सैकड़ान-हजारन हैं। आपके बीच में मैं तो एक छोटो सों पण्डित हूँ। यासों यहाँ कोई मेरो भाव ताव नहीं है परन्तु नवाब के दरबार में मेरो खूब आदर सत्कार होयगो। वासों नवद्वीप को हू नाम होयगो और आप सबन को हू माथो ऊँचो होयगो और नाक हू ऊँची होयगी।

चट्टोपाध्याय—

(गर्म होकर) ओह! यह व्यंग! यह तानो!

मुखोपाध्याय—

यह ऐंठ! यह अकड़! भलाई करते बुराई आवै। होम करते हाथ जरै। याको फल भोगनो परैगो निमाई पण्डित! फौज के दर्शन करके यह हेकड़ी हवा है जायगी!

चट्टोपाध्याय—

यह पान चबाय, केशन में तेल डार, गरे में हार पहनकै छैल-छबीले सजवे को रंग-ढंग सब उड़ जायगो! अरे अबहू मान जाओ। अबहू समय है भाग जाओ और जान बचाओ।

गौर—

कहा करूँ पण्डित जी! मेरी तो गति-मति सभी उल्टी हैं! क्षमा करौ मोकूँ!

चट्टोपाध्याय—

(सिर हिलाते हुये) विनाश काले विपरीत बुद्धिः चलौ जायँ मुकुज्जे मो'शाय! हम समझाय चले आगे इनकी मति जानै।

गौर—

जैसी प्रभु की इच्छा! नमस्कार।

दोनों—

नमस्कार! नमस्कार!

(चले जाते हैं। जाते-जाते परस्पर में)

चट्टोपाध्याय—

मुकुज्जे मो'शाय! वार तो खाली ही गयो। डराय करकै भगाय न सके!

मुखोपाध्याय—

बड़ो बाँको शिकार है! डरवे वारो छोरा नहीं है!

चट्टोपाध्याय—

वह काजी-पाजी हू तो कछु नहीं करै है। नित्य शिकायत जाय रहीं हैं। तौहु चुप बैठ्यौ है!

मुखोपाध्याय—

चलौ फिर चलैं वाके पास। अबकै इनकी पोप-लीला को भंडा-फोड़कर दैंगे। तबही काम बनैगो (चले जाते हैं)

(पटाक्षेप)

समाज (चौपाई)—

नदिया घर घर चली चबाई। पकरन आवत फौज निमाई।।
दुर्जन सुनि सुनि हिय हरषावहिं। निर्भय विहरत प्रभु नदियाहिं
अनुचर भक्त सकल घबराये। पंडित श्रीवास अति भय पाये।।
भक्त प्रान हैं गौराराई। संकट प्रान पै सह्यौ कसजाई।।
अन्तर्यामी गौर कृपाला। आरति हरन जनन प्रतिपाला।।

(दृश्य—गंगा तट—महाप्रभु-भक्तजन बैठे हैं)

गौर—

(स्वगत) ओह! श्रीवास आदि भक्तजन सब मेरे लिये बड़े ही घबराय रहे हैं। उनको भय कैसे दूर होय?

समाज (चौपाई)—

बैठि विचारत प्रभु उपाई। विचरत गाय तहाँ कछु आई।।

(गौओं का आना)

अनुकरण—

जूझें रँभावें चहुँदिशि धावें। दौरें पूँछ उठाय मन भावें।।
गौर हरि ढिंग चलि कोई आई। चाटहिं मनो गोपालहिं पाई।।
देखत वृन्दावन सुधि आई। उमग्यो भाव गयो छद्म भुलाई।।

निज स्वरूप आवेश भर, गरजत बारम्बार।
'मैं वही मैं वही' कहत, पुनि पुनि करैं हुँकार।।
मैं वही हूँ! मैं वही हूँ (कहते-कहते भुजा उठाये दौड़ जाते हैं)

भक्तजन—

देखौ! चलौ! प्रभु कहाँ चलै! (पीछे-पीछे दौड़ जाते)

समाज—

कहत कहतइ प्रभु उठि भागे। अनुसरत भक्त सकल अनुरागे।।
अचरज कहत परस्पर जाहिं। यह स्वरूप लख्यौ कभु नाहिं।।
(पर्दा खुलता है। दृश्य—श्रीवास नृसिंह मूर्त्ति के आगे बैठे हैं)
श्रीवास निज भवन मधि, पूजत नरसिंह नाथ।
आरत अति स्तुति करत, पुनिपुनि नावत माथ।।

श्रीवास—

(चन्दनयुक्त तुलसी, पुष्प चढ़ाते हुए प्रणाम करते हैं)
नमो भगवते तुभ्यं पुरुषाय महात्मने।
हरयेऽद्भुत सिंहाय, ब्रह्मणे परमात्मने।।

हे सर्वैश्वर्य युक्त भगवान्! आपकूँ नमस्कार है। हे परम पुरुष! आपकूँ नमस्कार है। हे महात्मन्! आपकूँ नमस्कार है। हे हरे! आपकूँ नमस्कार है। हे अद्भुत सिंहरूपधारी! आपके लिये नमस्कार है। हे ब्रह्मस्वरूप! हे परमात्मन्! आप कूँ नमस्कार, कोटि-कोटि नमस्कार है! हम आपकी शरण में हैं। रक्षा करौ?

गाना-पद—

नरहरि हरि मधुसूदन मुरारि,
शरण शरण नाथ मधु कैटभारि।।१।।
यही नाम गजराज जल महँ बचायो।
यही नाम द्रौपदी चीर बढ़ायो।
यही नाम ध्रुवहिं अटल पदकारी।
शरण शरण नाथ०।।२।।
यही नाम प्रह्लाद विपदा नसाये।
यही नाम महावीर सिन्धु लँघाये।
यही नाम विभीषण अभय कारी।
शरण शरण नाथ०।।३।।

सागर सूखै, पर्वत पिघते।
विषधर 'प्रेम' सुधारस उगले।
राई सुमेरु सुमेरु राइ कारी।
शरण शरण नाथ०।।४।।

धुन—

नरहरि हरि जय दीनदयाल।
संकट हर आरत प्रतिपाल।।
(कीर्तन करते रहते हैं। पर्दा)

समाज—

दौरि गये श्रीवास भवनहिं। भक्तवत्सल भक्तभय हरहिं।।
उत श्रीवास नरसिंहहिं अरचहिं। इत द्वारे नरसिंह गरजहिं।।

गौर—

(प्रवेश करके किवाड़ पर चरण प्रहार करते हुए) मुञि सेई।
मुञि सेई। मैं वही! मैं वही! खोल किवाड़ खोल श्रीवास।
(चरण प्रहार पुनः-पुनः)

समाज—

खोल खोल कहि चरन चलाये। उघर्यो द्वार हरि भीतर धाये।।
(पर्दा खुलता है। श्रीवास ध्यानस्थ बैठा है)

गौर—

(सिंहासन पर चढ़ बैठते हैं। नृसिंह रूप प्रकट करते हैं)

समाज (सोरठा)—

तमकि चढ़ै सिंहासन, रूप नरसिंह प्रगट करि।
विराजै वीरासन, गरजत सिंह समनाद करि।।

श्रीवास—(ध्यानस्थ बैठा है)

गौर—(गरजते हुये)

काहारे वा पूजिस् कोरिस् का'र ध्यान।
जाहारे पूजिस् ता'रे देख विद्यमान।। (चै.भा.)
अब और किसको पूजता, करता किसका ध्यान।
जिसको ध्याता पूजता, देख उसे विद्यमान।।

श्रीवास—

(आँखें खोल भयभीत खड़ा हो जाता—देखता रहता—हाथ जोड़ लेता है)

समाज—

ध्यान भंग भयो नेत्र उघारे। देख्यौ नरहरि रूप हरि धारे।।
चकित भीत प्राण अकुलाये। रूप चतुर्भुज पुनि लखि पाये।।
(महाप्रभु ही चतुर्भुजी बन जाते हैं)
बैठे वीरासनहिं विश्वम्भर। दिव्य चतुर्भुज परस्वरूप धर।।
शंख चक्र गदा पद्म हस्तधर। मत्त सिंह सम गरजत भयंकर।।
लखि कम्पत श्रीवासजु थरथर। फुरत वैनना रह्यौ जोरिकर।।

गौर (तब बोले प्रभु) **(बंगला चै० भा०)—**

अरे श्रीवास तुमी नाहिं जानो मोर प्रकाश।
तोर उच्च संकीर्तने नाड़ार हुँकारे,
छाँड़िला वैकुण्ठ आइलुँ सर्व परिवारे।।

अरे श्रीवास! मैं तेरे उच्च संकीर्तन और नाड़ा अद्वैत के हुँकार सों वैकुण्ठ कूँ छोड़ समस्त परिकरन सहित यहाँ आयो हूँ—

साधु उद्धारिमु, दुष्ट विनाशिमु सब।
तोर किछु चिन्ता नाई, पढ़ो मोर स्तव।। (चै. भा.)

मैं साधुन को उद्धार और दुष्टन को विनाश करूँगो। तुम कोई भय-चिन्ता मत करौ। और अब मेरी स्तुति पढ़ौ।

श्रीवास— (हाथ जोड़)

नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराय,
गुञ्जावतंस परिपिच्छ लसन्मुखाय।
वन्यस्त्रजे कवलवेत्र-विषाणवेणु-
लक्ष्मश्रिये मृदुपदे पशुपाङ्गजाय।।

स्तुति (छन्द)—

नमो नमो श्रीहरि विश्वम्भर, नमो हेमांग कलेवरं।
नमो नमो श्रीगौरसुन्दर, नमो नमो शचीनन्दनम्।।१।।
नमो नमो घनश्यामसुन्दर, मुरली पिच्छवरधरं।
नमो नमो श्रीयशोदानन्दन, नमो नमो शचीनंदनम्।।२।।

त्वंहि विष्णुः त्वंहि कृष्णः त्वंहि यज्ञेश्वर स्वयं।
त्वंहि रामः त्वंहि नरहरिः, नमो नमो शचीनंदनम्।।३।।
त्वहिं आदि अनादि कारण, त्वंहि गोविन्दः परपदं।
त्वंहि माधवः 'प्रेम' प्रभुः त्वं, त्वंहि नमो शचीनंदनम्।।४।।
(साष्टांग प्रणति)

गौर बंगला (चै० भा०)—

स्त्री पुत्र आदि जतो तोमार बाडीर।
देखुक आमार रूप, करोह बाहर।।

श्रीवास! मैं तुम्हारे ऊपर अति प्रसन्न हूँ। तुम्हारे घर में जो तुम्हारे स्त्री-पुत्र, भाई-बन्धु, दास-दासी हैं, उन सबन कूँ बाहर बुलाय लैओ। काहू कूँ मत रोकौ। वे सब आयकै मेरो दर्शन करैं।

समाज—

आनन्द महा श्रीवास जु पायो। टेरि टेरि परिवार बुलायो।।

श्रीवास—

भैया श्रीमान्! श्रीकान्त! रामाई! तुम सब यहाँ आओ मालिनी! तुमहू बधून कूँ लै कै आओ। भतीजी नारायणी कहाँ है? बुलाओ वाकूँ। दासी दुखिया! नौकर चाकर सब यहाँ आवैं। कोई भीतर न रहैं। प्रभु की आज्ञा है। आओ, दर्शन करौ। जीवन जन्म सफल करौ।

समाज—

आय आय सब दर्शन करहीं। बाल वृद्ध नर नारि सबहीं।।
करहिं प्रनाम हूलु धुनि करहीं। हरि बोल हरि बहु उच्चरहीं।।

गौर—

श्रीवास! तुम सब मिल करकै मेरी पूजा करौ।

समाज—

गंगा जल सों चरन पखारे। आँचर पट सों पोंछ सम्हारे।।
नैनन जल भरि अर्घ्य चढ़ाये। प्रेमातुर सुधबुध विसराये।।
नरसिंह पूजन हित उपचारा। लै सब गौर चरन पै वारा।।
श्रीचरनन सुगन्ध लगाये। तुलसी दल अरु सुमन चढ़ाये।।

पुनि नैवेद्य भोग बहु अरपे। पावत प्रभु जन मन अति हरषे।।
लै लै निजकर भोग लगावैं। जन्म सफल अपनोहि मनावैं।।
दधि खाय दुग्ध खाय, नवनीत खाय।
आर कि आछये, आनो-बोलये सदाय।।

गौर—

लाओ लाओ! यह दूध दही, माखन-मिश्री तो सब मैंने खाय लियो। और लाओ! कहा-कहा है।

समाज—

सुनि सुनि मगन होयँ नर नारी। दौरि दौरि लै आवैं भारी।।
केला खील सन्देशहि लावैं। मूरि चीउरा लाय खवावैं।।
कोई दूध पीठा लै आवैं। जल नारियल कोई पिवावैं।।
द्वय शतजन छकि जायँ, खाये आप विश्वोदर।
नेक न तौहु अघायँ, लाओ लाओ कहि टेरहीं।।

गौर—

लाओ लाओ! तिहारी वस्तु मोकूँ बड़ी प्रिय लगै हैं।

श्रीवास (दोहा)—

श्रीवास कहत कर जोर, हमरो क्षुद्र उपहार।
सकल विश्व तुव उदर मधि, कैसे भरैं मुरार।।

समाज—प्रभु बोले (गौर)

क्षुद्र नहे उपहार।
झट् आनो झट् आनो, कि आछये आर।।

श्रीवास—

(हाथ जोड़) विश्वम्भर देव! अब तो और कछुई शेष नहीं रह्यौ, केवल—

कर्पूर ताम्बुल आछे शुनहु गोसाञि।

गौर—(प्रभु बोले)

ताइ देह, किछु चिन्ता नाञि।।

लाओ पान-बीरी ही लाओ! चिन्ता मत करौ। लाओ पान लाओ! यह तो अति उत्तम वस्तु है।

समाज (दोहा) —

सबहि के आनन्द भयो, गयो सब भय पलाय।
बीरी अरपत चाव सों, चाबहिं प्रभु सुख पाय।।
थार एक भरि बीरी चबाये। बैठे मुसिक्यावत सुख पाये।।
तब श्रीवास आरति वारहिं। जय विश्वम्भर गौर मुरारी।।

श्रीवास (आरती) —

शरन शरन हम शरन तिहारी। जय विश्वम्भर गौर मुरारी।।
जय विश्वम्भर गौर मुरारी। दीनदयाल परम हितकारी।।
हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल।

गजल—

दयानिधि हम कहा ही करते, दया सही अब दिखायी तुमने।
अलख अगोचर अगम्य होकर, मूरति मनहर दिखायी तुमने।।१।।
दया तो इतनी कि दीन दुखियों, के फूलपाती से रीझ जाते।
पता न लगने दिया किसी को, माया भी इतनी दिखायी०।।२।।
(कारण कि आपने)
हमारे पाँवों की धूल लेकर, हमसे भक्ति की भीख माँगी।
हमारे वस्त्रों को ले निचोड़ा, गरीबी इतनी दिखायी०।।३।।
(और आपने चंचल निमाइ पंडित बनकै)
वैष्णवों की भी हँसी उड़ाकर, छेड़ने से भी तुम न चूके।
बड़े विनोदी ओ छलिया बनकर, क्या क्या लीला दिखायी०।।४।।
आज ही अपना पता बताया, हमारी नैया को देख भँवर में।
उड़ाये छिन में सब आँधी बादल, मूरति माँझी दिखायी०।।५।।
गये दुख सारे आनन्द छाया, नमो नमो हे गौर सुन्दर।
रमे सदा ही प्राणों में 'प्रेम' के, मूरति गौर जो दिखायी०।।६।।
जय हो विश्वम्भर देव की जय।
जय हो गौरसुन्दर नवद्वीप चन्द्र की जय।
(सबों का साष्टांग प्रणाम)

समाज (दोहा) —

भ्रात त्रिया दास दासी सह, गहै चरण श्रीवास।
नैनन अश्रुधार बहत, कहत हम तुम्हरे दास।।

श्रीवास—

हे प्रणतबन्धो! हे करुणैकसिन्धो! ये भ्राता, यह भार्या ये दास-दासी, यह मेरो समस्त परिवार आपके ही चरण-शरण हैं। आज मैं इन सबनकूँ आपके श्रीचरणन में डारकै निश्चिन्त है गयो (सत्री, पुरुष सब श्रीचरणों पर पड़ जाते हैं)

समाज (चौपाई)—

सबन शीश पै पद प्रभु धरहीं। मात पिता गुरु ज्यूँ असीसहीं।।

गौर—

(एक-एक के शीश पर चरण रखते हुए) 'मोरे चित्त होओ सभाकार' तुम सबन को चित्त मो में ही लग्यौ रहै।

श्रीवास—

जय हो प्रभो! जय हो! पिता के पिता, पति के पति और नाथ के हू नाथ एक आप ही तो हो। जाको चित्त आप में लग गयो वह लोक-परलोक में निर्भय है गयो।

जय विश्वम्भर देव की जय। जय गौरचन्द्र की जय।।

गौर—

श्रीवास अब तुम मेरी एक रहस्य बात सुनो कि जा कारण मैंने आज तुमकूँ दर्शन दियौ है।

गाना लावनी—

अब निर्भय करो संकीर्तन, मंगल नाम मेरा गाओ।
वाधा डारे कौन जो वाधा-हर हरिनाम को गाओ।।
चींटी से ब्रह्मा तक जीव जन्तु जो जग में सारे।
मेरे ही चलाये चले सभी वे, मेरे ही नचाये सारे।
कौन नवाब है कैसो काजी, गाजी कौन विचारे।
पकड़े तुम्हें हमें यहाँ आकर, ऐसी फौज कहाँ रे।
शंका सबही छोड़के अब तुम डंका नाम बजाओ।
सब निर्भय करो संकीर्तन, मंगल नाम मेरा गाओ।।
जो यदि नौका भर भरके, फौज यहाँ चढ़ आवे।
सबसे पहले मैं ही चढूँगो, करूँ खेल मन भावे।
(कहा खेल करूँगो कि)

हाकिम मुसद्दी मुल्ला काजी, बुलवाऊँगा सारे।
हाथी घोड़ा मुर्गा बकरी, इनकूँ मँगाऊँ वहाँ रे।
कहूँ मुल्ला काजी से तु, इनसे हरि हरि बुलावाओ।
सब निर्भय करो संकीर्तन, मंगल नाम मेरा गाओ।।

नारायणी—

(पंचवर्षीया) हा कृष्ण! हा कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! (उच्चस्वर से पुकारती-रोती हुई भूमि पर लोटपोट हो जाती है और कृष्ण कृष्ण कहती रहती है)

श्रीवास आदि—

हरिबोल! हरिबोल!

समाज (दोहा)—

पाँच वर्ष की बालिका, नाममंत्र महा पाय।
कृष्ण कृष्ण कहि रोवती, लोटति तन पुलकाय।।
अश्रुधार आँखिन बहत, भीजै वसन ओ अंग।
भीज गई धरती तहाँ, अश्रुन प्रेम तरंग।।

बंगला पयार (चै० भा०)—

हासिया हासिया प्रभु बोलेन विश्वम्भर।
एखन तोमार सबे घुचिला कि डर।।

गौर—

श्रीवास! अब तो तुम्हारो सब भय दूर है गयो न?

श्रीवास—

(गरज कर उछलते हुये)

बंगला पयार (चै० भा०)—

आगे ना कोरि भय तोमार नाम बले।
एखन किसेर भय तुमि आमार घरे।।

प्रभो! मैं तो आपके बल सों पहले सों ही निर्भय हूँ और अब तो स्वयं नामी आप मेरे घर में विराज रहे हो। यासों अब त्रिलोकी में कौन है जासों मैं डरूँगो—एक आपके भक्तन कूँ छोड़कै।

समाज (बंगला पयार चै० भा०)—

श्रीवासेर आज्ञा कैला प्रभु विश्वम्भर।
ना कहियो ए सब कथा काहारो गोचर।।

गौर—

श्रीवास! तुम मेरे आज की या आत्म-प्रकाश की वार्ता काहू सों मत कहनो। अपने हृदय में ही गुप्त राखनो अब मैं जाऊँ हूँ फिर काहु समय आऊँगो। हरिबोल हूँ!........

(सिंहासन पर लुढ़क अचेत हो जाते हैं)

समाज (दोहा)—

निज स्वरूप दिखाय पुनि, शक्ति कछु परचाय।
अभय दान करि जनन कूँ, लियो स्वरूप दुराय।।

श्रीवासादि भक्तगण—

(महाप्रभु को सम्हालते—हरिबोल ध्वनि कीर्तन करते)

समाज (सोरठा)—

भये गौर अचेत, हरिजन हरि हरि गावहीं।
घरी द्वै गये चेत, उठि बूझत प्रभु अज्ञ जिमि।।

गौर—

(धीरे-धीरे उठ, इधर उधर देखते हुए) हैं—मैं यहाँ कैसे आय गयो! मैं तो गंगा-तट पै बैठ्यौ हो। श्रीवास जी! मैंने कछु चंचलताई तो नहीं करी। कोई कष्ट तो काहू कूँ नहीं पहुँचायौ।

श्रीवास—

(मुस्कराते हुए) अहा प्रभो! ऐसो कष्ट यदि आप हमकूँ नित प्रति ही दियौ करैं तो हम कभू कोई सुख को नामहू न लैवैं! धन्य है प्रभो! आपकी दया कूँ और धन्य है आपकी माया कूँ हू।

गाना (सम्मिलित) कान्हरा-दादरा—

तेरी दया को धन्य, तेरी माया को धन्य।
पार कौन पाय सके, महिमा तेरी धन्य।।१।।

तेरी दया ही सों जी रहे, हम जाग रहे हैं।
और जाग करके फिर तुम्हींकूँ भूल रहे हैं।
इस नींद को भी धन्य, इस भूल को भी धन्य।।२।।
तीन लोक नाथ कहके कोई रहे पुकार।
लाल सखा प्रीतम कह करें कोई प्यार।
इस याद को भी धन्य, इस भूल को भी धन्य।।३।।
तुम आप भी जब खेलने आते हो उतरकर।
जाते हो भूल आपको, खिलाड़ी हो नटवर।
इस खेल को भी धन्य, इस भूल को भी धन्य।।४।।
खेले बिना न तुमसे रहा जाता है कभी।
पर्दा हटाके खेलना भी आता नहीं कभी।
इस शौक को भी धन्य, इस शर्म को भी धन्य।।५।।
उधर तो पाँचों अंगुली, तेरे लिये बराबर।
फिरते इधर भक्तों के, पीछे भी निरन्तर।
इस नेम को भी धन्य, इस प्रेम को भी धन्य।।६।।
(स्त्रियाँ चली जाती हैं। पुरुष भक्त रह जाते हैं)

गौर—

श्रीवास जी! प्यारे श्रीकृष्ण की मधुर चर्चा के बिना मेरो इतनो समय व्यर्थ ही गयौ। यासों अब आप भगवान् श्रीकृष्ण के वीर्य-गुण को आज कछु रसास्वादन कराओ।

श्रीवास—

जैसी आज्ञा प्रभो! सर्वैश्वर्यपूर्ण भगवान् श्रीकृष्ण।

कवित्त—

ख्याल ही सों खेल जो रचाय देत विश्व को है
भूमि बिन भीत बिन, चौदह भौन बनाये हैं।
वेहू लोक सारे जाके, एक लोम कूप मधि
उड़त त्रस रेणु ज्यूँ, वेदन में गाये हैं।
नाना अवतार धारि, आप ही खिलारी हरि
अपने खिलौना संग, आप ही लुभाये हैं।
साँझ होत 'प्रेम' पुनि, डार लेत झोली माँझ
मायावी मदारी हरि, कौन पार पायो है।।

या प्रकार सों वे परात्पर पुरुषोत्तम परब्रह्म प्रभु अपनी एक इच्छा मात्र सों अनन्त ब्रह्माण्डन की सृष्टि क्षण में कर डारैं हैं तथा उन समस्त ब्रह्माण्डन कूँ अपने ही दिव्य श्रीविग्रह के लोमकूपन में स्थित राखैं हैं एवं प्रलयकाल में उन सबन कूँ वहीं लय कर देयँ हैं ऐसे-ऐसे अपटपे अनहोने खेल वे अनादिकाल सों खेल रहे हैं वाकूँ हम भलो कहा समझि सकैं और कहा गाय सकैं हैं।

गौर—

साधु साधु! श्रीकृष्ण की महिमा ऐसी ही अनिर्वचनीय है। तथापि आज तो तुम उनको कोई कछु एक खेल तो सुनाओ।

श्रीवास—

जो आज्ञा प्रभो! श्वेत वाराह कल्प के आदि में जब प्रलयपयोधि में पृथ्वी करकै रसातल कूँ चली गयीं तब ब्रह्माजी कूँ बड़ी भारी चिन्ता भई कि अब पृथ्वी कूँ कैसे जल में सों बाहर निकासी जाय। जब वे याको उपाय सोच-विचार रहे हे कि वाही समय उनकी नासिका ते—

कवित्त—

निकसि पर्यौ जीव इक, तबै नासा-छिद्र ते
शूकर-शिशु समान, अंगुष्ठ आकार है।

गौर—

परन्तु श्रीवास! वह जीव ठाड़ो काहे के ऊपर भयो जब पृथिवी ही नहीं ही?

श्रीवास—

आधार बिन निराधार, ठाड़ो अधर शून्य रह्यौ
देखत ही देखत लाग्यौ, बढ़न आकार है।
शूकर ते श्वान पुनि श्वान ते महिष सम
महिष ते हस्ती फेर, बढ़ि भो पहार है।
छाय गयो छिन ही अम्बर गिरिवर महा
गरजत हालै दिशि, दिशि धु धु कार है।
सुर सिद्ध ऋषि मुनि गन्धर्व किन्नर नभ
गावैं स्तुति 'प्रेम' करैं, जय जयकार है।।

जय हो वाराह भगवान्की जय हो।
जय हो यज्ञेश्वर यज्ञपुरुष की जय हो।

नमो नमस्तेऽखिल मंत्र देवता
द्रव्याय सर्वक्रतवे क्रियात्मने।
वैराग्यभक्त्यात्म जयानुभावित
ज्ञानाय विधाय गुरवे नमो नमः।।

(भागवत)

या प्रकार सों देवगण स्तुति करवे लगे। तब तो वाराह भगवान् भयंकर शब्द करते भये पूँछ उड़ाय बड़े वेग सों और ऊपर आकाश में उड़ गये।

गौर—

(उछलकर गरजते) वाराह! शूकर! शूकर! (कहते-कहते दौड़ भागते हैं। पीछे-पीछे श्रीवासादि दौड़ते हैं)

(पटाक्षेप)

समाज (चौपाई)—

राम भक्त इक गुप्त मुरारि। ताके घर उठि धाये मुरारि।।
शूकर शूकर गरजत जाहीं। गये मुरारि गृह मन्दिर माहीं।।
(पर्दा खुलता। मन्दिर का दृश्य। मुरारि बैठा जपकर रहा है)

गौर—

(दौड़ते हुये 'शूकर-शूकर' कहते हुये सिंहासन पर चढ़ बैठते)

समाज—

चढ़ि सिंहासन भेद जनाये। रूप वाराह नील प्रगटाये।।

वाराह भगवान्—

करहु स्तुति मोर मुरारी। आज्ञा करी वाराह असुरारी।।
चकित थकित भयभीत मुरारी। बोल न आवत रह्यौ निहारी

मुरारि—

(हाथ जोड़ भयभीत कम्पित खड़ा रहता है)

वाराह भगवान् (चै० भा०)—

बोलो बोलो किछु भय नाँई।
एतो दिन नहिं जानौं मुई एई ठाँई।।

बोलो बोलो मुरारि! भय मत करौ। मैं यहाँ आयो भयो हूँ याकूँ तुम अब तांई नहीं जानते रहे। अब जान लेओ और मेरी स्तुति करौ—

मुरारि—(हाथ जोड़)

गाना-विहाग—

गाऊँ कहा मैं स्तुति तोरी।
अपनी महिमा आपही जानौ, कहा जानै कोई औरी।।१।।
शेष सहस मुख सों नित गावै, युग युग लाख करोरी।
एकहू गुण को पार न पावै, छिन छिन नयो नयो री।।२।।
बानी वेदहू पहुँचत नाहिं, ब्रह्मा की मति भोरी।
तुम जानै कै 'प्रेम' वे जानैं, जिन पै कृपा करौरी।।३।।
(प्रणाम)

वाराहदेव—

सुनो मुरारि! मैं यज्ञ-वाराह हूँ। वेद को सार प्रतिपाद्य वस्तु मैं ही हूँ। मैंने ही पूर्वकाल में पृथ्वी को उद्धार कियौ हो।

संकीर्तन आरम्भे मोर एइ अवतार।
भक्तजन राखि, दुष्ट करिमु संहार।। (चै० भा०)

हरिनाम संकीर्तन आरम्भ करवे के लिये ही मेरो यह गौरांग-अवतार है। मैं अपने भक्तन की रक्षा करूँगो और भक्त-द्रोही दुष्टन को नाश करूँगो। कारण कि—

सेवकेर द्रोह मुईं सहिते न पारों।
पुत्र यदि होय मोर, तथापि संहारों।। (चै. भा.)

छन्द—

मो सेवक सों बैर करै जो मोते सह्यौ न जाय।
पुत्र होय तौहु मैं मारौं, कहौं मैं सत्य सुनाय।।
कहौं सत्य यह मिथ्या नाहिं, सुनहु गुनहु मनलाय।
नरकासुर हो पुत्र जो मेरो, वाकूँ मार्यौ मैं जाय।।

कवित्त—

पूत ब्रह्म प्यारो नहीं, शंकर हू न प्यारो ऐसो
भ्रात वलराम हू न, ऐसो प्राण प्यारो है।

नारि लक्ष्मी न प्यारी, ए देहहू न प्यारी निज,
भक्त जैसो प्यारो मोकूँ, प्राणन दुलारो है।
आप दुक्ख सहि 'प्रेम', भक्तन के काज करौं,
भक्तन के हेत ही तो, मेरो अवतारो है।
भक्तन सों द्रोह मेरे प्राणन सों द्रोह जानौ,
भक्तन के पीछे पूत, काटि काटि डारौ है।।

ऐसे जो ब्रह्मा, शंकर, बलराम, लक्ष्मी और आत्मा हू ते प्यारे मेरे भक्तजन है, उनकी इच्छा सों ही मेरो नित्य अवतार है और उनके लिये ही यह मेरी नित्य लीला एवं यह मेरी नित्य देह है। अतएव इन सबन कूँ जो मायिक, मिथ्या बतावैं हैं, वे मेरी देह कूँ काटकै खंड-खंड करैं हैं—

सत्य सत्य कहौं तोरे एइ परकाश।
सत्य मुञि सत्य मोर दास तार दास।
सत्य मोर लीला कर्म, सत्य मोर स्थान।
इहा मिथ्या कहे, मोरे खान खान।। (चै० भा०)

जो मोकूँ, मेरे दासान कूँ मेरी लीला कूँ, मेरे धाम कूँ, मिथ्या कहै है वह मेरे अंग-अंग को ही टूक-टूक कर डारै है—

गाना (भैरवी या देश-केहरवा)—

मेरे रूप कूँ पी पी शंकर, बने दिगम्बर मस्ताने हैं।
मेरे गुन कूँ गिन गिनकर, सिर भार शेष विसराने हैं।
मेरी लीला गाय गाय, नारद तिहुँ लोक रमाने हैं।
मोकूँ मिथ्या कहैं वे मिथ्या, ज्ञानी नहीं दिवाने हैं।।१।।
मेरे पद के सौरभ सों सनकादिक भूलै ध्याने हैं।
मेरे रूप गुनन की माधुरी सुनि भूलै शुक निर्वाने हैं।
मेरी लीला 'प्रेम' माधुरी, लखि ब्रह्माहु बौराने हैं।
मोकूँ मिथ्या कहैं वे मिथ्या, ज्ञानी नहीं दिवाने हैं।।२।।
मैं सत्य मेरे नाम सत्य, मेरे कर्म सत्य न नसाने है।
रूप सत्य मेरी देह सत्य, गुन सत्य जु वेद बखाने हैं।
धाम सत्य मेरे दास सत्य, सब मेरे रूप समाने हैं।
मोकूँ मिथ्या कहैं वे मिथ्या, ज्ञानी नहीं दिवाने है।।३।।

मुरारि—

जय हो जय हो दीनबन्धो करुणासिन्धो! आज अपनी सहज कृपावश मोकूँ यह अपूर्व दर्शन दियो, निज भक्तिसिद्धान्त सुनायो तथा मेरे जीवन जन्म कूँ कृतार्थ कर दियो—

गाना (यथाराग)—

जय जय दीनबन्धु हितकारी, हम शरन शरन हैं तिहारी।।टेक।।
वेद तुम्हारो भेद न पावै, नेति नेति कहि महिमा गावै।
सो तुम अपने जन के कारण, नाना रूप अवतारी।।१।।
तुमही घोर प्रभु सौम्य तुम्हीं हो, तुमही काल दयाल तुम्हीं हो।
राम कृष्ण तुम गौर श्याम तुम, लीला सभी तिहारी।।२।।
वेद ज्ञान में दबकर बैठे, योगी हृदय में छिपकर बैठे।
भक्तभाव में नाचे घर घर, बन गये 'प्रेम' भिखारी।।३।।

(साष्टांग प्रणति। वाराहदेव अन्तर्हित। गौर विराजमान भाव-विभोर)

समाज (दोहा)—

तबही बाराह रूप हरि, भये जु अन्तर्धान।
बैठे पाये गौर हरी, देह दशा नहिं भान।।
आय जुरै सब भक्त तहँ, प्रेम हिये हलसाय।
हरि बोल कीर्तन करैं, झाँझ मृदंग बजाय।।

धुन—

हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल आरती।

इति प्रथम आत्म-प्रकाश लीला।

❧❖❧

श्री श्रीनित्यानन्द लीला

मंगलाचरण—

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
अद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौर भक्तवृन्द।।

सङ्कर्षण कारणतोयशायी
गर्भोदशायी च पयोब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांशकला स नित्या
नन्दाख्यरामः शरणं ममास्तु।।

नित्यानन्द स्वरूप—

जय जय श्रीकरुणासिन्धु गौरचन्द्र।
जय जय श्रीसेवा विग्रह नित्यानन्द।।
सर्व अवतारी कृष्ण स्वयं भगवान।
तिनके द्वितीय रूप श्रीबलराम।।
सेइ कृष्ण नवद्वीपे श्रीचैतन्यचन्द्र।
सेइ वलराम संगे श्रीनित्यानन्द।।
इन सम चैतन्य प्रिय नहिं कोई।
नित ही विहरत इन तन सोई।।
आदि देव जय जय नित्यानन्द राय।
चैतन्य महिमा स्फुरे जाँहार कृपाय।।

(श्रीनित्यानन्द की झाँकी। नीलाम्बरधारी। वाम कर्ण में कुण्डल। ऊर्ध्वभुज)

हरिबोल! हरिबोल! हरिबोल!
(प्रवेश स्तुतिकारी बालकगण)

गाना बालक—

जय श्रीनित्यानन्द प्रेम प्रदाता, हरिबोल हरिबोल।
जय श्रीकृष्णचैतन्य भ्राता, हरिबोल हरिबोल।।१।।
गौरवर्ण नीलाम्बर धारी, आनन्द प्रेम दया भंडारी।
श्रीवलराम स्वयं अवतारी, हरिबोल हरिबोल।।२।।

मद गज चाल लजावनहारी, लोचन गुंजारुण मदभारी।
नाचत गावत गो-गो उचारी, हरिबोल हरिबोल।।३।।
जगाइ-मधाइ-दुष्ट-उद्धारी, घर घर मंगलनाम प्रचारी।
भव भय भंजन आनन्दकारी, हरिबोल हरिबोल।।४।।
राम संग लक्ष्मण धनुधारी, कृष्ण संग राम हलमूषलधारी।
गौर संग निताइ प्रेम-भंडारी, हरिबोल हरिबोल।।५।।
(पटाक्षेप)

समाज (दोहा) — (बंगदेश में)

वीरभूमि नगरी तहँ, इकचाका जो गाम।
हाड़ाइ पंडित गृह, भये निताइ वलराम।।
माता पद्मावती परम, वैष्णवी सती सुहाग।
धारे निताई कूख जिन, धन्यधन्य तिन भाग।।
बालक नाम कुबेर हो, लीला करैं अनूप।
मात पिता के प्रानधन, रूप शील गुण भूप।।
कबहु राम कभु कृष्णकी, लीला करैं निताई।
कबहु खेलत लषन सजी, कबहू दाऊ भाई।।

निताई बाल-चरित

(प्रवेश बाल निताई धनुष बाण काँधे पर एवं सखा मंडली)

निताइ सखागण (गाना बैंड चाल) —

आओ सखे आओ, मिलि खेल को रचाओ।
सुख पाओ गुण गाओ, हरे कृष्ण ३, हरे राम ३।।१।।
आओ खेलेंगे भाई, कृष्ण लीला रचाई,
राम लीला रचाई प्यारी प्यारी सुखदाई।
देवता बनो, दानव बनो, जैसी लीला वैसे बनो।
आओ सखे आओ, मिलि खेल को रचाओ।।२।।
लता तरु फूले पंछी वोलें, वन शोभा सुखदाई सुहाई।
लाओ फूल बनाओ बान, लाओ डाल बनाओ कमान।
लड़ेंगे लड़ाई, मन भाई, हरे कृष्ण ३ हरे राम ३।।३।।

सखा १—

भैया कुबेर, आज कैसी लड़ाई लड़ैगो?

निमाइ—

भैयाओ! आज तो राम-रावण की लड़ाई लड़ैंगे। यासों तुम फूलन की पतरी-पतरी डार तोर लैओ और उनके धनुष-बान बनाय लैओ।

(सखा डालों को तोड़ धनुष बाण बनाते हैं)

सखा २—

लै भैया! धनुष बान तो तैयार है गये। अब कहा होयगो। कैसे लड़ाई होयगी। हम तो कछुइ नाय जानैं हैं।

निताइ—

भैया! तू तो वन जा राम-सबन में तू बड़ो है। मैं छोटो हूँ मैं बनूँ हूँ लक्ष्मण। यह मोटो है—यह बनै रावण और यह याको बेटा मेघनाथ बन जाय।

सखा १—

और मैं हनुमान बनूँगो—हनुमान की हूँ (उछलना)

निताई—

और जो बाकी बचे, वे वानर, भालू, राक्षस बन जायँ।

सखा २—

परन्तु यह तो बता मैं राम कैसे बनूँ।

सखा ३—

मैं रावण कैसे बनूँ।

सखा ४—

मैं मेघनाथ कैसे बनूँ।

निताई—

सुनो तो सही! तुम उतावली काहे कूँ करौ हो। देखो तुम गोलमंडल बनाय कै बैठ जाओ। आँख बन्द कर लेओ। और जैसे मैं बोलूँ वैसे पीछे-पीछे बोलियो।

(गोल मंडल में सब बैठ जाते हैं)

समाज (सोरठा)—

सखन संग निताइ, तन्मय लीला भाव महँ।
राम राम मुख गाइ, उचरत निज निज नामही।।

निताई (कीर्तन)—

श्रीराम जय राम जय जय राम।
(कुछ समय तक संकीर्तन)

सखा १—

(उछल खड़ा हो) मैं राम हूँ राम!

सखा २—

मैं रावण हूँ रावण।

सखा ३—

मैं मेघनाथ हूँ मेघनाथ

सखा ४—

मैं हनुमान हूँ हनुमान!

निताई—

मैं लक्ष्मण हूँ लक्ष्मण। मैं रावण सों युद्ध करूँगो (राम-प्रति) हे प्रभो! आप मोकूँ आज्ञा दैवैं।

राम—

जाओ वीर! तुम अपनी इच्छा पूरी करौ।

सखागण—

श्रीराम जय राम जय जय राम।

निताई—

अरे दुष्ट रावण! अरे कायर चोर! कहाँ है? सामने आ और अपनो पराक्रम दिखा।

मेघनाथ—

(रावण प्रति) आप मोकूँ आज्ञा दैवें। मैं या वनचर तपस्वी बालक कूँ अबही पकरि लाऊँ हूँ।

रावण—

जाओ वीर! अपने बल को परिचय दैओ।

मेघनाथ—

अरे कहाँ है वह राम? कहाँ है वह द्रोही विभीषण?

निताई—

अरे दुष्ट! पहले मोसों लड़लै फिर राम सों लड़ैगो।

(दोनों पैंतरा बदल बदल कर लड़ने लगते हैं)

समाज—

दोउ जन जूझत रोष बढ़ावैं। पुष्पन के बहु बान चलावैं।।
दौरत उछरत वार बचावैं। बालक जय जयकार मचावैं।।

वानर दल—

राजा रामचन्द्र की जय!

राक्षस दल—

राज रावण की जय।

समाज—

दोउ जन कुशल कला दिखरावैं। पुनि पुनि पुष्पवान चलावैं।।
मेघनाथ फुलशक्ति चलाई। ढरकि धरनि गिरि परै निताई।।
(निताई को मूर्च्छा। सखा सब घेरकर बैठ जाते हैं)
उठत न बोलत चेत कराये। सखा अजान सकल घबराये।।
भाई कुबेर उठत क्यूँ नाहीं। यह तो तुम इक खेल रचाये।।
बालक इक घर दौरि सुनाये। सुनत तात धाय तहँ आये।।
(हाड़ाई पंडित दौड़ते हुये आते हैं)
चेत करावत पुत्र न चेतत। अति दुख पाय हरी कूँ टेरत।।
तब इक बालक कह्यौ भाई। लाओ संजीवनी बूटी भाई।।
दौरि एक तरु डार लै आयो। हौं हनुमान संजीवनि लायो।।
इक लै नासा रंध्र धराये। उठि बैठे सब दुक्ख नसाये।।

निताई—

(उठते हुये) जय राम!

सखागण—

जय राम। जय लषन लाल। जय कुबेर लाल!

समाज—

जय जयकार बाल सब करहीं। तात अंकम भरि हिय हरषहीं

हाड़ाई—

बेटा कुबेर! तैंने यह लीला कौन पै ते सीखी हैं?

निताई—

बाबा! यह तो हमारी ही लीला हैं। मैंने ही तो मेघनाथ मार्‍यौ हो! मैं लक्ष्मण हूँ लक्ष्मण! जय राम!

सखा १—

बाबा! या कुबेर पै सब लीला आवैं हैं—राम लीला कृष्ण लीला सब आवैं हैं। यासों हमने याको नाम विनोदाचार्य धर राख्यौ है।

हाड़ाई—

देखो या कुबेर को अबहू लीला को आवेश नहीं उतर्‍यौ है। न जानै खेलही खेलमें याकूँ यह कैसो आवेश है जाय है! कोई वायु को खेल तो नहीं है। हे नरसिंह! हे मधुसूदन! मेरे लाल की रक्षा करियो प्रभो रक्षा करियो! चल मेरे लषण लाल चल घर कूँ! तेरी माँ व्याकुल बैठी है। (सब चले जाते हैं)

(उसी समय दूसरी ओर एक संन्यासी का प्रवेश)

समाज—

हरीच्छा तबही तहाँ आये। संन्यासी अज्ञात कहाये।।

संन्यासी—

(जिस ओर से वे सब गये उसी ओर देखते हुए) हाँ! यही है वह बालक कि जाकूँ घर ते निकास लै जायवे के लिये मंगलमय भगवान् को मंगल किन्तु कठोर आदेश भयो है। यह बालक आदि संकर्षण श्रीबलराम जी को अवतार है। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र या समय गौड़ देश में नवद्वीप में

पंडित जगन्नाथ मिश्र के घर में प्रगट हुये हैं और शची माता की गोद में श्याम सों गौर कन्हाई सों निमाई बने भये खेल रहे हैं। आज सों बीस वर्ष पश्चात् गौरसुन्दर निमाई नवद्वीप में संकीर्तन यज्ञ प्रारम्भ करेंगे। वा यज्ञ में यह बालक होता को कार्य करैगो। संकीर्तन रास में योगमाया को कार्य यही बालक करैगो। भगवान् गौरसुन्दर तो कृष्ण-प्रेम में अनुरागी, वैरागी, त्यागी संन्यासी बनकर भावरससागर में निमग्न रह्यौ करैंगे। और यह बालक ही देश-देश में, ग्राम-ग्राम में, घर-घर में जाय कै हरिनाम को प्रचार करैगो और प्रेम धन लुटावैगो। जब यह बालक अवधूत शिरोमणि नित्यानन्द के नाम सों प्रसिद्ध होवैगो। भक्तजन इनकूँ प्रेम-दाता निताई चाँद के नाम सों स्मरण करेंगे तथा महाप्रभु ते प्रथम इनकूँ सम्मान देंगे, इनकी कृपा मनायँगे। अतएव या बालक कूँ घर ते निकास लै जायवे को कठोर आदेश भयो है। ताकूँ पालन करनौ ही परैगो। तबही निताई-गौर की जोड़ी जुड़ेगी और नाम-प्रचार और लोकोद्धार को कार्य प्रारम्भ होयगो।

(प्रवेश बाल निताई-गाते हुए)

निताई (बंगला गीत-सिंघोरा काफी-दादरा)—

से दिन जेमन एसे छिले हरि, आर कि तेमने आसिवे ना।।
(हे हरि! जैसे तब तुम आये हे वैसेइ कहा अब नहीं आओगे)
से दिन जेमन बेजेछिलो वांशी, आर कि तेमने बाजिवे ना।।
(और जैसे तब वंशी बजी ही वैसे ही कहा फिर नहीं बजैगी)
से दिन जेमन गोयालिनी घरे, खेये छिलेन नीचुरी करे करे।
तेमनि करे गोपीर घरे, आर कि धरा पोड़वे ना।। से०।।

(और जैसे तुमने ग्वालिनी के घर में माखन चुराय कै खायो हो वैसेई अबहु चुराय कै नहीं खाओगे और फिर गोपी तुमकूँ वैसेई नहीं पकरैगी कहा?)

से दिन जेमन जसुमति कोले, केंदे छिले आर बेंधो ना बोले।
तेमनि कोरे रांगा करे आर कि नयन मुद्दिवे ना०।। से०।।

(और भैया कन्हैया! वा दिना जब तैंने दही की मथानी फोड़ दीनी ही और मैया यशोदा तोकूँ बाँधवे लगी हीं तब 'मोकूँ बाधे मत मैया! बाँधे मत' कह-कह के तुम रोये हे! हाय-हाय भैया! तेरे नेत्रन के वे आँसू। वे आँसू! कन्हैया! कन्हैया! तू कहाँ है भैया? कहाँ है। एक बार अपनो मुख तो दिखाय दे।)

(संन्यासी पर दृष्टि पड़ती है। दौड़कर पास जा) बाबा बाबा! भैया कन्हैया कहाँ है—कन्हैया तुमने देख्यौ है कहा?

संन्यासी—

हाँ लाला देख्यौ है। परन्तु यह तो बताओ तुम्हारो नाम कहा है

निताई—

मेरो नाम? मेरो नाम बलराम है बलराम।

संन्यासी—

तो तुम यहाँ इकले कहा कर रहे हो?

निताई—

गैया चराय रहे हैं! संध्या है गयी है और कन्हैया और ग्वाल-बाल न जानै कितकूँ चले गये हैं। तुमने कहूँ देख्यौ होय तो बताय देओ बाबा!

संन्यासी—

हाँ देख्यौ तो है लाला!

निताई—

(मचलते हुये) तो कहाँ है वह? लै चलौ मोकूँ।

संन्यासी—

हाँ हाँ लै चलूँगो। लैवे के लिये ही तो आयो हूँ। (स्वगत) हा भगवन्! तुम जितने दयामय हो उतने ही निष्ठुर हू हो! कृपा के समय कुसुम हू ते सुकोमल एवं कर्त्तव्य के समय वज्र ते हू कठोर! ऐसे ही तुम अपने सेवक कूँ हू देखनो चाहौ हो! तो ऐसो ही होयगो नाथ! तुम्हारी आज्ञा पालन करनी ही होयगी। अतएव अरी करुणा! अरी दया! दूर होओ! निकस जाओ हृदय में ते! और आओ कठोर निर्ममता आओ और कर देओ माता पिता की गोदी कूँ सूनी! छीन लै चलो उनके या जीवन निधि कूँ।

निताई—

(हाथ पकड़) बाबा! तुम कहा विचार कर रहे हो। लै चलौ न भैया कन्हैया के पास। देर है रही है। साँझ है आयी! मैया बाट देख रही होयगी।

संन्यासी—

नेक ठहर जा लाला! अबही लै चलूँ हूँ (द्वार पर जा) नारायण हरि!

हाड़ाई—

(भीतर से निकल) अहा! कोई संन्यासी महात्मा पधारे हैं! अहो भाग्य! ॐ नमो नारायणाय!

संन्यासी—

नारायण! नारायण!

हाड़ाई—

पधारो भगवन्! पधारो! धन्य भाग्य मेरे जो मंगल दर्शन पाये।

महद्विचलनं नृणां गृहीणां दीन चेतसां।
निःश्रेयसाथ भगवन् कल्पते नान्यथा क्वचित्।।

आप जैसे महापुरुष तो केवल हम जैसे दीन गृहस्थी जनन के परम कल्याण के लिये ही विचरयौ करैं हैं। यासों भीतर पधार कै दास के गृह कूँ पवित्र करें चल कुबेर! तू हू चल बेटा (तीनों भीतर जाते हैं)

(पटाक्षेप)

समाज (चौपाई)—

आदर दै भीतर पधराये। करि पूजन भोजन करवाये।।
कहत सुनत कथा सुख पाये। रजनी भवन निवास कराये।।
भोरहिं उठि नित नेम निभाये। समय बूझि पुनि वचन सुनाये

(पर्दा खुलता है। संन्यासी, पं. हाड़ाई, निताई बैठे हैं)

संन्यासी—

पण्डित जी! आज की रात्रि आपके सत्संग में सुख पूर्वक बीती। आपके शील स्वभाव एवं सेवा भाव सों मोकूँ बड़ो ही सन्तोष भयो। गृहस्थ को धर्म जो अतिथि-सेवा है वाकूँ आपने यथोचित निर्वाह करयौ। धन्य है आपकूँ।

हाड़ाई—

भगवन्! मैं तो एक क्षुद्र संसारी जीव हूँ। मैं सेवा धर्म कूँ कहा जानूँ। 'सबते सेवक धर्म कठोरा।' अतएव जो कछु त्रुटि मोते है गई होय वाके लिये क्षमा करैं और दास के योग्य कोई सेवा होय तो आज्ञा करैं।

संन्यासी—

एक इच्छा तो है पण्डित जी! परन्तु.........

हाड़ाई—

निःसंकोच आज्ञा करैं भगवन्। परन्तु किन्तु दास सेवक के आगे क्यूँ? आज्ञा करैं।

संन्यासी—

कहा आज्ञा-पालन कर सकौगे पण्डित जी!

हाड़ाई—

इच्छा तो है भगवन्!

संन्यासी—

परन्तु सामर्थ्य न भई तो?

हाड़ाई—

सामर्थ्य के दैवे वारे हू आपके ही श्रीचरण हैं! आज्ञा होनी चाहिये। यह तन मन प्राण आपही कूँ अर्पण है।

संन्यासी—

परन्तु यदि प्राण ते हू प्रिय वस्तु भई तो?

हाड़ाई—

तो वह हू समर्पित है। यह विप्र पीछे नहीं हटैगो।

संन्यासी—

तो पहले त्रिवाचा भरौ।

हाड़ाई—

तो सुनौ भगवन्! आप जो कछु आज्ञा करेंगे, वह मैं पूर्ण करूँगो, करूँगो, करूँगो!

संन्यासी—

(निताई का हाथ पकड़) तो यह वस्तु देओ। मोकूँ तीर्थयात्रा के लिये एक सेवक चाहिये।

हाड़ाई—

(मर्माहत नतमस्तक खड़ा रहता है)

समाज (दोहा)—

राजा दशरथ की दशा, भई प्रान अकुलाय।
राम लषन याचै जबै, विश्वामित्र मुनि आय।।

हाड़ाई (गजल-पीलू या जोगिया)—

इधर प्राण प्यारा उधर लाल प्यारा।
इधर धर्म प्यारा उधर धन भी प्यारा।।
जो जीवन है देह का ओ आँखों का तारा।
उसे कैसे कर दूँ मैं पलभर में न्यारा।।
इधर खाई गहरी उधर तेज धारा।
इधर धर्म प्यारा उधर 'प्रेम' प्यारा।।

संन्यासी—

तो फिर रहन देओ पण्डित जी! दुःख मत करौ। मैं चल्यौ।
(जाने लगते हैं)

हाड़ाई—

(आगे आ हाथ जोड़) प्रभो! प्रभो! दया करौ। वाकी वृद्धा माता पै दया करौ।

संन्यासी—

अच्छो तो आप जानौ, आपको धर्म जानै। मैं चल्यौ।
(फिर जाने लगते हैं)

हाड़ाई—

ठहरौ देव! ठहरौ! मोकूँ नरक में पटक कर मत जाओ।

संन्यासी—

तो दै देओ बालक कूँ और चले जाओ स्वर्ग कूँ।

हाड़ाई—

मोकूँ थोरो-सो समय देओ भगवन्! मैं याकी माता की अनुमति लै आऊँ। आप तो धर्मज्ञ हैं। धर्मानुसार पिता ते सौगुनो अधिक माता को अधिकार होय है पुत्र पै! यासों माता की अनुमति आवश्यक है।

संन्यासी—

अच्छो तो जाओ! अनुमति लै आओ! देर न करनौ मैं अधिक नहीं ठहर सकूँ हूँ।

(हाड़ाई पण्डित भीतर चले जाते हैं)

निताई—

क्यूँ बाबा! तुम मोकूँ कहाँ लै जाओगे?

संन्यासी—

तुम्हारे कन्हैया भैया के पास और कहाँ?

निताई—

(हँसते हुये) ओहो! मैं तो भूल ही गयौ हो। तो लै चलौ न बाबा।

संन्यासी—

तुम्हारे बाबा को आमन दैओ फिर लै चलूँगो। (स्वगत) अरे हृदय! सावधान! कोमल नहीं बज्र बन जा बज्र और करदै वज्रपात मात पिता के ऊपर।

हाड़ाई—

(प्रवेश कर स्वगत) अहा! माता तो माता होय है। लाख-लाख पिता हू एक माता की समता नहीं कर सकैं हैं।

संन्यासी—

क्यूँ पण्डित जी! कहा निश्चय कर्‌यौ—हाँ कै ना?

हाड़ाई—

(घुटना टेक—हाथ पसार) दयामय! दया की भीख दैओ! बालक की माँ तो मूर्च्छा खायकै गिर परी है वा अबला पै दया करौ। मोकूँ अपने वचन के धर्म-बन्धन सों मुक्त कर देओ! कृपा करौ!

संन्यासी—

यहाँ नहीं! वहीं परलोक में मुक्त होओगे। तो मैं चल्यौ।

(जाने लगना)

हाड़ाई—

ठहरौ भगवन्! ठहरौ! मेरे द्वार पर ते खाली मत जाओ। लैओ, लैकै जाओ (निताई का हाथ पकड़) यह धन आपका (सौंप देना) और धर्म मेरा!

संन्यासी—

लाला पिता को प्रणाम करो! चरण छीओ।

समाज (दोहा)—

परसत चरन उठाय कै, लियौ हृदय लगाय।
उमड़ि पर्यौ दूनौ स्नेह, धीरज वाँध बहाय।।

निताई—

रोओ मतिना बाबा! मैं तो कन्हैया भैया कूँ लैवे जाय रह्यौ हूँ। कन्हैया कूँ लैकै फिर आय जाऊँगो जान देओ कन्हैया के पास। रोओ ना बाबा!

संन्यासी—

(निताई का हाथ पकड़) चल लाला चल कन्हैया के पास! पण्डित जी! आपने धर्म की रक्षा करी है तो धर्महू आपकी सदा रक्षा करैगो—'धर्मो रक्षति रक्षत:'।

हठ करि राखै धर्म को, ताहि राखै करतार।
धर्म मूल है जगत को, धर्म बिना जग द्वार।।
सुत अति प्यारो जगत में, सुत ते प्यारो प्राण।
दशरथ ने दोनों तजै, धर्म न दियौ जान।।
धर्म ही अमृत 'प्रेम' है, धर्म से इन्सान है।
धर्म बिना सब भूत हैं, संसार भी श्मशान है।।

धन्य है आपकूँ! आप जैसे धर्मवीरन सों ही धरती टिकी भई है! नारायण! नारायण!

(निताई का हाथ पकड़ धीरे-धीरे प्रस्थान)

हाड़ाई—

(खड़े देखते-देखते गिर पड़ते हैं) हाय! मेरे वत्स!

समाज (दोहा)—

आँखिन ओटक होत ही, गिरे धरन हाड़ाई।
सुत नहीं मानो प्रानहि, निकसि गये पलाई।।

(पटाक्षेप)

श्रीनित्यानन्द का वृन्दावन-आगमन

समाज श्लोक—

नित्यानन्दमहं वन्दे कर्णेलम्बित मौक्तिकं।
चैतन्याग्रजरूपेण पवित्रोकृत भूतलम्।।

नीलवसन तन चन्द्र वर्ण, श्रीमान हलधर रूप।
एक कर्ण कुंडल लसै, पावन पतित अनूप।।
प्रेम मदिरा छकि रहे, बोलैं गौ-गौ-गौर।
मंगल सुमरन करौं श्री, नित्यानन्द सिरमौर।।

लीलारम्भ—

माता पिता गृह त्यागि सब, संन्यासी संग सोई।
भ्रमत फिरै भारत सकल, बच्यौ न तीरथ कोई।।
चार धाम पुरी सप्त सब, तीरथ किये निताई।
भये युवा अवधूत अब, संग संन्यासिहु नाई।।
आये कहाँ ते कहाँ गये, कहूँ लिख्यौ कछु नाई।
सेवा करि गये आपनी, दै गये हमहिं निताई।।
योऽसि सोऽसि न्यासीवर, जग ऋनी तुव उपकार।
निताइ-गौर जोरी जुगल, दीन्हे तुम उपहार।।

भ्रमत भ्रमत वृन्दावन आये। पूरब लीला थल लखि पाये।।
हलधर राम भाव उर जाग्यौ। आन भाव सब उरते भाग्यौ।।
को समुझै उनचरित उदारा। छाँड़ि कृष्णरस करैं न अहारा।।
निज लीला थल निरखत डोलहिं।
भैया कृष्ण कहि कहि बोलहिं।।
हँसैं रोवैं कभु अलबल बोलैं।
भाव मगन जित तित नित डोलहिं।।

वेश अवधूत इक कुंडल पहरे। डगमग चाल तन सुध विसरे।।

(प्रवेश नित्यानन्द झूमते हुये)

निताई—

(खिलखिला कर हँसते हुये) अहा हा! यही तो श्रीवृन्दावन है! वृन्दावन! वृ-न्दा-वन! कन्हैया को प्यारौ वृन्दावन! विहार बन! आनन्द वन!

गाना (दुर्गा दादरा)—

अहा यही तो वृन्दावन! यही तो वृन्दावन!
प्यारो वृन्दावन, श्याम को वृन्दावन।।
(नेपथ्य में वंशी ध्वनि)
वंशी बाजै, वंशी बाजै, मधुर मधुर बाजे।
मोहन मुरली श्याम की मुरली, मधुर मधुर मधुर बाजे।।
कहाँ बाजे, यह कहाँ बाजे, वहाँ बाजे, यहाँ बाजे।
मधुर मधुर मुरली बाजे, वनवन धुनि मधुर गाजे।।
मधुर बाजे मोहनी बाजे, कहाँ बाजे कहाँ बाजे।
(उन्मत्त हो चारों ओर देखते हैं)
यहाँ बाजे वहाँ बाजे, कहाँ कहाँ कहाँ बाजे।

(चारों ओर दौड़ते हुए गिर पड़ते हैं। प्लूत स्वर में वंशी बजाते हुए श्यामसुन्दर आते और नित्यानन्द के पार्श्व से निकल जाते हैं)

निताई—

(धीरे-धीरे सिर उठा इधर उधर आँखें फाड़कर देखते हुये उठ खड़े होते हैं) हैं! कहाँ गयो? कन्हैया भैया कन्हैया! अब ही तो तू मेरे आगे ठाड़ो वंशी बजाय रह्यौ है और अबही कहाँ चल्यौ गयो! कन्हैया! मेरे प्राण कन्हैया! तू कहाँ है?

गाना (मालकोस-इकताला-दादरा)—

कहाँ भैया कन्हैया, कहाँ भैया कन्हैया।।
दरस दिखाय तरस मिटाय, हिय सों लगाय।
प्रेम आय, भैया कन्हैया, कहाँ भैया कन्हैया।।१।।
कहाँ कन्हैया भैया।
यही तो बन कहाँ बसैया, यही तो वन कहाँ रमैया।
यही तो वन कहाँ नचैया, यही तो वन कहाँ कन्हैया।।२।।

यही तो यमुना कहाँ नहैया, यही तो यमुना कहाँ लुटैया।।
यही तो यमुना कहाँ हरैया, यही तो यमुना कहाँ कन्हैया।।

(यमुना को देख चौंकते हुये)

अरे! यही तो कालियदह है! ओह! कन्हैया अवश्य यामें कूद गयो है! अरे कन्हैया! निकसि आ! तेरे बिना मैया, बाबा, गोपी-गैया सब मूर्च्छित परे हैं! इनकूँ बचाय लै! आ निकसि आ (दूर यमुना के बीच में देखते हुये) वह देखो! निकसि आयो! नाग के फनन पर नृत्य कर रह्यौ है (क्षणिक दृश्य अरे! यह कहा? कन्हैया कहाँ विलाय गयो? हाय! छिप गयो छिपाय लियो मुख! कन्हैया! (गिर पड़ते) तू बड़ो छलिया है। बड़ो नटखट है। (नेपथ्य में नूपुर ध्वनि) वह नूपुर बज रहे हैं! आय गयो कन्हैया आय गयो। (उठकर दौड़ते। नूपुर ध्वनि बन्द हो जाती) अरे! नूपुर तो अब नाय बजैं हैं! छिप गयो! फिर छिप गयो! परन्तु कहाँ छिपैगो! मैं तो ढूँढ़कै छोड़ँगो एक-एक लता, वृक्ष, कुञ्जन में ढूँढ़्यौ! कन्हैया! भैया कन्हैया! (पुकारते हुये निकल जाते हैं)

(दूसरी ओर से प्रवेश दो व्रजवासी पण्डा)

छगन—

जय यमुना मैया की।

मगन—

जय यमुना मैया की! छगन गुरु! आज तो दुपहरी हैवे पै आय गयी और एकहू जजमान हाथ नाय पर्‍यौ। न जानै आज सबेरे कौन को मोह देख्यौ है।

छगन—

मगन गुरु! मेरी बात सुनौ। सबेरे अँधेरे में ही यहाँ घाट पै आय जाया करौ। पहलो दर्शन यमुना मैया को करौगे तो दिन भर माल मार्‍यौ करौगे।

मगन—

यामें कहा सन्देह! मैया तो साँची यमुना मैया। बाद बाकी सब झूँठी मैया।

रसिया—

जय यमुने जय यमुने यमुने यमुने साँची मैया।
ये मैया संसार में डारैं तारैं यमुना मैया।
यमुने तू ही साँची मैया।। जय०
बाप की मैया बेटे की मैया, दादा बाबा की मैया।
सास बहू सबही की मैया, ऐसी यहाँ को मैया।
यमुने तू ही साँची मैया।। जय०
राजा की मैया रंक की मैया, चूड़ा चमारहुकी मैया।
भेदभाव नहीं गोद में तेरी, सबकूँ पार करैया।
यमुने तू ही साँची मैया।। जय०
ये मैया तो तन ही धोवैं, तू मनहू की धुवैया।
ये तो आज की मैल ही धोवैं, तू जन्म जन्म की धुवैया।
यमुने तू ही साँची मैया।। जय०
(यमुना मैया तो)
यहाँ की दैवै वहाँ की दैवै, लैवै न कौड़ी मैया।
मुक्ति 'प्रेम' श्रीकृष्णहू दैवै, ऐसी कौन है मैया।।
यमुने तू ही साँची मैया।। जय०

छगन—

बोलो यमुना मैया की जय! वाह गुरु वाह! मेरी तो आत्मा शीतल है गई। मैं तो जात्री-फात्री सबनकूँ भूल गयो।

मगन—

मरन दै राँडकेन नै, सब आय जायँगे। यमुना मैया कान पकरि-पकरि कै सबनकूँ लै आयँगी। तुम तो मैया के गुण गाओ!

छगन—

गुरु! या हमारी यमुना मैया को अद्वितीय सौभाग्य है। कारण कि भगवान् श्रीकृष्ण की समस्त लीलान में इनको प्रवेश है। द्वारिका लीला में यमुना मैया ऐश्वर्यमयी पटरानी हैं। मथुरा लीला में वात्सल्यमयी मैया हैं और वृन्दावन लीला में कृष्ण सुखमयी सेविका हैं। ऐसो सौभाग्य और काहू पटरानी को नहीं है। बोल यमुना मैया की जय।

गाना-पद—

श्री यमुना तो गोपालहिं भावै।
जमुना जमुना नाम उचारे तो, यमराज की नाहि चलावै।।
जमुना जमुना कहत ही, जम को भय मिट जाय।
जहाँ जहाँ जमुना बहै, तहाँ तहाँ जम नाय।।
जो जमुना को दर्शन पावै, जो जमुना जल पान करै।
सो प्रानी जमलोक न देखै, चित्रगुप्त लेखौ न धरै।।
(चित्रगुप्त घबराय कै धर्मराज सों कहै है कि)

कवित्त—

भाषै चित्रगुप्त सुनि अर्ज लीजै यमराज
कीजिये हुकुम अब मूंदैं नर्क द्वारे को।
अधम अभागे क्रूर, कृतघ्नी कलहिन कूँ
करत कन्हैया कर्ण कुंडल सँवारे को।
ग्वाल कवि अधिक अनीतै विपरीत भई
दीजिये तुड़ाय बेगि कुलुप किवारे को।
हम ना लिखैंगे बहि, गम ना जु खैंहें हम तो
यमुना विगारे देत, कागद हमारे को।।

चित्रगुप्त फरियाद करै है कि हे धर्मराज महाराज! यह यमुना रोज-रोज हमारे बहीखाते कूँ विगार विगार कै चौपट करै डारै है। जिन-जिनकूँ हम महापापी समझकै यमलोक में लायवे के लिये अपने बहीखाते में नाम चढ़ावैं हैं, वे दुष्टपापी जब यमुना को दरस-परस, जल-आचमन स्नान करैं हैं, तो यह यमुना उन सबनकूँ श्रीकृष्ण को जैसो रूप बनाय-बनाय कै श्रीकृष्ण धाम के योग्य बनाय देय है। फिर तो मोकूँ उन सब दुष्ट-पापिन को नाम अपने बहीखाते में सों काट दैनो परै है। या प्रकार सों मैं लाखन पापिन को नाम नित्य बही में चढ़ाऊँ हूँ और नित्य काट दऊँ हूँ। सो सबरे हिसाब-किताब में गड़-बड़ी है जाय है और बहीखाता हू सब खराब है जाय है। यासों अब तो मेरे दफ्तर कूँ बन्द ही कर दैओ और मोकूँ छुट्टी दै देओ या यमुना के होंते आप यमराज हू कछु नाहिं कर सकौ हो।

पूर्वपद—

जो जमुना को जानि महातम, बारम्बार प्रनाम करै।
जमुना अवगाहन मज्जन करै, चिन्तन तनु ताप हरै।।

पद्म पुरान कथा ए पावन, धरनी मुख वाराह कही।
तीर्थ महाप्रभु जानि जगद्‌गुरु, यह प्रसाद 'परमानन्द' लही।।

मगन—

साँची कहौ हो गुरु साँची कहौ हो। यमुना मैया की ऐसी ही विशेषता पुरानन में गायी है। पद्म पुराण के पाताल खण्ड में मरीचि सर्ग में हर-गौरी सम्वाद में महादेवजी कहैं हैं कि हे पार्वती—

ब्रह्मज्ञानेन मुच्यन्ते काश्याञ्च मरणे नराः।
अथवा स्नान मात्रेण कृष्णायां कृष्णसन्निधौ।।

अर्थात् मेरी काशी में जीव मरै तो ब्रह्मज्ञान कूँ प्राप्त है कै मुक्त है जाय है अथवा तो श्रीयमुना में स्नान मात्र सों ही जीव श्रीकृष्ण की पदवी कूँ प्राप्त है जाय है। और सुनौ पार्वती

त्रिभिः सारस्वतं तोयं, सप्ताहञ्चैव नार्मदं।
सद्यः पुनाति गांगेयं, दर्शनादेव यामुनम्।।

अर्थात् सरस्वती को जल तीन बार स्नान करवे पै पवित्र करै है, नर्मदा को जल सात बार स्नान करवे पै पवित्र करै है, गंगा को जल तत्क्षण पवित्र करै है और यमुना-जल तो दर्शन मात्र सों पवित्र कर देय है। बोल यमुना मैया की जय।

छगन—

परन्तु गुरु! यह तो बताओ! यह माहात्म्य यमुना जी में आयो कहाँ ते—यामें कारण कहा है?

मगन—

कारण यह है कि और सब तीर्थन को जल तो जल ही है परन्तु यमुना को जल है ब्रह्म रस सच्चिदानन्द रस। वहीं पद्मपुराण के पाताल खण्ड में मरीचि सर्ग में यह हू कह्यौ है कि—

रसो यः परमाधारः सच्चिदानन्दलक्षणः
ब्रह्मेत्युपनिषद्‌गीतः स एव यमुना स्वयम्।
पावनायस्य जगतः सरिद् भूत्वा ससार ह।।

अर्थात् जा रस कूँ उपनिषद् सच्चिदानन्द ब्रह्म कहै है तथा जो रस विश्व ब्रह्माण्ड को परमाधार स्वरूप है, यमुनाजी वही रसब्रह्म हैं जो जगत् कूँ पवित्र करवे के तांई नदी रूप में बह रही हैं। याहि कारण सों—

सब तीर्थन की मुकुटमणि, श्रीगंगा विख्यात।
यह श्रीयमुना रसमई, कहि न सकत कोउ बात।।
(यमुना रसमई है कारण कि)
एक बार वामन चरण, छुयो कहूँ वह गंग।
यहाँ स्वयं श्रीकृष्ण जू, करत केलि प्रिया संग।।

तुम तो जानौ ही हो गुरु कि गंगाजी में महिमा कहाँ ते आई है?

छगन—

वामन भगवान् के चरणकमल सों आई है यह गंगा उनके चरण की धोवन है।

मगन—

परन्तु पूरे चरण की धोवन नहीं एक अंगुष्ठ मात्र को ही धोवन है। और अंगुष्ठ हू कौन को? ब्रह्मचारी वामन भगवान् को और सोहू एकै बार को धोवन! वाही सों इतनो चमत्कार गंगाजल में आय गयो है। परन्तु हमारी यमुनाजी के जल में ब्रह्मचारी वामनदेव नहीं, स्वयं शृङ्गार रसराज श्रीकृष्ण और इकले श्रीकृष्ण ही नहीं, महाभावमयी श्रीराधा तथा प्रेममयी गोपिकान के यूथ के यूथ किलोल करैं हैं—एक-द्वै बार नहीं, नित्य प्रति अनादिकाल सों विहार कर रहे हैं। यासों श्रीराधा कृष्ण तथा गोपिन के प्रेमरसमय समस्त अंगन को स्पर्श नित्य निरन्तर प्राप्त करकै यह यमुना जलहू रसमयी, प्रेममयी, राधा-कृष्णमयी बन गई है।

यासों श्रीयमुना निपट, अधिक अधिक अधिकाई।
भाव सिद्ध छिन में करै, तनक कहूँ ह्वै जाई।।

कवित्त—

साँवल बरन मात, न्हात में करत है
आप जल रूप वाकूँ, करै कल रूप है।
आपनो प्रवाह, वाहि थिर राखै वृन्दावन
आप घटै-बढ़ै वह, एक ही स्वरूप है।
आप रज राखै वाके, खोवै रजतम तीनों
करैं और ठाठ यह, कौतुक अनूप है।
कृष्ण पटरानी ऐसी यमुना बखानि कहि
सकत न बानी, नीके जानैं भक्त भूप है।।

छगन—

साँची है गुरु! यमुना पटरानी की महिमा है तो ऐसी ही निराली परन्तु हाय रे—

अहो अभाग्यं लोकस्य न पीतं यमुनाजलं।
गोगोपगोपिका संगे यत्र क्रीड़ति कंसहा।।

हमारो कितनो दुर्भाग्य है कि हम ऐसी महामहिमामयी यमुना मैया को सेवन छोड़ करकै छोटे-छोटे तुच्छ फलन के लिये दुनियाँ भरके ताल तलैयान के कीच में न्हामते और तीर्थन में धक्का खाते डोलैं हैं—

वृन्दावन कूँ छाँड़िकै आन तीर्थ कूँ जात।
छाँड़ि विमल चिन्तामणि, कौड़ी कूँ ललचात।।
पायो रत्न चीन्हौं नहीं, दीन्हौं करते डार।
यह माया गोपाल की, मोह रह्यौ संसार।।

कवित्त—

काशी प्रयाग द्वारावती कूँ निहार आयो
व्रज में आयो तो फिर जायवो कहा रह्यौ।
गंगा सिन्धु सरस्वती सरजू में न्हाय आयो
यमुना में न्हायो फिर न्हायवो कहा रह्यौ।
लाल बलवीर वृषभानु किशोरी जू के
सदा गुन गाये फिर गायवो कहा रह्यौ।
प्रभु को प्रसाद पायो, संतन को सीत पायौ
वृन्दावनवास पायो, फिर पायवो कहा रह्यौ।

(दौड़ते हुये निताई का प्रवेश—यमुना जल को देखते हुये अपने प्रतिबिम्ब प्रति)

निताई—

अरे यह यमुना के भीतर मेरेइ जैसो को ठाड़ो है? मेरोइ जैसो रूप और वेषवारो यह को है? अरे तू कौन है? तैंने यह मेरोइ जैसो रूप और वेष को स्वांग काहे कूँ बनायो है? बताय। अरे बोलै क्यूँ नाय है (मुक्का उठाते हैं) बोल! नहीं तो मैं अबही तेरी खोपरी खिलाय दऊँगो। अरे! यह तो उल्टो मोपै ही मुक्का तानै है। अच्छो ठहर जा! अबही पकरि कै तेरी मरम्मत करै दऊँ हूँ। (दौड़ना) अरे! यह तो मेरे आगेइ आगे दौरे है। यह कहा बात है

(ठहर कर सोचते हुये) ओह! यह कंस को भेज्यो भयो कोई राक्षस है कन्हैया कूँ मारवे के लिये यह मेरो रूप धरि आयौ है। अरे कन्हैया! सावधान भैया सावधान! यह कंस को राक्षस मेरो रूप बनाय कै तेरे पास आय रह्यौ है। तू धोखे में मत आय जइयो। बलराम मैं तो याके पीछे आय रह्यौ हूँ। ठहर सारे! तू मोते बचकै जायगो कहाँ! ठाड़ो काहे कूँ है गयो? भाग न!

(दोनों पण्डे खड़े-खड़े देख रहे हैं)

छगन—

ओ बाबाजी! तुम कौन ते लड़ रहे हो? यह तो तिहारी ही परछांई है?

निताई—

(सचेत हो खिलखिला कर हँसते हुये) ओ हो हो परछांई है! तबही यह ऐन-मैन मेरोइ जैसो है। अच्छो ब्रजवासियो! कन्हैया कहाँ है, कन्हैया!

मगन—

कौन-सा कन्हैया? यहाँ तो मुकतेरे कन्हैया हैं।

निताई—

मेरो भैया कन्हैया और दूसरो कौन-सो?

छगन—

अरे यह हू कोई बात भई! वाको कछु अत्तो-पत्तो तो बताय।

निमाई—

अरे वह सिर पै मोरपंख धरै है। गुंजान की माला पहरै है।

छगन—

मोरपंख तो हमारे हू माथे पै लग रहे हैं।

निमाई—

वह वंशी बजावै है!

मगन—

अरे व्रज में तो ग्वाल बाल सभी वंशी बजावैं हैं।

निमाई—

मेरे भैया कन्हैया ने कालीनाग नाथ्यो है, गिरिराज पर्वत उठायो है।

मगन—

अरे! तू नन्दलाला की कह रह्यौ है! अरे वह कन्हैया अब कहाँ? वह तो द्वापर की बात है अब तो कलियुग है बाबा कलियुग! अब वह कन्हैया यहाँ कहाँ?

निताई—

नहीं भैया! वह यहीं रहै है—चारों युगन में यहीं वृन्दावन में ही रहै है। याकूँ छोड़कै कहूँ नहीं जाय है। यह वृन्दावन तो वाको नित्य विहार वन है।

छगन—

अरे हाँ! एक रूप सों तो वह अवश्य रहै है—भगवान् बन करकै मन्दिर में रहै है, पूजा-भेंट लेय है परन्तु बोलै-फौले कछु नहीं।

निताई—

मोसों बोलैगो! मोकूँ लै चलौ वाके पास।

मगन—

वाह! तोते कैसे बोललैगो! जब हम घर वारेन सों ही नहीं बोलै है। ऐसो तू कहा लगै है वाको?

निताई—

तुम मोकूँ नहीं पहिचानौ हो। मैं हू बलराम दाऊ दादा तुम सबन को!

छगन-मगन—

(ठहाका मारते हुये) वाह रे बलराम! है तो कोई बंगाली बाबा! बनै है बलराम!

निताई—

अब और बात तो रहन दैओ और लै चलौ मौकूँ कन्हैया के पास!

दोनों—

तो चल। नहीं मानै तो चल और दिखा अपनो करामात।

(सब भीतर चले जाते है)

(पर्दा खुलता है। मन्दिर—ललित त्रिभंगी श्रीवृन्दावन विहारी। प्रवेश निताई और पण्डे)

पुजारी—

जय वृन्दावन विहारी की जय। कृष्णमुरारि की जय।

छगन—

देख लै बाबा! वह ठाड़ो कन्हैया वृन्दावन विहारी बनकै।

मगन—

अब बोल लै और बुलवाय लै तौ हमहू जानैं तू साँचो बलराम है।

निताई—

(मन्दिर में देखते हुये भी जैसे कुछ नहीं देख पाते हैं) कहाँ है कन्हैया ठाड़ो—कहाँ है?

मगन—

अरे वह है ठाड़ो सिंहासन पै एक टाँग टेड़ी करकै ठाड़ौ है। वंशी मुख पै धरे!

निताई—

(ऊँचा-नीचा देखते हुये) कहाँ है—कैसो है? मोकूँ तो कछु नहीं दीखै है।

छगन—

बड़े आश्चर्य की बात है! कहाँ तो बोलवे-बतरायवे की कह रह्यौ हो और अब इतनी मूर्त्तिहू नहीं देख पाय रह्यौ है।

निताई—

(दुःखपूर्वक) हाय रे मेरो दुर्भाग्य! मोकूँ तो सिंहासन ही सिंहासन दीखै है। कन्हैया मोकूँ देखकै फिर छिप गयो! जहाँ जाऊँ हूँ वहीं छिप जाय है! हाय मेरो दुर्भाग्य!

सवैया—

जाऊँ जहाँ जित मन्दिर में तित ही तित मैं सूनो लखि पाऊँ।
पाऊँ न लखि वह माधुरी मूरति हाय कहाँ कितहि अब जाऊँ।

जाऊँ जहाँ तहाँ ते भगि जावै हाय अब कैसे 'प्रेम' मनाऊँ।
नाऊँ लै टेरत वनहिं फिरूँ तुम आओ कन्हैया हिय सों लाऊँ।
(दौड़कर निकल जाते हैं)

छगन—

पूरो बावरो है तबही उल्टो बोलै है और उल्टो ही देखै है। हम मन्दिर मन्दिर में ठाकुर देखैं हैं और यह आकाश में देखतो डोलै आँख उलट गई हैं याकी आँख!

मगन—

यामें हू कोई रहस्य है गुरु! यह कोई माथे को बावरो नहीं कोई सिद्ध बावरो है।

छगन—

तब तो घेर लैओ याकूँ। कोई जन्त्र-मन्त्र, जड़ी-बूटी, टौना-टोटका लैंगे।

मगन—

अरे बाबा! ठहर जा ठहर! हम दिखावैं तेरे कन्हैया कूँ!
(दोनों पीछे-पीछे भागते हैं)

निताई—

(गाते हुये दूसरी तरफ से प्रवेश करते हैं)

पद-देश—

मैं ढूँढ़त ढूँढ़त हार्यौ कहूँ पायौ न प्रान पियारो।
अब कैसे प्रानन धारौं, विन देखे नन्द दुलारो।।१।।
मैं वंशीवट तट जाऊँ, सुनि वंशी धुनि बौराऊँ।
नहीं मोहन मुख लखि पाऊँ, छिप जाय वह प्राण पियारो।।२।।
मैं यमुना पुलिन में जाऊँ, सुनि नूपुर धुनि बौराऊँ।
मिलिवे कूँ जब उठि धाऊँ, छिप जाय वह प्रान पियारो।।३।।
मैं कालियदह पै जाऊँ, लखि निरतत नाग पै धाऊँ।
हाय टेरत ही रह जाऊँ, छिप जाय वह प्रान पियारो।।४।।
मैं मन्दिर मन्दिर जाऊँ, जहाँ कान्ह रहै सुनि पाऊँ।
सूनो ही सिंहासन पाऊँ, छिप जाय वह प्रान पियारो।।५।।

अरी स्वर्णलता! अरे तमाल! अरे कदम्ब तुम तो सब कन्हैया के अत्यन्त प्रिय हो! कोई तो बताओ! कन्हैया सों मिलाओ!

दादरा—

हेमलता तेरो सोनो सो रंग,
ए देखि लिपटतो वह तेरे ही अंग।
तमाल तू कालो वह कान्ह हू कालो,
वह मीत तिहारो रमै तुम संग।
कदम्ब हे तेरे धरै फूल माला,
इन डारन झूलै वह झूला उमंग।
हरौ दु:क्ख कोई परौं पाँऊ सबके,
मिलाय दैओ वा कन्हैया के संग।।

मालकोस-दादरा—

हे हे मरकट कहाँ कन्हैया। माखन चुरैया माखन लुटैया।।
हे हे गैया कहाँ चरैया। वे ग्वाल वाल कहाँ कन्हैया भैया।।

अरे सुबल! श्रीदाम! मधुमंगल! तुम सब कहाँ छिप गये और कन्हैया कहाँ है। मैं बलराम तुमकूँ ढूँढ़-ढूँढ़ कै हार गयो। (ठहर कर) अरे हाँ! कहूँ गिरिराज की गुफान में तो आँख मिचौली नहीं खेल रहे हो! गिरिराज! गोवर्धन! गोविन्द! (दौड़ते हुये) वह देखो गिरिराज की तरहटी।

(कहते हुये दौड़ जाते हैं)

(पर्दा खुलता—गिरिराज पर्वत का दृश्य)

निताई—(गाते हुये प्रवेश)

हे गिरिराज! कहाँ उठैया।
व्रज रखैया, गोविन्द भैया।
हे गिरिकन्दर, कहाँ लुकैया।
हा हा रज! कहाँ कन्हैया भैया।

(रज में लोटपोट होते हैं। नेपथ्य में से—आकाशवाणी)

आकाशवाणी—

हे अवधूतराज नित्यानन्द चन्द्र! आप जिनकूँ ढूँढ़ रहे हैं वे या समय गौड़ देश में श्रीभागीरथी गंगा के तट पै स्थित जो नवद्वीप धाम है, वहाँ वे अपने भगवत्स्वरूप कूँ छिपाय कै भक्त रूप सों लीला कर रहे हैं। वे कृष्ण सों गौर बन करकै और कन्हाई सों निमाई बन करकै संकीर्तन रास कर रहे

हैं। वे आपकी नित्य प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनके हरिनाम प्रचार एवं लोकोद्धार को कार्य आपके बिना सम्पन्न नहीं है सकैगो। अतएव आप शीघ्र ही यहाँ ते प्रस्थान करैं और नवद्वीप में जाय पण्डित निमाई सों भेंट करैं। वही आपके कन्हैया हैं!

निताई—

(उठते हुये) अच्छो तबही वह यहाँ मोसों नहीं मिल रह्यौ है। वह वहीं मोकूँ बुलाय रह्यौ है तो अब मैं वहीं जाऊँगो। वहीं नवद्वीप में जायकै वा चोर छलिया कूँ पकडूँ हूँ! कन्हैया कन्हैया! (दौड़ते हुये निकल जाते हैं)

ꕥ❖ꕥ

यौवनामृत लहरी **द्वादश कणामृत**

श्रीनिताई-निमाई मिलन

निताई—

(प्रवेश—गाते हुये)

ति० का मोद—

चल मन नदिया नगरी जैये।
नैनन निज धन निरखि-परखि कै, हरषि दिवस बितैये।
रोम रोम अकुलाय रहे मेरे, कब शुभ घरी दिन ऐये।
मन के रथ पै चढ़ि उड़ि जाऊँ, छिन महँ तहँ पहुँचैये।
आश भरोस प्रभु चरनन को, साध सकलहि पुरैये।।

समाज—

प्रेम-प्रवाह-भर परै निताई, रैन दिना चलि जैये।।
(गाते-गाते प्रस्थान)
अद्‌भुत प्रेम-उमंग, पवन वेग सों धावहीं।
पहुँचे नदिया बंग, पार करि बहु बस्ती वन।।
नदिया नगर पहुँचे जब जाई। अद्‌भुत प्रेम दशा तन छाई।।
अके जके तहँ बूझत डोलैं। कहाँ कन्हैया कहि कहि बोलैं।।
(प्रवेश केवल नित्यानन्द गाते हुये)

निताई (गजल-पहाड़ी)—

कहाँ घनश्याम प्यारा है, कहाँ वह मुरलीवारा है।
बतादो नदियावासी, यहीं मेरा श्याम आया है।।१।।
न गोकुल में पता पाया, न मथुरा देख पाया है।
न वृन्दावन दरस पाया, यहीं मेरा श्याम आया है।।२।।
लताएँ हिलतीं और कहतीं, यहीं तेरा श्याम आया है।
यह पंछी नाचते गाते, यहीं मेरा श्याम आया है।।३।।
पवन से भी महक मीठी, यही कहती वह आया है।
यह गंगाजल का रस मीठा, यहीं मेरा श्याम०।।४।।
कनाएँ रजकी भी कहतीं, चरन हमने ही पाया है।
दिशाओं से ध्वनि कहतीं, यहीं तेरा श्याम०।।५।।
बताओ या बताओ ना, मिलाओ या मिलाओ ना।
न नदिया छोड़ जाना है, यही अब'प्रेम' भाया है।।६।।

अरे नदिया वासियो! मेरा कन्हैया भैया यहीं आयो है।

बताओ वह कहाँ है? मो दुनिया पै कोई कृपा करौ और मिलाय दैओ मेरे कन्हैया कूँ।

(प्रवेश—दो वैष्णव—विद्वेषी शाक्त। पं० कालीचरण एवं तारापद। लाल वस्त्र। लाल तिलक)

तारापद—

बाह बाह बाह! एक पागले रक्षा नाई, दस पागलेर मेला! कालीचरन मो'शाय! यह नवद्वीप है कै कोई पागलखाना है। एक पागल वह चुटियल पण्डित श्रीवास है। दूसरो पागल वह दढ़ियल अद्वैताचार्य है। तीसरो पागल वह यवन हरिदास है आधो हिन्दु आधो मुसलमान। चौथो पागल यह मुडियल नंगो बाबा कहूँ ते आय पहुँच्यौ है। और सब पागलन को सरदार वह निमाई पण्डित है ही। नवद्वीप में तो पागलन को मेला-सो ही जुर रह्यौ है—दुर्गा! माँ! ब्रह्ममयी।

कालीचरण—

तारापद मो'शाय! ओ बेटी एखनउ घुमाच्छे! माँ काली! तोर घूम कि भांगवे ना? एई नेडी नेडादेर के कोप् कोप् कोरे कबे खाबी माँ? तू सोय क्यूँ रही है। ये कीर्तनीया हरिबोला लोग तो एक नयोइ पंथ चलाय कै तेरी

बलि-पूजा ही मिटाय दैनो चाहैं हैं। तू कहा देख रही है। इनकूँ खाय जा न! कचा-कच्। माँ तारा ब्रह्ममयी।

निताइ—

बताओ भैयाओ! मेरो कन्हैया कहाँ है?

तारापद—

कन्हैया की रे? काली कौल! काली कौल!

निताइ—

हाँ हाँ कालो कन्हैया कालो।

तारापद—

कालो नहीं काली काली? अच्छो तू है कौन?

निताई—

भिखारी हूँ!

कालीचरण—

तो बस्ती में जा! वहाँ दार भात कछु मिल जायगो। यहाँ गंगा के घाटवाटन में काहे कूँ किल्लाय रह्यौ है।

निताई—

भैया! मैं अन्न-धन को भिखारी नहीं, प्रेम को भिखारी हूँ।

गाना-दुर्गा—

देओ देओ हे प्रेम भीख, मैं तो प्रेम भिखारी आयो।
नैनन का झोली कर डोलूँ, लेन दरस की भीख।। मैं तो०

मैंने सुन्यौ है कि नदिया में प्रेम की पैंठ लगी है और प्रेम लुटायो जाय रह्यौ है। कहाँ है वह पैंठ? कहाँ है वह प्रेम को लुटवैया? बताय देओ! मैं हू प्रेम को भिखारी हूँ।

तारापद—

अरे वाह रे प्रेम को भिखारी! अरे भिखारी सों हू कोई प्रेम करै है! प्रेम कर्‌यौ जाय है रूपवान् सों, गुणवान् सों, बल-बुद्धिमान् सों, और सबते अधिक प्रेम कर्‌यौ जाय है टक्-टक् टकावान सों बाबा टकावान सों—

टका धर्मः टाक कर्मः, टकाहि परमेश्वरः।
यस्य गृहे टका नास्ति, स तु टक्टक् टकायते।।
भिखारी सों कौन प्रेम करै है! बात बनाय रह्यौ है।

निताई—

करै है, कन्हैया करै है और वह यहाँ आयो है और प्रेम लुटाय रह्यौ है!

पूर्वपद—

नदिया में मेरो श्याम विहारी, रह्यौ लुटाय प्रेम भीख।।मैं०

कालीचरण—

अरे बावरे! प्रेमहू कोई अन्न धन है, असन वसन है जो लियो दिया जाय सकै, लुटायौ जाय सकै!

तारापद—

(बोतल की मुद्रा बना) कुछ 'कारण-टारण' मद-फद पीओ हो कहा? जरूर पीऔ हो। नहीं तो इतने वहकते और बकते कैसे? और चाहिये तो चलौ हमारे संग। माँ काली को महा-प्रसाद पवायँगे! आनन्द पिवायँगे।

निताई (पूर्वपद)—

प्रेम मदिरा पीऊँ पिवाऊँ, लैऊँ प्रेम की भीख।। मैं०।।
(गाते नाचते प्रस्थान)

तारापद—

चलौ काली बाबू! याके पीछे-पीछे चलैं। देखैं यह पागल कहाँ जाय है और कहा करै है?

कालीचरण—

है यह कछु अनोखो-सो ही पागल! याकूँ तो जैसे बनै तैसे फँसाय कै अपने दल में मिलाय लैओ फिर तो हमारे दल की फतह ही फतह है।

तारापद—

हाँ-हाँ चलौ! कहूँ हाथ ते निकस न जाय।
(दोनों का जाना। दूसरी तरफ से नन्दनाचार्य का आना)

नन्दनाचार्य—

(स्वगत) ओह! यह निमाई पण्डित कौन है? जितनो विचार करूँ हूँ उतनो ही उरझतो जाऊँ हूँ। कोई निश्चय पै नहीं पहुँच सकूँ हूँ। सोलह वर्ष की अवस्था में ही नवद्वीप जैसी विद्यापीठ की विद्वमण्डली को मुकुटमणि बन गयो। दिग्विजयी पण्डित कूँ एक ही श्लोक में परास्त कर दियो। जैसो तो अद्वितीय रूप, वैसी ही अद्वितीय विद्या–बुद्धि और अब वैसी ही अद्वितीय भाव–भक्ति। श्रीकृष्ण–रूप–गुण–सम्बन्धी श्लोकन के श्रवण मात्र सों प्रेम–मूर्च्छा आय जाय है। अश्रुधारान सों धरती पंकिल है जाय है। और केवल भक्त की भाव–भक्ति ही नहीं, अब तो कबहू–कबहू भगवद्भाव को हू प्रकाश होय है। श्रीवास पण्डित कूँ नृसिंह रूप सों दर्शन दिये। मुरारि जैसे ब्रह्मज्ञानी कूँ राम रूप और वाराह रूप सों दर्शन दैकै अपनो दास बनाय लियौ। और सर्वाधिक आश्चर्य तो यह है कि हमारे वैष्णव समाज के आचार्य शिरोमणि, वेद वेदान्तादि शास्त्र–पारज्ञ, तपस्वी वयोवृद्ध श्रीअद्वैताचार्य ने हू निमाई पण्डित के चरणन की पूजा कर डारी और सोहू स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण के मन्त्र सों पूजा। ॐ नमो ब्रह्मण्य देवाय० मन्त्र सों चरणन पै तुलसी चढ़ाय प्रणाम कर डार्‌यौ!! याको अर्थ तो यही है कि निमाई ही कन्हाई है, गौर रूप में श्रीकृष्ण ही है। परन्तु तथापि बुद्धि माननो नहीं चाहै है। शंका–संशय करती रहै है। यासों कोई निर्णय नहीं कर पाऊँ हूँ कि यह निमाई कौन है? नर कै ईश्वर? पुरुष कै महापुरुष कै परम पुरुष?

निताई—

(प्रवेश गाते हुये)

भैरवी—

आमि प्रेमेर भिकेरी!
के प्रेमेर विलाय, के प्रेम विलाय एइ नदियाय।। आमि०।।
के प्रेमेर माताल, के प्रेम ढेले देय।
जे जतो चाय ततो पाय, के प्रेम विलाय।
के प्रेम विलाय के प्रेम विलाय एइ नदियाय।। आमि०।।

नन्दनाचार्य—

(स्वगत) यह तो कोई नवीन संन्यासी महात्मा हमारे नवद्वीप में पधारे हैं (प्रकाश्य) भगवन्! आपके श्रीचरणन में मेरो प्रणाम स्वीकार होवै।

निताई—

(बाँह पकड़) वह प्रेम को लुटवैया यहाँ कहाँ है, बताओ। तुम तो अवश्य ही जानते होओगे।

नन्दनाचार्य—

(हाथ जोड़) भगवन्! मैं आपकी गूढ़ वाणी को अर्थ नहीं समझ सक्यौ। मैं तो एक पामर विषयी जीव हूँ। मैं कन्हैया कूँ कहा जानूँ!

निताई—

(खिलखिला कर हँसते हुये) ओहो-हो! मैं भूल्यौ-भूल्यौ! कन्हैया नहीं निमाई! निमाई पण्डित कूँ जानौ हो?

नन्दनाचार्य—

हाँ देव! वे तो नवद्वीप के सुविख्यात पण्डितराज हैं।

निताई—

तो उनके ही पास मोकूँ लै चलौ।

नन्दनाचार्य—

चलिये भगवन्! (दोनों चलने लगते)

समाज (चौपाई)—

संग नन्दनाचार्य निताई। चले जात मारग सुखदाई।।

चलत चलत कौतुक उर आयो। भये खड़े पुनि वचन सुनायो।।

निताई—

(स्वगत) ना, मैं नहीं जाऊँगो! यहाँ तलक तो मैं आयो अब वाकूँ ही आमनो परैगो (नन्दनाचार्य प्रति) सुनो पण्डित मैं तुम्हारे घर चलूँगो।

नन्दनाचार्य—

अहो भाग्य मेरे! यही मेरी हू अभिलाषा ही! पधारो देव।

निताई—

परन्तु तुम्हारो नाम तो बताओ, कहा है?

नन्दनाचार्य—

या दास कूँ नन्दनाचार्य कहैं हैं!

निताई—

तो नन्दनाचार्य जी! मैं तुम्हारे घर जाऊँगो तो सही परन्तु दो-एक दिना गुप्त रहनौ चाहूँ हूँ। काहू कूँ मेरे आयवे की रच-कहू खबर ना परै।

नन्दनाचार्य—

जैसी आज्ञा! मैं अपनी ओर ते कदापि काहू सों नहीं कहूँगो। पधारो! (दोनों का चले जाना)

समाज (चौपाई)—

भवन नन्दनाचार्य निताई। वास किये सुख निशि बिताई।।
पार परौस न जाने कोई। बात आचारज राखी गोई।।
सेवा करैं मनमोद बढ़ावैं। लखि चरित कछु बूझ न पावैं।।
उत भक्तन संग गौराराई। अचरज बात कहत हरषाई।।

(पर्दा खुलता। महाप्रभु, श्रीवास, चन्द्रशेखर, मुकुन्द, मुरारि आदि भक्त बैंठे हैं)

गौर—

श्रीवास जी! आज रात्रि मैंने एक बड़ो ही अद्‌भुत स्वप्न देख्यौ।

श्रीवास—

कैसो अद्‌भुत स्वप्न प्रभो? कहा हमहू सुन सकैं हैं!

गौर—

हाँ हाँ! वह सबन के सुनवे ही योग्य है। मैंने स्वप्न देख्यो कि

गाना-पद—

आयो रथ इक द्वार हमारे, ताल ध्वजा फहरावै।
गौर वरण विशाल पुरुष तन, नील वसन लहरावै।
भैया आज कोई घर आवै।।
वाम करण में कुंडल राजै, यति अवधूत लखावै।
अवलोकत अस भयो जियमें, हलधर रामहिं आवै।
भैया हलधर रामहिं आवै।।

(आवेश पूर्वक गरजते हुये) हलधर! बलराम! दादा! मधु लाओ! मधु! मधु! लाओ मधु

समाज (दोहा)—

हलधर हलधर कहत ही, भयो हलधर आवेश।
गर्जत तर्जत चहत मधु, करत जनन आदेश।।

श्रीवास—

देखो-देखो चन्द्रशेखर जी! प्रभु में तो बलरामजी को आवेश है आयो है। तबही ये मधु के लिये आदेश कर रहे हैं।

चन्द्रशेखर—

श्रीवास जी! मोकूँ तो वारुणी की सुगन्धि हू आय रही है। हलमूसल हू इनके हाथन में प्रतीत होयँ हैं।

मुरारि—

और इनको सुवर्ण वर्ण हू तो श्वेत चन्द्र वर्ण है गयो है। आश्चर्य!

गौर—

लाओ मधु! मधु लाओ।

श्रीवास—

(हाथ जोड़) भगवन्! मधु तो आपही में भर्‌यौ भयौ है। हम मधु कहाँ ते लावैं और कैसो मधु लावैं!

सम्मिलित गायन (मालकोस-दादरा)—

मधु के भंडार तुम्हीं, मधु के भंडारी तुम्हीं।
मधु के कर्तार तुम्हीं, मधु के दातारी तुम्हीं।।
मधु पीवन हार तुम्हीं, मधु आनन्द धन तुम्हीं।
मधु कहाँसों दैवैं तुम्हीं, मधु के भिखारी हम्हीं।।

समाज (बंगला पयार)—

श्रीवास पंडित बोले शुनो हे गुसांई।
तुमि जारे विलाओ सेई तारे पाई।।

गौर—

लाओ मधु! मधु लाओ।

श्रीवास—

(गंगाजल लाकर) लैओ प्रभो यह मधु!

समाज (दोहा)—

गंगाजल श्रीवास तब, दियो प्रभु कूँ लाय।
पान करत तत् छिन् प्रभु, लीन्हो रूप दुराय।।
राजत भाव विभोर, मौन श्रीवासादि सकल।
बीते क्षन कछु और, बूझत 'हौं कहा कह्यौ'?

गौर—

(सावधान हो) भैयाओ! मैंने कहा कह्यौ?

श्रीवास—

प्रभो! आप एक स्वप्न सुनाय रहे हैं कि एक महापुरुष आपके भवन के द्वार पै आयौ है। नील वस्त्र, एक कर्ण में कुण्डल है। वह हलधर जैसो लगै है।

गौर—

हाँ ठीक है। तो वह महापुरुष—

पूर्वपद—

बूझत डोलत मद भरि बोलत, कहाँ पंडित है निमाई।
बेर बेर दस बीस बेर बस, टेर यही इक लाई।
भैया, कहाँ पंडित है निमाई।।
(यह सुन करकै मोकूँ)
भयो सम्भ्रम अति प्रश्न कियो हौं, को तुम देहु बताई।
'प्रेम' प्रभु हौं भाई तुम्हारो, काल्ह मिलिहौं आई।
भैया, खोजहू तुम सब जाई।।

यासों श्रीवास जी! मेरे विचार में ऐसो कोई महापुरुष हमारे नगर में अवश्य ही आयो है। सो आप सब जायकै उन को पतो पारौ।

श्रीवास—

जो आज्ञा प्रभो! चलो भैयाओ! चलैं नगर कूँ! देखैंगे कहाँ हैं वे महापुरुष। (श्रीवासादि भक्तों का चले जाना)

शची—

(प्रवेश दूसरी ओर से) बेटा निमाई! तू जो स्वप्न की कथा भक्तन कूँ सुनाय रह्यौ हो, सो मैं हू भीतर सों सुन रही ही। सुनत सुनत मोकूँ ऐसो लग्यौ मानौ तो मेरो विश्वरूप ही लौट कै आय रह्यौ होय! यह कहा बात है? मेरे मन में हठात् ऐसी बात क्यूँ उठी? तू कछु जानै है तो बताय बेटा।

गौर—

माँ! मैं कहा बताऊँ! वे ही बतावैंगे। वे ही स्वयं तुम्हारे पास आयकै अपनो परिचय दैंगे। तब तुम सब जान पाओगी।

शची—

ऐसो शुभ दिन कब आवैगो बेटा!

गौर—

बहुत शीघ्र ही माँ! दो-एक दिना में ही वे तुम सों आय मिलैंगे

शची—

जय नारायण! जय गोविन्द! तुम्हारी कृपा सों कहा मैं अपनी खोयी निधि फिर पाय सकूँगी। चलूँ! नारायण की सेवा को आयोजन करूँ। (प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

हाट बाट ढूँढ़त फिरत, देखत घर घर जाय।
पाये नहीं महापुरुष कहूँ, कहत प्रभु सों आय।।
(प्रवेश श्रीवासादि भक्तजन)

श्रीवास—

हे प्रभो! हमने तो नवद्वीप सब ढूँढ़ हेरयौ। गृहस्थिन के भवन, साधुन के आश्रम, मठ-मन्दिर सब छान डारे परन्तु जैसो महापुरुष आपने बतायो हो वैसो तो कहूँ नहीं पायौ।

गौर—

ठीक है! नित्य आनन्द कूँ पामनो सहज नहीं है वह बड़ो गूढ़ तत्त्व है।

बंगला (चै० भा०)—

अति गूढ़ नित्यानन्द तत्त्व एइ अवतारे।
आमि ना जानाले केह जानिते ना पारे।।

यासों चलौ। मैं खोज कै देखूँ हूँ। कदाचित् कहूँ मिल जायँ।

श्रीवासादि—

चलौ प्रभो! हरिबोल, हरिबोल (प्रस्थान)

समाज—

भक्त संग चले प्रभु धाई। मन मन विहँसत अति सुख पाई।।
निज पन तजि निजजन पन राखैं।
प्रीति प्रभु की कहा कोई भाखै।।
नन्दनाचार्य भवन निताई। बैठे मगन ध्यान कन्हाई।।

(पर्दा खुलता है। नित्यानन्द एवं नन्दनाचार्य बैठे हैं)
(नेपथ्य में महाप्रभु, श्रीवासादि द्वारा 'हरिबोल' ध्वनि)

निताई—

(चौंककर सुनने लगते हैं) अहा! मधुरकण्ठ! मधुर ध्वनि। कोई आय रहे हैं। क्यूँ नन्दनाचार्य जी! तुमने अवश्य ही मेरे आयवे की खबर कर दीनी है।

नन्दनाचार्य—

(हाथ जोड़) भगवन्! मैंने तो घुणाक्षर मात्र हू काहूँ सों नहीं कह्यौ है।

निताई—

तो यह जन-कोलाहल कैसे है रह्यौ है?

नन्दनाचार्य—

भगवन्! कमल के सुवास सों खिंचे भये भौंरा आय रहे हैं।

श्रीवास—

(नेपथ्य में से) नन्दनाचार्य जी! प्रभु पधारे हैं।

नन्दनाचार्य—

पधारो प्रभो पधारो! अहोभाग्य मेरे!

(प्रवेश महाप्रभु—पीछे-पीछे श्रीवासादि भक्तजन)

निताई—

(खड़े हो भुजाएँ बढ़ा) कन्हैया! भैया कन्हैया!

गौर—

(भुजा बढ़ाये) दादा! दाऊ दादा!

(दोनों दौड़कर लिपट जाते—गिरने लगते—श्रीवासादि भक्तजन सम्हाल लेते हैं) हरिबोल!

समाज (दोहा)—

झपट लिपट दोऊ मिलै, ज्यूँ चुम्बक सों लोह।
दरस परस सुख पायकै, मिट्यौ विरह विछोह।।
प्रेम विवश निताइ प्रभु, अंग अंग रहै हार।
विश्वम्भर निज अंक मधि, रहै निताइ सम्हार।।
राम धरै ज्यूँ अंक महँ, मूर्च्छित लक्ष्मण भाई।
त्यूँ निमाई अंकम लिये, विह्वल प्रेम निताई।।

गौर—

श्रीवास जी 'वर्हापीडं नटवर वपुः' श्लोक पढ़ौ।

श्रीवास (श्लोक)—

वर्हापीडं नटवर वपुः कर्णयोः कर्णिकारं
विभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयन्तीं च मालाम्।
रन्ध्रान्वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दै-
र्वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद् गीतकीर्तिः।।

निताई—

(गद्गद् अस्फुट स्वर में) कन्हैया! नटवर........मोर.......मोर...... मुकुट........पी.......पीताम्बर! क-क.....

गौर—

श्रीवास! श्लोक फिर पढ़ौं!

श्रीवास—

(पुनः पाठ) वर्हापीडं नटवर वपु........इत्यादि।

समाज—

ज्यूँ ज्यूँ पद्य पढ़त श्रीवासा। त्यूँ त्यूँ होत श्रीकृष्ण प्रकाश।।
कान्ह कन्हैया भैया नटवर। कहत निताई लखत विश्वम्भर।।

निताई (पद-झिंझोटी-दादरा)—

क......क.....क.....कन्हाई भाई, कहा तू ही कन्हाई।
क....क......क०।। टेक।।
कहाँ तेरो मोर मुकुट, मुरली कहाँ छिपाई।
कहाँ तेरो श्याम वरण, गौर काहे भाई।।१।।

गौर—

व्रज में मेरो मोर मुकुट, मुरली हाथ भाई।
नदिया में भक्तसाज, रूप श्याम दुराई।।२।।

निताई—

कहाँ तेरा रासरंग, गोपिन संग भाई।
नटनागर भेष तेरो, कहौ काहे दुराई।।३।।

गौर—

व्रज को रास गोपिन संग, निशि एकान्त भाई।
नदिया रास कीर्तन, प्रगट धूम मचाई।।४।।
व्रज में प्रेमभोगी बड़े, हम तुम दोउ भाई।
नदिया प्रेमयोगी बनै, रोवैं कृष्ण गाई।।५।।

निताई (कवित्त-द्रुतलय)—

देश-देश ढूँढ़ि आयो, कहूँ नहिं कान्ह पायो
काहू ने सुनायो नव-द्वीप यहाँ आयो है।

गौर—

जोय जोय बाट भाई, नैनन नीर बहाई
गिनत दिवस बीते, अब तुम पायो है।

निताई—

पकरन चोर आयो, पकरि सो चोर पायो
जकरि हौं राखौं ढिंग, यही मन आयो है।

समाज—

गौर श्याम दोऊ भाई, जोरि भुज नाचैं गाई
निताइ निमाई 'प्रेम', मन अति भायो है।।
(दोनों का गलबाँही दिये नृत्य। भक्तों द्वारा 'हरिबोल')

समाज (दोहा)—

नित्य भाव दुराय तब, नर लीला अनुसार।
आदर दै अवधूत कूँ, बोलै गौर उदार।।

गौर—

देव! आज आपके दर्शन पायकै मेरो जन्म सार्थक भयो। आप तो श्रीकृष्ण प्रेम तथा आनन्द की मूर्त्ति ही हो। क्षणकाल के लिये हूँ जाकूँ आपको संग प्राप्त है जाय है वाके लिये दुर्लभ कृष्णप्रेम सुलभ है जाय है। यह भगवान् श्रीकृष्ण की अपार कृपा है जो आप घर बैठे ही पाय गये हो। अब आप यहीं कछु दिन निवास करैं एवं हमकूँ श्रीकृष्णभक्ति को पथ दिखावैं।

निताई—

(स्वगत) ओह प्रभो! दीन-हीन जीव जैसो बनकै छिपनो चाहौ हो—और मोहिं ते छिपनो चाहौ हो। अच्छो तो मैं हूँ जैसे कूँ तैसोइ उत्तर दऊ हूँ (प्रकाश्य) निमाई पण्डित! आप नवद्वीप में प्रेम लुटाय रहे हैं—सुनकै बड़ी आशा लैकै आयो हूँ। मोकूँ हू एक कना प्रेम-भीख दैकै मेरो उद्धार करौ।

श्रीवास—

(भक्तों के प्रति पृथक्) देख लेओ भैयाओ! दोनोंन के कौतुक रंग कूँ। आज तो श्रीगणेश ही है। आगे न जानै इनके कितेक रंग-ढंग देखवे कूँ मिलैंगे।

चन्द्रशेखर—

अहोभाग्य हमारे! जो आज यह अद्भुत जोरी जुरी है। अब इनकी छत्र-छाया में प्रेम-साम्राज्य होयगौ—

सम्मिलित गायन (गजल-मिश्र-आसावरी—)

राम लक्ष्मण से मिले और और कृष्ण से बलराम हैं।
धन्य है घड़ी आज की, बिछुड़े मिले दो प्राण हैं।।
गंगा से यमुना मिलीं, यह प्रेम का संगम बना।
भाग कलियुग के खुले, तीरथ जो यह जंगम बना।।
मरते कलिहत जीवों को, पिलायँगे कृष्ण नाम सुधा।
'प्रेम' बिछुड़ों को मिलावे, यह मिलन लीला सदा।।
हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल

गौर—

श्रीपाद! कल आषाढ़ी पूर्णिमा है—व्यास पूजा को दिवस है। आपकी व्यास-पूजा कहाँ होगी?

निताई—

(श्रीवास प्रति इंगित कर) या पण्डित के घर में!

श्रीवास—

धन्य भाग्य मेरे! एक ही दिन नहीं भगवन् आप तो सदैव दास के ही गृह कूँ पवित्र करते-भये विराजो, तो मैं कृतार्थ है जाऊँ!

गौर—

तो फिर चलौ! श्रीवासजी के घर चलैं। वहाँ नित्यानन्द जी की व्यास पूजा को अधिवास-कीर्तन करैंगे।

(सबों का प्रस्थान। मार्ग में भक्तजनों द्वारा गायन)

भक्तमंडली (यथाराग-दादरा)—

आनन्द आज आनन्द भयो, मंगल मन भावना।
जोरी जुरी निताइ गौर अब, कलियुग महापावना।।१।।
करुणासिन्धु गौर इन्दु, नित्यानन्द दीनबन्धु।
दीन हीन पापी पतितजन, मात पिता जु पावना।।२।।
प्रेमसिन्धु गौरचन्द्र, जलधर प्रभु नित्यानन्द।
प्रेमधार धराधर अब, घोर बरसावना।।३।।
दयासिन्धु गौय संग, पवन प्रबल नित्यानन्द।
उठे तरंग प्रेम रंग, विश्व लोक बहावना।।४।।

जगद्‌बन्धु गौर हरी, लाये नौका नाम हरी।
नित्यानन्द 'प्रेम' माझी, पार भव लगावना।।५।।
(गाते-गाते प्रस्थान। पर्दा)

समाज (दोहा) —

भक्तन संग श्रीगौर हरि, कीर्तन करि गये धाम।
नित्यानन्द श्रीवास गृह, कीन्हे निशि विश्राम।।

(पर्दा खुलना। नित्यानन्द शयन कर रहे। श्रीवास चरण-सेवा कर रहे। दिवाल पर दण्ड टँगा हुआ)

सेवा करि श्रीवास, गये शयन कराय निताइ।
आनन्द के जे रास, कीन्हे इक कौतुक नयो।।

निताई—

श्रीवास जी! अब रात्रि बहुत है गई है—आप जायकै विश्राम करौ।

श्रीवास—

जो आज्ञा (प्रणाम कर चले जाते हैं)

निताई—

(उठकर बैठ जाते हैं। आनन्द-मगन झूमते हुये)

समाज (दोहा) —

नव मिलन नव नेह सुख, उठत हृदय हिलोर।
बूड़त उछरत भाववश, छिन छिन औरै और।।

निताई—

आनन्द! महा आनन्द (उछलते हुये जा दिवाल पर से दण्ड उतार) अरे दण्ड! मैंने अनेक वर्षन तांई तेरो भार ढोयो है परन्तु अब—

गाना—

काम कहा है दंड को अब दंडधारी आये हैं।
लोक वेद धर्म से अतीत प्रेम लाये हैं।।
त्रिगुन हरन अभय करन, चरण दंड आये हैं।

समाज—

तोरि दंड नित्यानन्द, प्रेम आनन्द पाये हैं।।

निताई—

(दण्ड तोड़ते हुये) जाओ! काठ के दण्ड! विदा होओ। तुम्हारो कार्य पूरो भयो। अब स्वयं प्रभु विश्वम्भर के त्रिगुणातीत चरण प्राप्त है गये हैं। यासों हे त्रिगुण के प्रतीक काष्ठ दण्ड! अब तेरो कहा प्रयोजन? (तोड़कर फेंक देते हैं)

(महाप्रभु का आविर्भाव-षड़भुज रूप धर)

निताई—

(अपलक दर्शन करते रहते हैं)

समाज (सोरठा)—

षड़भुज मूरति धारि, सर्वेश्वर श्रीगौरहरि।
संशय भ्रम सब टारि, निताई निर्द्वन्द्व किये।।

छन्द—

रूप षड़भुज गौर प्रगट्यौ, लख्यौ न काहू और है।
एक वपु मधि रूप तीन, राम कृष्ण गौर है।।
ऊर्ध्व बाहु युगल मध्य, धनुष बाण विराजे है।
मध्य द्वय कर कमल मुरली, अधर मनहर साजे है।।
पीत भुज द्वय झूलैं तर तहँ, दण्ड करमंडलु गहे।
राम जोई कृष्ण सोई, सोई गौरा कलि भये।।
धर्म अर्थ काम मोक्ष, चार भुज सों दें हरी।
नाम प्रेम द्वै भुजन सों, जयति जय जय गौर हरी।।
(षड़भुज रूप अन्तर्द्धान)

निताई—

(अट्टहास पूर्वक) छिप न सकै-छिपाय न सकै। आनो ही पर्‍यौ। स्वरूप दिखामनो ही पर्‍यौ। मेरे मन में हू कछु शंका भ्रम है आयो हो सो सब दूर है गयो परन्तु (विचार पूर्वक) ये जब अपने स्वरूप कूँ गुप्त ही राखैं हैं तो मोकूँ हू गुप्त ही राखनो होयगो। जैसे मेरे नाथ की इच्छा (शय्या पर बैठ जाते हैं। मस्त)

समाज (दोहा)—

प्रात सुनै सम्वाद प्रभु, तोरै दण्ड निताई।
आय जहाँ अवधूत चन्द, बैड़े सुध विसराई।।

(प्रवेश महाप्रभु, श्रीवास एवं भक्तमण्डली)

श्रीवास—

यह देखो प्रभो! इनकी लीला! मैं इनकूँ रात्रि में शयन कराय कै गयो। सबेरे आयौ तो दंड टूट्यौ परौ है और आप अलमस्त विराजे भये हैं।

गौर—

(टूटे दण्ड को उठा) श्रीवास जी! यह तो अवधूत शिरोमणि हैं। विधि—निषेध ते परे हैं। इनकी गति-विधि ये ही जानैं। हम इनसों कछु कहैं—यह हमारो अधिकार नहीं है (निताई की बाँह पकड़) उठो श्रीपाद! माताजी ने आप बुलाय भेजे हैं। वे आपके दर्शन के लिये बड़ी व्याकुल हैं। सो गंगा स्नान करके चलैंगे। या दण्ड कूँ हू विधिपूर्वक गंगाजी में विसर्जन कर आयँगे। (सब चले जाते हैं)

समाज (दोहा) —

जाय गंग निज हस्त सों, दियो विसर्जन दंड।
करि स्नान निज गृह चलैं, भक्तमंडली संग।।
(प्रवेश महाप्रभु, नित्यानन्द, श्रीवासादि भक्तमंडली)
कर गहि कहत गौर निमाई। बड़ी साध मम घर चलो भाई।।
हँसि बोले नित्यानन्द राई। मैं तो सेवक तुम्हरो सदाई।।

निताई (सवैया-माँड) —

अब न तजौं तुमही कूँ भजौं, जीवौं जब लगि यह टेक गही।
मम मात पिता गुरु इष्ट सखा, तुमही सब नित यह नातो सही।
अब आज्ञा करौ सब शीश धरौं, करिहौं न विचार सही असही।
विनती इतनी लिखौ प्रेमहू को, निज दासन में इक नाम कहीं।।

समाज (चौपाई) —

भुज भरि प्रभु हृदय लगाये। हरि बोल धुनि भक्तन गाये।।
दै गरबाँह चले दोउ भाई। हरि बोल जन गावत जाई।।
अद्‌भुत जोरी गौर निताई। लखि लखि नर नारी बलि जाई।।
कृपा कोर जीवन प्रति करहीं। नदिया वास सफल सब गनहीं।।
पहुँचे जाय भवन शचीनन्दन। कीन्ह निताइ मात पग वन्दन।।
शचि उठाय मुख निरखन लागी। वत्सल नेह प्रबल मति पागी

गौर—

लखहु मात तात हौं लायो। बड़ भ्राता जिमि मो मन भायो।।

शची—(मोकूँ हू)

लागत विश्वरूप जनु पायो। खोयो धन आज पुनि पायो।।
वत्स! गोदी बैठहु तुम आई। शीतल होय कछु छाती माई।।

समाज—

मात कही सो कीन्ह निताई। शिशु सम गोदी बैठे जाई।।
सो छवि सो सुख कहि ना आवै। भक्त हरषि सब हरिहरि गावैं

निताई—

तबहि नित्यानन्द बोले माई। इन बातन मम क्षुधा न जाई।।

समाज—

सुनत वचन शचि हिय उमगायो। विश्वरूप विछोह विसरायो
बेगि भीतर धायकै, मुदित थार भरि लाईं।
नारिकेल छाना बड़ा, विविध सरस मिठाई।।
गोद बिठाय चिबुक धरि, सूँघत मस्तक मात।
अपने हाथन देत मुख, निताई पावत जात।।

गौर—

हँसि बोले तब गौराराई। मेरी बात न बूझति माई।।
ऐसो धन कछु आज जो पायो। मात निपट मोकूँ बिसरायो।।

निताई—

करौ काहे डाह तुम भाई। दया दीन पै राखौ गुसांई।।
बहुत दिवस महँ भेंट्यो माई। लैन देओ इक घूँट तो भाई।।
तुम्हरे तो सुख लूट सदाई। लूटौं आज हौं, जाओ पलाई।।

समाज—

मात हँसी सुनि बात सुहाई। बोलि निमाई गोद बैठाई।।
बैठि गोद दोऊ मोद मनावैं। मात जु हमरी हमरी गावैं।।
निपट बाल ज्यूँ रार बढ़ावैं। धन्य प्रेम जो ज्ञान भुलावैं।।
नेह न जननी हिरदै समावै। लोचन कोरसों ढरि ढरि जावै।।
दायें अंक निताई विराजैं। बाँये विश्वम्भर छवि छाजैं।।

मिलन अपूरब दुहुँन को, जननी अंक मझार।
निरखि निरखि सब भक्तजन, बहे जात सुखधार।।

पद—

बलि बलि आज युगल पै जैये।
जननी गोद मधि गौर निताई, मोद मातु का कहिये।।
नील वसन तन सोहै निताई, गौर पीतपट धरिये।
गंग-यमुन मनोधार मिलि शचि, सागर संगम लहिये।।
निताइ धराधर गौर विश्वम्भर, जननी गोद समैये।
अगरज प्रेमभक्ति की महिमा, प्रभुहिं गोद खिलैये।।

धुन—

जय जय निताई, जय जय निमाई।
जय जय जय शचि, बलि बलि जाई।।

इति निताई-निमाई-मिलन लीला सम्पूर्ण।

❧❖❧

यौवनामृत लहरी **त्रयोदश कणामृत**

महाप्रकाश लीला

(सात पहरिया भाव)

मंगलाचरण—

जय रूप सनातन भट्ट रघुनाथ।
श्रीजीव गोपालभट्ट दास रघुनाथ।।
एइ छय गोसाँयेर करि चरणवन्दन।
जाहा हैते विघ्ननाश अभीष्ट पूरण।।
श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधागोविन्द।।

लीलारम्भ

समाज (चौपाई)—

अचरज चरित गौर नित करहीं।
नित प्रति नव नव तत्त्व उघरहीं।।
बहु विधि परवैभव दरसावैं। कहूँ गुप्त कहूँ प्रगट जनावैं।।
भक्त भाव धरि नाचैं गावैं। अद्भुत वैभव प्रेम प्रकाशैं।।
कबहु कृपा जब उर उमगावै। ईश भाव स्वरूप लखावैं।।
वराह रूप नरसिंह कभु, कृष्ण रूप कभु राम।
दरसाये मनभामतो, पूरे भक्तन काम।।
अति अपूरब चरित इक, ईश्वर भाव विलास।
सात पहर लौं गौरहरि, कियो महाप्रकाश।।
एक दिवस प्रभु गौर दया कर। गमने भोरहिं श्रीनिवास घर।।
भक्त सकल सुनत जुरि आये। हरि संकीर्तन धूम मचाये।।

(प्रवेश कीर्तनकारी महाप्रभु, निताई, अद्वैत, श्रीवास, हरिदास, मुरारि, मुकुन्द आदि भक्त परिकर)

संकीर्तन धुन—

मन्दारमूले वदनाभिरामं, विम्वाधरे पूरित वेणुनादम्।
गोगोप गोपीजनमध्यसंस्थं, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति, हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।
गोविन्द माधव, गोपाल माधव।
मात पिता गुरु बन्धु माधव।।
(तुमुल संकीर्तन)

समाज (सोरठा)—

ईश भाव विभोर, विष्णु सिंहासनहिं चढ़ै।
अंग अंग हरि गौर, दिव्य कान्ति झलमल करै।।

गौर—

(दक्षिण भुजा उठा—गर्जन करते हुये)

बंगला (पयार चै० भा०)—

कलियुगे आमि कृष्ण आमि नारायण।
आमि सेइ भगवान देवकी नन्दन।।

अनन्त ब्रह्माण्ड कोटि माझे आमिनाथ।
जतो गाओ सेइ आमि तोर मोरा दास।।

अद्वैत! श्रीवास! मेरो अभिषेक करौ। यह मेरो अवतार तुम्हारे लिये भयो है।

श्रीवास—

आनन्द! महानन्द! भक्तजनो, सब मिल करकै महाभिषेक को आयोजन करौ। माता-बहन पहले तो गंगाजल भर लावैं— १०८ कलश। अरी दुखी दासी! तुमहू जाओ। भैया राम एवं श्रीपति! तुम दोनों आवश्यक सामग्री जुटाओ—पंचगव्य, पंचामृत, वस्त्र, माला, अलंकार, धूप, दीप, नैवेद्य—मेवा, मिष्ठान्न, पकवान, ताम्बूल आदि सब सामग्री शीघ्र ही जुटाय लेओ।

अद्वैत—

भक्तो! मेरे प्रभु पधारे हैं—अखिल ब्रह्माण्डनायक स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण पधारे हैं। दुर्लभ दर्शन सुलभ है गयो! अप्राप्त सेवा अनायास प्राप्त है गई। सेवा करौ अपने तन-मन-धन कूँ, जीवन-जन्म कूँ कृतार्थ करौ जुट जाओ सब सेवा-कार्य में।

समाज (चौपाई)—

नारि गंग जल भरि भरि लाये। भक्त कपूर सुवास मिलाये।।
शत घट कहा सहस घट लाये। मची होड़ जन जन उमगाये।।
हुलुधुनि जय धुनि हरि धुनि होई। मंगल गीत गावैं जन कोई।।
प्रभु मगन सिंहासन राजहिं। कृपादृष्टि सुधा बरसावहिं।।
प्रथम कलस निताइ चढ़ाये। जय जय गौर गोविन्द मुख गाये।।
पुनि अद्वैत श्रीवास चढ़ाये। पुरुष सूक्त उचरत मन भाये।।

पुरुष सूक्त—

ॐ सहस्त्र शीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद् दशागुंलम्।।
ॐ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।

काबेरी नर्मदा वेणी तुंगभद्रा सरस्वती।
गंगा च यमुना चैव स्नानार्थमाहृतम्।
गृहाण त्वां रमाकान्त स्नानाय श्रद्धया जलम्।।

अमरागन नर तनु धरि आवैं ढोरि शीश जल फल महा पावैं।।
ध्यानहू मधि जल जाकुँ चढ़ाये। भय यमदंडको जात नसाये।।
सो प्रभु आँखिन आगे राजैं। भक्त भाग्य महिमा लखौ आजै।।
कोटि जन्म करि पुन्य न पावै। ता हरि कूँ हरि कृपा लुटावै।।
श्रीवास भवन जे दास और दासी। लावैं गंगाजल करैं खवासी

(प्रवेश 'दुखी' नाम की दासी गंगाजल कलश लिये)

भाग्यवती इक दासी तहँ, 'दुखी' जु ताको नाम।
'सुखी' नाम ताको धर्यौ, गौरा करुणा धाम।।

महाप्रभु—

श्रीवास! आँखन में आँसू और काँख में कलशा दाबे यह कौन आय रही है?

श्रीवास—

एक दासी है प्रभो!

महाप्रभु—

याको नाम कहा है?

श्रीवास—

जय हो प्रभो! याको नाम है दुखी।

महाप्रभु—

दुखी नहीं सुखी आज सों याको नाम है। प्रेम के निर्मल अश्रु-मुक्ता और गंगाजल वह मोकूँ चढ़ाय रही है! फिर दुखी कैसे? सुखी! परम सुखी। याकूँ तो प्रेम-भक्ति लाभ है गई है।

दुखी—

हा कृष्ण! कृष्ण! (कहती, रोती हुई मूर्च्छित हो जाती है)

श्रीवास—

हरिबोल! यह आपकी परम स्वतन्त्र कृपा को ही फल है कृपानिधे!

महाप्रभु—

नहीं श्रीवास! यह भक्त-सेवा को फल है। भक्त मोकूँ अपनी आत्मा सों हू अधिक प्रिय है। तुम मेरे परम भक्त हो। दुखी तुम्हारी दासी है। याहि कारण वह सुखी है गई। यह दासी ही कहा श्रीवास! तुम्हारे घर के तो कूकर-विलैया हू मेरे प्रिय हैं।

श्रीवास—

जय जय गौर हरि! जय अयाचित कृपा कारी! हरिबोल

समाज (चौपाई)—

स्नान शेष नव वसन धराये। चन्दन माल सुगन्ध लगाये।।
पुनि सिंहासन गौर विराजे। नित्यानन्द कर छत्र सुसाजे।।
बाँये गदाधर चमर ढुरावै। दाँये नरहरि जय जय गावै।।
भक्त सकल मिलि पूजन करहीं। पाद्य अर्घ्य सादर लै अर्पहीं।।
गन्ध पुष्प धूप बहु दीपा। पट भूषण नैवेद्य वलि पूजा।।
षोड़श सब उपचार जु कीन्है। मन भाये बहु भेंट जू दीन्हे।।
कोई सुवर्ण रत्न अलंकारा। धरि पद पद्मन करैं नमस्कार।।
श्वेत नील सुपीत पाटम्बर। अर्पहिं कोई वसन बहु सुन्दर।।
कोई नखचन्द्र चन्द्रिका आगे। लै लै कुसुमन पाँति जु साजे।।
कोई श्रीचरनन चन्दन लावैं। कस्तूरी कुमकुम कोई चढ़ावैं।।
धाय आय कोई चरनन लोटैं। बाँधत प्रेमभक्ति उर पोटैं।।
कोई लै लै फल बहु आवैं। परसैं चरन महाफल पावैं।।
जे पद पूजन कूँ सब चाहैं। ब्रह्मा शिव लक्ष्मी ललचावैं।।

दास दासी श्रीवास के, पूजत श्रीपद सोय।
वैष्णव जन के भजन को, ऐसोई फल होय।।

विधि अनविधि मन भाई कीन्है। आरति वारति आरति लीन्हे
हुलसि हुलसि स्तव बहु गाये। मंगल के मंगल घर पाये।।

स्तुति—

जय शचिनन्दन जगद्वन्दन, जय जगन्नाथ अवतरी।
जय धर्मपालक साधुरक्षक, जय परात्पर नरहरी।।१।।
जय जय अगम्य परमरम्य, आदितत्त्व स्वयं हरी।
जय भक्त सुखकर नयनगोचर, हरिसंकीर्तन विस्तरी।।२।।

जय अधम तारन पतितोद्धारन, परम करुणा उरधरी।
जय प्रेमसिन्धो प्रणतबन्धो, नदियाइन्दु गौर हरी।।

धुन—

जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि।

प्रणाम श्लोक—

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं
तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम्।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल! भवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष! ते चरणारविन्दम्।।
ॐ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः।।
(साष्टांग प्रणति)

समाज (चौपाई)—

ह्वै प्रसन्न प्रभु हस्त बढ़ाये। पाऊँ देओ कछु वचन सुनाये।।

महाप्रभु—

कछु खायवे कूँ तो देओ (दोनों हाथ पसारते)

अद्वैत—

श्रीवास जी! प्रभु भोग की इच्छा कर रहे हैं। आज तांई तो हमही हाथ पसारते आये किन्तु आज स्वयं प्रभु हाथ पसार रहे हैं। धन्य दीन वत्सलता! धन्य भावग्राहकता! लाओ भोग सामग्री! जाके पास जो कछु है सब लै लै आओ और प्रभु कूँ भोजन कराऔ। अलभ्य लाभ लैओ। अक्षय पुण्य कमाओ।

समाज (चौपाई)—

नर नारि मन मोद बढ़ाये। भरि भरि थार अहार जुटाये।।
निज निज करसों श्रीमुख देवहिं।
जन्मकोटि फल आजहिं लेवहिं।।
कोई लाडू दैं छाना मिठाई। कोई सन्देश खीर मलाई।।
कोई पूआ पीठा कोई देवहिं। परम प्रीति सन प्रभु सब लेवहिं।।

महाप्रभु—

लाओ और कछु लाओ टेरहिं। हौं गोवर्धन पुनि पुनि बोलहिं।।

समाज—

अचरज चरित हेरि जन हरषहिं। लाय लाय वस्तु बहु अरपहिं
कोई देय केला आम रसाला। कोइ बादाम दाख छुआरा।।
कोई गिरि मिश्री संग मलाई। कोई शीतल जल डाब सुहाई।।
विश्वम्भर सब पावत जावहिं। लावहु और वचन सुनावहिं।।

महाप्रभु—

लाओ और लाओ। मैं गोवर्धन देव हूँ।

समाज—

दौरि दौरि जन नगरहिं आवैं। वस्तु आछी मीठी बहु लावैं।।
सहसन लाडू सन्देश जु पाये। सहसन केला आमहु खाये।।
सहसन कलसा गौरस पीये। वस्तु कोई बचन नहिं दीये।।

बंगला (चै० भा०)—

सहस्त्र सहस्त्र भाण्ड दधि क्षीर दुग्ध।
सहस्त्र सहस्त्र कान्दि कला, कतो मुद्‌ग।
कि अपूर्व शक्ति प्रकाशिला गौरचन्द्र।
केमत खायेन नाहि जाने भक्तगण।।

महाप्रभु—

लाओ और लाओ!

श्रीवास—

हे विश्वोदर! हम कहा आपके उदर की पूर्ति कर सकैं हैं।
अब तो केवल पान-बीरी ही शेष हैं।

महाप्रभु—

लाओ जो कछु होय सब लाओ।

समाज—

सहस सहस बीरी लै धराई। विश्वम्भर गये सकल चबाई।।
व्रज गोवर्धन बनि बहु खाये। नदिया विश्वम्भर न अघाये।।

पाय परम संतोष, भक्तन भाव पदार्थ सों।
कृपा कोर सों पोष, करन लागे जन जन प्रति।।
गुप्त कृपा की कथा सुनावैं। परचो दै दै भक्ति दृढ़ावैं।।

महाप्रभु—

श्रीवास! जब तुम पण्डित देवानन्द के यहाँ भागवत सुनवे जायो करते तो वा दिना की घटना याद है तुम्हें?

श्रीवास—

कौन-से दिना की कैसी घटना नाथ?

महाप्रभु—

जा दिन प्रह्लाद भक्त की कथा है रही ही। तुम वाकूँ सुनकर कै प्रेमभाव में विह्वल हैकै रोयवे लगे तो पण्डित के विद्यार्थिन ने तुमकूँ पाठ में विघ्न जान करकै वहाँ ते निकास दियौ हो न?

श्रीवास—

हाँ प्रभो! निकास तो दियौ हो।

महाप्रभु—

और पण्डित देवानन्द ने हू उनकूँ निषेध नहीं कर्यौ हो। जैसे शिष्य वैसे ही गुरु!

श्रीवास—

हाँ प्रभो! वा दिना कथा सों वंचित हैवे के कारण मोकूँ अत्यन्त दु:ख भयो और तब मैं घर में ही एकान्त में श्रीभागवत पाठ कर्यौ करतो और खूब रोयौ करतो।

महाप्रभु—

मैंने ही तुमकूँ अपनो प्रेम दैकै रुवायो हो। तुम्हारे दु:ख कूँ देख मैंने ही तुम्हारे हृदय में बैठ तुमको प्रेम-सुख दियौ हो—

तबे आमि तोमार एइ हृदय बसिया।
कान्दाइलुँ आपनार प्रेमयोग दिया।।

औरहू एक घटना कूँ स्मरण करौ। जब तुम बालक ही हे तब तुम्हारे मृत्युयोग आयौ हो। तब काहु ने एक चपेटा घात करकै तुम्हारे प्राण बचाये हे! वह मैं ही हो! देखो पहचानो! वह मैं ही हूँ कै कोई और है।

श्रीवास—

(आश्चर्य चकित देखते हुये) वही हो आप वही हो! पहचान गयो। मेरे प्राणरक्षक! मेरे जीवनदाता! जय हो जय हो!

(साष्टांग दण्डवत् करना)

महाप्रभु—

श्रीवास! सो सब प्रसंग सुनाय देओ इन सब भक्तन के लिये!

श्रीवास—

जो आज्ञा प्रभो! सुनो भैयाओ! मैं अपने जीवन की एक ऐसी रहस्य घटना सुनाऊँ हूँ कि जाने मेरी जीवनधारा कूँ पलट दीनी है। मैं सोल्ह वर्ष की अवस्था तक बड़ो ही दुष्ट ब्राह्मण बालक हो। साधु, भक्त, गुरु, देवता, भगवान् सबन को उपहास कर्‍यौ करतो। सत्संग-भजन को नामहू न लैतो। बड़ो ही अहंकारी बकवादी हो। सो एक दिना स्वप्न में कोई एक महात्मा आयकै बोले, 'अरे ब्राह्मण बालक! तेरी आयु अब एक ही वर्ष और शेष है सो जो कछु करनो होय सो करलै।' तब तो मोकूँ बड़ी चिन्ता भई—कहा करूँ, कहाँ जाऊँ, कैसे बचूँ, कौन बचावैगो इत्यादि चिन्ता में पर्‍यौ मैं शस्त्र-पुरानन के पन्नान कूँ उलटवे लग्यौ कि कहूँ उपाय निकसि आवै। तो कलिसन्तरणोपनिषद् में मेरी दृष्टि या श्लोक पै जाय परी—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।।

अर्थात् हरि को नाम, हरि को नाम, केवल हरि को नाम ही कलियुग में उद्धार को उपाय है। हरि के नाम के अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय है ही नहीं, है ही नहीं, है ही नहीं।

बस तब तो मैंने संसार के सब काम-काज छोड़ दिये और एक हरिनाम की अनन्य शरण है गयो। दिन रात, चलते फिरते सब समय हरिनाम रटवे लग्यौ। घर-गृहस्थी सों हू मुख मोड़ लियो। लोग हँसी करवे लगे तो कान मूँद लिये। बस एक ही काम हो मेरो—हरिनाम रटनो और मृत्यु के दिन गिननो।

या प्रकार सों जब एक वर्ष पूरो हैवे पै आयो तो मैं अत्यन्त ही घबराय गयो कि आज महात्मा की बात साँची होयगी और मैं अवश्य ही मर जाऊँगो। तब तो मैं फिर वही पण्डित देवानन्द की भागवती-कथा में जाय बैठ्यो—मुख में नाम-रट और कान में कथा श्रवण! प्रह्लादजी की कथा चल रही ही। मैं बाहर बरामदे में बैठ्यौ सुन रह्यौ हो। सुनते-सुनते मेरो माथो घूमवे लग्यौ और मैं बेसुध है गयो वा समय मोकूँ इतनो ही भान भयो कि काहू ने मेरे गाल में एक थप्पड़ मार्‍यौ है। याते आगे कहा भयो मोकूँ कछुई सुध नहीं है। जब सुध आई, मैं सचेत भयो तो कहा देखूँ हूँ कि मैं अपने घर में पर्‍यौ हूँ— लोग मोकूँ उठाय लाये हे।

महाप्रभु—

वह थप्पड़ मैंने ही मार्‍यौ हो—तुम्हारे गाल पै नहीं काल के गाल पै मारकै भगायो हो। और स्वप्न में आयकै मैंने ही महात्मा के रूप में तुमकूँ सावधान कियौ हो।

श्रीवास—

(गद्गद् हो) हे मेरे सहज दयालु! अकारण दयालु! नित्य दयालु! आप केवल दया कृपा की मूर्त्ति हो। आपकी जय हो जय हो।

गाना (झिंझोटी-दादरा)—

जय दयाल जय दयाल जय दयाल देवा।
कहूँ यही लाख बार, जय दयाल देवा।
मैं भूल गयो तुमकों तुम भूले नहीं मोकूँ।
मैं छोड़ि गयो तुमकूँ, तुम लाये खींच मोकूँ।
ऐसी दया ऐसी मया कौन करै देवा।।
मैं मर रह्यौ हो मोकूँ, दियौ प्राणदान तुमने।
मैं चर रह्यो हो भुसही, दियो अमृतनाम तुमने।
ऐसो दान ऐसो मान कौन करै देवा।।
तुमसे तो तुम्हीं हो और हमसे हू हमी हैं।
न तुममें कुछ कमी है, न हममें कुछ कमी है।
तेरे ही तो सिन्धु के हम बिन्दु 'प्रेम' देवा।।

जय हो करुणासिन्धु की जय हो। क्षमासिन्धु की जय हो। प्रेमसिन्धु की जय हो (साष्टांग दण्डवत्)

समाज (दोहा)—

वयोवृद्ध पंडितप्रवर नाम जु गंगादास।
ताकी रक्षा जस करी, करत प्रभु प्रकास।।

महाप्रभु—

गंगादास! तुमकूँ वा भयंकर रात्रि की घटना को स्मरण है न कि जब तुम नवाब के भय सों अपने परिवार कूँ लैकै भाग चले हे और गंगा पार जायवे के लिये नौका खोज रहे हे।

गंगादास—

हाँ नाथ! वह कालरात्रि अन्त में मेरे लिये जीवन रात्रि बन गई ही। वाकूँ भलो मैं कब भूल सकूँ हूँ।

महाप्रभु—

पूरो वृत्तान्त तो सुनाओ।

गंगादास—

सुनो प्रिय भक्तो! मैंने बड़ी खोज करी परन्तु कोई नौका न मिली। रात बीत करकै प्रभात हैवे लग्यो। घोर चिन्ता और भय सों हम सब व्याकुल है गये। बस भोर भयो और हम पकड़े गये। म्लेच्छ सिपाही हमारे परिवार कूँ भ्रष्ट कर देंगे। यह कल्पना मेरे लिये असह्य है उठी। मैंने प्रण ठान लियौ कि हम सब गंगा की गोद में समाय जायँगे परन्तु म्लेच्छ यवनन कूँ स्पर्श नहीं करन दैंगे। इतने में ही अकस्मात् सामने सों एक नौका आती भई दिखायी परी तो मैंने माँझी सों विनती करी कि 'भैया हमारी रक्षा कर! हमारी जाति, प्राण, धन, सम्मान सब तेरे ही हाथ में है। परिवार समेत हमकूँ शीघ्र ही पार उतार दै। मैं तुझे मुँहमागी उतराई दऊँगो।

महाप्रभु—

वह माँझी मैं ही हो गंगादास! तुमकूँ पार करवे आयो हो और पार करके चल्यौ गयो हो वैकुण्ठ कूँ!

तबे तोमार संग परिवार करि पार।
तबे निज बैकुंठ गेलाम आर बार।। (चै० भा०)

गंगादास—

(आश्चर्य एवं प्रेम से विह्वल हो) आप वैकुण्ठनाथ स्वयं पधारे हे! माँझी बनकै पार करवे! इतनी चिन्ता हम अधम विमुखन की! गुणहीन भक्तिहीन जीवन की! धिक्कार! लाख-लाख धिक्कार है हमकूँ जो ऐसे माता-पिता सखा-बन्धु हितैषी कूँ निपट भुलाय बैठे हैं! हे मेरे प्रभो! हे मेरे माँझी! मोकूँ अपनो ही चरण-दास, नित्यदास बनाय लेओ।

(चरणों पर पड़कर रुदन)

भक्तजन—

हरिबोल! हरिबोल!

(प्रवेश शुक्लाम्बर ब्रह्मचारी। कन्धे पर भिक्षा-झोली)

समाज (दोहा)—

शुक्लाम्बरहू पाय खबर, आय गयो तिहि काल।
काँधे भिक्षा झोली लखि, बोले गौर दयाल।।

महाप्रभु—

आओ शुक्लाम्बर आओ! तुम तो देर करकै आये। इनने तो मोकूँ खूब खवायो है। अब तुमहू देओ कछु। भूख लगी है।

शुक्लाम्बर—

(हाथ जोड़) भिक्षा करवे गयो हो नाथ! यासों देर है गई। मेरे पास आपकूँ दैवे योग्य कछुई नहीं है। आप यज्ञेश्वर और मैं महादरिद्र भिक्षुक! भिक्षा के चाँवर झोली में परे हैं!

महाप्रभु—

लाओ चाँवर ही लाओ (कहते हुये उठकर समीप जा झोली में हाथ डाल एक मुट्ठी चाँवल निकाल लेते और गीता के इस श्लोक को पढ़ते हुये खाने लगते हैं)

**पत्रं पुष्पं फलं तोयं, यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः।।**

सवैया—

फल खाऊँ मैं फूलहू खाऊँ, खाऊँ पात मैं जलहू खाऊँ।
भक्तकी भाव भरी लखि भेंटकूँ, सुधबुध भूलि बौरा बन जाऊँ।

वस्तु लखूँ नहीं भाव चखूँ हूँ भाव को रूखो सूखोहु पाऊँ।
धन के मोल पै कौन बिकै नहीं, मन के मोल पै मैं बिक जाऊँ।

शुक्लाम्बर—

परन्तु हे भावग्राही भगवन्! मोपे तो भावभक्ति की गन्धहू नहीं है। मैं तो महा रूखो सूखो काठ-कठोर हृदय वारो हूँ यह तो आपने निज गुण सों मेरे चाँवरन कूँ आरोग्यो है।

महाप्रभु—

क्यूँ जी! तुम तो बड़े तपस्वी ब्रह्मचारी हो, फिर भक्तिभाव नहीं है, कैसे कहौ हो?

शुक्लाम्बर (श्लोक)—

तप्तानि भूरीणि तपांसि नाथ,
बहूनि तीर्थानि च सेवितानि।
तथापि चेतो न हि प्रसन्नं,
कृपा कटाक्षं कुरु मे प्रसीद।।

कवित्त—

शीत सह्यो घाम सह्यो, वर्षा बिन धाम सही
भूख प्यास नींद सही, गराय डार्यौ तन कूँ।
नदी न्हाये कुंड न्हाये, सरोवर सिन्धु न्हाये
चारों धाम फिरि आयो, सबही तीर्थन कूँ।
नेम किये व्रत किये, जाप दिन रात किये
अनुष्ठान ढेर किये, सिद्ध किये मंत्रन कूँ।
काया कल्प करि नाड़ी, नाड़ी धोय डारी सब
पै न धोय सक्यौ 'प्रेम', पुराने पापी मन कूँ।।

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) ये तो तुमने सब अपने लिये कियो, मेरे लिये कहा कियो?

सवैया—

तीरथ व्रत करि करिकै तुम, झोरी भरी भरी पुन्य लहा है।
मुद्रा खेचरी बन्ध लगाय कै, प्रानहू साध लियो जु महा है।

मंत्रन जंत्रन सिद्ध करी जग, पूजा मान तो बहुत लहा है।
बूँद न 'प्रेम' के द्वय दिये मोकूँ, तेरी कमाईसों मोकूँ कहा है।

अरे शुक्लाम्बर! प्रेम कोई हाट-बाजार की वस्तु नहीं है जो साधन के टके दिये और लै लियो—

प्रेम मूल्य साधन नहीं, प्रेम मूल्य है प्रेम।
प्रेम हृदय दिये बिना, वृथा कोटि व्रत नेम।।

शुक्लाम्बर—

क्षमा करुणासिन्धो! क्षमा या अहंकार के लिये। आज आप की कृपा-कटाक्ष सों मोकूँ अपनी भूल जान परी। अब कृपा करकै अपने चरणकमल की एक कन भक्ति मोकूँ हू प्रदान करैं।

रूखो सूखो मन भयो, सरस करौ रसखान।
प्रेम धार सौं धूर मल, बहाय देऔ भगवान।।

शरण हूँ नाथ! शरण! (श्रीचरण पकड़ना)

महाप्रभु—

शुक्लाम्बर! तीर्थ-सेवन सों तुम्हारो चित्त शुद्ध है गयो। यासों तुम भक्तिरस के पात्र बन गये हो सो मैं तुमकूँ दऊँ हूँ। यहाँ आओ (चरणकमल शीश पर)

शुक्लाम्बर—

हरिबोल, हरिबोल (कीर्तन नृत्य करता)

समाज (दोहा)—

चरन अरुन शीतल करन, हरन अनन्त विकार।
दिये शीश करुणामय, उमग्यौ प्रेम अपार।।

लीला करत संध्या नियराई। पहर चार दिन गयो विहाई।।
भक्त सकल मिलि आरति वारहिं। शंख घण्ट मृदंग बजावहिं।।

आरति-स्तुति—

उज्ज्वलवर्ण गौरवरदेहं,
विलसित निरवधि भाव विदेहम्।
त्रिभुवन पावन कृपायाः लेशं,
तं प्रणमामि च श्रीशचितनयम्।।

गद्गदन्तर भाव विकारं,
दुर्जन तर्जन नाद विशालम्।
भवभय भंजन कारण करुणं,
तं प्रणमामि च श्रीशचितनयम्।।
ईश्वर भाव में राजत गौरा। कृपादृष्टि बरसत चहुँ ओरा।।
नित्यानन्द सिर छत्र धरावैं। चरण अद्वैत मृदु सहरावैं।।
सुनि सुनि धाय धाय जन आवैं।
पद पद्मन बहु पुष्प चढ़ावैं।।
आनन्द सुख अद्भुत चहुँ छायो।
श्रीवास गृह जनु वैकुंठ आयो।।

महाप्रभु—

नाड़ा अद्वैत! तुम्हारी जो इच्छा होय सो वर माँग लेओ।

अद्वैत—

हे अन्तर्यामी ईश! मेरी प्रतिज्ञा ही कि आपकूँ भूतल पै अवश्य ही प्रगटाऊँगो। यह बाल-हठ जैसो ही हो। वाकूँ आपने पूरी कर दई—अपनी सहज करुणा सों। ऐसे अकारण करुणावरुणालय प्रभु कूँ प्रत्यक्ष अपने नेत्रन के सम्मुख प्राप्त करकै मैं सर्व प्रकार सों कृतकृत्य है गयो, आप्तकाम है गयो। अतः अब मेरी कोई कामना नहीं है नाथ।

महाप्रभु—

हे अद्वैत! मैं तुम्हारे ही प्रेम-हुँकार सों खिंच्यो भयो गोलोक ते आयो हूँ—नाम-प्रेम लुटायवे के लिये—

घरे घरे करिमु कीर्तन प्रचार।
मोर यशे नाचे जेनो संसार।।

मैं घर-घर में नाम-कीर्तन को प्रचार करूँगो। मेरे यश कूँ गाय-गाय कै दुनिया नाचैगी तथा—

ब्रह्मा भाव नारदादि जारे तप करे।
हेनो प्रेमभक्ति विलाइमु जारे तारे।। (चै० भा०)

ब्रह्मा, शिव, नारद आदि हू जा मधुर प्रेमभक्ति के लिये तपस्या करैं हैं, वाकूँ मैं अधिकार विचारे बिना जा काहू कूँ लुटाय दऊँगो।

अद्वैत—

हरिबोल! जय हो परमोदारदाता शिरोमणि! आपके शिव संकल्प की जय हो! तो हे प्रभो! मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि—

.....................यदि भक्ति विलाइवा।
स्त्री शूद्र आदि जतो मूर्खेर से दिवा।।
जो तुम प्रेमभक्ति कूँ, चहौ लुटान करतार।
स्त्री शूद्र मूर्ख जिते, ते पावैं उपहार।।
देखि यहै निन्दक सबै, जरि बरि होवैं द्वार।
नाचैं चंडाल गाय के, गुण ओ नाम तुम्हार।।

महाप्रभु—

एवमस्तु अद्वैत एवमस्तु! ऐसोई होयगो। स्त्री, शूद्र, नीच जाति ही मेरी प्रेमभक्ति कूँ विशेष प्राप्त करेंगे। (रुककर) श्रीधर श्रीधर! मेरो श्रीधर कहाँ है? लाओ वाकूँ।

अद्वैत—

यह श्रीधर कौन महाभाग्यवान है प्रभो! जाकूँ आप अपनो बताय रहे हैं? वाको कछु परिचय बतायवे की कृपा होवै।

महाप्रभु—

वही श्रीधर जो मेरे भोजन के लिये केला के मोचा और थोड़ नित्य दै जाय है। वाकूँ बेगि लै आओ।

अद्वैत—

जाओ भैयाओ! शीघ्र लै जाओ, आदर-सम्मान सहित।

समाज (चौपाई)—

दौरि भक्तजन हाट सिधाये। जाय श्रीधरहिं वचन सुनाये।।
(नेपथ्य में वार्तालाप)

भक्तजन—

चलहु चलहु तुम प्रभु बुलाये। तुम्हरे दरस हम धन्य बनाये।।

श्रीधर—

कौन प्रभु?

भक्तजन—

शचिनन्दन! गौरसुन्दर! वे आज श्रीवास के गृह में प्रात:काल सों ही अपने परमैश्वर्य कूँ प्रकाशित करकै विराजे भये हैं और सबन कूँ बोलि-बोलि कै वरदान दै रहे हैं। उनने तुमकूँ हू स्मरण कियो है।

श्रीधर—

मो कुंजड़े कूँ? नहीं नहीं! और कोई श्रीधर होयगो।

भक्तजन—

नहीं! तुमकूँ ही बुलायो है। तुम कुंजड़ा नहीं प्रभु के प्यारे हो, निज जन हो। यासों चलौ, देर मत करौ।

श्रीधर—

ओह इतनी कृपा! हे मेरे दयालु दीनबन्धो—(कहते हुए पतन)

भक्तजन—

अरे यह तो मारे आनन्द कै भूमि पै लोट गयो। उठाय कै लै चलौ (उठाकर ले आते हैं)

समाज (दोहा)—

लाय उठाय सम्हार कै, दीनो चरनन डार।

महाप्रभु—

अपने चंचल निमाइ कूँ, देख आँखि उघार।।

झाँकी—

(वंशीधर श्यामसुन्दर रूप का प्राकट्य)

समाज—

माथा तुलि चाहे महापुरुष श्रीधर।
तमाल श्यामल देखे सेइ विश्वभर।।
हाथ वंशी मोहन दक्षिणे वलराम।
महाज्योतिर्मय सब देखे विद्यमान।।

श्रीधर—

(आश्चर्य चकित) हैं! ये तो निमाई पण्डित नहीं भगवान् श्रीष्ण हैं। दाहिने बलराम खड़े हैं। देवगण छत्र चँवर कर रहे हैं। चतुर्मुख, पंचमुख, षड़सुख स्तुति कर रहे हैं। नारद, शुक, सनकादिक जय जयकार कर रहे हैं! अपूर्व! अलौकिक आनन्द! आनन्द! शरण प्रभो शरण! (श्रीचरणों पर पतन)

समाज (दोहा) —

रूप दुराय बोले प्रभु, उठ श्रीधर वर माँग।

महाप्रभु—

औरन कूँ तू कूंजड़ा, मेरो है तू प्राण।।

श्रीधर—

(उठकर हाथ जोड़ दीनता पूर्वक) हे दीनबन्धो! हे दयासिन्धो! अहा आप और काहु कुंजड़ा के पास न जायकै मेरे ही पास आयौ करते और कहते 'ला साग भाजी दै। मैं तेरी गंगा मैया को बाप हूँ' तो मैं कान मूँद लेतो और खूब लड़तौ। तौहू आप छीन-झपट कै लै ही जाते। मैं आपकी प्रीति-रीति कूँ समझ नहीं पातो और खूब बकतो झकतो..........

महाप्रभु—

(बात काट हँसते हुए) तो बड़ा अच्छो काम करतो न?

श्रीधर—

अच्छो-बुरो तो आप ही जानो। मैं तो जैसो नचामते वैसे नाचतो

महाप्रभु - श्रीधर!

माँगि लेओ जो जी में आवै।

श्रीधर—

मोकूँ न कोई अभाव सतावै।
(फिर माँगूँ कहा)

महाप्रभु—

अभाव क्यूँ नहीं। अन्त को अभाव तो है ही—
दिवस हू भोजन सब दिन नाहीं। रजनी तो उपवास सदाहीं।।

श्रीधर—

देवहु वर कभु रात न खाऊँ। सब निशि जागि नाम तुव गाऊँ
खाये अन्न बहु नींद सतावै। नाम तिहारो छूट ही जावै।।

महाप्रभु—

श्रीधर! वस्त्र को हू तुमकूँ अभाव है—
चीर लीर तन तो नहिं ढाँपै। शीत घाम दुख बहु नित व्यापै।।

श्रीधर (दोहा)—

तन नाँगो यह भलो कियो, मन नाँगो करि देव।
देन चहौ वरदान तो, यही प्रेम वर देव।।

महाप्रभु—

श्रीधर! घर को हू तुमकूँ अभाव है—

भीत कीच गारेन की, ताके ऊपर बाँस।
आधी छपरिया फूस की, आधी में आकास।।

श्रीधर—हे दीनानाथ!

टूटी छान बनी रहै, यासों नाहिन हानि।
आन बान छूटै नहीं, देओ यही वरदान।।
टूटी छान की छाँह, जन्म बितायौ नाम लै।
ऐसे मीत की बाँह, जन्म जन्म मोकूँ मिलै।।

महाप्रभु—

परन्तु श्रीधर! मोपै तो तेरी यह भूखी-नंगी अवस्था नहीं देखी जाय है यासों मैं तोकूँ अष्ट सिद्धि नौ निधि दऊँ हूँ।

श्रीधर—

अब और अधिक माया न दिखाओ नाथ! आपकी स्मृति ही सबते बड़ी सिद्धि है। और सब सिद्धि तो माया-जाल ही है।

गजल—

ए सिद्धि सारी झूँठी और सिद्ध सारे भूले।
वही है सिद्धि साँची, जो प्रभु कूँ न भूले।।
इक याद ही वह सिद्धि, जो तुमसों नित मिलावै।
और सबही सिद्धि माया, सब सिद्ध जामें भूलै।।

महाप्रभु—

तौ सिद्धन ते हू बड़ो एक ब्रह्माण्ड को ईश्वर ही तोकूँ बनाय दऊँ।

श्रीधर (बंगला चै० भा०)—

ना प्रभो ना आमि किछुई ना चाई।
हेनो करो प्रभु जेनो तोर नाम गाई।।
बस और कछु न चाहूँ, आसीस यही मैं पाऊँ।
तेरो नाम नित ही गाऊँ, रहूँ नामरस में भूले।।

महाप्रभु—

मेरे प्यारे श्रीधर! तुम कछुइ नहीं लेओगे तो मोकूँ संतोष नहीं होयगो। यासो मेरे संतोष के लिये ही कछु तो माँग लेओ।

श्रीधर—

तो कृपालु देव! यही एक वर पाऊँ कि—

जो साग पात मोते, लड़लड़ के छीन्यो करतो।
चंचल निमाई निश्चल, बनके हृदय में झूले।।
वही नाथ मेरो होवै, मैं होऊँ दास वाको।
युग युग यह प्रेम बेली, हमरी फले व फूले।।

बंगला (चै० भा०)—

जे ब्राह्मण काढ़िलेन मोर खोला पात।
से ब्राह्मण हय मोर जन्मे जन्मे नाथ।।

महाप्रभु—

धन्य है श्रीधर! धन्य है तुम्हारे विशुद्ध निष्काम भाव कूँ। 'वेद-गोप्य भक्तियोग तोर आमि दिलो'—वेद में जो गुप्त मेरी भक्तियोग है वह मैंने तोकूँ प्रदान कियो।

भक्तवृन्द—

हरिबोल! श्रीधर की जय हो। विश्वम्भर की जय हो श्रीधर और श्रीधर के भगवान् की जय हो।

समाज (चौपाई)—

जय जय ध्वनि वैष्णव जन करहीं।
धन्य धन्य श्रीधर दोऊ कहहीं।।

साग बेचि श्रीधर जो पाये। ताकूँ ब्रह्मा शिव ललचाये।।
विद्या कुल अहंकार बढ़ावै। दीन ही दीनानाथहिं भावै।।

महाप्रभु—

मुरारि! मुरारि!

मुरारि—

(श्रीचरणों में प्रणिपात) आज्ञा करौ प्रभो!

महाप्रभु—

अध्यात्म-चर्चा कूँ छोड़ मुरारि! योग वशिष्ठ को ज्ञान छोड़।

अद्वैत—

(हाथ जोड़) अध्यात्म-चर्चा में दोष कहा है भगवन्? वासों तो मोक्ष प्राप्त होय है।

महाप्रभु—

परन्तु भगवान् प्राप्त नहीं होय हैं। और भक्ति सों भगवान् एवं मुक्ति दोनों ही प्राप्त है जाय हैं—

यस्य भक्तिर्भगवति हरौ निःश्रेयसेश्वरे।
विक्रीड़तोऽमृताम्भोधौ किमन्ये खातकोदके।।

जाकी भक्ति भगवान में, ज्ञान न ताहि सुहाय।
सुधासिन्धु-किल्लोल तजि, कौन गढ़ैला न्हाय।।

अरे मुरारि! तैंने ही तो रावण की लंका जराई हती। तू वही हनुमान है और मैं वही रामचन्द्र हूँ। देख अपने राम कूँ देख।

झाँकी—

(श्रीराम, सीता, लक्ष्मण का प्राकट्य)

समाज (चौपाई)—

राम रूप तब गौर लखाये। इष्टहिं लखि मुरारि सुख पाये।।
दूर्बा दल श्याम रघुनाथा। वाम ओर श्रीजानकी माता।।
लक्ष्मण निजकर छत्र धरावैं। वानर बहु जयजय धुनि गावैं।।

मुरारि श्लोक—

नीलाम्बुदश्यामल कोमलाङ्गं,
सीतासमारोपित वाम भागम्।
पाणौ महाशायक चारु चापं,
नमामि रामं रघुवंश नाथम्।।
श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम,
श्रीराम राम भरताग्रज राम राम।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम,
श्रीराम राम शरणं भव राम राम।।
पाहि माम् प्रभो! शरण शरण! (साष्टांग प्रणाम)

महाप्रभु—

उठो मुरारि! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूँ।

मुरारि—

(उठते हुये) मेरे प्रभो! मेरे आराध्यदेव! क्षमा करो। क्षमा करौ। ज्ञान के अन्धकार में मैं आपकूँ पहचान नहीं सक्यौ। बिना आपकी कृपा के कौन आपकूँ जान-पहचान सकै है। आज आपने कृपा करकै अपनो पर-स्वरूप जनाय मोकूँ कृतार्थ कर दियो! जय हो कृपासिन्धो! जय हो।

महाप्रभु—

मुरारि! वर माँग लैओ जो चाहौ सो।

मुरारि (दोहा)—

जहाँ जहाँ अवतार धरौ, तहाँ तहाँ बनूँ दास।
पाऊँ सेवा चरण की, यही प्रेम अरदास।।

महाप्रभु—

एवमस्तु! तुम तो मेरे नित्यदास हो और नित्य ही बने रहौगे सुनौ प्रिय भक्तो! या मुरारि गुप्त के हृदय में—

गुप्त रूप सों बास करैं, स्वयं हरी मुरारि।
तासों मुरारि गुप्त नाम, सार्थक कहौं पुकारि।।

स्वयं मुरारि भगवान् गुप्त हैं जाके हृदय में वाको नाम है मुरारि गुप्त। बड़ो ही सार्थक नाम है। ऐसे मेरे मुरारि गुप्त की जो यदि कोई एक बार हू

निन्दा करैगों वाकूँ कोटि गंगा और हरि नाम हू पवित्र नहीं करेंगे। उल्टो महा अपराधी जान वाकूँ दण्ड ही दैंगे।

भक्तवृन्द—

हरिबोल! मुरारि गुप्त की जय! मुरारि भगवान् की जय!

महाप्रभु—

हरिदास! मेरे समीप आओ। तुम मोकूँ प्राणाधिक प्रिय हो। दूर द्वार पै ठाड़े मत रहौ। यहाँ आओ।

हरिदास—

(द्वार पर खड़ा) हे दीनबन्धो! मोकूँ तो यहीं द्वार पै ही रहवे की अनुमति दी जाय। यहाँ पै आपके भक्तन की चरण-धूरि मोकूँ अनायास ही मिल जाय है। मैं आपके श्रीचरणन के समीप आयवे योग्य नहीं हूँ। मैं तो महा अधम नीच यवन हूँ।

(भूमि पर दण्डवत् पड़ जाना)

महाप्रभु—

प्यारे हरिदास! तुम नीच नहीं मोते हू बड़े हो। तुम्हारी जाति ही मेरी जाति है और तुम्हारी देह मेरी देह तेहू बड़ी है—

एइ मोर देह हइते तुमि मोर बड़ो।
तोमार जे जाति सेइ जाति मोर दड़ो।। (चै० भा०)
विश्वास न होय तो देखो मेरे पीठ कूँ! उठो! देखो!

समाज (दोहा)—

वदन फेरि निज पीठ कूँ, दिखराये जु दयाल।
वेत्र चिह्न लखि पीठपै, भयो हरिदास विहाल।।

हरिदास—

(व्याकुल क्रन्दन सह) हाय हाय! या सुकुमार श्रीअंग पै ये बेंत की मार के-से चिह्न कैसे?

महाप्रभु—

ये उन्हीं बेंतन के चिह्न हैं हरिदास, जो तुम्हारी पीठ पै परी हीं जब दुष्ट यवन सिपाहिन ने तुमकूँ नदियाके बाइस बाजारन में घुमाय-घुमाय कै

मारयौ हो (सावेश गर्जते हुये) मैं तबही चक्र लैकै दौरयौ हो। मैं एक-एककूँ काट डारतो परन्तु ज्यूँ ही तुमने कही 'क्षमा करौ प्रभो! क्षमा करौ इनकूँ' कि मेरो हाथ रुक गयो। तुम्हारी प्रार्थना माननी ही परी। उनकूँ मार न सक्यौ परन्तु तौहु उनकी भयंकर प्रहार सों तुमकूँ बचाय हू लियो। तुम्हारी पीठ की जगह अपनी पीठ लगाय दीनी। याहि कारण सों तुम्हारी देह मेरी ते हू बड़ी है।

हरिदास—

(चीत्कार पूर्वक) मेरी चोट आपकी पीठ पै! हाय! मोकूँ मरवे क्यूँ न दियो? एक देह कहा लाख-लाख देह हू आपकी सुकुमार देह के ऊपर न्यौछावर कर दऊँ। जो यदि मैं ऐसो जानतो तो मैं आपकूँ पुकारतो ही नहीं। मैं मर जातो परन्तु आपसों कछु न कहतो। ऐसी मेरी भक्ति कूँ धिक्कार, लाख-लाख धिक्कार! हाय अब मेरी कहा गति होयगी!

(पछाड़ खाकर गिरना)

समाज (दोहा)—

महा विकल हरिदास लखि, लियो प्रभु बुलाय।
उठत नहीं हरिदास तभू, भक्तन लिये उठाय।।
लै उठाय हरिदास कूँ, चरनन दीन्हो डार।
चरणकमल मस्तक धरि, कहत प्रभु पुकार।।

महाप्रभु—

उठो प्यारे हरिदास। दु:ख मत करौ। भक्तन की रक्षा करनो तो मेरो अनादि स्वभाव है। यामें मोकूँ कष्ट नहीं आनन्द होय है। मैं तुम पै अत्यन्त प्रसन्न हूँ। कोई वर माँग लेओ।

हरिदास—

(हाथ जोड़) तो यही वर देओ कि आप अपने श्रीअंग पै कभु कोई चोट नहीं सहारोगे।

महाप्रभु—

(हँसकर) यह तो मेरो स्वभाव है हरिदास! यह कहाँ छूट सकै है। और मैं तो कह ही चुक्यौ कि भक्तन की सेवा में मोकूँ कष्ट नहीं बड़ो आनन्द होय है। तबही तो मैंने दावानल पान कर, गिरिराज पर्वत को उठाय

व्रज की रक्षा करी ही। यही तो मेरो एकमात्र कर्म-धर्म है। याकूँ मैं कैसे छोड़ सकूँ हूँ। अतएव कोई दूसरो वर माँगो।

हरिदास—

तो हे भक्तवांछा कल्पतरो! मेरी यही वांछा है कि—

पद (विहाग)—

भक्तन की चरनन रज मैं पाऊँ सदा।
चरनन रज पै लोट लोट के, परम सिंगार धराऊँ।।
तौमार चरण भजे जे सकल दास।
तार अवशेष जेनो होय मोर गास।। (चै० भा०)
जे सब भक्त भजैं पद तुम्हरो, तिनकी जूठन पाऊँ।
यही क्रिया नित धर्म जु मेरो, यही अहार नित पाऊँ।।
पद पद को अपराधी अधम मैं, माँगत भक्ति डराऊँ।
भक्तन घर को कूकर करहु तो, धन्य प्रेम है जाऊँ।।
शचिनन्दन बाप! कृपा करो मोरे।
कुकर करिया मोरे राखो भक्त घरे।। (चै० भा०)
(साष्टांग प्रणति)

महाप्रभु—

धन्य हरिदास धन्य! जैसी तुम्हारी दीनता वैसीई तुम्हारी लालसा हू। तुम जैसे दीनन सों ही मैंने नाम पायो है दीनबन्धु दीनानाथ। सुनो हरिदास, जो कोई व्यक्ति तुम्हारे संग—

कवित्त—

एक छिन वास करै, बात करै एकै बार
पावैगो मोकूँ वह संशय नहीं नेक है।
तिहारी जो करै भक्ति, वो मेरीई भक्ति करै
तिहारी देह मेरी देह, ये तो एकमेक है।
द्वै ही अपराध बड़े, भक्त औ भगवान के
बनैंगे न तुमते कभू, कहौं काढ़ि रेख है।
अमल अखंड भक्ति, दीन्ही मैं आज तुमहिं
नामहू हरिदास लिये, कटे पाप लेख है।

भक्तवृन्द—

हरिबोल! भक्तराज हरिदास की जय।

भक्तिदाता भगवान की जय। हरिबोल

समाज (दोहा) —

धन्य धन्य हरिदास जु, पायो अस वरदान।
जय जयकार करहीं सब, भाग्य बखान बखान।।
कहै कोई ब्रह्मा हरिदासा। कोई कहै प्रह्लाद प्रकाश।।
जाति कुल भक्त के नाहीं। हरि हरिदासा एक सदाहीं।।
श्रीभुज तुलिया बोले विश्वम्भर।
सबे मोर देखो माँगो जार जेई वर।। (चै० भा०)

महाप्रभु—

(दक्षिण भुजा ऊपर उठा) प्रिय भक्तो! मेरे दर्शन करौ। और जो इच्छा होय सो माँग लेओ।

समाज (दोहा) —

कोइ पिता कोइ पुत्र हित, माँगैं भक्ति सुहाय।
कोइ नारि कोइ भृत्य हित, कहैं भक्ति मिल जाय।।
साधु संगति कोई बर चाहैं। गुरुभक्ति कोई तो मनावैं।।
तथास्तु कहि कहि वर दीन्हे। कौतुक एक प्रभु पुनि कीन्हे।।
जन जन के प्रभु आश पुरायें। प्रिय मुकुन्दहिं ढिंग न बुलाये।।
सो ठाड़ो गृह कोने रोवै। नहीं साहस प्रभु सम्मुख होवै।।
लखि श्रीवास निहोरी कीन्हे। तुव मुकुन्द रोवत अति दीने।।

श्रीवास—

हे परमोदार कृपालु प्रभो! आपने हम सबन कूँ तो लै लैकै बुलायकै बरदान दियो, अपूर्व कृपा करी परन्तु अपने प्रिय कीर्तनीया मुकुन्द कूँ कैसे भुलाय दियो नाथ? देखो तो सही वह बेचारो घर के कोने में बाहर ठाड़ो सिसक रह्यौ है, कृपा के लिये तरस रह्यौ है।

महाप्रभु—

(कृत्रिम कोप सह) मेरो मुकुन्द? झूँठी बात! वह मेरो नहीं है।

श्रीवास—

आपको नहीं तो फिर कौन को है नाथ? वाको कछु अपराध होय तो अवश्य दण्ड देओ परन्तु त्यागो मतिना प्रभो।

महाप्रभु (बंगला पयार चै० भा०)—

क्षणे दन्ते तृणलेय, क्षणेलाठी मारे।
ओ खड़-लाठिया बेटा, ना देखिवे मारे।।

यह मुकुन्द कभू तो दाँतन में तृण दाबि सबन के पाँव परै है—ऐसो मेरो दीन दास बन जाय है और कभू 'मैं ही ब्रह्म हूँ' कहकै मोकूँ लाठी मारै है। कभू तो भक्त बनै है और कभू ब्रह्मज्ञानी स्वामी बनै है। दोनों नौकान में पाँव राखकै चलनो चाहै है।

पद (म्हाड़)—

भक्तन मधि वह भक्ति बखानै, ज्ञानिन मध्य ज्ञान।
दास कबहू बनि जावै मेरो, कबहू ब्रह्म निर्वाण।।
जैसो जहाँ अवसर यह देखै, तैसोइ करै बखान।
कबहू मोहिं छोटो करि डारै, कबहू करै गुणगान।।
(सुनो जो कोई)
कहै भक्ति ते और बड़ो कछु, मारै वह लाठी तान।
अपराधी वह बड़ोई कपटी, पावै नहीं भगवान।।
यासों यह मुकुन्द मेरो दर्शन नहीं पावैगो।

मुकुन्द—

(बाहर से ही परम कातरता सह) श्रीवास जी! आप मेरे लिए प्रभु सों अब कोई आग्रह न करैं। मैंने जैसो अपराध कार्यौ वैसोई दण्डहू पाय लियो (ठहरकर) अब मैं या विमुख देह कूँ नहीं राखूँगो। आज ही गंगा की गोदी में याकूँ दै दऊँगो। परन्तु..........(प्रकार करकै) श्रीवास जी बस प्रभु सों इतनो ही बूझ देओ कि यह अपराधी जीव कहा कभू काहू जन्म-जन्मान्तर में प्रभु को दर्शन पाय सकैगो कै नहीं!

श्रीवास—

प्रभो! या मुकुन्द कूँ क्षमा करौ नहीं तो यह प्राण अवश्य ही त्याग दैगो!

महाप्रभु—

श्रीवास जी! कह देओ कि—

आर यदि कोटि जन्म होय।
तबे मोर दरशन पाइवे निश्चय।।

यह कोटि जन्म के उपरान्त निश्चय ही मेरो दर्शन पावैगो।

समाज (दोहा) —

निश्चय पावैगो सुनि, आनन्द उर न समाय।
नाचत गावत मत्त मन, गयो मुकुन्द बौराय।।

मुकुन्द—

(हर्षोन्मत्त) पाऊँगो! कृपा पाऊँगो! दर्शन पाऊँगो (दोनों भुजा उठा नाचने लगता है) अब तो कोटि जन्महू सहज में कट जायेंगे! अब कोई चिन्ता नहीं, दु:ख नहीं, शोक नहीं! पाऊँगो! अहा! कितनी क्षमा! कितनी करुणा आनन्द! परमानन्द! हरिबोल (भू-लुण्ठन)

समाज (दोहा) —

नाचत लोटत धरनि पै, मुदित मत्त हरषाय।
प्रेम परखि प्रभु रीझि हँसि, लीन्हे निकट बुलाय।।

महाप्रभु—

मुकुन्द! आओ भीतर! तुम्हारे अपराध सब मिट गये।

समाज (सोरठा) —

सुनत न नेक पुकार, भाव विवश भूमि पर्यौ।
तो लाये भक्त सम्हार, डारे अभय मंगल चरन।।

(भक्त लोग मुकुन्द को उठाकर लाते हैं और महाप्रभु के चरणों पर डाल देते हैं)

अद्वैत—

हरिबोल! देख्यौ भक्तो! भगवान् की दीनवत्सलता कूँ। जैसी अपनी प्रतिज्ञा तोरिकै भीष्म पितामह की प्रतिज्ञा राखी वैसे ही आज हमारे प्रभु ने अपने प्यारे मुकुन्द के लिये अपने वचन उलट दिये! जय हो प्रणतपाल भगवान् की जय हो।

महाप्रभु—

मेरे प्यारे मुकुन्द! उठो! शान्त होओ! मैंने तो तुम्हारे संग एक परिहास मात्र कियो हो। दु:ख मत करौ। तुम तो मेरे परम प्रिय गायक हो। तुम जहाँ गाओ हो वहाँ मोकूँ जानो ही परै है। फिर मैं तुमकूँ कैसे त्याग सकूँ हूँ। अहा! धन्य है तुम्हरे अटल विश्वास और अचल धैर्य कूँ।

गाना (पद मिश्र वसन्त)—

इतनो विश्वास ओ धीरज इतनो, जाके प्रेम में है भरपूर।
वा प्रेम के पीछे पीछे डोलूँ, तिल भर कबहू रहूँ ना दूर।।
विश्वास ओ धीरज नहीं उरमें तो, पदपद दुखीहो दोष धरैं।
पर तुम जैंसे तो हँसि हँसि कै, पर्वत पै पर्वत पार करैं।।
जो बात न टलती मेरी कभू, पल भरमें तुमने टार दई।
मैं कोटि जनमको दंड दियो, तुम छिनभर में वह काट दई।।
प्रेमभक्ति यह पलभर को और, योग करोरन जन्मन को।
तुमने यह तौल दिखाय दियौ, पलड़ा है भारी प्रेम ही को।।
जो अपने बल सों कर्म करैं, वे कोटि जन्म में तरैं न तरैं।
जो मेरे मुख रुख देखि चलैं, वे छिन में कोटि जन्म तरैं।।
तजि इच्छा अन-इच्छा अपनी, मेरी ही इच्छा पै जो चलैं।
भक्त वही साँचे दास वही मेरे, प्राणन सों वे लागैं भलै।।

अतएव मुकुन्द! मैं तुमसों अत्यन्त प्रसन्न हूँ तुम्हारी जो इच्छा होय सोई वर माँग लेओ।

मुकुन्द—(हाथ जोड़)

अहं हरे तव पादैकमूल,
दासानुदासो भवितास्मि भूयः।
मनःस्मरेतासुपते - र्गुणांस्ते,
गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः।।

सवैया—

हरिदासन दास को दास बनूँ, अरदास यही श्रीचरनन में।
हरिदासन की रज अंग मलूँ, अपराध नसै सब पलछिन में।
हे प्राणपते मेरे प्राण सदा रहैं, लागि सहज तुव पायन में।
मुख गावै तुमहिं मन ध्यावै तुमहिं, तनलागि रहै 'प्रेम' काजन में।

महाप्रभु—

तथास्तु!

जेखाने जेखाने होय मोर अवतार।
तथाय गायक तुमि होइबे आमार।। (चै० भा०)

जहाँ-जहाँ मेरो अवतार होयगो वहाँ-वहाँ तुम मेरे कीर्तनीया गायक बनोगे।

भक्तगण—

हरिबोल! धन्य है मुकुन्द धन्य है तुम्हारे भाग्य कूँ।

भक्त १—

और धन्य है प्रभु ते हू बड़ी प्रभु की स्वतन्त्र कृपा कूँ कि जा कृपा के परवश है कै प्रभु ने अपने वचन कूँ आपही मिथ्या कर दियो।

समाज (दोहा)—

श्रीवास ढिंग भक्त इक, कही कर्ण कछु बात।
लै आवहु शचि मातकूँ, निरख परख लैं तात।।

श्रीवास—

(एक भक्त को धीरे से) शची माता कबहू-कबहू कहैं हैं कि हमने ही उनके निमाई कूँ बावरो बनाय दियौ है। सो तुम जायकै उनकूँ भीतर लै आओ। वे आय करकै अपनी आँखिन सों देख लैं कि उनको निमाई कौन है और कैसो है।

भक्त—

उत्तम विचार! मैं अबही उनकूँ लै आऊँ हूँ। वे बाहर ठाड़ी हैं (शची माता का प्रवेश)

शची—

(एक कोने में खड़ी हो जाती हैं)

श्रीवास—

प्रभो! माताजी पधारी हैं। आप उनकूँ हू समीप बुलाय कै कृपा करैं।

महाप्रभु—

ना! ये मेरी कृपा नहीं पावैगी। वे वैष्णव-अपराधिनी हैं।

श्रीवास—

यह कैसी आश्चर्य बात नाथ? जगज्जननी जो स्वयं आपकी जननी है, उनको अपराध वैष्णव के निकट?

महाप्रभु—

हाँ! वैष्णव प्रधान श्रीअद्वैताचार्य के निकट उनको अपराध है। अपराध-भंजन भये बिना मेरो दर्शन नहीं मिलैगो।

अद्वैत—

(दुःखपूर्वक) कहा विश्वम्भर-जननी को अपराध? और मेरे निकट अपराध? हाय-हाय! यह मैं कहा अनहोनी सुन रह्यौ हूँ!

महाप्रभु—

अनहोनी नहीं साँची बात है। जब बड़े भ्राता विश्वरूप गृहत्याग गये और फिर मैं तुम्हारी सभा में आयवे-जायवे लग्यौ तब शची माँ अपने मन में तुम्हारे लिये कह्यौ करती कि औरन के लिये तो यह अद्वैत परन्तु मेरे प्रति याको द्वैतभाव है। याने एक पुत्र तो मेरो घर ते बाहर कर दियो और अब या दूसरे पुत्र निमाई की हू मति-गति बिगार दई! या प्रकार सों तुमकूँ मिथ्या दोष दै कै इनने बड़ो भारी अपराध कियो है। जब यह अपराध खंडन होयगो तबही मेरे दर्शन पाय सकेंगी। नहीं तो नहीं।

अद्वैत—

(मर्माहत हो) नहीं नहीं! माँ अपराधिनी नहीं, मैं ही अपराधी हूँ! माँ जगज्जननी! क्षमा करौ! कृपा करौ। त्राहिमाम् (कहते-कहते रोते हूये मूर्च्छित हो जाते हैं)

श्रीवास—

माँ! आओ! शीघ्र आओ! आचार्य की चरणधूलि लैकै मस्तक पै धारण करौ। अपराध खण्डन है जायगो। फिर ऐसौ अवसर नहीं मिलैगो। जल्दी आओ! देर मत करौ।

शची—

(धीरे-धीरे आती हैं—अद्वैत पदरज ले माथे लगाती हैं)

महाप्रभु—

श्रीवास! लै आओ माताजी कूँ समीप! वह मेरो दर्शन करैं।

श्रीवास—

हरिबोल! माँ! आगे आओ। प्रभु के समीप आओ।

समाज (चौपाई)—

महाप्रभु ढिंग शचि नियराईं। शीश उठाय लखत भरमाई।।

शची—

(ऐश्वर्य-दर्शन से विस्मित-भीत) हैं! कौन? मेरो निमाई? मेरो विश्वम्भर? नहीं नहीं देव विश्वम्भर! परमेश्वर! चारों ओर देवता—चतुर्मुख पंचमुख देव! स्तुति कर रहे हैं। ये तो देवों के देव हैं, त्रिलोकीनाथ हैं! कहा इनकूँ मैंने अपने गर्भ में धार्‌यौ, अपने कूँख में ते जायो? मैं परमेश्वर की जननी? नहीं-नहीं! असम्भव! तो-तो-ये.....कौन....मैं.....मैं कौन?

(कहते-कहते विह्वल हो बैठ पड़ती हैं)

भक्तगण—

हरिबोल, हरिबोल।

समाज (दोहा)—

बहुविधि महिमा विचित्र, करत प्रभु प्रकाश।
कृपा प्रेमजन जन प्रति, बरसावत सुखराश।।
पुरवत जन अभिलाष, पुनि भाषत भक्तप्रिय प्रभु।
मो ढिंग वास-विलास, जन्म जन्मपै हौ जु तुम।।

महाप्रभु—

प्रिय भक्तजनो! तुम मेरे नित्य बन्धु हौ। और याहि प्रकार सों तुम सदैव जन्म-जन्म में मेरो संग पाओगे। तुम्हारे घर के दास-दासी हू मेरे क्रीड़ा-कौतुक कूँ देख पायँगे।

जन्म जन्म तोमार पाइवे मोर संग।
तोमार सभार भृत्यओ देखिवे मोर रंग।। (चै. भा.)

भक्तजन—हरिबोल! हरिबोल!

महाप्रभु—

(अद्वैत, श्रीवासादि भक्तों को बुला-बुलाकर अपने गले से माला उतार-उतार कर पहनाते हैं)

समाज (चौपाई)—

निज करसों उरमाल उतारहिं। बोलि बोलि भक्तन उर डारहिं
चर्वित पान प्रसादी देवहि। प्रेम पुलक तन मन जन लेवहिं।।
श्रीवास भ्राता सुता, नाम नारायणी बाल।
कन्या पाँच बरस की, बोलि लिये कृपाल।।

महाप्रभु—

नारायणी! यहाँ आ। (आती है। महाप्रभु अधरामृत प्रसाद देते हैं)

समाज (चौपाई)—

अपनो शेष उच्छिष्ट दयाला। दियो नारायणी कहँ तत्काला।।
पाय प्रसाद 'कृष्ण' कहि नाचै। प्रेम कृपाफल पायो साँचै।।

नारायणी—

(प्रसाद पा दोनों हाथ उठा) कृष्ण कृष्ण! (नाचती)

भक्तवृन्द—

हरिबोल! हरिबोल!

समाज—

भई प्रसिद्ध ताते यह बानी। गौरांगेर अवशेष पात्र नारायणी

अद्वैत—

भक्तवृन्दो! आज सों नारायणी कूँ महाप्रभु गौरांग के उच्छिष्टामृत की पात्री कहकै सादर स्मरण करनौ। धन्य है नारायणी के अपूर्व सौभाग्य कूँ!

भक्तवृन्द—

हरिबोल! हरिबोल।

समाज—या प्रकार सों—

साल पहर बीते प्रभु, करत चरित अविराम।
चकित थकित भयेजन सबै, करत विनय अभिराम।।

अद्वैत—

(अंजलीबद्ध) हे लीलामय परेश प्रभो! आप तो अपने परस्व रूप के परमानन्द में सहज स्वच्छन्द लीला कर रहे हैं परन्तु हम सब तो सामान्य जीव हैं। हमारी कहा सामर्थ्य कि आपकी समता कर सकैं—

कवित्त—

देवान के देव तुम ईशन के ईश हो,
भाव औ स्वभाव आज, अपूर्व लखाये हैं।
वांछा हू पूरन करी जन जन के मन की सब,
पाप सन्ताप जन्म जन्म के सब नसाये हैं।
हाथन सों लै लैकै गरीबन के फूल पात,
श्रीगोवर्धननाथ ज्यूँ हमकूँ अपनाये हैं।
कृपा तो अपार उत भाग्यहू अपार इत,
तेज यह अपार 'प्रेम' जात न सहाये हैं।

श्रीवास—

हाँ सर्वेश्वर ईश! आपके लिये तो काल को कोई बाधा नहीं परन्तु हम जीव तो कालचक्र में बँधे हैं। हमारे लिये तो आज को—

कवित्त—

दिन गयो बीत अब, रात बीति भोर होत
आपके लेखे तो पलहू न बीत पाये हैं।
(कारण कि आप तो)
काल के हू काल महाकाल हो अखंड आप
कैसो दिन रात कैसी, एक रस भाये हैं।
(परन्तु हमारे तो कल ते)
सात् सात् पहर खान पान ओ विश्राम बिन
तन मन प्राण जीव, सबही अकुलाये हैं।
(अतएव कृपा करके अब तो)
दरसाओ नर भाव, ईशता दुराओ निज
बन जाओ शचिलाल, यही 'प्रेम' भाये है।

ईश्वर और जीव को, बनै न कबहू संग।
गौर निमाई बनि पुनि, करहू संकीर्तन रंग।।

महाप्रभु—

(हुँकार पूर्वक सिंहासन पर से नीचे भूमि पर पतन एवं घोर मूर्च्छा)

समाज (चौपाई)—

सुनत वचन हरि किये हुँकारा। परै धरन जन सकल सम्हारा।।
दशा तुरीय रही तन छाई। चेत-अचेत कही ना जाई।।
भक्त सकल अतिशय अकुलाये। करत बहुलौकिक सु उपाये।।
रजनी गई दिवाकर आये। चेतत नहीं प्रभु चेत कराये।।
दिनहू बीत चल्यौ दुखदाई। खोलैं नैंन न जागैं निमाई।।
करि करि जतन सकल सब हारे। निर्बलके बल राम सम्हारै।।
मिलि संकीर्तन घोष उचारैं। हरे कृष्ण हरे राम पुकारैं।।

भक्तवृन्द—

महाप्रभु के चारों ओर बैठे हुए संकीर्तन करते हैं।

धुन—

हरि ओ राम राम। हरि ओ राम राम।।

महाप्रभु—

(धीरे धीरे सचेत हो उठकर बैठ जाते हैं)

भक्तवृन्द—

हरिबोल! हरिबोल!

महाप्रभु—

मैं कहां हूँ? तुम सब मोकूँ घेर कै कैसे बैठे हो?

श्रीवास—

प्रभो! सबेरे सों आप अचेत परे हैं। याहि सों हम आपकूँ घेर करकै नाम-संकीर्तन कर रहे हैं।

महाप्रभु—

(दुःखपूर्वक) हाय हाय! इतनो समय-मेरो हरिनाम बिना व्यर्थ ही गयो। मैंने कछु चंचलताई तो नहीं कीन्हीं।

नित्यानन्द—

रहन दैओ इन बातन कूँ प्रभो! हम जानैं हैं आप जैसे हो—चंचल हो कै शान्त हो। हमारे तो भूख प्यास के मारे प्राण जायँ हैं। कल सबेरे सों मुख में जल तक नहीं गयो है। यासों चलौ गंगा स्नान करैंगे और भोजन करैंगे।

भक्तवृन्द—

हरिबोल हरिबोल हरिबोल हरिबोल (संकीर्तन)

धुन (आरती)—

जय शचिनन्दन गौर गुणाकर।
प्रेम परसमणि, भाव रससागर।।

इति महाप्रकाश लीला सम्पूर्ण।

❖

यौवनामृत लहरी **चतुर्दश कणामृत**

शची-स्वप्न एवं नाम प्रचार

मंगलाचरण—

मोहोन्मादरसेन गोपयुवतिसिक्तेन वृन्दावनं
यः पूर्वं जगदेकमङ्गलमलं चक्रे घनश्यामलः।
सोऽयं गौरहरिः समस्तजगतां प्रेम्ना समुल्लासयन्
कारुण्यैक निकेतनो विजयते गौड़ावली मण्डले।।

पद—

जो हरि व्रज में वंशी बजाई, जो हरि व्रज में प्रेम बहाये।
जो हरि व्रज में गोपी नचाईं, जो हरि व्रज में रास रचाये।।
सो हरि कलि में गौर कहाये, मंडल गौड़ मधि प्रगटाये।
अपने नामकूँ आप ही गाये, अपनो प्रेम धन आप लुटाये।।

लीलारम्भ (शची स्वप्न)

पद-प्रभाती—

अब सुनहु लीला इक सुन्दर, गौर हरी दरसाई हो।

अद्‌भुत स्वप्न दियो माता कूँ, परम गूढ़ सुखदाई हो।। चै.भा.

पर्दा खुलता है। भीतर मन्दिर में कृष्ण-बलराम। पात्रों में मिठाइयाँ, फल आदि रखे हैं। पार्श्व कोने में शची शयन)

रजनी शेष निहारती स्वप्न, निताई-निमाई भाई हो।

(मन्दिर भीतर से ही बाल-निताई-निमाई निकल कर बाहर खेलते हैं)

शिशु द्वै द्वै द्वै पाँच बरसके, करत फिरत लराई हो।।
दोऊ दोऊ तन धूरि उछारत, पाछे दौरत धाई हो।
दोऊ दोऊन तन मारत कबहू, करत कुटहू रिसाई हो।।
कबहूँ गरबैयाँ दै डोलत, नाचत 'हरि बोल' गाई हो।
हेरि हेरि सोवत महँ जननी, बार बार बलि जाई हो।।

निमाई—

दादा हमारे मन्दिर में द्वय चोर घुसि आये हैं। चलो उनकूँ बाहर निकास देयँ।

समाज (पद)—

खेलत हँसत दोऊ कर पकरे, गये हरि मन्दिर माँहि हो।
पकरि राम कृष्ण लै आये, जननी मति भरमाई हो।।

निताई-निमाई—

निकसो हमारे मन्दिर से (हाथ पकड़ खींचते है)

समाज—

निताइ हस्त में कृष्ण हस्त है, रामहिं धरे निमाई हो।
खैंचत झगरत ठेलत पेलत, करि रहे महा लराई हो।।

निताई-गौर—

गौर निताई रिस करि बोले, को तुम देहु बताई हो।
हमरे मन्दिर काहे घुसि आये, तापै करत लराई हो।।

यह घर जर है हम दोउन को, हमरो दूध मिठाई हो।
निकसि जाओ सूधे घर बाहर, दैहैं फल जु चखाई हो।।

रामकृष्ण—

नहीं तुम जानौ जग जानत है, हम हैं वीर महाई हो।
मैं नन्दनन्दन कृष्ण कन्हैया, यह बलराम बड़ भाई हो।।
यहाँ वहाँ सब राज हमारो, तीन लोक ठकुराई हो।
हमकूँ चोर बतावन हारे, को तुम देहु बताई हो।।

निताई—

तब हँसि नित्यानन्द जु बोले, रहन देओ ठकुराई हो।
बीत गये वे दिन जब व्रज में, लूट लूट दधि खाई हो।।
तुम ग्वालन को राज नहीं अब, राज विप्र को भाई हो।
बहुत पुजाई तुम या द्वारे, अब न चलै ठकुराई हो।।
प्रीति सहित पग धारो नातर, दैहै पीठ सुझाई हो।
सखा न साथी कोई तिहारे, तुमहीं लैहै छुड़ाई हो।।

रामकृष्ण—

रामकृष्ण तब रिस करि बोले, तुम्हरी मति बौराई हो।
चोर डकैत हू साहू बनत हैं, दैहैं फल जु चखाई हो।।
तुम दोउन कूँ बाँधि राखिहैं, और न कोई उपाई हो।
राम कहत मोहि सौंह कृष्ण की, जो न पकरूँ निताई हो।।

निताई—

नित्यानन्द हू गरजत बोलत, को यह कृष्ण कन्हाई हो।
मेरे शीश पै गौर विश्वम्भर, ईश्वर सदा सहाई हो।।

समाज—

मुख सों रार मचावै बदि बदि, करसों करत लराई हो।
भीतर सों बाहर धरि लावैं, वे घुसि जावैं पलाई हो।।
लावत धावत पकरत छूटत, मोद विनोद सुहाई हो।
चारों जन बलिया छलिया बहु, पार न कोई पाई हो।।
कबहूँ छीन खात हैं कर सों, मुख मुख कबहु मिलाई हो।
प्रीति मोद विनोद बाल लखि, जननी मति विरमाई हो।।
तबहि निताइ टेरि कही माँ, मोहि भूख लगि आई हो।
मात शची उठी देन मिठाई, निद्रा गई नसाई हो।।

(शची का जागना—चारों का अन्तर्द्धान)

नहिं निताई निमाई तहँ, नहिं राम नहिं कृष्ण।
बैठी शची विचारती, कहा देख्यौ यह स्वप्न।।

शची—

यह कैसो आश्चर्य स्वप्न! भगवान् कृष्ण एवं बलराम के दर्शन तो बड़ो ही शुभ है परन्तु मेरे निमाई-निताई के संग यह कलह कैसो? कलह हू कैसे कहूँ। हँस हू रहे हे एक दूसरे के हाथ ते छीन-छीन करकै खाय हू रहे हे। बड़ोई सुख पाय रहे हे। (रुककर) परन्तु हाय! ये मेरे दोनों बालक भगवान् के हाथन ते भोग छीन-छीन करकै खाय रहे हे। यह तो कोई अच्छो काम नहीं है। कोई अपराध न लग जाय। मोकूँ तो भय होय है। अच्छो कल निमाई सों ही एकान्त में पूछूँगी हे नारायण! मेरे लालान को मंगल करियो। (प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

स्वप्न खेल मिष सों प्रभु, दियो तत्त्व दरसाई।
जोइ राम और कृष्ण हैं, सोई निताई निमाई।।

इहि विधि चरित गौर बहू करहीं।
नित प्रति नव नव तत्त्व उघटहीं।।
बहु विधि निज वैभव दरसावहिं।
कहूँ गुप्त कहूँ प्रगट जनावहिं।।

(पर्दा खुलता है। शची बैठी हैं)

महाप्रभु—

(प्रवेश कर चरण-स्पर्श करते हैं)

शची—

आ वत्स निमाई! तेरो मंगल होवै। मैं तो बड़ी देर सों तोकूँ याद कर रही ही!

महाप्रभु—

क्यों कहा बात है माँ?

शची—

बेटा! कल रात्रि मैंने एक बड़ो विचित्र स्वप्न देख्यौ।

सुनहु वत्स निमाई, अचरज स्वप्न लख्यो जो मैं।
लरत तुम दोऊ भाई, रामकृष्ण प्रभु दोउ संग।।

समाज (चौपाई) —

आदि अन्त सब सपनो सुनायो।
बूझति यह कहा समझ न आयो।।

महाप्रभु—

माँ! यह तो आपने बड़ोई सुन्दर स्वप्न देख्यौ परन्तु—
प्रगट करियो जिन काहू आगे। सब सुकृत फल आजही जागे।।
तुव मन्दिर में बाल गोपाला। जागृत देव चेतन तिहुँ काला।।
आगे रह्यौ मेरे मन संशय। मिट्यौ स्वप्न सुनि भयो दृढ़ निश्चय

शची—

कहा संशय हो तेरे?

महाप्रभु—

नित प्रति जब हौं भोग धराऊँ। आधोइ भोग थार महँ पाऊँ
कबहू न समझि सक्यौ हौं माई। आधो भोग को जात है खाई
तुव वधु प्रति करतो सन्देहू। सकुचत मुख सों कहत न बने हू
आज मिट्यौ सब सन्देह जाला। गयो समझि यह काज गोपाला

शची (दोहा) —

स्वयं लक्ष्मी सम मम वधू, तू कहा कहत निमाई।
कहा कमी है लक्ष्मी कूँ, खावै भोग चुराई।।

महाप्रभु—

(हँसकर) हाँ माँ! यह मेरी बड़ी भूल ही। परन्तु यह सब गोपाल जी की ही लीला है।

शची—

चल अब गोपालजी को प्रसाद पाय लै। (दोनों का प्रस्थान)

समाज (दोहा) —

गुप्त चरित बखानि कछु, वरनौं प्रगट विहार।
जेहि विधि कीन्हे नदिया नगर, हरिनाम परचार।।

नित हरि कीर्तन गौर विश्वम्भर। श्रीवास भवन संग परिकर
हरि गावैं हरि प्रेम लुटावैं। प्रियजन जीवन सफल बनावैं
समय जान प्रभु कृपा उमगानी। दशा जीव जग देखि दुखानी
नाम प्रेम जग जनहू पावैं। ता हित मंगल रीति चलावैं
अपनो दूजो रूप निताई। तिनसों भेद कहत प्रगटाई
(पर्दा खुलता है। श्रीनिताई-गौर विराजे हैं)

निताई (दोहा) —

लुटैहौं कलि जीव प्रति, कब तुम प्रेम भंडार।
चाभी तुम्हरे हाथ ही, तुम दयालु अवतार।।

महाप्रभु—

श्रीपाद हरिनाम की तारी तो तुम्हारे हाथ में है। तुम जाकूँ यह तारी देओगे वही प्रेम पाय सकै है।

तुम तो करुणा प्रेम के, सागर अमित अपार।
खोलौ अरु लुटाऔ अब, अपनो प्रेम भंडार।।
कब तुम आओगे यहाँ, रह्यौ बाट निहार।
अब आये हो कृपा करि, तो करौ नाम प्रचार।।

अब आप हरिनाम एवं प्रेम दान-महोत्सव को शुभारम्भ करौ। मेरी चिरकाल की या अभिलाषा कूँ पूर्ण करौ।

निताई (दोहा) —

तुम स्वामी मैं दास तुव, करौं आज्ञा सिर धार।

महाप्रभु—

हरिदास संग नगर महँ, करौ नाम प्रचार।।

निताई—

कैसे करैं प्रभो ? नाम-प्रचार की रीति-नीति कहा है ताकूँ बतायवे की कृपा करौ।

महाप्रभु—

श्रीपाद ! आप तो कृष्णप्रेम की मूर्त्ति ही हो, फिर आपकूँ मैं कहा रीति-नीति बताऊँ तथापि आप जो विनय-वश मेरे ही मुख सों सुननौ चाहौ तो सुनौ—

सवैया (दादरा)—

नदिया नगरी डगरी डगरी विचरी सगरी कहो हरि।
द्विज-चंडाल, धनी कंगाल, वृद्ध बाल नर ओ नारि।
जोरि हाथ प्रेम-साथ, सबन पास याचो हरि।
भिक्षा हरि दीक्षा हरि, शिक्षा हरि नाम हरि।।

श्रीपाद! कोई होय—नर होय नारि होय, बाल होय वृद्ध होय, ब्राह्मण शूद्र होय, पण्डित होय मूर्ख होय, साधु होय असाधु होय, धर्मात्मा होय पतित पापी होय—सबन के पास जाय जायकै उच्चस्वर सों हरिनाम सुनामनो, हरिनाम की ही भिक्षा माँगनो, हरिनाम गायवे की ही शिक्षा दैनो—सूधो बोलनो, तर्क नहीं करनो। हाथ जोरनो, बात नहीं जोरनो। हृदय कूँ पकरनौ, बुद्धि सों नहीं लरनौ। कोई हँसै तो हँसन दैनो, भूँसै तो भूँसन दैनो और मारै तो मारन हू दैनो। परन्तु अपनी रीति, नीति कूँ नहीं छोड़नो। बस यही नाम प्रचार की विधि है।

निताई—

आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। मैं हरिदास कूँ संग लैकै अबही नदिया नगर कूँ जाऊँ हूँ।

महाप्रभु—

श्रीपाद! दिन भर करनौ और संध्या कूँ आय कै मोकूँ समाचार सुनामनौ।

निताई—

जैसी आज्ञा प्रभो! (प्रस्थान। पटाक्षेप)

समाजी पद (भीम पलासी १ ताला)—

जयति जयति जय दयाल, प्रभ्नु श्रीनिताई।
जयति जयति रोहिणीनन्दन, श्रीबलराम भाई।।
(प्रवेश निताई हरिदास का हाथ पकड़ खींचते हुये)

हरिदास—

बताओ तो सही, मोकूँ कहाँ खींचै लै जाय रहे हो।

निताई—

चलै आओ, बस चले ही आओ। आनन्द! आनन्द!

हरिदास—

अजी ऐसो कहा आनन्द आपकूँ पाय गयो है जो आपकूँ इतनो उछार रह्यौ है? कछु प्रसादी मो भिखारी कूँ हू मिल जाय!

निताई—

(जोर से हँसते हुये) हा हा हा! सवा तीन लाख नाम नित प्रति लेय है और तापै भिखारी बनै है! वाह रे भिखारी! एक दिन में सखा लाख! एक महीना में एक करोड़! एक वर्ष में बारह करोड़! और तौहू भिखारी! ऐसो भिखारी तीन लोक में हू मिलनो कठिन है! भिखारी! हरिदास भिखारी! हा-हा-हा!

हरिदास—

मैं हार्‌यौ अवधूत जी महाराज! हार्‌यौ! अब और मोकूँ लज्जित न करौ। बात कहा है सूधे-सूधे बताय देओ।

निताई—

बात सूधी यही है कि अब अपनी गठरी खोलौ और लुटाऔ। हरिनाम बोलो और बुलवाओ। नदिया नगर चलौ। यह आज्ञा तुम्हारे-हमारे ऊपर प्रभु की भई है। यासों चलौ। दौड़ो (खींचते हैं)

हरिदास—

मैं तो एक अधम कीट यवन हूँ! मैं नाम-प्रचार कहा कर सकूँ हूँ। प्रभो!

निताई—

खूब कर सकौ हो, पूरो कर सकौ हो। तुम ही कर सकौ हो और दूसरो कोई कर नहीं सकै है।

हरिदास—

कैसे कर सकूँ हूँ मेरी समझ में नहीं आयो।

निताई—

ऐसे कि जाके हृदय में और जिह्वा में दिन रात नाम जाग रह्यौ होय वही दूसरे के हृदय में हू जगाय सकै है और जिह्वा पै नचाय सकै है। नाम-प्रचार तो कीर्तन सों ही होय है भाषण सों नहीं! यासों चलौ।

हरिदास—

(हाथ जोड़ दीनता पूर्वक) हा हा भगवन्! मेरी स्तुति न करैं। मैं हरिनाम लैनौ कहा जानूँ हूँ। नाम लैनो तो बस वही जानै हैं कि जिनकी यह दशा है जाय है कि—

सवैया—

नैनन सों जलधार बहै जब नैन उलट प्रीतम ढिंग पहुँचें।
स्वेद बहै तन छावै पुलक, कदली जिमि काँपै जोर न पहुँचे।
ह-ह-ह कहि गदगद होवै, 'रि' लौं कहन की बार न पहुँचे।
नाम कृपा भई तबही जानौ 'प्रेम' दशा जब या गति पहुँचे।।१
नाम लियो पै न प्रेम भयो न हियो ही गर्यौ न डूब्यौइ मना।
वह तो इक हाँसी-खेल भयो वाको कहा मूल्य परताप बिना।
फल होयगो आगे उधारकी बात, इहँ 'प्रेम' नकद कछुहाथ परै ना
जो आपही कोरो रंग बिना, वह औरनकूँ तो रंगाय सकै ना।।२

ऐसे प्रेमभाव की तो मोमें गन्धहू नहीं है परन्तु आप तो प्रेमानन्द की मूर्त्ति ही हो। सदा भाव में उन्मत्त रहौ हौ—देह की सुध तो कहा कौपीन की सुध आपकूँ नहीं रहै है। पूरे दिगम्बर अवधूत बन जाओ हो।

निताई—

अच्छो! हाँसी करै है मेरी! आमन दै गंगा। न डुबाऊँ तो।

हरिदास—

लेओ! साँची कही तो हाँसी है गई। वा दिना की बात भूल गये कहा?

निताई—

कौन-से दिना की!

हरिदास—

वाही दिना की जब आप महाप्रभु के भीतर भवन में पहुँच गये हे जहाँ प्रभु और प्रियाजी विराजमान हे। काँधे पै कौपीन डारे हँसते भये मस्त दिगम्बर बने भये जा ठाड़े भये हे। तब प्रभु ने हँसते-हँसते अपनी पीताम्बरी आपकूँ ओढ़ाय दीनी ही। यह कहा मैं झूँठी कह रह्यौ हूँ।

निताई—

मोकूँ कहा—खबर—साँची है कै झूँठी

हरिदास—

ठीक ही तो है। खबर ही पर जाय तो प्रेम ही कैसो? अहा! आप को संग पायकै मैं कृतार्थ है गयो और अब नदियावासी हू कृतार्थ होंगे।

निताई—

बस अब बातन नै बन्द कर और कछू कीर्तन कर। मैं नाचूँगो।

हरिदास—

(कीर्तन धुन) हरे कृष्ण हरे राम। कहो मधुर मधुर नाम।

निताई—

(नाचते हुये चलते हैं)

समाज (चौपाई)—

गावत नाचत गंगा आये। कौतुक नित्यानन्द रचाये।।

अनुकरण (१)—

दौरि कूदै गंगाजल माँहीं। पैरि मकर ढिंग पहुँचै जाहि।।
भीत चकित टेरत हरिदासा। फिरहु फिरहु जावहु मति पासा
कहत निताइ गौर आज्ञा करिहौं।
जाय मकर ढिंग नाम उच्चरिहौं।।
आज्ञा पूरन तबही ह्वैं है। जीव सकल जब नाम सुनि पैहै।।
गौर हरि बोल नाम सुनाये। पैरत मगन तीर चलि आये।।
(गंगा तट पर दो चार छोटे-छोटे बालक-बालिकायें)

अनुकरण (२)—

मग खेलत शिशु जन लखि पाये।
तिन ढिंग जाय अतिहि डरपाये।।
डरपि टेरैं वे मैया दैया। दौरि आये मातु पितु भैया।।
कहहिं बालक चोर ये आये। मारहु पकरहु भागि न जाये।।
कहत निताई मारहु मारहु। गौर हरिबोल कहि कहि मारहु।।
अचरज करैं गौरहरि गावैं। लखि लीला हरिदास सिहावैं

हरिदास—

जय मेरे निताइ दयाल जय हो तिहारी।
नाम-प्रचार की या कौशल पै बलिहारी।।

निताई—

चलौ हरिदास! अब घर-घर में द्वार-द्वार पै जायकै भिक्षा माँगैं, नाम सुनावैं।

हरिदास—

जैसी आज्ञा दयामय! कृपा हो तो ऐसी!

निताई-हरिदास (पद-जोगिया-दीपचन्दी)—

आये आये हम द्वार भिखारी, देओ देओ हमें भिक्षा री।
बोलो बोलो हरि मुख बोल, लेओ लेओ हरि बिन मोल।।
साँसा निकसत आवै न आवै,
नाम बोल हरिधाम हरिजु को पावै।
पापी तापी सुरापी कहाँ आओ, गाय गाय हरि प्रेम पाओ।।

निताई—

(एक द्वार पर जाकर) गौर हरिबोल।

एक गृहस्थ—

(निकलता है भिक्षा लेकर) दण्डवत् बाबा महाराज। लेओ भिक्षा! काहे में लेओगे। झोली खप्पर कहाँ है?

निताई—

कान ही हमारे खप्पर हैं और नाम ही हमारी भिक्षा है (हाथ जोड़) यासों कहो प्रेम सों 'गौर हरिबोल'।

गृहस्थ—

बड़े अजीब भिखारी हो। अरे! नाम सों कहा पेट भरै है। पेट तो अन्न सोंइ भरै है।

निताई—

हमारो तो पेट नाम सोंइ भरै है। यासों—
भजौ कृष्ण कहौ कृष्ण, लहौ कृष्ण नाम।
अन्न धन याचैं नहीं, देओ कृष्ण नाम।।

गृहस्थ—

बाबा महाराज! नाम क्यूँ लैवैं?

निताई—

क्यूँ लैवैं ? अरे जब तुम पानी पीओ हो तब पूछौ हौ पानी क्यों पीवैं ?

गृहस्थ—

नहीं तो।

निताई—

और जब भोजन करौ हो तब पूछौ हो भोजन क्यूँ करैं।

गृहस्थ—

नहीं तो।

निताई—

और जब साँस लैओ हो तब पूछौ हो कि साँस क्यूँ लैवैं।

गृहस्थ—

साँस तो अपने आप ही चलती रहै है वामें पूछनो कहा।

निताई—

और जब स्त्री-पुत्रन सों स्नेह करौ हो तब पूछौ हो कि हम स्नेह क्यूँ करैं।

गृहस्थ—

वाह वा! यह हू कोई पूछवे की बात है। स्नेह तो अपने आपइ होय है।

निताइ—

(हँसते हुये) तो श्रीमान् धीमान् जी! जब कहूँ नहीं यह 'क्यूँ क्यूँ' तो फिर भजन के समय में ही यह 'क्यूँ' क्यूँ? यासों (झपट कर दोनों हाथ पकड़) गौर हरिबोल!

गृहस्थ—

हरिबोल!

तीनों—

(कीर्तन) हरिबोल! हरिबोल! हरिबोल! (नृत्य)

निताई—

(दूसरे द्वार पर जाकर) गौर हरिबोल!

दूसरा गृहस्थ—

(भिक्षा लेकर निकलता) लेओ बाबा भिक्षा!

निताई—

मैं अन्न की भिक्षा नहीं लऊँ हूँ भैया! मैं तो नाम की भिक्षा लऊँ हूँ—

पद (भैरवी-दादरा)—

आमि नामेर भिकेरी, आमि प्रेमेर भिकेरी।

दूसरा गृहस्थ—

नाम लिये सों कहा होय है बाबा?

निताइ—

नामे बुक भरा जाय! अभाव मिटाय, स्वभाव जगाय महासुखे
कृष्ण कृष्ण बोलो मुखे।।

भैया! नाम लैवे सों जीव को अभाव मिट जाय है और स्वभाव जाग जाय है।

दूसरा गृहस्थ—

जीव को अभाव कहा और स्वभाव कहा है?

निताई—

अभाव आनन्द को है और स्वभाव आनन्द ही है। यासों नाम लैओ और आनन्द पाओ! परमानन्द! नित्यानन्द!

दूसरा गृहस्थ—

(व्यंग्य पूर्वक) वाह वाह वाह! क्रिया नहीं कर्म नहीं। जप नहीं तप नहीं। ज्ञान नहीं ध्यान नहीं! बस हरि बोलो और हरि पाऔ। रोटी-रोटी कहौ और पेट भरौ। पानी-पानी कहौ और प्यास दूर करौ। पैसा-पैसा रटौ और धनी बन जाओ। स्वर्ग-स्वर्ग कहौ और स्वर्ग पहुँच जाओ। वाह! कैसो बढ़िया चुटकला है।

निताई—

हाँ भैया! बड़ो बढ़िया! बड़ो सूधो चुटकला है 'हरिबोल' यह चुटकला मेरे गौर हरि लाये हैं। कलि के जीवन के लिये स्वयं हरि आये हैं। यासों बोल भैया 'हरिबोल'

दूसरा गृहस्थ—

जाओ जाओ! अपनो रास्ता नापौ।

निताई—

(हाथ जोड़ घुटना टेक)

बोल बोल हरि मुख बोल।
लेओ लेओ हरि बिन मोल।।

दूसरा गृहस्थ—

(भाव विह्वल होते हुये) अरे अरे! यह मोकूँ कहा है रह्यौ है! यह मेरो ह्यदय पिघल रह्यौ है! ह......ह.....ह.....हरि

निताई—

(झपट कर हाथ पकड़) हरिबोल! (थोड़ी देर नचा कर आगे बढ़ता है। वह गृहस्थ नाचता गाता चला जाता है)

निताई—

(तीसरे द्वार पर जाकर) गौर हरिबोल!

शाक्त गृहस्थ—

(खाली हाथ निकल झुँझलाता हुआ) क्यों बाबा! तुम लोग गली-गली में क्यों भूँकते हुये घूम रहे हो?

निताई—

प्रभु की आज्ञा सों।

शाक्त—

कौन है तुम्हारा प्रभु?

निताई—

गौरसुन्दर विश्वम्भर देव!

शाक्त—

अरे वह निमाई छोकड़ा जो गाता-नाचता-रोता है! वही है क्या तुम्हारा प्रभु?

निताई—

हमारे ही नहीं, तुम्हारे और विश्व भर के एक वे ही प्रभु हैं, महाप्रभु हैं विश्वम्भर विश्वनाथ हैं।

शाक्त—

(जोरों से हँसता हुआ) वाह वाह वाह! क्या खूब पोप-लीला हैं, मिली भगत है—

मैं बनूँ भगवान और तुम बनो भगत।
हम तुम मिलकर यारो ठगा करें जगत।।

अहो रूपमहो ध्वनिः।

ऊँट के ब्याह में बने बराती गधे गधे ही आये।
होंचु होंचु कर करके वे जोरों से चिल्लाये।
होंचु होंचु दूल्ह हमारा कैसा रूप है पाया।
होंचु होंचु कामदेव भी रूप देख शर्माया।।
सुनकर के तारीफ ऊँट भी फूला नहीं समाया।
वाह वाह मेरे गधे बराती, गला गजबका पाया।
करूँ तारीफ गले की क्या गन्धर्व भी शर्माया।
धन्य तुम्हें और धन्य मुझे जो ऐसा मेलमिलाया।।

अहो रूपम हो ध्वनिः! जाओ भगत जी! टरको आगे! यहाँ तुम्हारी ठग विद्या नहीं चलैगी!

निताई—

(हाथ जोड़) भैया! हम ठग ही सही परन्तु एकबार कृपा करकै बोल दै—'गौरहरि'

शाक्त—

(गर्म होकर) बस चुप करो! चिल्लाओ मत। अपना घर तो उजाड़ करके अब हमारा घर भी उजाड़ने आये हो। आप नकट बने तो बने, हमें भी नकटा पंथी बनाना चाहते हो! देखो बाबा! हम ऐसे ही तुम्हारा नाम-फाम नहीं बोलेंगे! पहले चमत्कार दिखाओ कुछ चमत्कार! तुम दिखाओ या

तुम्हारा प्रभु दिखावे, तो हम भी करैंगे नमस्कार और मानेंगे उसका हुक्म! नहीं तो आजकल घर-घर में ईश्वर ही ईश्वर हैं—

सेठानी के ईश्वर सेठ ही, भट्टानी के भट्ट।
चेला चेली के ईश्वर से, भरे हैं मन्दिर मट्ठ।।
भरे हैं मन्दिर मट्ठ सारे रचे स्वांग ज्यों नट्ट।
दुनियाँ अन्धी भेड़ की जैसी, जुड़ी ठट्ठ की ठट्ठ।।
नहीं अकल ठिकाने नकलचियों की, कर देगा यह लट्ठ।।

निताई—

(गम्भीरता पूर्वक) ऐसो ही होयगो दुनियाँ को दुःख वे दूर करके दिखायँगे (आगे बढ़ जाते हैं)

हरिदास—

(आगे चल) अवधूत जी! आपने याको उद्धार क्यूँ नहीं कर्‌यौ? छोड़ क्यूँ दियो?

निताई—

यह निन्दक है! भक्ति भक्त-भगवान् को निन्दक है—

कबीरा निन्दक ना मिलौ, पापी मिलौ हजार।
एक निन्दक के शीश पै, कोटि पाप को भार।।

पाप तो साधारण रोग परन्तु निन्दा असाधारण रोग है। पापी को उद्धार सहज है। परन्तु निन्दक को उद्धार अत्यन्त कठिन है।

हरिदास—

तो फिर निन्दकन को उद्धार कैसे होयगो?

निताई—

असाधारण उपाय सों ही होयगो। सो उपाय प्रभु ही करैंगे।

हरिदास—

कहा उपाय करैंगे?

निताई—

कछु करैंगे ही सो तबै मालूम है जायगो। अब चलौ आगे।

(दोनों चले जाते हैं)

समाज (पूर्वपद-चौताला-अन्तरा)—

नदिया नगर घर घर घर, जाय ठाड़े दर दर दर।
कंगाल भेष दोऊ धर, हरि हरि मुख गाई।।
जयति जयति जय दयाल०।।
कौतुक जन मन्द करत, हँसत बहु व्यंग वदत।
गौर प्रेम मगन मत्त, गनत ना निताई।।
जयति जयति जय दयाल प्रभु श्रीनिताई।
जयति जयति रोहिणी नन्दन श्रीबलराम भाई।।

निताई-हरि—

(प्रवेश गाते हुये)

हरे कृष्ण हरे, हरे राम हरे।
मंगलमय सुख धाम हरे।।

भक्त गृहस्थ—

(प्रवेश—भिक्षा लेकर) दण्डवत्! बाबा महाराज! कृपया भिक्षा स्वीकार करें।

निताई—

(हँसते हुये) भगत जी! कहा तुमहू चाँवर की चुटकी दैकै टरकामनो चाहौ हो? अन्न सों तो आज तांई न काहू की भूख मिटी और न कबहू मिटैगी। हमकूँ तो वह अन्न चाहिये जासों भूख राँड सदा के लिये मर जाय।

भक्त—

ऐसा अन्न मेरे पास कहाँ है महाराज?

निताई—

हरिनाम है—

शेर—

ध्रुव और प्रह्लाद की मिट गई है भूख जिससे।
माँगते हैं उसी नाम की हम तो भीख तुमसे।।
कानों की झोली करके खड़े हैं तेरे दर पै।
प्यारे का नाम लेकर अमृत से इसे भर दे।।

भक्त—

अहा हा! घर-घर जा, भगवन्नाम सुनाय कै पवित्र करवे वारे, भगवान् की मधुर स्मृति जगायवे वारे हे भगवान् युगल आप दोउन को नमस्कार है, भूयो भूयः नमस्कार है। आप भीख लैवे नहीं आये हो आप तो हम कंगालन कूँ चिन्तामणि दैवे आये हो—

कवित्त—

लखि कै अचेत जीव, करिकै परम हेत
देत हो जगाय जाय, द्वार द्वार द्वारी हो।
भूलेन कूँ सुध देत, बिछुरे मिलाय देत
निर्बल कूँ बल देत, जीवन संचारी हो।
गिरेन कूँ गोद लेत, मल सब पोंछि देत
फल मधुर 'प्रेम' देत भव के उद्धारी हो।
चिन्तामणि नाम देत, छाँह कल्पतरु देत
जग सब भिखारी एक, तुमही दातारी हो।

भजन—

तुमको लाखों प्रनाम, ओ घर घर जाने वाले।
हरि हरि नाम सुनाने वाले, तुमको लाखों०।।
हम भूल पड़े थे वन में, बल खो बैठे थे तन में।
ओ राह बताने वाले, ओ ज्योति जगाने वाले।।
तुमको लाखों०।।
हम लेकर विषका प्याला, जारहे थे जमकेगाला।
ओ सुधा पिलाने वाले, नाम सुधा पिलाने वाले।
तुमको लाखों०।।
हम पार तेरा क्या पावें, बस शीशझुका जयगावें।
ओ 'प्रेम' लुटाने वाले, हरि प्रेम लुटाने वाले।
तुमको लाखों०।।

संकीर्तन—

हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल

(जनता भी सम्मिलित होकर तुमुल कीर्तन)

(प्रवेश कलिराज और सेनापति अधर्म)

अधर्म—

दुहाई युगराज कलिराज महाराज! दुहाई! दुहाई!

कलिराज—

क्यों सेनापति अधर्म! क्या आफत आई जो छाती दहल आई और मचाई दुहाई—

अधर्म—

आफत? आफत वही ब्राह्मण कुमार और उसके ये........ये.......ये (इशारा करते हुये) लंगोटिया यार! उड़ा दिया इन्होंने मुझ अधर्म का तार तार।

कलिराज—

कैसे? (जनता—हरिबोल, हरिबोल)

अधर्म—

ऐसे! सुनिये ऐसे! यह आवाज! यह गूँज! इस नाम के आगे कौन खड़ा रह सकता है?

कलिराज—

तुम अधर्म तुम।

अधर्म—

नहीं सरकार नहीं।

कलिराज—

क्यों याद है तुम्हें, जिस रोज पैदा हुआ था वह ब्राह्मण कुमार उसी रोज मैंने कहा था होशियार! न पाओगे हरगिज इससे पार! वह स्वयं हुआ है अवतार! मगर न माना तुमने यार। उससे लड़ने को हुये तैयार! आजमाने गये उसको! आजमा लिया न उसे, उसकी ताकत को?

अधर्म—

आजमा लिया! खूब आजमा लिया। मैंने तो समझा था कि इस नाम को लेते हुये भी जैसे दुनियाँ को देता हूँ मार वैसे ही इनको भी दूँगा पछाड़। मगर तमाम मेहनत बेकार। वजह क्या सरकार?

कलिराज—

वजह जानना चाहते हो तो सुनो—

शेर—

समझ कर जीव, नित्य परिकर से जा भिड़े हो।
रस्सी के धोखे में पड़, विषधर से जा अड़े हो।।
हैं जीव मायाबद्ध, परिकर हैं माया मुक्त।
ये दास दुनियाँ के हैं, वे सिद्ध भगवद्भक्त।।
मुख से बँधे हुओं के जो नाम निकलता है।
वह आग है ढका हुआ, न काम अपना करता है।।
सिद्धों के मुख से ही, निकलता है दिव्य नाम।
वह मार्तण्ड प्रचण्ड है, मिटा देता माया काम।।
जब माया ही नहीं फिर माया की फौज कहाँ।
तब प्रेम के राज्य में, तुम्हारा काम ही कहाँ।।

अधर्म—

हाय हाय सरकार! तब तो गजब हो गया। मैं जीते जी मर गया मेरी मल्का महारानी मिथ्या मेरे होते ही राँड हो गई—

अब वह किसके बल पर नाचेगी? मेरे शाहजादा बेटा पाखंड को अब कौन छाती से लगायगा? मेरी शाहजादी बेटी कुटिलता का हाथ अब कौन पकड़ेगा? मेरा तो खानदान ही उजड़ जायगा मेरी आँखों के आगे ही! हाय हाय! अब मैं कहाँ जाकर छिपूँ जो बरबाद होने से बच सकूँ!

कलिराज—

अधर्म! घबड़ाओ मत! छिपने की क्या जरूरत। चन्द जगह अब भी तुम्हारे वास्ते ही महफूज हैं—त्मेमतअमक हैं। वहाँ तुम खुला खेल सकते हो। अपनी जिन्दगी और मेरी हूकुमत बदस्तूर कायम रख सकते हो।

अधर्म—

(खुशी में उछलकर) बताइये सरकार! फौरन फरमाइये। ऐसी जगह कौन-कौन सी हैं जहाँ मैं आपको आबाद करूँ, अपनी जिन्दगी नाबाद करूँ और अपना दिलशाद करूँ।

कलिराज—

सुनो—गौर से सुनो और याद करलो—

विद्या शील तपः कुलाश्रम युजोप्येकान्तदान्ताश्च ये,
निन्दन्त्य स्म विभोश्चरित्रममनयं तेषु त्वया स्थीयताम्।
त्वत् पत्नीषु मृषा हिमुँ खेष्वास्तां तनूजश्च ते दम्भः
केवल शुष्क कर्म निरतेष्वेतेन मा खिद्यताम्।।

(चै० च० ना०)

पहले तुम्हारा अपना मुकाम सुनो—

झू०—

ज्ञान की चोटी पर चढ़कर जो भक्ति की निन्दा करते हैं।
तप के तेज से गरमा कर जो त्यौरी चढ़ाये फिरते हैं।
जाति कुल आश्रम के मद में चढ़े आसमान पै रहते हैं।
नाचो उनके सर पर अधर्म यह वास अचल हम करते हैं।
तेषु त्वया स्थीयताम्।

अधर्म—

शुक्रिया सरकार! बहुत बहुत शुक्रिया। और मेरे खानदान को बढ़ाने वाली, एक से हजार बनाने वाली मेरी मल्का महारानी मिथ्या कहाँ नाचा करैगी सरकार?

कलिराज—

बहिर्मुखों के मुख पर। 'त्वत् पत्नीषु मृषा बहिर्मुखेष्वास्ताम्'।

अधर्म—

बहिर्मुख कौन हैं कलिराज?

कलिराज—

हरे कृष्ण कहने सुनने में पीड़ा पेट में उठती हो।
मोहन मूरति गौरश्याम लखि आँखें जिनकी जलती हों
भक्ति-भक्तन की निन्दा में जीभ कैंची सी चलती हो।
ऐसे विमुख बहिर्मुख मुख में मिथ्या तेरी चलती हो।

अधर्म—

और मेरा रोबदार बरखुर्दार शाहजादा पाखंड की दुकान कहाँ जमेगी सरकार? उसे चमक-दमक, तड़क-भड़क, ठाठ-बाट, ताम-झाम बेहद पसन्द हैं। इसमें एक खरोंच तक न आने पावे सरकार! ऐसी इजाजत फरमायी जाय।

कलिराज—

बिल्कुल ऐसीही जगहलो—'तनुजश्च ते केवल शुष्ककर्मनिरतेषु'
भक्ति प्रेम फल तज करके जो कर्म के कंकर चुनते हैं।
फल रसाल को तज करके व्रत नेम के तरु तरु गिनते हैं।
सब योग हरि से तज करके जो योग सिद्धि से करते हैं।
उन हरि रस से सूखे ठूँठों को भेंट पाखंड की करते हैं।

अधर्म—

और मेरी राजदुलारी अति सुकुमारी कुँवरि कुटिलता का हाथ कौन पकड़ेगा? वह क्वाँरी न रह जाय कहीं।

कलिराज—

नहीं वह क्वाँरी नहीं रहेगी! उसका हाथ पाखंड पकड़ेगा—पाखंड उसका भाई!

अधर्म—

भाई बहन का हाथ पकड़ेगा। यह......यह......तो.....

कलिराज—

तुम्हारा खानदान है—अधर्म का! इसमें सब बातें धर्म से उलटी ही होती हैं। यहि कोई नयी बात भी नहीं है। पाखंड और कुटिलता की जोड़ी तो कुदरती है—विधाता की बनायी हुई। लिहाजा यह कुटिलता पाखंड के गले में हाथ डाले दुनियाँ की आँखों में धूल झोंकती रहेगी। इस तरह अधर्म तुम मय खानदान अपने-अपने मुकाम पर बहाल रहोगे, खुशहाल रहोगे और निहाल हो जाओगे।

अधर्म—

जय हो युगराज की! जय हो कलिराज महाराज की!

नेपथ्य—

जय हो युग धर्म की। जय हो नाम धर्म सिरताज की! हरि बोल!

अधर्म—

(चौंककर) फिर वही आवाज! कलेजा काँपता है! भागिये सरकार भागिये! इधर ही आ रही है—(नेपथ्य से—हरिबोल)

(कलि-अधर्म भाग जाते हैं)

इति नाम-प्रचार-लीला सम्पूर्ण

☙❖❧

यौवनामृत लहरी | **पञ्चदश कणामृत**

जगाई-मधाई-उद्धार

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौर भक्तवृन्द।।
सुमिर गौर निताइ प्रभु, करुणा के अवतार।
वरनौं अनुपम दया कछु, जगाइ मधाइ उद्धार।।
जय निताइ नितही सहाय, जय निमाइ नितमाइ।
जिन जगाइ मधाइ सम, लीन्हैं हृदय लगाइ।।
मारि मारि सब जुगन में, असुरन किये उद्धार।
प्रेमदान करि गौरहरि, कलि महँ कीन्हें पार।।

सवैया—

धर्म की छाँह न छीये कभू, निशि वासर पाप महँ बूड़ि रहै।
पावन तारन संतन हू की, न दृष्टि परी कबहू जिनपै है।
नाचत गावत लोटत वेहू, हरि रस अमृत पी पी छकै है।
ऐसे दयाल श्रीगौर निताइ की, बोलो प्रेम सों जै जै जै है।।

(प्रवेश गाते हुये निताई-हरिदास)

निताई-हरिदास गजल—

हरे कृष्ण हरे, हरे राम हरे। मंगलमय सुख धाम हरे।
जो नाम हरि का लेता है, वह तो हाथ हरि का पकड़ता है।
जो हाथ हरि का पकड़ता है, वह तो हाथ न और पकड़ता है।
हरे कृष्ण हरे हरे राम हरे। मंगलमय० ।।
वन न अलख अलख जगाता है, वह न सोऽहं सोऽहं जपता है।
वह तो हरि हरिनाम गरजता है, जो हाथ हरि का पकड़ता है।
हरे कृष्ण हरे० ।।
उसे कल्पतरु ही मिल जाता है, फिर कौन सेमरको चाहता है।
उसे चिन्तामणि मिल जाती है, जो हाथ हरि का पकड़ता है।
हरे कृष्ण हरे० ।।
वह नौका में जा चढ़ता है, फिर हाथों से क्यों तरता है।
वह तो माइ की गोदमें रमता है, जो हाथ हरि का पकड़ता है।
हरे कृष्ण हरे० ।।
जब सूरज जगमग करता है, तब दीपक कौन भूल देखै है।
'प्रेम' वृन्दावन में रमता है, जो हाथ हरि का पकड़ता है।
हरे कृष्ण हरे० ।।

(गाते-गाते प्रस्थान)

समाज (चौपाई)—

जगन्नाथ माधव द्वै भाई, जगाइ मधाइ कहैं जग गाई।।
विप्रवंश नदिया कोतवाला। दुराचारी कर्मन के काला।।
घर लूटैं कहूँ आग लगावैं। प्राण हरैं तिय धर्म नसावैं।।
मदिरा के दिन रात उपासी। त्राहि त्राहि करैं नदिया वासी।।

(पर्दा खुलता है। कोतवाल जगाई-मधाई नशे में धुत्त पड़े है। बाहर पहरेदार सिपाही—एक हिन्दू, दूसरा मुसलिम)

गफूर—

शहर कोतवाल की जय हो।

कपूर—

नदिया के 'सुपरन् टन्डन्ट' साहब का रुतबा आला हो! बोल बाला हो।

गफ्फूर—

सरकार हों तो ऐसे हों। जगन्नाथ खाँ और माधव खाँ जैसे हों।

कपूर—

आधे हिन्दू और आधे मियाँ ऐसे हों।

गफ्फूर—

अबे चुप बदकलामी! नमकहरामी!

कपूर—

अबे चुप चापलूस! मनहूस! दकियानूस।

जगाई—

(अँगड़ाई लेता हुआ) अरे! यह शो-शोर गु-गु-गुल कैसा हो रहा है।

गफ्फूर—

सरकार बुलबुल चहक रहीं हैं।

कपूर—

हजूर को दुआ दे रही हैं।

जगाई—

तो-तो-तो क्या स....स.....सबेरा हो गया?

कपूर—

नहीं सरकार! अभी तो दुपहर ही हुआ है।

जगाई—

अरे म.......म.....मद्धा! उठ रे ग....ग......गद्धा उठ! स.....स...... सबेरा हो गया।

मधाई—

(बेखबर सोता रहता है)

जगाई—

(झकोलते हुये) अब उठ स......स.......साले उठ! न.......न...... नाश्ता करले।

मधाई—

(अँगड़ाई लेता हुआ) अबे कि......कि.......किसे कहता है स..... सा.....साला।

जगाई—

तु......तु.....तुझे स.....स.....साला तुझे! उठेगा नहीं स.....स...... साले

मधाई—

स......स.....साले! छ......छ.....छोटे भाई को स.....स.....साला?

जगाई—

तो मुझे ब......ब.....बड़े भाई को स.....स......साला (मुक्का उठाता)

मधाई—

अबे! तू......तू.....तूने कहा स.....स......साला तो मैंने भी क.....क. ....कहा स.....स......साला। (मुक्का उठाता है)

गफूर—

और पूरा हो गया जवाब—सवाला!

कपूर—

वाह रे सबेरे ही सबेरे की पाठशाला। न राम है न रहीम है बस साला ही साला।

मधाई—

(नरम पड़कर) अरे नहीं जग्गा। म....म....मैंने तो ब....ब....बड़े प. ...प....प्यार से कहा था स.....साला। तू.....तू.....तू तो गु.....गु.....गुस्सा हो गया स......साला। आ ग....ग.....गले लग जा स.....स....साले (गले लगाता है)

कपूर—

वाह रे प्यार का तरीका! सीखने ही लायक है यह स...स.....स और ग....ग....ग! और गु गु गु। क्यों रे गफूर! सुनता है न स....स....साला!

गफ्फूर—

क्या बकता है कपूर स.....स....साला।

कपूर—

अबे गु....गु.....गुस्सा मत कर।

गफ्फूर—

अबे ग.....ग.....गले लग जा (दोनों गले लगते हैं)

मधाई—

(बोतल पीते हुये) हाँ रे जग्गा! दु....दु......दुनिया में क्या चीज है स. ....स.....सबसे आला?

जगाई—

तू.....तू....तू ही बता म.....म....मद्धा साला!

मधाई—

द.....द.....दम! यह दम ही है सबसे लासानी आला।

शेर—

दमदार ही खम ठोक के दुनियाँ में खड़े होते हैं।

जगाई—

दमदार के दम पै हीरे करोड़ जड़े होते हैं।।

गफ्फूर—(और कपूर)

दमदार ही मैदाने-जंग में अड़ा करते हैं।।

जगाई—

दमदार ही शेरो-बब्बर से लड़ा करते हैं।

कपूर—(और गफ्फूर)

दमदार ही बीबी-बाइयों से पिटा करते हैं।

गफ्फूर—

यह सबसे बड़े दम का काम है।

मधाई—

दमदार ही जमीं आसमां को जब्त किया करते हैं।

जधाई—

दमदार ही से खुदा के तख्तो-ताज हिला करते हैं।

कपूर—(और गफूर)

हिलते ही दमदारों के दम कूच किया करते हैं।

मधाई—

दम के बदौलत हम नदिया में मौज करते हैं।

जगाई—

नाम को काजी है हाकिम हुकूमत तो हम करते हैं।।

गफूर—

हुकूमत नहीं फजीहत करते हो।

कपूर—

दुनियाँ को बरबाद किया करते हो।

जगाई—

दमदारों के दम-खाम को भला कौन पा सकता है।

मधाई—

दम वह शै है जो मुर्दों में जान ला सकता है।

गफूर—(लेकिन कपूर)

दम पै क्या इतराते हो मियाँ दम क्या तुम्हारा है।
दम दम में निकलते ही मुर्दा नाम तुम्हारा है।।

मधाई—

ऐसा यह द....दम आता कहाँ से है जग्गा?

जगाई—

तू.....तू.....तू ही बता मद्धा! तू....तू ही हरफनमौला है।

मधाई—

म....म मद। इसे उलट दो द....म दम! समझ गया न? मद का नाम ही दम है।

जगाई—

श....श....शाबास मद्धा! शाबास! ले ले ले इनाम। पी पी पी (बोतल उसके मुँह से लगा देता है)

मधाई—

(अपने मुँह से निकाल जगाई के मुँह में लगा देता है)

जगाई—

अहा हा मद्धा! यह बो......बो बोतल क्या है खु.....खु.....खुदाई होटल है!

मधाई—

बे.....बेशक! यही म....मजहब का ज.....जमा टोटल है। ये स.....साले म....मजहब-मजहब चिल्लाते हैं। मगर म....म....मजहब खु खु खुदा के ही तो वास्ते है न?

जगाई—

क....क.....कहते तो ऐसा ही हैं। म....म....मगर अपना खु....खु.....खुदा तो इस बो....बो.....बोतल में ब......बन्द है अरे खु.....खु.....खुदा रहीम क....क....करीम मिलता है कब? दु.....दु.....दुनियाँ छूट जाती है जब! और दु....दु.....दुनियाँ छूटती है कब? यह......यह बो.....बोतल उड़ती है जब!!

शेर—

कुरान में न पुरान में न इंजिल में उसे पाया।
बो-बोतल से लौ लगाई तो स स साफ नजर आया।।

मधाई—

ठी.....ठी.......ठी....ठी......ठीक स....साले ठीक! दु...दु....दुनियाँ को दिल से ख....ख.....खाली करने के वास्ते कोई स....साले नाक पकड़ते हैं, आँख-मुख ब....बन्द कर लेते हैं। न खाते-पीते हैं, न बोलते-हिलते

हैं। बस घुटघुट के मरते रहते हैं। और कोई स.....स साले जंगल में गु...
.गु गुफा में बन्द रहते हैं लेकिन दु....दु.....दुनियाँ किसी के दिल से निकलती नहीं! निकलती है कब, कि जब—

शेर—

काग खुले बोतल के और दाग मिटे दुनियाँ के।
बागे-जन्नत में हुये दाखिल अल्लाह-मियाँ के।।
जाहिद ओ फाजिल मर गये दुनियाँ न छुड़ा पाया।
विहसकी की लगी चुसकी तो सब ब्रह्म नजर आया।।
सब ब्रह्म ही ब्रह्म! मैं ही मैं। दुनियाँ नदारत।

कपूर—

बेशक एक ही घूँट में सफाचट दुनियाँ।

गफ्फूर—

और दौजख को पहुँचे फटाफट मियाँ।

जगाई—

इसी खू.....खू.....खू खूबी को देख करके ही हम इस बोतल पर कुर्बान हैं (पीता है)

कोई खुदापरस्त है तो कोई बुतपरस्त।
हम आशिक हैं उसके जो है बोतल परस्त।।

मधाई—

स.....स.....साले बो.....बोतल की बदनामी करते हैं। अरे! इस बो.
...बो.....बोतल में फिलासफी है, शायरी है, कु.....कुरान है पुरान है। द.
....दम है बे....गम है, आबे जमजम है। तभी तो इसका नाम है खुदाई होटल।

गफ्फूर—

खुदाई नहीं शैतानी होटल!

गिलासों में डूबे फिर न उभरे जिन्दगानी में।
हजारों ही बह गये इस बोतलके बन्द पानी में।।

कपूर—(यह)

दारु का प्याला मौत का कडुआ प्याला है।
मिला है जहर शर्बत में, छुपी है आग पानी में।।

जगाई—

अरे! मद्धा! आज तो रंग नहीं जम रहा है।

मधाई—जमे कैसे—

न साकी है न हूर है न कवाब है।
इनके बिना क्या लज्जते शराब है।।

अबे ओ गफूर! कपूर! हरामजादा ओ। नाचने गाने वाली अभी तक क्यों नहीं आयी?

गफूर—

हजूर पियादा गया है! लेकर आही रहा होगा। (पर्दा)

निताई-हरिदास—(प्रवेश गाते हुये)

माँड-केहरवा—

रंग ले प्यारे रंग ले चोला गौर हरि रंग लाये हैं।। टेक।।
जो रंग नहीं है राजमहल में, जो रंग नहीं है गिरि जंगल में।
जो रंग नहीं है पंडित दलमें सो रंग देन रंग रंगीले गौर हरि मेरे आये हैं।।
जो रंग नहीं है देवलोक में, जो रंग नहीं है सिद्ध लोक में।
जो रंग नहीं है ब्रह्मलोक में। सो रंग देन रंगीलो व्रज को श्याम गौर बनि आये हैं।।
पापी कहाँ है पाप ले आओ, हृदय में संताप ले आओ।
मुख में हरि का नाम ले आओ। बोलो प्रेम से हरि रंगीले गौर श्याम अब आये हैं।।

बोलो नदिया वासियो! हरि बोलो! मेरे प्रभु गौरहरि की यही आज्ञा है—हरिबोल! हरिबोल!

(प्रवेश दो नागरिक सज्जन)

नागरिक १—

बाबा महाराज! कहाँ जाय रहे हो? वा मार्ग में मत जाओ।

निताई—

क्यों भई बात कहा है?

नागरिक १—

बात यह कि आगे ब्रह्मराक्षसन की जमात है।

निताई—

कैसे ब्रह्मराक्षस?

नागरिक १—

कोतवाल जगाई-मधाई जैसे। जातिसों ब्राह्मण कर्मसों राक्षस। माँस खावैं, मदिरा पीवैं, डाका डरवावैं, हत्या करवावैं, आग लगवाय दैवैं। फौज इनके पास, गुण्डे सण्डे इनके हाथ। नाम के लिये तो हाकिम है चाँदखाँ काजी परन्तु असल हाकिम तो वेई हैं द्वै पाजी।

निताई—

ये कौन के सपूत हैं? ऐसे नष्ट-भ्रष्ट कैसे है गये।

नागरिक २—

बाबा महाराज! इनके पिता बड़े धार्मिक ब्राह्मण हे। माता हू साध्वी पतिव्रता हीं। परन्तु विधाता के बड़े उलटे खेल हैं—कीच में सों तो कमल और दीपक में सों काजर प्रगटै है। ऐसे ही विप्रकुल में ये द्वै राक्षस प्रगटे हैं। एक तो जन्म सों ही हो दुष्ट प्रकृति के। बड़े भये तो दुष्ट संग सों गुण्डान के सरदार बने। फिर हाकिम कूँ लै-दै कै शहर कोतवाल बन गये। कड़वी लौकी और नीम चढ़ी। राज्य सत्ता कूँ पायकै पूरे दस्यु बन गये हैं—ऐसे हैं ये ब्रह्मराक्षस।

निताई—

तो हमकूँ या मार्ग में जायवे सों काहे कूँ रोकौ हो?

नागरिक १—

भगवान्! उनको ही डेरा आगे पर्‌यौ है। वे नगर में, मोहल्ला में मनचाहे जहाँ डेरा डारते डोलैं हैं। वहाँ वारेन के लिये तो राहु-केतु ही लग जाय है। बाहर बारे बाहर और घर वारे घर भीतर काँपै हैं। स्त्रिन को तो गंगा न्हामपनो ही बन्द है जाय है। ऐसे अत्याचारी-दुराचारी हैं ये।

निताई—

(हँसते हुये) तो हमारो कहा कर लैंगे। हम तो नंगमनंगा हैं। हमते कोई कहा लै लेगो। हमकूँ तो कछु दैगो ही!

नागरिक २—

महाराज! वे आपके शरीर कूँ कष्ट पहुँचायँगे, मारेंगे, गारी देंगे और.
.....

नागरिक १—

और कहा पतो, आपकी जीवन यात्रा ही समाप्त कर दें!

निताई—

तो यहाँ हमारो रोयवे वारो ही कौन है! हम तो जायँगे और उनके दर्शन करेंगे ही!

नागरिक २—

न मानौ तो आपकी राजी। आज तांई कोई उनके सामने ते अछूतो नहीं निकस्यो है। सबन की पूजा है जाय है। आपकी आप जानौ हमारो काम है सावधान कर दैनो। मानौ न मानौ।

निताई—

चलो हरिदास! आगे चलो! बड़ो कौतुक होयगो।

हरिदास—

कहा उनके मद कूँ उतारोगे, उनको उद्धार करोगे?

निताई—

उद्धार करवे वारे तो एक प्रभु ही हैं। हम तो उनकी आज्ञा पालन करैंगे—उनकूँ हरिनाम सुनायँगे।

हरिदास—परन्तु—

मतवारे सुनिहै, हरि नाम की सीख।

निताई—

आज्ञा पालन करि चलौ, फल प्रति छाँड़ि दीठ।।

पद (गाना)—

कर्म करते चलो, हरि कहते चलो,
जो कहे तो भला न कहे तो भला।
नाम देते चलो, बीज बोते चलो,
जो फले तो भला न फले तो भला।।

हरिदास—

न फले तो भला कैसे प्रभो?

निताई—(ऐसे कि)

फल देते हरि फल लेते हरि,
फले का भला न फले का भला।
(कारण कि)
नहीं होता बुरा हरि के जग में,
हरि करते सदा सब भला ही भला।
यासों चलो हरिदास उनकूँ नाम सुनायँगे!

हरिदास—

(स्वगत) अहा! कितनी करुणा उनको उद्धार तो अब है ही गयो। तौहू इनकूँ नेक और उकसाय दऊँ।

निताई—

क्यूँ कहा सोच रहे हौ! ठाड़े कैसे? चले आओ।

हरिदास—

(पीछे हटते हुये) ना प्रभो ना! मैं नहीं चलूँगो। डर लगै है। दुष्ट और सर्प ते तो बचकै ही चलनो चाहिये।

निताई—

(हाथ पकड़ खींचते हुये) मैं नहीं छोडूँगो। तुमकूँ ही आगे-आगे चलनो परैगो!

हरिदास—

तो म्याऊँ को मुख कहा मोकूँ ही पकरनौ परैगो। आप तो महाचंचल हो—हिरन की नांई भाग जाओगे और मैं गरीब मार्‍यौ जाऊँगो।

निताई—

परन्तु तुमकूँ तो मार खायवे को पूरो अभ्यास है। तुम्हारी पीठ तो मार खाय-खाय कै पक्की है चुकी है—द्वै चार हाथ और सही! प्रभु के काम में पाँव पीछे काहे कूँ करौ हो। डरपौ मत! मैं संगै रहूँगो।

हरिदास—

मैं मार सों नहीं मदिरा सों डरपूँ हूँ। कहूँ पकर करकै मुँह में कहा कहौ भक्ष्याभक्ष्य डार दैं!

निताई—

बस यही तो हमारी परीक्षा है कि—

गाना (मिश्र-भैरवी-रूपक)—

वे हमको पिलावें हम उनको पिलावें।
नशा किसमें कितना, यह देखे दिखावें।।
वे मुख में हमारे जहर डाल देवें।
हम कानों में उनके अमृत ढाल देवें।।
नहीं जाति हमारी जो पीने से जावे।
यह जान है उनकी, चढ़ा उनको आवें।।
यह काम है उनका, वे आप ही करावें।
हम नामही बस 'प्रेम', सुना उनको आवें।।

यासों चलौ। अब देर मत करौ। (खींचते ले जाना)

हरिदास—

(पीछे-पीछे चलता हुआ स्वगत) कितनी करुणा! कितनी उत्कण्ठा दुष्ट-उद्धार के लिये! (प्रकाश्य) अवधूत जी महाराज! मोकूँ आगे धकेल कै भाग मत जानौ।

निताई—

कछु होयगो भुगत लेंगे। अब बात छोड़कर कीर्तन करते चलौ।

हरिदास—

भजो कृष्ण कहो कृष्ण लहो कृष्ण नाम।
कृष्ण माता कृष्ण पिता कृष्ण धन प्रान।।

निताई—

भजो गौरांग कहो गौरांग लहो गौरांग नाम।
गौर माता गौर पिता गौर धन धाम।।
(कीर्तन करते हुये प्रस्थान)
(पर्दा खुलता है। जगाई-मधाई पड़े हैं)

मधाई—

ज....ज.....जग्गा! भ....भ.....भगवान् है या म....म मर गया है।

जगाई—

म.....मरा नहीं है रे! है स.....साले है।

मधाई—

क....क....कहाँ है? क....क.....कौन स...स.....साला भ....भ..... .भगवान् है?

जगाई—

मैं....मैं.....साला भ.......भगवान् हूँ!

मधाई—

अबे तू-तू नहीं स......साले! मैं-मैं भगवान् भ....ग....वान्।
(कहते हुये लुढ़क जाता है)

जगाई—

(उठाता) मद्धा! अबे ओ मद्धा! एक बात तो बता।

मधाई—

अबे सो.....सोने क्यों नहीं देता? क्या-क्या बात है।

जगाई—

यह-यह (बोतल को बताते हुये) वहाँ-वहाँ (ऊपर को अँगुली दिखाते हुये) म....म....मरने के बाद मिलेगा या नहीं—

शेर—

मिली न जन्नत में मय जो साकी
बता वहाँ पर कि क्या करेंगे।

मधाई—(अरे!)

कफन में ले चल छिपा के बोतल
मजे से गट् गट् पिया करेंगे।।

जगाई—

(खुशी से उछल) वाह वाह वाह! क्या बढ़िया तरकीब बताई! कफन में बोतल छिपा कर ले चलेंगे फिर तो वहाँ भी मजे से कटेगी। अब बेफिक्र हो गया! तसल्ली हो गयी।

मधाई—

लेकिन ज........जग्गा। मुझे तसल्ली नहीं। अरे! इस रब्ब ने मुझे इन्सान क्यूँ बनाया?

जगाई—

तो स.....साला क्या बनना चाहता है—गधा?

मधाई—

नहीं साले! शराब की भट्ठी बनना चाहता हूँ।

शेर—

या रब मुझे बनाना था भट्टी शराब की।
इन्साँ बनाके तूने मेरी मिट्टी खराब की।।

जगाई—

क्या खूब पसन्द है। चाह हो तो ऐसी। ले-ले इनाम (पीता-पिलाता है)। अगले जन्म में तू भट्टी ही बनेगा।

(प्रवेश गाते हुये निताई-हरिदास)

हरिदास—

भजो कृष्ण कहो कृष्ण लहो कृष्ण नाम।

निताई—

भजो गौरांग कहो गौरांग लहो गौरांग नाम।

हरिदास—

कृष्ण माता कृष्ण पिता कृष्ण धन प्राण।

निताई—

गौर माता गौर पिता गौर धन प्राण।।

दोनों—

तुम सब हेत भयो कृष्ण अवतार।
गौर कृष्ण भजो भाई तजो दुराचार।। (चै० भा०)

जगाई—

अरे.....यह....यह क्या कहते हो स...स....साले ओ!

मधाई—

चु......चु......चुप करो सालाओ! हल्ला मत मचाओ।

निताई—

भैयाओ! तुम ब्राह्मण है कै मदिरा पान करौ हो। यह तो बड़ो भारी पाप करौ हो। यासों शुद्ध हैवे के तांई हरि भजो—हरिबोल!

मधाई—

अ....अबे! हमको धर्म का उपदेश करता है?

निताई—

उपदेश नहीं भैया—विनती-प्रार्थना—हरिबोल!

जगाई—

मद्धा! यह तो वही अवधूत है निमाई के दल का। यह भी दिन रात नशे में चूर रहता है। देख तो इसकी आँखें कैसी लाल-लाल हो रही हैं।

मधाई—

(उठते हुये) अरे! तुम लोग बड़े उछलते-कूदते, नाचते-गाते हो। मद-फद, शराब-कवाब खूब चलता है न? तब तो तुम हमारे ही यार दोस्त निकले। तो लो और पीओ (बोतल बढ़ाता है)

निताई—

हम तो नाम-मदिरा पीते और पिलाते हैं। हरिबोल!

मधाई—

(नाक भौंह सिकोड़) ॐ—मिजाज खराब कर दिया (पीते हुये) ख. ...ख....खबरदार! जो फिर बोला तो!

निताई—

(दोनों हाथ उठा) गौर! कृष्ण! हरि! कहो भैयाओ।

तुम सब हेत भयो कृष्ण अवतार।
गौर कृष्ण कहो भाई तजो दुराचार।।

मधाई—

(गर्म होकर) उफ् दिमाग ख....ख....खराब कर दिया! अब नहीं छोड़ूँगा (आगे बढ़ता है)

जगाई—

पकड़ मद्धा प....प....पकड़। बो....बोतल दे इनके मुख में। नाम के बदले इनाम। (उठकर दौड़ना)

निताई—

भाग हरिदास भाग! (पीछे हटते जाते हैं)

जगाई—

भागोगे कहाँ? हम हैं जगाई-मधाई।

मधाई—

काल! मौत! ठहरो! (दोनों पीछे दौड़ते हैं) भागते क्यों हो! गु....गु.. .गुरु बनायँगे। मन्त्र सुनेंगे। ठ....ठ...हरो (गिरते-उठते-दौड़ते हैं)

निताई—

भाग हरिदास भाग (दोनों भाग जाते हैं)

जगाई-मधाई—

(पीछे-पीछे दौड़ते हुये) ध.....ध....धरो धरो। प...प....पकड़ो

(कहते हुये निकल जाते हैं)

(पर्दा। प्रवेश निताई हरिदास को खींचते हुये)

हरिदास—

छोड़ देओ! दौड़ नहीं सकूँ! हार गयो! (खड़ा हो जाता है)

निताई—

(खींचते हुये) अरे खड़ो मत होवै। यम के दूत आय रहे हैं पीछे-पीछे।

हरिदास—

आमन देओ! आज तुम्हारी कृपा सों मृत्यु ही सही। नहीं-नहीं! तुम्हारो हू दोष नहीं। यह मेरोई दोष है। जो जानबूझ करकै ऐसे ऊधमी बावरे को संग कर्‌यौ!

निताई—

मैं बावरो नहीं तेरो प्रभुइ बावरो है। वह ब्राह्मण है कै राजा की भाँति आज्ञा करै है कि 'जाओ। घर-घर जायकै नाम सुनाओ!' मानो तो यह दुनियाँ वाकी प्रजा होवै जो भय करैगी और आज्ञा मान लेगी—

ब्राह्मण होइया जे राज आज्ञा कोरे।
तार बोल बोलि सब प्रति घरे घरे।। (चै० भा०)

आज मैं! तेरे प्रभु सों जायकै लडूँगो जो ऐसी आज्ञा करै हैं।

हरिदास—

अब तो साँप कूँ दूध नहीं पिवावोगे? पिवायवे को फल तो हाथों हाथ मिल गयो।

निताई—

(जौरों से हँसते हुये और सिर हिलाते हुये) पिवाऊँगो क्यों नहीं। ऐसो पिवाऊँगो, ऐसो पिवाऊँगो कि सबरो विष ही उतर जायगो। ऐसेई छोड़ दैवे वारो यह निताई नहीं है।

गजल—

पी पीकर मय का प्याला, बने आज जो मतवाले।
कर दूँगा कल मैं उनको, हरि नाम में मतवाले।।
पड़ने से इनकी छाया, जो न्हाते आज गंगा।
कल इनके दर्शनही में, मानेंगी न्हाली गंगा।।

(तब ये)

गायँगे गौर गौर, रोयँगे जार जार।
आँखों से बह चलेगी गंगा की धार धार।।

(जो यदि)

दिल में न इनके करदूँ चैतन्य का प्रकाश।
कहना नहीं निताइ, मुझे गौरचन्द्र दास।।

हरिदास—

पतित पावन निताई दयाल की जय हो, जय हो। हरिबोल, हरिबोल। (दोनों का प्रस्थान)

समाज (चौपाई)—

दिन दिन दोउ नदिया विचरैं। भली बुरी सुनैं सहैं सगरैं।।
संध्या समय प्रभु ढिंग आवैं। विनय करैं कौतुक हू सुनावैं।।
श्रीवास भवन विश्वम्भर राजैं। अद्वैत आदि सहित समाजैं।।

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, अद्वैत, श्रीवासादि बैठे हैं)
(प्रवेश निताई-हरिदास)

संग हरिदास निताई पधारे। दै आदर प्रभु ढिंग बैठारे।।

महाप्रभु—

आओ श्रीपाद विराजो। आओ प्यारे हरिदास।

हरिदास—

(दूर से ही दण्डवत् करके हाथ जोड़ खड़े रहते हैं)

निताई—

(नाराज-से चुपचाप बैठ जाते हैं)

महाप्रभु—

हरिदास जी! आज तो कछु बिलम्ब करके आये। कहो कहा समाचार लाये!

हरिदास—

समाचार कहा लाये प्रभो! बड़े भाग्य जो जीवित आय गये और चरण-दरशन पाये!

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) क्यों? बात कहा है ऐसी?

हरिदास—

प्रभो आपने शहर कोतवाल जगाई-मधाई को नाम तो सुन्यौइ होयगो।

महाप्रभु—

हाँ-हाँ सुन्यौ है।

हरिदास—

और उनके गुण हू सुने ही होंगे।

महाप्रभु—

हाँ थोड़ो-बहुत सुने हैं।

हरिदास—

बस प्रभो! वे ही दोनों आज हमकूँ मार्ग में पाय गये। वे मदिरा में मतवारे बने भूमि पै परै हते। सबन ने हमकूँ वा मार्ग सों जायवे की मना करी। परन्तु आपके ये अवधूत जी माने नहीं। मोकूँ खींचते भये लै चले और उनकूँ नाम सुनायवे लगे। फिर तो वे दोनों हमारे ऊपर झपटे। इनने मोकूँ तो उनके आगे धकेल दियो और आप भाग गये। मोकूँ मार ही डार्‌यौ हो बच गयो आपकी कृपा सों यमपुरी के द्वार पै ते लौट कै आयो हूँ। ऐसे ऊधमी हैं ये आपके अवधूत जी!

श्रीवास—

प्रभो! अब तो जगाई-मधाई को डेरा हमारे पाड़ा के समीप ही पर गयो है। यासों हम सबन के तो प्राण सूखे जाय हैं। न जानै कब कहा कर बैठैं—कौन कूँ लूट लैं, घर जराय दैं। यासों प्रभो! आप उनको उद्धार करकै हमारी रक्षा करैं।

निताई—

(प्रणय रोष सहित) और यदि आप उनको उद्धार नहीं करोगे तो आप अपनो नाम आपही जायकै प्रचार करौ। मैं तो अब कल ते जाऊँगो नहीं।

श्रीवास—हरिबोल!

महाप्रभु—

(प्रसन्नता पूर्वक) श्रीपाद! आप जिनके उद्धार की कामना करौ हो उनके उद्धार में अब कहा बाकी है।

निताई—

बहुत है चुकी दीनता अब प्रभुता दिखाओ और हमारो माथो ऊँचो करौ। दुनियाँ कहै है और ठीक ही कहै है कि तुम्हारो प्रभु हमकूँ कछु चमत्कार दिखावै तो हमहू नमस्कार करैं। आप यहाँ श्रीवास के घर के कौने में छिप करकै ही अपनो स्वरूप प्रकाश करौ हो। परन्तु सब जीवन को उद्धार करनो होय तो आपकूँ बाहर निकसनो ही परैगो। भक्त तो स्वयं ही हरि नाम लेय हैं, अभक्त सों हू हरिनाम बुलवावनो ही परैगो। पापी दुष्टन कूँ हू गरे लगामनो ही परैगो।

गजल—

बातें पुरानों की भई पुरानी, नई करो तो हम भी जानें।
दंड ही दुष्टों को देने आये, गले लगाओ तो हम भी जानैं।।१
नाम नारायण लिया अजामिल,
तब उसको तारा यह सबही जानैं।
न नाम लेवें न पाप छोड़ें, उन्हें भी तारो तो हम भी जानें।।२
(आप यहाँ घर के भीतर ही)
बन के बैठे हो भक्तप्रेमी, पतित प्रेमी बनो तो जानें।
भक्त तो हरिनाम प्रेमसे बोलें, दुष्टभी बोलें तो हमभी जानें।।३

श्रीवास—हरिबोल!

महाप्रभु—

श्रीपाद! मैं कहा उनको उद्धार कर सकूँ हूँ। एक हरि नाम ही उनको उद्धार कर सकै है। परन्तु जब वे हरिनाम सों विमुख हैं, 'हरि' नाम बोलै ही नहीं हैं, तो फिर उनके उद्धार को एक ही उपाय शेष रह जाय है—यम की मार और नरक की ज्वाला!

निताई—

नहीं प्रभो नहीं! एक और उपाय तो आप जान-बूझ करकै छोड़ ही गये।

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) कौन-सो उपाय भलो?

निताई—

महत्कृपा! भगवत्कृपा! वही कृपा आपकूँ वहाँ चल करके करनी परैगी! नरक तो केवल तन को शुद्ध करै है, मन तो मैलो ही रह जाय है। नरक की भट्टी पापन कूँ तो जराय देय है परन्तु पाप को बाप जो मूल वासना है वाकूँ नहीं जराय सकै है। यह कार्य तो कृपा ही कर सकै है—यासों-

लाबनो—

अनोखो कर दिखराओ प्यार, अनोखे जो तुम हो अवतार।
बाँबी को कहा कूटनो, साँप न मार्यौ जाय।
बाँबी डसै न काहू को, साँप सबन कूँ खाय।।
देओ सोइ साँप के दाँत उखार, अनोखे जो तुम हो अवतार।।
डार पात कहा छाँटनौ, फिर फिर उपजैं आय।
मुक्ति-बँध को मूल मन, ताकूँ देओ नसाय।।
ए तनकूँ छोड़ देओ मन मार, अनोखे जो तुम हो अवतार।।

(जब पापी जीव दया और क्षमा कूँ पायकै पछतावै है और रोवै है तब वाको दुष्ट पापी मन कि जाकूँ)

भीषण भट्टी नरक की, सकैं न जाकूँ निखार।
आँसू ताकूँ धोय कै, करदै दर्पन सार।।
बहै तब प्रेमभक्ति शतधार, अनोखे जो तुम हो अवतार।।

(और जो आप उनकूँ दण्ड ही दैनो चाहौ हो तो आप अपने भक्तन कूँ लैकै रहौ, मोकूँ तो दुष्टन सों ही काम है)

पतित मेरे परिवार हैं, मद्यप मेरे भाई।
मेरी ठौर अब तो वहीं, जहाँ जगाई मधाई।।
मिटै न नाम-प्रेम-अवतार, अनोखे जो तुम हो अवतार।।

(मुख मोड़ मानकर बैठ जाते हैं)

समाज (दोहा)—

मुख मोरि बैठे निताइ, प्रणय कोप जनाय।
'हरि बोल हरि' सब कहैं, जय दयाल निताई।।
पकरि हाथ निताइ के, विनय करत निमाइ।

महाप्रभु—

मैं लघु तात अधीन तुव, राखौ कृपा सदाई।।
जा विधि सों उद्धार तुम, करन चहोगे भाई।
सोइ करेंगे कृष्ण हरि, देओ रोष बिदाई।।

निताई—

तो प्रभो! मेरी तो यही इच्छा है कि आप स्वयं कीर्तन करते भये भक्त-मंडली समेत वहाँ पधारैं और उनकूँ नाम-प्रेम-प्रदान करकै उनको उद्धार करैं।

महाप्रभु—

आपकी शुभेच्छा की जय हो! चलौ संकीर्तन मण्डली बनायकै चलैं। आज मैं आप के 'पतित पावन दयाल' नाम के द्वै अपूर्व साक्षी जगत् में प्रगट करूँगो।

भक्तवृन्द—

पतित पावन दयाल निताई चाँद की जय हो दीनबन्धु करुणा-सिन्धु गौरचन्द्र की जय हो हरिबोल! (पर्दा)

समाज (गीत)—

बनि आये है मल्लाह आप हरि।
बहते देख जीवों को कलि में, ले आये हैं नैया आप, हरि
निज नाम की नैया आप हरि बन०।।

संकीर्तन मंडली—

(प्रवेश—महामन्त्र कीर्तन करते हुये—आगे निताई, महाप्रभु, अद्वैत, श्रीवास, भक्तजन, पीछे हरिदास)

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

समाज (पूर्व गीत अन्तरा-१)—

नैया भी आप खिवैया भी आप, बाँह गहैया भी आप।
उठाओ बैठाओ ले जाओ पार आप। बनि आये०।।

संकीर्तन मण्डली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज (अन्तरा २)—

हरि संकीर्तन भेरी बजाई, देश-देश खबर पहुँचाई।
भाग सके न, कोई बचे ना। कीर्तन सेना 'प्रेम' की सेना।।
घेरें व टेरें व पैयाँ परें, कहें आये हैं मल्लाह आप, हरि बन०।।

संकीर्तन मण्डली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

(प्रस्थान। पर्दा खुलता है। जगाई-मधाई का डेरा)

(नेपथ्य में संकीर्तन होता रहता है। मंडली को छोड़ केवल निताई का दौड़ते हुये प्रवेश)

निताई—

आनन्द! आनन्द अब प्रभु इनको उद्धार करेंगे अपनी करुणा प्रगटेंगे। बोलो भैयाओ! गौरहरि! गौरहरि! हरिबोल!

जगाई—

अरे भिखमंगताओ! चुप करो। दिमाग मत खाओ।

मधाई—

जग्गा! यह तो वही अवधूत है। उस रोज बच गया था! आज नहीं बच सकेगा।

निताई—

भैयाओ! आज मेरे गौर प्रभु तुमकूँ गरै लगायँगे। वे स्वयं आय रहे हैं। तुम एक बार 'गौरहरि' कह देओ—

गाना (दादरा)—

आरे भाई गौर हरि नाम हरि बोल।
लाये हैं प्रेम धन, गौर हरि बोल।। टेक।।
बहुत किये पाप भाई अब तो देओ छोड़।
भुजा उठाय कहो गाय नाम हरि बोल।।
बहुत भूलि भागि रहे अब तो आओ ठौर।
आज पकरि डारौं तुम्हें चरनन हरिगौर।।

बहुत पिये मदिरा प्याला, अब तो देओ छोड़।
नाम 'प्रेम' प्याला पीओ, लाये हरिगौर।।
(भुजायें बढ़ाकर) बोलो भैयाओ—गौरहरि

मधाई—

(क्रुद्ध होकर) चुप! खबरदार फिर चिल्लाया तो तोड़ दूँगा मुख और फोड़ दूँगा सर।

निताई—

(एक कदम आगे बढ़ सिर झुका) लै भैया! तोड़ दै, फोड़ दै पर जोड़ लै अपने कूँ, एक बार जोड़ लै, 'गौरहरि' नाम सों जोड़ लै।

मधाई—

(उठते हुये) अबे चुप नहीं होता? मरना ही चाहता है।

शेर—

आँखों में खून सवार है मेरे।
और सर पर मौत सवार है तेरे।।

निताई—

(घुटना टेक हाथ जोड़) बोल! गौरहरि बोल।

मधाई—

फिर वही नाम तो ले इनाम। मर!

(एक ठीकरा उठाकर सिर पर मार देता है)

समाज (दोहा)—

रक्तधार सिर सों बहै, नैनन आनन्द धार।

करुणा धार हिय में बहै, बोले करुणाधार।।

निताई—

(थोड़ी देर सिर दबाये खून को रोके रहते हैं। फिर गर्जना पूर्वक) गौरहरि बोल!

जगाई-मधाई—(दोनों हक्के बक्के से खड़े देखते रहते हैं)

निताई (पद-बागेश्वरी-३ ताल)—

मारौ मारौ मारौ, गौर हरि हरि कहि डारौ।

मैं हँसि हँसि प्रानन वारौं, गौर हरि हरि कहि डारौ।।

अन्तरा—

मेरे तनकूँ व्यथा न भारी, मेरे मन कूँ व्यथा अपारी।

देखि न जाय दशा तिहारी, गौर हरि हरि कहि डारौ।।

तुम्हरे सिर पाप जो भारी, देओ सबही मो सिर डारी।

फिर दोउ भुजन पसारी, गौर हरि हरि कहि डारौ।।

मैं पीछे पग नहीं धरिहौं, यह काज तो पूरो करिहौं।

प्रभु चरनन तुमकूँ धरिहौं, गौर हरि हरि कहि डारौ।।

तुम गौरहरि के हो प्यारे, तिहारे हित प्रभु पग धारे।

भाग जगे हैं 'प्रेम' तिहारे, गौर हरि हरि कहि डारौ।।

बोलो भैयाओ! चुप क्यों? मुख खोलौ और बोलो 'गौरहरि'

मधाई—

फिर वही नाम, तो ले और इनाम। कर दूँ काम तमाम (एक पत्थर उठाकर मारना चाहता है)

जगाई—

(झपट कर हाथ पकड़) नहीं मद्धा नहीं! अब मत मार! मिल गई सजा! जाने दे अब! इस नंगे फकीर ने हमारा क्या बिगाड़ा है?

मधाई—

बिगाड़ क्यूँ नहीं। अरे यह—

शेर—

मकान पर हमारे दुनियाँ को लाकर।
करता है नसीहत यह कौन है आकर।
शराबी हैं कवाबी हैं तो अपने घर के अन्दर हैं।
इसके दर्द क्यों होता यह कहाँ का शाह कलन्दर है।।
छोड़! छोड़ दे मेरा हाथ। चखाने दे मजा पूरा।

नेपथ्य में—

(रक्षा करौं! प्रभो! बचाओ! श्रीपाद के मस्तक पै दुष्ट मधाई ने प्रहार कर्‌यौ है! रक्षा करौ प्रभो!)

महाप्रभु—

(प्रवेश दौड़ते हुये। मण्डली पीछे) श्रीपाद! मेरे प्राणबन्धु! कहा बहुत चोट आई है? देखूँ तो!

निताई—

नहीं प्रभो! कोई विशेष चोट नहीं है। सब आनन्द है।

महाप्रभु—

ओह! आपके मस्तक सों यह रक्त कैसे बह रह्यो है (पौंछकर रूमाल बाँधना) यह कौन नराधम को कर्म है भुवन पावन विश्वबन्धु मेरे प्राण-दादा के अंग पै प्रहार! आज वह वंश सहित ध्वंस है जायगो। बताओ दादा बताओ! कौन है वह नारकी?

निताई—

शान्ति! दयानिधे! शान्ति! क्षमा!

महाप्रभु—

(जगाई-मधाई की तरफ घूरते हुये) ओह! यह तुम्हारी ही करतूत है! तो नीच हत्यारे ओ! तैयार है जाओ फल चाखवे कूँ! तुम्हारे पापन को घड़ा भर गयो है! चक्र सुदर्शन (दक्षिण चरण आगे बढ़ा दक्षिण हस्त ऊपर उठाये खड़े हो जाते हैं)

चक्र—

(चक्र दक्षिण हस्त के ऊपर आकाश में घूमता हुआ प्रकट होता है)

जगाई-मधाई—

(काँपते-पीछे हटते चक्र को देखने लगते हैं)

मुरारि—

(गरजता-उछलता हुआ महाप्रभु के सम्मुख आ हाथ जोड़) प्रभो! मुरारि के रहते चक्र को कहा प्रयोजन? आज्ञा करौ। मैं अबै इन दुष्टन कूँ यमपुरी पहुँचाय दऊँ हूँ।

निताई—

(चक्र और मुरारि के बीच में खड़े होकर) ठहरो सुदर्शन! खबरदार मुरारि! (महाप्रभु प्रति) सुनौ मेरी विनती न टारौ मुरारि।

गाना (पद-पीलू)—

मो कहँ दान देवहु दोउ भाई। कोप छाँड़ि प्रभु धरौ करुनाई।।
युग युग तुम बहु खल संहारे। दया व्रतहिं अब कलियुग धारे।।
बिसरे बनै ना सो व्रत अबही। दया करहु उद्धारहू इनही।।

हे करुणासिन्धो! अपने या अवतार की प्रतिज्ञा कूँ स्मरण करौ। या अवतार में 'मैं हथियार नहीं पकरूँगो, काहू कूँ प्राण सों नहीं मारूँगो, सबन के हृदय कूँ शुद्ध कर दऊँगो' यह आपके श्रीमुख की प्रतिज्ञा है। याकूँ विसारो मति ना सत्य व्रत!

महाप्रभु—

परन्तु आपके श्रीअंग पै रक्त देख करकै मेरी प्रतिज्ञा शिथिल है गई है! अतएव दया नहीं दण्ड। घोर दण्ड! प्राणदण्ड!

निताई—

नहीं दयासिन्धो! दया! क्षमा। और जगाई ने तो मेरे प्राण बचाये हैं।

महाप्रभु—

(सविस्मय) जगाई ने आपके प्राण बचाये? कहो कैसे?

निताई—

मधाई ने दुबारा हाथ उठायो हो तो जगाई ने हाथ पकड़ लियो

महाप्रभु—

जगाई! तैंने आज मोकूँ मोल लै लियौ है। आ जगाई आ! मेरे हृदय सों लग जा (हाथ फैला बढ़ते हैं)

जगाई—

(पीछे हटता हुआ) नहीं-नहीं प्रभो! मैं छीबे योग्य नहीं। मैं महानीच पापी हूँ।

महाप्रभु—

पापी नहीं प्यारो है। मेरे निताई की रक्षा करवे वारो मेरो प्राणप्यारो है। आ जगाई आ! दूर मत रह तेरो स्थान वहाँ नहीं, यहाँ मेरे हृदय में है। तेरे लिये मोकूँ कछु अदेय नहीं है।

(आगे बढ़ना)

जगाई—

(पछाड़ खाकर महाप्रभु के चरणों पर पड़ जाता है। महाप्रभु बलपूर्वक उठाकर हृदय से लगा लेते हैं)

भक्त मण्डली—

हरिबोल! हरिबोल!

जगाई—

(भुजा उठा) गौरहरि बोल! गौरहरि बोल! अरे मधाई! तू दूर क्यों ठाड़ौ है? आ आ इनकी शरण में। पड़ जा इनके चरण में। (हाथ पकड़ खींचना)

मधाई—

(विह्वल काँपता हुआ) अरे जगाई! यह तेरे हाथ ने कहा कर दियो! मेरे शरीर में बिजली-सी दौर गई! रोंगटे खड़े है गये। हृदय गर रह्यौ है। जी करै है कि रोऊँ, छाती फारकै, धाड़ मारकै रोऊँ!

जगाई—

यह प्रभु के स्पर्श को ही फल है भैया! अरे तू हू इनके चरण-स्पर्श कूँ पायकै निर्भय बन जा! आ आ।

मधाई—

(हाथ जोड़) पाहि माम् प्रभो! त्राहि माम्।

(पछाड़ खा चरणों पर पड़ना)

महाप्रभु—

(पीछे हट) दूर रह दुष्ट! तेरो स्थान यहाँ नहीं, नरक में है

मधाई—

(धीरे-धीरे उठ घुटना टेक हाथ जोड़) दयामय! हम दोनों ही तो समान पापी हैं। फिर एक कूँ क्षमा और दूसरे कूँ दण्ड कैसे? एक कूँ हृदय में स्थान, दूसरे कूँ नरक में कैसे?

महाप्रभु—

हाँ ऐसेइ है! जगाई अपराधी है तो मेरो है—वाकूँ मैं क्षमा कर सकूँ हूँ! परन्तु तू मेरे प्राणबन्धु को अपराधी है, महद-पराधी है! तोकूँ क्षमा नहीं है!

मधाई—

दीनबन्धो! आपके दर्शन सों मेरी आँख खुल गई हैं मैं जान गयो कि आप श्रीकृष्ण ही हैं। परन्तु नाथ! आपने अपने श्रीअंग कूँ छेदन करवे वारे असुरन कूँ हू परम पद दै दियौ। तथा आपके श्रीचरण में बाण मारवे वारे जरा व्याध कूँ तो सशरीर अपने धाम भेज दियौ फिर मेरी बारी में इतनी कठोरता क्यों?

महाप्रभु—

तेरो अपराध उनके अपराधन ते बड़ो है। उनने तो मेरे अंग पै प्रहार कियौ हो। 'आमा होइते एइ नित्यानन्द देह बड़ो'। मेरी देह ते इनकी देह बड़ी है। भगवदपराध ते भक्तापराध बड़ो है—'जो मम भक्त सों वैर करत है सो है वैरी मेरे'। वाकूँ क्षमा नहीं है!

मधाई—

(रोते हुये) तो प्रभो! देओ दण्ड! घोर दण्ड! नरक दण्ड! अग्नि में जराओ! करात सों चिरवावो! साँप सों डसवावो! मैं क्षमा नहीं चाहूँ हूँ। मैं अपने पापन को फल भोगूँगो परन्तु (घुटने टेक) मेरे दयालु देव! एक बार। एक ही बार अपने श्रीमुख सों इतनो कह तो देओ कि काहू न काहू जनम में, कोटि जन्मन में ही सही, मोकूँ आपके श्रीचरणन में स्थान मिलैगो बस दयासिन्धो! इतनो वचन सुनाय देओ और फिर डार देओ नरक की भट्टी में—कल्प कल्पन के लिये।

महाप्रभु—

(चुप खड़े रहते हैं)

मधाई—

बोलो दीनबन्धो! चुप कैसे हो? बोलो—

गजल—

इक बोल का भिखारी, वह बोल तो सुना दे।
इस जिन्दगी का अब तो, बस फैसला सुना दे।।
मजाल क्या नरक की, ज्वालाएँ जो जला दे।
पीयूष-बोल अपना, गर एक तू पिला दे।।
उद्धार मेरा होगा, कब इतना तो बता दे।
वायदाए 'प्रेम' करके, फिर चाहे जो सजा दे।।
(दूर से दण्डवत् पड़ जाना)

निताई—

दयासिन्धो! याकी आर्त्ति पे दया करौ। अपनाय लैओ।

महाप्रभु—

अरे मधाई! तू इनको अपराधी है। इनके चरण पकड़ और अपनो अपराध क्षमा करवा। इनकी कृपा सों ही तेरो उद्धार है सकै है। नहीं तो कदापि नहीं।

मधाई—

(निताई प्रति) हे दयालु शिरोमणि! मैं महा अपराधी हूँ। आप अदोषदर्शी हो! मेरे माथे पै अपनो चरण पधराय कै मोकूँ अभय करौ। कृपा करौ! शरण हूँ शरण हूँ।

निताई—

(महाप्रभु प्रति) हे भक्तवत्सल प्रभो! उद्धार करवे के तांई तो आप पधारे हो। काम तो करौगे आप ही और नाम करवानो चाहो मेरो! अच्छो! ऐसो ही सही यदि मेरी क्षमा सों ही याको उद्धार होंतो होय तो मैं केवल क्षमा ही नहीं करूँ हूँ, अपने समस्त पुण्य हू याकूँ दऊँ हूँ। आपके चरण-स्मरण सों जो कछु मेरो पुण्य भयो वाको सम्पूर्ण फल मैंने या मधाई कूँ दियो। अब आप प्रसन्न है जाओ और याकूँ अपनाय लैओ!

महाप्रभु—

अच्छो तो अपनो प्रेमलिंगन याकूँ प्रदान करौ।

निताई—

(चरणों पर पड़े मधाई को उठाना चाहते हैं) उठ मधाई मोसों मिल लै। प्रभु तोपै कृपा करेंगे। अरे उठ! देर मत करै।

मधाई—

(उठना नहीं चाहता) मैं हत्यारो आपकूँ मारवे वारो हृदय सों लगायवे योग्य नहीं हूँ। मैं तो यहीं-यहीं पर्‌यौ रहूँगो! ये अभय चरण! ये दुर्लभ चरणरज! मैंने सब कछु पाय लियो। अब मोकूँ कछुई नहीं चाहिये, नहीं चाहिये।

निताई—

(बलपूर्वक उठाकर हृदय से लगा लेते हैं)

भक्त मण्डली—

हरिबोल! प्रेमदाता निताई दयाल की जय हो।

निताई—

(मधाई का हाथ पकड़ महाप्रभु से) पतितबन्धो! अब आप या पतित पै कृपा करौ। पकरौ याको हाथ।

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) अब यह पतित नहीं, पतितपावन है गयो। जब आपने याकूँ हृदय सों लगाय कै प्रेमदान कर दियौ तो अब मेरे लिये उद्धार करवे कूँ कहा रह गयो।

निताई—

माया बहुत भयी अब तो दया करौ। बहुत छिप चुके अब प्रगट करौ अपन कूँ। मैं ऐसे नहीं मानूँगो। लेओ या मधाई कूँ (महाप्रभु के चरणों में डाल देता है)

महाप्रभु—

उठ मधाई! आ मोसों मिल! महाभाग्यवान है तू! मेरे निताई की पूर्ण कृपा तोपै भई है। जो निताई को है वह मेरो है यासों उठ मिल लै। (बल पूर्वक उठाकर गाढ़ालिंगन)

भक्त मण्डली—

हरिबोल! पतितपावन गौरहरि की जय हो।

मधाई—

हे मेरे उदार निताई गौर प्रभो! अपनी करनी और आपकी करुणा अब मोकूँ रुवावै है। यदि आप दण्ड दै देते तो मोकूँ इतनो दु:ख न होंतो जितनो अब है रह्यौ है इतनी दया, इतनी क्षमा तो सही नहीं जाय है। यह आपने कहा कर दियो नाथ? छाती फटै है! हाय!

जगाई—

पाप कर करकै हमारो हृदय पत्थर है गयो है। ता पत्थर कूँ आपकी दया-क्षमा ने पानी-पानी कर दियो। अब हमकूँ अपने असंख्य पाप दीख रहे हैं। मदिरा में मतवारे बने हमने न जानै कितने प्राणिन कूँ कहा-कहा दु:ख दियो है। यह ज्वाला अब जरायवे लगी है। यह कैसे शान्त होगी।

निताई—

हरिनाम सों सहज में ही है जायगी। तुम दोनों नित्यप्रति नियम पूर्वक दो लाख नाम कीर्तन करनो औरहू एक काम करनौ—कुदाली लैकै गंगा को घाट साफ करनौ—सँवारनौ तथा जो कोई वहाँ स्नान करवे आवै वाके पाँवन में परकै क्षमा की भीख माँगनो। यासों तुम्हारे हृदय की ज्वाला शान्त है जायगी।

महाप्रभु—

और सुनो जगाई-मधाई! जो यदि तुम फिर कबहू पाप न करौ तो मैं आज त्रिलोकी के सम्मुख तुम्हारे पूर्वकृत समस्त पापन कूँ प्रत्यक्ष ग्रहण करूँगो।

जगाई-मधाई—

(हाथ जोड़) हम प्रतिज्ञा करैं हैं प्रभो! अब हम कभू पाप नहीं करैंगे, नहीं करैंगे, नहीं करैंगे।

महाप्रभु—

तो चलौ सब गंगाजी कूँ! हरिबोल (कीर्तन)

(संकीर्तन करते हुये प्रस्थान। अद्वैत और हरिदास पीछे रह जाते हैं)

हरिदास—

आचार्य जी! अबहू जगाई-मधाई के पाप रह गये हैं?

अद्वैत—

हरिदास! पाप तो निताई-गौर के दर्शन सों ही भस्म है गये और उनके आलिंगन सों प्रेमभक्ति हू प्राप्त है गई।

हरिदास—

तो फिर प्रभु ने क्यूँ कही कि मैं तुम्हारो पाप लऊँगो।

अद्वैत—

यह लोक शिक्षा के लिये प्रभु को एक कौतुक मात्र है। गंगाजी में याको रहस्य खुल जायगो। चलौ जल्दी चलैं। (प्रस्थान)

(दृश्य—पर्दा खुलता है। गंगाजल में महाप्रभु, निताई एवं जगाई-मधाई खड़े हैं। भक्तजन बाहर किनारे पर खड़े हैं)

समाज (दोहा)—

गंगा जल मधि ठाड़े प्रभु, लिये संग दोउ भाई।
करुणानिधि करुणा वचन, बोले सहज सुभाई।।

महाप्रभु (दोहा)—

हे माधव! हे जगन्नाथ! सुनौ वचन सत जान।
लेओ तुलसी गंगाजल, देओ पाप मोहिं दान।।

अपने जन्म-जन्मान्तर के पाप संकल्प पूर्वक मोकूँ दान कर देओ।

जगाई-मधाई—

(विस्मित-व्यथित होकर) यह कैसो आदेश नाथ? आपकूँ पाप दान? और गंगाजल में ठाड़े ह्वैकै, गंगाजल तुलसीदल हाथ में लैकै पाप-दान? नहीं कदापि नहीं। नरक में जायँगे, जरैंगे वहाँ, भोगैंगे पापन कूँ परन्तु नहीं दैंगे पाप नहीं दैंगे।

जगाई—

हा हा नाथ! चन्दन-तुलसी चढ़ायवे योग्य हाथ में हम पाप नहीं चढ़ायँगे—

कवित्त—

कोई प्रभु धन देत, धरा धाम देत कोई
कोई तन प्रान देत अर्पत सुहाये हैं।
गंगतोय नैनतोय, देत है सुमन कोय
चावसों सजाय तोहि, भाव सों लड़ाये हैं।
हिरदै में राखैं गोय, पल पल सम्हारैं जोय।
अलकन मुख झलकनपै पलक ना लगाये है।
आछी नीकी प्यारी वस्तु सबही चढ़ावै तोहि
पाप के चढ़ायवे कूँ, हमकी 'प्रेम' जाये हैं।

मधाई—

यासों नाथ! हम नहीं दैंगे नहीं दैंगे पापन कूँ! दुनियाँ हमारे नाम पै थूकैगी एवं जब तक सूर्य-चन्द्र रहैंगे हमारे माथे पै कलंक बन्यौ रहैगो।

निताई—

भैयाओ! दुनियाँ कूँ नहीं, प्रभु कूँ देखौ। उनकी आज्ञा पालन करौ। यही दास को कर्त्तव्य है।

गजल—

तुम्हें सेवा से मतलब है, न मतलब पाप पुन्यों से।
न जानैं कैसे रीझैं ये, पुन्यों से या कि पापों से।।
जो चाहते पुन्यही तुम से, तो देते तुम कमा इनको।
मगर जब पापसे राजी, तो दे दो पाप ही इनको।।
उजाला होवे इनका मुख, वो अपना काला होने दो।
जगत में अपने प्यारे का, बोल बाला तो होने दो।।
न कहता पुन्य पावन कोई, पतित पावन ही कहते हैं।
पतित से पतितपावन की, यह जोड़ी 'प्रेम' चलने दो।।

महाप्रभु—

लाओ भैयाओ! लाओ देर मत करौ—

हाथों को पसारूँ हू, पापों की भीख दे दो।
पाया नहीं जो अब तक, वह दान आज दे दो।।
लाओ न देर अब तुम, यह टेर मेरी सुन लो।
देता हूँ प्रेम तुमको, पापों को मुझे दे दो।।

जगाई-मधाई—

आज्ञा शिरोधार्य है प्रभो! (हाथों में गंगाजल लेकर)

कवित्त—

हरिशचन्द्र राज दियो, श्वपच मसान सेयो,
मोरध्वज पुत्र देह, चीर चीर दई है।
दधीचि तन प्रान दिये, अंग अंग काटि दिये
बलि तीन लोक अर्पि, देहहू बँधाई है।
तन दिये मन दिये, अनेकन अनेक दिये
दई तोकूँ तेरी वस्तु, अपनी कहा दई है।
शुद्ध पापाविद्ध हरि, तोमे है पाप कहाँ
पाप तो हमारी वस्तु, 'प्रेम' लै चढ़ाई है।।

दोनों—

लेओ हे अपूर्व देवता! लेओ यह हमारो अपूर्व दान और देओ अपनो अपूर्व दण्ड!

(महाप्रभु के हाथ में जल छोड़ देना)

महाप्रभु—

(अंजलि का जल पी जाते हैं एवं ध्यानस्थ मुद्रा में दोनों भुजाएँ ऊपर उठाये खड़े हो जाते हैं)

भक्त मण्डली—

हरिबोल! पतित पावन गौरचन्द्र की जय पतित बन्धु निताई दयाल की जय हरिबोल!

समाज (दोहा)—

उज्जवल कंचन गौर मुख, पर्यौ तनक मलीन।
रविकर प्रखर पर जथा, बादर रेखा क्षीन।।

मधाई—

(साश्चर्य) देख-देख जगाई! प्रभु को उज्ज्वल गौर मुखचन्द्र कछु मलिन है गयो है।

जगाई—

यह हमारे पापन को फल है। हाय हाय! हमने पाप क्यूँ दान कर दियो! हमारे हाथ गर क्यों न गये! हम मर क्यों न गये।

निताई—

भैयाओ! वृथा ही दु:ख क्यों कर रहे हो! कहाँ है प्रभु की मलिन कान्ति? देखौ तो सही वे तो उज्ज्वल गौर के गौर ही हैं।

अद्वैत—

अरे यह तो गौरसुन्दर ने अपने श्यामसुन्दर रूप की एक झाँकी तुमकूँ दिखायी!

निताई—

यह तो तुमकूँ विश्वास करायवे के लिये कि तुम्हारे पाप अब तुम्हारे तन-मन में नहीं रहे और तुम निर्मल बन गये हो, प्रभु ने अपने अंग में पाप लैकै तुमकूँ प्रत्यक्ष दर्शायो है। नहीं तो उनकूँ कहा कोई पाप स्पर्श हू कर सकै है—

सवैया—

ढाँपि सकै बादर कहा सूरज, ढिंगहू बादर जान न पाये।
परसि सकै कहा पाप प्रभुहिं, पाप तो देखत ही जरि जाये।
देखि सकौ तुम मानि सकौ कि पाप हमारे सबही पलाये।
काढ़िकै पाप तिहारे तनते, आँखिन आगे प्रत्यच्छ दिखाये।

अब तो भयौ न विश्वास कि तुम पाप रहित निर्मल है गये हो। अब आनन्द सों 'गौरहरि' बोलो।

जगाई-मधाई—

(भावविह्वल हो) गौरहरि! ओह इतनी करुणा! इतनी उदारता! अब तो इन श्रीचरणन की रज पै ही यह देह सदा-सदा ही परी रह। (मधाई तो निताई चरणों में और जगाई महाप्रभु के चरणों में साष्टांग प्रणाम करते हैं। फिर उठकर)

मधाई (कवित्त)—

मधुर मधुर खाये ते रीझै देत यहाँ के देव
वहाँ के तो रीझैं बलि होम पूजा पाये ते।
पाये ते मोदक के गणनाथ रीझ जात
रीझ जात सूरज हू, जल के चढ़ाये ते।
चढ़ाये ते बेल के तो, बैलवारो रीझ जात
हुलसत हैं रमानाथ, तुलसा के पाये ते।
पाये ते प्रेम भक्ति, कौन नहीं रीझत पै
हिय सों लगात गौर, पाप के चढ़ाये ते।।

जगाई—

पापिन उद्धार किये, नाना अवतार माहिं
हम समान पापी, न कभू पार लाये हैं।
अजामिल तार्यौ जाने, नारायण उचार्यौ मुख
कोटि ब्रह्म हत्या इक नाम लै नसायो है।
गजराज हू उबार्यौ, स्तुति जिन गाई बहु
शरन अनन्य भयौ, तबै मोक्ष पायो है।
नाम नहीं लियो एक, स्तुति नहीं कीनी नेक
मारिकै हरिकूँ हरि, दास पद पायो है।।

मधाई—

तार्यौ प्रह्लाद जब, बाप मार डार्यौ वाको
तार्यौ शिशुपाल जब, शीश छेद डार्यौ है।
पाँडव उबारे जब, संहारे कुल सारे हैं
तारे असुरन कूँ, पै असु हरि डार्यौ है।
मार मार तारे तुम, पापी दुष्ट सारे प्रभो
मारे बिना आज तांई, नहीं कोई तार्यौ है।
दूध पियो जाके तुम, मारिकै ही तार्यौ ताकूँ
बिन मारे आजै 'प्रेम', जगा मधा तार्यौ है।।

जगाई—

तार्यौ रावण कूँ जाने, हठ करि बैर ठान्यौ
घर में उर में हू माँ, जानकी बसायो है।
कंसहू तार्यौ हिरदै, कृष्ण भय धार्यौ जिन
सोवत जागत कृष्ण कृष्ण लखि पायो है।

पूतना हू तारी जिन, मात वेष धारि 'प्रेम'
अंक विच कान्ह धरि, स्तनलै पिवायो है।
(परन्तु हमने तो)
बैर नहीं भय नहीं, कपट हू कीन्हो नहीं
मार कै हरि कूँ हरि, दास पद पायो है।।

जगाई—

(हाथ जोड़) हे पतितपावन उदार चूड़ामणि! आप द्वै भाई गौर निताई और हम द्वै भाईं जगाई मधाई!

मधाई—

आपकी करुणा की तुलना नहीं—हमारी नीचता की तुलना नहीं। आप जैसे आप ही हो और हम जैसे हू हम ही हैं। आप की जय हो जय हो!

स्तुति-जगाई—

जय जय महाप्रभु जय विश्वम्भर।

मधाई—

जय नित्यानन्द विश्वम्भर धर।।

जगाई—

जय निज नाम संकीर्तन कारी।

मधाई—

जय नित्यानन्द प्रेम भंडारी।।

जगाई—

जय शचिनन्दन नदिया बिहारी।

मधाई—

जय पद्मावती-आनन्द कारी।।

जगाई—

जय गौरांग करुणासिन्धो!

मधाई—

जय नित्यानन्द चैतन्य बन्धो।।
हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल!

(नृत्य—महाप्रभु-जगाई के दोनों हाथ पकड़ एवं नित्यानन्द-मधाई के दोनों हाथ पकड़)

इति जगाई-मधाई-उद्धार लीला।

ॐ❖ॐ

यौवनामृत लहरी **षोडश कणामृत**

काजी-उद्धार

मंगलाचरण—

वन्दे स्वैराद्भुतोऽहं तं चैतन्यं यत्प्रसादतः।
यवनाः सुमनायन्ते, कृष्णनाम प्रजल्पकः।।

पद—

चरणकमल वन्दौं गौराराई।
परम स्वतंत्र करुणा अद्भुत, पद पद जिन प्रगटाई।।
अधम अधर्मी रौरव कर्मी, तारे जगाई मधाई।
यवन विधर्मी काजी जुल्मी, बनि गयो वाघहू गाई।।
रामदास कोई कृष्णदास कहैं, यवन परिहास सुनाई।
वे ही रसना पाय नाम रस, नाचैं हरि हरि गाई।।
राम कृष्ण नारायण नाम, कहै काजी घवराई।
कहत कुमन सुमन ज्यूँ खिलैगो, नाम भानु परसाई।।
करनी अकरनी सब कछु करनी, कृपा स्वतंत्र सदाई।
अद्भुत प्रेम सु अद्भुत करुणा, अद्भुत गौर लुटाई।।

धुन—

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौर भक्तवृन्द।।
गौर निताइ चरन कमल, करि प्रनति बहु बार।
वरनौं तिनको विमल यश, जो काजी उद्धार।।
मथुरा मध्य कंस वध, लीला करी मुरार।
नदिया महँ नवरूप सों, सोइ काजी उद्धार।।

उहाँ अधर्मी वध कियो, इहाँ विधर्मी शुद्ध।
उहाँ मामाहिं वध कियो, इहाँ करी बुद्धि शुद्ध।।
यवनराज नवाब को, गौड़ देश महँ राज।
ताको हाकिम चाँदखाँ, काजी नदिया काज।।
पिता जो शचि मात के, नीलाम्बर जु नाम।
मित्र वे काजी चाँद के, बसत रहै इक गाम।।
तासों काजी आपकूँ, मानत मामा गौर।
भलो हुतो पै बुरो कियो, लगि चुगलनघर फोर।।
सो लीला वर्णन करौं, यथा मति अनुसार।
कीर्तन बन्द काजी कियो, कियो गौर प्रचार।।

(दृश्य—पर्दा खुलता है। काजी चाँदखाँ और मौलवी हाजी साहब)

काजी—

मौलवी साहब! यह निमाई, जगन्नाथ मिश्र का लड़का, नीलाम्बर का धेवता, हमारे सामने का छोकड़ा, इसको अब नदिया के चन्द हिन्दू लोग अपना पैगम्बर रसूल मानने लगे हैं और कोई-कोई तो उसे अल्लाह ताला ही करार देते हैं।

मौलवी—

(कान छूते हुये) तोबा-तोबा! आदम भी कहीं खुदा और खुदा भी कहीं आदम होता होगा और वह खुदा भी गली-कूचों में नाचता-गाता-रोता फिरे। लाहौलविलाकुवत! ऐसा कहने वाले सरासर कुफ्र बकते हैं—काफिर हैं, काबिले-जहन्नुम हैं।

काजी—

मगर वह हरिदास? उसे आप क्या समझते हैं।

मौलवी—

वह तो काफिर दर्जा अव्बल है। पाक इस्लाम को तर्क करके बुतपरस्त बन गया है। काफिर हिन्दुओं के देवता का नाम लेता है, गाता-रोता है।

काजी—

लेकिन ताहम यह इकबाल तो करना ही पड़ेगा मौलवी साहब! कि वह हरिदास है औलिया पीर ही। बाइस-बाइस बाजारों में घुमा-घुमाकर मेरे सिपाहियों ने उस पर बेंत उड़ाये, मगर वाहरे उसकी शान—मरना तो दूर

रहा, रोया तक नहीं, उफ् तक नहीं की। न चेहरे पर कोई शिकन, न जबान पर शिकायत! सिर्फ दुआ, मारने वालों को दुआ ही देता गया!

मौलवी—

(नाक भौं सिकोड़) यह दुआ नामर्दों की है काजी साहब! नामर्दी तो खुदा ने दी, मार-मार कहे जा! यह शान नहीं, शर्म की, लानत की बात है।

काजी—

मेरी राय में वह नामर्द नहीं, सच्चा जवाँ मर्द है, पक्का हकपरस्त है। रुहानी ताकत मन्द बन्दा है।

मौलवी—

(गर्म हो) मगर शरिअत-इस्लाम की रूह से वह काफिर है। लाख बार काफिर ही है।

काजी—

खैर! छोड़िये उसको! मेरा खास मतलब तो निमाई से है। उसने एक गिरोह कायम करली है जो दिन-व-दिन जोर पकड़ता जा रहा है। पण्डित होने की वजह से निमाई का रौब काफी लोगों पर गालिब है। मगर अब उसके खिलाफ शिकायतें भी बहुत आने लगी हैं कि ये लोग रात भर नाचते-गाते शोरोगुल मचाते रहते हैं।

मौलवी—

सिर्फ निमाई का ही गिरोह नहीं काजी साहब! शहर भर में सैकड़ों टोलियाँ बन गई हैं और बनती ही जा रही हैं। उनका पेशा है—शाम से आधी रात तक हो-हो करके बड़ी बुलन्द आवाज से चीखना। जिसको वह 'कीरतन' कहते हैं।

काजी—

यह इबादत का कैसा तरीका है मौलवी साहब?

मौलवी—

इबादत नहीं खिलाफत है! खुराफत है नाजायज हरकत है। इससे अमन-चैन में खलल आने का पूरा अन्देशा है। अलावा इसके, उस गद्दार काफिर हरिदास की हवा हमारी मुसलमान फौज को भी लग सकती है।

यह अहम खतरा है। बलवा तक हो सकता है। आप खामोश न बैठें। फौरन कदम उठावें। इनको कुचल दें नेस्तनाबूद कर दें। वर्ना: नवाब साहब के रुबरु हमको इतला करनी पड़ेगी, फरियाद करनी पड़ेगी।

(प्रवेश एक मुसलमान सिपाही)

सिपाही—

(कुर्निश करके) हजूर! फरियादी ब्राह्मण बाहर खड़े हैं। अन्दर आने की इजाजत चाहते हैं।

काजी—

आने दो! जाओ ले आओ उनको।

(प्रवेश ब्राह्मणों का दल—कालीपद, तीनकौड़ी, पंचानन)

ब्राह्मण और भट्टाचार्य—

काजी साहब की जय हो। अन्नदाता सरकार की जय हो।

काजी—

आओ ब्राह्मणों! आओ! खैरियत तो है न? क्या हाल-हवाल है जो फिर दुबारा आये हो।

कालीपद—

हाल-बेहाल है सरकार। दिन में भूख और रात में नींद हराम है।

काजी— —सबब?

सब ब्राह्मण—

वही हरि बोलाओं का मजहब और क्या सरकार!

काजी—

क्या उनका मजहब खराब है?

तीनकौड़ी—

सरासर खराब है। हमारे धर्मशास्त्र के बिल्कुल खिलाफ हैं।

काजी—

कैसे खिलाफ है, जरा हमें भी तो मालूम हो।

पंचानन—

सरकार! हमारे शास्त्र की आज्ञा है कि भगवान् के नाम राम, कृष्ण, हरि—इनको मन में ही जपे, जोर से न बोले—

गजल-शेर—

हरिनाम को मन में जपे, बोले नहीं कभी जोर से।
वर्ना होता है गुनाह, गर बोले कोई जोर से।
लेकिन ये चिल्लाते रहते, रात दिन पुर जोर से।
करते गुनाह पर हैं गुनाह, ये ऐसे सीना जोर-से।।

भट्टाचार्य—

इतना ही नहीं अन्नदाता! ये लोग चिल्ला-चिल्लाकर भगवान् को भी नाराज कर देते हैं, क्योंकि हमारे भगवान्—

हरि क्षीरसागर चार महीने, सोते हैं पुरजोर से।
पर नींद उनकी भंग करते, ये चिल्लाकर जोर से।
हरदम बुलाते रहते उनको, नाम ले ले जोर से।
सो नहीं पाते हरि तब, गुस्सा आता जोर से।।

कालीपद—

झुँझला तब उठते हैं प्रभुजी, दंड देते जोर से।
कहीं आग बरसाते हैं कहीं, बरसाते पानी जोर से।
कहीं हैजा महामारी बीमारी, फैला देते जोर से।
कहीं मुल्क में अन्दर व बाहर, जंग मचाते जोर से।।

काजी—

(हँसता हुआ) ओहो! तभी आजकल चारों ओर इतना तूफान मचा हुआ है। आज राज खुला! हाँ—और कुछ?

तीनकौड़ी—

अभी तो बहुत कुछ बाकी है सरकार! गौर फरमाइये—

इनके चिल्लाने से ही उड़ जाते बादल जोर से।
पानी बरसता ही नहीं, सूखा मँहगाई जोर से।
हम तड़फते सूखे भूखे, मरते जाते जोर से।
पर नाचते गाते ये मोटे होते जाते जोर से।

दुनियाँ की तमाम आफत-मुसीबत इन्हीं हरि-बोलाओं से है। इनको पकड़-पकड़ कर पीटने से ही राजा-प्रजा को सुख-शान्ति मिलैगी।

पंचानन—

और सुनिये काजी साहब! हमारे शास्त्र में एकादशी की रात को जागरन करके भगवान् का गुण गाना तो लिखा है। मगर इनके तो रोज एकादशी, रोज जागरन, रोज नाचना गाना होता रहता है। भगवान् तो चार ही महीना सोते हैं मगर हम आप सबको तो बारहों महीना, तीसों दिन सोना पड़ता है और ये हैं कि कसम खा रखी है कि न खुद सोयँगे और न किसी को सोने दैंगे।

भट्टाचार्य—

और हजूर! ये शैतान के बन्दे हमारी नींद ही खराब नहीं करते, हमारे समाज को भी चौपट कर रहे हैं। इस निमाई के गिरोह में वन-वन की लकड़ी और तरह-तरह की खोपड़ी हैं। एक बुढ्ढा अद्वैत है गृहस्थ तपस्वी! एक श्रीवास तान्त्रिक भक्त। एक मुरारिगुप्त है कायस्थ पंडित। एक श्रीधर है कुंजड़ा ब्राह्मण! एक शुक्लाम्बर है ब्रह्मचारी-भिखारी। एक बाबू पुंडरीक है विलासी भक्त। एक हरिदास है—मुसलमान-हिन्दु। एक नया पागल और आ घुसा है—निताई अवधूत और निमाई तो मुखिया है ही—सब का गुरु और भगवान्।

मौलवी—

बड़ी लम्बी फिहरिश्त सुनाई आपने भट्टाचार्य बाबू?

भट्टाचार्य—

अजी लम्बी कहाँ मौलवी साहब—ये तो पाँच सात दादा गुरुओं के ही नाम गिनाये। छुटभैया तो सैकड़ों हैं और पिछलग्गुओं की तो शुमार ही क्या! ये सब एक साथ खाते-पीते, नाचते-गाते हैं। ये जाति-पाँति-तोड़क-महामंडल से ज्यादा ही हैं, कम नहीं हैं।

काजी—

जाति पाँति तो हमारी समाज में भी नहीं है।

तीनकौड़ी—

मगर जहाँपनाह! आपकी समाज में इमान-धर्म तो है। आप अपने शरिअत के खिलाफ तो नहीं चलते हैं। मगर इनकी तो एक-एक हरकत हिन्दु शास्त्र और समाज की जड़ काटने वाली हैं। अभी हमने तमाम किस्सा सुनाया ही कहाँ?

मौलवी—

तो छिपाते क्यों हो? नाचने ही चले तो शर्म कैसी? फर्द-जुर्म पूरी कर डालो न।

तीनकौड़ी—

तो गौर फरमावें! श्रीवास पण्डित का मकान दुराचार का अड्डा है।

पंचानन—

ये लोग कीर्तन की आड़ में पाप कर्म करते हैं।

भट्टाचार्य—

ये रात में दरवाजा बन्द करके माँस खाते, शराब पीते और स्त्रियों के संग.........

कालीपद—

दुराचार करते हैं और उस कुकर्म को छिपाने के लिये गाते-बजाते, कीर्तन का ढोंग रचते हैं।

मौलवी—

मुझे भी इस बदमाशी का पूरा शक था।

कालीपद—

शक कैसा मौलवी साहब, हमारे पास तो सबूत हैं।

तीनकौड़ी—

मैं इसका गवाह हूँ। ये भैरवी-पूजा करते हैं।

काजी—

भैरवी-पूजा क्या होती है?

तीनकौड़ी—

एक स्त्री को भैरवी देवी मानकर उसकी पूजा की जाती है माँस, मदिरा आदि से।

काजी—

आपने देखी है पूजा क्या ?

तीनकौड़ी—

पूजा की सामग्री देखी है! पूजा के बाद वे सब चीजें बाहर चौराहे पर रख दी जाती हैं। एक रोज सबेरे ही सबेरे गंगा जाते समय हमने श्रीवास के मकान के दरवाजे के आगे ही ये सब चीजें देखी थीं—माँस, मदिरा सिंदूर, वगैरह। ऐसे हैं ये कीर्तनियाँ भगत।

मौलवी—

तौबा तौबा! मेरा तो सुन करके ही खून उबलने लगा।

पंचानन—

बेशक! उबलना ही चाहिये। हम भी तो उबलते-उबलते रह नहीं सके और यहाँ आये हैं। इसे ठण्डा करना काजी साहब के अख्तियार में है। वर्ना राजा-रैय्यत किसी की खैरियत नहीं।

काजी—

ब्राह्मणो! इन नापाक हरकतों का इल्म कमोवेश मुझे भी है। फरियादें भी आ चुकी है। मगर मैं अब तक खामोश इसी वजह से था कि यह एक मजहबी मामला है। मेरी दस्तन्दाजी से हिन्दू रिआया के दिल में रंजिश पहुँचेगी लेकिन जब खुद तुम हिन्दू लोग ही इसके खिलाफ हो तो मुझे भी मुनासिब कदम उठाना ही पड़ेगा।

कालीपद—

जरूर और जल्दी ही। हम सब खिलाफ हैं। भट्टाचार्य पंडितों का दल खिलाफ और तन्त्राचार्य पण्डितों का दल खिलाफ। इनके सिवाय तीसरा दल है ही किसका नदिया में।

भट्टाचार्य—

सरकार! अब्बल कार्यवाही तो यह होनी चाहिये कि ये जो अपने-अपने मकानों से रोजाना रात को कीर्तन करते हैं, वह फौरन बन्द करा दिया जाय ताकि हम सब आराम से सो सकें और भगवान् की भी नींद खराब न हो और वह नाराज न हो सकें।

मौलवी—

बिल्कुल ठीक! 'कीरतन' पर करफ्यु लगा दिया जाय। हुक्म-अदूली पर कैद, जुर्माना और जायदाद-जब्ती। नहीं तो कलमा पढ़ो और मुसलमान बनो।

काजी—

ब्राह्मणो! आप लोग कोई फिक्र न करें। मैं आज ही मुनासिब कार्यवाई करूँगा। यह हो-हल्ला बन्द कर देना तो मेरे बाँये हाथ का खेल है। आनन-फानन में खतम कर दूँगा।

ब्राह्मण दल—

काजी साहब की जय हो।

नवाब सरकार की जय हो (प्रस्थान। पर्दा)

समाज—

(विरोधी से ही विकास होता है। जैसे कि)

गोरे मुख पै श्याम तिल, शोभा अधिक बढ़ात।
तैसेइ बैर-विरोध सों, हरि-यश-रस बढ़ि जात।।

कवित्त—

हल चलाये छाती पै, धरती अनाज देत
जोते बिन देत नहीं, बाँझ रहि आवै है।
तरनी तपाय के ही, धरनी पै धार देत
बिन तपे वर्षा नहीं, जग सूख जावै है।
छेड़-छाड़ किये पै ही, रागरंग बरसत है
छेड़े बिना बीन मधुर, तूँबा ही कहावै है।
तम के ही तोम में तो ज्योति जगमगै 'प्रेम'
त्यूँ बाधा कूँ पाय खाय, लीला सरसावै है।

अनुकूल प्रतिकूल द्विधा, लीला परिकर होय।
अस विचारि दुख दोष तजै, सुधी कहावै सोय।।
ठौर ठौर नदिया नगर, संध्या-आरती काल।
उठै संकीर्तन धुनि मधुर, बजैं खोल करताल।।

भक्त मण्डली १—(प्रवेश-गाती हुई)

पद—

हम कृष्ण मुरारि गायँगे। मधुसूदन मुरारि ध्यायँगे।।
जिन कर सों हिरनाकुश फार्‍यौ।
जिन कर सों गिरिराजहिं धार्‍यौ।
वेई विपद हमारी टारेंगे।। हम०
जिन चरनन पै इन्द्र पर्‍यौ है।
जिन चरनन पै ब्रह्मा ढर्‍यौ है।
वेई चरन अभय 'प्रेम' तारेंगे।। हम०
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।
(संकीर्तन करते-करते प्रस्थान)

भक्त मण्डली २—(प्रवेश गाती हुई)

पद-गाना—

हरे कृष्ण हरे राम बोल रे।
नाम प्रेम धन जीवन सार, लेओ हरि हरि बोल रे।।
नाम प्रेम फल साधन सार, गहौ हरि हरि बोल रे।
नाम प्रेमपथ मुक्तिको द्वार, खोलौ हरि हरि बोल रे।।
नाम प्रेमरस हरि-शृङ्गार, करौ हरि हरि बोल रे।।
(संकीर्तन करते-करते प्रस्थान)

(दृष्टव्य—पर्दे के भीतर दोनों दल 'हरिबोल' कीर्तन धुनि करेंगे बाहर प्रवेश काजी, गफूर, करीम, रहीम सिपाहियों के साथ)

समाज (दोहा)—

संग सैनिक संध्या समय, विचरत काजी गाम।
सुनि पायो जु मृदंग धुनि, संकीर्तन हरि नाम।।

बंगला (चै० भा०)—

काजी बोले धरो धरो, आजि करौं कार्ज।
आजिबा कि कोरे, तोर निमाइ आचार्ज।।

काजी—

(क्रोधपूर्वक) सिपाहियो! देखते सुनते क्या हो! घुसो, मारो, पीटो। चखाओ मजा! कौन होता है वह निमाई! डरो मत! खड़े क्यों हो? जाओ घुसो अन्दर! (एक को बेंत मारते हुये) अबे हरामजादे! जाता क्यों नहीं? मरेगा मेरे हाथों से!

गफूर—

खौफ-खौफ लगता है हजूर-हजूर। उस रोज गश्त लगाते वक्त यही शोरोगुल सुनकर मैं-मैं घुसा था रोकने म-म मगर-यकायक कहीं से आग की एक लपट ऐसी आई—ऐसी आई कि मेरी दा-दा-दाढ़ी की हजामत बन गई! लम्बे बाल सब ले गई। ये ढुड्डे छोड़ गई! और आज कहीं चेहरा ही न फूँक डाले! मुआफ-मुआफ करें सरकार! मैं-मैं तो नहीं घुसूँगा।

काजी—

अबे बुजदिल कहीं के! आज कुछ नहीं होगा। मैं चलता हूँ रहीम, करीम, चलो मेरे संग। आवे इनका निमाई सरदार और बचावे इनको। चलो, घुसो, मारो पीटो तोड़ो फोड़ो ढोल-फोल (भीतर घुसता है रहीम करीम भी)

गफूर—

(नहीं घुसता है) मैं नहीं जाऊँगा मरने, तौबा-तौबा

(पर्दा खुलता है। काजी और सिपाही जुल्म करते)

करीम—

(खोल छीन फोड़ते हुये) यह लो और पीटो खोल।

रहीम—

(मंजीरा तोड़ते हुये) यह लो टुनटुन करो।

काजी—

तुम लोग इन्सान हो या भूत हो। लोग तो रात में सोते हैं और तुम मसान जगाते हो। खुदा के नाम पर कुफ्र फैलाते हो। (पीटना)

करीम—

कहाँ है तुम्हारा सरदार? बुलाओ उसे।

रहीम—

(पीटता हुआ) जाओ बुलाके लाओ! जाओ जल्दी।

भक्त लोग—

त्राहि प्रभो! रक्षा करो! रक्षा करो! (चिल्लाते हुये भाग जाते हैं)

काजी—

भाग जाओ काफिरो! आज तुम्हारी जानें बख्श देता हूँ। अगर आज से फिर नवद्वीप में तुम लोगों ने यह शरारत की तो याद रखो, तुम लोगों की जान ले लूँगा या फिर जात ले लूँगा। इस 'हिन्दुयानी' को खत्म करके ही छोड़ूँगा (सब चले जाते हैं)

समाज (दोहा)—

निन्दक खल जन लखि सुनि, अति आनन्द उर पाये।
बकत व्यंग उपहास बहु, मन मोदकन अघाय।।
(प्रवेश—कालीपद, पंचानन, तीनकौड़ी आदि विरोधी)

पंचानन—

ठीक होयेछे शाला बेटादेर! जेमन कर्म तेमनि दंड! ढोंगी बगुला भक्तों को अच्छी सजा मिली है।

तीनकौड़ी—

शुध खोलटाइ भांगा होलो रे भाया! दु'चारटि माथा भांगले वेश मजा होइलो! दो चार की खोपड़ियाँ फूटे तो माँ काली की भी तृप्ति हो और हमारी भी छाती ठण्डी होवै।

कालीपद—

एक बार निमाई पण्डितेर पाला! दु'चारटि घापेलेइ सब नाग–राली आर भावकाली ठांडा पोड़े जावे। अब दो चार हाथ निमाई के भी लग जायँ तो उसकी भी सब रसिकता और भावुकता ठण्डी हो जावे।

पंचानन—

आर ओइ जे नेंगटा निताई! ओर चिकित्सा प्रथम होआ चाइ। वह निताई बड़ा सिद्ध बना हुआ नंगा घूमता फिरता है। उस का इलाज सबसे पहले होना चाहिये।

तीनकौड़ी—

सब हो जायगा। काजी का हाथ खुला है तो साले सब ठिकाने से लग जायँगे। जीते रहो काजी साहब! तुम्हारा रुतबा आला हो! तुम्हारी जय हो! काजी साहब की जय हो।

(प्रस्थान)

समाज (सोरठा)—

निशा निशाचर काल, डोलै काजी नगर नित।
सेना यवन कराल, करत फिरत उत्पात बहुत।।
कीर्तन नाम जहाँ सुनि पावै। धाय जाय बहु त्रास दिखावै।।
जन भयभीत जहँ–तहँ दुरि जावैं। हाथ परै जे बहु दुख पावैं।।
ऊँचे स्वर अब नहीं हरि गावैं। नाचैं ना कोई खोल बजावैं।।
दुर्जन हँसैं बहु बोल सुनावैं। सुजन डरैं मुख खोलि न पावैं।।
सूझै ना कछु आन उपाई। हारे को हरि अन्त सहाई।।
प्रभु ढिंग भक्तन जायकै, करी आर्त्त पुकार।
नगर छाँड़ि बसिहैं अनत, सहैं न अत्याचार।।

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, नित्यानन्द, अद्वैत, श्रीवासादि बैठे हैं। प्रवेश पाँच सात नागरिक)

नागरिक—

दुहाई प्रभो! दुहाई! रक्षा करौ नाथ! रक्षा करौ।

महाप्रभु—

क्यों कहा बात है भैयाओ? कैसे घबराये भये हो?

नागरिक १—

प्रभो! काजी और वाके सिपाहियन नै हमारे खोल-करताल सब तोड़-फोड़ डारे और संकीर्तन बन्द कर दियौ है।

नागरिक २—

काजी कहै है कि तुम्हारो ठाकुर निमाई आयकै तुम्हारी रक्षा क्यूँ नही करै है?

नागरिक ३—

और यह धमकी दई है कि यदि कीर्तन करौगे तो तुम्हारी जान लै ली जायगी कै जाति लै ली जायगी।

नागरिक ४—

वह काजी अब नित प्रति सहस्रन सैनिकन कूँ लै कैं नगर में डरामतो-धमकामतो भयो डोलै है। कहै है कि मेरे शासन में यह 'हिन्दुयानी' नहीं चलैगी।

नागरिक १—

प्रभो! अब काजी के भय सों नगर में खोल-करताल नहीं बजै हैं, हरिबोल की धुनि सों गगन नहीं गूँजै है। न अब कोई भुजा उठाय कै नाच सकै है न ऊँचे स्वर से हरि पुकार सकै है।

नागरिक २—

हाँ प्रभो! हम तो अब घर के कोनेन में मुँह छिपाय कै रोय रहे हैं और विरोधीजन तारी बजाय कै हँस रहे हैं, वैष्णवन कूँ ढोंगी पाखंडी कह कहकै तानो मार रहे हैं। न हम काहू ते कछु कहई सकैं हैं, न कछु करइ सकैं हैं।

नागरिक ३—

प्रभो रक्षा करौ तो करौ! नहीं तो हमकूँ नदिया छोड़कै अन्त जानोइ परैगो। हम कीर्तन करे बिना रह नहीं सकैं हैं और यहाँ हम कीर्तन कर नहीं सकैं हैं। यासों हम तो अन्यत्र जायकै आपको दियो भयो मधुर हरिनाम संकीर्तन करेंगे।

नागरिक ४—

परन्तु हाय! आपकूँ छोड़कै कैसे जायँ और यहीं रहैं तो कीर्तन करैं कैसे। या धर्म संकट ते आपही हमकूँ उबार सकौ हो।

समाज (बंगला चै० भा०)—

कीर्तनेर रोध शुनि प्रभु विश्वम्भर।
क्रोधे होइलेन प्रभु रुद्रमूर्तिधर।।

महाप्रभु—

(सक्रोध) ओह यह बात! काजी मेरो संकीर्तन रोकनो चाहै है। श्रीपाद! तैयार हो जाओ। सुनो—

बंगला (चै० भा०)—

भांगिया काजीर घर काजीर दुयारे।
कीर्तन कोरिमु देखि, कौनो कर्म कोरे।।

आज मैं काजी के घर कूँ धूर में मिलाय कै वाही के द्वार पर महासंकीर्तन करूँगो। देखूँ कौन आयकै रोकै है मोकूँ।

भक्तगण—'हरिबोल'

महाप्रभु (कवित्त)—

करूँगो कीर्तन आज, नदिया नगर माँझ
बनाय नवीन साज देखै त्रिभुवन है।
गाऊँ हरिनाम तार, धार बरसाऊँ प्रेम
बहाऊँ पाखंड जार, नचाऊँ यवन है।
लै लै कर दीप सब, आओ संध्या रामै भाइ
देखन चहौ जो मेरो, नगर कीर्तन है।
खाओ नहीं भय गाओ, हरिनाम हरिप्रेम
कैंसो वह नवाब और काजी पाजी कौन है।

अनन्त ब्रह्माण्ड मोर सेवकेर दास।
मुञि विद्यमाने कि भयेर प्रकाश।। (चै० भा०)
अनन्त ब्रह्माण्ड है सबै, मो सेवक को दास।
मैं जहाँ तहाँ फिर कहाँ, भय दुख ओ त्रास।।

तिल भर भय नहिं मन में लावैं। करि ब्यारु सब तुरतहि आवैं

जाओ भाइ तुम सब घर जाओ।

घर घर जाय मो आज्ञा सुनाओ।।

सब नागरिक—

हरिबोल! हरिबोल! गौरहरि की जय! (प्रस्थान)

महाप्रभु—

श्रीवास जी! नगर संकीर्तन को आयोजन करौ।

श्रीवास—

कहा-कहा करनौ परैगो प्रभो!

महाप्रभु—

सुनौ! अपने जो अन्तरंग जन हैं उनकी चार मंडली बनैगी। प्रथम मण्डली में नृत्य करैंगे अद्वैताचार्य और सब कीर्तन करैंगे। दूसरी मण्डली में हरिदास जी नृत्य करैंगे और सब कीर्तन गायँगे। वाके पीछे तीसरी मण्डली में आप नृत्य करौगे और वाके पीछे चौथी मण्डली में मैं नृत्य करूँगो और (निताई से) आप श्रीपाद?

निताई—

मैं आपके संग नाचूँगो।

नाचूँ स्वतन्त्र मैं, यह शक्ति न मेरी।
जहाँ तुम वहीं मैं, यही भक्ति है मेरी।।

महाप्रभु—

अच्छो तो आप मेरे संग रहैं। श्रीवास जी! अब अपने सब कीर्तन-प्रेमिन कूँ सूचित करौ तथा खोल, करताल, फूलमाला, चन्दन आदि आवश्यक सामग्री जुटाय लैओ।

श्रीवास—

जो आज्ञा प्रभो! (पर्दा)

नवद्वीप में घोषणा

एक नागरिक—

(ढोल बजाता हुआ) सुनो नवद्वीप वासियो! सुनो। बड़े ही आनन्द की एक शुभ सूचना है। आज तक हमारे नदियाबिहारी विश्वम्भर गौरहरि अपने प्रिय भक्तों के गृह-भीतर ही हरिनाम संकीर्तन किया करते थे। सर्वसाधारण नगरवासी उनके मंगलमय मधुर नृत्य और कीर्तन के दर्शन एवं श्रवण से वंचित ही रह जाया करते थे। परन्तु आज हमारे ऊपर असीम अहैतुकी कृपा करके वे महाप्रभु अपने समस्त परिकर सहित सन्ध्या समय नगर संकीर्तन को पधारेंगे।

आपने स्वयं श्रीमुख से यह आज्ञा की है कि नदिया के हाकिम काजी का कोई नदियावासी तिलभर भी भय न करे। काजी की क्या सामर्थ्य जो उनके संकीर्तन में बाधा दे सके। अनन्त ब्रह्माण्ड भी श्रीकृष्ण के नाम-गुण-कीर्तनकारी भक्तों के दास हैं। उनकी ही यह घोषणा है कि आज वे श्रीकृष्ण के नाम की महिमा को प्रकाशित करेंगे तथा दुर्मदान्ध काजी को उसके अन्याय-अत्याचार का समुचित दण्ड देंगे। अतएव उन की आज्ञा है कि आज सायंकाल भोजन के पश्चात् सब भक्तजन अपने एक हाथ में मशाल और दूसरे हाथ में तेल का पात्र ले लेकर संकीर्तन मण्डली में सम्मिलित हो जावें। आप अपने लाखों हाथों की लाखों मशालों से प्रभु के संकीर्तन-मार्ग को दीपावली की भाँति आलोकमय बना देवें।

इसके साथ ही अपने-अपने घर और घर के आगे के मार्ग को स्वच्छ बनावें एवं सुन्दर सजावें—कंकर-पत्थर चुन दें, छिड़काव करें, तोरण-द्वार बनावें, बँधनवार बाँधें, ध्वज-पताका फहरावें, कदली-स्तम्भ आरोपित करें, मंगलघट स्थापित करें, धूपदीप जलावें। माता-बहनें घर-घर में, द्वार-द्वार पर, पुष्प-धूप-दीपमय आरती से प्रभु की संकीर्तन मण्डली की अभ्यर्थना करें तथा उन पर पुष्प, लाज-खील, बतासा की मंगल वर्षा करें। पुत्र-पुत्री के विवाह से भी अधिक हर्षोल्लास प्रकट करें एवं तन मन धन से पूर्ण सहयोग करें।

एक ओर तो यह सेवासुख का सौभाग्य, दूसरी ओर भुवन-मोहन गौरसुन्दर की रूपमाधुरी एवं नृत्य-माधुरी के दर्शन एवं तीसरी ओर सहस्त्र-सहस्त्र प्रेमी-भक्तों के प्राणों और कण्ठों से निकले हुये दिव्य भगवन्नामों के संकीर्तन का श्रवण-ये तीन आज एक अलौकिक त्रिवेणी की सृष्टि करके

हम नदियावासियों को कृतार्थ करने के लिये उपस्थित हैं। अतएव सब ही आवें और इस अपूर्व चल त्रिवेणी में न्हावें, कलुष बहावें, सुकृति कमावें, जीवन-जन्म सफल बनावें, नाचें गावें—हरि बोल! हरिबोल! (प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

काजी काज अकाज कियो, हरि संकीर्तन भंग।
ता आगे ताकी दशा, कहौं पूर्व प्रसंग।।
हरि कीर्तन रंगभंग करि, काजी निज घर जाय।
सोवत निशि लखिपायो इक, जीव भंयकरआय।।

(पर्दा खुलना। काजी सो रहा है। यकायक नृसिंह भगवान् प्रकट हो काजी की छाती पर चढ़ बैठते हैं)

नृसिंह—

अरे दुष्ट! काजी पाजी! तूने कहा था न कि निमाई मेरा क्या कर सकता है! तो देख! वह क्या कर सकता है।

(छाती पर उछलते—गला दबाते)

काजी—

अ...अ...अल्लाह म...म...मरा! र...र...रहम।

नृसिंह—

तूने मृदंग-मजीरा तोड़े हैं। मैं तेरे सीने की हड्डी-पसली तोड़ देता हूँ (छाती दबाना—नाखून गाड़ना) रोकेगा मेरा संकीर्तन! ले रोक (मुक्का मारना)

काजी—

न न न नहीं रोकूँगा—हरगिज नहीं! रहम! खुदाबन्द करीम। मु....मु...मुआफ करो। तौबा-तौबा! म....मरा...मरा।

नृसिंह—

मरेगा नहीं लेकिन आइन्दे के वास्ते खबरदार। एक अँगुली भी उठायी तो मय खानदान के तेरा नामोनिशान मिटा दूँगा! याद रख! भूलना मत (अन्तर्धान)

काजी—

न.....न.....नहीं भूलूँगा (घबड़ाकर उठ बैठते हुये) बच गया बच गया! (इधर उधर देख गया) वह-वह कहाँ गया अरे! गायब हो गया! या अल्लाह! शुक्रिया बच गया! अरे अब्दुल्ला गफूर, नसीर! हरामजादाओ! कहाँ मर गये।

(अब्दुल्ला गफूर दौड़ते हुये आते हैं)

अब्दुल—

क्या माजरा है हजूर! हम तो बाहर ही मौजूद थे।

गफूर—

आधी रात में हजूर कैसे चीख रहे हैं?

काजी—

वह.....वह....कौ....कौन......कौन आया था? ग.....ग गया बच गया। या अल्लाह!

अब्दुल—

क्या कोई बदमाश चोर घुस आया था?

गफूर—

लेकिन आया कैसे! हम तो दरवाजे पर मौजूद थे।

काजी—

चो.....चो चोर नहीं! वह वह वह मेरे मौला! प...प...पानी

अब्दुल—

(पानी ला पिलाता—हवा करता) आखिर माजरा क्या है काजी साहब? तबियत इतनी परेशान क्यों है?

काजी—

(हाँफते हुये) तबियत क्या! जान खैरात मिली। बच गया! यह देखो (सीना बताते हुये) यह देखो।

गफ्रूर—

ये तो नाखून के दाग हैं सीने पर! और ये कपड़े भी खून से तर बतर!

अब्दुल—

कौन कातिल आया! गजब हो गया! आखिर राज क्या है काजी साहब!

काजी—

क्या-क्या बताऊँ! कलेजा काँप रहा है! ओफ्! वह खूँख्वार सूरत! मसाल की-सी आँखें! शेर की शक्ल! शेर के पंजे! वो तेज नाखून! सीना चीर डाला होता। लेकिन छोड़ गया! तौबा-तौबा (कान पकड़ता) सिपाहियो! आज से हिन्दुओं का कीर्तन नहीं रोकना—हर्गिज नहीं, नहीं। वर्ना हम तुम सब जहन्नुम रसीद कर दिये जायँगे! खबरदार!

गफ्रूर—

सरकार! मैंने तो रोकना उसी रोज से छोड़ दिया जब से आग मेरी शानदार दाढ़ी की कलम कर गई तब से मैं इस हो-हल्ले से दूर-ही-दूर रहता हूँ।

काजी—

या मेरे खुदाबन्द करीम! मेरे गुनाह ओ तेरी रहमत।

अब्दुल—

लिहाजा एक नमाज फौरन आद कर डालिये! शुक्रिया फरमाइये।

काजी—

बेशक! बेशक! बदनाला वजू करलूँ नामजा बिछा दे।

गफ्रूर—

लीजिये सरकार लीजिये (वदना पेश करना)

अब्दुल—

(नामजा बिछा देता) लीजिये हजूर!

काजी—

(वजू करना—नामजे पर खड़ा हो—कानों पर हाथ रख) ला इलाह इलल्लिाह। मुहम्मद रसूल........

(घुटने पर झुकना। पर्दा)

समाज (पद)—

धन्य घड़ी आज बेला ए।
नदिया नगर में धूम मची है, परत हेला पर हेला।।
घर घर ते नर नर सब निकसै, लै लै दीपक तेला।
बड़े भाग्य जो आज निरखिहैं, गौर संकीर्तन रेला।।
वारी तिवारी अटारिन ऊपर, नारी सकल भईं भेला।
दीपावली दीपति घर घर प्रति, नर नारिनको मेला।।
गौरसुन्दर प्रभु आज सजैं हैं, बाँके छबीले छैला।
अलकन ऊपर मालती माला, पीत पाट तन सेला।।
मंगल साज सजाय मंडली, चली गोधूली बेला।
कोटि-कोटि जन नाचत गावत, बहावत 'प्रेम' रेला।।
आगे चले आचार्य गोसांई। हरि हरये गावत जाई।।

अद्वैत मण्डली १—

(प्रवेश कीर्तन करते हुये। मध्य में नर्तक अद्वैत)

धुन—

हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नाम।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः।। (प्रस्थान)

समाज—

ता पाछे हरिदास जु आये। हरि बोल हरि बोल सुभाये।।

हरिदास मण्डली २—

(प्रवेश कीर्तन करते। मध्य में नर्त्तक हरिदास)

धुन—

हरिबोल, हरिबोल। हरिनाम हरि बोल (प्रस्थान)

समाज—

तीजे श्रीवास जु आये। हरि ओ राम राम धुन गाये।।

श्रीवास मण्डली ३—

(प्रवेश कीर्तन करते) हरि ओ राम राम, हरि ओ राम

(प्रस्थान)

समाज—

आये गौर पुनि संग निताई। नाचत बरसत अमृत जाई।।

गौर मण्डली ४—

(मध्य में गौर निताई)

तिहारे चरण मन लागो रे सारंगधर।
लागो रे सारंगधर, लागो रे मुरलीधर।।

(महाप्रभु की मण्डली के कीर्तन के मध्य-मध्य में समाज द्वारा कवित्त गाना)

समाज (कवित्त)—

सुन्दर सुन्दर गौर, सुन्दर सजाये सखा
सुन्दरता मानो कीन्हौ, सुन्दर सिंगार है।
सेत पट पटुली किनारी लाल सोहै मोहै
झीनो हरो फेंट कटि, साजत सुढार है।
कंचन वदन लेप चन्दन सुतन बिन्दा
कुंकुम सुभाल लाल, दमकै अपार है।
केशन कुसुम मुख ताम्बूल सुगन्ध दियै
चलै रणकाज सजी, दूल्ह सरकार है।

गौर मण्डली—कीर्तन—तिहारे चरण मन लागोरे......इत्यादि

कवित्त—

अस्त्र नहीं शस्त्र नहीं, सेना रणसज्ज नहीं
बाजि रथ गज्ज नहीं, न भेरी धुंकार है।
राग नहीं रोष नहीं, चिन्ता भय त्रास नहीं
आनन्द हुलास गीत, नूपुर झंकार है।

खेलत में नाचत में, सोवत दूध पीवत में
मारै दुष्ट व्रज में, इहाँ तारे खिलार है।
देख लेओ 'प्रेम' जीव-ईश्वर में भेद यही
चलै रण काज सजि दूल्ह सरकार है।

गौर मण्डली—

(कीर्तन) तिहारे चरण मन लगा रे.....इत्यादि
(कीर्तन करते-करते प्रस्थान)

कवित्त—

मंडली चली चार पै चार सों हजार लाख
कोटि कोटि बढ़ि चलीं, जन पारावार है।
लक्ष कोटि कंठ हरि बोल हरि घोर करैं
नाम अर्ब खर्ब होत, छिन ही छिन अपार है।
दीप जरैं लक्ष कोटि, मसाल अनन्त जरैं
दीसै नहीं रात दीसै द्यौस उजियार है।
देखो देखो अचरज न देख्यौ सुन्यौ 'प्रेम' कहूँ
भये दीप वारेन के हाथ चार चार हैं।।

कवित्त—

एक हाथ गहै दीप, दूजे तेल पात्र गहै
हाथ द्वय ऊँचे करि, नाचै मत्त डोलै हैं।
कौतुक विलोकैं देव, भूरि सराहैं सुभाग
पुष्प बरसावैं धनि धनि धनि बोलैं हैं।
धाये ललचाये भेष, पलटि पलटि आये
धूरि धरनी पै लोटैं, निधि पाई कोलै हैं।
देखो देखो अचरज न देख्यौ सुन्यौ 'प्रेम' कहूँ
नर भये देव, देव नर भये डोलैं हैं।।
(प्रवेश सम्मिलित चारों मण्डली—कीर्तन करती हुई)

संकीर्तन मण्डली (कीर्तन)—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

कवित्त—

भक्तन की बात कहा, जनता उन्मत्त महा
तन्मय आवेश भाँति भाँति के जनाये हैं।
गावैं कोई रोवैं कोई, नाचैं भूमि लोटैं कोई
काँधि चढ़ि वृक्ष चढ़ि गरजत छाये हैं।
तोरि डार डारन कूँ, मत्त गजराज ज्यूँ
मारौ पाखंडिन कूँ मारौ कहि धाये हैं।
मारूँगो मैं मारूँगो मैं, आय गयो डरौ मत
गरजैं विकट रुद्र भाव प्रगटाये हैं।।

संकीर्तन मण्डली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज (चौपाई)—

चले जात प्रभु गंगा तीरे। उमड़ि उमड़ि आवत जन भीरे।।
चलि पहुँचे सिमुलिया गामा। सिमुला देवी को निज धामा।।
काजी बसै सिमुलिया माँही।
तेहि मग पग धरि प्रभु अब जाँही।।
वाद्य कोलाहल चहुँ घन घोरा।
मारौ काजी मच्यौ चहुँ रौरा।।

(दृश्य—पर्दा खुलता है। काजी शयनागार में। कोलाहल सुनता है)

(नेपथ्य 'मारौ काजी पाजी को'। 'घुस जाओ। तोड़ो-फोड़ो। धूल में मिला दो' इत्यादि)

काजी—

सिपाहियो! यह गाने बजाने का शोरोगुल कैसे हो रहा है। यह हिन्दुओं की बारात है या उन भगत-भूतों का ही नाचना गाना है! यह हिमाकत! हुकुम अदूली! यह माजरा क्या है?

सिपाही—

दौड़ता घबड़ाया हुआ आता है। गजब हो गया सरकार! भागिये! जान बचाइये।

काजी—

आखिर मामला क्या है?

सिपाही—

(काँपता हुआ) मामला बड़ा खतरनाक है। मैं तो भा......भागता हूँ। आप भी भा-भागिये। जान बचाइये! जल्दी करिये! आ-आ पहुँचे। या खु-खुदा।

काजी—

अबे बुजदिल नामर्द! खौफ किस बात का? हमारे पास इतनी फौज है। कौन आ पहुँचे? बता तो सही।

सिपाही—

वही-वही! नि-नि निमाई सरदार की फौज! लाखों करोड़ों खोपड़ियाँ! की-की कीरतन करती आ रही है। या खुदा! इतनी खलकत कहाँ से आ गई! लाखों हाथों में मसाल और दरख्तों की डाल! बीच में नि-नि-निमाई पण्डित नाचता-गाता हुआ। ओफ्! उसका चेहरा! आग-आग का गोला! गोया तो जला देगा! खा जायगा! ओफ्! भागिये सरकार भागिये।

काजी—

ओह! फिर वही 'हिन्दुयानी' हिन्दुओं की वही हरकत और मेरे हुक्म के खिलाफ? आने दो! मौत ले आई है इनको।

सिपाही—

और गु-गु-गुस्ताखी मुआफ होवे। वे चीख-चीख कर कह रहे हैं कि का-का-काजी पा-पा-पाजी को मारो! उसका बाग उजाड़ दो जैसे रा-रा-राम के बन्दरों ने लंका उजाड़ दी थी! वह आ पहुँचे! भागिये सरकार! जान बचाइये।

काजी—

चुप कर बुजदिल! मैं अभी इनको जहन्नुम रसीद करता हूँ! अबे ओ करीमबख्श! रहीम खाँ! तुम लोग मय फौज इन पर हमला करो! भून डालो। पीस डालो इनको।

रहीम—

हम ही पिस जायँगे सरकार! हम दो ढाई सौ जवान और ये लाख-करोड़! ये थूक भी देंगे तो हम बह जायँगे! कुचल देंगे तो कीमा बना देंगे। लिहाजा भागिये। पीछे के रास्ता से निकल चलिये! कोठी घिर गई तो फिर खुदा हाफिज।

काजी—

चुप करो बुजदिलो! जाओ! मारो नहीं तो मारे जाओगे, गोली से उड़ा दिये जाओगे। जाओ!

सब सिपाही—

जाते हैं सरकार! लेकिन आप भी जरूर जाइये।

(चले जाते। पर्दा प्रवेश तीन चार सिपाही)

सिपाही रहीम—

चलो यारो! मरने चलें

सिपाही अब्दुला—

मरेंगे क्यों मियाँ, खिसक जायँगे।

सिपाही करीम—

खिसकने को रास्ता ही कहाँ है? अरे इनमें ही शामिल क्यों न हो जायँ। दरिया में बूँद की तरह मिल जायँ! लाखों में कौन किसको पहचानता है?

रहीम—

मगर फिर भी हुलिया बदल लो! हिन्दू बन चलो।

(चले जाते हैं)

समाज (चौपाई)—

काजी यवन फौज पठाई। सबजन सिन्धु माझ विलाई।।
भाजि भाजि बहु प्रान बचाये। बचन हेतु बहु भेष बनाये।।

(प्रवेश कीर्तन करती हुई महाप्रभु आदि मण्डली)

(प्रवेश एक-एक करके यवन सिपाही)

रहीम—

अबे पगड़ी फेंक! टोपी फेंक! (करीम की टोपी-पगड़ी फेंक देना)

करीम—

अबे मरवायगा क्या? चोटी तो है ही नहीं (सिर पर कपड़ा लपेट लेना)

समाज (चौपाई)—

पाग उतार शीश निज ढाँपहिं। शिखाहीन कोई देख न पावहिं

अब्दुल्ला—

करीम तो शामिल हो गया! इसकी तो दाढ़ी न थी—लेकिन मैं अपनी दाढ़ी कैसे छिपाऊँ?

समाज (चौपाई)—

लै लै वस्त्रन गोंछ दुरावहिं। नार नमाय न इत उत देखहिं।।

करीम—

अबे लुँगी की तो लाँग चढ़ा ले, वर्ना भंडाफोड़ हो जायेगा।

समाज (चौपाई)—

लाँघ चढ़ावत नाचत जाई। हरि बोल हरि टेरत गाई।।
ऊँचे स्वर बढ़ि बढ़ि कै गावहिं। नाचैं कूदैं भाव जनावहिं।।
काजी सुन्यौ कोलाहल घोरा। नियरे आवत निज घर ओरा।।
भय आतुर बहु टेर लगावै। कौन कहाँ कोई ढिंग नहिं पावै।।

काजी—

(नेपथ्य में से) अरे यह शोरशराबा तो अब कोठी पर ही आ पहुँचा! फौज हरामजादी कहाँ जा मरी? रोका नहीं! कैसे आ गये! अरे कौन है पहरे पर! फाटक बन्द कर दो। बाग में घुसने न पावें। दरवाजे-खिड़कियाँ तमाम बन्द कर दो। या मेरे मौला! खबर ले न मेरी! खत्म कर दे इनको! ओफ्! कहाँ जाऊँ? कैसे बचूँ? तौबा तौबा! या अल्लाह!

समाज (चौपाई)—

प्रभु कहत घर द्वारन तोरहु। भवन वाटिका सकल उजारहु।।
लोग करत उत्पात, चूर चूर करि डारैं सब।
बच्यौ न तरुवर पात, वस्तु न घर भीतरहू कछु।।
करुनानिधि प्रभु क्रोध लखावैं। नाम वैरी प्रति रोष जनावैं।।
रूप सौम्य अति उग्र बनाये। 'देहु आँच घर' वचन सुनाये।।

महाप्रभु—

लगाओ आग! जराय देओ काजी को घर! यह स्पर्धा! यह दुस्साहस! मेरे नाम-कीर्तन में वाधा देय है—

संकीर्तन आरम्भे मोर अवतार।
कीर्तन विरोधी पापी कोरिमु संहार।। (चै० भा०)

मेरो यह अवतार संकीर्तन-प्रचार के लिये है। जो कोई मेरे संकीर्तन को विरोध करैगो वाकूँ मैं मार डारूँगो—

सर्व पातकीओ जदि कोरये कीर्तन।
अवश्य ताहारे मुञि कोरिबो स्मरण।। (चै० भा०)

और यदि सर्व प्रकार को पापीहू मेरो संकीर्तन करैगो तो मैं वाकी अवश्य सुध लऊँगो। यासों डरौ मत लगाओ आग! जर मरै काजी अपने गण सहित। मैं आज यवनन को प्रलय कर दऊँगो।

निताई—

हे करुणासिन्धो! शान्त होओ। एक कीटतुल्य काजी आपके क्रोध को पात्र नहीं है। वह तो भयभीत हैकै कहूँ छिप गयो है। यासों शान्त होओ! क्षमा करौ वाकूँ।

महाप्रभु—

श्रीपाद! मेरे बैरी के लिये क्षमा है परन्तु मेरे धर्म के बैरी के लिये क्षमा नहीं, दण्ड है।

निताई—

तो दण्डहू पर्याप्त है चुक्यौ। मानी पुरुष को अपमान ही मृत्यु-तुल्य है। काजी को अपमान यत्परोनास्ति है चुक्यौ है। वाको अभिमान धूर में मिल गयो है। अब वा मरै कूँ कहा मारनो! हाँ यदि वह पुनः कीर्तन को

विरोध करै तो आप वाकूँ दण्ड देवैं। अब तो वाकूँ बुलाय करकै वाकूँ प्रेमभक्ति दान ही करैं।

भक्तगण—

हाँ क्षमासिन्धो! वाकूँ क्षमा करैं! कृपा करैं।

समाज (दोहा)—

भक्त सकल चरनन परी, किये विश्वम्भर क्षान्त।
लै आओ ढिंग काजीहिं, हँसि बोलै प्रभु शान्त।।

जनता—

ओ काजी साहब! कहाँ हो, सुन रहे हो न? अब बाहर निकसि आओ! प्रभु बुलाय रहे हैं। कोई डर नहीं है। ये प्रसन्न हैं। आओ और हमारे संग-संग बोलो—

गाना (विहाग-दादरा)—

एक बार खोलि प्राण, बोल हरि बोल बोल हरि बोल।
भेदभाव दूर होंगे, भाई भाई गले मिलेंगे।
द्वन्द्व-धुन्द मिट जायँगे, बोल हरि बोल०।।
मूल एक डार अनेक, राम ओ रहीम एक।
फूले प्रेम रसाभिषेक, बोल हरि बोल०।।

समाज (चौपाई)—

थर थर काँपत काजी आयो। जोरि हाथ दोउ शीश नमायो।।

महाप्रभु—

आओ-आओ काजी साहब! बैठो! विराजो!

काजी—

(ससंकोच खड़ा ही रहता है)

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) वाह काजी साहब! हम तो आपके मकान पै आये और आप छिप बैठे! यह कहाँ को धर्म है।

काजी—

मैं तो मारे खौफ के छिप गया था। मैंने तो आज अपना आबोदाना खत्म ही समझ लिया था। मगर अब आपके इस गुल-वदन पर हँसी देखकर मेरी जान में जान आ गई है।

सिपाही रहीम—

आपकी ही क्यूँ सरकार! हमारी भी जान लौट आई और जात भी। हम तो मारे खौफ के आधे मियाँ और आधे हिन्दू बने हुये इनके ही साथ नाचने लगे थे।

महाप्रभु—

काजी साहब! आज तो मैं आपको अतिथि हूँ।

काजी—

यह आपकी इनायत और मेरी खुशकिस्मत। मगर मैं आपको अपना महज एक मेहमान ही नहीं समझता। आपको तो मैं अपना (रुककर) अपना भान्जा भी समझता हूँ। आपके नाना नीलाम्बर चक्रवर्ती जी को मैं चाचा जान कहा करता था। और यह तो आप बखूबी जानते ही होंगे कि गाँव का मुँहबोला नाता-रिश्ता भी बड़ा जबर्दस्त होता है—खून के रिश्ते से कम नहीं। और.....लिहाजा......(अटकता हुआ) लिहाजा भान्जे का गुस्सा मामा बर्दाश्त कर लेता है और-और मामा का कसूर भान्जा साहिब भी नजर-अन्दाज कर दिया करते हैं।

श्रीवास—

(आहिस्ते से अद्वैत प्रति) आचार्य जी! देखी काजी की युक्ति अपने अपराध सों बचवे की। मामा-भान्जे को सम्बन्ध खोज निकार्यो! बड़ो चालाक है।

अद्वैत—

मामाजी को पतो नहीं है कि यह भान्जो वही है जाने कंस मामा मार्यौ हो। यह तो नित्यानन्द प्रभु ने भान्जो शान्त कर दियौ नहीं तो आज यहाँ हू कंस-वध-लीला है जाती।

श्रीवास—

काजी मामा के बड़े भाग्य है जो निताई प्रभु की दयादृष्टि है गई। यासों गौरसुन्दर की भी है गई जानौ।

महाप्रभु—

मामा साहब! मेरी कछु जिज्ञासा है।

काजी—

हुक्म फरमाइये—क्या जिज्ञासा है।

महाप्रभु—

आप गाय का दूध पीओ हो कै नहीं?

काजी—

क्यूँ नहीं। खूब पीते हैं।

महाप्रभु—

और बैल खेत जोतकर जो अनाज पैदा करै हैं वा अनाज के बिना तो आप जी भी नहीं सकौ हो।

काजी—

इसमें शक ही क्या!

महाप्रभु—

तो फिर!

गाना (पद)—

पिओ दूध जाको सो माता तिहारी
वरद अन्नदाता पिता है तिहारो।
पितु मातुहिं मारि मारि कै खाओ
बताओ यह कौन-सो धर्म तिहारो।।

काजी—

वेद पुरान जैसे शास्त्र तिहारे
शरियत-कुरान वैसे शास्तर हमारे।

लिख्यो वेद में जैसे गोवध तिहारे
कुरान में तैसे लिख्यो है हमारे।।

महाप्रभु—

नहीं वेद में गोवध-आज्ञा कहीं भी
सब ठौर केवल निषेध ही है भारी।

काजी—

'गोमेध' यज्ञ तो वेदहू करावे, फिर
'गोवध नहीं' बात झूँठी तिहारी।।

महाप्रभु—

वह तो 'जरद् गव' (बूढ़ी गाय) की बात कही है
जो गोमेध यज्ञ बिना कहीं नहीं है।
बध करकै बूढ़ी सी गाय को तत्छन
बना देते तरुनी यह अचरज सही है।
जरा देह लैकै अजर देह दैनो
यह गोवध नहीं गौ की सेवा है भारी।।
यह शक्ति हुती तब, अब शक्ति नहीं है
यह गोमेध तासों कलि में नकारी।।
(परन्तु काजी साहब! मुसलमान तो)
जिवा तुम सकौ ना, बस मारौ ही मारौ
जहन्नुम में जाओगे, नहीं है रिहाई।
अंग में गौ माँ के रोम हैं उतने
हजार वरस नर्क भोगोगे जाई।।

समाज (दोहा)—

बन्यौ न उत्तर देत कछु, काजी रह्यौ सिर नाई।
पुनि कछु वचन रचन करि, दई कुरान दुहाई।।

काजी—

निमाई पण्डित! आप अपने वेद शास्तर का हवाला दे रहे हैं। मुमकिन हो कि यह बिल्कुल सही हो। मगर हम मुसलमान तो अपने कुरान शरीफ के पाक हुक्म के ही पाबन्द हैं।

महाप्रभु—

अस्तु! छोड़ो या चर्चा कूँ। अब आपसों मेरी एक दूसरी जिज्ञासा है।

काजी—

हुक्म फरमाइये। माकूल जवाब देने की कोशिश करूँगा।

महाप्रभु—

आप मुसलमान हमारे धर्म के विरोधी हैं और आपके नगर में हरि-नाम-संकीर्तन को इतनो कोलाहल होय है तो अब आप रोकौ क्यूँ नहीं कारण कहा है?

काजी—

रोकने की कोशिश तो पूरी की थी मेरे सिपाहियों ने मगर एक आग की लपट ने उनकी दाढ़ी मूँछ सब जला डालीं। तबसे सिपाहियों ने रोकना छोड़ दिया।

सिपाही रहीम—

काजी साहब! मैंने एक रोज मजाक में हिन्दुओं से कह दिया कि तुम तो बड़े सस्ते बन जाते हो हरिदास, कृष्णदास, रामदास। बस नाम रख लिया और हो गये वैष्णव, लगे चिल्लाने हरिबोल हरिबोल! इस मजाक का यह नतीजा हुआ कि यह हरिनाम मेरी जवान पर सवार हो गया, उतरता ही नहीं बात में जबान से खुद-ब-खुद निकल ही पड़ता है।

सिपाही अब्दुल—

यही किस्सा मेरा भी है सरकार! मैं इन लोगों से कहता था कि तुम 'हरे कृष्ण' कह-कहकर चीखते क्यों हो मगर अब मैं खुद ही चीखे बिना रह ही नहीं सकता। न जाने ये हिन्दु लोग क्या मन्तर जानते हैं कि हरे कृष्ण नाम जवान पर चिपका देते हैं। अब काजी साहब! किसी तरकीब से यह हरे कृष्ण नाम हमारी जबान पर से उतराइये, वर्ना आप के मौलवी-मुल्ला हमको काफिर करार कर देंगे और हमारी गर्दन उतार लेंगे।

सिपाही रहीम—

काजी साहब! हम रहेंगे तो मुसलमान ही, मगर इतनी इनायत, इतनी रियायत बख्शी जाय कि हमारा हरे कृष्ण हरे राम कहना कुफ्र न माना जाय।

महाप्रभु—

(मुस्कराते हुये) मामा साहब! रोकिये न इनकूँ! ये आपके ही रूबरू हरे कृष्ण कह रहे हैं।

काजी—

हरे कृष्ण! मैं तो मैं, कोई भी इन्सानी ताकत रोक नहीं सकता। रोकने की कोशिश तो मैंने भी की थी मगर सबके रूबरू कैसे कहूँ। सिर्फ आपसे ही अकेले में कहना चाहता हूँ।

महाप्रभु—

ये सब अपने ही जन हैं काजी साहब! इनके सामने आप बेखटके सब कछु कह सकैं हैं।

काजी—

तो यह देखिये (सीना दिखलाते हुये) यह सजा मिली।

महाप्रभु—

(देखते हुये) यह तो कोई नाखून के गहरे चिह्न हैं।

काजी—

यह एक अजीब खौफनाक शेर के पंजों के निशान हैं ओफ्! बड़ा हैरत अंगेज जानवर था। सर तो शेर का और धड़ इन्सान का! वह खूँख्वार चेहरा! वह लाल-लाल आँखे जलती मसालें जैसी! उसकी याद से ही कलेजा काँप उठता है! ओफ्!

महाप्रभु—

परन्तु ऐसो वह शेर आयो कहाँ ते? खोल कै तो कहौ।

काजी—

क्या बयान करूँ! रात का बख्त। पलंग पर मैं चित् सोया पड़ा था! यकबयक वह कहीं से टपक पड़ा और सवार हो गया मेरे सीने के ऊपर! खून सूख गया मेरा। आँखें बन्द हो गईं। एक पंजे से उसने मेरा गला दबाया। दूसरा पंजा सीने पर रखा और बोला! बिल्कुल इन्सान की आवाज में बोला! दाँत पीसते हुये दहाड़ा, 'तूने मेरे खोल करताल तोड़े हैं, मैं तेरी हड्डी-पसलियों को तोड़े देता हूँ! तेरा जिगर निकाले लेता हूँ'। या अल्लाह!

महाप्रभु—

शुक्र है! आपके अल्लाह ने बचा तो दिया आपको।

काजी—

बचाया कहाँ, उसी ने छोड़ दिया। मैं रोया, गिड़गिड़ाया, तौबा की तो बख्श दी जान। सूरत खूंख्वार पर दिल मेहरबान! जाते-जाते यह आगाह कर गया कि आइन्दा तूने ऐसी हरकत की तो मय खानदान तेरा नाम निशाँ मिटा दूँगा। इतना कहकर न जाने कहाँ गुम हो गया। जान बची, लाखों पाये। तौबा तौबा! मेरे मौला! लाख-लाख शुक्रिया! आज तक मैंने यह बात पेट में ही रखी थी लेकिन आज आपने बाहर निकलवा ही ली।

महाप्रभु—

मामाजी! वही तो हमारे हिन्दुओं के नरसिंह भगवान् हैं। वे ऐसे ही हैं जैसे आपने कही—मूरत में, सूरत में और सीरत में भी—दुष्टन के लिये अति भयानक एवं भक्तन के लिये अति दयालु! वे ही हमारे नारायण हरि राम कृष्ण हैं। उनके अनेकन नाम और अनेकन रूप है।

काजी—

खुल गया राज खुल गया! वे ही हैं नारायण, राम कृष्ण जिनका कीर्तन आप लोग करते हैं! क्यों?

महाप्रभु—

ठीक समझ गये, काजी साहब! बिल्कुल ठीक!

काजी—

तभी तो वे अपने बन्दों के मददगार बनकर आये और मेरी मरम्मत कर गये।

रहीम—

और हमारी दाढ़ी-मूँछ जला गये आग बन कर!

काजी—

अहा! वे ही हरि कृष्ण नारायण हैं। वाह वाह वाह!

समाज (चौपाई) —

नाम उच्चारण प्रभु मन भाये। वरदहस्त गौर परसाये।।

महाप्रभु—

(काजी के कन्धे पर हाथ रख)

धन्य आप बड़भागी मामा। नारायण हरि बोलत नामा।।
नाम एकहू जो कोई लेवै। जनम जनम के पाप ही धोवै।।
धोखे हू जो कृष्ण उचारे। लागत मोहिं सों प्रान पियारे।।
तुम तो तीन बार हरि गाये। कृष्ण नारायण नाम सुनाये।।
भई कृपा अब प्रभु मन भाये। कृपा बिना मुख नाम न आये।।

समाज (चौपाई) —

परस पाय काजी हरषायो। अंग पुलक आनन्द उर छायो।।
प्रभु पद पंकज गहि सिर नायो। नैंनन जलभरि वचन सुनायौ

काजी—

ऐ मेरे मालिक! मैं आज से आपका गुलाम हूँ। आपके पाक कदमों का पनाह मुझे भी मिल जाय।

गजल—

अहवाल इस यवन का सुन लेना गौर प्यारे।
बाहर से दूर हूँ मैं, भीतर से तेरा प्यारे।।१।।
मैंने सताया तुझको, तूने बचाया मुझको।
मैंने छिपाया मुख को, तूने दिखाया प्यारे।।२।।
मैंने भुलाया तुझको, तूने बुलाया मुझको।
आया तू मेरे घर को, छाती से लगाया प्यारे।।३।।
करतूत यह हमारी, रहमत भी यह तिहारी।
पलड़ा है किसका भारी, तू ही बतादे प्यारे।।४।।
ऐ दर के मेरे मेहमाँ, गाफिल के ऐ निगहवाँ।
यह दीन दुनियाँ कुर्बां, तुझ पर हैं 'प्रेम' प्यारे।।५।।

महाप्रभु—

धन्य है मामाजी! तुम्हारी सरलता एवं दीनता कूँ। सरल व दीन पर ही प्रभु की कृपा होय है। अतएव आपके ऊपर श्रीकृष्ण की कृपा भई है। आप बड़े ही भाग्यवान पुण्यवान हो। अब मेरी एक प्रार्थना है।

काजी—

प्रार्थना नहीं हुक्म फरमाइये। जी-जान से तामिल करूँगा।

महाप्रभु—

प्रार्थना यह है कि आज सों नगर में नाम-संकीर्तन में काहू प्रकार की वाधा न होने पावै।

काजी—

बेशक ऐसा ही होगा। मैं ही नहीं मेरी औलाद, मेरे खानदान में से भी कोई कभी किसी किस्म का दखल नहीं देगा। मैं यह हल्फीया इकरारनामा लिखे देता हूँ। आप भी ऐसी दुआ दें कि मेरे खानदान के तमाम लोग आपके संकीर्तन के ताबेदार बन्दे बन जायँ।

महाप्रभु—

ऐसा ही होगा मामाजी! अनेक धन्यवाद आपकूँ। आपके ऊपर श्रीकृष्ण की पूरी कृपा है। अब रात बहुत बीत चुकी है। आप आराम करें। हमें आज्ञा देवैं।

काजी—

गंगाजी तक आपकी मण्डली के साथ चलने की इस बन्दे को भी इजाजत बख्शी जाय।

महाप्रभु—

जैसी आपकी इच्छा! चलिये हमारे संग।

संकीर्तन मण्डली धुन—

जय राम कृष्ण गोविन्द गोपाल।
मधुसूदन मुकुन्द दीनदयाल।। (प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

नाचत गावत गौर हरी, आये श्रीधर पास।
महादरिद्र इक विप्र जो, साँचो श्रीहरिदास।।
(पर्दा खुलता है। जीर्ण शीर्ण वस्त्र युत श्रीधर कीर्तनरत)
टूटी मढ़ैया बेचै सागा। हरि गुन गान नाम मन पागा।।
असन वसन तन चिन्ता नाहीं। धन संतोष प्रेम मनमाहीं।।

छन्द—

जीरण इक गडुआ लोहा को, धर्यौ जु ताके द्वारे है।
टाँके दस दस ठौरन लागे, चोर न दृष्टि डारे है।।
पात एक सोई घर श्रीधर, पात्र न दूजो औरे है।
आय धाय उठाय जु पीये, जूँठो जल हरि गौरे है।।

महाप्रभु—

(गडुआ को उठा मुँह से लगा लेते हैं)

श्रीधर—

हाय हाय! मर गयो! मैं तो मर गयो! मेरो जूँठो जल आप ने पी लियो! मेरे सिर पै तो भारी पाप चढ़ गयो।

महाप्रभु—

पाप नहीं पुण्य श्रीधर! भारी पुण्य! संकीर्तन में नाच गाय करकै मोकूँ बड़ी प्यास लगी ही, सो तेरे जल सों शान्त है गई। मेरी देहहू पवित्र है गई। शास्त्र कहै हैं कि—

प्रार्थयेद् वैष्णवस्यान्नं प्रयत्नेन विचक्षणाः।
सर्वपाप विशुद्ध्यार्थ, तद्भावे जलं पिवेत्।।
सर्व पाप नसि जात हैं, पाये वैष्णव अन्न।
मिलै नहीं जो अन्न तो, जल पी होवै धन्य।।

श्रीधर—

रहन देओ अपने शास्तर-फास्तरन कूँ। तुमने तो आज मोकूँ जीते जी ही मार डार्‌यौ! अरे काहू ने इनको हाथहू तो नहीं पकर्‌यौ। सबन ने मिलकै मोकूँ मार डार्‌यौ! हाय हाय!

महाप्रभु—

मेरे प्यारे श्रीधर! तू व्यर्थ ही इतनो दु:ख कर रह्यौ है—

गाना-पद—

यह गडुआ लोहे का नहीं, यह सोने से भी बढ़कर है।
बाहर से रंग ही काला है, भीतर से रस का सरवर है।।
क्या वे चावल के कन ही थे, हरि ने जिनको चबाया था।
उस कन्‌कन्‌में अमृतघन था, यह जानते श्रीरुक्मिनीवर हैं।।

वे रूखे सूखे बेर ही थे, इस दुनिया की तो आँखों में।
पर कितनारस था भरा हुआ, यह जानते श्रीसीतावर हैं।।
भक्तोंकी चीज न कोई बुरी, जो कुछभी है सब भलाभला।
उनका तो विष भी अमृत है, लोहा पारस से बढ़कर है।।
जो रस 'प्रेम' आज मिला तेरे, इस गडुआ जल में मुझे।
वह गंगा जमुनामें न मिला, न्हाया तनको मलमलकर है।।

भक्त मण्डली—

दीनबन्धु भगवान् की जय हो! भक्तभाव रस लोभी भगवान् की जय हो! हरिबोल!

श्रीवास—

भैयाओ! याको नाम है दीनवत्सलता, गरीबनिवाजी! हमारे नगर में—

धनी मानी कुलिन बहु, नदिया नगर मझार।
पाँवडे पटहिं बिछामते, करते बहु सत्कार।।
सोना चाँदी लुटामते, देते सर्वस वार।
आरती पुष्प वारते, करते जै जैकार।।

परन्तु हमारे गौर प्रभु उन धनी मानिन के घर नहीं पधारे उनकी—

आदर पूजा खाटी तजी, खाई मीठी गार।
पीयो जूँठो जल प्रभु, गरीबन के सरकार।।

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीताजी में अपने श्रीमुख सों जो वचन कहे वह आज यहाँ प्रत्यक्ष करिकै दिखाय दियो।

सवैया—

दीन अकिंचन जन श्रीधर के, द्वार धर्यो जूठो जल पातर।
अमृत मान हरी भगवान, कियो ताहि पान दियो बड़ आदर।।
साग के पात पचौली के खाये, फूल पै फूल कै तार्यौ गजेन्दर।
बेर के फल शबरीके घर खाये, जल तो पाये आय श्रीधर घर।।

बोलो दीनबन्धु गौरहरि की जय
दयासिन्धु गौरहरि की जय

संकीर्तन—

हरिबोल हरिबोल, हरिबोल हरिबोल

इति काजी-उद्धार-लीला सम्पूर्ण।

☙❖❧

भक्त-भगवान्-सम्बन्ध

(चार फुटकर प्रसंग—१. कीर्तन में तपस्वी २. अद्वैतपद-रज-ग्रहण ३. श्रीवास पर कृपा ४. मुरारि गुप्त पर कृपा)

(यह लीला संकीर्तन-मध्य ही से आरम्भ होगी)

महाप्रभु आदि भक्त मण्डली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज (चौपाई)—

सर्वज्ञ शिरोमणि विश्वम्भर हरि।
कीर्तन करत वदत जु रहस भरि।।

महाप्रभु—

(संकीर्तन करते-करते रुक कर)

मम उर प्रेम सूख गयो कैसे। कीर्तन रस उमगत नहिं तैसे।।
भक्ति विमुख जन निश्चय कोई। कीर्तन मंडल मध्य होई।।
दूर करहू देखि श्रीवास। होय न संकीर्तन उपहासा।।

श्रीवास—

डरि श्रीवास कह्यौ कर जोरी। इहँ न पाखंडी भीतर पौरी।।
है इक ब्रह्मचारी तप भारी। अन्न खाय नहीं, दूधाहारी।।
विनवत रह्यौ वहु मो ढिंग नित्य।
मोहिं दिखरावहु गौरहरी नृत्य।।
जानि श्रद्धालु सज्जन ताहि। आमन दियो घर आंगन माहिं।।

महाप्रभु—

सुनत रिसाय कह्यौ विश्वम्भर। बेगि निकार करहु घर बाहर
होय न पय पीवै ते भक्ति। देखे मम नृत है का शक्ति।।

समाज (दोहा)—

दोउ भुज ऊपर करि प्रभु, अंगुरी सों बतलात।
पयपान करि कबहु मोहिं, बिना प्रेम नहीं पात।।

मीनः स्नानपरः फणि पवनभुङ्, मेषोऽपि पर्णाशनः
शश्वद् भ्राम्यति चक्रि गौरपि, बको ध्याने सदा तिष्ठति।
गर्त्ते तिष्ठति मूषिकोऽपि, गहने सिंहः सदा वर्त्तत-
एतेषां फलमस्ति हन्ततपसा, सद्भाव सिद्धिं विना।।

सवैया—

मीन नहावत जल में सदा अरु सर्प पवन पीकै रह जावै।
घास चरै बकरी नित ही अरु कोल्हू में घूमत बैल नसावै।
ध्यान में बगुला मगन रहै अरु मूसा बिल में जनम बितावै।
नाहर नित गिरिकन्दरवासी भाव बिना भगवानको पावै।।१
रावन ज्यूँ कपि बानर कब, निज शीशन काटिकै होम चढ़ाये।
भौमासुर ज्यूँ गज गनिका ने, कौन तपस्या करि हरि पाये।
भस्मासुर ज्यूँ व्रजगोपिन ने, कौन महा वरदान लहाये।
तक करि करि असुर मरै सब, भाव बिना भगवान को पाये।।२
(अतएव)
तुम्हरे साधुहिं देहु निकारी। इहाँ नहीं तापस अधिकारी।।
भिक्तमान चंडालहु मेरो। भक्ति विमुख मुख सिद्ध न हेरौं।।

समाज (दोहा)—

हाथ गहि व्रह्मचारी को, भक्तन दिये निकार।
चले जात मगमाँहि सो, मन महँ करत विचार।।

ब्रह्मचारी (सोरठा)—

भलो कियौ प्रभु गौर, दियौ फल अहंकार को।
बनि साधु हौं चोर, घुस्यौ रह्यौ बाहर कियौ।।
तप को गर्व रह्यौ उर भारी। हर्यौ ताहि हरि गर्व आहारी।।
पुनि वाधा कीर्तन महँ डारी। हरि हरिजन मैं कीन्ह दुखारी।।
अब याको एकहि प्रतिकारा। भजिहौं गौर तजि धर्म विकारी।।
कियो करायो सब गयो, जब आयो अभिमान।
भोजन के भंडार में, मल के छींट समान।।
यासों अब या दुष्ट अभिमान कूँ त्याग कै—
गौर चरन उर अन्तर धरिहौं। सेय प्रेम प्रसादहिं लहिहौं।।
(इस प्रकार विचार करता हुआ जाता है)

महाप्रभु—

श्रीवास जी! ब्रह्मचारी कूँ बुलाय लाओ।

समाज—

तबहिं भक्त एक तहँ धायो। सुमिरत हैं प्रभु वचन सुनायो।।
इष्ट सिद्धि जानि द्विजराई। धाय पर्यौ प्रभु चरनन आई।।

महाप्रभु—

प्रभु कहत उठो द्विजराई। तुम्हरी दीनता मो मन भाई।।
नाहिं तुम्हार तनक अपराधु। हौं परखत रह्यौ साधु असाधु।।
तुव उर भाव गयौ मैं जानी। भये साधु जब सेवा ठानी।।
किये पय पान न होवै साधु। भाव विना तप मूल उपाधु।।
(शुद्ध भाव के बिना तपस्या उपाधि की जड़ बन जाय है)

आराधिनो यदि हरिस्तपसा ततः किं,
नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किं,
नान्तर्वहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।

भज्यौ जो हरि कूँ तो तप सों कहा है।
भज्यौ ना हरि कूँ तो तप सों कहा है।
हरि भीतर-बाहर, तो तप सों कहा है।
नहीं भीतर बाहर, तो तप सों कहा है।।

अतएव तुमने जो अपने मन में—

भावभक्ति सों हरिचरन, सेवन को जो विचार।
धार्यौ अपने हृदय महँ, ताको लेहु पुरस्कार।।

समाज (सोरठा)—

दिये आलिंगन गौर, लिये भाव प्राकृत हरी।
उठ्यौ हरि धुनि रौर, भक्त सकल जै जै करी।।

भक्त मण्डली—

हरिबोल! हरिबोल!

समाज (दोहा)—

वर्ष दिवस श्रीवास भवन, संकीर्तन रस रास।
बहु विधि कौतुक चरित तहाँ, कीन्हे गौर प्रकास।।

समय समय के कछु चरित, भक्तन अति सुखदाई।
प्रेम डोर पिरोय इक, वरनौं यथामति गाई।।
(पुनः महाप्रभु-संकीर्तन आरम्भ करते)

महाप्रभु—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज (चौपाई)—

करत कीर्तन गौराराई। भाव विवश रहै मुरझाई।।

महाप्रभु—

(भाव विवश भू-पतन)

अवसर पाय अद्वैत गुसांई। लूटत निधि पद मस्तक लाई।।

अद्वैत—

(महाप्रभु के चरणों को अपने मस्तक से लगाते हुये) आज मेरो दाव पर्‌यौ है। सब दिन को बदलो आज लऊँगो। ये नित्य मोकूँ प्रणाम करैं हैं। आज मैं इनके चरणन कूँ प्रणाम करूँगो, साध भरकै प्रणाम करूँगो।

समाज (चौपाई)—

कबहू नैनन सों पद लावैं। लेपत रज तन नैन बहावैं।।
पुनि तृन लै तन वारना कीनैं।
सिर धरि तृन निरतत सुख लीनै।।
तब प्रभु उठै कछुक सुधि पाई।
हरिबोल हरि धुनि भक्तन गाई।।

महाप्रभु—

(कीर्तन-नृत्य) हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल

समाज (चौपाई)—

निरतत प्रभु आनन्द न पाये। कहत कहा अपराध घटाये।।

महाप्रभु—

भैयाओ! अब तो कीर्तन में उल्लास नहीं होय है, आनन्द नहीं आवै है। कहा मोते कोई अपराध बन पर्यो अथवा तो काहू ने मेरे पाँव की धूर तो नहीं चुराय लीनी? बताओ वा चोर कूँ बताओ। भय मत करौ।

समाज (चौपाई)—

भक्त सकल रहे मौन धराई। नाम अद्वैत लियो ना जाई।।
तब अद्वैत जोरि कर आये। कहत सत्य पै वचन बनाये।।

अद्वैत—

हे प्रभो यदि कोई भिखारी—

याचत याचत पावै ना, भूखो अन्न भिखारि।
(और दाता सूम बन जाय तो)
क्षुधा वश चोरी करै, तो क्षमहु दोष मुरारि।।
दै आदर सम्मान, मोहिं बड़ो करि पूजहू तुम।
तरसत पदरज पान, तासों छल करि लियो प्रभो।।
कोप करहु जिन गौर गोपाला। करिहौं ना पुनि छमहु दयाला

समाज (चौपाई)—

निज उर व्यथा भाखी गुसांई। बोले रिसाय कौतुकी सांई।।
छल करि महिमा अद्वैत गावैं। दोष रोष मिस गुणहिं सुनावैं।।

महाप्रभु—

(प्रणय कोपयुक्त) अच्छो तो तुमही हो चोर! समस्त संसार को संहार करकै हू तुम्हारी तृप्ति नहीं होय है। सो तुम मोहि कूँ मारकै सुखी होन चाहौ हो। तुम बड़े निर्दयी हो।

बंगला (चै० भा०)—

अनन्त ब्रह्माण्डे जतो आछे भक्तियोग।
सकल तोमारे कृष्ण दिला उपभोग।।
तथापिह तुमि चुरी कोरो क्षुद्रस्थाने।
क्षुद्र संहारिते नहिं बासो मने।।

अनन्त ब्रह्माण्डन में जितनी भक्ति है सो तो सब तुमकूँ श्रीकृष्ण ने दै ही दीनी है तौहू तुम मो जैसे गरीबन की चोरी करौ हो गरीब कूँ लूटवे में तुमकूँ नेकहु दया नहीं आवै है। तुम चोरन के हू महाचोर हो—महा डकैत हो! तुमने ही मेरो प्रेम सुख चुराय लियो है। तो अब मैं हू तुमकूँ लूट लऊँ हूँ।

समाज (चौपाई) —

अस कहि महाबली निमाई। पकरि पछारे वृद्ध गुसांई।।
गहि पग लिये दोउ वरजोरी। घिसत भाल पदरज ज्यूँ रोरी।।
हरिजन के साहू हरी, हरि के हरिजन साहू।
कबहु नाव में गाड़ी तो, कबहु गाड़ी में नाऊ।।
त्राहि त्राहि अद्वैत पुकारैं। हँसि हँसि प्रभु वैन उचारैं।।

महाप्रभु—

(अद्वैत-वक्ष पर बैठे हुये)

ब्याज सहित लैहौं मूल चुकाई। फल चोरी को दऊँ चखाई।।

अद्वैत—

कहत अद्वैत तुम हो विश्वम्भर।
करि कहा सकौं तिहारी सरवर।।
राखहु चाहे मारहु मोहिं। सर्व समर्थ दोष नहिं तुमहिं।।
तदपि नाथ तुमही जो मारौ। हम दासन को कहा सहारो।।

समाज (दोहा) —

प्रीति रीति के वचन सुनि, रीझे गौर दयाल।
भक्तिधर्म को गूढ़ तत्त्व, प्रगटत जन प्रतिपाल।।

महाप्रभु—

(अद्वैत को छोड़ खड़े हो)

खमाज या झिंझोटी ४ ताल—

तुम भक्तदेव महादेव, भक्ति के भंडारी।। टेक।।
मैं आधीन तुम्हरे ठाऊँ, बेचौ तहाँ बिक मैं जाऊँ।
टेर तुम्हरी सुनत आऊँ, साँचै तुम पुजारी।।
तिहारे पद पद्म धूरि, अंगन प्रति लेप करि।
पावै तब भक्ति हरि, भक्ति के दातारी।।
सुनहु सब भक्त आज, सेवहु शिव पद पराग।
साखी मैं भरौं साँचि, आनन्द प्रेम दातारी।।

भक्त मण्डली—

हरिबोल (दौड़-दौड़कर सब अद्वैत के चरण पकड़ लेते हैं)

समाज (सोरठा)—

हरिबोल कहि कहि जन, धाय अद्वैत पद गहे।
हँसत निताई मगन, भलो दंड मिल्यौ चोर कूँ।।

निताई—

(हँसते हुये) हा हा हा! वेश होये छे! केमन गुसांई! चुरि कोरते गिये निजेइ धोरा पोड़े छो! लूट लैओ भक्तो! लूट लैओ या चोर डकैत कूँ। नंगो कर देओ, नंगो! कछुई न छोड़नौ।

अद्वैत—

आप जो नंगे ठहरे, सो मोकूँ हू नंगो बनामनो चाहौ हो क्यों यही बात है न? अच्छो मेरो हू दाव परैगो कबहू!

महाप्रभु—

श्रीवास जी, कीर्तन आरम्भ करौ

श्रीवास—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज आसावरी-दादरा—

कीर्तन में रास होत, अद्भुत कछु गाऊँ।
गौर श्याम इक तन ह्वै, विलसत वलि जाऊँ।।

महाप्रभु भक्त मंडली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०। हरे राम हरे राम०।।

समाज—

निरतत प्रभु गति सुधंग, हाव भाव साजै।
ऊर्ध्ववाहु कबहू त्रिभंग, विविध रंग छाजै।।

महाप्रभु भक्त मंडली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण०।।

समाज—

नव नव भाव रस तरंग, विविध सुमन फूलैं।
घेरि घेरि भक्त भृंग, चहुँ दिशि झुकि झूलैं।।

महाप्रभु भक्त मण्डली—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण० ।।

समाज—

हरे कृष्ण गान तान, प्रेम रस प्रकाशी।
आनन्द 'प्रेम' हिय बसौ, कीर्तन सुखराशी।।

करि हुँकार निज रूप उघारे। गरुड़ गरुड़ प्रभु गौर पुकारे।।
गुप्त मुरारि दौरि तहँ आयो। गरुड़ आवेश भाव तन छायो।।
गरुड़ गरुड़ टेरत विश्वम्भर। कहत मुरारि गरुड़ मैं किंकर।।

मुरारि—

विराजहु नाथ काँधे ऊपर। धाऊँ कहौ को लोक लोकान्तर।।

समाज—

काँधे मुरारी चढ़ै मुरारी। जय जय धुनि उचरत नर नारी।।

भक्त मंडली—

जय जय मुरारि जय विश्वम्भर।
जय जय जन सुखकर गौरसुन्दर।।

समाज—

उछरत गरजत मत्त मुरारी। घर आंगन सुधि सकल विसारी।।
हरि हरि सकल मुखन पै आवै। दया गौर की कही न जावै।।
वाह्य पाय उतरै विश्वम्भर। परै धरनि रही चेतन तन कर।।

महाप्रभु—

(मुरारि के कन्धे पर से भूमि पर पतन)

भक्त चहुँ ओर बैठि जु गावैं। 'हरि बोल हरि' नाम सुनावैं।।
कीर्तन करत बीते कछु काला। तब सचेत भये शची दुलाला।।
सहज भाव मनुज प्रगटाये। कीर्तन शेष भवन निज गाये।।

(महाप्रभु और भक्तमण्डली का प्रस्थान)

गुप्त मुरारी गौर परौसी। पंडित भक्त श्रीराम उपासी।।
गौरप्रिय अतिवल तनुधारी। कपिपति खगपति अंश मुरारी।।
विश्वम्भर जिन काँध चढ़ाये। गरुड़ भाव आवेश जनाये।।

भावमत्त कृपामत्त पुनि, आनन्द उर न समात।
गयो मुरारि गेह निज, गौर ही गौर लखात।।
निज गृह जेंमत जाय मुरारि। परसत अन्न थार सती नारि।।
(पर्दा खुलता है। भावविभोर मुरारि भोजन के लिये बैठा है। स्त्री भोजन परोस रही हैं)
हँसत अट्टहास करि भारी। इत उत तकत बोल न उचारी।।
कहति तिय नाथ अब जेंमहु। काहे कूँ इत उत तुम तकहु।।
करि अबेर कीर्तन ते आये। मेटहु क्षुधा तन श्रम अति पाये।।
लै लै गरसा अन्न को, कहत खावहु खाव।
गिरि गिरि जात सो भूमि पै, अचरज तिय डर पाव।।
चतुर पतिव्रता नारि, लखि लखि पति मतिगति पलटि।।
समझ कियौ निरधारि, पुनि पुनि परसत अन्नहिं।।
वह तो परसै पात पै, वह डारै आकास।
खाओ खाओ कहि कहि, करै मुरारी हास।।
तब सती कीन्हो एक उपायो। कृष्ण कृष्ण पुनि पुनि मुख गायो
तब सचेत कछु भोजन पायो। स्वस्थ जानि तिय धीरज आयो
प्रभु चरित सो बूझन लागी। बोले ना मुरारि मति पागी।।
अँचवन दै सो शयन करायो। रहै पौढ़ि सुख भाव भरायो।।
(मुरारि लेट जाता है। पर्दा)
इत मुरारि सुख सपने माँही। उत मुरारि इक लीला ठानहिं।।
उठै भोर अति प्रभु विश्वम्भर। धाये परौसी मुरारि के घर।।
(पर्दा खुलता है। मुरारि सो रहा है। सिरहाने जल का लोटा)
टेरि मुरारि मुरारि जगायो। दौरि मुरारि बाहर धायो।।
लखि प्रभु चरनन वन्दन कीन्हो। घर पधराय सुआसन दीन्हौ।।

मुरारि—

कारन कौन भोर पग धारे। काहे न दासहिं गृह हुँकारे।।

महाप्रभु—

अन्तर उदर अजीरण भारी। करहु वेग उपचार मुरारी।।

मुरारि—

कहहु नाथ अजीरण कारण। बात न ह्वै है कछु साधारण।।
रोग ब्याधि तन तुम्हारे नाँहि। जन्म अवधि हौं लखौं गुसांई।।
आज कहा अचरज यह बोलो। भोरहिं भोर औषध कूँ डोलो।।

महाप्रभु (दोहा)—

खाओ खाओ कहि जू तैं, दियौ ढेर खवाय।
तोकूँ तो नहीं सुध कछु, बूझ पत्नी ढिंग जाय।।

मुरारि—

इतनो खाय काहे जु लीन्हो। काहे कूँ नहिं बारन कीन्हो।।

महाप्रभु (दोहा)—

हट्यौ नहीं तू दैवे सों, मैं लैतो कित नाय।
दियौ तैंने प्रेम सों, तो लियौ मैंने खाय।।

मुरारि—

तो अब मैं कहा उपाय करूँ। आज्ञा करौ।

महाप्रभु (दोहा)—

जल पीये घटि जात है, अन्न अजीरन बल।
अजीरन तेरे अन्न सों, औषाध तेरोइ जल।।
(झट से मुरारि के लोटे को उठाकर जल पी जाते हैं)

समाज (दोहा)—

लै मुरारि जल पात्र प्रभु, करत भक्त जलपान।
भक्ति अंग साधन करि, दरसावत परमान।।

मुरारि—

(मर्माहत हो) हाय हाय! मेरो जूँठो जल मत पीओ प्रभो! यह कहा उलटी रीति है आपकी। धर दैओ याकूँ। मैं आपके चरन छीऊँ। मोकूँ मारौ मत।

पद—

हीन मलीन जाति जु मेरी, कहाँ तुम गौर मुरारी हो।
जूँठो जल मम पान किये कित, यह अनरीति तिहारी हो।

महाप्रभु—

अनरीति नहीं नयीरीति नहीं, यह रीति पुरानी हमारी हो।
जातिपाँति नहिं देहकी प्यारी, प्रीतिकी जाति पियारी हो।।
भक्तन तन महँ वास करैं हरि, रास करैं सुखकारी हो।
गास करैं भक्तन रसना सों, भक्त के भक्त विहारी हो।।
भक्त अधरामृत अति ही दुर्लभ, पावैं कोई अधिकारी हो।।
ए महा महाप्रसाद कहावत, शास्त्र 'प्रेम' निरधारी हो।।

सुनो मुरारि! भगवान् श्रीकृष्ण को अधरामृत तो महा-प्रसाद कहावै है और ता महाप्रसाद में जब भक्त को अधरामृत मिल जाय है तो वह महामहाप्रसाद बन जाय है। ऐसी सुदुर्लभ वस्तु मोकूँ आज प्राप्त भई सो मेरे उदर को अजीर्ण दूर है गयो, व्यथा हू मिट गयी। यासों अब मैं जाऊँ हूँ। (प्रस्थान)

मुरारि—

(प्रणाम पूर्वक) धन्य है लीलामय! आपके कौतुक आपही जानौ।

समाज (सोरठा)—

पान करत सो जल, मुरारि मुरारि प्रसादहिं।
नाचत प्रेम विकल, कहत पावन पतित गौर।।

मुरारि—

(लोटे का जल पीता और नाचता-गाता है)

पद—

जय पावन पतित गौर, हरि बोल हरि बोल।
जय भावरसामृत गौर, हरि बोल हरि बोल।।१।।
जय जय जितरोष गौर, जय आशुतोष गौर।
जय करुरक्तकोष गौर, हरि बोल हरि बोल।।२।।
जय नाम प्रदाता गौर, जय भक्ति विधाता गौर।
जय जनसुख दाता गौर, हरि बोल हरि बोल।।३।।
जय पतित-आधारी गौर, जय दीनहितकारी गौर।
जय प्रेम-अवतारी गौर, हरि बोल हरि बोल।।४।।

(पटाक्षेप)

श्रीवास का योग क्षेम-वहन

समाज—

नाना अंग हरि-भक्ति के, गौर करत प्रकाश।
करि दरसावहिं आप कोई, कोई परिकर पास।।
चाह नहीं चिन्ता नहीं, शंका भय नहिं लेश।
ऐसे भक्त अनन्य की, चिन्ता करैं परमेश।।
ऐसे भक्त-भगवान को, मधुर चरित सुनौ एक।
दृढ़ विश्वास श्रीवास को, उत विश्वम्भर टेक।।

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, नित्यानन्द, अद्वैत, श्रीवासादि बैठे हैं)

एक दिवस श्रीवास गृह, बैठे गौराराय।
भक्त मंडली मध्य प्रभु, कृष्ण-कथा सुख पाय।।

महाप्रभु—

श्रीवास जी! मैं आप सों एक बात बूझनो चाहूँ हूँ।

श्रीवास—

तो संकोच काहे बात को है प्रभो! आज्ञा करौ।

महाप्रभु—

साँची-साँची बतामनौ।

श्रीवास—

शंका व्यर्थ है भगवन्! आप सों दुराव-छिपाव कैसो?

महाप्रभु—

श्रीवास जी! आप कहीं आओ जाओ नहीं हो फिर आपके गृहस्थ को निर्वाह कैसे होय है?

श्रीवास—

कहीं आयवे-जायवे को चित्त ही नहीं करै है प्रभो!

महाप्रभु—

परिवार तो आपको बहुत बड़ो है!

श्रीवास—

जाके भाग्य में जो होयगो सो तो मिल ही जायगो। मैं व्यर्थ में चिन्ता काहे को करूँ और मेरी चिन्ता सों होवै ही कहा है। सबके अपने-अपने भाग्य हैं।

महाप्रभु—

तो फिर संसार-त्याग करकै संन्यासी क्यूँ न बन जाओ।

श्रीवास—

नहीं प्रभो! मोते यह नहीं बनैगो।

महाप्रभु—

संन्यासी हू नहीं बनौगे और भिक्षा करवे काहू के द्वार पै हू नहीं जाओगे तो इतने बड़े परिवार को पालन कैसे होयगो?

श्रीवास—

ऐसे होयगो प्रभो (ताली बजाना) एक-दो-तीन!

महाप्रभु—

(मुस्करा कर) यह तीन ताली कहा?

श्रीवास—

बस यही—एक-दो-तीन!

महाप्रभु—

मैं समयौ नहीं—समझाय देओ।

श्रीवास (दोहा)—

एक दिना और द्वय दिना, तीन दिना उपवास।
चौथे दिनहू ना मिल्यौ, (तौ) गंगागर्भ में वास।।
गंगा गर्भ में वास, बाँध कलसिया गरे में।
डूबैगो श्रीवास, यहै अटल पन दास को।।

महाप्रभु—

(आवेश पूर्वक) कहा मेरो श्रीवास भूखौ रहैगो और डूबैगो?

समाज—

भक्त टेक को सुनत ही, भयौ भगवदावेश।
छलछद्म सब छिन्न भयो, बोलै गरजि परेश।।

महाप्रभु (अड़ाना दोहा)—

लक्ष्मी नांगी रहै भले, भूखे रहै कुबेर।
तुम न दरिद्र होओगे, कहै देत हूँ टेर।।
चिन्ता क्यूँ आहार की, करै जो सेवक मोर।
मैं चिन्ता वाकी करूँ, यहाँ वहाँ सब ठौर।।
रहो बैठ घर ही में तुम, सुखसों पाँव पसार।
बिन माँगे वस्तु सबै, आवै तुम्हरे द्वार।।

श्रीवास! यह तो मेरी सनातन प्रतिज्ञा है कि—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां, ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां, योगक्षेमं वहाम्यहम्।।

श्रीवास—

जय विश्वम्भर देव की जय।

भक्त मण्डली—

भक्तवत्सल भगवान् की जय। हरिबोल!

(पर्दा। श्रीवासादि भक्तजन बाहर निकल गाते हैं)

गजल—

प्रभु की जो बानी है, वही भक्तों का जीवन है।
वही भक्तों का जीवन है, वही बूटी संजीवन है।।
कहा जो ध्रुव से बालक को, तुझे पदवी मैं वह दूँगा।
कि दुनियाँ जान जायगी, क्या भक्तोंका सिंहासन है।।
कहा प्रह्लाद से प्रभु ने, तू ही केवल नहीं प्यारा।
तेरी इक्कीस पीढ़ी तक, तुझी से प्यारा पावन है।।
कहा अर्जुन से दम दम में, जो मुझको याद करते हैं।
मैं अपनी पीठ पर ढोकर, उन्हें पहुँचाता अन-धन है।।
कहा कुबेर पुत्रों ने, बँधे हो खोल दें तुमको।
तो हँसकर बोले नन्दलाला, यह माँका प्रेम बन्धन है।।

कहा जब गोपियों ने कि मिलाओ, 'प्रेम' से आँखें।
तो रोकर पाँव पड़ बोले, यह रिनिया नन्दनन्दन है।।
(गाते-गाते प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

अनन्य निष्ठा राम में, राखै गुप्त मुरारि।
लई परीक्षा गौरहरि, शिक्षा जग हितकारि।।
(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, नित्यानन्द, और मुरारि गुप्त बैठे हैं)

महाप्रभु—

मुरारि! तुम मेरी एक बात मानोगे?

मुरारि—

दास सों ऐसो प्रश्न क्यों प्रभो! दास कूँ तो आज्ञा करौ।

महाप्रभु (हमीर-३ ताल)—

मानहु तात इक बात हमारी।
तुम सेवक रघुनाथ गुसांई, हमरे प्रिय व्रजनाथ विहारी।।
राम कृष्ण स्वरूप न न्यारे, रस लीला तदपि कछु न्यारी।
गौरव मान कान सों ऊपर, व्रजलीला अवधि मनोहारी।।

यद्यपि भगवान् श्रीराम और श्रीकृष्ण स्वरूप सों भिन्न नहीं हैं तथापि उनकी लीला एवं रस में तो कछु भेद है ही। भगवान् श्रीराम स्वयंहू धर्म-मर्यादा के भीतर ही समस्त लीला करैं हैं तथा उनके परिकर हू उनकूँ भगवान् जान करकै मान-मर्यादा के भीतर ही उनसों समस्त व्यवहार करैं हैं मर्यादा के कारण संकोच होय है, संकोच में प्रेम को पूर्ण प्रकाश नहीं होय है पूर्ण प्रकाश के बिना रस को पूर्ण विकास नहीं है तथा पूर्ण रस के बिना पूर्ण मधुरता नहीं आवै है। परन्तु श्रीकृष्ण की व्रजलीला परम स्वतन्त्र लीला है। यामें वेद और लोक-मर्यादा के बन्धन नहीं हैं। व्रज में श्रीकृष्ण कूँ ब्रजवासी भगवान् करके नहीं मानैं हैं। वे तो उनकूँ अपनो पुत्र, सखा और पति करके ही जानैं हैं। यासों उनके परस्पर के व्यवहार में काहू प्रकार को संकोच नहीं है, यासों प्रेम को स्वच्छन्द खेल होय है। वा स्वच्छन्द विहार में प्रेम, रस एवं माधुर्य अपार असीम होय है। याहि कारण सों व्रज की लीला मनोहर ते हू मनोहर है। अतएव तुमहू श्रीकृष्ण लीला रस को आस्वादन करौ। यही हमारी इच्छा है—

पूर्वपद—

हिलिमिलि हम संग भजहु कृष्णहिं, जो रस धाम धामहैं प्रेम खिलारी बेर बेर अवसर नहिं आवै, जीवन लाह अबलैहु मुरारि।

मुरारि (दोहा)—

आज्ञा दई सो शीश लई, देहु शक्ति कृपाल।
मन वच कर्मसों रावरी, आज्ञा सकौं प्रतिपाल।।
(पटाक्षेप)

समाज (दोहा)—

निज गृह जाय मुरारि निसि, धरत कृष्ण को ध्यान।
(पर्दा खुलता है। मुरारि बैठा ध्यान कर रहा है)

मुरारि (श्लोक)—

फुल्लेन्दी वर कान्ति मिन्दु वदनं०

हे मोरमुकुटधारी! हे पीताम्बर वन मालाधारी! हे गो-गोप-गोपी-मनोहारी गोकुलविहारी! मोकूँ हू अपनो दास बनायवे की कृपा करौ। मैं आपको स्मरण करनो चाहूँ हूँ। आप अपनी सहज कृपा सों मेरे हृदय कमल में प्रकाशमान होवैं।

समाज (दोहा)—

निज घर जाय मुरारि निशि, धरत कृष्ण को ध्यान।
ठाड़े लखत श्रीरामहिं, लिये हाथ धनु बान।।

मुरारि—

(ध्यान में श्रीराम के दर्शन कर) अहा धनुषधारी श्रीराम मेरे इष्टदेव! मेरे परमाराध्य! नाथ! क्षमा करौ। मेरी स्थिति पै नेक विचार करौ! मैं भलो-बुरो विचार करवे वारो कौन? मैं तो प्रभु की आज्ञा पालन करवे बैठ्यो हूँ। सो आप मोकूँ श्रीकृष्ण रूप में ही दर्शन दैवे की कृपा करैं।

श्लोक पाठ—

कस्तूरी तिलकं ललाट पटले० इत्यादि

(पुनः श्रीराम जी के दर्शन)

मुरारि—

(ध्यान में दर्शन कर) अहा फिर वही कौशल किशोर रघुकुल सिरमौर मेरे राम के दर्शन! हाय! आज्ञा पालन कैसे करूँ! मन तो राम रघुनाथ के भाव-संस्कार सों ही पूर्ण है। वह तो बुद्धि को विरोधी बन रह्यौ है! अब कैसे श्रीकृष्ण के दर्शन होयँ! अच्छो, एक बेर पुनः श्रीकृष्ण को ध्यान धरूँ।

श्लोक पाठ—

वर्हापीडं नटवर वपुः कर्णयोः० इत्यादि

(पुनः श्रीराम के दर्शन)

अहा! फिर वही नवीन दुर्वादल श्याम मेरे राम! दिनकर कुलकमल श्रीराम! मेरे प्राणाराध्य राम! यह कहा लीला है सर्वेश! यह दया है कै माया? (ठहर कर) ओह समझ गयो। यह मेरी पकड़ नहीं तेरी पकड़ की महिमा है! तेरी पकड़ सों भलो कौन कब छूट सकै है! छूट ही गयौ तो वह पकड़ ही कैसी? और फिर वह बचैगी ही कैसे? राम राम! मेरे नयना-राम! मेरे प्राणजीवनाराम! मेरे हृदय विश्रामधाम राम! या अधम मुरारि के ऊपर इतनी दया! वह तो तुमकूँ छोड़ बैठ्यौ है और तुम वाकूँ छोड़ ही नहीं रहे हौ! तो यह मुरारि हू तुम्हारो तुम्हारो तुम्हारोइ दास है और सदाई रहैगो! राम! मेरे राम!

कीर्तन—

श्रीराम जय राम जय जय राम। (पर्दा)

समाज (दोहा)—

निशि बिताई जप-कीर्तन, प्रात चल्यौ प्रभु पाहिं।
नित्यानन्द श्रीवासहू, बैठे प्रभु गृह माहिं।।
(महाप्रभु, नित्यानन्द, श्रीवासादि बैठे हैं)

समाज—

आय धाय पर्यौ चरनन माहिं। दंड दैओ प्राणदंड गुसांई।।

मुरारि—

(दौड़ता हुआ आ महाप्रभु के चरणों पर पड़) प्राणदंड देओ प्रभो मोकूँ प्राणदंड देओ!

महाप्रभु—

(उठाते हुये) यह कहा कहौ हो मुरारि! उठौ! बताओ।

मुरारि—

(उठकर) मैं बड़ो अपराधी हूँ। आपकी आज्ञा पालन नहीं कर सकूँ हूँ। कल समस्त रात्रि मैंने बहुत चेष्टा करी परन्तु मेरो मन मनायवे ते नहीं मानै है, श्रीराम की छवि छुड़ाये नहीं छोड़ै है। मेरी बुद्धि तो कहै है कि—

श्रीनाथे जानकीनाथे अभेदः परमात्मनि।
(परन्तु मन तो कहै है)
तथापि मम सर्वस्व राम राजीवलोचन।।

गाना (पद-आसावरी-३)—

नहीं छूटै लगन जब लागि गई।
राम रघुपति सों मन मान्यौ, सुनत न अब कोई सीख नई।।
ज्यूँ ज्यूँ हटकौं त्यूँ त्यूँ अटकै, टरति न वह छवि खटक गई।
मन तो हार्यौ जानकी ईश कूँ, शीश यह 'प्रेम' मैं तुमकूँ दई।।

हे सर्वज्ञ प्रभो! यह मन तो मैं रामजी कूँ सौंप चुक्यो हूँ, यह तन मैं आपकूँ सौंपूँ हूँ। यह मेरो माथो (झुका) आपके आगे है। मोकूँ प्राणदण्ड मिलै। आज्ञा भंग करिवे को यही फल मिलै।

महाप्रभु—

तो लेओ फल! मैं दण्ड दऊँ हूँ! अपनो ललाट आगे करौ।
(मुरारि के भाल पर कुंकुम-रोरी से लिखते हैं)
रा—म—दा—स
त्वं रामदास इति भो भव प्रसादात्।

समाज—

भाले लिलेख चतुरक्षरमेतदेव।।

महाप्रभु—

मुरारि! तुम त्रिकाल में मेरी कृपा सों 'रामदास' ही बनै रहौ। यही दण्ड है। सन्तुष्ट हो न?

भक्त मण्डली—

जय रामदास मुरारि की जय।

परमोदार प्रभु गौरचन्द्र की जय। हरिबोल

महाप्रभु—

मुरारि! मैंने तो केवल तुम्हारी प्रेम-परीक्षा के लिये ऐसी आज्ञा करी हती। भक्ति करै तो अनन्य भक्ति करै। ढुलमुल भक्ति में न स्वाद है न सिद्धि है कारण?

सवैया—

आज जो राम कूँ छाँड़ि सकै,
कल कृष्ण हू छाँड़ि सकै नहिं कैसे।
थिरता ही नहीं मति ही में जब,
फिर गति में थिरता आय जु कैसे।
मारग एक चलै पहुँचै घर,
बदलत रहै घर पहुँचे वो कैसे।
एक मति (ती) प्रेम एक रति (ती)
किये एक गति (ती) बिन सिद्धि जु कैसे।।

मुरारि! मैं तुम्हारी अनन्य रामभक्ति सों अतिशय प्रसन्न हूँ यासों मैं तुमकूँ अपनी ओर से यह आशीर्वाद दऊँ हूँ कि भगवान् श्रीकृष्ण की हू तुम्हारे ऊपर पूर्ण कृपा रहैगी और वे तुमकूँ अपनी व्रजलीला को हू रसास्वादन करायँगे।

भक्त मण्डली—

जय रामभक्त मुरारि की जय।

परमोदार कृपालु गौरहरि की जय।

महाप्रभु—

मुरारि! राम नाम को कीर्तन करौ।

मुरारि—

राजा राम राम राम। सीता राम राम राम। (कीर्तन मध्य पर्दा)

समाज (दोहा) —

सुनहु अपर मुरारि चरित, अति निर्मल रसदान।
भक्त हृदय की मति गति, सर्वस्व श्रीभगवान।।
(पर्दा खुलता है। मुरारि अपने घर में बैठा है)

मुरारी (पद-दरबारी-३) —

करत विचार मुरारि अन्तर।। टेक।।
को जानै प्रभु की लीला गति, कहा करैं पल छिन घरी अंतर।
सिरजन करत सुहित करि जाहि, ताहि संहरत न लागै अंतर।।

(प्रभु की लीला की गति कूँ कौन समझ सकै है। छिन में कहा सौं कहा करि डारे—यह कोई नहीं जानै है। जा खेल कूँ बड़े प्रेम सों रचावें हैं, वाकूँ मिटायवे में हू देर नहीं करैं हैं)

तुक—

सहित वंश ध्वंस करि रावण, लाये जानकी महलन अंतर।
तिनहिं तजत अरण्य अकारण, लाई न बार सम उर अंतर।।
छप्पन कोटि यादव निज जन, पुत्र पौत्र बिच पार्यौ अंतर।
लरि कटि मरै सब नैनन आगे, नेक न आयौ हरि उर अंतर।।
ऐसे ही अब विश्वम्भर गौर हू
लीलामय कब लीला सकेंलैं, जानि सकै अस को जिय अंतर।
ताते हौं तन त्यागि प्रथमहिं, जाय बसौं पद 'प्रेम' अंतर।।
प्रभु अछत जो तन तजौं, तौ न होय वियोग।
विरह अगिनि भय छूटिकै, पाऊँ नित संयोग।।

अतएव प्रभु गौरचन्द्र सों पहले ही या शरीर कूँ छोड़ दैनो ही उचित है। याके लिये शीघ्र ही कछु उपाय करनो चाहिये (भीतर चला जाता है। कुछ देर बाद एक छुरी लेकर आता)

समाज (चौपाई) —

अस विचारि इक छुरि बनाई। गृह मध्य ताहि धर्‍यौ दुराई।।
रजनी बाट निहारे मुरारि। जानै ना गृहिनी सती नारी।।
अन्तर्यामी गौर मुरारी। परम दयालु जन हितकारी।।
संध्या समय प्रभु तहँ आये। उठि मुरारि शीश पद नाये।।

मुरारि—

बड़े भाग घर दरसन दीने। काहे न बोलि दास ढिंग लीने।।

समाज—

हाथ मुरारि गहि अति नेहु। बोले गौर 'बोल इक देहु'।।

मुरारि—

वोल कहा यह देह तुम्हारी। सत्य कहौं हौं सत्य मुरारी।।

समाज—

कान लाय प्रभु कहत जू हौरे।

महाप्रभु—

(मुरारि-कान में) छुरी निकारि लाओ मो ठौरे।।

मुरारि—

कैसी छुरी? कहाँ ते निकारि लाऊँ?

महाप्रभु—

घर भीतर ते और कहाँ ते। मैं तिहारे करतूत सब जानूँ हूँ।
हौं जानौं जिन छुरी बनाई। हौं जानौं जहाँ धरी दुराई।।
(ऐसा कर दौड़कर भीतर जाते हैं)

समाज (दोहा)—

सर्वज्ञ श्रीगौर हरि, दौरि घुसे गृह माँहि।
लाय छुरी आगे धरी, मुरारि अति सकुचाहि।।

बंगला (चै० भा०)—

(प्रभु बोले).......ए तो मार व्यवहार।
कौन दोषे आमा छाँड़ि, चाहौ जाइबार।।

मोसों यह व्यवहार तुम्हारो! मेरो अपराध कहा है मुरारि जो तुम मोकूँ छोड़कै चल्यौ जानौ चाहौ हौ।

तुमि गेले काहार लइया मोर खेला।
हेनो बुद्धि तुमि का'र स्थाने शिखिला।। (चै. भा.)

पद (दादरा-यथाराग)—

तुम तो संगी मेरे अंगी, तुमसों मेरो खेल है।
संग बिना कहो रंग कैसे, बनै न इकलो खेल है।।
भई सो भई अब फेर नहिं, ऐसी कुमति ठानि है।
देऔ भीख मानौ सीख, शीश धरौ निज पानि है।।

समाज—

गहि मुरारि हाथ मुरारि, अपने धराये हो।

महाप्रभु—

रिस न ऐसी खीस न करिहौं, सौंह शीश दिवाये हो।

समाज—

लोटत पग परि रोवै भरि भरि, धोवै पग कृपालु के।

मुरारि—

आरति लागि कुमति उपजी, छमहु दीनदयालु हो।
दीन पियारे शची दुलारे, बन्धु मात तात हो।
तुम्हारी करुणा बिसरूँ कभु ना, शीश धरौ मम हाथ हो।।

समाज—

गहि गौर हाथ हृदय लाय, नीर बहाये नैन सों।
भक्तकी प्रीति प्रभुकी रीति, कहि न जाय वैन सों।।

महाप्रभु—

मुरारि! भगवान् को कीर्तन करौ।

मुरारि—(कीर्तन)

अच्युतं केशवं राम नारायणं
कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम्।
श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं
जानकी नायकं श्रीरामचन्द्र भजे।।

महाप्रभु—

(कीर्तन) हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल

इति भक्त-भगवान्-सम्बन्ध लीला सम्पूर्ण।

❧❖❧

श्रीकृष्णलीलानुकरण

समाज—

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जयाद्वैत चन्द्र जय जय भक्तवृन्द।।
श्रीवृन्दावन ध्यान करि, वृन्दावन चन्द ध्याऊँ।
जिनके बल सों मूढ़ हौं, लीला तिनकी गाऊँ।।
बन्दौं कृष्णचैतन्य प्रभु, रस-महाभाव-अवतार।
कौतुक-रंग-तरंग निधि, निज नव नवल प्रकार।।
भक्तन संग श्रीगौरहरि, करैं संकीर्तन रंग।
व्रजलीला रस भोगहिं, अन्तरंग जन संग।।
निज लीला बहुविधि व्रजहिं, सो कैसे विसराहिं।
उर अन्तर डूब्यौ रहै, व्रजरस सिन्धु माहिं।।

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, निताई, अद्वैत, श्रीवास, हरिदास, मुरारि, मुकुन्द आदि भक्तगण विराजमान हैं)

समाज (सोरठा)—

पंडित श्रीवास भवन, भक्तन मधि श्रीगौरहरि।
कहत सुमधुर वचन, व्रजलीला रस भोग हित।।

महाप्रभु—

श्रीवास जी! आज तो कोई एक मधुर व्रजलीला को आस्वादन करनो चाहिये अभिनय द्वारा।

श्रीवास—

बड़ी मधुर इच्छा है प्रभो! बड़ो आनन्द होयगो! वाके लिये स्थान कौन-सो उचित रहैगो?

महाप्रभु—

हमारे मौसा आचार्य चन्द्रशेखर जी को घर ही सब प्रकार सों अनुकूल रहैगो। वह हमारे घर के हू समीप है। यासें सबही देख सकेंगे।

श्रीवास—

अति उत्तम। तो कौन-कौन कूँ कहा-कहा बननो परैगो?

महाप्रभु—

सुनौ! मैं तो राधा बनूँगो। गदाधर ललिता बनैगो। ब्रह्मानन्दजी ललिता की सखी और आप श्रीवास जी नारद बनैंगे। हरिदास जी सूत्रधार और मुकुन्द नट बनेंगे। श्रीपाद नित्यानन्द जी श्रीराधा-कृष्ण मिलन करायवे वारी योगमाया को कार्य मुखरा नानी बनकर करैंगे।

अद्वैत—

मोकूँ तो कछु कार्य नहीं करनो परैगो ना प्रभो? मैं तो वृद्ध हूँ

महाप्रभु—

(हँसकर) वाह! प्रधान नायक को कार्य तो आपही निबाहँगे

अद्वैत—अर्थात्!

महाप्रभु—

अर्थात् श्रीकृष्ण की भूमिका आप ही की रहैगी!

अद्वैत—

मैं ७५ वर्ष को वृद्ध ब्राह्मण १५ वर्ष को श्रीकृष्ण बनूँ और वह हू आपके संग! आज तो आप बड़े विनोदी बन गये हो।

महाप्रभु—

हाँसी नहीं साँची कर रह्यौ हूँ। चिन्ता मत करौ—

न तुम तुम रहोगे न मैं मैं रहूँगो
रहैगो वही तुम और मैं सो परे जो।
न तुम ही करौगे न मैं ही करूँगो
करैगो वही है करने से परे जो।।

श्रीवास—

परन्तु तौहु तो प्रभो! यह तो हमें कछु ज्ञात होंनो ही चाहिये न कि कौन कूँ कहा बोलनो परैगो और कहा करनो परैगो जासों पहले सों हम कछु तैयारी कर सकैं।

महाप्रभु—

कह तो दीनी कि काहू कूँ कोई तैयारी नहीं करनी परैगी समय पै सब अपने आप है जायगो!

समाज—

भक्त सकल सुनि अचरज मानैं। प्रभु स्वरूप प्रभाव न जानैं।।
मन मन उलट पुलट बहु करहिं। सकुचवश मुखसों नहिं कहहिं
तब प्रभु पुनि बोले मुसिक्याई। वचन सुनि सब गये मुरझाई।।

महाप्रभु (चौपाई)—

विश्व विमोहिनी रमणी रूप। करिहौं प्रगट ऐसो अनूप।।
इन्द्रिय जीत होवै जो भाई। देखै सोइ यह लीला आई।।

अद्वैत—

तो यह लैओ प्रभो! मैं तो रेखा खींच कै कहूँ हूँ कि मैं तो इन्द्रिय-जीत नहीं हूँ। मैं तो गृहस्थी हूँ। यासों मैं तो लीला देखवे नहीं आऊँगो।

श्रीवास—

मैंहू गृहस्थी हूँ। मेरी हू यही दशा है। मैंहू नहीं आऊँगो जहाँ स्वयं महादेवजी हू मोहिनी रूप के दर्शन सों भूले वहाँ मेरी कहा सामर्थ्य?

मुरारि—

मैंहू इनके पीछे-पीछे हूँ प्रभो! जहाँ महादेव और नारदजी घबरावैं हैं वहाँ मेरी कहा गिनती?

महाप्रभु—

वाह वाह वाह! तुम कोई नहीं आओगे तो मैं इकलो ही कैसे लीला कर लऊँगो और देखेगो ही कौन?

अद्वैत—

आप ही करनौ और आपही देखनौ। हम चारों ओर, ऊपर नीचे बड़े-बड़े दर्पण धर देंगें—एक शीश महल जैसो बनाय दैंगे। सो आप तो नाचौगे और आपकी परछांई सब आपके दर्शन कर्‌यौ करेंगी—सोई है जायगी लीला। हममें तो परीक्षा दैवे की सामर्थ्य है नहीं जो आवैं और देखैं।

महाप्रभु—

(हँसते हुये) अच्छो तो सबन की रक्षा मोकूँ करनी ही परैगी तो सुनौ—

बंगला (चै० भा०)—

महायोगेश्वर आज तोमरा होइबा।
देखिया आमारे केहो मोह ना पाइवा।।
महायोगेश्वर तुम सब, बनि जाओगे भाई।
मोहित होओगे नहीं, मोहिनी रूप लखाई।।

भक्त मण्डली—हरिबोल!

महाप्रभु—

तो बस अब साज-समान जुटाय लेओ। लीला आज ही रात्रि कूँ होनी चाहिये।

श्रीवास—

जो आज्ञा प्रभो! आपके भक्त बुद्धिमन्त खान और सदाशिव के ऊपर यह कार्य सौंपे दऊँ हूँ। वे साज-सामान को प्रबन्ध कर लैंगे।

मुरारि—

(धीरे से) हाँ ठीक है। ये दोनों मोटे पेट वारे हैं।

सब—हरिबोल। (पटाक्षेप)

समाज (चौपाई)—

हरि बोल धुनि आनन्द छाई। ब्रजलीला करिहैं हरिराई।।
दौरि दौरि सामान जुटाये। साज बाज सिंगार सजाये।।
बीच चौक वितान बनाये। रंग मंच सुन्दर सँवराये।।
समाचार निज जन सब पाये। भवन चन्द्रशेखर कहँ आये।।
भक्त गृहिनी सकल तहँ आईं। विष्णुप्रिया सहित शची माई।।
भाग्यवान भक्त नर नारी। बैठे निज निज ठौर विचारी।।
भीतर भवन बैठीं सब नारी। पुरुष भीर आँगन महँ भारी।।
प्रभु आज्ञा बहिर्दुवार, दिये कपाट लगाय।
गंगादास रहे बैठि तहँ, नयो न आवन पाय।।

हरिदास—

(कोतवाल का प्रवेश—सुन्दर जरीदार पगड़ी, कानों में कुंडल, पाँवोंमें नुपूर मल्लवेश। काँधे पर दुपट्टा, हाथ में डंडा)

हरिदास—

(सैनिक कूच करता हुआ)

गाना (शंकरा-बैण्ड चाल) —

कोतवाल बैकुण्ठ को, हरिदास मेरो नाम।
सोते को जगामनो, बस यही है मेरो काम।।
कृष्ण भजो कृष्ण सेवो, लेवो कृष्ण नाम।
सार सार सत्य सत्य, एक कृष्ण नाम।।
वैकुण्ठ तजिकै भूपर, आये हैं रमानाथ।
प्रेमभक्ति जीव प्रति, लुटायँगे दीनानाथ।।

बंगला—

लक्ष्मी वेशे नृत्य आज कोरिबे आपने।
प्रेमभक्ति लूटि आजि, होओ सावधाने।।

अतएव जागो! उठो! बोलो!

धुन (शंकरा बैण्ड) —

राम कृष्ण नरहरि गोपाल गोविन्द (गाते-गाते प्रस्थान)

(प्रवेश सूत्रधार गन्धर्व एवं सेवक)

समाज (चौपाई) —

तब सूत्रधार गन्धर्व जु आये।
संग सहायक सेवक लाये।।

सूत्रधार—

भ्रात:। आज मैं अपने नित्य नियम के अनुसार ब्रह्मलोक में ब्रह्माजी कूँ प्रणाम करवे गयो हो तो वहाँ श्रीनारद जी की एक आज्ञा हमारे ऊपर भई।

सेवक—

कहा आज्ञा भई है देव?

सूत्रधार—

'हमकूँ कोई कृष्ण लीला-अभिनय के दर्शन कराओ' यह आज्ञा भई है। मैं स्वीकार तो कर आयो हूँ परन्तु भगवत्लीला कोई स्वांग-नाटक तो है नहीं याको अभिनय कोई हँसी-खेल थोरेई है। यामें कला ते अधिक भाव एवं रस को महत्त्व है। भगवान् श्रीकृष्ण ही यदि कृपा-कटाक्ष कर देवें तो हम नारद जी कूँ अपनो अभिनय दिखाय कै उनको प्रसाद प्राप्त कर सकेंगे।

सेवक—

सत्य है देव! भगवान् की कृपा सों ही उनको लीलाभिनय बन सकै है। हम तो प्रयत्न ही कर सकै हैं।

सूत्रधार—

तो फिर शीघ्रता करौ। नारदजी आमते ही होंगे।

सेवक—

परन्तु देव! नारदजी तो ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं। सनकादिक कुमारन के कनिष्ठ भ्राता हैं, ज्ञानी हैं, आत्माराम हैं। उनकूँ श्रीकृष्ण की लौकिक नरलीला सों कहा प्रयोजन? वे अपने निर्गुण निराकार ब्रह्म स्वरूप के ही आनन्द में निमग्न क्यूँ नहीं रहै हैं। श्रीराम कृष्ण के लीला चरित तो हम जैसे मूढ़ अज्ञानी के लिये ही है न?

सूत्रधार—

नहीं वत्स नहीं! वह ज्ञान कैसो जो भक्ति कूँ न बढ़ावै। साँचे ज्ञान में तो—

ज्यूँ ज्यूँ ज्ञान बढ़त है, भक्तिहु बाढ़त जाय।
शुक सनकादिक हंस परम, पीवत रस ललचाय।।
रस ब्रह्म श्रीकृष्ण की, लीला परम रसाल।
आत्माराम परमहंस हू, पी पी होत निहाल।।

सेवक—

परन्तु क्षमा करैं देव! आत्माराम ब्रह्मज्ञानी श्रीकृष्ण की अलौकिक ऐश्वर्य महिमा कूँ त्याग लौकिकी नर लीला ही सों क्यूँ मुग्ध होय हैं?

सूत्रधार—

कारण कि अलौकिक लीला सों लौकिकी लीला में रसायन अधिक है। यासों यह मधुराति मधुर परम मधुर है।

सेवक—

यामें हेतु कहा है प्रभो?

सूत्रधार—

सुनो! अलौकिकी ऐश्वर्यमयी लीला पुरातन है और लौकिकी माधुर्यमयी लीला नव नवायमान है। वह पुराण पुरुष की लीला है, यह किशोर पुरुषोत्तम की लीला है। वह वृद्धा है यह तरुणी है!

कवित्त—

बनावैं बिगारैं सृष्टि पालन संहार करैं
आप बसि वैकुंठ में, करैं ठकुराई है।
छाँड़ि वैकुंठ वे जब, भूतल पै आवैं हरि
हँसैं खेलैं नाचैं गावैं, भूलैं ठकुराई है।
लोक की यह लीला तो, अलोककी वा लीला सों
स्वादु स्वादु पदे पदे, सबन सुहाई है।
ईश्वर हरी की लीला, बुढ़िया बिरस भई
नर हरीकी लीला प्रेम, तरुनी सदाई है।

अलौकिकी लीला तो ऐसी है जैसे महादेव जी के शीश पै विराजमान जटाशंकरी गंगा परन्तु लौकिकी लीला ऐसी है जैसे भूतल पै बहवे वारी पतितपावनी भागीरथी गंगा—

सवैया—

ईश के शीश पै गंग बसै
पै बसै ही बसै नहीं पाप नसावै।
भूतल पै जब आवति उतरि
पाप ओ ताप जगत के मिटावै।
तैसेई हरि ईश्वर सों हरि
मानुष में रस जस अति आवै।
'प्रेम' के नाथ ही नाथ रहैं
ये पुत्र पति सखा दास कहावैं।।

अब सखे! तुम समझ गये होंगे कि परमात्मा पुरुषोत्तम की नर लीला क्यूँ आत्माराम परमहंस मुनिन के चित्त कूँ आकर्षण कर लेय है। अतएव शीघ्र ही लीला को आयोजन करौ नारदजी आय रहे होंगे।

सेवक—

कौन-सी लीला को आयोजन करूँ प्रभो?

सूत्रधार—

दान लीला को—यह अति मधुर लीला है।

सेवक—

परन्तु.......लीला होयगी कैसे! अबही तो...........

सूत्रधार—

क्यूँ कहा बात है?

सेवक—

बात यही है कि लीलाकरिणी बालिकागण तो यहाँ हैं ही नहीं

सूत्रधार—

क्यूँ कहाँ गयीं हैं?

सेवक—

श्रीवृन्दावन गोपीश्वर पूजन कूँ गयीं हैं।

सूत्रधार—

यह तो अनर्थ है गयो! एक तो वे बालिका। दूसरे, वन को विकट मार्ग। तीसरे, वृन्दावन में मदमत्त कृष्ण गजराज को उत्पात! हाय! अब कैसे लीला रचाऊँ? कहूँ नारदजी आय पहुँचे और रिसाय कै स्राप दै दियौ तो?

सेवक—

आप चिन्ता न करैं। आपकी वृद्धा सास उनके संग गयीं हैं?

सूत्रधार—

(हँसते हुये) तब तो है चुकी उनकी रक्षा और आय चुकीं वे बालिका शीघ्र! वह बुढ़िया न आँखन सों देखै, न कानन सों सुनै ही है। काहू ते बतरायवे लगी तो दिन को रात कर डारे है! कैसी अबोध बालिका हैं—गयीं वन में और संग लै गयीं ऐसी बुढ़िया कूँ!

सेवक—

तो मैं उनकूँ ढूँढ़ करकै शीघ्र ही लै आऊँ हूँ।

सूत्रधार—

मैं हू संग चलूँ हूँ। (दोनों का प्रस्थान)

(प्रवेश गाते हुये नारद, शिष्य सहित)

नारद (पद-काफी-३)—

हरि गुन गान ही सार, मैं तो कियो निरधार।
ज्ञान को अन्त है योग को अन्त है, हरि गुण अनन्त अपार।।
यज्ञ को तोल है दान को तोल है, हरि गुण अतोल अपार।
ज्ञान में शान्ति है योग में सिद्धि है, गान में 'प्रेम' अपार।।
राम कृष्ण नरहरि गोपाल गोविन्द।

(प्रवेश विदूषक ब्रजवासी गोप)

विदूषक—

क्यूँ बूढ़े बाबा! तू कौन है, कहाँ ते आयो?

नारद—

भैया! मेरो नाम नारद है। यह मेरो शिष्य है। हम वैकुण्ठ में भगवान् के दर्शन कूँ गये तो वे वहाँ मिले नहीं। हमने सुनी कि वे श्रीवृन्दावन में महालक्ष्मी के सहित विहार कर रहे हैं यासों वृन्दावन में उनके दर्शनार्थ जाय रहे है।

विदूषक—

(हँसते हुये) बाबा! तू तो व्रज में नयोइ नयो आयो सो लगै है। नहीं तो भगवान् और लक्ष्मी की बात न करतो। अरे बाबा—

कहा लक्ष्मी भगवान् को, व्रज वृन्दावन काम।
यहाँ तो खेलत हैं सदा, श्रीराधा घनश्याम।।

नारद—

वे ही तो भगवान् लक्ष्मीनारायण हैं!

विदूषक—

वाह! अच्छो भगवान् है तिहारो। वा माखन चोरा, मटुकी फोरा कूँ तुम भगवान् कहो हो! अरे वाके ऊधमन को तुमकूँ कछु पतो नहीं है। नहीं तो ऐसी नहीं कहते।

नारद—

भैया! वे जो चाहै सो करैं, न करैं, उलट पुलट करैं—उनकी मौज! तबही तो वे भगवान् ईश्वर हैं। मैं तो उनही के दर्शन कूँ आयो हूँ। कहाँ मिलेंगे वे?

विदूषक—

नन्दगाँव में, कै बरसाने में, कै वृन्दावन में—

कै मोहन नंदगाँव में, कै साँकरी खोर।
कै वृन्दावन राधा संग, नाचत नन्दकिशोर।।

नारद—

तो कितेक दूर है वृन्दावन?

विदूषक—

दूर कहाँ, सामने ही है। या वन ते आगे वृन्दावन ही है।

नारद—

'राम कृष्ण नरहरि गोविन्द गोपाल' (गाते हुये प्रस्थान)

विदूषक—

हमारे व्रज में ऐसे-ऐसे बाबाजी मुकतेरे डोल्यौ करैं हैं—गामते रोते भये। परन्तु कन्हैया तो एक हमारे ही संग खेलै-कूदै है।

(प्रस्थान)

समाज (दोहा)—

चलै जात नारद मगन, लिये शिष्य निज साथ।
ललितादिक मारग मिली, श्रीवृन्दावन जात।।

(प्रवेश नाचती गाती हुईं ललितादिक गोपियाँ)
(दूसरी ओर नारद एवं शिष्य खड़े हैं)

गोपियाँ (गीत-पहाड़ी)—

कृष्णपिया को ढूँढ़न आई, मैं तो।
गोकुल ढूँढ़ी मथुरा ढूँढ़ी, वृन्दावन में आय विरमाई मैं०।।
घर में रहूँ तो घर नहीं भावे, आऊँ जो वन तो छिपछिप जाई।
काज करूँ तो करन न देवै, वंशी मधुर वह देत बजाई०।।
'प्रेम' प्रभु पर तन मन वारे, साँवरो सलोनो सुन्दर सुखदाई।।

कोतवाल—

(नेपथ्य में से) कृष्ण कहो! जागते रहो! समय निकस्यो जाय है। सावधान होओ! कृष्ण कहो!

ललिता—

साँची तो बहनाओ! बहुत समय निकस गयो। हमकूँ तो वृन्दावन पहुँचनो है। हम तो मार्ग में ही नाचवे-गायवे लगीं। चलौ जल्दी—'कृष्ण पिया को ढूँढ़न आई०'

(गाती हुईं प्रस्थान)

नारद—

(आगे निकलते हुये) अहा हा! याको नाम है कृष्ण-प्रेम कैसी गद्गद् हैकै गाय रही और अश्रु टपकाय रही हैं। एक हमहूँ हैं भगत! गीत गावैं, तान तोड़ैं, आलाप भरैं हैं परन्तु यह सहज सरल प्रेम-भाव कहाँ? यह तो व्रजगोपिन के ही भाग में आयो है (गाने लगते हैं) 'कृष्ण पिया को ढूँढ़न आई, मैं तो'। (नाचते लगते हैं)

शिष्य—

भगवन्! चलिये न! हमकूँ तो वृन्दावन पहुँचनो है। सो इन के पीछे-पीछे चले चलैं।

नारद—

(प्रेम विभोर) अरे अब हमकूँ कहाँ जानौ है। यही तो वृन्दावन है!

शिष्य—

भगवन्! आप अपने चिरपरिचित वृन्दावन कूँ हू भूल गये!

नारद—

भूल कैसे गयो! यह वृन्दावन नहीं तो ये गोपी कहाँ ते आईं!

शिष्य—

ये तो अबही वृन्दावन जाय रही हैं!

नारद—

हाँ हाँ! सोई तो मैं कह रह्यौ हूँ कि जहाँ गोपी वहीं वृन्दावन और जहाँ वृन्दावन वहीं गोपी! अहा! (गाने लगते) 'कृष्ण पिया को ढूँढ़न०।'

शिष्य—

अहो! यह तो कृष्णप्रेम कालिन्दी में बहे जाय रहे हैं। इनकूँ मेरे वचन रूपी तृण कहा सम्हार सकैं हैं।

धन्य प्रेम तुम्हरो मुनिराई। इत उत सबकी सुध विसराई।।
प्रेम सोई जो द्वैत नसावै। जहँ तहँ इष्ट ही इष्ट लखावै।।

नारद—

(प्रेमोन्माद-हास्यपूर्वक) अहा हा बेटियो! फिर तो गाओ 'कृष्ण प्रिया को ढूँढ़न आई।' कृ...ष्ण.....पिया.....ढूँढ़न.......आई......मैं.......तो...... अहा! एक-एक अक्षर कहा है हृदय को चित्र है! घायल की पुकार है! भाव को भण्डार है! 'कृष्ण पिया को०' (गाते-नाचते चलते हैं)

शिष्य—

गुरुदेव! वे तो वृन्दावन पहुँच चुकी होंगी। अब हमहू चलैं।

नारद—

(अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुये) यह मेरी दाढ़ी कैसे भीज गयी? वर्षा भई कहा?

शिष्य—

हाँ महाराज! आपके नेत्र बरस रहे हैं। चलिये न आगे (हाथ पकड़ कर ले चलता है)

नारद—

कैसे चलूँ? मोकूँ तो मार्ग ही नहीं दीखै है!

शिष्य—

यह वर्षा बन्द हो तो दीखै! (आँखों को पोंछ देता है)

नारद—

(दो-चार कदम चल फिर गाने-नाचने लगते हैं)

शिष्य—

भगवन्! आप पद-पद पै पहर-पहर भर नाचेंगे तो वृन्दावन कैसे पहुँच पायँगे! यासों चलिये न!

नारद—

अब और कितनो तेज चलूँ। मैं तो वायु के समान उड़्यौ जाय रह्यौ हूँ (फिर गाते नाचते हुये) अहा! आज मैं वा मोहनी माधुरी मूर्त्ति के दर्शन करूँगो कि जाकूँ—

वन में जाय वैरागी न पावे, तनकूँ मार न तपसी।
मनकूँ मार न योगी पावे, सो वृन्दावन दरसी।।
नवों द्वार बन्द कर जोगी, जाकूँ कभु सुनि पावै।
अनहद नाद की जननी वंशी, वृन्दावन लहरावे।।

(नेपथ्य में से वंशी ध्वनि)

समाज (दोहा)—

वंशी बाजी श्याम की, धुनि वृन्दावन छाई।
सुनत भये नारद विकल, सौगुन प्रीति बढ़ाई।।

नारद—

(सुनते हुये) मधुर! अहा मधुर मधुर! मोहिनी! आय गयो वृन्दावन! निश्चय ही आय गयो। वृन्दावन में ही वंशी बाजै है, नित्य बाजै है, 'कृष्ण पिया ने बजाय बुलाई—मैं तो

(नाचते गाते पतन)

समाज—

नाचत विह्वल प्रेमवश, गिरै धरनि मुरझाय।
सुमन मालती लाय शिष्य, नासा दियौ सुँघाय।।

शिष्य—

(फूल सुँघाते हुए) उठिये देव! वृन्दावन आय गयो!

नारद—

(उठकर बैठते हुये। नेत्र बन्द) कैसी मीठी सुवास है! कहा यह कोई फूल की ही सुवास है? नहीं नहीं। वन के फूल में इतनी महक कहाँ! यह तो मेरे प्यारे के मधुर अंगन की मोहक महक है! अहा! वृन्दावन के शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध सबन में श्याम अंग को श्याम रस ही समायो भयो है। याहि कारण सों—

गाना (काफी-मिश्र)—

श्रीवृन्दावन तो यही है, श्रीवृन्दावन तो यही है।
जहाँ श्याम की वंशी बाजे, श्रीवृन्दावन तो यही है।।१।।
यह हरियाली तरु बेलिन की, सब वन से अति ही निराली है।
हरि रंग इनमें है छाया हुआ, श्रीवृन्दावन तो यही है।।२।।
यह जल थल अरु सुमन पवन में, महक भी सबसे निराली है।
हरि अंगन सौरभ छाय रही, श्रीवृन्दावन तो यही है।।३।।
यह पंछी कुल की कलरव हू, सब पंछिन धुनि से निराली है।
हरि नाम युगल रट लाई है, श्रीवृन्दावन तो यही है।।४।।
गो गोप गोपी व्रजजन की भी, छवि कुछ ऐसी निराली है।
हरि रूप है इन पर छाया हुआ, श्रीवृन्दावन तो यही है।।५।।
व्रज के थिर चर सबही की, प्रीति भी ऐसी निराली है।
हरि 'प्रेम' है अंग समाया हुआ, श्रीवृन्दावन तो यही है।।६।।

अहा! प्यारे श्यामसुन्दर नन्दलाल गोपाल याही वन में हैं! कहा वे मोकूँ दर्शन दैवे की कृपा करेंगे? अहा! वह छवि कितनी प्यारी होगी—शीश पर मोर मुकुट, कर्णन में कुंडल-झलक! कर में मुरली, उर में वनमाल! और वह वनमाल झुक-झुक करकै, झूम्-झूम् करकै श्रीचरण कमलन कूँ चूम रही होगी! अरी वनमाला! तू ही धन्य है। धन्य है तेरो सौभाग्य! अहा वे-वे-चरण-चरण-च......र.....(पतन)

समाज (दोहा)—

चरन कमल सों लिपटि पर्यौ, मुनि मन मधुकर जाय।
विन मन तन सुधबुध गई, डूबे हरि रस माय।।

शिष्य—

उठिये गुरुदेव उठिये! श्रीकृष्ण आय रहे हैं।

नारद—

(हड़बड़ा कर उठते हुये) आय रहे हैं! आय रहे हैं! तो तो मैं उनके सन्मुख नहीं जाऊँगो नहीं जाऊँगो—जायवे योग्य नहीं हूँ।

शिष्य—

तो कहा लौट चलौगे ऐसे ही?

नारद—

अरे अबोध! वृन्दावन में आयकै कहा कोई लौट सकै है—
'यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम'।

शिष्य—

तो फिर उठौ न! चलौ न आगे!

नारद—

ना ना अब और आगे नहीं। न जाने या समय मेरे प्रभु सखा मंडल में हैं कै सखी मंडली में। यह जाने बिना सहसा सन्मुख जानो उचित नहीं है। यासों चलौ! कहीं कुंज में छिप रहैं। दूर ही सों दर्शन मिल जायँ तौहु अहोभाग्य हमारे!

शिष्य—

तो चलिये! शीघ्र चलिये (दोनों का प्रस्थान)

(प्रवेश श्रीकृष्ण एवं सुबल सखा)

श्रीकृष्ण (श्लोक)—

हसन्ती वासन्ती वलित मुकुलो वालवकुलो
विशोकश्चाशोक सुलभ विचयश्चम्पक चयः।
अनागः पुन्नागस्तवक मन! पश्य सुमनः
कुटीरः पाटीरश्बसन सुरभिर्भाति सुरभिः।।

गाना (पद-वसन्त) —

फूल रही वासन्ती लता अरु मौलसिरी मुकुलाय रही है।
फूल रहै हरषाय अशोक, चिरैया चम्पक छाय रही हैं।
झूम रहै झब्बा पुन्नाग के, सुमन सुमन दिखाय रही हैं।
मलयानिल सों मिलि यमुनानिल वृन्दावन महकाय रही हैं।

अहा! सखे सुबल! यह श्रीवृन्दावन मेरी समस्त इन्द्रियन कूँ सुख देय है। यथा—

कवित्त—

नैनन को सुख नव नव कुंज पुंज यह
कह्यौ न परत है हुलास कछु मन को।
कुसुम सुवास कैसे नासिका कूँ सुख देत
देत सुख कानन कूँ गान मधुपन को।
वसना को सुख कैसो सरस रसाल फल
पवन परस कैसो होत सुख तन को।
एक एक रेनु अति प्यारी लागै प्रानन कूँ
एक एक पात हर लेत मेरे मन को।।

अहा सुबल! यह मेरो वृन्दावन कितनो सुन्दर और सुखदायक है, यह तो मैं ही जानूँ हूँ परन्तु कह मैं हू नहीं सकूँ हूँ!

सुबल—

(गले में हाथ डाल) परन्तु यह वृन्दावन हू तोहिसों तो सुन्दर है कन्हैया! जब तू ही तेरो तन ही इतनो सुन्दर है तो तेरो बन क्यूँ न सुन्दर होवैगो। सुन्दर की तो सब वस्तु सुन्दर ही सुन्दर होय है!

समाज (चौपाई) —

दौरत मधुमंगल तहँ आयो। कहत बधायो बाँट बधायो।।

मधुमंगल—

(दौड़ता-हाँफता-काँपता हुआ आकर) अरे ओ कन्हैया! मोकूँ धन्यवाद दै! बधाई बाँट। लडुआ खिला।

श्रीकृष्ण—

कहा बात है भैया? कैसे हाँफतो काँपतो आय रह्यौ है।

मधुमंगल—

अरे बड़ो विचित्र है तू! न धन्यवाद दियो, न खायबे कूँ दियो! सवाल करवे लग गयौ। मेरे पेट में कछु परैगो तबही तो मुख हू बोल सकैगो। ला लडुआ पहले!

श्रीकृष्ण—

अरे लडुवा तो मिल जायँगे, पहले बात तो बताय काहे के तांई धन्यवाद माँग रह्यौ है?

मधुमंगल—

सारे! तोकूँ ब्रह्म-हत्या के महापातक ते बचाय लियो—या बात के लिये धन्यवाद दै, लडुआ खवा।

श्रीकृष्ण—

कैसी ब्रह्महत्या? कौन की ब्रह्महत्या?

मधुमंगल—

मेरी और कौन की? तुम्हारे बीच में एक मैं ही तो ब्राह्मण हूँ और तो सब अहीर-गोप ही हो। मेरी जान चली जाती तो ब्रह्महत्या कौन कूँ लगती?

श्रीकृष्ण—

वाकूँ लगती जो तेरी जान लैतो! मोकूँ काहे कूँ लगती।

मधुमंगल—

और जो यदि मैं तेरे काम में मार्यौ जातो तो तोकूँ लगती कै नहीं?

श्रीकृष्ण—

अरे कैसो मेरो काम, कैसे तू मार्यौ जातो, कछु बतावैगो कै वैसेई खैंचतो चल्यौ जायगो!

मधुमंगल—

तो बात यह है कि गोपन की पाँच-सात छोरी वृन्दावन कूँ आय रही हैं—समझ गयो न?

श्रीकृष्ण—

हाँ आय रहीं है तो कहा भयो, आगे बताय!

मधुमंगल—

तो उनके संग एक बड़ी बूढ़ी डोकरिया है। वाके मुँह में न दाँत हैं, न पेट में आँत है। वह उनके पीछे-पीछे लगी आय रही है। समझ गयो न?

श्रीकृष्ण—

समझूँ तेरो सिर! बात तो पूरी करै नहीं है!

मधुमंगल—

अबकै पूरी कर दऊँगो। वा डोकरी कूँ देखकै मोकूँ ऐसो लग्यौ कि वह एकाध छोरी कूँ पकरि कै खाय जायगी! समझ रह्यौ है न?

श्रीकृष्ण—

सारे! कहानी पूरी करैगो कै पिटैगो?

मधुमंगल—

तो लै, पूरी करै दऊँ हूँ! जब मैंने देख्यौ कि वह तो छोरिन के पीछे ही पीछे लगी डोलै है तो मोकूँ निश्चय है गयो कि ये इनकूँ खाये बिना छोड़ेगी नहीं! तो तू जानै ही है मेरो ठहरौ ब्राह्मण को कोमल ह्रदय। दया आ गयी। मैं बोल उठ्यौ 'मेरी सास! इनके पीछे काहे कूँ परी है। छोड़ इनकूँ और अपनो रास्ता पकर!' क्यूँ समझ रह्यौ है न।

श्रीकृष्ण—

फिर रुक गयो न? पिटैगो सारे! जल्दी पूरी कर।

मधुमंगल—

तो पूरी सुन लै। वह डोकरी उलट कै मुँह फारकै मेरे ऊपर परी और मैं सिरपै पाँव रखकै जो भग्यौ सो तेरेइ पास आय पहुँच्यो! ओफ्! बच गयो! खाय लियो होंतो। तोकूँ ब्रह्महत्या लग गयी होती! मैंने बचाय दियो! कहानी पूरी भई! धन्यवाद दै! लडुवा खवा!

श्रीकृष्ण—

तो यामें ब्रह्महत्या की बात तो कछु है नहीं!

मधुमंगल—

है क्यूँ नहीं! मैं जब भग रह्यौ हो न तो वह पीछे ते किल्लाय कै कह रही ही, 'अजी ब्राह्मण देवता! अजी महाराज! नेक रुक जाओ, सुन लेओ गोपीश्वर पूजा करवाय दैओ। कृपा करौ।' जो कहूँ मैं वाकी मीठी-मीठी बातन में आय जातौ तो वह मोकूँ पकरिकै गोपीश्वर के बलिदान कर देती और तब लग जाती तोकूँ ब्रह्म-हत्या!

श्रीकृष्ण—

अरे मोकूँ कैसे लग जाती, वाही कूँ लगती!

मधुमंगल—

सारे, तोही कूँ लगती। तू ही तो हमकूँ लै लैकै वन-वन में घुमावँतो डोलै है। नहीं तो हम अब तांई घोट-छानकै मस्त पड़े होते! तेरे पीछे हमकूँ वन-वन भटकनो परै है। अच्छो यह तो बता तू वन-वन में नित प्रति काहे कूँ डोल्यो करै है। डोलवे की साध तेरी मिटैइ नहीं है—यह बात कहा है?

श्रीकृष्ण—

भैया सुबल! यह लबार ढोंगी कहा बक रह्यौ है। तेरी समझ में आये कछु?

सुबल (दोहा)—

मेरे मन निश्चय यही, आईं भानुकिशोरि।
गोपीश्वर पूजन निमित्त, लेत फूल वन तोरि।।

श्रीकृष्ण—

परन्तु डोकरी-डोकरी कहकै यह कौन कूँ गारी दै रह्यौ है।

सुबल (दोहा)—

श्रीराधा माता मही, मुखरा नानी होय।
वृद्धा अति तेजस्विनी, लागति भैरवी सोय।।

सो वा बूढ़ी नानी ते डरप करकै यह ब्राह्मण वीर भागि आयो है।

मधुमंगल—

कैसो अनजान बनकै बूझ रह्यौ है कौन आयी हैं! रात भर सोवै नहीं है, सबेरे मुँह तक धोवै नहीं है गैया चरायवे के बहाने सों निकास परै है और

दिन भर वन कुंजन, गिरि खोरन में खोजतो-झाँकतो डोलै है और मुरली में नाम लै लैकै टेरै है। और जब मैंने उनके ही आयवे को मंगल सम्वाद लायकै सुनायौ तो लडुआन सों मेरो मोहड़ो न भरकै गारी देय है, लबार ढोंगी कहै है! ढोंगी मैं नहीं, ढोंगी है तू।

(श्रीराधा ललितादि सखी और वृद्धा दूर आती दिखायी देती हैं)

मधुमंगल—

बाप रे! वह आय रही है भैरवी! छाया की तरह मेरे ही पीछे लगी है। कन्हैया! भाग सारे! मोकूँ तो डर लगै है।

श्रीकृष्ण—

भैयाओ! हमकूँ इनके सम्मुख रहनो उचित नहीं है। चलौ समीप के कुंज में छिप करकै कौतुक देखैं।

(प्रस्थान। उधर फूल बीनती-गाती हुईं श्रीराधा ललितादि का दल)

गाना (हमीर बहार-३)—

फुलवा री बीनौ फुलवा री।
तरु तरु डार डार, फूले सुमन भार, सौरभ अपार,
मधुकर गुंजार झूमि झूमि पर रस पी मदवारी। फुलवा०।।
चम्पा चमेली, जूही अलबेली, मोलश्री मालती माधवी नवेली।
केवड़ा केतकी करना कर्णिकार, कमल कल्हार कुमुदवारी फुलवारी

श्रीराधा—

ललिते! हम फूल तो बीन रहीं हैं, परन्तु सावधान रहनो चाहिये। यहाँ एक वनगज रहै है। वह बड़ो उत्पाती है।

मधुमंगल—

(कुंज में) सुनलै कन्हैया यह कहा कह रही हैं!

श्रीकृष्ण—

सुन्दर गीत गाय रही हैं और कहा कह रही हैं!

मधुमंगल—

गीत नहीं तोकूँ गारी सुनाय रही हैं। 'वनगज' कह रही हैं अर्थात् जंगली हाथी, पशु, जानवर कह रही हैं और तू चुपचाप सुनतो ही जाय रह्यौ है। अरे!

तू घेरै तो घेर इन्हें, नहिं हौं घेरौं जाय।
तू पशु वन गुड़ खाय, मैं लगुड़ चखावौं धाय।।

श्रीकृष्ण—

अरे चुपकर मेरे लडुआ-वीर! किल्लावै मत। सुन लैन दै, देख लैन दै। पीछे लराई हू लर लैंगे।

सुबल—

सारे! डोकरी सुन लैगी तो आयकै खाय जायगी तोकूँ! यासों चुप बैठ्यौ रह!

श्रीराधा—

आओ ललिते! या मालती लता सों फूल बीनें। कितने सुन्दर पुष्प! कैसी मीठी महक! सबरो वन महक रह्यौ है।

वृद्धा—

हैं हैं बेटियो! तोर मत बैठियो! कहूँ ते वह नन्द को आय गयो तो लैने के दैने पर जायँगे। वाकूँ मालती लता बड़ी प्यारी है! वह पकरि लैगो राधा कूँ!

ललिता—

तो कहा चिन्ता नानी जी! तुम्हारी जमानत दैकै इनकूँ छुड़ाय लैंगी!

वृद्धा—

हाँसी करै है मो बूढ़ी के संग! वन में आयकै तुम बड़ी स्वतंत्र है जाओ हो। याको फल भोगनो परैगो। सावधान!

समाज (पद)—

श्रीराधा मुख कमलहिं लखिकै, मधुकर एक जु धायो।
कहन लगी हँसि हँसिकै ललिता, यह देखो वह आयो।।
पट आँचर की छोर सों राधा, पुनि पुनि मधुप उड़ावै।

राधा—

बड़ो ढीठ लंगर नहिं जावै, फिरि फिरि मुख पै आवै।।
ठाड़ी सब हँसती कित लखि लखि, काहे न भमर उड़ाऔ।
तुमही सहाय करौ जु ललिते, दया जू मोपै लाओ।।

ललिता—

चलै नाहिं वश हमरो याते, लखि डर लागै भारी।
व्रज के सदा सहायक गिरिधर, सुमिरौ उनकूँइ प्यारी।।

मधुमंगल—

(कुंज में से) डरो मत डरो मत! गिरधारी आय..........

श्रीकृष्ण—

(मुख पर हाथ रख देते) चुप कर फूट्यौ ढोल! अपने आप ही बज उठै है।

मधुमंगल—

अपने आप नहीं, उननै बजायो तो मैं बोल्यौ। वे 'गिरिधारी को सुमरन करौ' कह रही हैं। तेरो नाम लै रही हैं। याते अधिक और कहा करैंगी। कहा तेरे पाँवन में आयकै नाक रगड़ैंगी, तबही उठैगो क्यूँ? वाह रे सहायक गिरधारी! अरे छोड़ या ढोंग कूँ और जायकै उड़ाय भौंरा कूँ!

श्रीकृष्ण (दोहा)—

वे विहरत स्वच्छन्द गति, लिये सखी समाज।
तामें वाधा डारनो, नहीं भलेन को काज।।

मधुमंगल—परन्तु

छिप्यौ रहैगो यूँ ही तो, पशु कहैंगी तोय।
बाहर ह्वै वन बीर अब, तबही जस रस होय।।

श्रीराधा—(भौंरा उड़ाते हुये)

पूर्वपद—

उड़त नहीं यह परि गयो गोहन, कैसे करूँ अब हाय।
पूजैं गोपीश्वर हू कैसे, दिवस तो बाढ़त जाय।।

मधुमंगल—

डरौ मत! डरौ मत! गिरधर आय रह्यौ है।

श्रीकृष्ण—

(मुख पर हाथ रख) चुप कर ढोल! बजै मति ना।

मधुमंगल—

कैसे न बजूँ! जब तेरी सारी फुलवारी लुट जायगी तब निकसैगो कहा? अरे अबही क्यूँ ना निकसै है! भौंरा की कृपा सों कैसो सुन्दर अवसर आय पर्यौ है। उठ, निकस बाहर! नहीं तो मैं ही निकसूँ हूँ।

श्रीकृष्ण—

अच्छो तो लै निकसूँ हूँ। तू ही जीत्यो।

समाज (पूर्वपद)—

निकसे जबहि श्याम कुंज ते, भौंरा गयौ जु उड़ाय।
करिगो श्याम सखा की सेवा, रस रंग 'प्रेम' बढ़ाय।।

श्रीकृष्ण (गाना-प्रश्नोत्तरी)—

रहौ जु रहौ मत फूल गहौ, तुम कौन कहाँ की बारी हो।।
फूल के तो फूल लेओ, लता बेलि रौंदि देओ।
बनहिं उजारि देओ, ऐसी जु निडर अहो,
कहाँ की जु रहनवारी हो।।

सखियाँ—

वन में ये फूल खिले, तोरैंगी हजार भले,
तुम कौन मन चले, रोकन मारग चले
कहा तुम वन अधिकारी हो।।

श्रीकृष्ण—

सूरत तो भोरी गोरी, बात करौ जोरी जोरी,
फूलन पराये चोरी, लाज शील सब बोरी।
जानौ नहीं मैं ही अधिकारी हूँ।।

सखियाँ—

बात अति साँची कही, 'अधिक-अरी' हो सही।
घर लूटो दही मही, वन लूटो शोभा सिरी(श्री)।
तन के वसन हू हारी हो।।

तुम साँचे ही ब्रज के 'अधिक-अरी' अर्थात् वैरी हो। जब गाँव में रहौ हो तो दूध दही चुराओ हो, यमुना पै जाओ हो तो वस्त्र चुराओ, मटुकी फोरो हो और जब वन में आओ हो तो गायन कूँ चराय-चराय वन की शोभा कूँ उजार कर देओ हो। यासों तुम साँचे ही अधिक-अरी-वैरी हो व्रज के।

श्रीकृष्ण—

वाह सखियो! उलटो चोर कोतवाल कूँ चोर कहै—

फल फूल तोरै सब, तोरत अच्छर अब।
नये नये ढरो ढब, दऊँगो मैं दण्ड अब।
भले मिलीं अपराधकारी हो।।

ललिता—

अजी हम नहीं तुमहीं अपराधकारी हो कारण कि—

'अपराध' नाम तहाँ राधा नहीं होवै जहाँ।
सोइ दंड जोग्य महा, हम 'संग राधा' अहा।
हम तो हैं पूज्या तिहारी हो।।

जासों राधा अलग होय वही 'अपराध' है—'अपगता राधा यस्मात् सोऽपराधः'! तुम ही राधा सों अलग हो 'अपराध' हो यासों दण्ड के योग्य हो। हम तो 'सहराध' है, राधा सहित हैं, यासों सब प्रकार सों तुम्हारी पूज्या हैं। समझ गये न?

मधुमंगल—

दै ढोक् कन्हैया दै! ये वरदान देंगी! जय ललिते महारानी।

श्रीकृष्ण—

फूल के तो फूल हरौ, तापै कहो पूजा करौ।
काहे कूँ आकास उड़ौ, मेरो नाम कृष्ण खरो।
'प्रेम' रस हेतु अवतारी हो।।

अतएव मैं तुमकूँ दण्ड दिये विना कदापि नहीं छोडूँगो।

ललिता—

दण्ड दैवे को अधिकर तो एक राजा को ही होय है।

मधुमंगल—

तो कन्हैया ही तो व्रज को राजा है।

ललिता—

ये तो ग्वारिया गोपाल हैं। राजा तो वृन्दावनेश्वरी हमारी राधा हैं।

मधुमंगल—

तुम्हारे कहवे तेई, कै कोई प्रमाण हू हैं!

ललिता—

'उपभोग एव प्रमाणं' वस्तु को भोग ही हमारे मालिकपने की प्रमाण है। तबही तो हम निर्भय फूल बीन रही हैं।

मधुमंगल—

तो हमहू तुमकूँ निर्भय है कै रोक रहे हैं, हमहू मालिक भये। जो तुम फूल तोरवे मात्र सों मालिकनी सिद्ध है गईं तो हमहू रोकवे सों मालिक प्रसिद्ध है गये! वाह! कैसो अच्छो प्रमाण है।

सुबल—

प्रमाण नहीं चोरी के ऊपर बरजोरी है। प्रमाण तो हमारो है

सुनो—

वृन्दावन श्रीकृष्ण को, सुनहु सहज प्रमाण।
तरु तरु प्रति लिख्यौ यहाँ, कृष्ण कृष्ण यह नाम।।

ललिता—

तरु तरु कृष्ण नाम तो, लता प्रति राधा नाम।
तरु तरु तुमहि लै रहौ, हमहिं लतान सों काम।।

वृक्ष तुम्हारे कृष्ण के हैं, तो लता बेलि हमारी राधा जू के हैं। हम तो मालतीलता, माधवीलता, चम्पकलता, यूथिका आदि लतान सों फूल बीन रही हैं। तुम्हारे वृक्षन कूँ तो हम पाँवन ते हू नहीं छीवैं हैं। तुम उनकूँ लैकै रहौ। हमारी लता-बेलि पर अधिकार जनायबे वारे तुम कौन होओ हो।

वृद्धा—

बलिहारी ललिते बलिहारी! अच्छो उत्तर दियो। इनको मुख मर्दन कर दियौ।

मधुमंगल—

चुप रह डोकरी। उछरै मति ना। अच्छो ललिते जो यदि लता बेलिन पै तुम्हारी श्रीराधा को नाम है तो इनमें रूप-रंग तो हमारे सखा कृष्ण को ही है।

ललिता—

कैसे भलो?

मधुमंगल—

प्रत्यक्ष ही तो है। लता पतान में जो यह हरोई हरो रंग है सो सब कृष्ण को रंग ही तो है।

ललिता—

नहीं है। हरो रंग तुम्हारे सखा को कहाँ है। वह तो श्याम है— कृष्ण है—कारो है।

मधुमंगल—

क्यों नहीं है—कारण कि—

जामें रस सोई हरो, यह जानत सब कोय।

ललिता—(परन्तु मधुमंगल जी)

गौर श्याम द्वै रंग बिना, हरो रंग नहिं होय।।

जब नीलो और पीरो रंग को मेल होय है तब ही हरो रंग होय है। केवल रस हैवे सों ही वस्तु हरी भरी नहीं होय है। जाड़ेन में हू तो तरु तलान में रस रहै ही है परन्तु वे हरे भरे नहीं होय हैं—

शीत ऋतुन में तरुन के, सूखि जात सब पात।
आवत दिन बहार के, फूलि फूलि हुलसात।।

तुम्हारे कृष्ण तो केवल रस ही रस हैं, वसन्त श्री तो राधा ही हैं—

कृष्ण रूप आनन्द रस, राधा रूप अह्लाद।
हरो भरो तब होत जब, मिलैं रस अह्लाद।।

केवल रस तो शान्तानन्द है और हरो रस है आह्लादानन्द—आनन्द के ऊपर आह्लाद की छाप, श्याम के ऊपर गौर की छाप, तुम्हारे सखा के ऊपर हमारी सखी की झाईं-पराछाईं—'जा तन की झांई परै श्याम हरित दुति होय'। अतएव श्रीराधा ही प्रधान वृन्दावनेश्वरी हैं—उनकूँ रोकवे वारे तुम्हारे सखा कौन? समझ गयौ न भोजनभट्ट।

श्रीकृष्ण—

ओहो! पंडितानी ललिता जु!

कवित्त—

वाय लागी, सूधी नहिं बोल जानौ
उड़ो ना गगन माँझ, धरनि पै आओ जू।
छोल छोल बात काहे, खोलो रस हाट बाट
हाथ नहिं ऐहै कछु, हाँसी ही पाओ जू।
बतरस रसिया न, रसिया हैं जाके हम
सोई रस रसवश, प्रेम अब प्याओ जू।
नितही बचाय मेरो, भाग मारि गई हो जो
लैहौं आज भर पाई, दान मेरो लाओ जू।

यासों अब और बात नहीं करूँगो—हाथन सों काम लऊँगो। अपनो दान लऊँगो!

वृन्दा—

कन्हैया! लाला! दान लेओगे तो सुनो—

तुम हो प्यारे सबन के, तुमहि नाहिं कछु नाहिं।
मो आंचर महँ फूल सब, माँगि लैहु मो पाहिं।।

मधुमंगल—

हम माँगकै भीख नहीं लेंगे। हम तो अपनो हम लेंगे—दान! दान देओ दान!

वृन्दा—

(झुंझला कर) ओहो! पेड़ के फूल पत्तिन पै ही इतनी ऐंठ! हीरा मोती होंते तो न जाने कहा करते! लेओ, धरि राखो अपने फूलन कूँ (पल्ला झाड़कर फूल फेंक देती है)

समाज (दोहा) —

अस कहि वृद्धा फूल सब, दीन्ही धरती डार।
सखा बजावत तारि इत, देत उतहिं वह गार।।

मधुमंगल—

डर गई डोकरी! डर गई! अहा हा हा!

सुबल—

हार गई नानी हार गई!

समाज (दोहा) —

आँचर सों आनन ढकि, बोलीं कुँवरि मुसिक्याय।

राधा—

पूजा के सब पुष्प तुम, नाहक दीन्हे लुटाय।।

ललिता—

इन ग्वालन सों डरपि तुम, दीन्हे परिश्रम खोय।
फूल हजार हम बीनिहैं, कहा जु इनको होय।।

वृद्धा—

इन ढीठ ऊधमी छोरान सो लरनो होय तो तू ही लर ललिते! मैं तो जाऊँ हूँ! (जाना चाहती है)

मधुमंगल—

चली जा डोकरी! तू लरैगी ही कहा? ये लरैंगी।

राधा—

नानी जू! नेक ठहरो! गोपीश्वर पूजन कर लैन देओ।

वृद्धा—

अरी बेटी! फिर कर लीजौ। या समय तो इनते बच निकसवे में ही मंगल है।

राधा—

...........वृन्दावन आयकै तो गोपीश्वर-पूजन अवश्य ही करनो चाहिये।

मधुमंगल—

अवश्य अवश्य! और तुम्हारे भाग्य सों गोपीश्वर स्वयं यहीं पधारे हैं। करौ पूजन!

ललिता—

चुप रह वाचाल! गँवार! झूँठा!

मधुमंगल—

झूँठा नहीं सत्यवादी। गँवार नहीं पंडित! वाचाल नहीं।

गाना (दयाल-कृपाल)—

मैं ही लायो करकै दया, गोपीश्वर इह ठाँव।
गोपन के ईश्वर यही, पूजौ इनके पाँव।।
मानौ बात सही।।

ललिता—

हमारो गोपीश्वर तो चन्द्रशेखर है।

चन्द्रशेखर वह देव है, चन्द्र विराजत भाल।

मधुमंगल—

चन्द्रशेखर प्रत्यच्छ यही, मोरपिच्छ धर बाल।
ठाड़ौ आगे वही।।

ललिता—

हम तो पशुपति पूजिहैं, अरे ढीठ मुख जोर।

मधुमंगल—

यह गोपाल ही पशुन को, पति पालक सिरमौर।।
लैओ वरदान सही।।

ललिता—

हम तो पूजिहैं गौरीपति, मौन जु रह वाचाल।

मधुमंगल—

तुम गौरी यह गौरीपति, डारो गरै वनमाल।
देव के देव यही।।

श्रीकृष्ण—

मधुमंगल! तू काहे कूँ इनसों उरझ रह्यौ है। ये तो बातन में ही हमारो दान मारनौ चाहै हैं। सखियो अब बात रहन देओ और दिखाओ वा डिब्बा में कहा हैं—

सुवर्ण सम्पुट में कहा, लै जावति दुबकाय।
हमहिं दिखावहु खोलिकै, जो तुम्हारो सतभाय।।
देखौं परखि सही।।

ललिता—

यामें गोपीश्वर-पूजन की सामग्री है। तुम ग्वालन की दृष्टि सों अपवित्र है जायँगी।

राधा—

दिखाय देओ ललिते! रार न बढ़ाओ। पूजन कूँ देर है रही है

समाज—

कनक सम्पुट खोलि सखी, दीनी वस्तु दिखाय।
धूप दीप मृग मद मलय, नैवेद्य माल सुहाय।
पूअन सौंज सभी।।

मधुमंगल—

हा! हा! मेरो तो काम बन गयो—

हौं ही भोग को देवता, माला के गोपाल।
यही हमारो कर लगै, पै जावहु घर बाल।
सहज निरबेरी यही।।

ललिता—

दिविचर देव की वस्तु ये, वनचर योग्य ये नाहिं।
द्वार आय घर माँगियो, मुँह माँगे मिल जाय।
जैहौं रीते नहीं।।

श्रीकृष्ण—

निज घर पाये चोर तजि, क्यों चोरन घर जाँय।
राजदान निज छाँड़िकै, भीख हेत ललचाँय।
लैहैं ठौर यहीं।।

यासों लाओ हमारो दान।

वृद्धा—

दान कहा होय है?

मधुमंगल—

दान मानै कर, जगात, महसूल, टैक्स!

वृद्धा—

काहे बात को?

मधुमंगल—

वृन्दावन में प्रवेश को—

वृन्दावन प्रवेश को लागत है यह दान।

वृद्धा—

यह दान कौन ने लगायो है।

मधुमंगल—

साँवरिया सरकार को, नियम अनादि जान।
छूट काहू को नाहीं।।

हमारे व्रजराज कुमार साँवरिया सरकार को यह नियम अनादिकाल सों चल्यौ आय रह्यौ है कि वृन्दावन में दान चुकाये बिना काहू कूँ प्रवेश करनो नहीं मिलैगो। यासों लाओ दान! दैओ चुंगी कर!

वृद्धा—

और जो कोई न देय तो?

श्रीकृष्ण—

लैन वारे अपने आप ही लै लेंगे।

समाज—

असि कहि जा ठाड़े भये, श्यामा आगे श्याम।
गाढ़ो नेह अन्तर भर्यो, बाहर आड़ी वाम।
मोरि जु वदन रहीं।।

श्रीकृष्ण—

मुख मोरि जाओ कहाँ, देवहु मेरो दान।

राधा—

मैं निधनी देऊँ कहा, तुम तो धनी महान।
करौ कछु लाज सही।।

श्रीकृष्ण—

तुम ही मेरे परम धन, तुव प्रेम सों काम।

राधा—

तुम मेरे ही हौं तुव, मिलै जु श्यामा श्याम।
एक द्वै रूप अनादि।
(मिलते ही पटाक्षेप)

सखियाँ—

(नेपथ्य में से) जय हो राधाकृष्ण की जय
जय हो युगल मिलन की जय

कोतवाल हरिदास—

(प्रवेश करते हुये) सावधान रहौ, कृष्ण कहौ, कृष्ण कूँ आत्मदान करौ।

आत्ममूल्य सों ही मिलै, परम आत्म भगवान।
आत्मदान बिन मिलै नहीं, श्रीकृष्ण रसखान।।
यही दान लीला कहत, करौ आतमा दान।
तबही पाओगे महा, मधुर प्रेमरस पान।।

अतएव आत्मदान करौ और रसपान करौ।

कीर्तन—

हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल (प्रस्थान)

(पर्दा खुलता है। महाप्रभु, अद्वैत, नित्यानन्द, श्रीवास, गदाधर आदि भक्तमंडली शान्त स्थिर खड़े—अपनी अपनी विशिष्ट मुद्रा में)

समाज (दोहा)—

लीला अन्तर्द्धान भई, गयो सरूप आवेश।
ज्यूँ के त्यूँ ठाड़े सबैं, निज निज रूप आवेश।।

कृष्ण ठौर अद्वैत खड़े, राधा ठौर हैं गौर।
वृद्धा नहीं निताइ यहाँ, ऐसे ही सब और।।

दर्शकगण—

(नेपथ्य में से) १. ओह! यह कहा आश्चर्य भयो! वे राधा-कृष्ण, वे सखा सखी, वह कृष्ण लीला कहाँ चली गई! २. अब तो यहाँ वे ही गौर-निताई, अद्वैत-श्रीवासादि खड़े हैं। ३. अहा! अभिनय नहीं, नित्य सत्य दिव्य श्रीकृष्ण लीला के ही दर्शन हमकूँ प्राप्त भये। जय हो! श्रीगौराचन्द्र की जय! श्रीकृष्णचन्द्र की जय। लीला देवी योगमाया की जय जय जय

गौर-निताई आदि—

हरिबोल (कहते हुये नीचे उतरते एवं संकीर्तन-नृत्य करते हैं)

इति श्रीकृष्णलीलानुकरण सम्पूर्ण।

ര❖ൈ